पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों
की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को
बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर
मआरिफ़ुल क़ुरआन
5
तफ़सीर
हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह.
(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)
FPC

पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर

मआरिफ़ुल-क़ुरआन

जिल्द (5)

उर्दू तफ़सीर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

हिन्दी अनुवादक

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (एम. ए. अलीग.)

रीडर अ़ल्लामा इक़बाल यूनानी मैडिकल कॉलेज मुज़फ़्फ़र नगर (उ.प्र.)

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

****

तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन

हज़रत मौलाना **मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान)

हिन्दी अनुवाद

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी एम. ए. (अ़लीग.)

मौहल्ला महमूद नगर, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 09456095608

जिल्द (5) सूरः यूसुफ़ ------ सूरः कहफ़

(पारा 12, रुकूअ़ 11 से पारा 16 रुकूअ़ 3 तक)

30 जून 2013

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

بسم الله الرحمن الرحيم

وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللَّهِ جَمِيعًا وَلَا تَفَرَّقُوا

WA'A TASIMOO BIHAB LILLAHI JAMEE-'AN WA LAA TAFARRAQOO

समर्पित

⭘ अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला के कलाम **क़ुरआन मजीद** के **प्रथम** व्याख्यापक, हादी-ए-आ़लम, आख़िरी पैग़म्बर, तमाम नबियों में अफ़ज़ल **हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम** के नाम, जिनका एक-एक क़ौल व अ़मल कलामे रब्बानी और मन्शा-ए-इलाही की अ़मली तफ़सीर था।

⭘ **दारुल-उलूम देवबन्द** के नाम, जो क़ुरआन मजीद और उसकी तफ़सीर (हदीसे पाक) की अ़ज़ीमुश्शान ख़िदमत और दीनी रहनुमाई के सबब पूरी इस्लामी दुनिया में एक मिसाली संस्था है। जिसके इल्मी फ़ैज़ से मुस्तफ़ीद (लाभान्वित) होने के सबब इस नाचीज़ को इल्मी समझ और क़ुरआन मजीद की इस ख़िदमत की तौफ़ीक़ नसीब हुई।

⭘ **उन तमाम नेक रूहों और हक़ के तलाश करने वालों के** नाम, जो हर तरह के पक्षपात से दूर रहकर और हर प्रकार की कठिनाईयों का सामना करके अपने असल मालिक व ख़ालिक़ के पैग़ाम को क़ुबूल करने वाले और दूसरों को कामयाबी व निजात के रास्ते पर लाने के लिये प्रयासरत हैं

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋

दिल की गहराईयों से शुक्रिया

◎ मोहतरम जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ साहिब (मालिक फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली) का, जिनकी मुहब्बतों, इनायतों, क़द्रदानियों और मुझे अपने इदारे से जोड़े रखने के सबब क़ुरआन मजीद की यह अहम ख़िदमत अन्जाम पा सकी।

◎ मेरे उन बच्चों का जिन्होंने इस तफ़सीर की तैयारी में मेरा भरपूर साथ दिया, तथा मेरे सहयोगियों, सलाहकारों, शुभ-चिन्तकों और हौसला बढ़ाने वाले हज़रात का, अल्लाह तआ़ला इन सब हज़रात को अपनी तरफ़ से ख़ास जज़ा और बदला इनायत फ़रमाये। आमीन या रब्बल्-आ़लमीन।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋

प्रकाशक के क़लम से

अल्लाह तआ़ला का लाख-लाख शुक्र व एहसान है कि उसने मुझे और मेरे इदारे (फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली) को इस्लामी, दीनी और तारीख़ी किताबों के प्रकाशन के ज़रिये दीनी व दुनियावी उलूम की ख़िदमत की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई।

अल्हम्दु लिल्लाह हमारे इदारे से क़ुरआन पाक, हदीस मुबारक और दीनी विषयों पर बेशुमार किताबें शाया हो चुकी हैं। बल्कि अगर यह कहा जाये कि आज़ाद हिन्दुस्तान में हर इल्म व फ़न के अन्दर जिस क़द्र किताबें फ़रीद बुक डिपो देहली को प्रकाशित करने का सौभाग्य नसीब हुआ है उतना किसी और इदारे के हिस्से में नहीं आया तो यह बेजा न होगा। कोई इदारा फ़रीद बुक डिपो के मुक़ाबले में पेश नहीं किया जा सकता। यह सब कुछ अल्लाह के फ़ज़्ल व करम और उसकी इनायतों का फल है।

फ़रीद बुक डिपो देहली ने उर्दू, अ़रबी, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दी और बंगाली अनेक भाषाओं में किताबें पेश करके एक नया रिकॉर्ड बनाया है। हिन्दी ज़बान में अनेक किताबें इदारे से शाया हो चुकी हैं। हिन्दी भाषा हमारी मुल्की ज़बान है। पढ़ने वालों की माँग और तलब देखते हुए तफ़सीरे क़ुरआन के उस अहम ज़ख़ीरे को हिन्दी ज़बान में लाने का फ़ैसला किया गया जो पिछले कई दशकों से इल्मी जगत में धूम मचाये हुए है। मेरी मुराद तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन से है। इस तफ़सीर के परिचय की आवश्यकता नहीं, दुनिया भर में यह एक मोतबर और विश्वसनीय तफ़सीर मानी जाती है।

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी ने फ़रीद बुक डिपो के लिये बहुत सी मुफ़ीद और कारामद किताबों का हिन्दी में तर्जुमा किया है। हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी के इस्लाही ख़ुतबात की 15 जिल्दें और तफ़सीर तौज़ीहुल-क़ुरआन उन्होंने हिन्दी में मुन्तक़िल की हैं जो इदारे से छपकर मक़बूल हो चुकी हैं। उन्हीं से यह काम करने का आग्रह किया गया जिसे उन्होंने क़ुबूल कर लिया और अब अल्हम्दु लिल्लाह यह शानदार तफ़सीर आपके हाथों में पहुँच रही है। हिन्दी भाषा में क़ुरआनी ख़िदमत की यह अहम कड़ी आपके सामने है। उम्मीद है कि आपको पसन्द आयेगी और क़ुरआन पाक के पैग़ाम को समझने और उसको आ़म करने में एक अहम रोल अदा करेगी।

मैं अल्लाह करीम की बारगाह में दुआ़ करता हूँ कि वह इस ख़िदमत को क़ुबूल फ़रमाये और हमारे लिये इसे ज़ख़ीरा-ए-आख़िरत और रहमत व बरकत का सबब बनाये आमीन।

ख़ादिम-ए-क़ुरआन

मुहम्मद नासिर ख़ान

मैनेजिंग डायरेक्टर, फ़रीद बुक डिपो, देहली

अनुवादक की ओर से

الحمد لله رب العالمين. والصلوة والسلام على رسوله الكريم. وعلى آله وصحبه اجمعين.

برحمتك يا ارحم الراحمين.

तमाम तारीफ़ों की असल हक़दार अल्लाह तआला की पाक ज़ात है जो तमाम जहानों की पालनहार है। वह बेहद मेहरबान और बहुत ही ज़्यादा रहम करने वाला है। और बेशुमार दुरूद व सलाम हों उस ज़ाते पाक पर जो अल्लाह तआला की तमाम मख़्लूक़ में सब से बेहतर है, यानी हमारे आक़ा व सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम। और आपकी आल पर और आपके सहाबा किराम पर और आपके तमाम पैरोकारों पर।

अल्लाह करीम का बेहद फ़ज़्ल व करम है कि उसने मुझ नाचीज़ को अपने पाक कलाम की एक और ख़िदमत की तौफ़ीक़ बख़्शी। उसकी ज़ात तमाम ख़ूबियों, कमालात, तारीफ़ों और बन्दगी की हक़दार है।

इससे पहले सन् 2003 ईसवी में नाचीज़ ने **हकीमुल-उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी रह.** का तर्जुमा हिन्दी भाषा में पेश किया जिसको काफ़ी मक़बूलियत मिली, यह तर्जुमा इस्लामिक बुक सर्विस देहली ने प्रकाशित किया। उसके बाद **तफ़सीर इब्ने कसीर मुकम्मल** हिन्दी भाषा में पेश करने की सआ़दत नसीब हुई, जो रमज़ान (अगस्त 2011) में प्रकाशित होकर मन्ज़रे आ़म पर आ चुकी है। इसके अ़लावा **फ़रीद बुक डिपो** ही से मौजूदा ज़माने के मशहूर आ़लिम **शैख़ुल-इस्लाम हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी** दामत बरकातुहुम की मुख़्तसर तफ़सीर **तौज़ीहुल-क़ुरआन** शाया होकर पाठकों तक पहुँच रही है।

उर्दू भाषा में जो मक़बूलियत क़ुरआनी तफ़सीरों में तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन के हिस्से में आयी शायद ही कोई तफ़सीर उस मक़ाम तक पहुँची हो। यह तफ़सीर हज़ारों की संख्या में हर साल छपती और पढ़ने वालों तक पहुँचती है, और यह सिलसिला तक़रीबन चालीस सालों से चल रहा है मगर आज तक कोई तफ़सीर इतनी मक़बूलियत हासिल नहीं कर सकी।

हिन्द महाद्वीप की जानी-मानी इल्मी शख़्सियत **हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब देवबन्दी (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) की यह तफ़सीर क़ुरआनी तफ़सीरों में एक बड़ा क़ीमती सरमाया है। दिल चाहता था कि हिन्दी जानने वाले हज़रात तक भी यह उलूम और क़ुरआनी मतालिब पहुँचें मगर काम इतना बड़ा और अहम था कि शुरू करने की हिम्मत न होती थी।

जो हज़रात इल्मी काम करते हैं उनको मालूम है कि एक ज़बान से दूसरी ज़बान में तर्जुमा करना कितना मुश्किल काम है, और सही बात तो यह है कि इस काम का पूरा हक़ अदा होना बहुत ही मुश्किल है। फिर भी मैंने कोशिश की है कि इबारत का मफ़्हूम व मतलब तर्जुमे में उतर आये। कहीं-कहीं ब्रेकिट बढ़ाकर भी इबारत को आसान बनाने की कोशिश की है। तर्जुमे में जहाँ तक संभव हुआ कोई छेड़छाड़ नहीं की गयी क्योंकि उलेमा-ए-मुहक़्क़िक़ीन ने इस तर्जुमे को इल्हामी तर्जुमा क़रार

दिया है। जहाँ बहुत ही ज़रूरी महसूस हुआ वहाँ आसानी के लिये कोई लफ़्ज़ बदला गया या ब्रकिट के अन्दर मायनों को लिख दिया गया।

अ़रबी और फ़ारसी के शे'रों का मफ़्हूम अगर मुसन्निफ़ की इबारत में आ गया है और हिन्दी पाठकों के लिये ज़रूरी न समझा तो कुछ अश्आ़र को निकाल दिया गया है, और जहाँ ज़रूरत समझी वहाँ अ़रबी, फ़ारसी शे'रों का तर्जुमा लिख दिया है। ऐसे मौक़ों पर अहक़र ने उस तर्जुमे के अपनी तरफ़ से होने की वज़ाहत कर दी है ताकि अगर तर्जुमा करने में ग़लती हुई हो तो उसकी निस्बत साहिबे तफ़सीर की तरफ़ न हो बल्कि उसे मुझ नाचीज़ की इल्मी कोताही गरदाना जाये।

हल्ले लुग़ात और क़िराअतों का इख़्तिलाफ़ चूँकि इल्मे तफ़सीर पर निगाह न रखने वाले, क़िराअतों के फ़न से ना-आशना और अ़रबी ग्रामर से नावाक़िफ़ शख़्स एक हिन्दी जानने वाले के लिये कोई फ़ायदे की चीज़ नहीं, बल्कि बहुत सी बार कम-इल्मी के सबब इससे उलझन पैदा हो जाती है लिहाज़ा तफ़सीर के इस हिस्से को हिन्दी अनुवाद में शामिल नहीं किया गया।

हिन्दी जानने वाले हज़रात के लिये यह हिन्दी तफ़सीर एक नायाब तोहफ़ा है। अगर ख़ुद अपने मुताले से वह इसे पूरी तरह न समझ सकें तब भी कम से कम इतना मौक़ा तो है कि किसी आ़लिम से सबक़न् सबक़न् इस तफ़सीर को पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं। जिस तरह उर्दू तफ़सीरें भी सिर्फ़ उर्दू पढ़ लेने से पूरी तरह समझ में नहीं आतीं बल्कि बहुत सी जगह किसी आ़लिम से रुजू करके पेश आने वाली मुश्किल को हल किया जाता है, इसी तरह अगर हिन्दी जानने वाले हज़रात पूरी तरह इस तफ़सीर से फ़ायदा न उठा पायें तो हिम्मत न हारें, हिन्दी की इस तफ़सीर के ज़रिये उन्हें क़ुरआन पाक के तालिब-इल्म बनने का मौक़ा तो हाथ आ ही जायेगा। जो बात समझ में न आये वह किसी मोतबर आ़लिम से मालूम कर लें और इस तफ़सीरी तोहफ़े से अपनी इल्मी प्यास बुझायें। अल्लाह का शुक्र भेजिये कि आप तफ़सीर के तालिब-इल्म बनने के अहल हो गये वरना उर्दू न जानने की हालत में तो आप इस मौक़े से भी मेहरूम थे।

फ़रीद बुक डिपो से मेरी वाबस्तगी पच्चीस सालों से है। इस दौरान बहुत सी किताबें लिखने, प्रूफ़ रीडिंग करने और हिन्दी में तर्जुमा करने का मुझ नाचीज़ को मौक़ा मिला है। इदारे के संस्थापक **जनाब मुहम्मद फ़रीद ख़ाँ मरहूम** से लेकर मौजूदा मालिक और मैनेजिंग डायरेक्टर **जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ** तक सब ही की ख़ास इनायतें मुझ नाचीज़ पर रही हैं। मैंने इस इदारे के लिये बहुत सी किताबों का हिन्दी तर्जुमा किया है, हज़रत **मौलाना क़ारी मुहम्मद तैयब** साहिब मोहतमिम दारुल-उलूम देवबन्द की किताबों और मज़ामीन पर किया हुआ मेरा काम सात जिल्दों में इसी इदारे से प्रकाशित हुआ है, इसके अ़लावा **"मालूमात का समन्दर"** और **"तज़्किरा अ़ल्लामा मुहम्मद इब्राहीम बलियावी"** वग़ैरह किताबें भी यहीं से शाया हुई हैं। जो किताबें मैंने उर्दू से हिन्दी में इस इदारे के लिये की हैं उनकी तायदाद भी पचास से अधिक है, इसी सिलसिले में एक और कड़ी यह जुड़ने जा रही है।

इस तफ़सीर को उर्दू से मिलती-जुलती हिन्दी भाषा (यानी हिन्दुस्तानी ज़बान) में पेश करने की कोशिश की गयी, हिन्दी के संस्कृत युक्त अलफ़ाज़ से परहेज़ किया गया है। कोशिश यह की है कि मजमूई तौर पर मज़मून का मफ़्हूम व मतलब समझ में आ जाये। फिर भी अगर कोई लफ़्ज़ या

किसी जगह का कोई मज़मून समझ में न आये तो उसको नोट करके किसी आ़लिम से मालूम कर लेना चाहिये।

तफ़सीर की यह पाँचवीं जिल्द आपके हाथों में है इन्शा-अल्लाह तआ़ला बाक़ी की जिल्दें भी बहुत जल्द आपकी ख़िदमत में पेश की जायेंगी। इस तफ़सीर की तैयारी में कितनी मेहनत से काम लिया गया है इसका कुछ अन्दाज़ा उसी वक़्त हो सकता है जबकि उर्दू तफ़सीर को सामने रखकर मुक़ाबला किया जाये। तब मालूम होगा कि पढ़ने वालों के लिये इसे कितना आसान करने की कोशिश की गयी है। अल्लाह तआ़ला हमारी इस मेहनत को क़ुबूल फ़रमाये और अपने बन्दों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये आमीन।

इस तफ़सीर से फ़ायदा उठाने वालों से आ़जिज़ी और विनम्रता के साथ दरख़्वास्त है कि वे मुझ नाचीज़ के ईमान पर ख़ात्मे और दुनिया व आख़िरत में कामयाबी के लिये दुआ़ फ़रमायें। अल्लाह करीम इस ख़िदमत को मेरे माँ-बाप और उस्ताज़ों के लिये भी मग़फ़िरत का ज़रिया बनाये, आमीन।

आख़िर में बहुत ही आ़जिज़ी के साथ अपनी कम-इल्मी और सलाहियत के अभाव का एतिराफ़ करते हुए यह अ़र्ज़ है कि बेऐब अल्लाह तआ़ला की ज़ात है। कोई भी इनसानी कोशिश ऐसी नहीं जिसके बारे में सौ फ़ीसद यक़ीन के साथ कहा जा सके कि उसके अन्दर कोई ख़ामी और कमी नहीं रह गयी है। मैंने भी यह एक मामूली कोशिश की है, अगर मुझे इसमें कोई कामयाबी मिली है तो यह महज़ अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम, उसके पाक नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये लाये हुए पैग़ाम (क़ुरआन व हदीस) की रोशनी का फ़ैज़, अपनी मादरे इल्मी दारुल-उलूम देवबन्द की निस्बत और मेरे असातिज़ा हज़रात की मेहनत का फल है, मुझ नाचीज़ का इसमें कोई कमाल नहीं। हाँ इन इल्मी जवाहर-पारों को समेटने, तरतीब देने और पेश करने में जो ग़लती, ख़ामी और कोताही हुई हो वह यक़ीनन मेरी कम-इल्मी और नाक़िस सलाहियत के सबब है। अहले नज़र हज़रात से गुज़ारिश है कि अपनी राय, मश्विरों और नज़र में आने वाली ग़लतियों व कोताहियों से मुत्तला फ़रमायें ताकि आईन्दा किये जाने वाले इल्मी कामों में उनसे लाभ उठाया जा सके। वस्सलाम

(पहली जिल्द प्रकाशित होकर मुल्क में फैली तो अल्हम्दु लिल्लाह उसे क़द्र व पसन्दीदगी की निगाह से देखा गया। मुझ नाचीज़ का दिल बेहद ख़ुश हुआ कि मुल्क के कई शहरों से मुझे फ़ोन करके मेरी इस मेहनत को सराहा गया और मुबारकबाद दी गयी। मैं उन सभी हज़रात का शुक्रगुज़ार हूँ और अल्लाह करीम का शुक्र अदा करता हूँ कि मुझ गुनाहगार को अपने कलाम की एक अदना ख़िदमत करने की तौफ़ीक़ बख़्शी, इसमें मेरा कोई कमाल नहीं, उसी करीम का एहसान व तौफ़ीक़ है।)

तालिबे दुआ़

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

79, महमूद नगर, गली नम्बर 6, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 251001

30 जून 2013

फ़ोन:- 0131-2442408, 09456095608, 09012122788

E-mail: imranqasmialig@yahoo.com

एक अहम बात

क़ुरआन मजीद के मतन को अ़रबी के अ़लावा हिन्दी या किसी दूसरी भाषा के रस्मुलख़त (लिपि) में बदलने पर अक्सर उलेमा की राय इसके विरोध में है। कुछ उलेमा का ख़्याल है कि इस तरह करने से क़ुरआन मजीद के हर्फ़ों की अदायगी में तहरीफ़ (कमी-बेशी और रद्दोबदल) हो जाती है और उनको भय (डर) है कि जिस तरह इन्जील और तौरात तहरीफ़ का शिकार हो गईं वैसे ही ख़ुदा न करे इसका भी वही हाल हो। यह तो ख़ैर नामुम्किन है, इसकी हिफ़ाज़त का वायदा अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद किया है और करोड़ों हाफ़िज़ों को क़ुरआन मजीद मुँह-ज़बानी याद है।

इस सिलसिले में नाचीज़ **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी** (इस तफ़सीर का हिन्दी अनुवादक) अ़र्ज़ करता है कि हक़ीक़त यह है कि अ़रबी रस्मुलख़त के अ़लावा दूसरी किसी भी भाषा में क़ुरआन मजीद को क़तई तौर पर सौ फ़ीसद सही नहीं पढ़ा जा सकता। इसलिए कि हर्फ़ों की बनावट के एतिबार से भी किसी दूसरी भाषा में यह गुंजाईश नहीं कि वह अ़रबी ज़बान के तमाम हुरूफ़ का मुतबादिल (विकल्प) पेश कर सके। फिर अगर किसी तरह कोई निशानी मुक़र्रर करके इस कमी को पूरा करने की कोशिश भी की जाए तो **'मख़ारिजे हुरूफ़'** यानी हुरूफ़ के निकालने का जो तरीक़ा, मक़ाम और इल्म है वह उस वैकल्पिक तरीक़े से हासिल नहीं किया जा सकता। जबकि यह सब को मालूम है कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ के निकालने में फ़र्क़ होने से अ़रबी ज़बान में मायने बदल जाते हैं। इसलिये अ़रबी मतन की जो हिन्दी दी गयी है उसको सिर्फ़ यह समझें कि वह आपके अन्दर अ़रबी क़ुरआन पढ़ने का शौक़ पैदा करने के लिये है। तिलावत के लिये अ़रबी ही पढ़िये और उसी को सीखिये। वरना हो सकता है कि किसी जगह ग़लत उच्चारण के सबब पढ़ने में सवाब के बजाय अ़ज़ाब के हक़दार न बन जायें।

मैंने अपनी पूरी कोशिश की है कि जितना मुझसे हो सके इस तफ़सीर को आसान बनाऊँ मगर फिर भी बहुत से मक़ामात पर ऐसे इल्मी मज़ामीन आये हैं कि उनको पूरी तरह आसान नहीं किया जा सका, मगर ऐसी जगहें बहुत कम हैं, उनके सबब इस अहम और क़ीमती सरमाये से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। अगर कोई मक़ाम समझ में न आये तो उस पर निशान लगाकर बाद में किसी आ़लिम से मालूम कर लें। तफ़सीर पढ़ने के लिये यक्सूई और इत्मीनान का एक वक़्त मुक़र्रर करना चाहिये, चाहे वह थोड़ा सा ही हो। अगर इस लगन के साथ इसका मुताला जारी रखा जायेगा तो उम्मीद है कि आप इस क़ीमती

ख़ज़ाने से इल्म व मालूमात का एक बड़ा हिस्सा हासिल कर सकेंगे। यह बात एक बार फिर अ़र्ज़ किये देता हूँ कि असल मतन को अ़रबी ही में पढ़िये तभी आप उसका किसी क़द्र हक़ अदा कर सकेंगे। यह ख़ालिके कायनात का कलाम है अगर इसको सीखने में थोड़ा वक़्त और पैसा भी ख़र्च हो जाये तो इस सौदे को सस्ता और लाभदायक समझिये। कल जब आख़िरत का आ़लम सामने होगा और क़ुरआन पाक पढ़ने वालों को इनामात व सम्मान से नवाज़ा जायेगा तो मालूम होगा कि अगर पूरी दुनिया की दौलत और तमाम उम्र ख़र्च करके भी इसको हासिल कर लिया जाता तो भी इसकी क़ीमत अदा न हो पाती।

हमने रुकूअ़, पाव, आधा, तीन पाव और सज्दे के निशानात मुक़र्रर किये हैं इनको ध्यान से देख लीजिये।

रुकूअ़	✿	पाव	❖
आधा	●	तीन पाव	▲
सज्दा	۞		

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (मुज़फ़्फ़र नगर उ. प्र.)

OOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOO

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

पेश-लफ़्ज़

वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब मद्द ज़िल्लुहुम की तफ़सीर **'मआरिफ़ुल्-क़ुरआन'** को अल्लाह तआला ने अवाम व ख़्वास में असाधारण मक़बूलियत अता फ़रमाई, और जिल्दे अव्वल का पहला संस्करण हाथों हाथ ख़त्म हो गया। दूसरे संस्करण की छपाई के वक़्त हज़रत मुसन्निफ़ मद्द ज़िल्लुहुम ने पहली जिल्द पर मुकम्मल तौर से दोबारा नज़र डाली और उसमें काफ़ी तरमीम व इज़ाफ़ा अमल में आया। इसी के साथ हज़रते वाला की इच्छा थी कि दूसरी बार छपने के वक़्त पहली जिल्द के शुरू में क़ुरआनी उलूम और उसूले तफ़सीर से मुताल्लिक़ एक मुख़्तसर मुक़द्दिमा भी तहरीर फ़रमायें, ताकि तफ़सीर के मुताले (अध्ययन) से पहले पढ़ने वाले हज़रात उन ज़रूरी मालूमात से लाभान्वित हो सकें, लेकिन लगातार बीमारी और कमज़ोरी की बिना पर हज़रत के लिये बज़ाते ख़ुद मुक़द्दिमे का लिखना और तैयार करना मुश्किल था, चुनाँचे हज़रते वाला ने यह ज़िम्मेदारी अहक़र के सुपुर्द फ़रमाई।

अहक़र ने हुक्म के पालन में और इस सौभाग्य को प्राप्त करने के लिये यह काम शुरू किया तो यह मुक़द्दिमा बहुत लम्बा हो गया, और क़ुरआनी उलूम के विषय पर ख़ास मुफ़स्सल किताब की सूरत बन गई। इस पूरी किताब को 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' के शुरू में बतौर मुक़द्दिमा शामिल करना मुश्किल था, इसलिये हज़रत वालिद साहिब के इशारे और राय से अहक़र ने इस मुफ़स्सल किताब का ख़ुलासा तैयार किया और सिर्फ़ वे चीज़ें बाक़ी रखीं जिनका मुताला तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन के मुताला करने वाले के लिये ज़रूरी था, और जो एक आम पाठक के लिये दिलचस्पी का सबब हो सकती थी। उस बड़े मज़मून का यह ख़ुलासा 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' पहली जिल्द के इस संस्करण में मुक़द्दिमे के तौर पर शामिल किया जा रहा है, अल्लाह तआला इसे मुसलमानों के लिये नाफ़े और मुफ़ीद (लाभदायक) बनाये और इस नाचीज़ के लिये आख़िरत का ज़ख़ीरा साबित हो।

इन विषयों पर तफ़सीली इल्मी मबाहिस (बहसें) अहक़र की उस विस्तृत और तफ़सीली किताब में मिल सकेंगे जो इन्शा-अल्लाह तआला जल्द ही एक मुस्तक़िल किताब की सूरत में प्रकाशित होगी (अब यह किताब 'उलूमुल-क़ुरआन' के नाम से प्रकाशित हो चुकी है)। लिहाज़ा जो हज़रात तहक़ीक़ और तफ़सील के तालिब हों वे उस किताब की तरफ़ रुजू फ़रमायें। व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाह, अलैहि तवक्कलतु व इलैहि उनीब।

अहक़र

मुहम्मद तक़ी उस्मानी

दारुल-उलूम कोरंगी, कराची- 14

23 रबीउल-अव्वल 1394 हिजरी

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर के बारे में एक ज़रूरी तंबीह

"मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन" में ख़ुलासा-ए-तफ़सीर सय्यिदी हकीमुल-उम्मत हज़रत थानवी क़ुद्दि-स सिर्रुहू की तफ़सीर "बयानुल-क़ुरआन" से जूँ-का-तूँ लिया गया है। लेकिन उसके कुछ मौक़ों में ख़ालिस इल्मी इस्तिलाहात आई हैं जिनका समझना अ़वाम के लिये मुश्किल है, नाचीज़ ने अ़वाम की रियायत करते हुए ऐसे अलफ़ाज़ को आसान करके लिख दिया है, और जो मज़मून ख़ालिस इल्मी था उसको "मआ़रिफ़ व मसाईल" के उनवान में लेकर आसान अन्दाज़ में लिख दिया है। वल्लाहुल्-मुस्तआ़न।

बन्दा मुहम्मद शफ़ी

मुख़्तसर विषय-सूची

मआरिफ़ुल-क़ुरआन जिल्द नम्बर (5)

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

मज़मून	पेज

✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪

* सूरः यूसुफ़ *

यह सूरत मक्की है। इसमें 111 आयतें
और 12 रुकूअ़ हैं।

सूरः यूसुफ़

सूरः यूसुफ़ मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 111 आयतें और 12 रुकूअ़ हैं।

آياتها ١١١ (١٢) سُورَةُ يُوسُفَ مَكِّيَّةٌ (٥٣) ركوعاتها ١٢

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

الٓرٰ تِلْكَ اٰيٰتُ الْكِتٰبِ الْمُبِيْنِ ۞ اِنَّآ اَنْزَلْنٰهُ قُرْءٰنًا عَرَبِيًّا لَّعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ۞ نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ اَحْسَنَ الْقَصَصِ بِمَآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ هٰذَا الْقُرْاٰنَ ۖ وَاِنْ كُنْتَ مِنْ قَبْلِهٖ لَمِنَ الْغٰفِلِيْنَ ۞ اِذْ قَالَ يُوْسُفُ لِاَبِيْهِ يٰٓاَبَتِ اِنِّيْ رَاَيْتُ اَحَدَ عَشَرَ كَوْكَبًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ رَاَيْتُهُمْ لِيْ سٰجِدِيْنَ ۞ قَالَ يٰبُنَيَّ لَا تَقْصُصْ رُءْيَاكَ عَلٰٓى اِخْوَتِكَ فَيَكِيْدُوْا لَكَ كَيْدًا ۗ اِنَّ الشَّيْطٰنَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ ۞ وَكَذٰلِكَ يَجْتَبِيْكَ رَبُّكَ وَيُعَلِّمُكَ مِنْ تَاْوِيْلِ الْاَحَادِيْثِ وَيُتِمُّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكَ وَعَلٰٓى اٰلِ يَعْقُوْبَ كَمَآ اَتَمَّهَا عَلٰٓى اَبَوَيْكَ مِنْ قَبْلُ اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْحٰقَ ۗ اِنَّ رَبَّكَ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۞ ع

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-रा। तिल्-क आयातुल्-किताबिल् मुबीन (1) इन्ना अन्ज़ल्नाहु क़ुरआनन् अ़-रबिय्यल् लअ़ल्लकुम् तअ़्क़िलून (2) नह़्नु नक़ुस्सु अ़लै-क अह़्सनल्-क़-ससि बिमा औहैना इलै-क हाज़ल्-क़ुर्आ-न व इन् कुन्-त मिन् क़ब्लिही लमिनल्-ग़ाफ़िलीन (3) इज़् क़ा-ल यूसुफ़ु लि-अबीहि या अ-बति इन्नी रऐतु अ-ह-द अ़-श-र कौकबंव्-	ये आयतें हैं स्पष्ट किताब की। (1) हमने इसको उतारा है क़ुरआन अ़रबी भाषा का ताकि तुम समझ लो। (2) हम बयान करते हैं तेरे पास बहुत अच्छा बयान इस वास्ते कि भेजा हमने तेरी तरफ़ यह क़ुरआन, और तू था इससे पहले अलबत्ता बेख़बरों में। (3) जिस वक़्त कहा यूसुफ़ ने अपने बाप से ऐ बाप! मैंने देखा सपने में ग्यारह सितारों को और सूरज को और चाँद को, देखा मैंने उनको

वश्शम्-स वल्क़-म-र रऐतुहुम् ली साजिदीन (4) क़ा-ल या बुनय्-य ला तक़्सुस् रुअ्या-क अ़ला इख़्वति-क फ़-यकीदू ल-क कैदन्, इन्नश्शैता-न लिल्इन्सानि अ़दुव्वुम् मुबीन (5) व कज़ालि-क यज्तबी-क रब्बु-क व युअ़ल्लिमु-क मिन् तअ्वीलिल्-अहादीसि व युतिम्मु निअ्-म-तहू अ़लै-क व अ़ला आलि यअ्क़ू-ब कमा अ-तम्महा अ़ला अ-बवै-क मिन् क़ब्लु इब्राही-म व इस्हा-क़, इन्-न रब्ब-क अ़लीमुन् हकीम (6) ❁	अपने वास्ते सज्दा करते हुए। (4) कहा ऐ बेटे! मत बयान करना सपना अपना अपने भाईयों के आगे, फिर वे बनायेंगे तेरे वास्ते कुछ फ़रेब, अलबत्ता शैतान है इनसान का खुला दुश्मन। (5) और इसी तरह चुनिन्दा करेगा तुझको तेरा रब और सिखलायेगा तुझको ठिकाने पर लगाना बातों का और पूरा करेगा अपना इनाम तुझ पर और याक़ूब के घर पर जैसा कि पूरा किया है तेरे दो बाप-दादों पर इससे पहले इब्राहीम और इस्हाक़ पर, यक़ीनन तेरा रब ख़बरदार है हिक्मत वाला। (6) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम्-रा (इसके मायने तो अल्लाह ही को मालूम हैं)। ये आयतें हैं एक स्पष्ट किताब की (जिसके अलफ़ाज़ और ज़ाहिरी मायने तो बहुत साफ़ हैं) हमने इसको उतारा है क़ुरआन अ़रबी भाषा का ताकि तुम (अ़रबी भाषा वाले होने की वजह से दूसरों से पहले) समझो (फिर तुम्हारे माध्यम से दूसरे लोग समझें)। हमने जो यह क़ुरआन आपके पास भेजा है इसके ज़रिये से हम आपसे एक बड़ा उम्दा क़िस्सा बयान करते हैं और इससे पहले आप (उस क़िस्से से) बिल्कुल बेख़बर थे (क्योंकि न आपने कोई किताब पढ़ी थी, न किसी शिक्षक से कुछ सीखा था, और क़िस्से की शोहरत भी ऐसी नहीं थी कि अ़वाम जानते हों। क़िस्से की शुरूआ़त इस तरह है कि) वह वक़्त क़ाबिले ज़िक्र है जबकि यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने वालिद (याक़ूब अ़लैहिस्सलाम) से कहा कि अब्बा! मैंने (सपने में) ग्यारह सितारे और सूरज और चाँद देखे हैं, उनको अपने सामने सज्दा करते हुए देखा है। उन्होंने (जवाब में) फ़रमाया कि बेटा! अपने इस सपने को अपने भाईयों के सामने बयान न करना (क्योंकि वे नुबुव्वत के ख़ानदान में से होने की वजह से इस सपने की ताबीर जानते हैं कि ग्यारह सितारे ग्यारह भाई और सूरज वालिद और चाँद माँ है, और सज्दा करने से मुराद इन सब का तुम्हारे लिये आज्ञाकारी व फ़रमाँबरदार होना है) तो वे तुम्हें (तकलीफ़ पहुँचाने) के लिये कोई ख़ास तदबीर करेंगे (यानी भाईयों में से अक्सर

यानी दस भाई बाप-शरीक थे उनसे ख़तरा था, सिर्फ़ एक भाई सगे थे यानी बिनयामीन, जिनसे किसी मुख़ालफ़त का तो अन्देशा नहीं था मगर यह संभावना व गुमान था कि उनके मुँह से बात निकल जाये) बिला शुब्हा शैतान आदमी का खुला दुश्मन है (इसलिये भाईयों के दिल में बुरे ख़्यालात डालेगा) और (जिस तरह अल्लाह तआ़ला तुमको यह इज़्ज़त देगा कि सब तुम्हारे ताबे व फ़रमाँबरदार होंगे) इसी तरह तुम्हारा रब तुमको (दूसरी इज़्ज़त यानी नुबुव्वत के लिये भी) मुन्तख़ब करेगा और तुमको सपनों की ताबीर का इल्म देगा और (दूसरी नेमतें देकर भी) तुम पर और याक़ूब की औलाद पर अपना इनाम पूरा करेगा जैसा कि इससे पहले तुम्हारे दादा इब्राहीम व इस्हाक़ (अ़लैहिमस्सलाम) पर अपना इनाम कामिल कर चुका है। वाक़ई तुम्हारा रब बड़ा इल्म वाला, बड़ी हिक्मत वाला है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः यूसुफ़ चार आयतों के सिवा पूरी मक्की सूरत है। इस सूरत में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा निरंतरता और तरतीब के साथ बयान हुआ है, और यह क़िस्सा सिर्फ़ इसी सूरत में आया है, पूरे क़ुरआन में दोबारा इसका कहीं ज़िक्र नहीं। यह ख़ुसूसियत सिर्फ़ क़िस्सा-ए-यूसुफ़ ही की है वरना तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के क़िस्से व वाक़िआ़त पूरे क़ुरआन में ख़ास हिक्मत के तहत टुकड़े-टुकड़े करके लाये गये हैं और बार-बार लाये गये हैं।

हक़ीक़त यह है कि दुनिया के इतिहास और गुज़रे ज़माने के तजुर्बात में इनसान की आईन्दा ज़िन्दगी के लिये बड़े सबक़ होते हैं, जिनकी क़ुदरती तासीर का रंग इनसान के दिल व दिमाग़ पर आ़म तालीमात से बहुत ज़्यादा गहरा और बेमेहनत होता है। इसी लिये क़ुरआने करीम जो दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये आख़िरी हिदायत नामे की हैसियत से भेजा गया है, इसमें दुनिया की पूरी क़ौमों की तारीख़ का वह चुनिन्दा हिस्सा लिया गया है जो इनसान की मौजूदा हालत और उसके अन्जाम के सुधार के लिये नुस्ख़ा-ए-कीमिया है, मगर क़ुरआने करीम ने दुनिया की तारीख़ के इस हिस्से को भी अपने मख़्सूस व बेमिसाल अन्दाज़ में इस तरह लिया है कि इसका पढ़ने वाला यह महसूस नहीं कर सकता कि यह कोई तारीख़ की किताब है, बल्कि हर मक़ाम पर जिस क़िस्से का कोई टुकड़ा इब्रत व नसीहत के लिये ज़रूरी समझा गया सिर्फ़ उतना ही हिस्सा वहाँ बयान किया गया है और फिर किसी दूसरे मौक़े पर उस हिस्से की ज़रूरत समझी गई तो फिर उसको दोहरा दिया गया। इसी लिये इन क़िस्सों के बयान में वाक़िआ़ती तरतीब की रियायत नहीं की गई, बाज़ जगह क़िस्से का शुरू का हिस्सा बाद में और आख़िरी हिस्सा पहले ज़िक्र कर दिया गया है। क़ुरआन के इस ख़ास अन्दाज़ में यह मुस्तक़िल हिदायत है कि दुनिया की तारीख़ और इसके गुज़रे वाक़िआ़त का पढ़ना याद रखना ख़ुद कोई मक़सद नहीं बल्कि इनसान का मक़सद हर क़िस्से व ख़बर से कोई इब्रत व नसीहत हासिल करना होना चाहिये।

इसी लिये तहक़ीक़ का दर्जा रखने वाले कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इनसान के कलाम की जो दो क़िस्में ख़बर और इन्शा मशहूर हैं, इन दोनों क़िस्मों में से असली मक़सद इन्शा ही है,

ख़बर बहैसियत ख़बर के कभी मक़सूद नहीं होती, बल्कि अ़क़्लमन्द इनसान का मक़सद हर ख़बर और वाक़िए को सुनने और देखने से सिर्फ़ अपने हाल और अ़मल का सुधार व बेहतरी होना चाहिये।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से को तरतीब के साथ बयान करने की एक हिक्मत यह भी हो सकती है कि तारीख़ लिखना भी एक मुस्तक़िल फ़न है, इसमें उस फ़न वालों के लिये ख़ास हिदायतें हैं कि बयान में न इतनी संक्षिप्तता होनी चाहिये जिससे बात ही पूरी न समझी जा सके और न इतना तूल होना चाहिये कि उसका पढ़ना और याद रखना मुश्किल हो जाये, जैसा कि इस क़िस्से के क़ुरआनी बयान से वाज़ेह होता है।

दूसरी वजह यह भी हो सकती है कि कुछ रिवायतों में है कि यहूदियों ने आज़माईश के लिये नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कहा था कि अगर आप सच्चे नबी हैं तो हमें बतलाईये कि याक़ूब की औलाद मुल्के शाम से मिस्र क्यों मुन्तक़िल हुई, और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ क्या था? उनके जवाब में वही के ज़रिये यह पूरा क़िस्सा नाज़िल किया गया जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मोजिज़ा और आपकी नुबुव्वत का बड़ा सुबूत व गवाह था क्योंकि आप उम्मी (बिना पढ़े-लिखे) थे और उम्र भर मक्का में मुक़ीम रहे, किसी से तालीम हासिल नहीं की, और न कोई किताब पढ़ी, फिर वो तमाम वाक़िआ़त जो तौरात में बयान हुए थे सही-सही बतला दिये, बल्कि कई वो चीज़ें भी बतला दीं जिनका ज़िक्र तौरात में न था और इसके ज़िमन में बहुत से अहकाम व हिदायतें हैं जो आगे बयान होंगे।

सबसे पहली आयत में हुरूफ़ 'अलिफ़्-लाम्-रा' मुक़त्तआ़त-ए-क़ुरआनिया में से हैं, जिनके मुताल्लिक़ सहाबा व ताबिईन और पहले बुज़ुर्गों की अक्सरियत का फ़ैसला यह है कि ये हुरूफ़ अल्लाह तआ़ला और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बीच एक राज़ है जिसको कोई तीसरा आदमी नहीं समझ सकता, और न उसके लिये मुनासिब है कि इसकी तहक़ीक़ और खोज के पीछे पड़े।

تِلْكَ اٰيٰتُ الْكِتٰبِ الْمُبِيْنِ٥

यानी ये हैं आयतें उस किताब की जो हलाल व हराम के अहकाम और हर काम की हदों, शर्तों और पाबन्दियों को बतलाकर इनसान को ज़िन्दगी के हर क्षेत्र में एक दरमियानी और ज़िन्दगी का सीधा निज़ाम बख़्शती हैं, जिनके नाज़िल करने का वायदा तौरात में पाया जाता है, और यहूदी लोग उससे वाक़िफ़ हैं।

اِنَّآ اَنْزَلْنٰهُ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا لَّعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ٥

यानी हमने नाज़िल किया इसको क़ुरआन अ़रबी बनाकर कि शायद तुम समझ-बूझ हासिल कर लो।

इसमें इशारा इस तरफ़ है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से का सवाल करने वाले अ़रब के यहूदी थे, अल्लाह तआ़ला ने उन्हीं की भाषा में यह क़िस्सा नाज़िल फ़रमा दिया ताकि वे ग़ौर

करें, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सच्चाई व हक़्क़ानियत पर ईमान लायें। और इस क़िस्से में जो अहकाम व हिदायतें हैं उनको अपने लिये रहनुमा बनायें।

इसी लिये इस जगह लफ़्ज़ 'लअ़ल्-ल' शायद के मायने में लाया गया है, क्योंकि उन मुख़ातबों का हाल मालूम था कि ऐसी स्पष्ट और वाज़ेह आयतें सामने आने के बाद भी उनसे हक़ के क़ुबूल करने की उम्मीद संदिग्ध थी।

نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ اَحْسَنَ الْقَصَصِ بِمَآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ هٰذَا الْقُرْاٰنَ وَاِنْ كُنْتَ مِنْ قَبْلِهٖ لَمِنَ الْغٰفِلِيْنَ○

यानी हम बयान करते हैं आपके लिये बेहतरीन क़िस्सा इस क़ुरआन को वही के ज़रिये आप पर नाज़िल करके, बेशक आप इससे पहले इन तमाम वाक़िआ़त से नावाक़िफ़ थे।

इसमें यहूदियों को तंबीह (चेतावनी) है कि तुमने जिस तरह हमारे रसूल की आज़माईश करनी चाही उसमें भी रसूल का कमाल स्पष्ट हो गया, क्योंकि वह पहले से उम्मी (बिना पढ़े-लिखे) और दुनिया की तारीख़ से नावाक़िफ़ थे, अब इस वाक़फ़ियत का कोई ज़रिया (माध्यम) सिवाय अल्लाह की तालीम और नुबुव्वत की वही (पैग़ाम) के नहीं हो सकता।

اِذْ قَالَ يُوْسُفُ لِاَبِيْهِ يٰٓاَبَتِ اِنِّيْ رَاَيْتُ اَحَدَ عَشَرَ كَوْكَبًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ رَاَيْتُهُمْ لِيْ سٰجِدِيْنَ○

यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने वालिद से कहा कि अब्बा जान! मैंने सपने में ग्यारह सितारे और सूरज और चाँद को देखा है, और यह देखा है कि वे मुझे सज्दा कर रहे हैं।

यह हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का सपना था जिसकी ताबीर के बारे में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ग्यारह सितारों से मुराद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के ग्यारह भाई और सूरज और चाँद से मुराद माँ-बाप थे।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा (माँ) अगरचे इस वाक़िए से पहले वफ़ात पा चुकी थीं, मगर उनकी ख़ाला उनके वालिद साहिब के निकाह में आ गई थीं, ख़ाला खुद भी माँ के क़ायम-मक़ाम समझी जाती है, खुसूसन जबकि वह वालिद के निकाह में आ जाये तो उर्फ़ (आ़म बोलचाल) में उसको माँ ही कहा जायेगा।

قَالَ يٰبُنَيَّ لَا تَقْصُصْ رُءْيَاكَ عَلٰٓى اِخْوَتِكَ فَيَكِيْدُوْا لَكَ كَيْدًا، اِنَّ الشَّيْطٰنَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ○

यानी बेटा तुम अपना यह ख़्वाब (सपना) अपने भाईयों से न कहना, ऐसा न हो कि वे यह ख़्वाब सुनकर तुम्हारी शान की बड़ाई मालूम करके तुम्हें हलाक करने की तदबीर करें, क्योंकि शैतान इनसान का खुला दुश्मन है, वह दुनिया के माल व रुतबे की ख़ातिर इनसान को ऐसे कामों में मुब्तला कर देता है।

इन आयतों में चन्द मसाईल क़ाबिले ज़िक्र हैं।

सपने की हक़ीक़त व दर्जा और उसकी क़िस्में

सबसे पहले ख़्वाब (सपने) की हक़ीक़त और उससे मालूम होने वाले वाक़िआ़त व ख़बरों का दर्जा और मक़ाम ज़िक्र के क़ाबिल है, तफ़सीरे मज़हरी में हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह रह. ने

फ़रमाया कि सपने की हक़ीक़त यह है कि इनसानी नफ़्स जिस वक़्त नींद या बेहोशी के सबब बदन की ज़ाहिरी तदबीर से फ़ारिग़ हो जाता है तो उसको उसकी क़ुव्वत-ए-ख़्यालिया की राह से कुछ सूरतें दिखाई देती हैं, इसी का नाम ख़्वाब है। फिर उसकी तीन क़िस्में हैं जिनमें से दो बिल्कुल बातिल हैं जिनकी कोई हक़ीक़त और असलियत नहीं होती, और एक अपनी ज़ात के एतिबार से सही व सच्ची है मगर उस सही क़िस्म में कभी कुछ अ़वारिज़ (रुकावटें और ख़राबियाँ) शामिल होकर उसको फ़ासिद और नाक़ाबिले एतिबार कर देते हैं।

तफ़सील इसकी यह है कि ख़्वाब (सपने) में इनसान जो मुख़्तलिफ़ सूरतें और वाक़िआ़त देखता है, कभी तो ऐसा होता है कि जागने की हालत में जो सूरतें इनसान देखता रहता है वही ख़्वाब में शक्लें बनकर नज़र आ जाती हैं, और कभी ऐसा होता है कि शैतान कुछ सूरतें और वाक़िआ़त उसके ज़ेहन में डालता है, कभी ख़ुश करने वाले और कभी डराने वाले, ये दोनों क़िस्में बातिल हैं जिनकी न कोई हक़ीक़त व असलियत है न उसकी कोई सही ताबीर हो सकती है। इनमें से पहली क़िस्म को **हदीसुन्नफ़्स** और दूसरी को **तस्वील-ए-शैतानी** कहा जाता है।

तीसरी क़िस्म जो सही और हक़ है वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से एक क़िस्म का **इल्हाम** है जो अपने बन्दे को आगाह व सचेत करने या ख़ुशख़बरी देने के लिये किया जाता है, अल्लाह तआ़ला अपने ग़ैब के ख़ज़ाने से कुछ चीज़ें उसके दिल व दिमाग़ में डाल देते हैं।

एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि मोमिन का ख़्वाब एक कलाम है जिसमें वह अपने रब से गुफ़्तगू और बातचीत करने का सम्मान हासिल करता है। यह हदीस तबरानी ने सही सनद से रिवायत की है। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसकी तहक़ीक़ सूफ़िया-ए-किराम के बयान के मुताबिक़ यह है कि आ़लम में जितनी चीज़ें वजूद में आने वाली हैं, उस वजूद से पहले हर चीज़ की एक ख़ास शक्ल मिसाली जहान में होती है, और उस मिसाली जहान में जिस तरह अपना मुस्तक़िल वजूद रखने वाले और साबित तथ्यों की सूरतें और शक्लें होती हैं इसी तरह मायनों और आराज़ (पेश आने वाली हालतों) की भी ख़ास शक्लें होती हैं। ख़्वाब में जब इनसानी नफ़्स बदन की ज़ाहिरी तदबीर से फ़ारिग़ होता है तो कई बार उसका ताल्लुक़ (सम्पर्क) मिसाली जहान से हो जाता है, वहाँ जो कायनात की शक्लें हैं वे उसको नज़र आ जाती हैं। फिर ये सूरतें ग़ैब के आ़लम से दिखाई जाती हैं। कई बार उनमें भी कुछ अ़वारिज़ (ख़राबी और हालात) ऐसे पैदा हो जाते हैं कि असल हक़ीक़त के साथ कुछ बातिल ख़्याली चीज़ें शामिल हो जाती हैं, इसलिये ख़्वाब की ताबीर देने वालों को भी उसकी ताबीर समझना दुश्वार हो जाता है, और कई बार वे तमाम अ़वारिज़ से पाक-साफ़ रहती हैं तो वे असल हक़ीक़त होती हैं, मगर उनमें भी कुछ ख़्वाब ताबीर के मोहताज होते हैं, क्योंकि उनमें असल हक़ीक़त स्पष्ट नहीं होती, ऐसी सूरत में भी अगर ताबीर ग़लत हो जाये तो वाक़िआ़ ख़्वाब से भिन्न हो जाता है, इसलिये सिर्फ़ वह ख़्वाब सही तौर से अल्लाह की तरफ़ से इल्हाम (दिल में डाली हुई बात) और साबित हक़ीक़त होगी जो अल्लाह की तरफ़ से हो और उसमें कुछ अ़वारिज़ में भी शामिल न हुए हों, और ताबीर भी सही दी गई हो।

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के सब ख़्वाब (सपने) ऐसे होते हैं इसी लिये उनके ख़्वाब भी वही (अल्लाह की तरफ़ से आये हुए पैग़ाम) का दर्जा रखते हैं। आ़म मुसलमानों के ख़्वाब में हर तरह के शुब्हे और संभावनायें रहती हैं इस लिये वे किसी के लिये हुज्जत और दलील नहीं होते, उनके ख़्वाबों में कई बार तबई और नफ़्सानी सूरतों की मिलावट हो जाती है, और कई बार गुनाहों की अंधेरी और मैल सही ख़्वाब पर छाकर उसको नाक़ाबिले भरोसा बना देती है, कई बार ऐसा होता है कि ताबीर सही समझ में नहीं आती।

ख़्वाब (सपने) की ये तीन क़िस्में जो ज़िक्र की गई हैं यही तफ़सील रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से नक़ल की गयी है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ख़्वाब की तीन क़िस्में हैं- एक क़िस्म शैतानी है जिसमें शैतान की तरफ़ से कुछ सूरतें ज़ेहन व दिमाग़ में आती हैं। दूसरी वह जो आदमी अपनी बेदारी (जागने की हालत) में देखता रहता है वही सूरतें ख़्वाब में सामने आ जाती हैं। तीसरी क़िस्म जो सही और हक़ है वह नुबुव्वत के हिस्सों में से छियालीसवाँ हिस्सा है यानी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से इल्हाम है।

ख़्वाब के नुबुव्वत का हिस्सा होने के मायने और इसकी वज़ाहत

यह क़िस्म जो हक़ और सही है और सही हदीसों में नुबुव्वत का एक हिस्सा और भाग क़रार दी गई है, इसमें हदीस की रिवायतें मुख़्तलिफ़ हैं। कुछ में चालीसवाँ हिस्सा और कुछ में छियालीसवाँ हिस्सा बतलाया और कुछ रिवायतों में उनचास और पचास और सत्तरवाँ हिस्सा होना भी मन्क़ूल है। ये सब रिवायतें तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में जमा करके अ़ल्लामा इब्ने अ़ब्दुल-बर्र की तहक़ीक़ यह नक़ल की है कि इनमें कोई टकराव और विरोधाभास नहीं, बल्कि हर एक रिवायत अपनी जगह सही व दुरुस्त है, और हिस्सों के अलग-अलग और भिन्न होने का यह इख़्तिलाफ़ ख़्वाब देखने वालों के अलग-अलग हालात की बिना पर है। जो शख़्स सच्चाई, अमानत, दियानत और कामिल ईमान की ख़ूबियों का मालिक है उसका ख़्वाब नुबुव्वत का चालीसवाँ हिस्सा होगा और जो इन गुणों व ख़ूबियों में कुछ कम है उसका छियालीसवाँ या पचासवाँ भाग होगा, और जो और कम है उसका ख़्वाब नुबुव्वत का सत्तरवाँ हिस्सा होगा।

यहाँ यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि सच्चे ख़्वाब का नुबुव्वत का हिस्सा होने से क्या मुराद है। तफ़सीरे मज़हरी में इसका मतलब यह बयान किया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नुबुव्वत की वही का सिलसिला तेईस साल जारी रहा, उनमें से पहली छमाही में अल्लाह की यह वही (पैग़ाम व अहकाम) ख़्वाबों की सूरत में आती रही, बाक़ी पैंतालीस छमाहियों में जिब्रीले अमीन अ़लैहिस्सलाम के पैग़ाम पहुँचाने की सूरत में आई। इस हिसाब से सच्चे ख़्वाबे नुबुव्वत की वही का छियालीसवाँ हिस्सा हुआ, और जिन रिवायतों में कम या ज़्यादा की संख्या बयान हुई हैं उनमें या तो तक़रीबी कलाम किया गया है या वो सनद के

एतिबार से कमज़ोर व बेएतिबार हैं।

और इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि इसके नुबुव्वत का हिस्सा होने से मुराद यह है कि ख़्वाब में कई बार इनसान ऐसी चीज़ें देखता है जो उसकी क़ुदरत (ताक़त व पहुँच) में नहीं, जैसे यह देखे कि वह आसमान पर उड़ रहा है, या ग़ैब की ऐसी चीज़ें देखे जिनका इल्म हासिल करना उसकी क़ुदरत में न था तो उसका ज़रिया सिवाय अल्लाह की इमदाद व इल्हाम के और कुछ नहीं हो सकता, जो असल में नुबुव्वत का ख़ास्सा (विशेषता) है, इसलिये इसको नुबुव्वत का एक हिस्सा क़रार दिया गया।

क़ादियानी दज्जाल के एक मुग़ालते की तरदीद

यहाँ कुछ लोगों को एक अजीब मुग़ालता (धोखा) लगा है कि इस नुबुव्वत के हिस्से के दुनिया में बाक़ी रहने और जारी रहने से नुबुव्वत का बाक़ी रहना और जारी रहना समझ बैठे हैं जो क़ुरआन मजीद के स्पष्ट और क़तई बयानात, दलीलों और बेशुमार सही हदीसों के ख़िलाफ़ और पूरी उम्मत के इजमाई (सर्वसम्मति से माने हुए) ख़त्म-ए-नुबुव्वत के अक़ीदे के विरुद्ध है। वे लोग यह न समझे कि किसी चीज़ का एक हिस्सा मौजूद होने से उस चीज़ का मौजूद होना लाज़िम नहीं आता। अगर किसी शख़्स का एक नाख़ुन या एक बाल कहीं मौजूद हो तो कोई इनसान यह नहीं कह सकता कि यहाँ वह शख़्स मौजूद है। मशीन के बहुत से कल-पुर्ज़ों में से अगर किसी के पास एक पुर्ज़ा या एक स्क्रू मौजूद हो और वह कहने लगे कि मेरे पास फ़ुलाँ मशीन मौजूद है तो दुनिया भर के इनसान उसको या तो झूठा कहेंगे या बेवक़ूफ़।

हदीस शरीफ़ की वज़ाहत के मुताबिक़ सच्चे ख़्वाब बिला शुब्हा नुबुव्वत का हिस्सा हैं मगर नुबुव्वत नहीं, नुबुव्वत तो ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ख़त्म हो चुकी है।

सही बुख़ारी में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

لَمْ يَبْقَ مِنَ النُّبُوَّةِ اِلَّا الْمُبَشِّرَاتُ.

यानी आईन्दा नुबुव्वत का कोई हिस्सा सिवाय मुबश्शिरात के बाक़ी न रहेगा। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया कि मुबश्शिरात से क्या मुराद है? तो फ़रमाया कि "सच्चे ख़्वाब" जिससे साबित हुआ कि नुबुव्वत किसी क़िस्म या किसी सूरत में बाक़ी नहीं, सिर्फ़ उसका छोटा-सा हिस्सा बाक़ी है जिसको मुबश्शिरात या सच्चे ख़्वाब कहा जा सकता है।

कभी काफ़िर व बदकार आदमी का सपना भी सच्चा हो सकता है

और यह बात भी क़ुरआन व हदीस से साबित और तजुर्बों से मालूम है कि सच्चे ख़्वाब कई बार फ़ासिक़ व फ़ाजिर (गुनाहगार और बुरे आमाल वाले) बल्कि काफ़िर को भी आ सकते हैं। सूरः यूसुफ़ ही में हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के जेल के दो साथियों के सपने और उनका सच्चा

होना, इसी तरह मिस्र के बादशाह का सपना और उसका सच्चा होना क़ुरआन में बयान हुए हैं, हालाँकि ये तीनों मुसलमान न थे। हदीस में ईरान के बादशाह किसरा का ख़्वाब ज़िक्र हुआ है जो उसने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेसत (नबी बनकर तशरीफ़ लाने) के बारे में देखा था। वह ख़्वाब सही हुआ हालाँकि किसरा मुसलमान न था। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की फूफी आ़तिका ने कुफ़्र की हालत में आपके बारे में सच्चा ख़्वाब देखा था, इसी तरह काफ़िर बादशाह बुख़्ते-नस्सर के जिस ख़्वाब की ताबीर हज़रत दानियाल अ़लैहिस्सलाम ने दी वह ख़्वाब सच्चा था।

इससे मालूम हुआ कि महज़ इतनी बात कि किसी को कोई सच्चा ख़्वाब नज़र आ जाये और वाक़िआ़ उसके मुताबिक़ हो जाये उसके नेक सालेह बल्कि मुसलमान होने की भी दलील नहीं हो सकती, हाँ यह सही है कि अल्लाह तआ़ला का आ़म दस्तूर यही है कि सच्चे और नेक लोगों के ख़्वाब उमूमन सच्चे होते हैं, गुनाहगार व बदकार लोगों के उमूमन **हदीसुन्नफ़्स** या **तस्वीले शैतानी** की बातिल क़िस्मों से हुआ करते हैं, मगर कभी इसके ख़िलाफ़ भी हो जाता है।

बहरहाल! हदीस की वज़ाहत के मुताबिक़ सच्चे ख़्वाब आ़म उम्मत के लिये एक ख़ुशख़बरी या चेतावनी से ज़्यादा कोई मक़ाम नहीं रखते, न ख़ुद उसके लिये किसी मामले में हुज्जत हैं न दूसरों के लिये। कुछ नावाक़िफ़ लोग ऐसे ख़्वाब (सपने) देखकर तरह-तरह के वस्वसों (ख़्यालात) में मुब्तला हो जाते हैं। कोई उनको अपने वली और बुज़ुर्ग होने की निशानी समझने लगता है, कोई उनसे हासिल होने वाली बातों को शरई अहकाम का दर्जा देने लगता है, ये सब चीज़ें बेबुनियाद हैं, ख़ास तौर पर जबकि यह भी मालूम हो चुका हो कि सच्चे ख़्वाबों में भी ज़्यादातर नफ़्सानी या शैतानी या दोनों क़िस्म के ख़्यालात की मिलावट का शुब्हा व संभावना है।

ख़्वाब को हर शख़्स से बयान करना दुरुस्त नहीं

मसलाः आयत 'या बुनय्-य.....' यानी इसी सूरत की आयत नम्बर 5 में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपना ख़्वाब (सपना) भाईयों के सामने बयान करने से मना फ़रमाया। इससे मालूम हुआ कि ख़्वाब ऐसे शख़्स के सामने बयान न करना चाहिये जो उसका ख़ैरख़्वाह और हमदर्द न हो, और न ऐसे शख़्स के सामने जो ख़्वाब की ताबीर और मतलब बताने में माहिर न हो।

हदीस की किताब जामे तिर्मिज़ी में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सच्चा ख़्वाब नुबुव्वत के चालीस हिस्सों में से एक हिस्सा है, और ख़्वाब अधर में रहता है जब तक किसी से बयान न किया जाये, जब बयान कर दिया गया और सुनने वाले ने कोई ताबीर दे दी तो ताबीर के मुताबिक़ ज़ाहिर हो जाता है, इसलिये चाहिये कि ख़्वाब किसी से न बयान करे सिवाय उस शख़्स के कि जो आ़लिम व समझदार हो या कम से कम उसका दोस्त और भला चाहने वाला हो।

और तिर्मिज़ी व इब्ने माजा में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि

ख़्वाब तीन किस्म का होता है- एक अल्लाह की तरफ़ से खुशख़बरी, दूसरें नफ़्सानी ख़्यालात, तीसरे शैतानी तसव्वुरात। इसलिये जो शख़्स कोई ख़्वाब देखे और उसे भला मालूम हो तो उसको अगर चाहे तो लोगों से बयान कर दे और अगर उसमें कोई बुरी बात नज़र आये तो किसी से न कहे, बल्कि उठकर नमाज़ पढ़ ले। और सही मुस्लिम की हदीस में यह भी है कि बुरा ख़्वाब देखे तो बाईं तरफ़ तीन मर्तबा थूक दे और अल्लाह तआला से उसकी बुराई से पनाह माँगे, और किसी से ज़िक्र न करे तो वह ख़्वाब उसको कोई नुक़सान न देगा। वजह यह है कि कुछ ख़्वाब तो शैतानी तसव्वुरात होते हैं वो इस अ़मल से दफ़ा हो जायेंगे और अगर सच्चा ख़्वाब है तो इस अ़मल के ज़रिये उसकी बुराई दूर हो जाने की भी उम्मीद है।

मसलाः ख़्वाब के उसकी ताबीर पर अटके और रुके रहने का मतलब तफ़सीर-ए-मज़हरी में यह बयान फ़रमाया है कि कुछ तक़दीरी मामलात मुब्रम यानी निश्चित नहीं होते, बल्कि मुअ़ल्लक़ (अधर में और लटके हुए) होते हैं कि फ़ुलाँ काम हो गया तो यह मुसीबत टल जायेगी और न हुआ तो पड़ जायेगी। जिसको तक़दीर-ए-मुअ़ल्लक़ कहा जाता है, ऐसी सूरत में बुरी ताबीर देने से मामला बुरा और अच्छी ताबीर देने से मामला अच्छा हो जाता है। इसी लिये तिर्मिज़ी की उक्त हदीस में ऐसे शख़्स से ख़्वाब (सपना) बयान करने की मनाही की गई है जो अ़क़्लमन्द न हो, या उसका ख़ैरख़्वाह व हमदर्द न हो। और यह वजह भी हो सकती है कि ख़्वाब की कोई बुरी ताबीर सुनकर इनसान के दिल में यही ख़्याल जमता है कि अब मुझ पर मुसीबत आने वाली है, और हदीस में है कि अल्लाह तआला ने फ़रमायाः

انا عند ظن عبدی بی

यानी "बन्दा मेरे मुताल्लिक़ जैसा गुमान करता है मैं उसके हक़ में वैसा ही हो जाता हूँ।" जब अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मुसीबत आने पर यक़ीन कर बैठा तो अल्लाह की इस आ़दत के मुताबिक़ उस पर मुसीबत आना ज़रूरी हो गया।

मसलाः इस आयत से जो यह मालूम हुआ कि जिस ख़्वाब में कोई बात तकलीफ़ व मुसीबत की नज़र आये वह किसी से बयान न करे, हदीस की रिवायतों से मालूम होता है कि यह मनाही सिर्फ़ शफ़क़त और हमदर्दी की बिना पर है, शरई तौर पर हराम नहीं है। इसलिये अगर किसी से बयान कर दे तो कोई गुनाह नहीं, क्योंकि सही हदीसों में है कि उहुद की जंग के वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया— मैंने ख़्वाब में देखा है कि मेरी तलवार ज़ुल्फ़क़ार टूट गई, और देखा कि कुछ गायें ज़िबह हो रही हैं, जिसकी ताबीर हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की शहादत और बहुत से मुसलमानों की शहादत थी जो बड़ा हादसा है मगर आपने इस ख़्वाब को सहाबा से बयान फ़रमा दिया था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मसलाः इस आयत से यह भी मालूम हो गया कि मुसलमान को दूसरे के शर (बुराई) से बचाने के लिये उसकी किसी बुरी ख़स्लत या नीयत का इज़हार कर देना जायज़ है, यह ग़ीबत (चुग़ली) में दाख़िल नहीं। जैसे किसी शख़्स को मालूम हो जाये कि फ़ुलाँ आदमी किसी दूसरे आदमी के घर में चोरी करने या उसको क़त्ल करने का मन्सूबा बना रहा है तो उसको चाहिये

कि उस शख़्स को बाख़बर कर दे, यह ग़ीबत हराम में दाख़िल नहीं, जैसा कि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से इसका इज़हार कर दिया कि भाईयों से उनकी जान को ख़तरा है।

मसलाः इसी आयत से यह भी मालूम हुआ कि जिस शख़्स के मुताल्लिक़ यह संदेह व गुमान हो कि हमारी ख़ुशहाली और नेमत का ज़िक्र सुनेगा तो उसको हसद (जलन) होगा, और नुक़सान पहुँचाने की फ़िक्र करेगा तो उसके सामने अपनी नेमत, दौलत व इ़ज़्ज़त वग़ैरह का ज़िक्र न करे, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है किः

"अपने मक़सदों को कामयाब बनाने के लिये उनको राज़ में रखने से मदद हासिल करो, क्योंकि दुनिया में हर नेमत वाले से हसद किया जाता है।"

मसलाः इस आयत और बाद की आयतों से जिनमें हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को क़त्ल करने या कुएँ में डालने का मश्विरा और उस पर अ़मल मज़कूर है, यह भी वाज़ेह हो गया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई अल्लाह के नबी और पैग़म्बर न थे, वरना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़त्ल का मश्विरा और फिर उनको बरबाद करने की तदबीर और बाप की नाफ़रमानी का अ़मल उनसे न होता, क्योंकि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का सब गुनाहों से पाक और मासूम (सुरक्षित) होना ज़रूरी है किताब तबरी में जो उनको नबी कहा गया है वह सही नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

छठी आयत में अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से चन्द इनामात अ़ता करने का वायदा फ़रमाया है। अव्वलः

كَذٰلِكَ يَجْتَبِيْكَ رَبُّكَ

यानी अल्लाह तआ़ला अपने इनामात व एहसानात के लिये आपका चयन फ़रमा लेंगे, जिसका ज़हूर मुल्क मिस्र में हुकूमत व इ़ज़्ज़त और दौलत मिलने से हुआ। दूसरेः

وَيُعَلِّمُكَ مِنْ تَاْوِيْلِ الْاَحَادِيْثِ

इसमें **अहादीस** से मुराद लोगों के ख़्वाब (सपने) हैं। मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला आपको ख़्वाब की ताबीर (मतलब बयान करने) का इल्म सिखा देंगे। इससे यह भी मालूम हुआ कि ख़्वाब की ताबीर एक मुस्तक़िल फ़न है जो अल्लाह तआ़ला किसी-किसी को अ़ता फ़रमा देते हैं, हर शख़्स इसका अहल (क़ाबलियत रखने वाला) नहीं।

मसलाः तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि अ़ब्दुल्लाह बिन शद्दाद बिन अल्हाद ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस ख़्वाब (सपने) की ताबीर चालीस साल बाद ज़ाहिर हुई। इससे मालूम हुआ कि ताबीर का फ़ौरन ज़ाहिर होना कोई ज़रूरी नहीं। तीसरा वायदा हैः

وَيُتِمُّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكَ

यानी "अल्लाह तआ़ला आप पर अपनी नेमत पूरी फ़रमा देंगे।" इसमें नुबुव्वत अ़ता करने की तरफ़ इशारा है और इसी की तरफ़ बाद के जुमलों में इशारा हैः

كَمَآ اَتَمَّهَا عَلٰٓى اَبَوَيْكَ مِنْ قَبْلُ اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْحٰقَ

यानी जिस तरह हम अपनी नुबुव्वत की नेमत तुम्हारे बाप-दादा इब्राहीम और इस्हाक़ अ़लैहिमस्सलाम पर आप से पहले पूरी कर चुके हैं। इसमें इस तरफ़ भी इशारा हो गया कि ख़्वाब की ताबीर का फ़न जैसा कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को दिया गया इसी तरह इब्राहीम व इस्हाक़ अ़लैहिमस्सलाम को भी सिखाया गया था।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّ رَبَّكَ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

"यानी तुम्हारा परवर्दिगार बड़ा इल्म वाला बड़ी हिक्मत वाला है।" न उसके लिये किसी को कोई फ़न सिखाना मुश्किल है और न हिक्मत के सबब वह यह फ़न हर शख़्स को सिखाता है, बल्कि अपनी हिक्मत के मातहत चयन करके किसी को यह हुनर दे देता है।

لَقَدْ كَانَ فِىْ يُوْسُفَ وَاِخْوَتِهٖٓ اٰيٰتٌ لِّلسَّآئِلِيْنَ ۝ اِذْ قَالُوْا لَيُوْسُفُ وَاَخُوْهُ اَحَبُّ اِلٰٓى اَبِيْنَا مِنَّا وَ نَحْنُ عُصْبَةٌ ؕ اِنَّ اَبَانَا لَفِىْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنِ ۝ اقْتُلُوْا يُوْسُفَ اَوِاطْرَحُوْهُ اَرْضًا يَّخْلُ لَكُمْ وَجْهُ اَبِيْكُمْ وَتَكُوْنُوْا مِنْۢ بَعْدِهٖ قَوْمًا صٰلِحِيْنَ ۝ قَالَ قَآئِلٌ مِّنْهُمْ لَا تَقْتُلُوْا يُوْسُفَ وَاَلْقُوْهُ فِىْ غَيٰبَتِ الْجُبِّ يَلْتَقِطْهُ بَعْضُ السَّيَّارَةِ اِنْ كُنْتُمْ فٰعِلِيْنَ ۝ قَالُوْا يٰٓاَبَانَا مَا لَكَ لَا تَاْمَنَّا عَلٰى يُوْسُفَ وَاِنَّا لَهٗ لَنٰصِحُوْنَ ۝ اَرْسِلْهُ مَعَنَا غَدًا يَّرْتَعْ وَيَلْعَبْ وَاِنَّا لَهٗ لَحٰفِظُوْنَ ۝ قَالَ اِنِّىْ لَيَحْزُنُنِىْٓ اَنْ تَذْهَبُوْا بِهٖ وَاَخَافُ اَنْ يَّاْكُلَهُ الذِّئْبُ وَاَنْتُمْ عَنْهُ غٰفِلُوْنَ ۝ قَالُوْا لَئِنْ اَكَلَهُ الذِّئْبُ وَنَحْنُ عُصْبَةٌ اِنَّآ اِذًا لَّخٰسِرُوْنَ ۝ فَلَمَّا ذَهَبُوْا بِهٖ وَاَجْمَعُوْٓا اَنْ يَّجْعَلُوْهُ فِىْ غَيٰبَتِ الْجُبِّ ۚ وَاَوْحَيْنَآ اِلَيْهِ لَتُنَبِّئَنَّهُمْ بِاَمْرِهِمْ هٰذَا وَهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ ۝ وَجَآءُوْٓ اَبَاهُمْ عِشَآءً يَّبْكُوْنَ ۝ قَالُوْا يٰٓاَبَانَآ اِنَّا ذَهَبْنَا نَسْتَبِقُ وَتَرَكْنَا يُوْسُفَ عِنْدَ مَتَاعِنَا فَاَكَلَهُ الذِّئْبُ ۚ وَمَآ اَنْتَ بِمُؤْمِنٍ لَّنَا وَلَوْ كُنَّا صٰدِقِيْنَ ۝ وَجَآءُوْ عَلٰى قَمِيْصِهٖ بِدَمٍ كَذِبٍ ؕ قَالَ بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا ؕ فَصَبْرٌ جَمِيْلٌ ؕ وَاللّٰهُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَا تَصِفُوْنَ ۝ وَجَآءَتْ سَيَّارَةٌ فَاَرْسَلُوْا وَارِدَهُمْ فَاَدْلٰى دَلْوَهٗ ؕ قَالَ يٰبُشْرٰى هٰذَا غُلٰمٌ ؕ وَاَسَرُّوْهُ بِضَاعَةً ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ۝ وَشَرَوْهُ بِثَمَنٍۢ بَخْسٍ دَرَاهِمَ مَعْدُوْدَةٍ ۚ وَكَانُوْا فِيْهِ مِنَ الزَّاهِدِيْنَ ۝

ल-क़द् का-न फ़ी यूसु-फ़ व इख़्वतिही आयातुल् लिस्सा-इलीन (7) इज़् क़ालू ल-यूसुफ़ु व अख़ूहु अहब्बु इला अबीना मिन्ना व नह्नु अुस्बतुन्,	अलबत्ता हैं यूसुफ़ के क़िस्से में और उसके भाईयों के क़िस्से में निशानियाँ पूछने वालों के लिये। (7) जब कहने लगे अलबत्ता यूसुफ़ और उसका भाई ज़्यादा प्यारा है हमारे बाप को हम से, और हम

इन्-न अबाना लफ़ी ज़लालिम्-मुबीन (8) उक़्तुलू यूसु-फ़ अविऱ्हूहु अर्ज़ंय्यख़्लु लकुम् वज्हु अबीकुम् व तकूनू मिम्-बअ्दिही क़ौमन् सालिहीन (9) क़ा-ल क़ाइलुम्-मिन्हुम् ला तक़्तुलू यूसु-फ़ व अल्क़ूहु फ़ी ग़याबतिल्-जुब्बि यल्तक़ित्हु बअ्ज़ुस्सय्यारति इन् कुन्तुम् फ़ाअिलीन (10) क़ालू या अबाना मा ल-क ला तअ्मन्ना अ़ला यूसु-फ़ व इन्ना लहू लनासिहून (11) अर्सिल्हु म-अ़ना ग़दंय्-यर्तअ् व यल्अब् व इन्ना लहू लहाफ़िज़ून (12) क़ा-ल इन्नी ल-यह्ज़ुनुनी अन् तज़्हबू बिही व अख़ाफ़ु अंय्यअ्कु-लहुज़्ज़िअ्बु व अन्तुम् अ़न्हु ग़ाफ़िलून (13) क़ालू ल-इन् अ-क-लहुज़्ज़िअ्बु व नह्नु अुस्बतुन् इन्ना इज़ल्-लख़ासिरून (14) फ़-लम्मा ज़-हबू बिही व अज्मअू अंय्यज्-अ़लूहु फ़ी ग़याबतिल्-जुब्बि व औहैना इलैहि लतुनब्बि-अन्नहुम् बिअम्रिहिम् हाज़ा व हुम् ला यश्अ़ुरून (15) व जाऊ अबाहुम् अ़िशाअंय्-यब्कून (16) क़ालू

उनसे ज़्यादा क़ुव्वत वाले हैं, अलबत्ता हमारा बाप खुली ख़ता पर है। (8) मार डालो यूसुफ़ को या फेंक दो किसी मुल्क में कि ख़ालिस रहे तुम पर तवज्जोह तुम्हारे बाप की, और हो रहना उसके बाद नेक लोग। (9) बोला एक बोलने वाला उनमें से मत मार डालो यूसुफ़ को और डाल दो उसको गुमनाम कुएँ में कि उठा ले जाये उसको कोई मुसाफ़िर, अगर तुमको करना है। (10) बोले ऐ बाप क्या बात है कि तू एतिबार नहीं करता हमारा यूसुफ़ पर और हम तो उसके ख़ैरख़्वाह हैं। (11) भेज उसको हमारे साथ कल को, ख़ूब खाये और खेले और हम तो उसके निगहबान हैं। (12) बोला मुझको ग़म होता है इससे कि तुम उसको ले जाओ और डरता हूँ इससे कि खा जाये उसको भेड़िया और तुम उससे बेख़बर रहो। (13) बोले अगर खा गया उसको भेड़िया और हम एक जमाअ़त हैं क़ुव्वत वाली तो हमने सब कुछ गंवा दिया। (14) फिर जब लेकर चले उसको और सहमत हुए कि डालें उसको गुमनाम कुएँ में, और हमने इशारा कर दिया उसको कि तू जतायेगा उनको उनका यह काम और वे तुझको न जानेंगे। (15) और आये अपने बाप के पास अंधेरा पड़े रोते हुए। (16) कहने लगे

या अबाना इन्ना ज़हब्ना नस्तबिक़ु व तरक्ना यूसु-फ़ अ़िन्-द मताअ़िना फ़-अ-क-लहुज़्-ज़िअ्बु व मा अन्-त बिमुअ्मिनिल्लना व लौ कुन्ना सादिक़ीन (17) ▲ व जाऊ अ़ला क़मीसिही बि-दमिन् कज़िबिन्, का-ल बल् सव्व-लत् लकुम् अन्फ़ुसुकुम् अम्रन्, फ़-सब्रुन् जमीलुन्, वल्लाहुल्-मुस्तआ़नु अ़ला मा तसिफ़ून (18) व जाअत् सय्यारतुन् फ़-अर्सलू वारि-दहुम् फ़-अद्ला दल्वहू, का-ल या बुश्रा हाज़ा ग़ुलामुन्, व अ-सर्रूहु बिज़ा-अ़तन्, वल्लाहु अ़लीमुम्-बिमा यअ्मलून (19) व शरौहु बि-स-मनिम् बख़्सिन् दराहि-म मअ़्दू-दतिन् व कानू फ़ीहि मिनज़्ज़ाहिदीन (20) ❁

ऐ बाप! हम लगे दौड़ने आगे निकलने को और छोड़ा यूसुफ़ को अपने सामान के पास, फिर उसको खा गया भेड़िया, और तू यक़ीन न करेगा हमारा कहना और अगरचे हम सच्चे हों। (17) ▲ और लाये उसके कुर्ते पर ख़ून लगाकर झूठ, बोला यह हरगिज़ नहीं बल्कि बना दी है तुमको तुम्हारे नफ़्सों (दिल और दिमाग़ों) ने एक बात, अब सब्र ही बेहतर है, और अल्लाह ही से मदद माँगता हूँ उस बात पर जो तुम ज़ाहिर करते हो। (18) और आया एक क़ाफ़िला फिर भेजा अपना पानी भरने वाला, उसने लटका दिया अपना डोल, कहने लगा क्या ख़ुशी की बात है यह है एक लड़का, और छुपा लिया उसको तिजारत का माल समझकर और अल्लाह ख़ूब जानता है जो कुछ वे करते हैं। (19) और बेच आये उसको भाई नाक़िस क़ीमत के बदले, गिनती की चवन्नियाँ, और हो रहे थे उससे बेज़ार। (20) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) के और उनके (बाप-शरीक सौतेले) भाईयों के क़िस्से में (ख़ुदा की क़ुदरत और आपकी नुबुव्वत की) दलीलें मौजूद हैं उन लोगों के लिये जो (आपसे उनका क़िस्सा) पूछते हैं (क्योंकि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ऐसी बेकसी और बेबसी से सल्तनत व हुकूमत तक पहुँचा देना यह ख़ुदा ही का काम था जिससे मुसलमानों के लिये सीख और ईमानी क़ुव्वत हासिल होगी। और यहूदी जिन्होंने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आज़माईश के लिये यह क़िस्सा पूछा था उनके लिये इसमें नुबुव्वत की दलील मिल सकती है)। वह वक़्त क़ाबिले ज़िक्र है जबकि उन (सौतेले) भाईयों ने (आपसी मश्विरे के तौर पर) यह गुफ़्तगू की कि (यह क्या बात है कि) यूसुफ़ और उनका (सगा) भाई (बिनयामीन) हमारे बाप को ज़्यादा प्यारे हैं हालाँकि (वे

दोनों कम-उम्री की वजह से उनकी ख़िदमत के क़ाबिल भी नहीं, और) हम एक जमाअ़त की जमाअ़त हैं (कि अपनी ताक़त व कसरत की वजह से उनकी हर तरह की ख़िदमत भी करते हैं) वाक़ई हमारे बाप खुली ग़लती में हैं (इसलिये तदबीर यह करनी चाहिये कि उन दोनों में भी ज़्यादा प्यार यूसुफ़ से है उसको किसी तरह उनके पास से हटाना चाहिये, जिसकी सूरत यह है कि) या तो यूसुफ़ को क़त्ल कर डालो या किसी (दूर-दराज़ की) सरज़मीन में डाल आओ तो (फिर) तुम्हारे बाप का रुख़ ख़ालिस तुम्हारी तरफ़ हो जायेगा और तुम्हारे सब काम बन जायेंगे।

उन्हीं में से एक कहने वाले ने कहा कि यूसुफ़ को क़त्ल न करो (इसलिये कि यह बड़ा जुर्म है) और उनको किसी अंधेरे कुएँ में डाल दो (जिसमें इतना पानी न हो जिसमें डूबने का ख़तरा हो, क्योंकि वह तो क़त्ल ही की एक सूरत है, अलबत्ता बस्ती और आ़म रास्ते से बहुत दूर भी न हो) ताकि उनको कोई राह चलता मुसाफ़िर निकाल ले जाये, अगर तुमको (यह काम) करना ही है (तो इस तरह करो, इस पर सब की राय बन गई और) सब ने (मिलकर बाप से) कहा कि अब्बा! इसकी क्या वजह है कि यूसुफ़ के बारे में आप हमारा एतिबार नहीं करते (क्योंकि कभी कहीं हमारे साथ नहीं भेजते) हालाँकि हम उसके (दिल व जान से) ख़ैरख़्वाह हैं, (ऐसा न होना चाहिये बल्कि) आप उसको कल हमारे साथ (जंगल) भेजिये कि ज़रा वह खायें खेलें और हम उनकी पूरी हिफ़ाज़त रखेंगे। याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (मुझे साथ भेजने से दो चीज़ें रुकावट हैं- एक रंज और एक ख़ौफ़। रंज तो यह कि) मुझको यह बात ग़म में डालती है कि उसको तुम (मेरी नज़रों के सामने से) ले जाओ और (ख़ौफ़ यह कि) मैं यह अन्देशा करता हूँ कि उसको कोई भेड़िया खा जाये और तुम (अपने धंधे में) उससे बेख़बर रहो (क्योंकि उस जंगल में भेड़िये बहुत थे)। वे बोले अगर उसको भेड़िया खा ले और हम एक जमाअ़त की जमाअ़त (मौजूद) हों तो हम बिल्कुल ही गये-गुज़रे हुए।

(ग़र्ज़ कि कह-सुनकर याक़ूब अ़लैहिस्सलाम से ये उनको लेकर चले) तो जब उनको (अपने साथ जंगल) ले गये और (पहले तय पा चुके प्रोग्राम के मुताबिक़) सब ने पुख़्ता इरादा कर लिया कि उनको किसी अंधेरे कुएँ में डाल दें (फिर अपनी योजना पर अ़मल भी कर लिया) और (उस वक़्त यूसुफ़ की तसल्ली के लिये) हमने उनके पास वही भेजी कि (तुम ग़मगीन न हो, हम तुमको यहाँ से छुटकारा देकर बड़े रुतबे पर पहुँचा देंगे और एक दिन वह होगा कि) तुम उन लोगों को यह बात जतलाओगे और वे तुमको (इस वजह से कि बिना अपेक्षा के अचानक शाहाना सूरत में देखेंगे) पहचानेंगे भी नहीं। (चुनाँचे वाक़िआ़ इसी तरह पेश आया कि भाई मिस्र पहुँचे और आख़िरकार यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उनको जतलाया जैसा कि इसी सूरत की आयत 81 में आगे आ रहा है। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का तो यह क़िस्सा हुआ) और (उधर) वे लोग अपने बाप के पास इशा के वक़्त रोते हुए पहुँचे (और जब बाप ने रोने का सबब पूछा तो) कहने लगे अब्बा! हम सब तो आपस में दौड़ लगाने में (कि कौन आगे निकले) लग गये और यूसुफ़ को हमने (ऐसी जगह जहाँ भेड़िया आने का गुमान न था) अपने सामान के पास छोड़ दिया, बस (इत्तिफ़ाक़न) एक भेड़िया (आया और) उनको खा गया और आप तो हमारा काहे को

यक़ीन करने लगे, हम कैसे ही सच्चे हों।

और (जब याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के पास आने लगे थे तो) यूसुफ़ की क़मीज़ पर झूठ-मूट का ख़ून भी लगा लाये थे (कि किसी जानवर का ख़ून उनकी क़मीज़ पर डालकर अपनी बात की सनद के लिये पेश किया) याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने (देखा तो कुर्ता कहीं से फटा हुआ नहीं था, जैसा कि हज़रत इब्ने अ़ब्बास की रिवायत से तबरी में नक़ल किया गया है, तो) फ़रमाया (यूसुफ़ को भेड़िये ने हरगिज़ नहीं खाया) बल्कि तुमने अपने दिल से एक बात बना ली है, सो मैं सब्र ही करूँगा जिसमें शिकायत का नाम न होगा (सब्रे-जमील की यह तफ़सीर कि उसके साथ कोई शिकायत का हर्फ़ न हो, तबरी ने मरफ़ूअ़ हदीस के हवाले से बयान की है) और जो बातें तुम बताते हो उनमें अल्लाह ही मदद करे (कि इस वक़्त मुझे उन पर सब्र आ जाये और आगे चलकर तुम्हारा झूठ खुल जाये। बहरहाल हज़रत याक़ूब सब्र करके बैठ रहे)।

और (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का यह क़िस्सा हुआ कि इत्तिफ़ाक़ से उधर) एक क़ाफ़िला आ निकला (जो मिस्र को जा रहा था) और उन्होंने अपना आदमी पानी लाने के वास्ते (यहाँ कुएँ पर) भेजा और उसने अपना डोल डाला (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने डोल पकड़ लिया, जब डोल बाहर आया और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को देखा तो ख़ुश होकर) कहने लगा बड़ी ख़ुशी की बात है, यह तो बड़ा अच्छा लड़का निकल आया। (क़ाफ़िले वालों को ख़बर हुई तो वे भी ख़ुश हुए) और उनको (तिजारत का) माल क़रार देकर (इस ख़्याल से) छुपा लिया (कि कोई दावेदार न खड़ा हो जाये, तो फिर उसको मिस्र लेजाकर बड़ी क़ीमत पर फ़रोख़्त करेंगे) और अल्लाह को उन सब की कारगुज़ारियाँ मालूम थीं। (इधर वे भाई भी आस-पास लगे रहते और कुएँ में यूसुफ़ की ख़बरगीरी करते, कुछ खाना भी पहुँचाते जिससे मक़सद यह था कि यह हलाक भी न हों और कोई आकर इन्हें किसी दूसरे मुल्क में ले जाये, और याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को ख़बर न हो। उस दिन जब यूसुफ़ को कुएँ में न देखा और पास एक क़ाफ़िला पड़ा देखा तो तलाश करते हुए वहाँ पहुँचे, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का पता लग गया तो क़ाफ़िले वालों से कहा कि यह हमारा ग़ुलाम है भागकर आ गया था और अब हम इसको रखना नहीं चाहते) और (यह बात बनाकर) उनको बहुत ही कम क़ीमत पर (क़ाफ़िले वालों के हाथ) बेच डाला, यानी गिनती के चन्द दिरहम के बदले में, और (वजह यह थी कि) ये लोग उनके कुछ क़द्रदान तो थे ही नहीं (कि उनको उम्दा माल समझकर बड़ी क़ीमत में बेचते, बल्कि इनका मक़सद तो उनको यहाँ से टालना था)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः यूसुफ़ की उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में इस पर सचेत किया गया है कि इस सूरत में आने वाले यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से को महज़ एक क़िस्सा न समझो बल्कि इसमें सवाल करने वालों और तहक़ीक़ करने वालों के लिये अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत की बड़ी निशानियाँ और हिदायतें हैं।

इससे मुराद यह भी हो सकता है कि जिन यहूदियों ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम की आज़माईश के लिये यह क़िस्सा आपसे पूछा था उनके लिये इसमें बड़ी निशानियाँ हैं। रिवायत यह है कि जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मक्का मुअ़ज़्ज़मा में तशरीफ़ रखते थे, और आपकी ख़बर मदीना तय्यिबा में पहुँची तो यहाँ के यहूदियों ने अपने चन्द आदमी इस काम के लिये मक्का भेजे कि वे जाकर आपकी आज़माईश करें, इसी लिये यह सवाल एक ग़ैर-वाज़ेह (अस्पष्ट) अन्दाज़ में इस तरह किया कि अगर आप ख़ुदा के सच्चे नबी हैं तो यह बतलाईये कि वह कौनसा पैग़म्बर है जिसका एक बेटा मुल्के शाम से मिस्र लेजाया गया और बाप उसके ग़म में रोते-रोते नाबीना (अंधे) हो गये।

यह वाक़िआ़ यहूदियों ने इसलिये चुना था कि न इसकी कोई आ़म शोहरत थी, न मक्का में कोई इस वाक़िए से वाक़िफ़ था, और उस वक़्त मक्का में अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) में से भी कोई न था जिससे तौरात या इन्जील के हवाले से इस क़िस्से का कोई हिस्सा मालूम हो सकता। उनके इस सवाल पर ही पूरी सूरः यूसुफ़ नाज़िल हुई जिसमें हज़रत याक़ूब और हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिमस्सलाम का पूरा क़िस्सा बयान हुआ है, और इतनी तफ़सील से बयान हुआ है कि तौरात व इन्जील में भी इतनी तफ़सील नहीं। इसलिये इसका बयान करना नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का खुला हुआ मोजिज़ा था।

और इस आयत के यह मायने भी हो सकते हैं कि यहूदियों के सवाल को भी छोड़ दें तो ख़ुद यह वाक़िआ़ ऐसी बातों पर आधारित है जिनमें अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत की बड़ी निशानियाँ और तहक़ीक़ करने वालों के लिये बड़ी हिदायत और अहकाम व मसाईल मौजूद हैं, कि जिस बच्चे को भाईयों ने तबाही के गड्ढे में डाल दिया था अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत ने उसको कहाँ से कहाँ पहुँचाया, और किस तरह उसकी हिफ़ाज़त की, और अपने ख़ास बन्दों को अपने अहकाम की पाबन्दी का किस क़द्र गहरा रंग अ़ता फ़रमाया कि नौजवानी के ज़माने में ऐश व मस्ती में वक़्त गुज़ारने का बेहतरीन मौक़ा मिलता है मगर वह ख़ुदा तआ़ला के ख़ौफ़ से नफ़्स की इच्छाओं पर कैसा क़ाबू पाते हैं कि साफ़ तौर पर उस बला से निकल जाते हैं, और यह कि जो शख़्स नेकी और परहेज़गारी इख़्तियार करे अल्लाह तआ़ला उसको अपने मुख़ालिफ़ों के मुक़ाबले में कैसे इज़्ज़त देते हैं और मुख़ालिफ़ों को उसके क़दमों में ला डालते हैं। ये सब इब्रतें व नसीहतें और अल्लाह की क़ुदरत की अ़ज़ीम निशानियाँ हैं जो हर तहक़ीक़ करने वाले और ग़ौर करने वाले को मालूम हो सकती हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

इस आयत में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों का ज़िक्र है। उनका वाक़िआ़ यह है कि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम समेत बारह लड़के थे। उनमें से हर लड़का औलाद वाला हुआ, सब के ख़ानदान फैले। चूँकि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का लक़ब (उपनाम) इस्राईल था, इसलिये ये सब बारह ख़ानदान **बनी इस्राईल** (इस्राईल की औलाद) कहलाये।

इन बारह लड़कों में दस बड़े लड़के हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की पहली बीवी मोहतरमा हज़रत लय्या लय्यान की पुत्री के पेट से थे, उनके इन्तिक़ाल के बाद याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने लय्या की बहन राहील से निकाह कर लिया, उनके पेट से दो लड़के यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम और

बिनयामीन पैदा हुए। इसलिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सगे भाई सिर्फ़ बिनयामीन थे, बाक़ी दस भाई बाप-शरीक थे। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा राहील का इन्तिक़ाल भी उनके बचपन ही में बिनयामीन की पैदाईश के साथ हो गया था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

दूसरी आयत में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा शुरू होता है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने अपने वालिद हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को देखा कि वह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से ग़ैर-मामूली (बहुत ज़्यादा और असाधारण) मुहब्बत रखते हैं जो उनके बड़े भाईयों को हासिल नहीं, इसलिये उन पर हसद हुआ। और यह भी मुम्किन है कि किसी तरह उनको यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का ख़्वाब (सपना) भी मालूम हो गया हो, जिससे उन्होंने यह महसूस किया हो कि इनकी बड़ी शान होने वाली है, इससे हसद (जलन) पैदा हुआ और आपस में गुफ़्तगू की कि हम यह देखते हैं कि हमारे वालिद को हमारे मुक़ाबले में यूसुफ़ और उसके सगे भाई बिनयामीन से ज़्यादा मुहब्बत है, हालाँकि हम दस हैं और उनसे बड़े हैं, घर के काम-काज संभालने की ताक़त रखते हैं, और ये दोनों छोटे बच्चे हैं जो कुछ काम नहीं कर सकते। हमारे वालिद को इसका ख़्याल करना और हमसे ज़्यादा मुहब्बत करनी चाहिये थी, मगर उन्होंने खुली हुई बेइन्साफ़ी कर रखी है, इसलिये या तो तुम यूसुफ़ को क़त्ल कर डालो या फिर किसी दूर ज़मीन में फेंक आओ जहाँ से वापस न आ सके।

इस आयत में उन भाईयों ने अपने बारे में लफ़्ज़ 'उस्बतुन' इस्तेमाल किया है। यह लफ़्ज़ अ़रबी भाषा में पाँच से लेकर दस तक की जमाअ़त के लिये बोला जाता है, और अपने वालिद के बारे में जो यह कहा किः

اِنَّ اَبَانَا لَفِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ۝

इसमें लफ़्ज़ 'ज़लाल' के लुग़वी मायने गुमराही के हैं, मगर यहाँ गुमराही से मुराद दीनी गुमराही नहीं, वरना ऐसा ख़्याल करने से ये सब के सब काफ़िर हो जाते, क्योंकि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम अल्लाह तआ़ला के चुने हुए, ख़ास पैग़म्बर और नबी हैं, उनकी शान में ऐसा ख़्याल क़तई कुफ़्र है।

और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों के बारे में ख़ुद क़ुरआने करीम में बयान हुआ है कि बाद में उन्होंने अपने जुर्म को स्वीकार करके वालिद से मग़फ़िरत व बख़्शिश की दुआ़ की दरख़्वास्त की, जिसको उनके वालिद ने क़ुबूल किया, जिससे ज़ाहिर यह है कि उन सब की ख़ता माफ़ हुई। यह सब इसी सूरत में हो सकता है कि ये सब मुसलमान हों, वरना काफ़िर के हक़ में मग़फ़िरत की दुआ़ जायज़ नहीं। इसी लिये उन भाईयों के नबी बनने में तो उलेमा का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है मगर मुसलमान होने में किसी का इख़्तिलाफ़ नहीं। इससे मालूम हुआ कि लफ़्ज़ ज़लाल इस जगह सिर्फ़ इस मायने में बोला गया है कि भाईयों के हुक़ूक़ में बराबरी नहीं करते।

तीसरी आयत में यह बयान है कि उन भाईयों में मश्विरा हुआ, बाज़ ने यह राय दी कि यूसुफ़ को क़त्ल कर डालो, बाज़ ने कहा कि किसी ग़ैर-आबाद कुएँ की गहराई में डाल दो ताकि यह काँटा बीच से निकल जाये और तुम्हारे बाप की पूरी तवज्जोह तुम्हारी ही तरफ़ हो जाये।

रहा वह गुनाह जो उसके क़त्ल या कुएँ में डालने से होगा सो बाद में तौबा करके तुम नेक हो सकते हो। आयत के जुमलेः

وَتَكُونُوا مِنْ بَعْدِهٖ قَوْمًا صٰلِحِيْنَ○

के मायने यह भी बयान किये गये हैं, और यह मायने भी हो सकते हैं कि यूसुफ़ के क़त्ल के बाद तुम्हारे हालात दुरुस्त हो जायेंगे, क्योंकि बाप की तवज्जोह का मर्कज़ (केन्द्र) ख़त्म हो जायेगा, या यह कि क़त्ल के बाद बाप से उज़्र-माज़िरत (यानी अपनी ग़लती मानकर और माफ़ी-तलाफ़ी) करके तुम फिर वैसे ही हो जाओगे।

यह दलील है इस बात की कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के ये भाई नबी नहीं थे, क्योंकि इन्होंने इस वाक़िए में बहुत से कबीरा (बड़े) गुनाहों का काम किया। एक बेगुनाह के क़त्ल का इरादा, बाप की नाफ़रमानी, और तकलीफ़ पहुँचाना, मुआ़हदे का उल्लंघन, फिर साज़िश वग़ैरह। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से नुबुव्वत से पहले भी जमहूर (उलेमा व बुज़ुर्गों की अक्सरियत) के अ़क़ीदे के मुताबिक़ ऐसे गुनाह सर्ज़द नहीं हो सकते।

चौथी आयत में है कि उन्हीं भाईयों में से एक ने यह सारी गुफ़्तगू सुनकर कहा कि यूसुफ़ को क़त्ल न करो, अगर कुछ करना ही है तो कुएँ की गहराई में ऐसी जगह डाल दो जहाँ यह ज़िन्दा रहे और राह चलते मुसाफ़िर जब उस कुएँ पर आयें तो वे इसको उठाकर ले जायें। इस तरह तुम्हारा मक़सद भी पूरा हो जायेगा और इसको लेकर तुम्हें ख़ुद किसी दूर मक़ाम पर जाना भी न पड़ेगा। कोई क़ाफ़िला आयेगा वह ख़ुद इसको अपने साथ किसी दूर-दराज़ के मक़ाम पर पहुँचा देगा।

यह राय देने वाला उनका सबसे बड़ा भाई यहूदा था। और कुछ रिवायतों में है कि रोबील सबसे बड़ा था, उसी ने यह राय दी, और यह वह शख़्स है जिसका ज़िक्र आगे आता है कि जब मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के छोटे भाई बिनयामीन को रोक लिया गया तो इसने कहा कि मैं जाकर बाप को क्या मुँह दिखाऊँगा, इसलिये मैं वापस किनआ़न नहीं जाता।

इस आयत में लफ़्ज़ 'ग़याबतिल्-जुब्बि' फ़रमाया है। ग़याबा हर उस चीज़ को कहते हैं जो किसी चीज़ को छुपा ले और ग़ायब कर दे, इसी लिये क़ब्र को भी 'ग़याबा' कहा जाता है और जुब्ब ऐसे कुएँ को कहते हैं जिसकी मन बनी हुई न हो।

يَلْتَقِطْهُ بَعْضُ السَّيَّارَةِ

लफ़्ज़ 'इल्तिक़ात' लुक़्ते से बना है, लुक़ता उस गिरी-पड़ी चीज़ को कहते हैं जो किसी को बग़ैर तलब के मिल जाये। ग़ैर-जानदार चीज़ हो तो उसको लुक़ता और जानदार को फ़ुक़हा की परिभाषा में लक़ीत कहा जाता है। इनसान को लक़ीत उसी वक़्त कहा जायेगा जबकि वह बच्चा हो, आ़क़िल बालिग़ न हो। अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने इसी लफ़्ज़ से दलील पकड़ी है कि जिस वक़्त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को कुएँ में डाला गया था उस वक़्त वह नाबालिग़ बच्चे थे, तथा याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का यह फ़रमाना भी उनके बच्चा होने की तरफ़ इशारा है कि मुझे ख़ौफ़ है कि

इसको भेड़िया खा जाये, क्योंकि भेड़िये का खा जाना बच्चों ही के मामले में ज़ेहन में आता है। इब्ने जरीर, इब्नुल-मुन्ज़िर और इब्ने अबी शैबा की रिवायत में है कि उस वक़्त हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की उम्र सात साल थी। (तफ़सीरे मज़हरी)

इमाम क़ुर्तुबी ने इस जगह **लुक़ता** और **लक़ीत** के शरई अहकाम की तफ़सील बयान की है जिसकी यहाँ गुन्जाईश नहीं, अलबत्ता इसके बारे में एक उसूली बात यह समझ लेनी चाहिये कि इस्लामी निज़ाम में आम लोगों के जान व माल की हिफ़ाज़त रास्तों और सड़कों की सफ़ाई वग़ैरह को सिर्फ़ हुकूमत के महकमों की ज़िम्मेदारी नहीं बनाया, बल्कि हर शख़्स को इसका पाबन्द बनाया है। रास्तों और सड़को में खड़े होकर या अपना कोई सामान डालकर चलने वालों के लिये तंगी पैदा करने पर हदीस में सख़्त वईद (सज़ा की धमकी) आई है। फ़रमाया कि "जो शख़्स मुसलमानों का रास्ता तंग कर दे उसका जिहाद मक़बूल नहीं।" इसी तरह अगर रास्ते में कोई ऐसी चीज़ पड़ी है जिससे दूसरों को तकलीफ़ पहुँचने का ख़तरा है जैसे काँटे या काँच के टुकड़े या पत्थर वग़ैरह, उनको रास्ते से हटाना सिर्फ़ म्यूनिसिपल बोर्ड की ज़िम्मेदारी नहीं बनाया बल्कि हर मुसलमान को इस तरफ़ तवज्जोह दिलाकर इसका ज़िम्मेदार बनाया है और ऐसा करने वालों के लिये बड़े अज्र व सवाब का वायदा किया गया है।

इसी उसूल पर किसी शख़्स का गुमशुदा माल किसी को मिल जाये तो उसकी शरई ज़िम्मेदारी सिर्फ़ इतनी ही नहीं कि उसको चुराये नहीं, बल्कि यह भी उसके ज़िम्मे है कि उसको हिफ़ाज़त से उठाकर रखे और ऐलान करके मालिक को तलाश करे, वह मिल जाये और निशानी वग़ैरह बयान करने से यह इत्मीनान हो जाये कि यह माल उसी का है तो उसको दे दे। और ऐलान व तलाश के बावजूद मालिक का पता न चले और माल की हैसियत के मुताबिक़ यह अन्दाज़ा हो जाये कि अब मालिक इसको तलाश नहीं करेगा उस वक़्त अगर ख़ुद ग़रीब मुफ़लिस है तो अपने ख़र्च में ले ले, वरना मिस्कीनों पर सदक़ा कर दे, और इन दोनों सूरतों में यह मालिक की तरफ़ से सदक़ा क़रार दिया जायेगा, इसका सवाब उसको मिलेगा। गोया आसमानी बैतुल-माल में उसके नाम पर जमा कर दिया गया।

ये हैं उमूमी ख़िदमत (जन-कल्याण) और आपसी इमदाद के वो उसूल जिनकी ज़िम्मेदारी इस्लामी समाज के हर फ़र्द पर लागू की गई है। काश! मुसलमान अपने दीन को समझें और इस पर अमल करने लगें तो दुनिया की आँखें खुल जायें कि हुकूमत के बड़े-बड़े महकमे करोड़ों रुपये ख़र्च करने के बाद भी जो काम अन्जाम नहीं दे सकते वह इस आसानी के साथ किस शान से पूरा हो जाता है।

पाँचवीं और छठी आयत में है कि उन भाईयों ने वालिद के सामने दरख़्वास्त इन लफ़्ज़ों में पेश कर दी कि अब्बा जान! यह क्या बात है कि आपको यूसुफ़ के बारे में हम पर इत्मीनान नहीं, हालाँकि हम उसके पूरे ख़ैरख़्वाह (भला चाहने वाले) और हमदर्द हैं। कल उसको आप हमारे साथ (सैर व तफ़रीह के लिये) भेज दीजिये कि वह भी आज़ादी के साथ खाये पिये और खेले, और हम सब उसकी पूरी हिफ़ाज़त करेंगे।

भाईयों की इस दरख़्वास्त से मालूम होता है कि वे इससे पहले भी कभी ऐसी दरख़्वास्त कर चुके थे जिसको वालिद साहिब ने क़ुबूल न किया था, इसलिये इस मर्तबा ज़रा ताकीद और ज़्यादा कोशिश के साथ वालिद को इत्मीनान दिलाने की कोशिश की गई है।

इस आयत में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम से सैर व तफ़रीह और आज़ादी से खाने पीने खेलने कूदने की इजाज़त माँगी गई है। हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने उनको इसकी कोई मनाही नहीं फ़रमाई, सिर्फ़ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को साथ भेजने में शंका और दुविधा का इज़हार किया, जो अगली आयत में आयेगा। इससे मालूम हुआ कि सैर व तफ़रीह, खेल-कूद जायज़ हदों के अन्दर जायज़ व दुरुस्त हैं। सही हदीसों से भी इसका जायज़ होना मालूम होता है, मगर यह शर्त है कि उस खेल-कूद में शरई हदों से बाहर न निकला जाये, और किसी नाजायज़ काम की उसमें मिलावट न हो। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी वग़ैरह)

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने जब वालिद से यह दरख़्वास्त की कि यूसुफ़ को कल हमारे साथ तफ़रीह के लिये भेज दीजिये, तो हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि उसको भेजना दो वजह से पसन्द नहीं करता, अव्वल तो मुझे उस नूरे नज़र के बग़ैर चैन नहीं आता, दूसरे यह ख़तरा है कि जंगल में कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी लापरवाही के वक़्त उसको भेड़िया खा जाये।

याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को भेड़िये का ख़तरा या तो इस वजह से हुआ कि किनआ़न में भेड़ियों की अधिकता थी, और या इस वजह से कि उन्होंने ख़्वाब में देखा था कि वह किसी पहाड़ी के ऊपर हैं और यूसुफ़ उसके दामन में नीचे हैं, अचानक दस भेड़ियों ने उनको घेर लिया और उन पर हमला करना चाहा मगर एक भेड़िये ही ने बचाव करके छुड़ा दिया। फिर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ज़मीन के अन्दर छुप गये।

जिसकी ताबीर बाद में इस तरह ज़ाहिर हुई कि दस भेड़िये ये दस भाई थे और जिस भेड़िये ने बचाव करके उनको हलाकत से बचाया वह बड़ा भाई यहूदा था और ज़मीन में छुप जाना कुएँ की गहराई से ताबीर थी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक रिवायत में नक़ल किया गया है कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को इस ख़्वाब की बिना पर ख़ुद उन भाईयों से ख़तरा था, उन्हीं को भेड़िया कहा था मगर मस्लेहत के सबब पूरी बात ज़ाहिर नहीं फ़रमाई। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

भाईयों ने याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की यह बात सुनकर कहा कि आपका यह ख़ौफ़ व ख़तरा अ़जीब है, हम दस आदमियों की मज़बूत जमाअ़त इसकी हिफ़ाज़त के लिये मौजूद है, अगर हम सब के होते हुए इसको भेड़िया खा जाये तो हमारा तो वजूद ही बेकार हो गया, और फिर हमसे किसी काम की क्या उम्मीद की जा सकती है।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने अपनी पैग़म्बराना शान से औलाद के सामने इस बात को नहीं खोला कि मुझे ख़तरा तो ख़ुद तुम ही से है, क्योंकि अव्वल तो इससे सारी औलाद का दिल दुखाना होता, दूसरे बाप के ऐसा कहने के बाद ख़तरा यह था कि भाईयों की दुश्मनी और बढ़

जायेगी और इस वक़्त छोड़ भी दिया तो दूसरे किसी वक़्त किसी बहाने से क़त्ल कर देंगे। इसलिये इजाज़त दे दी मगर भाईयों से मुकम्मल अ़हद व पैमान लिया कि इसको कोई तकलीफ़ न पहुँचने देंगे और बड़े भाई रोबील या यहूदा को विशेष तौर पर सुपुर्द किया कि तुम इनकी भूख प्यास और दूसरी ज़रूरतों का पूरी तरह ध्यान रखना और जल्द वापस लाना। भाईयों ने वालिद के सामने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपने मोंढों पर उठा लिया और बारी-बारी सब उठाते रहे, कुछ दूर तक हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम भी उनको रुख़्सत करने के लिये बाहर गये।

अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने तारीख़ी रिवायतों के हवाले से बयान किया है कि जब ये लोग हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की नज़रों से ओझल हो गये तो उस वक़्त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जिस भाई के कन्धे पर थे उसने उनको ज़मीन पर पटख़ दिया। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पैदल चलने लगे मगर कम उम्र थे उनके साथ दौड़ने से आ़जिज़ हुए तो दूसरे भाई की पनाह ली, उसने भी कोई हमदर्दी न की तो तीसरे चौथे हर भाई से इमदाद को कहा मगर सबने यह जवाब दिया कि तूने जो ग्यारह सितारे और चाँद सूरज अपने आपको सज्दा करते हुए देखे थे उनको पुकार, वही तेरी मदद करेंगे।

अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने इसी वजह से फ़रमाया कि इससे मालूम हुआ कि भाईयों को किसी तरह हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का ख़्वाब मालूम हो गया था, वह ख़्वाब ही उनकी सख़्त नाराज़गी और आक्रोश का सबब बना।

आख़िर में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने यहूदा से कहा कि आप बड़े हैं, आप मेरी कमज़ोरी और कम-उम्री और अपने बूढ़े वालिद के हाल पर रहम करें और उस अ़हद को याद करें जो जो वालिद से आपने किये हैं। आपने कितनी जल्दी उस अ़हद व पैमान को भुला दिया। यह सुनकर यहूदा को रहम आया और उनसे कहा कि जब तक मैं ज़िन्दा हूँ ये भाई तुझे कोई तकलीफ़ न पहुँचा सकेंगे।

यहूदा के दिल में अल्लाह तआ़ला ने रहमत और सही अ़मल की तौफ़ीक़ डाल दी, तो यहूदा ने अपने दूसरे भाईयों को ख़िताब किया कि बेगुनाह का क़त्ल बहुत बड़ा जुर्म है, ख़ुदा से डरो, और इस बच्चे को इसके वालिद के पास पहुँचा दो, अलबत्ता इससे यह अ़हद ले लो कि बाप से तुम्हारी कोई शिकायत न करे।

भाईयों ने जवाब दिया कि हम जानते हैं तुम्हारा क्या मतलब है, तुम यह चाहते हो कि बाप के दिल में अपना मर्तबा सबसे ज़्यादा कर लो, इसलिये सुन लो कि अगर तुमने हमारे इरादे में बाधा डाली तो हम तुम्हें भी क़त्ल कर देंगे। यहूदा ने देखा कि नौ भाईयों के मुक़ाबले में तन्हा कुछ नहीं कर सकते तो कहा कि अच्छा अगर तुम यही तय कर चुके हो कि इस बच्चे को ज़ाया करो तो मेरी बात सुनो, यहाँ क़रीब ही एक पुराना कुआँ है जिसमें बहुत से झाड़ निकल आये हैं, साँप, बिच्छू और तरह-तरह के तकलीफ़ देने वाले जानवर उसमें रहते हैं, तुम इसको उस कुएँ में डाल दो, अगर इसको किसी साँप वग़ैरह ने डसकर ख़त्म कर दिया तो तुम्हारी मुराद हासिल है और तुम अपने हाथ से इसका ख़ून बहाने से बरी रहे, और अगर यह ज़िन्दा रहा तो कोई

क़ाफ़िला शायद यहाँ आये और पानी के लिये कुएँ में डोल डाले और यह निकल आये तो वह इसको अपने साथ किसी दूसरे मुल्क में पहुँचा देगा, इस सूरत में भी तुम्हारा मक़सद हासिल हो जायेगा।

इस बात पर सब भाईयों का इत्तिफ़ाक़ हो गया जिसका बयान मज़कूरा आयतों में से तीसरी आयत में इस तरह आया है:

فَلَمَّا ذَهَبُوا بِهٖ وَاَجْمَعُوْٓا اَنْ يَّجْعَلُوْهُ فِيْ غَيٰبَتِ الْجُبِّ وَاَوْحَيْنَآ اِلَيْهِ لَتُنَبِّئَنَّهُمْ بِاَمْرِهِمْ هٰذَا وَهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ○

"यानी जब ये भाई यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को जंगल में ले गये और इस पर सब मुत्तफ़िक़ (सहमत) हो गये कि इसको कुएँ की गहराई में डाल दें तो अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को वही के द्वारा इत्तिला दी कि एक दिन ऐसा आयेगा जब तुम अपने भाईयों को उनकी इस करतूत पर तंबीह करोगे और वे कुछ न जानते होंगे।"

यहाँ लफ़्ज़ 'व औहैना' 'फ़लम्मा ज़-हबू' की जज़ा और जवाब है, हर्फ़ वाव इस जगह ज़्यादा है। (क़ुर्तुबी) मतलब यह है कि भाईयों ने मिलकर कुएँ में डालने का इरादा कर ही लिया तो अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को तसल्ली के लिये वही भेज दी जिसमें किसी आईन्दा ज़माने में भाईयों से मुलाक़ात की और इसकी ख़ुशख़बरी दी गई है कि उस वक़्त आप इन भाईयों से बेनियाज़ और हाकिम होंगे, जिसकी वजह से इनके इस ज़ुल्म व सितम पर पकड़ और पूछगछ करेंगे और ये इस सारे मामले में बेख़बर होंगे।

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि इसकी दो सूरतें हो सकती हैं- एक यह कि यह वही उनको कुएँ में डालने के बाद तसल्ली और यहाँ से निजात की ख़ुशख़बरी देने के लिये आई हो, दूसरे यह कि कुएँ में डालने से पहले ही अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को पेश आने वाले हालात व वाक़िआ़त से वही के ज़रिये बाख़बर कर दिया हो, जिसमें यह भी बतला दिया कि आप इस तबाही से सलामत रहेंगे, और ऐसे हालात पेश आयेंगे कि आपको उन भाईयों पर फटकार लगाने और पूछगछ करने का मौक़ा मिलेगा जबकि वे आपको पहचानेंगे भी नहीं, कि उनके भाई यूसुफ़ हैं।

यह वही जो हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर बचपन के ज़माने में नाज़िल हुई, तफ़सीरे मज़हरी में है कि यह वही नुबुव्वत की न थी क्योंकि वह चालीस साल की उम्र में अ़ता होती है, बल्कि यह वही ऐसी ही थी जैसे मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा को वही के ज़रिये सूचित किया गया। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर नुबुव्वत की वही का सिलसिला मिस्र पहुँचने और जवान होने के बाद शुरू हुआ, जैसा कि इरशाद है:

وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهٗٓ اٰتَيْنٰهُ حُكْمًا وَّعِلْمًا.

और इब्ने जरीर, इब्ने अबी हातिम ने इसको विशेष रूप की और आ़म दस्तूर से हटकर नुबुव्वत की वही क़रार दिया है जैसा कि ईसा अ़लैहिस्सलाम को बचपन ही में नुबुव्वत अ़ता की गई। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मिस्र पहुँचने के बाद अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को वही के ज़रिये इस बात से मना कर दिया था कि वह अपने हाल की ख़बर अपने घर भेजें। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

यही वजह थी कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जैसे पैग़म्बरे ख़ुदा ने जेल से रिहाई और मुल्के मिस्र की हुकूमत मिलने के बाद भी कोई ऐसी सूरत नहीं निकाली जिसके ज़रिये बूढ़े वालिद को अपनी सलामती की ख़बर देकर मुत्मईन कर देते।

अल्लाह जल्ल शानुहू की हिक्मतों को कौन जान सकता है जो इस अन्दाज़ में छुपी थीं, शायद यह भी मन्ज़ूर हो कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को ग़ैरुल्लाह के साथ इतनी मुहब्बत के नापसन्द होने पर आगाह किया जाये और यह कि भाईयों को ज़रूरतमन्द बनाकर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सामने पेश करके उनके अ़मल की कुछ सज़ा तो उनको भी देना मक़सद हो।

इमामे क़ुर्तुबी वग़ैरह मुफ़स्सिरीन ने इस जगह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को कुएँ में डालने का वाक़िआ़ यह बयान किया है कि जब उनको डालने लगे तो वह कुएँ की मन पर चिमट गये, भाईयों ने उनका कुर्ता निकालकर उससे हाथ बाँधे, उस वक़्त फिर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने भाईयों से रहम की दरख़्वास्त की, मगर वही जवाब मिला कि ग्यारह सितारे जो तुझे सज्दा करते हैं उनको बुला, वही तेरी मदद करेंगे। फिर एक डोल में रखकर कुएँ में लटकाया, जब आधी दूरी तक पहुँचे तो उसकी रस्सी काट दी, अल्लाह तआ़ला ने अपने यूसुफ़ की हिफ़ाज़त फ़रमाई, पानी में गिरने की वजह से कोई चोट न आई और क़रीब ही एक पत्थर की चट्टान निकली हुई नज़र आई, सही सालिम उस पर बैठ गये। कुछ रिवायतों में है कि जिब्रील अ़लैहिस्सलाम को हुक्म हुआ, उन्होंने चट्टान पर बैठा दिया।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम तीन दिन उस कुएँ में रहे, उनका भाई यहूदा दूसरे भाईयों से छुपकर रोज़ाना उनके लिये खाना पानी लाता और डोल के ज़रिये उन तक पहुँचा देता था।

وَجَآءُوْٓا اَبَاهُمْ عِشَآءً يَّبْكُوْنَ○

यानी इशा के वक़्त ये भाई रोते हुए अपने बाप के पास पहुँचे। हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम इनके रोने की आवाज़ सुनकर बाहर आये, पूछा क्या हादसा है? क्या तुम्हारी बकरियों के गल्ले पर किसी ने हमला किया है? और यूसुफ़ कहाँ है? तो भाईयों ने कहा:

يٰٓاَبَانَآ اِنَّا ذَهَبْنَا نَسْتَبِقُ وَتَرَكْنَا يُوْسُفَ عِنْدَ مَتَاعِنَا فَاَكَلَهُ الذِّئْبُ وَمَآ اَنْتَ بِمُؤْمِنٍ لَّنَا وَلَوْ كُنَّا صٰدِقِيْنَ○

"यानी हमने आपस में दौड़ लगाई और यूसुफ़ को अपने सामान के पास छोड़ दिया, इस बीच में यूसुफ़ को भेड़िया खा गया और हम कितने ही सच्चे हों आपको हमारा यक़ीन तो आयेगा नहीं।"

अ़ल्लामा इब्ने अ़रबी ने 'अहकामुल-क़ुरआन' में फ़रमाया कि आपसी मुसाबक़त (दौड़) शरीअ़त में जायज़ और अच्छी ख़स्लत है जो जंग व जिहाद में काम आती है। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ख़ुद अपने आप भी दौड़ लगाना सही हदीसों में साबित है

और घोड़ों की मुसाबक़त कराना (यानी घुड़दौड़) भी साबित है। सहाबा किराम में से सलमा बिन अक्वा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने एक शख़्स के साथ दौड़ में मुसाबक़त की तो सलमा ग़ालिब आ गये।

उक्त आयत और इन रिवायतों से असल घुड़दौड़ का जायज़ होना साबित है और घुड़दौड़ के अ़लावा दौड़ें, तीर-अन्दाज़ी के निशाने वग़ैरह में भी आपसी मुक़ाबला और मैच जायज़ है। और इस मुसाबक़त (मुक़ाबले और मैच) में ग़ालिब आने वाले फ़रीक़ को किसी तीसरे की तरफ़ से इनाम दे देना भी जायज़ है, लेकिन आपस में हार-जीत की कोई रक़म शर्त के तौर पर मुक़र्रर करना जुआ और क़िमार है, जिसको क़ुरआने करीम ने हराम क़रार दिया है। आजकल जितनी सूरतें घुड़दौड़ की राईज (प्रचलित) हैं वे कोई भी जुए और क़िमार से ख़ाली नहीं, इसलिये सब हराम व नाजायज़ हैं।

पिछली आयतों में ज़िक्र हुआ था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने आपस की बातचीत और योजना बन्दी के बाद आख़िरकार उनको एक ग़ैर-आबाद कुएँ में डाल दिया और वालिद को आकर यह बताया कि उनको भेड़िया खा गया है। उपर्युक्त आयतों में अगला क़िस्सा इस तरह ज़िक्र किया गया है।

وَجَآءُوْ عَلٰى قَمِيْصِهٖ بِدَمٍ كَذِبٍ.

यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कुर्ते पर झूठा ख़ून लगाकर लाये थे ताकि वालिद को भेड़िये के खाने का यक़ीन दिलायें।

मगर अल्लाह तआ़ला ने उनका झूठ ज़ाहिर करने के लिये उनको इससे ग़ाफ़िल कर दिया कि कुर्ते पर ख़ून लगाने के साथ उसको फाड़ भी देते जिससे भेड़िये का खाना साबित होता, उन्होंने सही सालिम कुर्ते पर बकरी के बच्चे का ख़ून लगाकर बाप को धोखे में डालना चाहा। याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने कुर्ता सही सालिम देखकर फ़रमाया मेरे बेटो! यह भेड़िया कैसा बुद्धिमान और अ़क्लमन्द था कि यूसुफ़ को इस तरह खाया कि कुर्ता कहीं से नहीं फटा।

इसी तरह हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम पर उनके फ़रेब का राज़ खुल गया और फ़रमायाः

بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا فَصَبْرٌ جَمِيْلٌ، وَاللّٰهُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَا تَصِفُوْنَ۝

"यानी यूसुफ़ को भेड़िये ने नहीं खाया, बल्कि तुम्हारे ही नफ़्सों ने एक बात बनाई है, अब मेरे लिये बेहतर यही है कि सब्र करूँ और जो कुछ तुम कहते हो उस पर अल्लाह से मदद माँगूँ।"

मसलाः याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने कुर्ता सही सालिम होने से यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों के झूठ पर दलील पकड़ी है, इससे मालूम हुआ कि क़ाज़ी या हाकिम को दोनों पक्षों के दावों और दलीलों के साथ हालात और इशारात पर भी नज़र करनी चाहिये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मारवर्दी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कुर्ता भी तारीख़ के अ़जायबात में से है, तीन अ़ज़ीमुश्शान वाक़िआ़त इसी कुर्ते से जुड़े हैं।

पहला वाक़िआ़ ख़ून से भरकर वालिद को धोखा देने और कुर्ते की गवाही और सुबूत से

झूठा साबित होने का है।

दूसरा वाक़िआ ज़ुलैख़ा का कि उसमें हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कुर्ता ही सुबूत में पेश हुआ है।

तीसरा वाक़िआ याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की बीनाई (आँखों की रोशनी) वापस आने का, इसमें भी उनका कुर्ता ही चमत्कारी साबित हुआ है।

मसलाः कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने जो बात अपने बेटों से उस वक़्त कही थी किः

بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا.

यानी तुम्हारे नफ़्सों ने एक बात बनाई है। यही बात उस वक़्त भी कही जब मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सगे भाई बिनयामीन एक चोरी के इल्ज़ाम में पकड़ लिये गये और उनके भाईयों ने याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को इसकी ख़बर की तो फ़रमायाः

سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ

यहाँ ग़ौर करने का मक़ाम है कि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने ये दोनों बातें अपनी राय से कही थीं, इनमें से पहली बात सही निकली दूसरी सही नहीं थी, क्योंकि इसमें भाईयों का क़सूर न था। इससे मालूम हुआ कि राय की ग़लती पैग़म्बरों से भी शुरू में हो सकती है अगरचे बाद में उनको अल्लाह की वही के द्वारा उस ग़लती पर क़ायम नहीं रहने दिया जाता।

और तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि इससे साबित हुआ कि राय की ग़लती बड़े-बड़ों से हो सकती है, इसलिये हर राय देने वाले को चाहिये कि अपनी राय को आख़िरी न समझे, उसमें भी ग़लती होने की संभावना को माने, उस पर ऐसा इसरार न करे कि दूसरों की बात सुनने मानने को तैयार न हो।

وَجَآءَتْ سَيَّارَةٌ فَاَرْسَلُوْا وَارِدَهُمْ فَاَدْلٰى دَلْوَهٗ.

सय्यारा के मायने हैं क़ाफ़िला। **वारिद** से मुराद वे लोग हैं जो क़ाफ़िले से आगे रहते हैं क़ाफ़िले की ज़रूरतें पानी वग़ैरह मुहैया करना उनकी ज़िम्मेदारी होती है। 'अदला' के मायने कुएँ में डोल डालने के हैं। मतलब यह है कि इत्तिफ़ाक़ से एक क़ाफ़िला उस सरज़मीन पर आ निकला। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि यह क़ाफ़िला मुल्के शाम से मिस्र जा रहा था, रास्ता भूलकर उस ग़ैर-आबाद जंगल में पहुँच गया, और पानी लाने वालों को कुएँ पर भेजा।

लोगों की नज़र में यह इत्तिफ़ाक़ी वाक़िआ था कि मुल्क शाम का क़ाफ़िला रास्ता भूलकर यहाँ पहुँचा और इस ग़ैर-आबाद कुएँ से साबक़ा पड़ा, लेकिन कायनात के राज़ों का जानने वाला जान सकता है कि ये सब वाक़िआत आपस में जुड़े हुए और एक स्थिर निज़ाम की मिली हुई कड़ियाँ हैं। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का पैदा करने वाला और उसकी हिफ़ाज़त करने वाला ही क़ाफ़िले को रास्ते से हटाकर यहाँ लाता है, और उसके आदमियों को इस ग़ैर-आबाद कुएँ पर भेजता है। यही हाल है उन तमाम हालात व वाक़िआत का जिनको आ़म इनसान इत्तिफ़ाक़ी

घटनायें समझते हैं, और फ़ल्सफ़े वाले उनको तक़दीर व इत्तिफ़ाक़ कहा करते हैं, जो दर हक़ीक़त कायनात के निज़ाम से नावाक़फ़ियत पर आधारित होता है, वरना मालिके कायनात के इस निज़ाम में कोई मुक़द्दर व इत्तिफ़ाक़ नहीं, हक़ सुब्हानहू व तआ़ला जिसकी शान 'फ़अ़्आ़लुल्-लिमा युरीद' (यानी जो चाहे करे) है, अपनी छुपी हिक्मतों के तहत ऐसे हालात पैदा कर देते हैं कि ज़ाहिरी वाक़िआ़त और घटनाओं से उनका जोड़ समझ में नहीं आता, तो इनसान उनको इत्तिफ़ाक़ी घटनायें क़रार देता है।

बहरहाल उनका आदमी जिसका नाम मालिक बिन दुअ़बर बतलाया जाता है उस कुएँ पर पहुँचा, डोल डाला, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने क़ुदरत की इमदाद का नज़ारा किया, उस डोल की रस्सी पकड़ ली, पानी के बजाय डोल के साथ एक ऐसी हस्ती का चेहरा सामने आ गया जिसकी आईन्दा होने वाली बड़ी शान से भी नज़र हटा ली जाये तो मौजूदा हालत में भी अपने हुस्न व जमाल (बेमिसाल ख़ूबसूरती) और मानवी कमालात के चमकते निशानात उनकी बड़ाई और श्रेष्ठता के लिये कुछ कम न थे। एक अ़जीब अन्दाज़ से कुएँ की गहराई से बरामद होने वाले, इस कम-उम्र हसीन और होनहार बच्चे को देखकर पुकार उठाः

يٰبُشْرٰى هٰذَا غُلٰمٌ

अरे बड़ी ख़ुशी की बात है, यह तो बड़ा अच्छा लड़का निकल आया है। सही मुस्लिम में मेराज की रात वाली हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से मिला तो देखा कि अल्लाह तआ़ला ने पूरे आ़लम के हुस्न व जमाल (सुन्दरता) में से आधा उनको अ़ता फ़रमाया है, और बाक़ी आधा सारे जहान में बंटा हुआ है।

وَاَسَرُّوْهُ بِضَاعَةً

यानी छुपा लिया उसको तिजारत का एक माल समझकर। मतलब यह है कि शुरू में तो मालिक बिन दुअ़बर यह लड़का देखकर ताज्जुब से पुकार उठा मगर फिर मामले पर ग़ौर करके यह तय किया कि इसका चर्चा न किया जाये, इसको छुपाकर रखे ताकि इसको फ़रोख़्त करके रक़म वसूल करे। अगर पूरे क़ाफ़िले में इसका चर्चा हो गया तो सारा क़ाफ़िला इसमें शरीक हो जायेगा।

और यह मायने भी हो सकते हैं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने असल हक़ीक़त को छुपाकर उनको एक माले तिजारत बना लिया जैसा कि कुछ रिवायतों में है कि यहूदा रोज़ाना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को कुएँ में खाना पहुँचाने के लिये जाते थे, तीसरे दिन जब उनको कुएँ में न पाया तो वापस आकर भाईयों से वाक़िआ़ बयान किया, ये सब भाई जमा होकर वहाँ पहुँचे, तहक़ीक़ करने पर क़ाफ़िले वालों के पास यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम बरामद हुए तो उनसे कहा कि यह लड़का हमारा ग़ुलाम है, भागकर यहाँ आ गया है, तुमने बहुत बुरा किया कि इसको अपने क़ब्ज़े में रखा। मालिक बिन दुअ़बर और उनके साथी सहम गये कि हम चोर समझे जायेंगे इसलिये भाईयों से उनके ख़रीदने की बातचीत होने लगी।

तो आयत के मायने यह हुए कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने ख़ुद ही यूसुफ़ को एक माले तिजारत बना लिया और फ़रोख़्त कर दिया।

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ○

यानी अल्लाह तआ़ला को उनकी सब कारगुज़ारियाँ मालूम थीं।

मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला शानुहू को सब मालूम था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई क्या करेंगे, और उनसे ख़रीदने वाला क़ाफ़िला क्या करेगा, और वह इस पर पूरी क़ुदरत रखते थे कि उन सब के मन्सूबों को ख़ाक में मिला दें, लेकिन तक़दीरी हिक्मतों के मातहत अल्लाह तआ़ला ने इन मन्सूबों को चलने दिया।

इमाम इब्ने कसीर ने फ़रमाया कि इस जुमले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये भी यह हिदायत है कि आपकी क़ौम जो कुछ आपके साथ कर रही है या करेगी वह सब हमारे इल्म व क़ुदरत से बाहर नहीं, अगर हम चाहें तो एक आन में सब को बदल डालें, लेकिन हिक्मत का तक़ाज़ा यही है कि इन लोगों को इस वक़्त अपनी ताक़त आज़माने दिया जाये और परिणामस्वरूप आपको इन पर ग़ालिब करके हक़ को ग़ालिब किया जायेगा जैसा कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के साथ किया गया।

وَشَرَوْهُ بِثَمَنٍۢ بَخْسٍ دَرَاهِمَ مَعْدُوْدَةٍ

लफ़्ज़ शिरा अ़रबी भाषा में ख़रीदने और फ़रोख़्त करने दोनों के लिये इस्तेमाल होता है, यहाँ भी दोनों मायने की गुंजाईश व संभावना है, ज़मीर (सर्वनाम) अगर यूसुफ़ के भाईयों की तरफ़ लौटाई जाये तो फ़रोख़्त करने के मायने होंगे और क़ाफ़िले वालों की तरफ़ लौटाई जाये तो ख़रीदने के मायने होंगे। मतलब यह है कि बेच डाला यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने या ख़रीद लिया क़ाफ़िले वालों ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को बहुत थोड़ी-सी क़ीमत यानी गिनती के चन्द दिरहमों के बदले में।

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि अ़रब के व्यापारियों की आ़दत यह थी कि बड़ी रक़मों के मामलात वज़न से किया करते थे, और छोटी रक़में जो चालीस से ज़्यादा न हों उनके मामलात गिनती से किया करते थे, इसलिये दराहिम के साथ मअ़्दूदा के लफ़्ज़ ने यह बतला दिया कि दिरहमों की मात्रा चालीस से कम थी। इब्ने कसीर ने अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से लिखा है कि बीस दिरहम के बदले में सौदा हुआ और दस भाईयों ने दो-दो दिरहम आपस में बाँट लिये, दिरहमों की तादाद में बाईस और चालीस दिरहम की भी अलग-अलग रिवायतें नक़ल की गयी हैं। (इब्ने कसीर)

وَكَانُوْا فِيْهِ مِنَ الزَّاهِدِيْنَ○

ज़ाहिदीन, ज़ाहिद की जमा (बहुवचन) है, जो ज़ुहद से निकला है, ज़ुहद के लफ़्ज़ी मायने बेरग़बती (रुचि न लेने) और बेतवज्जोही के आते हैं। मुहावरों में दुनिया की माल व दौलत से बेरग़बती और मुँह फेर लेने को कहा जाता है। आयत के मायने यह हैं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम

के भाई इस मामले में दर असल माल के इच्छुक न थे, उनका असल मक़सद तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम.को बाप से जुदा करना था इसलिये थोड़े से दिरहमों में मामला कर लिया।

وَقَالَ الَّذِي اشْتَرٰهُ مِنْ مِّصْرَ

لِامْرَاَتِهٖٓ اَكْرِمِيْ مَثْوٰىهُ عَسٰٓى اَنْ يَّنْفَعَنَآ اَوْ نَتَّخِذَهٗ وَلَدًا ۚ وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوْسُفَ فِي الْاَرْضِ وَلِنُعَلِّمَهٗ مِنْ تَاْوِيْلِ الْاَحَادِيْثِ ۚ وَاللّٰهُ غَالِبٌ عَلٰٓى اَمْرِهٖ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهٗٓ اٰتَيْنٰهُ حُكْمًا وَّعِلْمًا ۚ وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِيْنَ ۝ وَرَاوَدَتْهُ الَّتِيْ هُوَ فِيْ بَيْتِهَا عَنْ نَّفْسِهٖ وَغَلَّقَتِ الْاَبْوَابَ وَقَالَتْ هَيْتَ لَكَ ۚ قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اِنَّهٗ رَبِّيْٓ اَحْسَنَ مَثْوَايَ ۚ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

व क़ालल्लज़िश्तराहु मिम्-मिस्-र लिम्र्-अतिही अक्रिमी मस्वाहु अ़सा अंय्यन्फ़-अ़ना औ नत्तख़ि-ज़हू व-लदन्, व कज़ालि-क मक्कन्ना लियूसु-फ़ फ़िल्अर्ज़ि व लिनुअ़ल्लि-महू मिन् तअ्वीलिल्-अहादीसि, वल्लाहु ग़ालिबुन् अ़ला अम्रिही व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यअ़्लमून (21) व लम्मा ब-ल-ग़ अशुद्-दहू आतैनाहु हुक्मंव्-व अ़िल्मन्, व कज़ालि-क नज्ज़िल्-मुह्सिनीन (22) व रा-वदत्हुल्लती हु-व फ़ी बैतिहा अ़न् नफ़्सिही व ग़ल्ल-क़तिल्-अब्वा-ब व क़ालत् है-त ल-क, क़ा-ल मआ़ज़ल्लाहि इन्नहू रब्बी अह्स-न मस्वा-य, इन्नहू ला युफ़्लिहुज़्-ज़ालिमून (23)

और कहा जिस शख़्स ने ख़रीदा उसको मिस्र से, अपनी औरत को- आबरू से रख इसको शायद हमारे काम आये या हम कर लें इसको बेटा, और इसी तरह जगह दी हमने यूसुफ़ को उस मुल्क में, और इस वास्ते कि उसको सिखायें कुछ ठिकाने पर बिठाना बातों का और अल्लाह ज़ोरावर रहता है अपने काम में, व लेकिन अक्सर लोग नहीं जानते। (21) और जब पहुँच गया अपनी क़ुव्वत को दिया हमने उसको हुक्म और इल्म और ऐसा ही बदला देते हैं हम नेकी वालों को। (22) और फुसलाया उसको उस औरत ने जिसके घर में था अपना जी थामने से, और बन्द कर दिये दरवाज़े और बोली जल्दी कर। कहा ख़ुदा की पनाह! वह अ़ज़ीज़ मालिक है मेरा, अच्छी तरह रखा है मुझको, बेशक भलाई नहीं पाते जो लोग बेइन्साफ़ हों। (23)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(क़ाफ़िले वाले यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को भाईयों से ख़रीदकर मिस्र ले गये। वहाँ अ़ज़ीज़े मिस्र के हाथ फ़रोख़्त कर दिया) और जिस शख़्स ने मिस्र में उनको ख़रीदा था (यानी अ़ज़ीज़) उसने (उनको अपने घर लाकर अपनी बीवी के सुपुर्द किया और) अपनी बीवी से कहा कि इसको ख़ातिर से रखना, क्या अ़जब है कि (बड़ा होकर) हमारे काम आये, या हम इसको बेटा बना लें (मशहूर यह है कि यह इसलिये कहा कि उनके औलाद न थी), और हमने (जिस तरह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपनी ख़ास इनायत से उस अंधेरे से निजात दी) उसी तरह यूसुफ़ को उस (मिस्र की) सरज़मीन में ख़ूब ताक़त दी (मुराद इससे सल्तनत है), और (यह निजात देना इस ग़र्ज़ से भी था) ताकि हम उनको ख़्वाबों की ताबीर देना बतला दें (मतलब यह था कि निजात देने का मक़सद उनको ज़ाहिरी और बातिनी दौलत से मालामाल करना था) और अल्लाह तआ़ला अपने (चाहे हुए) काम पर ग़ालिब (और क़ादिर) है (जो चाहे कर दे), लेकिन अक्सर आदमी जानते नहीं (क्योंकि ईमान व यक़ीन वाले कम ही होते हैं। यह मज़मून क़िस्से के बीच में एक ग़ैर-संबन्धित बात के तौर पर इसलिये लाया गया है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की मौजूदा हालत यानी ग़ुलाम बनकर रहना ज़ाहिर में कोई अच्छी हालत न थी मगर हक़ तआ़ला ने फ़रमाया कि यह हालत चन्द दिन की वास्ते और माध्यम के तौर पर है, असल मक़सद उनको ऊँचा मक़ाम अ़ता फ़रमाना है और इसका माध्यम अ़ज़ीज़े मिस्र को और उसके घर में परवरिश पाने को बनाया गया, क्योंकि अमीरों के घर में परवरिश पाने से सलीक़ा और तजुर्बा बढ़ता है हुकूमत के मामलात की जानकारी होती है, इसी का बाक़ी हिस्सा आगे यह है) और जब वह अपनी जवानी (यानी बालिग़ होने की उम्र या भरपूर जवानी) को पहुँचे हमने उनको हिक्मत और इल्म अ़ता किया (इससे मुराद नुबुव्वत के इल्म का अ़ता करना है, और कुएँ में डालने के वक़्त जो उनकी तरफ़ वही भेजने का ज़िक्र पहले आ चुका है वह नुबुव्वत की वही नहीं थी बल्कि ऐसी वही थी जैसे हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा को वही भेजी गई थी) और हम नेक लोगों को इसी तरह बदला दिया करते हैं (जो क़िस्सा यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर तोहमत लगाने का आगे बयान होगा उससे पहले इन जुमलों में बतला दिया गया है कि वह सरासर तोहमत और झूठ होगा, क्योंकि जिसको अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से इल्म व हिक्मत अ़ता हो उससे ऐसे काम सादिर हो ही नहीं सकते। आगे उस तोहमत के क़िस्से का बयान है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अ़ज़ीज़े मिस्र के घर में आराम व राहत के साथ रहने लगे) और (इसी बीच में यह आज़माईश पेश आई कि) जिस औरत के घर में यूसुफ़ रहते थे वह (उन पर आ़शिक़ हो गई और) उनसे अपना मतलब हासिल करने के लिये उनको फुसलाने लगी और (घर के) सारे दरवाज़े बन्द कर दिये और (उनसे) कहने लगी आ जाओ तुम ही से कहती हूँ। यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने कहा (कि अव्वल तो यह ख़ुद बड़ा भारी गुनाह है) अल्लाह बचाये, (दूसरे) वह (यानी तेरा शौहर) मेरा मुरब्बी (और मोहसिन) है कि मुझको कैसी अच्छी तरह रखा (तो क्या मैं उसकी इ़ज़्ज़त में ख़लल डालने का

काम करूँ) ऐसे हक़ को भूलने वालों को फ़लाह नहीं हुआ करती (बल्कि अक्सर तो इसी दुनिया ही में ज़लील और परेशान होते हैं वरना आख़िरत में तो अ़ज़ाब यक़ीनी है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का शुरू का क़िस्सा बयान हो चुका है कि क़ाफ़िले वालों ने जब उनको कुएँ से निकाल लिया तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने उनको भागा हुआ गुलाम बताकर थोड़े से दिरहमों में उनका सौदा कर लिया, अव्वल तो इसलिये कि इस बुज़ुर्ग हस्ती की क़द्र मालूम न थी, दूसरे इसलिये कि उनका असल मक़सद उनसे पैसा कमाना नहीं बल्कि बाप से दूर कर देना था इसलिये सिर्फ़ फ़रोख़्त कर देने पर बस नहीं किया क्योंकि यह ख़तरा था कि कहीं क़ाफ़िले वाले इनको यहीं न छोड़ जायें और यह फिर किसी तरह वालिद के पास पहुँचकर हमारी साज़िश का राज़ खोल दें। इसलिये इमामे तफ़सीर मुजाहिद रह. की रिवायत के मुताबिक़ ये लोग इस इन्तिज़ार में रहे कि यह क़ाफ़िला इनको लेकर मिस्र के लिये रवाना हो जाये और जब क़ाफ़िला रवाना हुआ तो कुछ दूर तक क़ाफ़िले के साथ चले और उन लोगों से कहा देखो इसको भाग जाने की आ़दत है, खुला न छोड़ो, बल्कि बाँधकर रखो। इस क़ीमती हीरे की क़द्र व क़ीमत से नावाक़िफ़ क़ाफ़िले वाले इनको इसी तरह मिस्र तक ले गये।
(तफ़सीर इब्ने कसीर)

उक्त आयतों में इसके बाद का क़िस्सा इस तरह बयान हुआ है और क़ुरआन के मुख़्तसर बयान के साथ किस्से के जितने भाग खुद-ब-खुद समझ में आ सकते हैं उनको बयान करने की ज़रूरत नहीं समझी, जैसे क़ाफ़िले का मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलों से गुज़रकर मिस्र तक पहुँचना और वहाँ जाकर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को बेचना वग़ैरह, सब को छोड़कर यहाँ से बयान होता है।

وَقَالَ الَّذِي اشْتَرٰهُ مِنْ مِّصْرَ لِامْرَاَتِهٖٓ اَكْرِمِيْ مَثْوٰهُ.

"यानी कहा उस शख़्स ने जिसने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को मिस्र में ख़रीदा, अपनी बीवी से कि यूसुफ़ के ठहराने का अच्छा इन्तिज़ाम करो।"

मतलब यह है कि क़ाफ़िले वालों ने उनको मिस्र लेजाकर फ़रोख़्त करने का ऐलान किया तो तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में है कि लोगों ने बढ़-बढ़कर क़ीमतें लगाना शुरू किया, यहाँ तक कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के वज़न के बराबर सोना और उसी के बराबर मुश्क और उसी वज़न के रेशमी कपड़े क़ीमत लग गई।

यह दौलत अल्लाह तआ़ला ने अ़ज़ीज़े मिस्र के लिये मुक़द्दर की थी उसने ये सब चीज़ें क़ीमत में अदा करके यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ख़रीद लिया।

जैसा कि क़ुरआनी इरशाद से पहले मालूम हो चुका है कि यह सब कुछ कोई इत्तिफ़ाक़ी वाक़िआ़ नहीं बल्कि रब्बुल-इ़ज़्ज़त की बनाई हुई स्थिर तदबीर के हिस्से हैं। मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की ख़रीदारी के लिये उस मुल्क के सबसे बड़े इ़ज़्ज़त वाले शख़्स को मुक़द्दर फ़रमाया। इब्ने कसीर ने फ़रमाया कि यह शख़्स जिसने मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ख़रीदा

मुल्के मिस्र का वित्त-मंत्री था, जिसका नाम क़तफ़ीर या अतफ़ीर बतलाया जाता है, और मिस्र का बादशाह उस ज़माने में अमालिक़ा क़ौम का एक शख़्स रय्यान बिन उसैद था (जो बाद में हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के हाथ पर इस्लाम लाया और मुसलमान होकर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की ज़िन्दगी में इन्तिक़ाल कर गया। (तफ़सीरे मज़हरी)

और अज़ीज़े मिस्र जिसने ख़रीदा था उसकी बीवी का नाम राईल या ज़ुलैख़ा बतलाया गया है। अज़ीज़े मिस्र क़तफ़ीर ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के बारे में अपनी बीवी को यह हिदायत की कि इनको अच्छा ठिकाना दे, आम ग़ुलामों की तरह न रखे, इनकी ज़रूरतों का अच्छा इन्तिज़ाम करे।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि दुनिया में तीन आदमी बड़े अ़क़्लमन्द और क़ियाफ़ा-शनास साबित हुए- अव्वल अज़ीज़े मिस्र जिसने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम कमालात को अपने क़ियाफ़े से मालूम करके बीवी को यह हिदायत दी, दूसरे शुऐब अलैहिस्सलाम की वह बेटी जिसने मूसा अलैहिस्सलाम के बारे में अपने वालिद से कहाः

يٰٓاَبَتِ اسْتَاْجِرْهُ اِنَّ خَيْرَ مَنِ اسْتَاْجَرْتَ الْقَوِيُّ الْاَمِيْنُ۝

"यानी अब्बा जान! इनको नौकर रख लीजिये, इसलिये कि बेहतरीन नौकर वह शख़्स है जो ताक़तवर भी हो और अमानतदार भी।" तीसरे हज़रत सिद्दीक़े अकबर हैं जिन्होंने अपने बाद फ़ारूक़े आज़म को ख़िलाफ़त के लिये चयनित फ़रमाया। (इब्ने क़सीर)

وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوْسُفَ فِي الْاَرْضِ

"यानी इस तरह हुकूमत दे दी हमने यूसुफ़ को ज़मीन की।" इसमें आईन्दा आने वाले वाक़िए की ख़ुशख़बरी यह है कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम जो अज़ीज़े मिस्र के घर में इस वक़्त एक ग़ुलाम की हैसियत से दाख़िल हुए हैं बहुत जल्दी यह मुल्के मिस्र के सबसे बड़े आदमी होंगे और हुकूमत की बागडोर इनको मिलेगा।

وَلِنُعَلِّمَهٗ مِنْ تَاْوِيْلِ الْاَحَادِيْثِ

यहाँ शुरू में हर्फ़ वाव को अगर अ़त्फ़ (जोड़) के लिये माना जाये तो एक जुमला इस मायने का यहाँ पोशीदा माना जायेगा कि हमने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को ज़मीन की हुकूमत इसलिये दी कि वह दुनिया में अ़दल व इन्साफ़ के ज़रिये अमन व अमान क़ायम करें, और मुल्क में रहने वालों की राहत का इन्तिज़ाम करें, और इसलिये कि हम उनको बातों का ठिकाने लगाना सिखा दें। बातों का ठिकाने लगाना एक ऐसा आम मफ़्हूम है जिसमें अल्लाह की वही का समझना, उसको काम में लाना और उस पर अ़मल करना भी दाख़िल है और तमाम ज़रूरी उलूम का हासिल होना भी और ख़्वाबों की सही ताबीर भी।

وَاللّٰهُ غَالِبٌ عَلٰٓى اَمْرِهٖ

यानी अल्लाह तआ़ला ग़ालिब और क़ादिर है अपने काम पर, जो उसका इरादा होता है तमाम आ़लम के ज़ाहिरी असबाब उसके मुताबिक़ होते चले जाते हैं, जैसा कि हदीस में

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब अल्लाह तआ़ला किसी काम का इरादा फ़रमाते हैं तो दुनिया के सारे असबाब उसके लिये तैयार कर देते हैं:

وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ۝

लेकिन अक्सर लोग इस हक़ीक़त को नहीं समझते और ज़ाहिरी असबाब ही को सब कुछ समझकर उन्हीं की फ़िक्र में लगे रहते हैं, असबाब के पैदा करने वाले और क़ादिरे मुतलक़ (यानी अल्लाह तआ़ला) की तरफ़ ध्यान नहीं देते।

وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهٗٓ اٰتَيْنٰهُ حُكْمًا وَّعِلْمًا.

"यानी जब पहुँच गये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपनी पूरी क़ुव्वत और जवानी पर तो दे दी हमने उनको हिक्मत और इल्म।"

यह क़ुव्वत और जवानी किस उम्र में हासिल हुई इसमें मुफ़स्सिरीन के विभिन्न अक़वाल हैं। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु, इमाम मुजाहिद और इमाम क़तादा ने फ़रमाया कि तैंतीस साल उम्र थी। इमाम ज़हहाक रह. ने बीस साल और हसन बसरी रह. ने चालीस साल बतलाई है। इस पर सब का इत्तिफ़ाक़ है कि हिक्मत और इल्म अ़ता करने से मुराद इस जगह नुबुव्वत का अ़ता करना है। इससे यह भी मालूम हो गया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को नुबुव्वत मिस्र पहुँचने के भी काफ़ी अ़रसे के बाद मिली है, और कुएँ की गहराई में जो वही (अल्लाह की तरफ़ से पैग़ाम) उनको भेजी गई वह नुबुव्वत की वही न थी, बल्कि लुग़वी वही थी जो अम्बिया के अ़लावा को भी भेजी जा सकती है, जैसे हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा और हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम के बारे में बयान हुआ है।

وَكَذٰلِكَ نَجْزِى الْمُحْسِنِيْنَ۝

"और हम इसी तरह बदला दिया करते हैं नेक काम करने वालों को।" मतलब यह है कि हलाकत से निजात दिलाकर हुकूमत व इ़ज़्ज़त तक पहुँचाना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की नेक-चलनी, ख़ुदा से डरना और नेक आमाल का नतीजा था, यह उनके साथ मख़्सूस नहीं जो भी ऐसे अ़मल करेगा हमारे इनामात इसी तरह पायेगा।

وَرَاوَدَتْهُ الَّتِىْ هُوَ فِىْ بَيْتِهَا عَنْ نَّفْسِهٖ وَغَلَّقَتِ الْاَبْوَابَ وَقَالَتْ هَيْتَ لَكَ.

"यानी जिस औ़रत के घर में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम रहते थे वह उन पर आ़शिक़ हो गई और उनसे अपना मतलब हासिल करने के लिये उनको फुसलाने लगी, और घर के सारे दरवाज़े बन्द कर दिये और उनसे कहने लगी कि जल्द आ जाओ तुम्हीं से कहती हूँ।"

पहली आयत में मालूम हो चुका है कि यह औ़रत अ़ज़ीज़े मिस्र की बीवी थी मगर इस जगह क़ुरआने करीम ने अ़ज़ीज़ की बीवी का मुख़्तसर लफ़्ज़ छोड़कर 'अल्लती हु-व फ़ी बैतिहा' के अलफ़ाज़ इख़्तियार किये। इसमें इशारा इसकी तरफ़ है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के गुनाह से बचने की मुश्किलों में इस बात ने और भी इज़ाफ़ा कर दिया था कि वह उसी औ़रत के घर में उसी की पनाह में रहते थे, उसके कहने को नज़र-अन्दाज़ करना आसान न था।

गुनाह से बचने का मज़बूत ज़रिया ख़ुद अल्लाह से पनाह माँगना है

और इसका ज़ाहिरी सबब यह हुआ कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जब अपने आपको सब तरफ़ से घिरा हुआ पाया तो पैग़म्बराना अन्दाज़ पर सबसे पहले ख़ुदा की पनाह माँगी 'क़ा-ल मआ़ज़ल्लाहि'। महज़ अपने अ़ज़्म व इरादे पर भरोसा नहीं किया, और यह ज़ाहिर है कि जिसको ख़ुदा की पनाह मिल जाये उसको कौन सही रास्ते से हटा सकता है। इसके बाद पैग़म्बराना हिक्मत व नसीहत के साथ ख़ुद ज़ुलैख़ा को नसीहत करना शुरू किया कि वह भी ख़ुदा से डरे और अपने इरादे से बाज़ आ जाये। फ़रमायाः

اِنَّهٗ رَبِّیْٓ اَحْسَنَ مَثْوَایَ، اِنَّهٗ لَا یُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ٥

"वह मेरा पालने वाला है, उसने मुझे आराम की जगह दी, ख़ूब समझ लो कि ज़ुल्म करने वालों को फ़लाह नहीं होती।"

बज़ाहिर मुराद यह है कि तेरे शौहर अ़ज़ीज़े मिस्र ने मेरी परवरिश की और मुझे अच्छा ठिकाना दिया, मेरा मोहसिन है, मैं उसकी बीवी पर हाथ डालूँ? बड़ा ज़ुल्म है और ज़ुल्म करने वाले कभी फ़लाह नहीं पाते। इसके ज़िमन में ख़ुद ज़ुलैख़ा को भी यह सबक़ दे दिया कि जब मैं उसकी चन्द दिन की परवरिश का इतना हक़ पहचानता हूँ तो तुझे मुझसे ज़्यादा पहचानना चाहिये।

इस जगह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अ़ज़ीज़े मिस्र को अपना रब (पालने वाला) फ़रमाया, हालाँकि यह लफ़्ज़ अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी दूसरे के लिये इस्तेमाल करना जायज़ नहीं। वजह यह है कि ऐसे अलफ़ाज़ से शिर्क का वहम और मुश्रिकों के साथ मुशाबहत पैदा करने का ज़रिया होते हैं, इसलिये शरीअ़ते मुहम्मदिया में ऐसे अलफ़ाज़ इस्तेमाल करना भी वर्जित कर दिया गया। सही मुस्लिम की हदीस में है कि "कोई ग़ुलाम अपने आक़ा को अपना रब न कहे और कोई आक़ा अपने ग़ुलाम को अपना बन्दा न कहे।" मगर यह ख़ुसूसियत शरीअ़ते मुहम्मदिया की है जिसमें शिर्क की मनाही के साथ ऐसी चीज़ों की भी मनाही कर दी गई है जिनमें शिर्क का सबब बनने का एहतिमाल (शुब्हा व गुमान) हो। पहले अम्बिया की शरीअ़तों में शिर्क से तो सख़्ती के साथ रोका गया है मगर असबाब व माध्यमों पर कोई पाबन्दी न थी, इसी वजह से पिछली शरीअ़तों में तस्वीर बनाना मना (वर्जित) न था, मगर शरीअ़ते मुहम्मदिया चूँकि क़ियामत तक के लिये आई है इसको शिर्क से पूरी तरह महफ़ूज़ करने के लिये शिर्क के असबाब, तस्वीर और ऐसे अलफ़ाज़ से भी रोक दिया गया जिनसे शिर्क का वहम हो सके। बहरहाल यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का इन्नहू रब्बी फ़रमाना अपनी जगह दुरुस्त था।

और यह भी हो सकता है कि इन्नहू (बेशक वह) में वह से अल्लाह तआ़ला मुराद हो, उसी को अपना रब फ़रमाया और अच्छा ठिकाना भी दर हक़ीक़त उसी ने दिया, उसकी नाफ़रमानी

सबसे बड़ा ज़ुल्म है, और ज़ुल्म करने वालों को फ़लाह (कामयाबी) नहीं।

कुछ मुफ़स्सिरीन जैसे इमाम सुद्दी और इब्ने इस्हाक़ वग़ैरह ने नक़ल किया है कि उस तन्हाई में ज़ुलैख़ा ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपनी तरफ़ माईल करने के लिये उनके हुस्न व ख़ूबसूरती की तारीफ़ शुरू की, कहा कि तुम्हारे बाल किस क़द्र हसीन हैं, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि ये बाल मौत के बाद सबसे पहले मेरे जिस्म से अलग हो जायेंगे, फिर कहा तुम्हारी आँखें कितनी हसीन हैं, तो फ़रमाया मौत के बाद ये सब पानी होकर मेरे चेहरे पर बह जायेंगी, फिर कहा तुम्हारा चेहरा कितना हसीन है, तो फ़रमाया कि यह सब मिट्टी की ग़िज़ा है, अल्लाह तआ़ला ने आख़िरत की फ़िक्र आप पर इस तरह मुसल्लत कर दी कि नौजवानी के आ़लम में दुनिया की सारी लज़्ज़तें उनके सामने बेहक़ीक़त हो गईं, सही है कि फ़िक्रे आख़िरत ही वह चीज़ है जो इनसान को हर जगह हर बुराई से महफ़ूज़ रख सकती है। अल्लाह तआ़ला हमें भी यह फ़िक्र नसीब फ़रमाये। आमीन

وَلَقَدْ هَمَّتْ بِهٖ ۚ وَهَمَّ بِهَا لَوْلَآ اَنْ رَّاٰ بُرْهَانَ رَبِّهٖ ۚ
كَذٰلِكَ لِنَصْرِفَ عَنْهُ السُّوْٓءَ وَالْفَحْشَآءَ ۚ اِنَّهٗ مِنْ عِبَادِنَا الْمُخْلَصِيْنَ ۝

व ल-क़द् हम्मत् बिही व हम्-म बिहा लौ ला अर्-रआ बुर्हा-न रब्बिही, कज़ालि-क लिनस्रि-फ़ अ़न्हुस्सू-अ वल्-फ़ह्शा-अ, इन्नहू मिन् अ़िबादिनल्-मुख़्लसीन (24)	और अलबत्ता औरत ने फ़िक्र किया उसका और उसने फ़िक्र किया औरत का, अगर न होता यह कि देखे क़ुदरत अपने रब की, यूँही हुआ ताकि हटायें हम उससे बुराई और बेहयाई, अलबत्ता वह है हमारे चुनिन्दा व मुख़्लिस बन्दों में। (24)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उस औरत के दिल में उनका ख़्याल (इरादे के दर्जे में) जम ही रहा था और उनको भी उस औरत का कुछ-कुछ ख़्याल (तबई चीज़ के दर्जे में) हो चला था (जो कि इख़्तियार से बाहर है, जैसे गर्मी के रोज़े में पानी की तरफ़ तबई मैलान होता है अगरचे रोज़ा तोड़ने का ख़्याल तक भी नहीं आता, अलबत्ता) अगर अपने रब की दलील को (यानी इस काम के गुनाह होने की दलील को जो कि शरई हुक्म है) उन्होंने न देखा होता (यानी उनको शरीअ़त का इल्म मय उस पर अ़मली क़ुव्वत के हासिल न होता) तो ज़्यादा ख़्याल हो जाना अ़जीब न था (क्योंकि उसके प्रबल असबाब और तक़ाज़े सब जमा थे मगर) हमने इसी तरह उनको इल्म दिया ताकि हम उनसे छोटे और बड़े गुनाह को दूर रखें (यानी इरादे से भी बचा लिया और फ़ेल से भी, क्योंकि) वह हमारे चुनिन्दा और नेक बन्दों में से थे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की ज़बरदस्त परीक्षा व इम्तिहान बयान हुआ था कि अ़ज़ीज़े मिस्र की औ़रत ने घर के दरवाज़े बन्द करके उनको गुनाह की तरफ़ बुलाने की कोशिश की, और अपनी तरफ़ मुतवज्जह करने और मुब्तला करने के सारे ही असबाब जमा कर दिये मगर रब्बुल-इ़ज़्ज़त ने उस नेक नौजवान को ऐसे सख़्त इम्तिहान में साबित-क़दम रखा। इसकी और अधिक तफ़सील इस आयत में है कि ज़ुलैख़ा तो गुनाह के ख़्याल में लगी हुई थी ही, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दिल में भी इनसानी फ़ितरत के तक़ाज़े से कुछ-कुछ ग़ैर-इख़्तियारी मैलान (रुझान) पैदा होने लगा, मगर अल्लाह तआ़ला ने ऐन उस वक़्त में अपनी दलील व निशानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सामने कर दी जिसकी वजह से वह ग़ैर-इख़्तियारी मैलान आगे बढ़ने के बजाय बिल्कुल ख़त्म हो गया और वह पीछा छुड़ाकर भागे।

इस आयत में लफ़्ज़ 'हम्-म' जिसके मायने ख़्याल के आते हैं ज़ुलैख़ा और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम दोनों की तरफ़ मन्सूब किया गया है:

وَلَقَدْ هَمَّتْ بِهٖ وَهَمَّ بِهَا

और यह मालूम है कि ज़ुलैख़ा का हम्म यानी ख़्याल गुनाह का था इससे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के बारे में भी ऐसे ही ख़्याल का गुमान हो सकता था, और यह तमाम उम्मत की सर्वसम्मति से एक मानी हुई बात है कि यह बात नुबुव्वत व रिसालत की शान के ख़िलाफ़ है क्योंकि उम्मत की अक्सरियत इस पर मुत्तफ़िक़ है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम छोटे और बड़े हर तरह के गुनाह से मासूम (महफ़ूज़ व सुरक्षित) होते हैं। कबीरा (बड़ा) गुनाह तो न जान-बूझकर हो सकता है न ख़ता व भूल के रास्ते से हो सकता है, अलबत्ता सग़ीरा (छोटा) गुनाह भूल और चूक के तौर पर सर्ज़द हो जाने की संभावना है, मगर उस पर भी अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को क़ायम नहीं रहने दिया जाता, बल्कि आगाह करके उससे हटा दिया जाता है। (मुसामरा)

और नबी व रसूलों के गुनाहों से सुरक्षित होने का यह मसला क़ुरआन व सुन्नत से साबित होने के अ़लावा अ़क़्ली तौर पर भी इसलिये ज़रूरी है कि अगर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से गुनाह होने की संभावना और शुब्हा रहे तो उनके लाये हुए दीन और वही पर भरोसा करने का कोई रास्ता नहीं रहता, और उनके नबी बनाकर भेजने और उन पर किताब नाज़िल करने का कोई फ़ायदा बाक़ी नहीं रहता, इसी लिये अल्लाह तआ़ला ने अपने हर पैग़म्बर को हर गुनाह से मासूम (सुरिक्षत) रखा है।

इसलिये संक्षिप्त तौर पर यह तो मुतैयन हो गया कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को जो ख़्याल पैदा हुआ वह गुनाह के दर्जे का ख़्याल न था। तफ़सील इसकी यह है कि अ़रबी भाषा में लफ़्ज़ 'हम्म' दो मायने के लिये बोला जाता है- एक किसी काम का क़स्द व इरादा और पुख़्ता

ख़्याल कर लेना, दूसरे सिर्फ़ दिल में वस्वसा और ग़ैर-इख़्तियार ख़्याल पैदा हो जाना। पहली सूरत गुनाह में दाख़िल और क़ाबिले पकड़ है, हाँ अगर क़स्द व इरादे के बाद ख़ालिस अल्लाह तआ़ला के ख़ौफ़ से कोई शख़्स उस गुनाह को अपने इख़्तियार से छोड़ दे तो हदीस में है कि अल्लाह तआ़ला उसके गुनाह की जगह उसके नामा-ए-आमाल में एक नेकी दर्ज फ़रमा देते हैं, और दूसरी सूरत कि सिर्फ़ वस्वसा और ग़ैर-इख़्तियारी ख़्याल आ जाये और उस काम का इरादा बिल्कुल न हो जैसे गर्मी के रोज़े में ठण्डे पानी की तरफ़ तबई मैलान ग़ैर-इख़्तियारी सब को हो जाता है हालाँकि रोज़े में पीने का इरादा बिल्कुल नहीं होता, इस क़िस्म का ख़्याल न इनसान के इख़्तियार में है न उस पर कोई पकड़ होगी।

सही बुख़ारी की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने मेरी उम्मत के लिये गुनाह के वस्वसे और ख़्याल को माफ़ कर दिया है जब कि वह उस पर अ़मल न करे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला फ़रिश्तों से फ़रमाते हैं कि मेरा बन्दा जब किसी नेकी का इरादा करे तो सिर्फ़ इरादा करने से उसके नामा-ए-आमाल में एक नेकी लिख दो, और जब वह यह नेक अ़मल कर ले तो दस नेकियाँ लिखो। और अगर बन्दा किसी गुनाह का इरादा करे मगर फिर ख़ुदा के ख़ौफ़ से छोड़ दे तो गुनाह के बजाय उसके नामा-ए-आमाल में एक नेकी लिख दो, और अगर वह गुनाह कर ही गुज़रे तो सिर्फ़ एक ही गुनाह लिखो। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में लफ़्ज़ 'हम्म' का इन दोनों मायने के लिये इस्तेमाल अ़रब के मुहावरों और शे'रों के सुबूतों से साबित किया है।

इससे मालूम हुआ कि अगरचे आयत में लफ़्ज़ 'हम्म' ज़ुलैख़ा और हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम दोनों के लिये बोला गया, मगर उन दोनों के हम्म यानी ख़्याल में बड़ा फ़र्क़ है। पहला गुनाह में दाख़िल है और दूसरा ग़ैर-इख़्तियारी वस्वसे की हैसियत रखता है, जो गुनाह में दाख़िल नहीं। क़ुरआने करीम का अन्दाज़े बयान भी ख़ुद इस पर गवाह है क्योंकि दोनों का हम्म व ख़्याल एक ही तरह का होता तो इस जगह एक ही लफ़्ज़ से दोनों का इरादा बयान किया जाता जो मुख़्तसर भी था, इसको छोड़कर दोनों के हम्म व ख़्याल का बयान अलग-अलग फ़रमायाः

هَمَّتْ بِهٖ وَهَمَّ بِهَا

और ज़ुलैख़ा के हम्म व ख़्याल के साथ ताकीद के अलफ़ाज़ लाम और क़द यानी 'लक़द' का इज़ाफ़ा किया, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हम्म के साथ लाम और क़द की ताकीद नहीं है, जिससे मालूम होता है कि इस ख़ास ताबीर के ज़रिये यही जतलाना है कि ज़ुलैख़ा का हम्म किसी और तरह का था और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का दूसरी तरह का।

सही मुस्लिम की एक हदीस में है कि जिस वक़्त हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को यह परीक्षा

पेश आई तो फ़रिश्तों ने अल्लाह जल्ल शानुहू से अर्ज़ किया कि आपका यह नेक बन्दा गुनाह के ख़्याल में है, हालाँकि वह उसके वबाल को ख़ूब जानता है। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया इन्तिज़ार करो, अगर वह यह गुनाह कर ले तो जैसा किया है वह उसके आमाल नामे में लिख दो, और अगर वह उसको छोड़ दे तो गुनाह के बजाय उसके आमाल नामे में नेकी दर्ज करो, क्योंकि उसने सिर्फ़ मेरे ख़ौफ़ से अपनी इच्छा को छोड़ा है (जो बहुत बड़ी नेकी है)। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

ख़ुलासा यह है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दिल में जो ख़्याल या रुझान पैदा हुआ वह महज़ ग़ैर-इख़्तियारी वस्वसे के दर्जे में था जो गुनाह में दाख़िल नहीं, फिर उस वस्वसे के ख़िलाफ़ अ़मल करने से अल्लाह तआ़ला के नज़दीक उनका दर्जा और ज़्यादा बुलन्द हो गया।

और हज़राते मुफ़स्सिरीन में से कुछ ने इस जगह यह भी फ़रमाया है कि यहाँ वाक़िआ़ जो बयान किया गया है उसमें इबारत आगे-पीछे की गयी है:

لَوْلَآ اَنْ رَّاٰ بُرْهَانَ رَبِّهٖ

(अगर उन्होंने अपने रब की निशानी को न देखा होता) जो बाद में ज़िक्र किया गया है वह असल में पहले है और मायने आयत के यह हैं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को भी ख़्याल पैदा हो जाता अगर अल्लाह की दलील व निशानी को न देख लेते, लेकिन अल्लाह की निशानी को देखने की वजह से वह उस हम्म और ख़्याल से भी बच गये। मज़मून यह भी दुरुस्त है मगर कुछ हज़रात ने इबारत के इस आगे-पीछे करने को भाषायी क़ायदों के ख़िलाफ़ क़रार दिया है, और इस लिहाज़ से भी पहली ही तफ़सीर वरीयता प्राप्त है कि उसमें हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की पाकीज़गी व तक़वे की शान और ज़्यादा बुलन्द हो जाती है कि तबई और इनसानी तक़ाज़े के बावजूद वह गुनाह से महफ़ूज़ रहे।

इसके बाद जो यह इरशाद फ़रमायाः

لَوْلَآ اَنْ رَّاٰ بُرْهَانَ رَبِّهٖ

(अगर उन्होंने अपने रब की निशानी को न देखा होता) इसकी जज़ा यहाँ पोशीदा है, और मायने यह हैं कि अगर वह अपने रब की निशानी व दलील को न देखते तो इस ख़्याल में मुब्तला रहते, मगर रब की निशानी देख लेने की वजह से वह ग़ैर-इख़्तियारी ख़्याल और वस्वसा भी दिल से निकल गया।

क़ुरआने करीम ने यह स्पष्ट नहीं फ़रमाया कि वह अल्लाह की निशानी जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के समने आई क्या चीज़ थी? इसी लिये इसमें मुफ़स्सिरीन हज़रात के अक़वाल अलग-अलग हैं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु, इमाम मुजाहिद, इमाम सईद बिन जुबैर, इमाम मुहम्मद बिन सीरीन और इमाम हसन बसरी रह. वग़ैरह ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने मोजिज़े के तौर पर उस तन्हाई की जगह में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की सूरत इस तरह उनके सामने कर दी कि वह अपनी उंगली दाँतों में दबाये हुए उनको सचेत कर रहे हैं, और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि अ़ज़ीज़े मिस्र की सूरत उनके सामने कर दी गई,

कुछ ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की नज़र छत की तरफ़ उठी तो उसमें क़ुरआन की यह आयत लिखी हुई देखीः

لَا تَقْرَبُوا الزِّنٰى اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً، وَسَآءَ سَبِيْلًا○

"यानी ज़िना के पास न जाओ, क्योंकि वह बड़ी बेहयाई (और अल्लाह के क़हर का सबब) और (समाज के लिये) बहुत बुरा रास्ता है।"

कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि ज़ुलैख़ा के मकान में एक बुत (मूर्ति) था, उसने उस बुत पर पर्दा डाला तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने वजह पूछी, उसने कहा कि यह मेरा माबूद है, इसके सामने गुनाह करने की जुर्रत नहीं। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मेरा माबूद इससे ज़्यादा हया (शर्म करने) का मुस्तहिक़ है, उसकी नज़र को कोई पर्दा नहीं रोक सकता। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत और अल्लाह की पहचान ख़ुद ही रब की निशानी व दलील थी।

इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर रह. ने इन तमाम अक़वाल को नक़ल करने के बाद जो बात फ़रमाई है वह सब अहले तहक़ीक़ के नज़दीक बहुत ही पसन्दीदा और बेग़ुबार है। वह यह है कि जितनी बात क़ुरआने करीम ने बतला दी है सिर्फ़ उसी पर बस किया जाये, यानी यह कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने कोई ऐसी चीज़ देखी जिससे वस्वसा (ख़्याल) उनके दिल से जाता रहा, उस चीज़ के मुतैयन करने में वे सब संभावनायें और गुमान हो सकते हैं जो हज़राते मुफ़स्सिरीन ने ज़िक्र किये हैं, लेकिन निश्चित तौर पर किसी को मुतैयन नहीं किया जा सकता। (इब्ने कसीर)

كَذٰلِكَ لِنَصْرِفَ عَنْهُ السُّوْٓءَ وَالْفَحْشَآءَ، اِنَّهٗ مِنْ عِبَادِنَا الْمُخْلَصِيْنَ○

यानी हमने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को यह बुरहान (निशानी व दलील) इसलिये दिखाई कि उनसे बुराई और बेहयाई को हटा दें। बुराई से मुराद छोटा गुनाह और बेहयाई से मुराद बड़ा गुनाह है। (तफ़सीरे मज़हरी)

यहाँ यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि बुराई और बेहयाई को यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से हटा देने का ज़िक्र फ़रमाया है, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को बुराई और बेहयाई से हटाना नहीं फ़रमाया। जिसमें इशारा है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम तो अपनी नुबुव्वत वाली शान की वजह से इस गुनाह से ख़ुद ही हटे हुए थे मगर बुराई और बेहयाई ने उनको घेर लिया था, हमने उसके जाल को तोड़ दिया। क़ुरआने करीम के ये अलफ़ाज़ भी इस पर सुबूत हैं कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम किसी मामूली से गुनाह में भी मुब्तला नहीं हुए, और उनके दिल में जो ख़्याल पैदा हुआ था वह गुनाह में दाख़िल न था, वरना यहाँ ताबीर इस तरह होती कि हमने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को गुनाह से बचा दिया, न यह कि गुनाह को उनसे हटा दिया।

क्योंकि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम हमारे ख़ास और चुनिन्दा बन्दों में से हैं। लफ़्ज़ 'मुख़्लसीन' इस जगह मुख़्लस की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने चुनिन्दा और ख़ास किये हुए के हैं। मुराद यह है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अल्लाह तआ़ला के उन बन्दों में से हैं जिनको ख़ुद अल्लाह

तआ़ला ने अपनी रिसालत और मख़्लूक़ की इस्लाह के काम के लिये चुन लिया, ऐसे लोगों पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हिफ़ाज़ती पहरा होता है कि वे किसी बुराई में मुब्तला न हो सकें। ख़ुद शैतान ने भी अपने बयान में इसका इक़रार किया कि हक़ तआ़ला के ख़ास और चुने हुए बन्दों पर उसका बस नहीं चलता। उसने कहाः

فَبِعِزَّتِكَ لَأُغْوِيَنَّهُمْ أَجْمَعِينَ ۝ إِلَّا عِبَادَكَ مِنْهُمُ الْمُخْلَصِينَ ۝

"यानी क़सम है तेरी इज़्ज़त व ताक़त की कि मैं उन सब इनसानों को गुमराह करूँगा सिवाय उन बन्दों के जिनको आपने चुन लिया और ख़ास फ़रमा लिया है।"

और कुछ क़िराअतों में यह लफ़्ज़ लाम के ज़ेर के साथ 'मुख़्लिसीन' भी आया है, और मुख़्लिस के मायने यह हैं कि जो अल्लाह तआ़ला की इबादत व फ़रमाँबरदारी इख़्लास के साथ करे, उसमें किसी दुनियावी और नफ़्सानी इच्छा व शोहरत व मर्तबे वग़ैरह की चाहत का दख़ल न हो, इस सूरत में इस आयत की मुराद यह होगी कि जो शख़्स भी अपने अ़मल और इबादत में मुख़्लिस (नेक-नीयत) हो अल्लाह तआ़ला गुनाहों से बचने में उसकी इमदाद फ़रमाते हैं।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने दो लफ़्ज़ सू और फ़हशा के इस्तेमाल फ़रमाये हैं। सू के लफ़्ज़ी मायने बुराई के हैं, और मुराद इससे छोटा गुनाह है, और फ़हशा के मायने बेहयाई के हैं इससे मुराद बड़ा गुनाह है। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को बड़े और छोटे दोनों क़िस्म के गुनाहों से महफ़ूज़ रखा।

इसी से यह भी वाज़ेह हो गया कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ क़ुरआन में जिस हम्म यानी ख़्याल को मन्सूब किया है वह महज़ ग़ैर-इख़्तियारी वस्वसे के दर्जे का हम्म था, जो न बड़े गुनाह में दाख़िल है न छोटे में, बल्कि माफ़ है।

وَاسْتَبَقَا الْبَابَ وَقَدَّتْ قَمِيصَهُ مِنْ دُبُرٍ وَأَلْفَيَا سَيِّدَهَا لَدَا الْبَابِ ۚ قَالَتْ مَا جَزَاءُ مَنْ أَرَادَ بِأَهْلِكَ سُوءًا إِلَّا أَنْ يُسْجَنَ أَوْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ قَالَ هِيَ رَاوَدَتْنِي عَنْ نَفْسِي وَشَهِدَ شَاهِدٌ مِنْ أَهْلِهَا ۚ إِنْ كَانَ قَمِيصُهُ قُدَّ مِنْ قُبُلٍ فَصَدَقَتْ وَهُوَ مِنَ الْكَاذِبِينَ ۝ وَإِنْ كَانَ قَمِيصُهُ قُدَّ مِنْ دُبُرٍ فَكَذَبَتْ وَهُوَ مِنَ الصَّادِقِينَ ۝ فَلَمَّا رَأَى قَمِيصَهُ قُدَّ مِنْ دُبُرٍ قَالَ إِنَّهُ مِنْ كَيْدِكُنَّ ۖ إِنَّ كَيْدَكُنَّ عَظِيمٌ ۝ يُوسُفُ أَعْرِضْ عَنْ هَٰذَا ۚ وَاسْتَغْفِرِي لِذَنْبِكِ ۖ إِنَّكِ كُنْتِ مِنَ الْخَاطِئِينَ ۝

वस्त-बक़ल्बा-ब व क़द्दत् क़मी-सहू मिन् दुबुरिंव्-व अल्फ़या सय्यि-दहा लदल्-बाबि, क़ालत् मा जज़ा-उ मन् अरा-द बि-अह्लि-क सूअन् इल्ला	और दोनों दौड़े दरवाज़े को और औ़रत ने चीर डाला उसका कुर्ता पीछे से, और दोनों मिल गये औ़रत के शौहर से दरवाज़े के पास, बोली और कुछ सज़ा नहीं ऐसे शख़्स की जो चाहे तेरे घर में बुराई,

अंय्युस्ज-न औ अज़ाबुन् अलीम (25) का-ल हि-य रा-वदत्नी अन्-नफ़्सी व शहि-द शाहिदुम् मिन् अह्लिहा इन् का-न क़मीसुहू क़ुद्-द मिन् क़ुबुलिन् फ़-स-दक़त् व हु-व मिनल्-काज़िबीन (26) व इन् का-न क़मीसुहू क़ुद्-द मिन् दुबुरिन् फ़-क-ज़बत् व हु-व मिनस्सादिक़ीन (27) फ़-लम्मा रआ क़मी-सहू क़ुद्-द मिन् दुबुरिन् क़ा-ल इन्नहू मिन् कैदिकुन्-न, इन्-न कै-दकुन्-न अज़ीम (28) यूसुफ़ु अअ्रिज़् अन् हाज़ा वस्तग़्फ़िरी लिज़म्बिकि इन्नकि कुन्ति मिनल्-ख़ातिईन (29) ✿	मगर यही कि कैद में डाला जाये या अज़ाब दर्दनाक। (25) यूसुफ़ बोला इसी ने इच्छा की मुझसे कि न थामूँ अपने जी को, और गवाही दी एक गवाह ने औरत के लोगों में से, अगर है उसका कुर्ता फटा आगे से तो औरत सच्ची है और वह है झूठा। (26) और अगर है कुर्ता उसका फटा पीछे से तो यह झूठी है और वह सच्चा है। (27) फिर जब देखा अज़ीज़ ने कुर्ता उसका फटा हुआ पीछे से कहा बेशक यह एक फ़रेब है तुम औरतों का, अलबत्ता तुम्हारा फ़रेब बड़ा है। (28) यूसुफ़ जाने दे इस ज़िक्र को, और औरत तू बख़्शवा अपना गुनाह, बेशक तू ही गुनाहगार थी। (29) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और जब उस औरत ने फिर वही ज़िद की तो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम वहाँ से जान बचाकर भागे और वह उनको पकड़ने के लिये उनके पीछे चली) और वे दोनों आगे-पीछे दरवाज़े की तरफ़ को दौड़े, और (दौड़ने में जो उनको पकड़ना चाहा तो) उस औरत ने उनका कुर्ता पीछे से फाड़ डाला (यानी उसने कुर्ता पकड़कर खींचना चाहा और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम आगे की तरफ़ दौड़े तो कुर्ता फट गया, मगर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम दरवाज़े से बाहर निकल गये) और (वह औरत भी साथ थी तो) दोनों ने (इत्तिफ़ाक़न) उस औरत के शौहर को दरवाज़े के पास (खड़ा) पाया। औरत (शौहर को देखकर सटपटाई और फ़ौरन बात बनाकर) बोली, कि जो शख़्स तेरी बीवी के साथ बदकारी का इरादा करे उसकी सज़ा सिवाय इसके और क्या (हो सकती) है कि वह जेलख़ाने भेजा जाये या और कोई दर्दनाक सज़ा हो (जैसे जिस्मानी मार-पिटाई)।

यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने कहा (कि यह जो मेरी तरफ़ इल्ज़ाम का इशारा करती है बिल्कुल झूठी है, बल्कि मामला इसके उलट है) यही मुझसे अपना मतलब निकालने को फुसलाती थी, और (इस मौक़े पर) उस औरत के ख़ानदान में से एक गवाह ने (जो कि दूध पीता बच्चा था

और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े से बोल पड़ा और आपके बरी होने की) गवाही दी (उस बच्चे का बोलना ही हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का एक मोजिज़ा था, इस पर दूसरा मोजिज़ा यह हुआ कि उस दूध पीते बच्चे ने एक माक़ूल निशानी बताकर अ़क्लमन्दी वाला फ़ैसला भी किया और कहा) कि इनका कुर्ता (देखो कहाँ से फटा है) अगर आगे से फटा है तो औ़रत सच्ची है और यह झूठे। और अगर इनका कुर्ता पीछे से फटा है तो औ़रत झूठी है और यह सच्चे। सो जब (अ़ज़ीज़ ने) उनका कुर्ता पीछे से फटा हुआ देखा (औ़रत से) कहने लगा कि यह तुम औ़रतों की चालाकी है, बेशक तुम्हारी चालाकियाँ भी ग़ज़ब की होती हैं। (फिर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ मुतवज्जह होकर कहने लगा) ऐ यूसुफ़! इस बात को जाने दो (यानी इसका चर्चा या ख़्याल मत करो) और (औ़रत से कहा कि) ऐ औ़रत! तू (यूसुफ़ से) अपने क़सूर की माफ़ी माँग, बेशक पूरी की पूरी तू ही क़सूरवार है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में यह बयान आया है कि जिस वक़्त अ़ज़ीज़े मिस्र की बीवी हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को गुनाह में मुब्तला करने की कोशिश में मश्ग़ूल थी, और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम उससे बच रहे थे मगर फ़ितरी और ग़ैर-इख़्तियारी ख़्याल की कश्मकश भी थी तो हक़ तआ़ला ने अपने चुनिन्दा और ख़ास पैग़म्बर की मदद के लिये बतौर मोजिज़े के कोई ऐसी चीज़ सामने कर दी जिसने दिल से वह ग़ैर-इख़्तियारी ख़्याल भी निकाल डाला, चाहे वह चीज़ अपने वालिद हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की सूरत हो या अल्लाह की वही की कोई आयत।

उक्त आयत में यह बतलाया है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम उस तन्हाई की जगह में अल्लाह की उस निशानी को देखते ही वहाँ से भाग खड़े हुए और बाहर निकलने के लिये दरवाज़े की तरफ़ दौड़े। अ़ज़ीज़ की बीवी उनको पकड़ने के लिये पीछे दौड़ी और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कुर्ता पकड़कर उनको बाहर जाने से रोकना चाहा, वह अपने इरादे के मुताबिक़ न रुके तो कुर्ता पीछे से फट गया, मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम दरवाज़े से बाहर निकल आये और उनके पीछे ज़ुलैख़ा भी। तारीख़ी रिवायतों में बयान हुआ है कि दरवाज़े पर ताला लगा दिया था, जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम दौड़कर दरवाज़े पर पहुँचे तो अपने आप यह ताला खुलकर गिर गया।

जब ये दोनों दरवाज़े से बाहर आये तो देखा कि अ़ज़ीज़े मिस्र सामने खड़े हैं। उनकी बीवी सहम गई और बात यूँ बनाई कि इल्ज़ाम और तोहमत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर डालने के लिये कहा कि जो शख़्स आपकी बीवी के साथ बुरे काम का इरादा करे उसकी सज़ा इसके सिवा क्या हो सकती है कि उसको क़ैद में डाला जाये या कोई दूसरी जिस्मानी सख़्त सज़ा दी जाये।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपनी पैग़म्बराना शराफ़त की बिना पर ग़ालिबन उसका राज़ न खोलते मगर जब उसने पहल करके यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर तोहमत रखने का इशारा किया तो मजबूर होकर उन्होंने हक़ीक़त का इज़हार किया कि:

هِىَ رَاوَدَتْنِىْ عَنْ نَّفْسِىْ

यानी यही मुझसे अपना मतलब निकालने के लिये मुझे फुसला रही थी।

मामला बड़ा नाज़ुक और अज़ीज़े मिस्र के लिये इसका फ़ैसला सख़्त दुश्वार था कि इनमें से किसे सच्चा समझे, गवाही और सुबूत का कोई मौक़ा न था मगर अल्लाह जल्ल शानुहू जिस तरह अपने मक़बूल और ख़ास बन्दों को गुनाह से बचा लेते हैं, और उनको सुरक्षित व महफ़ूज़ रखते हैं, इसी तरह दुनिया में भी उनको रुस्वाई से बचाने का इन्तिज़ाम चमत्कारी अन्दाज़ से फ़रमा देते हैं, और उमूमन ऐसे मौक़ों पर ऐसे छोटे बच्चों से काम लिया गया है जो आदतन बोलने बात करने के क़ाबिल नहीं होते, मगर मोजिज़े के तौर पर उनको बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमाकर अपने मक़बूल बन्दों की बराअत का इज़हार फ़रमा देते हैं। जैसे हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम पर जब लोग तोहमत बाँधने लगे तो सिर्फ़ एक दिन (और राजेह क़ौल के मुताबिक़ चालीस दिन) के बच्चे हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को हक़ तआ़ला ने बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमाकर उनकी ज़बान से वालिदा की पवित्रता ज़ाहिर फ़रमा दी, और क़ुदरते ख़ुदावन्दी का एक ख़ास प्रतीक सामने कर दिया।

बनी इस्राईल के एक बुज़ुर्ग जुरैज पर इसी तरह की एक तोहमत एक बड़ी साज़िश के साथ बाँधी गई तो एक नवजात बच्चे ने उनकी बराअत के लिये गवाही दी। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर फ़िरऔ़न को शुब्हा पैदा हुआ तो फ़िरऔ़न की बीवी के बाल संवारने वाली औ़रत की छोटी बच्ची को बोलने की ताक़त अ़ता हुई, उसने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को बचपन में फ़िरऔ़न के हाथ से बचाया।

ठीक इसी तरह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की रिवायत के मुताबिक़ एक छोटे बच्चे को हक़ तआ़ला ने बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमा दी, और वह भी निहायत अ़क्ल व समझ वाले अन्दाज़ की। यह छोटा बच्चा उसी घर में पालने के अन्दर पड़ा था, यह किसको गुमान हो सकता था कि वह इन हरकतों को देखेगा और समझेगा, और फिर इसको किसी अन्दाज़ से बयान भी कर देगा, मगर अल्लाह तआ़ला जो हर चीज़ पर क़ादिर व मुख़्तार है वह अपनी फ़रमाँबरदारी में मेहनत व कोशिश करने वालों की शान ज़ाहिर करने के लिये दुनिया को दिखला देता है कि कायनात का ज़र्रा-ज़र्रा उसकी ख़ुफ़िया पुलिस (सी. आई. डी.) है, जो मुजरिम को ख़ूब पहचानती और उसके जुर्मों का रिकॉर्ड रखती है, और ज़रूरत के वक़्त उसका इज़हार कर देती है। मैदाने हश्र में हिसाब किताब के वक़्त इनसान दुनिया की अपनी पुरानी आ़दत की बिना पर जब अपने जुर्मों को मानने से इनकार करेगा तो उसी के हाथ-पाँव और खाल और दर व दीवार को उसके ख़िलाफ़ गवाह बनाकर खड़ा कर दिया जायेगा, वह उसकी एक-एक हरकत को मेहशर के अ़ज़ीमुश्शान मजमे और ज़बरदस्त जनसमूह के सामने खोलकर रख देगा। उस वक़्त इनसान को यह पता लगेगा कि हाथ-पाँव और घर के दर व दीवार और हिफ़ाज़ती इन्तिज़ामात में से कोई भी मेरा न था बल्कि ये सब अल्लाह रब्बुल-इ़ज़्ज़त के गोपनीय कार्यकर्ता थे।

ख़ुलासा यह है कि यह छोटा बच्चा जो पालने में बज़ाहिर इस दुनिया की हर चीज़ से

ग़ाफ़िल व बेख़बर पड़ा था, वह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े के तौर पर ऐन उस वक़्त बोल उठा जबकि अ़ज़ीज़े मिस्र इस वाक़िए से कश्मकश (असमंजस और दुविधा) में मुब्तला था।

फिर यह बच्चा अगर सिर्फ़ इतना ही कह देता कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम बरी हैं, ज़ुलैख़ा का क़सूर है तो वह भी एक मोजिज़े की हैसियत से हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हक़ में बराअत की बड़ी गवाही होती, मगर अल्लाह तआ़ला ने इस बच्चे की ज़बान से एक अ़क़्लमन्दी वाली बात कहलाई कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कुर्ते को देखो अगर वह आगे से फटा है तब तो ज़ुलैख़ा का कहना सच्चा और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम झूठे हो सकते हैं, और अगर वह पीछे से फटा है तो इसमें इसके सिवा कोई दूसरा गुमान व संभावना ही नहीं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम भाग रहे थे और ज़ुलैख़ा उनको रोकना चाहती थी।

यह एक ऐसी बात थी कि बच्चे के बोल पड़ने के चमत्कार के अ़लावा ख़ुद भी हर एक की समझ में आ सकती थी, और जब बतलाई हुई निशानी के मुताबिक़ कुर्ते का पीछे से फटा होना देखा गया तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बराअत ज़ाहिरी निशानियों से भी ज़ाहिर हो गई।

यूसुफ़ के शाहिद (गवाह) की जो तफ़सीर हमने बयान की है कि वह एक छोटा बच्चा था जिसको अल्लाह तआ़ला ने मोजिज़े के तौर पर बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमा दी, यह एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है जिसको इमाम अहमद रह. ने अपने मुस्नद में और इब्ने हिब्बान रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब सही में और हाकिम रह. ने मुस्तद्रक में नक़ल करके सही हदीस क़रार दिया है। इस हदीस में इरशाद है कि अल्लाह तआ़ला ने चार बच्चों को पालने में बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमाई है, ये चारों वही हैं जो अभी ज़िक्र किये गये हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

और कुछ रिवायतों में शाहिद (गवाह) की दूसरी तफ़सीरें भी नक़ल की गई हैं मगर इमाम इब्ने जरीर और इमाम इब्ने कसीर वग़ैरह हज़रात ने पहली ही तफ़सीर को राजेह क़रार दिया है।

अहकाम व मसाईल

उपर्युक्त आयतों से चन्द अहम मसाईल और अहकाम निकलते हैं:

अव्वल आयत 'वस्त-बक़ल्-बा-ब........' (यानी आयत नम्बर 25) से यह मालूम हुआ कि जिस जगह गुनाह में मुब्तला हो जाने का ख़तरा हो उस जगह ही को छोड़ देना चाहिये जैसा कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने वहाँ से भागकर इसका सुबूत दिया।

दूसरा मसला यह कि अल्लाह के अहकाम की तामील में इनसान पर लाज़िम है कि अपनी हिम्मत भर कोशिश में कमी न की जाये चाहे उसका नतीजा बज़ाहिर कुछ निकलता नज़र न आये, नतीजे अल्लाह तआ़ला के हाथ में हैं, इनसान का काम अपनी मेहनत और कोशिश को अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च करके अपनी बन्दगी का सुबूत देना है, जैसा कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने दरवाज़े सब बन्द होने और तारीख़ी रिवायतों के मुताबिक़ ताले लगे होने के बावजूद दरवाज़े की तरफ़ दौड़ने में अपनी पूरी ताक़त ख़र्च फ़रमा दी। ऐसी सूरत में अल्लाह

तआला की तरफ़ से इमदाद भी अक्सर देखने में आती है कि बन्दा जब अपनी कोशिश पूरी कर लेता है तो अल्लाह तआला कामयाबी के असबाब मुहैया फ़रमा देते हैं। मौलाना रूमी रह. ने इसी मज़मून पर इरशाद फ़रमाया है:

गरचे रख़्ना नेस्त आलम रा पदीद ख़ैरा यूसुफ़ वार मी बायद दवीद

कि अगरचे सामने बज़ाहिर कोई रास्ता नज़र न आये मगर फिर भी इनसान को हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की तरह भरपूर कोशिश करनी चाहिये। **(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

ऐसी सूरत में अगर ज़ाहिरी कामयाबी भी हासिल न हो तो बन्दे के लिये यह नाकामी भी कामयाबी से कम नहीं।

एक बुज़ुर्ग आलिम जेल में थे, जुमे के दिन अपनी ताक़त के मुताबिक़ ग़ुस्ल करते और अपने कपड़े धो लेते और फिर जुमे के लिये तैयार होकर जेल के दरवाज़े तक जाते, वहाँ पहुँचकर अ़र्ज़ करते कि या अल्लाह! मेरी क़ुदरत में इतना ही था आगे आपके इख़्तियार में है। अल्लाह तआला की उमूमी रहमत से कुछ बईद न था कि उनकी करामत से जेल का दरवाज़ा खुल जाता और वह नमाज़े जुमा अदा कर लेते, लेकिन उसने अपनी हिक्मत से उस बुज़ुर्ग को वह ऊँचा मक़ाम अ़ता फ़रमाया जिस पर हज़ारों करामतें क़ुरबान हैं कि उनके इस अ़मल की वजह से जेल का दरवाज़ा न खुला मगर इसके बावजूद उन्होंने अपने काम में हिम्मत नहीं हारी, हर जुमे को लगातार यही अ़मल जारी रखा, यही वह इस्तिक़ामत (जमाव और साबित-क़दमी) है जिसको उम्मत के बुज़ुर्गों ने करामत से भी बढ़कर और बरतर फ़रमाया है।

तीसरा मसला इससे यह साबित हुआ कि किसी शख़्स पर कोई ग़लत तोहमत बाँधे और झूठा इल्ज़ाम लगाये तो अपनी सफ़ाई पेश करना अम्बिया की सुन्नत है, यह कोई तवक्कुल या बुज़ुर्गी नहीं कि उस वक़्त ख़ामोश रहकर अपने आपको मुजरिम क़रार दे दे।

चौथा मसला इसमें शाहिद का है, यह लफ़्ज़ जब आ़म फ़िक़्ही मामलात और मुक़द्दिमों में बोला जाता है तो इससे वह शख़्स मुराद होता है जो विवादित मामले के मुताल्लिक़ अपना चश्मदीद कोई वाक़िआ बयान करे, इस आयत में जिसको शाहिद के लफ़्ज़ से ताबीर किया है उसने कोई वाक़िआ या उसके मुताल्लिक़ अपना कोई देखना बयान नहीं किया, बल्कि फ़ैसला करने की एक सूरत की तरफ़ इशारा किया है, इसको इस्तिलाही तौर पर शाहिद नहीं कहा जा सकता।

मगर ज़ाहिर है कि ये परिभाषायें सब बाद के उलेमा व फ़ुक़हा ने आपसी समझने और समझाने के लिये इख़्तियार कर ली हैं, क़ुरआने करीम की न ये परिभाषायें हैं न वह इनका पाबन्द है। क़ुरआने करीम ने यहाँ उस शख़्स को शाहिद इस मायने के एतिबार से फ़रमाया है कि जिस तरह शाहिद के बयान से मामले का तसफ़िया (फ़ैसला करना) आसान हो जाता है और किसी एक फ़रीक़ का हक़ पर होना साबित हो जाता है, उस बच्चे के बयान से भी यही फ़ायदा हासिल हो गया कि असल तो उसका चमत्कारिक तौर पर बोल पड़ना ही हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बराअत के लिये शाहिद (सुबूत) था और फिर उसने जो पहचान बतलाई

उनका हासिल भी अन्जामकार यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ही की बराअत का सुबूत है। इसलिये यह कहना सही हो गया कि उसने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हक़ में गवाही दी, हालाँकि उसने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को सच्चा नहीं कहा बल्कि दोनों संभावनाओं का ज़िक्र कर दिया था, और ज़ुलैख़ा के सच्चे होने को एक ऐसी सूरत में भी फ़र्ज़ी तौर पर तस्लीम कर लिया था जिसमें उनका सच्चा होना यक़ीनी न था, बल्कि दूसरा भी शुब्हा और संभावना मौजूद थी, क्योंकि कुर्ते का सामने से फटना दोनों सूरतों में मुम्किन था और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सच्चे होने को सिर्फ़ ऐसी सूरत में तस्लीम किया था जिसमें इसके सिवा कोई दूसरी संभावना ही नहीं हो सकती, लेकिन अन्जामकार नतीजा इस रणनीति का यही था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का बरी होना साबित हो।

पाँचवाँ मसला इसमें यह है कि मुक़द्दिमों और विवादों के फ़ैसलों में हालात, इशारात और निशानात से काम लिया जा सकता है जैसा कि उस शाहिद (गवाह) ने कुर्ते के पीछे से फटने को इसकी निशानी और पहचान क़रार दिया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम भग रहे थे, ज़ुलैख़ा पकड़ रही थी। इस मामले में इतनी बात पर तो सब फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) का इत्तिफ़ाक़ है कि मामलात की हक़ीक़त पहचानने में निशानियों और हालात व इशारात से ज़रूर काम लिया जाये जैसा कि यहाँ किया गया, लेकिन सिर्फ़ निशानात और हालात व अन्दाज़ों को काफ़ी सुबूत का दर्जा नहीं दिया जा सकता। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए में भी दर हक़ीक़त बराअत का सुबूत तो उस बच्चे का चमत्कारिक अन्दाज़ से बोल उठना है, निशानियों और हालात व इशारात जिनका ज़िक्र किया गया है उनसे इस मामले की ताईद हो गई।

बहरहाल यहाँ तक यह साबित हुआ कि जब ज़ुलैख़ा ने हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर तोहमत व इल्ज़ाम लगाया तो अल्लाह तआ़ला ने एक छोटे बच्चे को ख़िलाफ़े आ़दत बोलने की ताक़त देकर उसकी ज़बान से यह बुद्धिमानी भरा फ़ैसला सादिर फ़रमाया कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कुर्ते को देखो अगर वह पीछे से फटा है तो यह इसकी साफ़ निशानी है कि वह भाग रहे थे और ज़ुलैख़ा पकड़ रही थी, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम बेक़सूर हैं।

ज़िक्र हुई आयतों में से आख़िरी दो आयतों में यह बयान हुआ है कि अ़ज़ीज़े मिस्र बच्चे के इस तरह बोलने ही से यह समझ चुका था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बराअत ज़ाहिर करने के लिये यह असाधारण और आ़म दस्तूर के ख़िलाफ़ सूरत पेश आई है, फिर उसके कहने के मुताबिक़ यह देखा कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कुर्ता भी पीछे से ही फटा है तो यक़ीन हो गया कि क़सूर ज़ुलैख़ा का है, यूसुफ़ बरी हैं, तो उसने पहले तो ज़ुलैख़ा को ख़िताब करके कहाः

إِنَّهُ مِن كَيْدِكُنَّ

यानी यह तुम्हारा फ़रेब व हीला है कि अपनी ख़ता दूसरे के सर डालना चाहती हो। फिर कहा कि औरतों का फ़रेब व हीला बहुत बड़ा है कि उसको समझना और उससे निकलना आसान नहीं होता। क्योंकि उनका ज़ाहिर नर्म व नाज़ुक और कमज़ोर होता है, देखने वाले को उनकी बात का यक़ीन जल्द आ जाता है, मगर अ़क़्ल व दीनदारी की कमी के सबब कई बार

वह फ़रेब होता है। (तफ़सीरे मज़हरी)

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि औरतों का जाल और मक्र शैतान के जाल व फ़रेब से बढ़ा हुआ है, क्योंकि हक़ तआ़ला ने शैतान के जाल व फ़रेब के मुताल्लिक़ तो यह फ़रमाया है कि वह ज़ईफ़ (कमज़ोर) है:

اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا۝

और औरतों के मक्र व फ़रेब के मुताल्लिक़ यह फ़रमाया है कि:

اِنَّ كَيْدَكُنَّ عَظِيْمٌ۝

यानी तुम्हारा जाल और फ़रेब बहुत बड़ा है। और यह ज़ाहिर है कि इससे मुराद सब औरतें नहीं बल्कि वही हैं जो इस तरह के मक्र व हीले में मुब्तला हों। अ़ज़ीज़े मिस्र ने ज़ुलैख़ा को उसकी ख़ता बतलाने के बाद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से कहा:

يُوْسُفُ اَعْرِضْ عَنْ هٰذَا

यानी ऐ यूसुफ़! तुम इस वाक़िए को नज़र-अन्दाज़ करो और किसी से न कहो ताकि रुस्वाई न हो। फिर ज़ुलैख़ा को ख़िताब करके कहा:

وَاسْتَغْفِرِیْ لِذَنْۢبِكِ اِنَّكِ كُنْتِ مِنَ الْخٰطِئِيْنَ۝

यानी ख़ता सरासर तुम्हारी है, तुम अपनी ग़लती की माफ़ी माँगो। इससे बज़ाहिर यह मुराद है कि वह अपने शौहर से माफ़ी माँगे, और यह मायने भी हो सकते हैं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से माफ़ी माँगे कि ख़ुद ख़ता की और तोहमत उनके सर डाली।

फ़ायदा: यहाँ यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि शौहर के सामने अपनी बीवी की ऐसी ख़ियानत और बेहयाई साबित हो जाने पर उसका उत्तेजित न होना और पूरे सुकून व इत्मीनान से बातें करना इनसानी फ़ितरत से बहुत क़ाबिले ताज्जुब है। इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि यह वजह भी हो सकती है कि अ़ज़ीज़े मिस्र कोई बेग़ैरत आदमी हो, और यह भी मुम्किन है कि हक़ तआ़ला ने जिस तरह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को गुनाह से फिर रुस्वाई से बचाने का एक असाधारण और आ़दत से ऊपर इन्तिज़ाम फ़रमाया उसी इन्तिज़ाम का एक हिस्सा यह भी था कि अ़ज़ीज़े मिस्र को ग़ुस्से से आग बगूला नहीं होने दिया, वरना आ़म आ़दत के मुताबिक़ ऐसे मौक़े पर इनसान तहक़ीक़ व तफ़्तीश के बग़ैर ही हाथ छोड़ बैठता है और ज़बान से गाली-गलौज तो मामूली बात है, अगर आ़म इनसानी आ़दत के मुताबिक़ अ़ज़ीज़े मिस्र को ग़ुस्सा आ जाता तो मुम्किन है कि उसके हाथ से या ज़बान से यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की शान के ख़िलाफ़ कोई बात निकल जाती। यह क़ुदरते हक़ के करिश्मे हैं कि हक़ की इताअ़त पर क़ायम रहने वाले की क़दम क़दम पर किस तरह हिफ़ाज़त की जाती है।

बाद की आयतों में एक और वाक़िआ़ ज़िक्र किया गया है जो पिछले क़िस्से से ही संबन्धित है, वह यह कि यह वाक़िआ़ छुपाने के बावजूद दरबारी लोगों की औरतों में फैल गया, उन

औरतों ने अज़ीज़ की बीवी को लान-तान करना (बुरा-भला कहना) शुरू किया। कुछ मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) ने फ़रमाया कि ये पाँच औरतें अज़ीज़े मिस्र के क़रीबी अफ़सरों की बीवियाँ थीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, मज़हरी)

ये औरतें आपस में कहने लगीं कि देखो कैसी हैरत और अफ़सोस की बात है कि अज़ीज़े मिस्र की बीवी इतने बड़े मर्तबे पर होते हुए अपने नौजवान ग़ुलाम पर फ़िदा होकर उससे अपना मतलब निकालना चाहती है, हम तो उसको बड़ी गुमराही पर समझते हैं। आयत में लफ़्ज़ 'फ़ताहा' फ़रमाया है। फ़ता के मायने नौजवान के हैं, उर्फ़ में मम्लूक ग़ुलाम जब छोटा हो तो उसको ग़ुलाम कहते हैं, जवान हो तो लड़के को फ़ता और लड़की को फ़तात कहा जाता है। इसमें यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ज़ुलैख़ा का ग़ुलाम या तो इस वजह से कहा गया कि शौहर की चीज़ को भी आ़दतन बीवी की चीज़ कहा जाता है, और या इसलिये कि ज़ुलैख़ा ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपने शौहर से हिबा और तोहफ़े के तौर पर ले लिया था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَ قَالَ نِسْوَةٌ فِي الْمَدِيْنَةِ امْرَاَتُ الْعَزِيْزِ تُرَاوِدُ فَتٰىهَا عَنْ نَّفْسِهٖ ۚ قَدْ شَغَفَهَا حُبًّا ۭ اِنَّا لَنَرٰىهَا فِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ۝ فَلَمَّا سَمِعَتْ بِمَكْرِهِنَّ اَرْسَلَتْ اِلَيْهِنَّ وَ اَعْتَدَتْ لَهُنَّ مُتَّكَاً وَّ اٰتَتْ كُلَّ وَاحِدَةٍ مِّنْهُنَّ سِكِّيْنًا وَّ قَالَتِ اخْرُجْ عَلَيْهِنَّ ۚ فَلَمَّا رَاَيْنَهٗ اَكْبَرْنَهٗ وَ قَطَّعْنَ اَيْدِيَهُنَّ وَقُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا هٰذَا بَشَرًا ۭ اِنْ هٰذَآ اِلَّا مَلَكٌ كَرِيْمٌ ۝ قَالَتْ فَذٰلِكُنَّ الَّذِيْ لُمْتُنَّنِيْ فِيْهِ ۭ وَلَقَدْ رَاوَدْتُّهٗ عَنْ نَّفْسِهٖ فَاسْتَعْصَمَ ۭ وَلَئِنْ لَّمْ يَفْعَلْ مَآ اٰمُرُهٗ لَيُسْجَنَنَّ وَلَيَكُوْنًا مِّنَ الصّٰغِرِيْنَ ۝ قَالَ رَبِّ السِّجْنُ اَحَبُّ اِلَيَّ مِمَّا يَدْعُوْنَنِيْٓ اِلَيْهِ ۚ وَاِلَّا تَصْرِفْ عَنِّيْ كَيْدَهُنَّ اَصْبُ اِلَيْهِنَّ وَاَكُنْ مِّنَ الْجٰهِلِيْنَ ۝ فَاسْتَجَابَ لَهٗ رَبُّهٗ فَصَرَفَ عَنْهُ كَيْدَهُنَّ ۭ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ ثُمَّ بَدَا لَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَا رَاَوُا الْاٰيٰتِ لَيَسْجُنُنَّهٗ حَتّٰى حِيْنٍ ۝

व क़ा-ल निस्वतुन् फ़िल्-मदीनति-म्र-अतुल्-अ़ज़ीज़ि तुराविदु फ़ताहा अ़न्-नफ़्सिही क़द् श-ग़-फ़हा हुब्बन्, इन्ना ल-नराहा फ़ी ज़लालिम्-मुबीन (30) फ़-लम्मा समिअ़त् बिमक्रिहिन्-न अर्-सलत् इलैहिन्-न व अअ़्-तदत् लहुन्-न मुत्त-कअंव्-व आतत् कुल्-ल	और कहने लगीं औरतें उस शहर में- अ़ज़ीज़ की औरत इच्छा करती है अपने ग़ुलाम से उसके जी की, आशिक़ हो गया उसका दिल उसकी मुहब्बत में, हम तो देखते हैं उसको खुली ख़ता पर। (30) फिर जब सुना उसने उनका फ़रेब बुलवा भेजा उनको और तैयार की उनके वास्ते एक मजलिस और दी उनको हर एक के

वाहि-दतिम् मिन्हुन्-न सिक्कीनंव्-व क़ालतिख़रुज् अलैहिन्-न फ़-लम्मा रऐ-नहू अक्बर्-नहू व क़त्तअ्-न ऐदियहुन्-न व क़ुल्-न हा-श लिल्लाहि मा हाज़ा ब-शरन्, इन् हाज़ा इल्ला म-लकुन् करीम (31) क़ालत् फ़ज़ालिकुन्नल्लज़ी लुम्तुन्ननी फ़ीहि, व ल-क़द् रावत्तुहू अ़न् नफ़्सिही फ़स्तअ्-स-म, व ल-इल्लम् यफ़्अ़ल् मा आमुरुहू लयुस्ज-नन्-न व ल-यकूनम् मिनस्साग़िरीन (32) क़ा-ल रब्बिस्सिज्नु अहब्बु इलय्-य मिम्मा यद्ऊ-ननी इलैहि व इल्ला तस्रिफ़् अ़न्नी कैदहुन्-न अस्बु इलैहिन्-न व अकुम् मिनल्-जाहिलीन (33) फ़स्तजा-ब लहू रब्बुहू फ़-स-र-फ़ अ़न्हु कैदहुन्-न, इन्नहू हुवस्समीअुल्-अ़लीम (34) सुम्-म बदा लहुम् मिम्-बअ्दि मा र-अवुल्-आयाति ल-यस्जुनुन्नहू हत्ता हीन (35) ❁

हाथ में एक छुरी और बोली- यूसुफ़ निकल इनके सामने, पस जब देखा उनको अचंभित रह गईं और काट डाले अपने हाथ और कहने लगीं हाशा! नहीं यह शख़्स आदमी यह तो कोई बुज़ुर्ग फ़रिश्ता है। (31) बोली यह वही है कि ताना दिया था तुमने मुझको इसके वास्ते, और मैंने लेना चाहा था इससे इसका जी, फिर इसने थाम रखा, और बेशक अगर न करेगा जो मैं इसको कहती हूँ तो क़ैद में पड़ेगा और होगा बेइज़्ज़त। (32) यूसुफ़ बोला ऐ रब! मुझको क़ैद पसन्द है उस बात से जिसकी तरफ़ मुझको बुलाती हैं, और अगर तू दूर न करेगा मुझसे इनका फ़रेब तो माईल हो जाऊँगा मैं उनकी तरफ़ और हो जाऊँगा बेअ़क्ल। (33) सो क़ुबूल कर ली उसकी दुआ़ उसके रब ने फिर दफ़ा किया उससे उनका फ़रेब, अलबत्ता वही है सुनने वाला ख़बरदार। (34) फिर यूँ समझ में आया लोगों को इन निशानियों के देखने पर कि क़ैद रखें उसको एक मुद्दत तक। (35) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ औ़रतों ने जो कि शहर में रहती थीं यह बात कही कि अ़ज़ीज़ की बीवी अपने ग़ुलाम को उससे अपना (नाजायज़) मतलब हासिल करने के वास्ते फुसलाती है (कैसी कमीनी हरकत है कि ग़ुलाम पर गिरती है)। उस ग़ुलाम का इश्क़ उसके दिल में जगह पकड़ गया है, हम तो उसको खुली ग़लती में देखते हैं। सो जब उस औ़रत ने उन औ़रतों की यह बदगोई (की ख़बर) सुनी तो किसी के हाथ उनको बुला भेजा (कि तुम्हारी दावत है) और उनके वास्ते मस्नद

तकिया लगाया, और (जब वे आईं और उनके सामने विभिन्न प्रकार के खाने और फल हाज़िर किये जिनमें कुछ चीज़ें चाक़ू से तराशकर खाने की थीं इसलिये) हर एक को उनमें से एक-एक चाक़ू (भी) दे दिया (जो ज़ाहिर में तो फल तराशने का बहाना था और असल मक़सद वह था जो आगे आता है कि ये अपने होश खोकर अपने हाथों को ज़ख़्मी कर लेंगी) और (यह सब सामान दुरुस्त करके यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को जो किसी दूसरे मकान में थे) कहा कि ज़रा इनके सामने तो आ जाओ। (यूसुफ़ अलैहिस्सलाम यह समझकर कि कोई जायज़ और सही ज़रूरत होगी बाहर आ गये) सो औरतों ने जो उनको देखा तो (उनके हुस्न व ख़ूबसूरती से) हैरान रह गईं और (इस हैरत में) अपने हाथ काट लिये (चाक़ू से फल तराश रही थीं यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को देखकर ऐसी बदहवासी छाई कि चाक़ू हाथ पर चल गया) और कहने लगीं- ख़ुदा की पनाह! यह शख़्स आदमी हरगिज़ नहीं, यह तो कोई बुज़ुर्ग फ़रिश्ता है। वह औरत बोली तो (देख लो) वह शख़्स यही है जिसके बारे में तुम मुझको बुरा-भला कहती थीं (कि अपने ग़ुलाम को चाहती है) और वाक़ई मैंने इससे अपना मतलब हासिल करने की इच्छा की थी मगर यह पाक-साफ़ रहा, और (फिर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के धमकाने और सुनाने को कहा कि) अगर आईन्दा (भी) मेरा कहना नहीं करेगा (जैसा कि अब तक न माना) तो बेशक जेलख़ाने भेज दिया जायेगा और बेइज़्ज़त भी होगा। (वे औरतें भी यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से कहने लगीं कि तुमको अपनी मोहसिन औरत से ऐसी बेतवज्जोही मुनासिब नहीं, जो यह कहे उसको मानना चाहिये)। यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने (ये बातें सुनीं कि ये तो सब की सब उसी की मुवाफ़क़त करने लगीं तो हक़ तआ़ला से) दुआ़ की कि ऐ मेरे रब! जिस (नाजायज़) काम की तरफ़ ये औरतें मुझको बुला रही हैं उससे तो जेल में जाना ही मुझको ज़्यादा पसन्द है। और अगर आप इनके दाव-पेच को मुझसे दूर न करेंगे तो मैं इनकी तरफ़ माईल हो जाऊँगा और नादानी का काम कर बैठूँगा। सो उनके रब ने उनकी दुआ़ क़ुबूल की और उन औरतों के दाव-पेच को उनसे दूर रखा, बेशक वह (दुआ़ओं का) बड़ा सुनने वाला (और उनके अहवाल का) बड़ा जानने वाला है। (फिर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की पाकदामनी की) बहुत-सी निशानियाँ देखने के बाद (जिनसे ख़ुद तो इसका पूरा यक़ीन हो गया मगर अ़वाम में चर्चा हो गया था उसको ख़त्म करने की ग़र्ज़ से) उन लोगों को (यानी अ़ज़ीज़ और उसके मिलने-जुलने वालों को) यही बेहतर मालूम हुआ कि उनको एक वक़्त तक क़ैद में रखें।

मआ़रिफ़ व मसाईल

فَلَمَّا سَمِعَتْ بِمَكْرِهِنَّ اَرْسَلَتْ اِلَيْهِنَّ

"यानी जब ज़ुलैख़ा ने उन औरतों के मक्र (फ़रेब) का हाल सुना तो उनको एक खाने की दावत पर बुला भेजा।"

यहाँ उन औरतों के तज़किरा करने को ज़ुलैख़ा ने मक्र कहा है, हालाँकि बज़ाहिर उन्होंने कोई मक्र नहीं किया था, मगर चूँकि छुपे तौर पर उसकी बुराई करती थीं इसलिये इसको मक्र से

ताबीर किया।

وَاَعْتَدَتْ لَهُنَّ مُتَّكَاً

यानी उनके लिये मस्नद तकियों से मज्लिस सजाई।

وَاٰتَتْ كُلَّ وَاحِدَةٍ مِّنْهُنَّ سِكِّيْنًا

यानी जब ये औरतें आ गईं और इनके सामने विभिन्न और अनेक क़िस्म के खाने और फल हाज़िर किये, जिनमें कुछ चीज़ें चाक़ू से तराश (छील) कर खाने की थीं इसलिये हर एक को एक एक तेज़ चाक़ू भी दे दिया, जिसका ज़ाहिरी मक़सद तो फल तराशना था मगर दिल में वह बात छुपी थी जो आगे आती है कि ये औरतें यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को देखकर अपने होश खो बैठेंगी और चाक़ू से अपने हाथ ज़ख़्मी कर लेंगी।

وَقَالَتِ اخْرُجْ عَلَيْهِنَّ

यानी यह सब सामान दुरुस्त करने के बाद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से जो किसी दूसरे मकान में थे ज़ुलैख़ा ने कहा कि ज़रा बाहर आ जाओ। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को चूँकि उसकी बुरी ग़र्ज़ मालूम न थी इसलिये बाहर उस मज्लिस में तशरीफ़ ले आये।

فَلَمَّا رَاَيْنَهٗۤ اَكْبَرْنَهٗ وَقَطَّعْنَ اَيْدِيَهُنَّ وَقُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا هٰذَا بَشَرًا ، اِنْ هٰذَاۤ اِلَّا مَلَكٌ كَرِيْمٌ○

यानी उन औरतों ने जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को देखा तो उनके हुस्न व सुन्दरता से हैरान रह गईं और अपने हाथ काट लिये, यानी फल तराशते वक़्त जब यह हैरत-अंगेज़ वाक़िआ़ सामने आया तो चाक़ू हाथ पर चल गया जैसा कि दूसरी तरफ़ ख़्याल बट जाने से अक्सर ऐसा इत्तिफ़ाक़ हो जाता है, और कहने लगीं कि ख़ुदा की पनाह यह शख़्स आदमी हरगिज़ नहीं, यह तो कोई बुज़ुर्ग फ़रिश्ता है। मतलब यह था कि ऐसा नूरानी तो फ़रिश्ता ही हो सकता है।

قَالَتْ فَذٰلِكُنَّ الَّذِيْ لُمْتُنَّنِيْ فِيْهِ وَلَقَدْ رَاوَدْتُّهٗ عَنْ نَّفْسِهٖ فَاسْتَعْصَمَ ، وَلَئِنْ لَّمْ يَفْعَلْ مَاۤ اٰمُرُهٗ لَيُسْجَنَنَّ وَلَيَكُوْنًا مِّنَ الصّٰغِرِيْنَ○

वह औरत बोली कि देख लो वह शख़्स यही है जिसके बारे में तुम मुझे बुरा-भला कहती थीं और वाक़ई मैंने इससे अपना मतलब हासिल करने की इच्छा और तलब की थी मगर यह पाक साफ़ रहा और आईन्दा यह मेरा कहना न मानेगा तो बेशक जेलख़ाने भेजा जायेगा और बेइज़्ज़त भी होगा।

उस औरत ने जब यह देखा कि मेरा राज़ इन औरतों पर खुल तो चुका ही है इसलिये उनके सामने ही यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को डराने धमकाने लगी। बाज़ मुफ़स्सिरीन ने बयान किया है कि उस वक़्त ये सब औरतें भी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को कहने लगीं कि यह औरत तुम्हारी मोहसिन है, इसकी मुख़ालफ़त नहीं करनी चाहिये।

और क़ुरआने करीम के कुछ अलफ़ाज़ जो आगे आते हैं उनसे भी इसकी ताईद होती है जैसे 'यद्क़ु-ननी' और 'कैदहुन्-न' जिनमें चन्द औरतों का क़ौल जमा (बहुवचन) के कलिमे के साथ ज़िक्र किया गया है।

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने जब यह देखा कि ये औरतें भी इसकी मुवाफ़क़त और ताईद कर रही हैं और इनके फ़रेब व जाल से बचने की ज़ाहिरी कोई तदबीर नहीं रही तो अल्लाह तआला की तरफ़ ही रुजू फ़रमाया और अल्लाह की बारगाह में अर्ज़ किया:

رَبِّ السِّجْنُ اَحَبُّ اِلَیَّ مِمَّا یَدْعُوْنَنِیْٓ اِلَیْهِ ۚ وَاِلَّا تَصْرِفْ عَنِّیْ كَیْدَهُنَّ اَصْبُ اِلَیْهِنَّ وَاَكُنْ مِّنَ الْجٰهِلِیْنَ۝

"यानी ऐ मेरे पालने वाले! ये औरतें मुझे जिस काम की तरफ़ दावत देती हैं उससे तो मुझे जेलख़ाना ज़्यादा पसन्द है, और अगर आप ही उनके दाव-पेच को मुझसे दूर न करें तो मुम्किन है कि मैं उनकी तरफ़ माईल हो जाऊँ और नादानी का काम कर बैठूँ।"

यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का यह फ़रमाना कि जेलख़ाना मुझे पसन्द है, क़ैद व बन्द की कोई तलब या इच्छा नहीं बल्कि गुनाह के मुक़ाबले में इस दुनियावी मुसीबत को आसान समझने का इज़हार है। और कुछ रिवायतों में है कि जब यूसुफ़ अलैहिस्सलाम क़ैद में डाले गये तो अल्लाह तआला की तरफ़ से वही आई कि आपने क़ैद में अपने आपको ख़ुद डाला है क्योंकि आपने कहा था:

اَلسِّجْنُ اَحَبُّ اِلَیَّ

यानी इसके मुक़ाबले में मुझको जेलख़ाना ज़्यादा पसन्द है। और अगर आप आफ़ियत माँगते तो आपको मुकम्मल आफ़ियत (सुकून व हिफ़ाज़त) मिल जाती। इससे मालूम हुआ कि किसी बड़ी मुसीबत से बचने के लिये दुआ में यह कहना कि इससे तो यह बेहतर है कि फ़ुलाँ छोटी मुसीबत में मुझे मुब्तला कर दे, मुनासिब नहीं, बल्कि अल्लाह तआला से हर मुसीबत और बला के वक़्त आफ़ियत (सुकून व बेहतरी) ही माँगनी चाहिये। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब्र की दुआ माँगने से एक शख़्स को मना फ़रमाया कि सब्र तो बला और मुसीबत पर होता है, इसलिये अल्लाह से सब्र की दुआ माँगने के बजाय आफ़ियत (चैन व सुकून) की दुआ माँगों। (तिर्मिज़ी)

और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि मुझे कोई दुआ तालीम फ़रमा दीजिये तो आपने फ़रमाया कि अपने रब से आफ़ियत (चैन व सुकून) की दुआ माँगा करो। हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि कुछ अरसे के बाद फिर मैंने आपसे दुआ की तालीम का सवाल किया तो फ़रमाया कि अल्लाह तआला से दुनिया व आख़िरत की आफ़ियत माँगा करें। (मज़हरी, तबरानी के हवाले से)

और यह फ़रमाना कि अगर आप उनके फ़रेब व जाल को दूर न करेंगे तो मुम्किन है कि मैं उनकी तरफ़ माईल हो जाऊँ, यह नुबुव्वत की हिफ़ाज़त व सुरक्षा के ख़िलाफ़ नहीं, क्योंकि हिफ़ाज़त व बचाव का तो हासिल ही यह है कि अल्लाह तआला किसी शख़्स को गुनाह से बचाने का ग़ैबी तौर पर बिना असबाब के इन्तिज़ाम फ़रमाकर उसको गुनाह से बचा लें। और अगरचे नुबुव्वत के तक़ाज़े के तहत यह मक़सद पहले ही से हासिल था मगर फिर भी ख़ौफ़ की ज़्यादती के सबब अदब से इसकी दुआ करने पर मजबूर हो गये। इससे यह भी मालूम हुआ कि हर गुनाह का काम जहालत से होता है, इल्म का तक़ाज़ा गुनाहों से परहेज़ करना है। (क़ुर्तुबी)

فَاسْتَجَابَ لَهُ رَبُّهُ فَصَرَفَ عَنْهُ كَيْدَهُنَّ ۚ إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ○

"यानी उनकी दुआ उनके रब ने क़ुबूल फ़रमा ली, और उन औरतों के मक्र व हीले को उनसे दूर रखा, बेशक वह बड़ा सुनने वाला और बड़ा जानने वाला है।"

अल्लाह तआला ने उन औरतों के जाल से बचाने के लिये यह सामान फ़रमा दिया कि अज़ीज़े मिस्र और उसके दोस्तों को अगरचे यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की बुज़ुर्गी और पवित्रता व परहेज़गारी की खुली निशानियाँ देखकर उनकी पाकी का यक़ीन हो चुका था मगर शहर में इस वाक़िए का चर्चा होने लगा उसको ख़त्म करने के लिये उनको बेहतरी इसमें नज़र आई कि कुछ अरसे के लिये यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को जेल में बन्द कर दिया जाये, ताकि अपने घर में इन शुब्हात का कोई मौक़ा भी बाक़ी न रहे, और लोगों की ज़बानों से इसका चर्चा भी ख़त्म हो जाये।

ثُمَّ بَدَا لَهُمْ مِّنْ بَعْدِ مَا رَأَوُا الْآيٰتِ لَيَسْجُنُنَّهُ حَتّٰى حِيْنٍ ○

यानी फिर अज़ीज़ और उसके सलाहकारों ने बेहतरी और भलाई इसमें समझी कि कुछ अरसे के लिये यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को क़ैद में रखा जाये, चुनाँचे आप जेलख़ाने में भेज दिये गये।

وَدَخَلَ مَعَهُ السِّجْنَ

فَتَيٰنِ ۭ قَالَ اَحَدُهُمَآ اِنِّيْٓ اَرٰىنِيْٓ اَعْصِرُ خَمْرًا ۚ وَقَالَ الْاٰخَرُ اِنِّيْٓ اَرٰىنِيْٓ اَحْمِلُ فَوْقَ رَاْسِيْ خُبْزًا تَاْكُلُ الطَّيْرُ مِنْهُ ۭ نَبِّئْنَا بِتَاْوِيْلِهٖ ۚ اِنَّا نَرٰىكَ مِنَ الْمُحْسِنِيْنَ ۞ قَالَ لَا يَاْتِيْكُمَا طَعَامٌ تُرْزَقٰنِهٖٓ اِلَّا نَبَّاْتُكُمَا بِتَاْوِيْلِهٖ قَبْلَ اَنْ يَّاْتِيَكُمَا ۭ ذٰلِكُمَا مِمَّا عَلَّمَنِيْ رَبِّيْ ۭ اِنِّيْ تَرَكْتُ مِلَّةَ قَوْمٍ لَّا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ كٰفِرُوْنَ ۞ وَاتَّبَعْتُ مِلَّةَ اٰبَاۗءِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ ۭ مَا كَانَ لَنَآ اَنْ نُّشْرِكَ بِاللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ ۭ ذٰلِكَ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ عَلَيْنَا وَعَلَي النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُوْنَ ۞ يٰصَاحِبَيِ السِّجْنِ ءَاَرْبَابٌ مُّتَفَرِّقُوْنَ خَيْرٌ اَمِ اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ۞ مَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اَسْمَاۗءً سَمَّيْتُمُوْهَآ اَنْتُمْ وَاٰبَاۗؤُكُمْ مَّآ اَنْزَلَ اللّٰهُ بِهَا مِنْ سُلْطٰنٍ ۭ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ ۭ اَمَرَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ ۭ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ ۞ يٰصَاحِبَيِ السِّجْنِ اَمَّآ اَحَدُكُمَا فَيَسْقِيْ رَبَّهٗ خَمْرًا ۚ وَاَمَّا الْاٰخَرُ فَيُصْلَبُ فَتَاْكُلُ الطَّيْرُ مِنْ رَّاْسِهٖ ۭ قُضِيَ الْاَمْرُ الَّذِيْ فِيْهِ تَسْتَفْتِيٰنِ ۞ وَقَالَ لِلَّذِيْ ظَنَّ اَنَّهٗ نَاجٍ مِّنْهُمَا اذْكُرْنِيْ عِنْدَ رَبِّكَ ۡ فَاَنْسٰىهُ الشَّيْطٰنُ ذِكْرَ رَبِّهٖ فَلَبِثَ فِي السِّجْنِ بِضْعَ سِنِيْنَ ۞

ع 5 / 15

व द-ख़-ल म-अहुस्सिज्-न फ़-तयानि, का-ल अ-हदुहुमा इन्नी अरानी	और दाख़िल हुए क़ैदख़ाने में उसके साथ दो जवान, कहने लगा उनमें में एक मैं

अअ्सिरु ख़म्रन् व कालल्-आख़रु इन्नी अरानी अह्मिलु फ़ौ-क़ रअ्सी ख़ुब्ज़न् तअ्कुलुत्तैरु मिन्हु, नब्बिअ्ना बितअ्वीलिही इन्ना नरा-क मिनल्मुह्सिनीन (36) का-ल ला यअ्तीकुमा तआ़मुन् तुर्ज़क़ानिही इल्ला नब्बअ्तुकुमा बितअ्वीलिही कब्-ल अंय्यअ्ति-यकुमा, ज़ालिकुमा मिम्मा अ़ल्ल-मनी रब्बी, इन्नी तरक्तु मिल्ल-त क़ौमिल् ला युअ्मिनू-न बिल्लाहि व हुम् बिल्आख़िरति हुम् काफ़िरून (37) वत्तबअ्तु मिल्ल-त आबाई इब्राही-म व इस्हा-क़ व यअ़्कू-ब, मा का-न लना अन् नुश्रि-क बिल्लाहि मिन् शैइन्, ज़ालि-क मिन् फ़ज़्लिल्लाहि अ़लैना व अ़लन्नासि व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यश्कुरून (38) या साहि-बयिस्सिज्नि अ-अर्बाबुम् मु-तफ़र्रिक़ू-न ख़ैरुन् अमिल्लाहुल्-वाहिदुल्-क़स्हार (39) मा तअ़्बुदू-न मिन् दूनिही इल्ला अस्माअन् सम्मैतुमूहा अन्तुम् व आबाउकुम् मा अन्ज़लल्लाहु बिहा मिन् सुल्तानिन्, इनिल्हुक्मु इल्ला लिल्लाहि, अ-म-र

देखता हूँ कि मैं निचोड़ता हूँ शराब और दूसरे ने कहा कि मैं देखता हूँ कि उठा रहा हूँ अपने सर पर रोटी कि जानवर खाते हैं उसमें से, बतला हमको इसकी ताबीर, हम देखते हैं तुझको नेकी वाला। (36) बोला न आने पायेगा तुमको खाना जो हर दिन तुमको मिलता है मगर बता चुकूँगा तुमको इसकी ताबीर उसके आने से पहले, यह इल्म है जो कि मुझको सिखाया मेरे रब ने, मैंने छोड़ा दीन उस कौम का कि ईमान नहीं लाते अल्लाह पर और आख़िरत से वे लोग इनकारी हैं। (37) और पकड़ा मैंने दीन अपने बाप और दादाओं का इब्राहीम और इस्हाक़ और याक़ूब का, हमारा काम नहीं कि शरीक करें अल्लाह का किसी चीज़ को, यह फ़ज़्ल है अल्लाह का हम पर और सब लोगों पर लेकिन बहुत लोग एहसान नहीं मानते। (38) ऐ कैदख़ाने के साथियो! भला कई माबूद जुदा-जुदा बेहतर या अल्लाह अकेला ज़बरदस्त? (39) कुछ नहीं पूजते हो तुम सिवाय इसके मगर नाम हैं जो रख लिये हैं तुमने और तुम्हारे बाप दादाओं ने, नहीं उतारी अल्लाह ने उनकी कोई सनद, हुकूमत नहीं है किसी की सिवाय अल्लाह के, उसने फ़रमा दिया

अल्ला तअ्बुदू इल्ला इय्याहु, ज़ालिकद्-दीनुल्-क़य्यिमु व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यअ्लमून (40) या साहि-बयिस्सिज्नि अम्मा अ-हदुकुमा फ़-यस्क़ी रब्बहू ख़म्रन् व अम्मल्-आख़रु फ़युस्-लबु फ़-तअ्कुलुत्-तैरु मिर्रअ्सिही, क़ुज़ियल्-अम्रुल्लज़ी फ़ीहि तस्तफ़्तियान (41) व क़ा-ल लिल्लज़ी ज़न्-न अन्नहू नाजिम्-मिन्हुमज़्कुर्नी अिन्-द रब्बि-क, फ़अन्साहुश्शैतानु ज़िक्-र रब्बिही फ़-लबि-स फ़िस्सिज्नि बिज़्-अ सिनीन (42) ❁

कि न पूजो मगर उसी को, यही है रास्ता सीधा, पर बहुत लोग नहीं जानते। (40) ऐ क़ैदख़ाने के साथियो! एक जो है तुम दोनों में सो पिलायेगा अपने मालिक को शराब और दूसरा जो है सो सूली दिया जायेगा, फिर खायेंगे जानवर उसके सर में से, फ़ैसल (तय) हुआ वह काम जिसकी तहक़ीक़ तुम चाहते थे। (41) और कह दिया यूसुफ़ ने उसको जिसको गुमान किया था कि बचेगा उन दोनों में से कि मेरा ज़िक्र करना अपने मालिक के पास, सो भुला दिया उसको शैतान ने ज़िक्र करना अपने मालिक से, फिर रहा क़ैद में कई साल। (42) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) के साथ (यानी उसी ज़माने में) और भी दो गुलाम (बादशाह के) क़ैदख़ाने में दाख़िल हुए (जिनमें एक साक़ी यानी शराब पिलाने वाला था, दूसरा रोटी पकाने वाला बावर्ची, और उनकी क़ैद का सबब यह शुब्हा था कि उन्होंने खाने में और शराब में ज़हर मिलाकर बादशाह को दिया है। उनके मुक़द्दिमे की तफ़तीश चल रही थी, इसलिये क़ैद कर दिये गये। उन्होंने जो हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम में बुज़ुर्गी के आसार पाये तो) उनमें से एक ने (हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से) कहा कि मैं अपने आपको सपने में देखता हूँ कि (जैसे) शराब (बनाने के लिये अंगूर का शीरा) निचोड़ रहा हूँ (और बादशाह को वह शराब पिला रहा हूँ), और दूसरे ने कहा कि मैं अपने आप को इस तरह देखता हूँ कि (जैसे) मैं अपने सर पर रोटियाँ लिये जाता हूँ (और) उनमें से परिन्दे (नोच-नोचकर) खाते हैं। हमको इस ख़्वाब की (जो हम दोनों ने देखा है) ताबीर बतलाईये, आप हमको नेक आदमी मालूम होते हैं।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने (जब यह देखा कि ये लोग यक़ीन व एतिक़ाद के साथ मेरी तरफ़ माईल हुए हैं तो चाहा कि उनको सबसे पहले ईमान की दावत दी जाये इसलिये पहले अपना नबी होना एक मोजिज़े से साबित करने के लिये) फ़रमाया कि (देखो) जो खाना तुम्हारे पास आता है जो कि तुमको खाने के लिये (जेलख़ाने में) मिलता है, मैं उसके आने से पहले उसकी

हक़ीक़त तुमको बतला दिया करता हूँ (कि फ़ुलाँ चीज़ आयेगी और ऐसी-ऐसी होगी और) यह बतला देना उस इल्म की बदौलत है जो मुझको मेरे रब ने तालीम फ़रमाया है (यानी मुझको वही से मालूम हो जाता है, तो यह एक मोजिज़ा है जो नुबुव्वत की दलील है, और इस वक़्त यह मोजिज़ा ख़ास तौर पर इसलिये मुनासिब था कि जिस वाक़िए में क़ैदियों ने ताबीर के लिये उनकी तरफ़ रुजू किया वह वाक़िआ भी खाने ही से मुताल्लिक़ था, नुबुव्वत के साबित करने के बाद आगे तौहीद को साबित करने का मज़मून बयान फ़रमाया कि) मैंने तो उन लोगों का मज़हब (पहले ही से) छोड़ रखा है जो अल्लाह पर ईमान नहीं लाते, और वे लोग आख़िरत के भी इनकारी हैं। और मैंने अपने इन (बुज़ुर्गवार) बाप-दादों का मज़हब इख़्तियार कर रखा है- इब्राहीम का और इस्हाक़ का और याक़ूब का (और इस मज़हब का मुख्य अंग यह है कि) हमको किसी तरह मुनासिब नहीं कि अल्लाह के साथ किसी चीज़ को (इबादत में) शरीक क़रार दें। यह (तौहीद का अक़ीदा) हम पर और (दूसरे) लोगों पर (भी) ख़ुदा तआ़ला का एक फ़ज़्ल है (कि इसकी बदौलत दुनिया व आख़िरत की कामयाबी है) लेकिन अक्सर लोग (इस नेमत का) शुक्र (अदा) नहीं करते (यानी तौहीद को इख़्तियार नहीं करते)।

ऐ क़ैदख़ाने के साथियो! (ज़रा सोचकर बतलाओ कि इबादत के वास्ते) मुतफ़र्रिक़ "यानी अलग-अलग" माबूद अच्छे या एक माबूदे बरहक़, जो सबसे ज़बरदस्त है वह अच्छा। तुम लोग तो ख़ुदा को छोड़कर सिर्फ़ चन्द बेहक़ीक़त नामों की इबादत करते हो, जिनको तुमने और तुम्हारे बाप-दादाओं ने (ख़ुद ही) मुक़र्रर कर लिया है। ख़ुदा तआ़ला ने तो उन (के माबूद होने) की कोई दलील (अक़्ली या किताबी व रिवायती) भेजी नहीं (और) हुक्म ख़ुदा ही का है, उसने यह हुक्म दिया है कि सिवाय उसके और किसी की इबादत मत करो, यही (तौहीद और इबादत सिर्फ़ हक़ तआ़ला के लिये मख़्सूस करना) सीधा तरीक़ा है, लेकिन अक्सर लोग नहीं जानते। (ईमान की दावत व तब्लीग़ के बाद अब उनके ख़्वाब की ताबीर बताते हैं कि) ऐ क़ैदख़ाने के दोनों साथियो! तुममें एक तो (जुर्म से बरी होकर) अपने आक़ा को (बदस्तूर) शराब पिलाया करेगा और दूसरा (मुजरिम क़रार पाकर) सूली दिया जायेगा, और उसके सर को परिन्दे (नोच-नोचकर) खाएँगे, और जिस बारे में तुम पूछते थे वह इसी तरह मुक़द्दर हो चुका (चुनाँचे मुक़द्दिमे की छानबीन और हक़ीक़त खुल जाने के बाद इसी तरह हुआ कि एक बरी साबित हुआ और दूसरा मुजरिम, दोनों जेलख़ाने से बुलाये गये, एक रिहाई के लिये दूसरा सज़ा के लिये)। और (जब वे लोग जेलख़ाने से जाने लगे तो) जिस शख़्स की रिहाई का गुमान था उससे यूसुफ़ ने फ़रमाया कि अपने आक़ा के सामने मेरा भी ज़िक्र करना (कि एक शख़्स बेक़सूर क़ैद में है। उसने वायदा कर लिया) फिर उसको अपने आक़ा से (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का) ज़िक्र करना शैतान ने भुला दिया तो (इस वजह से) क़ैदख़ाने में और भी चन्द साल उनका रहना हुआ।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से में पेश आने वाले दूसरे वाक़िए

का बयान है। यह बात आप बार-बार मालूम कर चुके हैं कि क़ुरआने करीम न कोई तारीख़ी किताब है न क़िस्से कहानी की, इसमें जो तारीख़ी वाक़िआ या क़िस्सा ज़िक्र किया जाता है उससे मक़सूद सिर्फ़ इनसान को इब्रत व नसीहत और ज़िन्दगी के विभिन्न पहलुओं के मुताल्लिक़ अहम हिदायतें होती हैं। पूरे क़ुरआन और बेशुमार अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के वाक़िआत में सिर्फ़ एक ही क़िस्सा हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का ऐसा है जिसको क़ुरआने करीम ने लागातार बयान किया है वरना हर स्थान के मुनासिब तारीख़ी वाक़िए का कोई ज़रूरी हिस्सा ज़िक्र करने पर इक्तिफ़ा किया गया है।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से को अव्वल से आख़िर तक देखिये तो इसमें सैंकड़ों इब्रत व नसीहत के मौक़े और इनसानी ज़िन्दगी के विभिन्न चरणों के लिये अहम हिदायतें हैं। आगे आ रहा यह क़िस्सा भी बहुत सी हिदायतें अपने दामन में लिये हुए है।

वाक़िआ यह हुआ कि जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बराअत और पाकी बिल्कुल वाज़ेह हो जाने के बावजूद अ़ज़ीज़े मिस्र और उसकी बीवी ने बदनामी का चर्चा ख़त्म करने के लिये कुछ अ़रसे के लिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को जेल में भेज देने का फ़ैसला कर लिया, जो दर हक़ीक़त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की दुआ और इच्छा की पूर्ति थी क्योंकि अ़ज़ीज़े मिस्र के घर में रहकर आबरू बचाना एक सख़्त मुश्किल मामला हो गया था।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जेल में पहुँचे तो साथ में दो मुजरिम क़ैदी और भी दाख़िल हुए उनमें से एक बादशाह का साक़ी (शराब पिलाने वाला) और दूसरा बावर्ची था। इमाम इब्ने कसीर ने तफ़सीर के उलेमा के हवालों से लिखा है कि ये दोनों इस इल्ज़ाम में गिरफ़्तार हुए थे कि इन्होंने बादशाह को खाने वग़ैरह में ज़हर देने की कोशिश की थी, मुक़द्दिमे की छानबीन चल रही थी इसलिये इन दोनों को जेल में रखा गया।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जेल में दाख़िल हुए तो अपने पैग़म्बराना अख़्लाक़ और रहमत व शफ़क़त के सबब सब क़ैदियों की दिलदारी और ख़बरगीरी करते थे, जो बीमार हो गया उसकी बीमार पुर्सी और ख़िदमत करते, जिसको ग़मगीन व परेशान पाते उसको तसल्ली देते, सब्र की तल्क़ीन और रिहाई की उम्मीद से उसका दिल बढ़ाते थे, ख़ुद तकलीफ़ उठाकर दूसरों को आराम देने की फ़िक्र करते, और रात भर अल्लाह तआ़ला की इबादत में मशग़ूल रहते थे। आपके ये हालात देखकर जेल के सब क़ैदी आपकी बुज़ुर्गी के मोतक़िद हो गये, जेल का अफ़सर भी मुतास्सिर हुआ, उसने कहा कि अगर मेरे इख़्तियार में होता तो मैं आपको छोड़ देता, अब इतना ही कर सकता हूँ कि आपको यहाँ कोई तकलीफ़ न पहुँचे।

एक अ़जीब फ़ायदा

जेल के अफ़सर ने या क़ैदियों में से कुछ लोगों ने हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से अपनी अ़क़ीदत व मुहब्बत का इज़हार किया कि हमें आपसे बहुत मुहब्बत है, तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि ख़ुदा के लिये मुझसे मुहब्बत न करो, क्योंकि जब किसी ने मुझसे मुहब्बत की है

तो मुझ पर आफ़त आई है। बचपन में मेरी फूफी को मुझसे मुहब्बत थी उसके नतीजे में मुझ पर चोरी का इल्ज़ाम लगा, फिर मेरे वालिद ने मुझसे मुहब्बत की तो भाईयों के हाथों कुएँ की क़ैद फिर गुलामी और देस निकाले में मुब्तला हुआ, अज़ीज़ की बीवी ने मुझसे मुहब्बत की तो इस जेल में पहुँचा। (तफ़सीर इब्ने कसीर, मज़हरी)

ये दो क़ैदी जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के साथ जेल में गये थे एक दिन इन्होंने कहा कि आप हमें नेक बुज़ुर्ग मालूम होते हैं इसलिये आपसे हम अपने ख़्वाब की ताबीर मालूम करना चाहते हैं। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और तफ़सीर के कुछ दूसरे इमामों ने फ़रमाया कि यह ख़्वाब उन्होंने वास्तव में देखे थे, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ख़्वाब कुछ न था केवल यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बुज़ुर्गी और सच्चाई की आज़माईश के लिये ख़्वाब बनाया था।

बहरहाल! उनमें से एक यानी शाही साक़ी ने तो यह कहा कि मैंने ख़्वाब में देखा कि मैं अंगूर से शराब निकाल रहा हूँ और दूसरे यानी बावर्ची ने कहा कि मैंने देखा कि मेरे सर पर रोटियों का कोई टोकरा है उसमें से जानवर नोच-नोचकर खा रहे हैं, और दरख़्वास्त की कि हमें इन दोनों ख़्वाबों की ताबीरें बतलाईये।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से ख़्वाबों की ताबीर पूछी जाती है, मगर वह पैग़म्बराना अन्दाज़ पर इस सवाल के जवाब से पहले तब्लीग़ और ईमान की दावत का काम शुरू फ़रमाते हैं और दावत के उसूलों के मातहत हिक्मत व समझदारी से काम लेकर सब से पहले उन लोगों के दिलों में अपना एतिमाद पैदा करने के लिये अपने इस मोजिज़े का ज़िक्र किया कि तुम्हारे लिये जो खाना तुम्हारे घरों से या किसी दूसरी जगह से आता है उसके आने से पहले ही मैं तुम्हें बता देता हूँ कि किस क़िस्म का खाना, कैसा, कितना और किस वक़्त आयेगा, और वह ठीक उसी तरह निकलता है।

ذٰلِكُمَا مِمَّا عَلَّمَنِىْ رَبِّىْ

और यह कोई रमल, जफ़र का फ़न या कहानत वग़ैरह का करतब नहीं बल्कि मेरा रब वही (अपनी तरफ़ से भेजे गये पैग़ाम) के ज़रिये मुझे बतला देता है, मैं उसकी इत्तिला दे देता हूँ और यह एक खुला मोजिज़ा था जो नुबुव्वत की दलील और एतिमाद का बहुत बड़ा सबब है। इसके बाद पहले कुफ़्र की बुराई और कुफ़्र की जमाअ़त से अपनी बेज़ारी बयान की और फिर यह भी जतला दिया कि मैं नुबुव्वत के ख़ानदान ही का एक फ़र्द और उन्हीं के हक़ रास्ते का पाबन्द हूँ। मेरे बाप-दादा इब्राहीम, इस्हाक़ और याक़ूब अ़लैहिमुस्सलाम हैं, यह ख़ानदानी शराफ़त भी आदतन इनसान का एतिमाद पैदा करने का सबब होती है। इसके बाद बतलाया कि हमारे लिये किसी तरह जायज़ नहीं कि हम अल्लाह तआ़ला के साथ किसी को उसकी ख़ुदाई सिफ़ात में शरीक समझें। फिर फ़रमाया कि यह दीने हक़ की तौफ़ीक़ हम पर और सब लोगों पर अल्लाह तआ़ला ही का फ़ज़्ल है कि उसने सही समझ अ़ता फ़रमाकर हक़ को क़ुबूल करना हमारे लिये आसान कर दिया, मगर बहुत-से लोग इस नेमत की क़द्र और शुक्र नहीं करते।

फिर उन्हीं कैदियों से सवाल किया— अच्छा तुम ही बतलाओ कि इनसान बहुत-से परवर्दिगारों का परस्तार हो यह बेहतर है या यह कि सिर्फ़ एक अल्लाह का बन्दा बने, जिसका कहर व ताक़त सब पर ग़ालिब है। फिर बुतपरस्ती की बुराई एक दूसरे तरीक़े से यह बतलाई कि तुमने और तुम्हारे बाप-दादों ने कुछ बुतों को अपना परवर्दिगार समझा हुआ है, ये तो सिर्फ़ नाम ही नाम के हैं, जो तुमने गढ़ लिये हैं, न इनमें ज़ाती सिफ़ात इस क़ाबिल हैं कि इनको किसी मामूली-सी भी क़ुव्वत व ताक़त का मालिक समझा जाये, क्योंकि वे सब बेहिस व हरकत हैं। यह बात तो आँखों से दिखाई देती है। दूसरा रास्ता उनके सच्चे माबूद होने का यह हो सकता था कि अल्लाह तआला उनकी पूजा के लिये अहकाम नाज़िल फ़रमाये, तो अगरचे खुले तौर पर देखने और अक़्ल की रहनुमाई से उनकी ख़ुदाई को तस्लीम न करते, मगर हुक्मे ख़ुदावन्दी की वजह से हम अपने देखे और अनुभव को छोड़कर अल्लाह तआला के हुक्म की इताअ़त करते, मगर यहाँ वह भी नहीं, क्योंकि हक़ तआला ने इनकी इबादत के लिये कोई हुज्जत व दलील नाज़िल नहीं फ़रमाई बल्कि उसने यही बतलाया कि हुक्म और हुकूमत सिवाय अल्लाह तआला के किसी का हक़ नहीं, और यह हुक्म दिया कि उसके सिवा किसी की इबादत न करो। यह वह मज़बूत दीन है जो मेरे बाप-दादा को अल्लाह तआला की तरफ़ से अ़ता हुआ, मगर अक्सर लोग इस हक़ीक़त को नहीं समझते।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपनी तब्लीग़ व दावत के बाद उन लोगों के ख़्वाबों की तरफ़ मुतवज्जह हुए और फ़रमाया कि तुम में से एक तो रिहा हो जायेगा और फिर अपनी नौकरी पर भी बरक़रार रहकर बादशाह को शराब पिलायेगा, और दूसरे पर जुर्म साबित होकर उसको सूली दी जायेगी और जानवर उसका गोश्त नोच-नोचकर खायेंगे।

पैग़म्बराना शफ़क़त की अ़जीब मिसाल

इमाम इब्ने कसीर रह. ने फ़रमाया कि अगरचे उन दोनों के ख़्वाब अलग-अलग थे और हर एक की ताबीर मुतैयन थी, और यह भी मुतैयन था कि शाही साक़ी बरी होकर अपनी नौकरी और ड्यूटी पर फिर बहाल होगा और बावर्ची को सूली दी जायेगी, मगर पैग़म्बराना शफ़क़त व मेहरबानी की वजह से मुतैयन करके नहीं बतलाया कि तुम में से फ़ुलाँ को सूली दी जायेगी ताकि वह अभी से ग़म में न घुले, बल्कि संक्षिप्त रूप से यूँ फ़रमाया कि तुम में से एक रिहा हो जायेगा और दूसरे को सूली दी जायेगी।

आख़िर में फ़रमाया कि मैंने तुम्हारे ख़्वाबों की जो ताबीर दी है यह महज़ अटकल और अन्दाज़े से नहीं दी बल्कि यह ख़ुदाई फ़ैसला है जो टल नहीं सकता। जिन मुफ़स्सिरीन हज़रात ने उन लोगों के ख़्वाबों को ग़लत और बनावटी कहा है उन्होंने यह भी फ़रमाया है कि जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ख़्वाबों की ताबीर बतलाई तो ये दोनों बोल उठे कि हमने तो कोई ख़्वाब देखा ही नहीं, महज़ बात बनाई थी। इस पर हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

قُضِيَ الْاَمْرُ الَّذِیْ فِیْهِ تَسْتَفْتِیٰنِ٥

चाहे तुमने यह ख़्वाब देखा या नहीं देखा अब वाक़िआ यूँ ही होगा जो बयान किया गया है। मक़सद यह है कि झूठा ख़्वाब बनाने के गुनाह का जो अपराध तुमने किया था अब उसकी सज़ा यही है जो ख़्वाब की ताबीर में बयान हुई।

फिर जिस शख़्स के मुताल्लिक़ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ख़्वाब की ताबीर के ज़रिये यह समझते थे कि वह रिहा होगा उससे कहा कि जब तुम आज़ाद होकर जेल से बाहर जाओ और शाही दरबार में तुम्हारी पहुँच हो तो अपने बादशाह से मेरा भी ज़िक्र कर देना कि वह बेगुनाह क़ैद में पड़ा हुआ है; मगर उस शख़्स को आज़ाद होने के बाद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की यह बात याद न रही जिसका नतीजा यह हुआ कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की आज़ादी को और देर लगी और इस वाक़िए के बाद चन्द साल और क़ैद में रहे। यहाँ क़ुरआने करीम में लफ़्ज़ 'बिज़्-अ़ सिनीन' आया है। यह लफ़्ज़ तीन से लेकर नौ तक सादिक़ आता है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस वाक़िए के बाद सात साल और क़ैद में रहने का इत्तिफ़ाक़ हुआ।

अहकाम व मसाईल

उपर्युक्त आयतों से बहुत-से अहकाम व मसाईल और फ़ायदे व हिदायतें हासिल होते हैं इनमें ग़ौर कीजियेः

पहला मसला यह है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जेल में भेजे गये जो मुजरिमों और बदमाशों की बस्ती होती है, मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उनके साथ भी अच्छे अख़्लाक़, अच्छे रहन-सहन और बर्ताव का वह मामला किया जिससे ये सब मुरीद हो गये, जिससे मालूम हुआ कि सुधारकों के लिये लाज़िम है कि मुजरिमों ख़ताकारों से शफ़क़त व हमदर्दी का मामला करके उनको अपने से जोड़ने और पास लगाने का काम करें, किसी क़दम पर नफ़रत व नापसन्दीदगी का इज़हार न होने दें।

दूसरा मसला आयत के जुमले 'इन्ना नरा-क मिनल्-मुहसिनीन' से यह मालूम हुआ कि ख़्वाब की ताबीर ऐसे ही लोगों से मालूम करनी चाहिये जिनके नेक, सालेह और हमदर्द होने पर भरोसा हो।

तीसरा मसला यह मालूम हुआ कि हक़ की दावत देने वालों और मख़्लूक़ की इस्लाह (सुधार) की ख़िदमत करने वालों का तरीक़ा-ए-अ़मल यह होना चाहिये कि पहले अपने अच्छे अख़्लाक़ और अ़मली व इल्मी कमालात के ज़रिये अल्लाह की मख़्लूक़ पर अपना विश्वास क़ायम करें, चाहे इसमें उनको कुछ अपने कमालात का इज़हार भी करना पड़े, जैसा कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उस मौक़े पर अपना मोजिज़ा भी ज़िक्र किया और अपना नुबुव्वत के ख़ानदान का एक फ़र्द होना भी ज़ाहिर किया। यह कमाल का इज़हार अगर मख़्लूक़ की इस्लाह (सुधार) की नीयत से हो, अपनी ज़ाती बड़ाई साबित करने के लिये न हो तो वह यह अपनी पाकीज़गी बयान करना नहीं जिसकी मनाही क़ुरआने करीम में आई है 'फ़ला तुज़क्कू अन्फ़ु-सकुम' यानी अपनी पाक-नफ़्सी का इज़हार न करो। (तफ़सीरे मज़हरी)

चौथा मसला तब्लीग़ व दावत का एक अहम उसूल यह बतलाया गया है कि दाओ़ी (दावत का काम करने वाले) और सुधारक का फ़र्ज़ है कि हर वक़्त हर हाल में अपने दावत व तब्लीग़ के काम को सब कामों से आगे और ऊपर रखे, कोई उसके पास किसी काम के लिये आये वह अपने असली काम को न भूले, जैसे हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास ये क़ैदी ख़्वाब की ताबीर पूछने के लिये आये तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ख़्वाब की ताबीर के जवाब से पहले दावत व तब्लीग़ के ज़रिये उनको हिदायत व रहनुमाई का तोहफ़ा अ़ता फ़रमाया। यह न समझे कि दावत व तब्लीग़ किसी जलसे, किसी मिम्बर या स्टेज पर ही हुआ करती है, व्यक्तिगत मुलाक़ातों और निजी बातचीत के ज़रिये यह काम इससे ज़्यादा असरदार (प्रभावी) होता है।

पाँचवाँ मसला भी इसी दावत व इस्लाह से मुताल्लिक़ है कि हिक्मत के साथ वह बात कही जाये जो मुख़ातब के दिल में जगह बना सके। जैसे हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उनको यह दिखाया कि मुझे जो कोई कमाल हासिल हुआ वह इसका नतीजा है कि मैंने कुफ़्र के रास्ते और मज़हब को छोड़कर इस्लाम मज़हब को इख़्तियार किया और फिर कुफ़्र व शिर्क की ख़राबियाँ दिल में बैठ जाने वाले अन्दाज़ में बयान फ़रमाईं।

छठा मसला इससे यह साबित हुआ कि जो मामला मुख़ातब (संबोधित व्यक्ति) के लिये तकलीफ़देह और नागवार हो उसका इज़हार ज़रूरी हो तो मुख़ातब के सामने जहाँ तक मुम्किन हो ऐसे अन्दाज़ से किया जाये कि उसको तकलीफ़ कम से कम पहुँचे, जैसे ख़्वाब की ताबीर में एक शख़्स की हलाकत मुतैयन थी मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उसको अस्पष्ट रखा, यह मुतैयन करके नहीं कहा कि तुम सूली पर चढ़ाये जाओगे। (तफ़सीर इब्ने कसीर, मज़हरी)

सातवाँ मसला यह है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जेल से रिहाई के लिये उस क़ैदी से कहा कि जब बादशाह के पास जाओ तो मेरा भी ज़िक्र करना कि वह बेक़सूर जेल में है। इससे मालूम हुआ कि किसी मुसीबत से छुटकारे के लिये किसी शख़्स को कोशिश का माध्यम और ज़रिया बनाना तवक्कुल के ख़िलाफ़ नहीं।

आठवाँ मसला यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू को अपने ख़ास और चुने हुए पैग़म्बरों के लिये हर जायज़ कोशिश भी पसन्द नहीं कि किसी इनसान को अपने छुटकारे का ज़रिया बनायें, उनके और हक़ तआ़ला के बीच कोई वास्ता न होना ही अम्बिया का असली मक़ाम है, शायद इसी लिये यह क़ैदी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस कहने को भूल गया और उनको मज़ीद कई साल जेल में रहना पड़ा। एक हदीस में भी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस तरफ़ इशारा फ़रमाया है।

وَقَالَ الْمَلِكُ اِنِّيْٓ اَرٰى سَبْعَ بَقَرٰتٍ سِمَانٍ يَّاْكُلُهُنَّ سَبْعٌ عِجَافٌ وَّسَبْعَ سُنْۢبُلٰتٍ خُضْرٍ وَّاُخَرَ يٰبِسٰتٍ ؕ يٰٓاَيُّهَا الْمَلَاُ اَفْتُوْنِيْ فِيْ رُءْيَايَ اِنْ كُنْتُمْ لِلرُّءْيَا تَعْبُرُوْنَ ۝ قَالُوْٓا اَضْغَاثُ اَحْلَامٍ ۚ وَمَا نَحْنُ بِتَاْوِيْلِ الْاَحْلَامِ بِعٰلِمِيْنَ ۝ وَقَالَ الَّذِيْ نَجَا مِنْهُمَا وَادَّكَرَ بَعْدَ اُمَّةٍ اَنَا اُنَبِّئُكُمْ بِتَاْوِيْلِهٖ

فَاَرْسِلُوْنِ ۝ يُوْسُفُ اَيُّهَا الصِّدِّيْقُ اَفْتِنَا فِىْ سَبْعِ بَقَرٰتٍ سِمَانٍ يَّاْكُلُهُنَّ سَبْعٌ عِجَافٌ وَّسَبْعِ سُنْۢبُلٰتٍ خُضْرٍ وَّاُخَرَ يٰبِسٰتٍ ۙ لَّعَلِّىْٓ اَرْجِعُ اِلَى النَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَعْلَمُوْنَ ۝ قَالَ تَزْرَعُوْنَ سَبْعَ سِنِيْنَ دَاَبًا ۚ فَمَا حَصَدْتُّمْ فَذَرُوْهُ فِىْ سُنْۢبُلِهٖٓ اِلَّا قَلِيْلًا مِّمَّا تَاْكُلُوْنَ ۝ ثُمَّ يَاْتِىْ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ سَبْعٌ شِدَادٌ يَّاْكُلْنَ مَا قَدَّمْتُمْ لَهُنَّ اِلَّا قَلِيْلًا مِّمَّا تُحْصِنُوْنَ ۝ ثُمَّ يَاْتِىْ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ عَامٌ فِيْهِ يُغَاثُ النَّاسُ وَفِيْهِ يَعْصِرُوْنَ ۝ وَقَالَ الْمَلِكُ ائْتُوْنِىْ بِهٖ ۚ فَلَمَّا جَآءَهُ الرَّسُوْلُ قَالَ ارْجِعْ اِلٰى رَبِّكَ فَسْئَلْهُ مَا بَالُ النِّسْوَةِ الّٰتِىْ قَطَّعْنَ اَيْدِيَهُنَّ ۗ اِنَّ رَبِّىْ بِكَيْدِهِنَّ عَلِيْمٌ ۝

ع ١٢

व क़ालल्-मलिकु इन्नी अरा सब्-अ़ ब-क़रातिन् सिमानिंय्यअ्कुलुहुन्-न सब्अ़ुन् अ़िजाफ़ुंव्-व सब्-अ सुम्बुलातिन् ख़ुज़्रिंव्-व उ-ख़-र याबिसातिन्, या अय्युहल् म-लउ अफ़्तूनी फ़ी रुअ्या-य इन् कुन्तुम् लिर्रुअ्या तअ़्बुरून (43) क़ालू अज़्गासु अह्लामिन् व मा नह्नु बितअ्वीलिल्-अह्लामि बिआ़लिमीन (44) व क़ालल्लज़ी नजा मिन्हुमा वद्द-क-र बअ्-द उम्मतिन् अ-न उनब्बिउकुम् बितअ्वीलिही फ़-अर्सिलून (45) यूसुफ़ु अय्युहस्सिद्दीक़ु अफ़्तिना फ़ी सब्अ़ि ब-क़रातिन् सिमानिंय्यअ्कुलुहुन्-न सब्अ़ुन् अ़िजाफ़ुंव्-व सब्अ़ि सुम्बुलातिन् ख़ुज़्रिंव्-व उ-ख़-र याबिसातिल्-लअ़ल्ली अर्जिअ़ु इलन्नासि लअ़ल्लहुम्	और कहा बादशाह ने मैं ख़्वाब में देखता हूँ सात गायें मोटी उनको खाती हैं सात गायें दुबली, और सात बालें हरी और दूसरी सूखी, ऐ दरबार वालो! ताबीर कहो मुझसे मेरे ख़्वाब की अगर हो तुम ख़्वाब की ताबीर देने वाले। (43) बोले ये ख़्याली ख़्वाब हैं, और हमको ऐसे ख़्वाबों की ताबीर मालूम नहीं। (44) और बोला वह जो बचा था उन दोनों में से और याद आ गया उसको मुद्दत के बाद, मैं बताऊँ तुमको इसकी ताबीर सो तुम मुझको भेजो। (45) जाकर कहा ऐ सच्चे यूसुफ़! हुक्म दे हमको इस ख़्वाब में, सात गायें मोटी उनको खायें सात दुबली और सात बालें हरी और दूसरी सूखी, ताकि ले जाऊँ मैं लोगों के पास शायद

यअ्लमून (46) क़ा-ल तज़्-रअू-न सब्-अ सिनी-न द-अबन् फ़मा हसत्तुम् फ़-ज़रूहु फ़ी सुम्बुलिही इल्ला क़लीलम्-मिम्मा तअ्कुलून (47) सुम्-म यअ्ती मिम्-बअ्दि ज़ालि-क सब्अुन् शिदादुंय्यअ्कुल्-न मा क़द्दम्तुम् लहुन्-न इल्ला क़लीलम् मिम्मा तुह्सिनून (48) सुम्-म यअ्ती मिम्-बअ्दि ज़ालि-क आमुन् फ़ीहि युग़ासुन्नासु व फ़ीहि यअ्सिरून (49) ❁	उनको मालूम हो। (46) कहा तुम खेती करोगे सात साल जमकर, सो जो काटो उसको छोड़ दो उसकी बाल में मगर थोड़ा सा जो तुम खाओ। (47) फिर आयेंगे उसके बाद सात साल सख़्ती के, खा जायेंगे जो रखा तुमने उनके वास्ते मगर थोड़ा-सा जो रोक रखोगे बीज के वास्ते। (48) फिर आयेगा उसके बाद एक बरस उसमें मींह बरसेगा लोगों पर उसमें रस निचोड़ेंगे। (49) ❁
व क़ालल्-मलिकुअ्तूनी बिही फ़-लम्मा जा-अहुर्रसूलु क़ालर्जिअ् इला रब्बि-क फ़स्अल्हु मा बालुन्निस्वतिल्-लाती क़त्तअ्-न ऐदियहुन्-न, इन्-न रब्बी बिकैदिहिन्-न अ़लीम (50)	और कहा बादशाह ने ले आओ उसको मेरे पास, फिर जब पहुँचा उसके पास भेजा हुआ आदमी कहा लौट जा अपने आक़ा के पास और पूछ उससे क्या हक़ीक़त है उन औरतों की जिन्होंने काटे थे अपने हाथ, मेरा रब तो उनका सब फ़रेब जानता है। (50)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और मिस्र के बादशाह ने (भी एक ख़्वाब देखा और हुकूमत के ख़ास लोगों को जमा करके उनसे) कहा कि मैं (ख़्वाब में क्या) देखता हूँ कि सात गायें मोटी-ताज़ी हैं जिनको सात कमज़ोर और दुबली गायें खा गईं, और सात बालें हरी हैं और उनके अ़लावा सात और हैं जो कि सूखी हैं (और सूखी बालों ने इसी तरह उन सात हरी बालियों पर लिपट कर उनको ख़ुश्क कर दिया)। ऐ दरबार वालो! अगर तुम (ख़्वाब की) ताबीर दे सकते हो तो मेरे इस ख़्वाब के बारे में मुझको जवाब दो। वे लोग कहने लगे कि (अव्वल तो यह कोई ख़्वाब ही नहीं जिससे आप फ़िक्र में पड़ें) यूँ ही परेशान ख़्यालात हैं, और (दूसरे) हम लोग (जो कि हुकूमत के मामलात में माहिर हैं) ख़्वाबों की ताबीर का इल्म भी नहीं रखते। (दो जवाब इसलिये दिये कि पहले जवाब से बादशाह के दिल से परेशानी और बुरे ख़्यालात को दूर करना है और दूसरे जवाब से अपना उज़्र ज़ाहिर

करना है। ख़ुलासा यह है कि अव्वल तो ऐसे ख़्वाब क़ाबिले ताबीर नहीं, दूसरे हम इस फ़न से वाक़िफ़ नहीं)।

और उन (ज़िक्र हुए) दो क़ैदियों में से जो रिहा हो गया था (वह मज्लिस में हाज़िर था) उसने कहा, और मुद्दत के बाद उसको (हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वसीयत का) ख़्याल आया कि मैं इसकी ताबीर की ख़बर लाये देता हूँ, आप लोग मुझको ज़रा जाने की इजाज़त दीजिये। (चुनाँचे दरबार से इजाज़त हुई और वह क़ैदख़ाने में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास पहुँचा और जाकर कहा) ऐ यूसुफ़! ऐ सच्चाई के पैकर! आप हम लोगों को इस (ख़्वाब) का जवाब (यानी ताबीर) दीजिये कि सात गायें मोटी हैं उनको सात दुबली गायें खा गईं, और सात बालें हरी हैं और उसके अ़लावा (सात) सूखी भी हैं (कि उन ख़ुश्क के लिपटने से वे हरी भी सूख गईं आप ताबीर बतलाईये) ताकि मैं (जिन्होंने मुझको भेजा है) उन लोगों के पास लौटकर जाऊँ (और बयान करूँ) ताकि (इसकी ताबीर और इससे आपका हाल) उनको भी मालूम हो जाये (ताबीर के मुवाफ़िक़ अ़मल करें और आपके छूटने की कोई सूरत निकले)।

आपने फ़रमाया कि (उन सात मोटी-ताज़ी गायों और सात सब्ज़ बालों से मुराद पैदावार और बारिश के साल हैं, पस) तुम सात साल लगातार (ख़ूब) ग़ल्ला बोना, फिर जो फ़सल काटो उसको बालों ही में रहने देना (ताकि घुन न लग जाये) हाँ मगर थोड़ा-सा जो तुम्हारे खाने में आये (वह बालों में से निकाला ही जायेगा)। फिर उन (सात बरस) के बाद सात साल ऐसे सख़्त (और सूखे के) आएँगे जो कि उस (सारे के सारे) ज़ख़ीरे को खा जाएँगे जिसको तुमने उन सालों के वास्ते जमा कर रखा होगा, हाँ मगर थोड़ा-सा जो (बीज के लिये) रख छोड़ोगे (वह अलबत्ता बच जायेगा। और उन सूखी बालों और दुबली गायों से इशारा उन सात साल की तरफ़ है)। फिर उस (सात बरस) के बाद एक साल ऐसा आयेगा जिसमें लोगों के लिये ख़ूब बारिश होगी और उसमें (बारिश की वजह से अंगूर कसरत से फलेंगे) शीरा भी निचोड़ेंगे (और शराबें पियेंगे, ग़र्ज़ कि वह शख़्स ताबीर लेकर दरबार में पहुँचा) और (जाकर बयान किया) बादशाह ने (जो सुना तो आपके इल्म व फ़ज़्ल का मोतक़िद हुआ और) हुक्म दिया कि उनको मेरे पास लाओ (चुनाँचे यहाँ से क़ासिद चला) फिर जब उनके पास क़ासिद पहुँचा (और पैग़ाम दिया तो) आपने फ़रमाया कि (जब तक मेरा इस तोहमत से बरी और बेक़सूर होना साबित न हो जायेगा मैं न आऊँगा) तू अपनी सरकार के पास लौट जा, फिर उनसे पूछ कि (कुछ तुमको ख़बर है) उन औ़रतों का क्या हाल है जिन्होंने अपने हाथ काट लिये थे। (मतलब यह था कि उनको बुलाकर उस वाक़िए की जिसमें मुझको क़ैद की गई तफ़्तीश व तहक़ीक़ की जाये और औ़रतों के हाल से मुराद उनका वाक़िफ़ या नावाक़िफ़ होना है यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हाल से, और उन औ़रतों को ख़ास तौर पर शायद इसलिये कहा हो कि उनके सामने ज़ुलैख़ा ने इक़रार किया था कि हाँ मैंने इसको फुसलाया था मगर यह बच निकला। मेरा रब उन औ़रतों के फ़रेब को ख़ूब जानता है (यानी अल्लाह को तो मालूम ही है कि ज़ुलैख़ा का मुझ पर तोहमत लगाना एक जाल था मगर लोगों के बीच भी उसकी तस्वीर साफ़ और असलियत सामने आ जाना मुनासिब है। चुनाँचे बादशाह ने

उन औरतों को हाज़िर किया)।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में यह बयान है कि फिर हक़ तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की रिहाई के लिये पर्दा-ए-ग़ैब से एक सूरत यह पैदा फ़रमाई कि मिस्र के बादशाह ने एक ख़्वाब देखा जिससे वह परेशान हुआ, अपनी हुकूमत के ताबीर देने वाले ज्ञानियों और ग़ैब की बातें बताने वालों को जमा करके ख़्वाब की ताबीर मालूम की, वह ख़्वाब किसी की समझ में न आया सब ने यह जवाब दे दिया किः

اَضْغَاثُ اَحْلَامٍ. وَمَانَحْنُ بِتَاْوِيْلِ الْاَحْلَامِ بِعٰلِمِيْنَ ○

अज़ग़ास, ज़िग़स की जमा (बहुवचन) है जो ऐसी गठरी को कहा जाता है जिसमें मुख़्तलिफ़ किस्म के सूखे पत्ते और घास-फूँस जमा हों। मायने यह थे कि यह ख़्वाब कुछ मिला-जुला है जिसमें ख़्यालात वग़ैरह शामिल हैं और हम ऐसे ख़्वाबों की ताबीर नहीं जानते, कोई सही ख़्वाब होता तो ताबीर बयान कर देते।

इस वाक़िए को देखकर उस रिहा होने वाले क़ैदी को लम्बी मुद्दत के बाद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बात याद आई और उसने आगे बढ़कर कहा कि मैं आपको इस ख़्वाब की ताबीर बतला सकूँगा। उस वक़्त उसने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कमालात और ख़्वाब की ताबीर में महारत और फिर मज़लूम होकर क़ैद में गिरफ़्तार होने का ज़िक्र करके यह चाहा कि मुझे जेलख़ाने में उनसे मिलने की इजाज़त दी जाये, बादशाह ने इसका इन्तिज़ाम किया, वह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास हाज़िर हुआ। क़ुरआने करीम ने इस तमाम वाक़िए को सिर्फ़ एक लफ़्ज़ 'फ़अर्सिलून' फ़रमाकर बयान किया है, जिसके मायने हैं मुझे भेज दो। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का तज़किरा फिर सरकारी मन्ज़ूरी और फिर जेलख़ाने तक पहुँचना ये वाक़िआ़त ख़ुद ज़िमनी तौर पर समझ में आ जाते हैं, इसलिये इनकी वज़ाहत की ज़रूरत नहीं समझी बल्कि यह बयान शुरू कियाः

يُوْسُفُ اَيُّهَا الصِّدِّيْقُ

यानी उस शख़्स ने जेल पहुँचकर हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से वाक़िए का इज़हार इस तरह किया कि पहले यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सिद्दीक़ यानी क़ौल व फ़ेल में सच्चा होने का इक़रार किया फिर दरख़्वास्त की कि मुझे एक ख़्वाब की ताबीर बतलाईये। ख़्वाब यह है कि बादशाह ने यह देखा है कि सात बैल मोटे-ताज़े तन्दुरुस्त हैं जिनको दूसरे सात बैल खा रहे हैं, और यह खाने वाले बैल कमज़ोर और दुबले हैं, साथ ही यह देखा कि सात गेहूँ के सात गुच्छे सरसब्ज़ हरे भरे हैं और सात ख़ुश्क हैं।

उस शख़्स ने ख़्वाब बयान करने के बाद कहाः

لَعَلِّيْٓ اَرْجِعُ اِلَى النَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَعْلَمُوْنَ○

यानी आप ताबीर बतला देंगे तो मुम्किन है कि मैं उन लोगों के पास जाऊँ और उनको ताबीर बतलाऊँ, और मुम्किन है कि वे इस तरह आपकी ख़ूबी व कमाल से वाक़िफ़ हो जायें।

तफ़सीरे मज़हरी में है कि वाक़िआत की जो सूरतें मिसाली आ़लम में होती हैं वही इनसान को ख़्वाब में नज़र आती हैं। इस आ़लम में उन सूरतों के ख़ास मायने होते हैं, ख़्वाब की ताबीर के फ़न का सारा मदार इसके जानने पर है कि फ़ुलाँ मिसाली सूरत से इस आ़लम में क्या मुराद होती है। अल्लाह तआ़ला ने हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को यह फ़न मुकम्मल अ़ता फ़रमाया था, आपने ख़्वाब सुनकर समझ लिया कि सात बैल मोटे-ताज़े और सात गुच्छे हरे-भरे से मुराद सात साल हैं जिनमें पैदावार दस्तूर के मुताबिक़ ख़ूब होगी, क्योंकि बैल को ज़मीन के हमवार करने और ग़ल्ला उगाने में ख़ास दख़ल है, इसी तरह सात बैल कमज़ोर व दुबले और सात सूखे गुच्छों से मुराद यह है कि पहले सात साल के बाद सात साल सख़्त क़हत (सूखे और अकाल) के आयेंगे और कमज़ोर सात बैलों के मोटे बैलों के खा लेने से यह मुराद है कि पिछले सात साल में जो ज़ख़ीरा ग़ल्ले वग़ैरह का जमा होगा वह सब उन क़हत (सूखे और अकाल) के सालों में ख़र्च हो जायेगा, सिर्फ़ बीज के लिये कुछ ग़ल्ला बचेगा।

बादशाह के ख़्वाब में तो बज़ाहिर इतना ही मालूम हुआ था कि सात साल अच्छी पैदावार के होंगे फिर सात साल क़हत के, मगर हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने इस पर एक इज़ाफ़ा यह भी बयान फ़रमाया कि क़हत के साल के बाद फिर एक साल ख़ूब बारिश और पैदावार होगी, इसका इल्म यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को या तो इससे हुआ कि जब क़हत के साल कुल सात हैं तो अल्लाह की आ़दत और दस्तूर के मुताबिक़ आठवाँ साल बारिश और पैदावार का होगा। और हज़रत क़तादा रह. ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने वही के ज़रिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को इस पर बाख़बर कर दिया ताकि ख़्वाब की ताबीर से भी कुछ ज़्यादा ख़बर उनको पहुँचे, जिससे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की यह ख़ूबी व कमाल ज़ाहिर होकर उनकी रिहाई का सबब बने और इस पर मज़ीद यह हुआ कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने सिर्फ़ ख़्वाब की ताबीर बताने ही पर बस नहीं फ़रमाया बल्कि इसके साथ एक समझदारी और हमदर्दी भरा मश्विरा भी दिया, वह यह कि पहले सात साल में जो ज़्यादा पैदावार हो उसको गेहूँ के ख़ोशों (गुच्छों और बालों) ही में महफ़ूज़ रखना ताकि गेहूँ को पुराना होने के बाद कीड़ा न लग जाये। यह तजुर्बे की बात है कि जब तक ग़ल्ला ख़ोशे के अन्दर रहता है ग़ल्ले को कीड़ा नहीं लगता।

ثُمَّ يَأْتِي مِنْ ۢ بَعْدِ ذٰلِكَ سَبْعٌ شِدَادٌ يَّأْكُلْنَ مَا قَدَّمْتُمْ لَهُنَّ

यानी पहले सात साल के बाद फिर सात साल सख़्त ख़ुश्कसाली और क़हत (सूखे और अकाल) के आयेंगे जो पिछले जमा किये हुए ज़ख़ीरे को खा जायेंगे। ख़्वाब में चूँकि यह देखा था कि ज़ईफ़ कमज़ोर बैलों ने मोटे-ताज़े और ताक़तवर बैलों को खा लिया। इसलिये ख़्वाब की ताबीर में इसके मुनासिब यही फ़रमाया कि क़हत के साल पिछले सालों के जमा किये हुए ज़ख़ीरे को खा जायेंगे, अगरचे साल तो कोई खाने वाली चीज़ नहीं, मुराद यही है कि इनसान और जानवर क़हत (सूखे) के सालों में पिछले ज़ख़ीरे को खा लेंगे।

क़िस्से के आगे-पीछे के मज़मून से ज़ाहिर है कि यह शख़्स ख़्वाब की ताबीर हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से मालूम करके लौटा और बादशाह को ख़बर दी, वह इससे मुत्मईन और हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के कमाल व ख़ूबी का मोतक़िद हो गया, मगर क़ुरआने करीम ने इन सब चीज़ों के ज़िक्र करने की ज़रूरत नहीं समझी, क्योंकि ये ख़ुद-ब-ख़ुद समझी जा सकती हैं। इसके बाद का वाक़िआ इस तरह बयान फ़रमायाः

وَقَالَ الْمَلِكُ ائْتُوْنِیْ بِهٖ

यानी बादशाह ने हुक्म दिया कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को जेलख़ाने से निकाला जाये और दरबार में लाया जाये। चुनाँचे बादशाह का कोई क़ासिद बादशाह का यह पैग़ाम लेकर जेलख़ाने पहुँचा।

मौक़ा बज़ाहिर इसका था कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम जेलख़ाने की लम्बी मुद्दत से आजिज़ आ रहे थे और छुटकारा व रिहाई चाहते थे, जब बादशाह का पैग़ाम बुलाने के लिये पहुँचा तो फ़ौरन तैयार होकर साथ चल देते, मगर अल्लाह तआला अपने रसूलों को जो बुलन्द मक़ाम अता फ़रमाते हैं उसको दूसरे लोग समझ भी नहीं सकते। इस क़ासिद को जवाब यह दियाः

قَالَ ارْجِعْ اِلٰی رَبِّكَ فَسْئَلْهُ مَا بَالُ النِّسْوَةِ الّٰتِیْ قَطَّعْنَ اَیْدِیَهُنَّ اِنَّ رَبِّیْ بِكَیْدِهِنَّ عَلِیْمٌ○

यानी यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने क़ासिद से कहा कि तुम अपने बादशाह के पास वापस जाकर पहले यह पूछो कि आपके नज़दीक उन औरतों का मामला किस तरह का है जिन्होंने अपने हाथ काट लिये थे, क्या उस वाक़िए में वह मुझे संदिग्ध समझते और मेरा कोई क़ुसूर क़रार देते हैं?

यहाँ यह बात भी ग़ौर करने के लायक़ है कि उस वक़्त यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने उन औरतों का ज़िक्र फ़रमाया जिन्होंने हाथ काट लिये थे, अज़ीज़ की बीवी का नाम नहीं लिया जो असल सबब थी। इसमें उस हक़ की रियायत थी जो अज़ीज़ के घर में परवरिश पाने से फ़ितरी तौर पर शरीफ़ इनसान के लिये क़ाबिले लिहाज़ होता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और एक बात यह भी है कि असल मक़सद अपनी बराअत का सुबूत था वह उन औरतों से भी हो सकता था और इसमें औरतों की भी कोई ज़्यादा रुस्वाई न थी, अगर वे सच्ची बात का इक़रार कर लेतीं तो सिर्फ़ मश्विरे ही की मुजरिम ठहरतीं, बख़िलाफ़ अज़ीज़ की बीवी के कि उसको तहक़ीक़ात का निशाना बनाया जाता तो उसकी रुस्वाई ज़्यादा थी। और इसके साथ ही यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

اِنَّ رَبِّیْ بِكَیْدِهِنَّ عَلِیْمٌ○

यानी मेरा परवर्दिगार तो उनके झूठ और मक्र व फ़रेब को जानता ही है, मैं चाहता हूँ कि बादशाह भी असल हक़ीक़त से वाक़िफ़ हो जायें जिसमें एक बारीक अन्दाज़ से अपनी बराअत का इज़हार भी है।

इस मौक़े पर सही बुख़ारी और जामे तिर्मिज़ी में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इरशाद मन्क़ूल है कि

अगर मैं इतनी मुद्दत जेलख़ाने में रहता जितनी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम रहे हैं और फिर मुझे रिहाई के लिये बुलाया जाता तो फ़ौरन क़ुबूल कर लेता।

और इमामे तबरी रह. की रिवायत में ये अलफ़ाज़ हैं कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का सब्र व तहम्मुल और बुलन्द अख़्लाक़ी क़ाबिले ताज्जुब हैं, जब उनसे जेलख़ाने में बादशाह के ख़्वाब की ताबीर मालूम की गई अगर मैं उनकी जगह होता तो ताबीर बतलाने में यह शर्त लगाता कि पहले जेल से निकालो फिर ताबीर बतलाऊँगा। फिर जब क़ासिद रिहाई का पैग़ाम लाया अगर मैं उनकी जगह होता तो फ़ौरन जेल के दरवाज़े की तरफ़ चल देता। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इस हदीस में यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि हदीस का मंशा यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सब्र व संयम और बुलन्द अख़्लाक़ की तारीफ़ व प्रशंसा करना है, मगर इसके मुक़ाबले में जिस सूरतेहाल को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी तरफ़ मन्सूब करके फ़रमाया कि मैं होता तो देर न करता, अगर इसका मतलब यह है कि आप हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस व्यवहार को अफ़ज़ल फ़रमा रहे हैं और अपनी शान में फ़रमाते हैं कि मैं होता तो इस अफ़ज़ल पर अ़मल न कर पाता बल्कि इसके मुक़ाबले में जो दूसरा दर्जा है उसको इख़्तियार कर लेता जो बज़ाहिर तमाम अम्बिया से अफ़ज़ल हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शान से मेल नहीं खाता, तो इसके जवाब में यह भी कहा जा सकता है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बिला शुब्हा तमाम अम्बिया में अफ़ज़ल हैं मगर किसी आंशिक अ़मल में किसी दूसरे पैग़म्बर की अफ़ज़लियत (श्रेष्ठता) इसके विरुद्ध नहीं।

इसके अ़लावा जैसा कि तफ़सीरे क़ुर्तुबी में फ़रमाया गया है, यह भी हो सकता है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के काम के तरीक़े में उनके सब्र व संयम और बुलन्द अख़्लाक़ी का अ़ज़ीमुश्शान सुबूत है और वह अपनी जगह क़ाबिले तारीफ़ है लेकिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अ़मल के जिस तरीक़े को अपनी तरफ़ मन्सूब फ़रमाया उम्मत की तालीम और अ़वाम की ख़ैरख़्वाही के लिये वही मुनासिब और अफ़ज़ल है, क्योंकि बादशाहों के मिज़ाज का कोई एतिबार नहीं होता, ऐसे मौक़े पर शर्तें लगाना या देर करना आ़म लोगों के लिये मुनासिब नहीं होता, संदेह व संभावना है कि बादशाह की राय बदल जाये और फिर यह जेल की मुसीबत बदस्तूर क़ायम रहे। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को तो अल्लाह का रसूल होने की वजह से अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से यह इल्म भी हो सकता है कि इस ताख़ीर (देरी) से कुछ नुक़सान नहीं होगा, लेकिन दूसरों को तो यह दर्जा हासिल नहीं, रहमतुल्-लिल्आ़लमीन के मिज़ाज व मज़ाक़ में आ़म मख़्लूक़ के कल्याण और बेहतरी की अहमियत ज़्यादा थी, इसलिये फ़रमाया कि मुझे यह मौक़ा मिलता तो मैं देर न करता। वल्लाहु आलम

قَالَ مَا خَطْبُكُنَّ إِذْ رَاوَدْتُنَّ يُوسُفَ عَنْ نَفْسِهِ ۚ قُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا عَلِمْنَا عَلَيْهِ مِنْ سُوٓءٍ ۚ قَالَتِ امْرَاَتُ الْعَزِيزِ الْـٰٔنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ ۫ اَنَا رَاوَدْتُّهُ عَنْ نَّفْسِهِ وَاِنَّهُ لَمِنَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ ذٰلِكَ لِيَعْلَمَ اَنِّيْ لَمْ اَخُنْهُ بِالْغَيْبِ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِيْ كَيْدَ الْخَآئِنِيْنَ ۝

क़ा-ल मा ख़त्बुकुन्-न इज़् रावत्तुन्-न यूसु-फ़ अ़न् नफ़्सिही, क़ुल्-न हा-श लिल्लाहि मा अ़लिम्ना अ़लैहि मिन् सूइन्, क़ालतिम्र-अतुल्-अ़ज़ीज़िल्-आ-न हस्ह-सल्-हक़्क़ु, अ-न रावत्तुहू अ़न् नफ़्सिही व इन्नहू लमिनस्-सादिक़ीन (51) ज़ालि-क लि-यअ़्ल-म अन्नी लम् अख़ुन्हु बिल्ग़ैबि व अन्नल्ला-ह ला यह्दी कैदल्-ख़ाइनीन (52)	कहा बादशाह ने औरतों को- क्या हक़ीक़त है तुम्हारी जब तुमने फुसलाया यूसुफ़ को उसके नफ़्स की हिफ़ाज़त से? बोलीं हाशा लिल्लाह हमको मालूम नहीं उस पर कुछ बुराई, बोली औरत अ़ज़ीज़ की- अब खुल गई सच्ची बात, मैंने फुसलाया था उसको उसके जी से और वह सच्चा है। (51) यूसुफ़ ने कहा यह इस वास्ते कि अ़ज़ीज़ मालूम कर ले कि मैंने उसकी चोरी नहीं की छुपकर, और यह कि अल्लाह नहीं चलाता फ़रेब दग़ाबाज़ों का। (52)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

कहा कि तुम्हारा क्या वाक़िआ है जब तुमने यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) से अपने मतलब की इच्छा की (यानी एक ने इच्छा की और बाक़ियों ने उसकी मदद की, क्योंकि किसी काम पर मदद करना भी उस काम को करने जैसा है। उस वक़्त तुमको क्या पता चला? शायद बादशाह ने इस तरीक़े से इसलिये पूछा हो कि मुजरिम सुन ले कि बादशाह को इतनी बात मालूम है कि किसी औरत ने इनसे अपना मतलब पूरा करने की बात की थी, शायद उसका नाम भी मालूम हो, इस हालत में इनकार न चल सकेगा। पस इस तरह शायद ख़ुद इक़रार कर ले)। औरतों ने जवाब दिया कि अल्लाह की पनाह! हमको उनमें ज़रा भी बुराई की बात मालूम नहीं हुई (वह बिल्कुल पाक साफ़ हैं। शायद औरतों ने ज़ुलैख़ा का वह इक़रार इसलिये ज़ाहिर न किया हो कि मक़सूद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की पाकदामनी का सुबूत था और वह हासिल हो गया, या ज़ुलैख़ा के सामने होने से शर्म रोक बनी कि उसका नाम लें)। अ़ज़ीज़ की बीवी (जो कि हाज़िर थी) कहने लगी कि अब तो हक़ बात (सब पर) ज़ाहिर हो ही गई (अब छुपाना बेकार है, सच यही है कि) मैंने ही उनसे अपने मतलब की इच्छा और तलब की थी (न कि उन्होंने जैसा कि मैंने इल्ज़ाम लगा दिया था) और बेशक वही सच्चे हैं (और ग़ालिबन ऐसे मामले का इक़रार कर लेना मजबूरी की हालत में ज़ुलैख़ा को पेश आया। ग़र्ज़ कि गुफ़्तगू की पूरी सूरतेहाल, तमाम बयानात, इक़रारों और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बराअत का सुबूत उनके पास कहलाकर भेजा, उस वक़्त) यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि यह एहतिमाम (जो मैंने किया) सिर्फ़ इस वजह से था ताकि अ़ज़ीज़ को (ज़्यादा) यक़ीन के साथ मालूम हो जाये कि मैंने उनकी ग़ैर-मौजूदगी में उनकी

आबरू पर हाथ नहीं डाला, और यह (भी मालूम हो जाये) कि अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों के फ़रेब को चलने नहीं देता (चुनाँचे ज़ुलैख़ा ने अज़ीज़ की आबरू में ख़ियानत की थी कि दूसरे पर निगाह की, ख़ुदा ने उसकी क़लई खोल दी, पस मेरी ग़र्ज़ यह थी)।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को जब शाही क़ासिद रिहाई का पैग़ाम देकर बुलाने के लिये आया और उन्होंने क़ासिद को यह जवाब दिया कि पहले उन औरतों से मेरे मामले की तह्क़ीक़ कर लो जिन्होंने हाथ काट लिये थे। इसमें बहुत सी हिक्मतें छुपी थीं, अल्लाह तआला अपने अम्बिया को जैसे कामिल दीन अता फ़रमाते हैं ऐसे ही कामिल अ़क्ल और मामलात व हालात की पूरी समझ भी अता फ़रमाते हैं, यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने शाही पैग़ाम से यह अन्दाज़ा कर लिया कि अब जेल से रिहाई के बाद मिस्र के बादशाह मुझे कोई सम्मान देंगे, उस वक़्त अ़क्लमन्दी का तक़ाज़ा यह था कि जिस ऐब की तोहमत उन पर लगाई गई थी और जिसकी वजह से जेल में डाला गया था उसकी हक़ीक़त बादशाह और सब लोगों पर पूरी तरह खुल जाये और उनकी बराअत (बरी और पाक होने) में किसी को शुब्हा न रहे, वरना इसका अन्जाम यह होगा कि शाही सम्मान से लोगों की ज़बानें तो बन्द हो जायेंगी मगर उनके दिलों में ये ख़्यालात खटकते रहेंगे कि यह वही शख़्स है जिसने अपने आक़ा की बीवी पर हाथ डाला था और ऐसे हालात का पैदा हो जाना भी शाही दरबारों में कुछ बईद नहीं कि किसी वक़्त बादशाह भी लोगों के ऐसे ख़्यालात से प्रभावित हो जाये, इसलिये रिहाई से पहले इस मामले की सफ़ाई और तह्क़ीक़ को ज़रूरी समझा और उपर्युक्त दो आयतों में से दूसरी आयत में ख़ुद यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने अपने इस अ़मल और रिहाई में देरी करने की दो हिक्मतें बयान फ़रमाई हैं:

अव्वल यह कि:

ذٰلِكَ لِيَعْلَمَ اَنِّىْ لَمْ اَخُنْهُ بِالْغَيْبِ

यानी यह ताख़ीर (विलम्ब और देरी) मैंने इस लिये की कि अज़ीज़े मिस्र को यक़ीन हो जाये कि मैंने उसकी ग़ैर-मौजूदगी में उसके हक़ में कोई ख़ियानत (बददियानती) नहीं की।

अज़ीज़े मिस्र को यक़ीन दिलाने की ज़्यादा फ़िक्र इसलिये हुई कि यह बहुत बुरी सूरत होगी कि अज़ीज़े मिस्र के दिल में मेरी तरफ़ से शुब्हात रहें और फिर शाही सम्मान की वजह से वह कुछ न कह सकें, तो उनको मेरा सम्मान भी सख़्त नागवार होगा, और उस पर ख़ामोशी उनके लिये और ज़्यादा तकलीफ़ देने वाली होगी। वह चूँकि एक ज़माने तक आक़ा की हैसियत से रह चुका था इसलिये यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की शराफ़त और दिल ने उसको तकलीफ़ पहुँचने को गवारा न किया, और यह भी ज़ाहिर था कि जब अज़ीज़े मिस्र को बराअत का यक़ीन हो जायेगा तो दूसरे लोगों की ज़बानें ख़ुद-ब-ख़ुद बन्द हो जायेंगी।

दूसरी हिक्मत यह इरशाद फ़रमाई:

وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِىْ كَيْدَ الْخَآئِنِيْنَo

"यानी यह तहक़ीक़ात इसलिये कराई कि लोगों को मालूम हो जाये कि अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों के फ़रेब (मक्कारी) को चलने नहीं देता।"

इसके दो मतलब हो सकते हैं एक यह कि तहक़ीक़ात के ज़रिये ख़ियानत करने वालों की ख़ियानत ज़ाहिर होकर सब लोग आगाह व सचेत हो जायें कि ख़ियानत करने वालों का अन्जाम आख़िरकार रुस्वाई होता है ताकि आईन्दा सब लोग ऐसे कामों से बचने की पाबन्दी करें, दूसरे यह मायने भी हो सकते हैं कि अगर इसी संदिग्ध हालत में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को शाही सम्मान मिल जाता तो देखने वालों को यह ख़्याल हो सकता था कि ऐसी ख़ियानत करने वालों को बड़े-बड़े रुतबे मिल सकते हैं, इससे उनके एतिक़ाद में फ़र्क़ आता और ख़ियानत की बुराई दिलों से निकल जाती। बहरहाल ऊपर ज़िक्र हुई हिक्मतों को सामने रखते हुए यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने रिहाई का पैग़ाम पाते ही फ़ौरन निकल जाना पसन्द नहीं किया बल्कि शाही स्तर से तहक़ीक़ात का मुतालबा किया।.

ऊपर बयान हुई पहली आयत में इस तहक़ीक़ात का ख़ुलासा ज़िक्र हुआ है:

قَالَ مَاخَطْبُكُنَّ اِذْ رَاوَدْتُّنَّ يُوْسُفَ عَنْ نَّفْسِهٖ

"यानी बादशाह ने उन औरतों को जिन्होंने अपने हाथ काट लिये थे हाज़िर करके सवाल किया कि क्या वाक़िआ है जब तुमने यूसुफ़ से अपने मतलब की इच्छा की।" बादशाह के इस सवाल से मालूम हुआ कि उसको अपनी जगह यह यक़ीन हो गया था कि क़सूर यूसुफ़ का नहीं इन औरतों ही का है, इसलिये यह कहा कि तुमने उनसे अपने मतलब की इच्छा की, इसके बाद औरतों का जवाब यह बयान हुआ है:

قُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا عَلِمْنَا عَلَيْهِ مِنْ سُوْٓءٍ، قَالَتِ امْرَاَتُ الْعَزِيْزِ الْئٰنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ اَنَا رَاوَدْتُّهٗ عَنْ نَّفْسِهٖ وَاِنَّهٗ لَمِنَ الصّٰدِقِيْنَo

"यानी सब औरतों ने कहा कि अल्लाह की पनाह! हमें उनमें ज़रा भी कोई बुराई की बात मालूम नहीं हुई। अज़ीज़ की बीवी कहने लगी कि अब तो हक़ बात ज़ाहिर हो ही गई, मैंने उनसे अपने मतलब की इच्छा की थी और बेशक वही सच्चे हैं।"

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने तहक़ीक़ात में अज़ीज़े मिस्र की बीवी का नाम न लिया था मगर अल्लाह जल्ल शानुहू जब किसी को इज़्ज़त अ़ता फ़रमाते हैं तो ख़ुद-ब-ख़ुद लोगों की ज़बानें उसकी सच्चाई व सफ़ाई के लिये खुल जाती हैं, उस मौक़े पर अज़ीज़ की बीवी ने हिम्मत करके हक़ के इज़हार का ऐलान ख़ुद कर दिया। यहाँ तक जो हालात व वाक़िआ़त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के आपने सुने हैं उनमें बहुत से फ़ायदे व मसाईल और इनसानी ज़िन्दगी के लिये अहम हिदायतें पाई जाती हैं।

उनमें से आठ मसाईल पहले बयान हो चुके हैं, उपर्युक्त आयतों से संबन्धित मज़ीद मसाईल और हिदायतें ये हैं:

नवाँ मसला यह है कि अल्लाह तआ़ला अपने मख़्सूस और मक़बूल बन्दों के मक़ासिद पूरा करने के लिये ख़ुद ग़ैबी तदबीरों से इन्तिज़ाम फ़रमाते हैं, उनको किसी मख़्लूक़ का एहसान मन्द करना पसन्द नहीं फ़रमाते। यही वजह हुई कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जो रिहा होने वाले क़ैदी से कहा था कि बादशाह से मेरा ज़िक्र करना उसको तो भुला दिया गया और फिर पर्दा-ए-ग़ैब से एक तदबीर ऐसी की गई जिसमें यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम किसी के आभारी भी न हों और पूरी इ़ज़्ज़त व शान के साथ जेल की रिहाई का मक़सद भी पूरा हो जाये।

इसका यह सामान किया कि मिस्र के बादशाह को एक परेशान करने वाला ख़्वाब दिखलाया जिसकी ताबीर से उसके दरबार के इल्म व फ़न वाले आ़जिज़ हुए, इस तरह ज़रूरतमन्द होकर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ रुजू करना पड़ा। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

दसवाँ मसला इसमें अच्छे अख़्लाक़ की तालीम है कि रिहा होने वाले क़ैदी ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का इतना काम न किया कि बादशाह से ज़िक्र कर देता और उनको मज़ीद सात साल क़ैद की मुसीबत में गुज़ारने पड़े। अब सात साल के बाद जब वह अपना मतलब यानी ख़्वाब की ताबीर पूछने हाज़िर हुआ तो आ़म इनसानी आ़दत का तक़ाज़ा था कि उसको मलामत करते, उस पर ख़फ़ा होते कि तुझसे इतना काम न हो सका, मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने पैग़म्बराना अख़्लाक़ का इज़हार फ़रमाया कि उसको मलामत तो क्या करते उस क़िस्से का ज़िक्र तक भी नहीं किया। (तफ़सीर इब्ने कसीर व क़ुर्तुबी)

ग्यारहवाँ मसला इसमें यह है कि जिस तरह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उम्मत के उलेमा का यह फ़रीज़ा है कि वे लोगों की आख़िरत दुरुस्त करने की फ़िक्र करें, उनको ऐसे कामों से बचायें जो आख़िरत में अ़ज़ाब का सबब बनेंगे, इसी तरह उनको मुसलमानों के आर्थिक हालात पर नज़र रखना चाहिये कि वे परेशान न हों, जैसे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने इस मौक़े पर सिर्फ़ ख़्वाब की ताबीर बता देने को काफ़ी नहीं समझा बल्कि यह अ़क़्लमन्दी और ख़ैरख़्वाही वाला मश्विरा भी दिया कि पैदावार के तमाम गेहूँ को गुच्छों और बालों के अन्दर रहने दें और ज़रूरत के मुताबिक़ साफ़ करके ग़ल्ला निकालें, ताकि आख़िर सालों तक ख़राब न हो जाये।

बारहवाँ मसला यह है कि मुक़्तदा (जिसकी लोग पैरवी करते हों ऐसे) आ़लिम को इसकी भी फ़िक्र रहनी चाहिये कि उसकी तरफ़ से लोगों में बदगुमानी पैदा न हो, अगरचे वह बदगुमानी सरासर ग़लत ही क्यों न हो, उससे भी बचने की तदबीर करनी चाहिये, क्योंकि बदगुमानी चाहे किसी जहालत या कम-समझी ही के सबब से हो बहरहाल उनके दावत व तालीम के काम में ख़लल डालने वाली होती है, लोगों में उसकी बात का वज़न नहीं रहता। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि तोहमत के मौक़ों से भी बचो। यानी ऐसे हालात और मौक़ों से भी अपने आपको बचाओ जिनमें किसी को आप पर तोहमत लगाने का मौक़ा हाथ आये, यह हुक्म तो आ़म मुसलमानों के लिये है ख़ास लोगों और उलेमा को इसमें दोहरी एहतियात लाज़िम है, ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो तमाम ऐबों और गुनाहों से मासूम हैं आपने भी इसका एहतिमाम फ़रमाया। एक मर्तबा आपकी पाक

बीवियों में से एक बीवी आपके साथ मदीने की एक गली से गुज़र रही थीं, कोई सहाबी सामने आ गये तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दूर ही से बतला दिया कि मेरे साथ फ़ुलाँ बीवी हैं, यह इसलिये किया कि कहीं देखने वाले को किसी अजनबी औरत का शुब्हा न हो जाये। इस मौक़े पर हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जेल से रिहाई और शाही दावत का पैग़ाम मिलने के बावजूद रिहाई से पहले इसकी कोशिश फ़रमाई कि लोगों के शुब्हात दूर हो जायें।

तेरहवाँ मसला इसमें यह है कि जिस शख़्स के हुक़ूक़ किसी के ज़िम्मे हों और इस हैसियत से वह सम्मान का हक़दार हो, अगर हालात की मजबूरी में उसके ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई करनी भी पड़े तो उसमें भी जहाँ तक हो सके हुक़ूक़ व एहतिराम की रियायत करना शराफ़त का तक़ाज़ा है, जैसे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपनी बराअत के लिये मामले की तहक़ीक़ात के वास्ते अ़ज़ीज़ या उसकी बीवी का नाम लेने के बजाय उन औरतों का ज़िक्र किया जिन्होंने हाथ काट लिये थे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) क्योंकि मक़सद इससे भी हासिल हो सकता था।

चौदहवाँ मसला ऊँचे और अच्छे अख़्लाक़ की तालीम है, कि जिन लोगों के हाथों सात साल या बारह साल जेलख़ाने की तकलीफ़ बरदाश्त करनी पड़ी थी, रिहाई के वक़्त उनसे कोई इन्तिक़ाम (बदला) लेना तो क्या इसको भी बरदाश्त न किया कि उनको कोई मामूली-सी तकलीफ़ उनसे पहुँचे। जैसे आयतः

لِيَعْلَمَ أَنِّي لَمْ أَخُنْهُ بِالْغَيْبِ

(ताकि अ़ज़ीज़ को अच्छी तरह यक़ीन हो जाये कि मैंने उसकी ग़ैर-मौजूदगी में उसकी आबरू में कोई दाग़ नहीं लगाया) में इसका एहतिमाम किया गया है।

पारा (13) व मा उबर्रिउ

وَمَآ أُبَرِّئُ نَفْسِىٓ ۚ إِنَّ ٱلنَّفْسَ لَأَمَّارَةٌۢ بِٱلسُّوٓءِ إِلَّا مَا رَحِمَ رَبِّىٓ ۚ إِنَّ رَبِّى غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَقَالَ
ٱلْمَلِكُ ٱئْتُونِى بِهِۦٓ أَسْتَخْلِصْهُ لِنَفْسِى ۖ فَلَمَّا كَلَّمَهُۥ قَالَ إِنَّكَ ٱلْيَوْمَ لَدَيْنَا مَكِينٌ أَمِينٌ ۝ قَالَ
ٱجْعَلْنِى عَلَىٰ خَزَآئِنِ ٱلْأَرْضِ ۖ إِنِّى حَفِيظٌ عَلِيمٌ ۝ وَكَذَٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوسُفَ فِى ٱلْأَرْضِ يَتَبَوَّأُ مِنْهَا
حَيْثُ يَشَآءُ ۚ نُصِيبُ بِرَحْمَتِنَا مَن نَّشَآءُ ۖ وَلَا نُضِيعُ أَجْرَ ٱلْمُحْسِنِينَ ۝ وَلَأَجْرُ ٱلْءَاخِرَةِ خَيْرٌ لِّلَّذِينَ
ءَامَنُوا۟ وَكَانُوا۟ يَتَّقُونَ ۝

व मा उबर्रिउ नफ़्सी इन्नन्नफ़्-स ल-अम्मारतुम्-बिस्सू-इ इल्ला मा रहि-म रब्बी, इन्-न रब्बी ग़फ़ूरुर्रहीम (53)	और मैं पाक नहीं कहता अपने जी को, बेशक जी तो सिखलाता है बुराई मगर जो रहम कर दिया मेरे रब ने, बेशक मेरा रब बख़्शने वाला है मेहरबान। (53) और कहा

व कालल्-मलिकुअ्तूनी बिही अस्तख़्लिस्हु लिनफ़्सी फ़-लम्मा कल्ल-महू का-ल इन्नकल्-यौ-म लदैना मकीनुन् अमीन (54) कालज्अ़ल्नी अ़ला ख़ज़ाइनिल्-अर्ज़ि इन्नी हफ़ीज़ुन् अ़लीम (55) व कज़ालि-क मक्कन्ना लियूसु-फ़ फ़िल्अर्ज़ि य-तबव्वउ मिन्हा हैसु यशा-उ, नुसीबु बिरह्मतिना मन्-नशा-उ व ला नुज़ीअ़ु अज्रल्-मुह्सिनीन (56) व ल-अज्रुल्-आख़िरति ख़ैरुल्-लिल्लज़ी-न आमनू व कानू यत्तक़ून (57) ✿	बादशाह ने ले आओ उसको मेरे पास मैं ख़ालिस कर रखूँ उसको अपने काम में, फिर जब बातचीत की उससे कहा वाक़ई तूने आज से हमारे पास जगह पाई मोतबर होकर। (54) यूसुफ़ ने कहा मुझको मुक़र्रर कर मुल्क के ख़ज़ानों पर मैं निगहबान हूँ ख़ूब जानने वाला। (55) और यूँ क़ुदरत दी हमने यूसुफ़ को उस ज़मीन में, जगह पकड़ता था उसमें जहाँ चाहता, पहुँचा देते हैं हम रहमत अपनी जिसको चाहें, और ज़ाया नहीं करते हम बदला भलाई वालों का। (56) और सवाब आख़िरत का बेहतर है उनको जो ईमान लाये और रहे परहेज़गारी में। (57) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और मैं अपने नफ़्स को (भी ज़ात के एतिबार से) बरी (और पाक) नहीं बतलाता (क्योंकि) नफ़्स तो (हर एक का) बुरी ही बात बतलाता है, सिवाय उस (नफ़्स) के जिस पर मेरा रब रहम करे (और उसमें बुराई का माद्दा न रखे जैसा कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के नफ़्स होते हैं, मुत्मइन्ना, जिनमें यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का नफ़्स भी दाख़िल है। मतलब का ख़ुलासा यह हुआ कि मेरी पाकीज़गी और बचाव मेरे नफ़्स का ज़ाती कमाल नहीं बल्कि अल्लाह की रहमत व इनायत का असर है इसलिये मेरा नफ़्स बुराई का हुक्म नहीं करता, वरना जैसे औरों के नफ़्स हैं वैसा ही मेरा होता), बेशक मेरा रब बड़ी मग़फ़िरत वाला, बड़ी रहमत वाला है (यानी ऊपर जो नफ़्स की दो क़िस्में मालूम हुईं- **अम्मारा** और **मुत्मइन्ना**, सो अम्मारा अगर तौबा कर ले तो उसकी मग़फ़िरत फ़रमाई जाती है और तौबा के दर्जे में वह **लव्वामा** कहलाता है, और जो मुत्मइन्ना है उसका कमाल इसकी ज़ात के साथ जुड़ा हुआ नहीं बल्कि अल्लाह की इनायत्त वह रहमत का असर है, पस अम्मारा के लव्वामा होने पर अल्लाह के ग़फ़ूर होने की सिफ़त का ज़हूर होता है और मुत्मइन्ना में उसके रहीम होने की सिफ़त का।

यह कुल मज़मून हुआ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तक़रीर का, बाक़ी रहा यह मामला कि

अपने आपको पाक-साफ़ करने की यह सूरत रिहाई के बाद भी तो मुम्किन थी फिर रिहाई पर इसको आगे क्यों रखा, इसकी वजह यह हो सकती है कि जितना यक़ीन इस तरतीब में हो सकता है इसके ख़िलाफ़ में नहीं हो सकता, क्योंकि इस सूरत में जो इख़्तियार की गयी है आपकी बराअत पूरी तरह स्पष्ट और बेग़ुबार हो जाती है इसलिये कि बादशाह और अज़ीज़ समझ सकते हैं कि जब बिना अपनी पोज़ीशन साफ़ किये यह रिहा होना नहीं चाहते हालाँकि ऐसी हालत में रिहाई क़ैदी की इन्तिहाई तमन्ना होती है, तो मालूम होता है कि इनको अपनी पाकीज़गी और बेक़सूर होने का पूरा यक़ीन है, इसलिये इसके साबित हो जाने का पूरा इत्मीनान है, और ज़ाहिर है कि ऐसा कामिल यक़ीन बरी ही को हो सकता है न कि मुलव्वस को, ये सारी बातें बादशाह ने सुनीं)।

और (यह सुनकर उस) बादशाह ने कहा कि उनको मेरे पास लाओ, मैं उनको ख़ास अपने (काम के) लिये रखूँगा (और अज़ीज़ से उनको ले लूँगा कि उसके मातहत न रहेंगे। चुनाँचे लोग उनको बादशाह के पास लाये)। पस जब उसने यानी बादशाह ने उनसे बातें कीं (और बातों से ज़्यादा उनकी ख़ूबी व कमाल और क़ाबलियत ज़ाहिर हुई) तो बादशाह ने (उनसे) कहा कि तुम हमारे नज़दीक आज (से) बड़े इज़्ज़त व सम्मान वाले और मोतबर हो (इसके बाद उस ख़्वाब की ताबीर का ज़िक्र आया और बादशाह ने कहा कि इतने बड़े सूखे के अकाल का एहतिमाम बड़ा भारी काम है, यह इन्तिज़ाम किसके सुपुर्द किया जाये)। यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि मुल्की ख़ज़ानों पर मुझको लगा दो, मैं (उनकी) हिफ़ाज़त (भी) रखूँगा और (आमद व ख़र्च के इन्तिज़ाम और उसके हिसाब किताब के तरीक़े से) ख़ूब वाक़िफ़ (भी) हूँ (चुनाँचे बजाय इसके कि उनको कोई ख़ास पद देता अपनी तरह हर क़िस्म के पूरे अधिकार दे दिये, गोया हक़ीक़त में बादशाह यही हो गये अगरचे नाम का वह बादशाह रहा, और यह अ़ज़ीज़ के ओ़हदे से मशहूर हो गये। चुनाँचे इरशाद है)। और हमने ऐसे (अ़जीब) अन्दाज़ पर यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) को (मिस्र) मुल्क में इख़्तियार वाला बना दिया कि उसमें जहाँ चाहें रहें-सहें (जैसा कि बादशाहों को आज़ादी होती है, यानी या तो वह वक़्त था कि कुएँ में बन्दी थे फिर अ़ज़ीज़ की मातहती में बन्द रहे और या आज यह ख़ुदमुख़्तारी और आज़ादी इनायत हुई। बात यह है कि) हम जिस पर चाहें अपनी इनायत मुतवज्जह कर दें और हम नेकी करने वालों का अज्र ज़ाया नहीं करते (यानी दुनिया में भी नेकी का अज्र मिलता है कि अच्छी ज़िन्दगी अ़ता फ़रमाते हैं चाहे मालदार बनाकर जैसा कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के लिये था और चाहे बग़ैर मालदारी के क़नाअ़त व रज़ा अ़ता करके जिससे सुकून व ऐश मयस्सर होता है, यह तो आज दुनिया में हुआ) और आख़िरत का अज्र कहीं ज़्यादा बढ़कर है, ईमान और परहेज़गारी वालों के लिये।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अपनी पाकबाज़ी बयान करना दुरुस्त नहीं, मगर ख़ास हालात में

इससे पहली आयत में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का यह क़ौल ज़िक्र हुआ था कि जो

इल्ज़ाम मुझ पर लगाया गया था उसकी सफ़ाई और मामले की मुकम्मल तहक़ीक़ से पहले क़ैद से रिहाई को इसलिये पसन्द नहीं करता कि अ़ज़ीज़ और बादशाहे मिस्र को पूरा यक़ीन हो जाये कि मैंने कोई ख़ियानत नहीं की थी बल्कि इल्ज़ाम सरासर झूठा था। इसमें चूँकि अपनी बराअत और पाकबाज़ी का ज़िक्र एक मजबूरी की और लाज़िमी ज़रूरत से हो रहा था जो बज़ाहिर अपने नफ़्स को पाक-साफ़ बताने का इज़हार है और यह अल्लाह तआ़ला के नज़दीक पसन्द नहीं, जैसा कि क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يُزَكُّوْنَ اَنْفُسَهُمْ بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّىْ مَنْ يَّشَآءُ.

"यानी क्या आपने नहीं देखा उन लोगों को जो अपने आपको पाकीज़ा कहते हैं, बल्कि अल्लाह तआ़ला ही का हक़ है कि वह जिसको चाहें पाक क़रार दें।" और सूरः नजम में भी इसी मज़मून की एक आयत है:

فَلَا تُزَكُّوْٓا اَنْفُسَكُمْ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنِ اتَّقٰى○

"यानी तुम अपने नफ़्स की पाकी के दावेदार न बनो अल्लाह तआ़ला ही ख़ूब जानते हैं कि कौन वाक़ई परहेज़गार व मुत्तक़ी है।"

इसलिये उक्त आयत में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपनी बराअत के इज़हार के साथ ही इस हक़ीक़त का भी इज़हार कर दिया कि मेरा यह कहना कुछ अपने तक़्वे और पाकबाज़ी को जतलाने के लिये नहीं बल्कि हक़ीक़त यह है कि हर इनसान का नफ़्स जिसका ख़मीर चार तत्वों आग, पानी, मिट्टी और हवा से बना है वह तो अपनी फ़ितरत से हर शख़्स को बुरे ही कामों की तरफ़ माईल करता रहता है, सिवाय उसके जिस पर मेरा रब अपनी रहमत फ़रमाकर उसके नफ़्स को बुरे तक़ाज़ों से पाक कर दे, जैसे अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के नफ़्स होते हैं, और ऐसे ही नफ़्सों को क़ुरआन में **नफ़्स-ए-मुत्मइन्ना** का लक़ब दिया गया है। हासिल यह है कि ऐसी ज़बरदस्त परीक्षा के वक़्त मेरा गुनाह से बच जाना यह कोई मेरा ज़ाती कमाल नहीं था बल्कि अल्लाह तआ़ला ही की रहमत और मदद का नतीजा था, अगर वह मेरे नफ़्स से घटिया इच्छाओं को न निकाल देते तो मैं भी ऐसा ही हो जाता जैसे आ़म इनसान होते हैं कि नफ़्सानी इच्छाओं के आगे ख़ुद को झुका देते हैं।

कुछ रिवायतों में है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने यह जुमला इसलिये फ़रमाया कि एक क़िस्म का ख़्याल तो बहरहाल उनके दिल में भी पैदा हो ही गया था, अगरचे वह ग़ैर-इख़्तियारी वस्वसे की हद तक था, मगर नुबुव्वत की शान के सामने वह भी एक चूक और बुराई ही थी इसलिये इसका इज़हार फ़रमाया कि मैं अपने नफ़्स को भी बिल्कुल बरी और पाक नहीं समझता।

इनसानी नफ़्स की तीन हालतें

इस आयत में यह मसला ध्यान देने के क़ाबिल है कि इसमें हर इनसानी नफ़्स को 'अम्मारतुम् बिस्सू-इ' यानी बुरे कामों का हुक्म करने वाला फ़रमाया है, जैसा कि एक हदीस में है

कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से एक सवाल फ़रमाया कि ऐसे साथी के बारे में तुम्हारा क्या ख़्याल है जिसका हाल यह हो कि अगर तुम उसका सम्मान व इ़ज़्ज़त करो, खाना खिलाओ, कपड़े पहनाओ तो वह तुम्हें बला और मुसीबत में डाल दे, और अगर तुम उसकी तौहीन करो भूखा नंगा रखो तो तुम्हारे साथ भलाई का मामला करे? सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! उससे ज़्यादा बुरा तो दुनिया में कोई साथी हो ही नहीं सकता। आपने फ़रमाया क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कि तुम्हारा नफ़्स जो तुम्हारे पहलू में है वह ऐसा ही साथी है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और एक हदीस में है कि तुम्हारा सबसे बड़ा दुश्मन ख़ुद तुम्हारा नफ़्स है जो तुम्हें बुरे कामों में मुब्तला करके ज़लील व रुस्वा भी करता है और तरह-तरह की मुसीबतों में भी गिरफ़्तार कर देता है।

बहरहाल उक्त आयत और हदीस की इन रिवायतों से मालूम होता है कि इनसानी नफ़्स बुरे कामों का तक़ाज़ा करता है लेकिन सूरः क़ियामत में इसी इनसानी नफ़्स को लव्वामा का लक़ब देकर इसको यह इ़ज़्ज़त बख़्शी है कि रब्बुल-इ़ज़्ज़त ने इसकी क़सम खाई है:

لَآ اُقْسِمُ بِيَوْمِ الْقِيٰمَةِ وَلَآ اُقْسِمُ بِالنَّفْسِ اللَّوَّامَةِ۝

और सूरः वल्-फ़ज्रि में इसी इनसानी नफ़्स को नफ़्से-मुत्मइन्ना का लक़ब देकर जन्नत की ख़ुशख़बरी दी है। फ़रमायाः

يٰٓاَيَّتُهَا النَّفْسُ الْمُطْمَئِنَّةُ۝ ارْجِعِيْٓ اِلٰى رَبِّكِ

इस तरह इनसानी नफ़्स को एक जगह 'अम्मारतुम् बिस्सू-इ' कहा गया, दूसरी जगह लव्वामा, तीसरी जगह मुत्मइन्ना।

वज़ाहत इसकी यह है कि हर इनसानी नफ़्स अपनी ज़ात में तो 'अम्मारतुम् बिस्सू-इ' यानी बुरे कामों का तक़ाज़ा करने वाला है, लेकिन जब इनसान ख़ुदा व आख़िरत के ख़ौफ़ से उसके तक़ाज़े को पूरा न करे तो उसका नफ़्स लव्वामा बन जाता है, यानी बुरे कामों पर मलामत करने वाला और उनसे तौबा करने वाला। जैसे उम्मत के आ़म नेक हज़रात के नफ़्स हैं। और जब कोई इनसान नफ़्स के ख़िलाफ़ मुजाहदा (कोशिश व संघर्ष) करते-करते अपने नफ़्स को इस हालत में पहुँचा दे कि बुरे कामों का तक़ाज़ा ही उसमें न रहे, तो वह नफ़्से-मुत्मइन्ना हो जाता है। उम्मत के नेक हज़रात को यह हाल मुजाहदे और कड़ी मेहनत से हासिल हो सकता है और फिर भी इस हालत का हमेशा क़ायम रहना यक़ीनी नहीं होता, और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को ख़ुद-ब-ख़ुद अल्लाह की अ़ता से ऐसा ही नफ़्से-मुत्मइन्ना बग़ैर किसी पहले मुजाहदे के नसीब होता है और वह हमेशा उसी हालत पर रहता है। इस तरह नफ़्स की तीन हालतों के एतिबार से तीन तरह के काम उसकी तरफ़ मन्सूब किये गये हैं।

اِنَّ رَبِّىْ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ۝

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि मेरा रब बड़ा मग़फ़िरत करने वाला और रहमत करने

वाला है। लफ़्ज़ **ग़फ़ूर** में इस तरफ़ इशारा है कि **नफ़्से-अम्मारा** जब अपनी ख़ता पर शर्मिन्दा होकर तौबा करे और **नफ़्से-लव्वामा** बन जाये तो अल्लाह तआ़ला की मग़फ़िरत बड़ी है, वह माफ़ फ़रमा देंगे। और लफ़्ज़ **रहीम** में यह इशारा पाया जाता है कि जिस शख़्स को **नफ़्से-मुत्मइन्ना** नसीब हो वह भी अल्लाह की रहमत ही का नतीजा है।

وَقَالَ الْمَلِكُ ائْتُوْنِىْ .... الخ

यानी मिस्र के बादशाह ने जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के फ़रमाने के मुताबिक़ औरतों से वाक़िए की तहक़ीक़ फ़रमाई और ज़ुलैख़ा और दूसरी सब औरतों ने असल हक़ीक़त का इक़रार कर लिया तो बादशाह ने हुक्म दिया कि यूसुफ़ को मेरे पास लाया जाये ताकि मैं उनको अपना ख़ास सलाहकार बना लूँ। हुक्म के मुताबिक़ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को सम्मान के साथ जेलख़ाने से दरबार में लाया गया और आपसी गुफ़्तगू से यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की सलाहियतों का पूरा अन्दाज़ा हो गया तो बादशाह ने कहा कि आप आज हमारे नज़दीक बड़े इज़्ज़त वाले और एतिबार वाले हैं।

इमाम बग़वी रह. ने नक़ल किया है कि जब बादशाह का क़ासिद जेल में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास दोबारा पहुँचा और बादशाह की दावत पहुँचाई तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने सब जेल वालों के लिये दुआ़ की और ग़ुस्ल करके नये कपड़े पहने, जब शाही दरबार पर पहुँचे तो यह दुआ़ कीः

حَسْبِىْ رَبِّىْ مِنْ دُنْيَاىَ وَحَسْبِىْ رَبِّىْ مِنْ خَلْقِهٖ عَزَّ جَارُهٗ وَجَلَّ ثَنَآئُهٗ وَلَآ اِلٰهَ غَيْرُهٗ.

"यानी मेरी दुनिया के लिये मेरा रब मुझे काफ़ी है और सारी मख़्लूक़ के बदले मेरा रब मेरे लिये काफ़ी है, जो उसकी पनाह में आ गया वह बिल्कुल महफ़ूज़ है। और उसकी बड़ी तारीफ़ है और उसके सिवा कोई माबूद नहीं।"

जब दरबार में पहुँचे तो फिर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू होकर इसी तरह दुआ़ की और अ़रबी भाषा में सलाम कियाः

اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ

अस्सलामु अ़लैकुम् व रह्मतुल्लाहि

और बादशाह के लिये दुआ़ इबरानी भाषा में की। बादशाह अगरचे बहुत सी भाषायें जानता था मगर अ़रबी और इबरानी भाषाओं से वाक़िफ़ नहीं था, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने बतलाया कि सलाम तो अ़रबी भाषा में किया गया है और दुआ़ इबरानी भाषा में।

इस रिवायत में यह भी है कि बादशाह ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से विभिन्न भाषाओं में बातें कीं, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उसको उसी भाषा में जवाब दिया और अ़रबी और इबरानी की दो भाषायें अलग से सुनाईं जिनसे बादशाह वाक़िफ़ न था। इस वाक़िए ने बादशाह के दिल में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की हद से ज़्यादा इज़्ज़त व वक़अ़त क़ायम कर दी।

फिर मिस्र के बादशाह ने कहा कि मैं चाहता हूँ कि मैं आपसे अपने ख़्वाब की ताबीर

अप्रत्यक्ष रूप से सुन लूँ। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने पहले उसके ख़्वाब की ऐसी तफ़सीलात बतलाईं जो अब तक बादशाह ने भी किसी से ज़िक्र नहीं की थीं, फिर ताबीर बतलाई।

मिस्र के बादशाह ने कहा कि मुझे ताबीर से ज़्यादा इस पर हैरत है कि ये तफ़सीलात आपको कैसे मालूम हुईं, उसके बाद बादशाह ने मश्चिरा तलब किया कि अब मुझे क्या करना चाहिये तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मश्चिरा दिया कि पहले सात साल जिनमें ख़ूब बारिशें होने वाली हैं उनमें आप ज़्यादा से ज़्यादा काश्त कराकर ग़ल्ला उगाने का इन्तिज़ाम करें और सब लोगों को हिदायत करें कि अपनी-अपनी ज़मीनों में ज़्यादा से ज़्यादा काश्त करें, और जितना ग़ल्ला हासिल हो उसमें से पाँचवाँ हिस्सा अपने पास भण्डार करते रहें।

इस तरह मिस्र वालों के पास क़हत (सूखे) के सात साल के लिये भी ज़ख़ीरा जमा हो जायेगा और आप उनकी तरफ़ से बेफ़िक्र होंगे, हुकूमत को जिस क़द्र ग़ल्ला सरकारी टैक्सों या सरकारी ज़मीनों से हासिल हो उसको बाहरी लोगों के लिये जमा रखें, क्योंकि यह क़हत दूर दराज़ तक फैलेगा, बाहर के लोग उस वक़्त आपके मोहताज होंगे, उस वक़्त आप ग़ल्ला देकर अल्लाह की मख़्लूक़ की इमदाद करें और मामूली क़ीमत भी रखेंगे तो सरकारी ख़ज़ाने में इतना माल जमा हो जायेगा जो उससे पहले कभी नहीं हुआ। मिस्र का बादशाह इस मश्चिरे से बहुत ख़ुश और संतुष्ट हुआ मगर कहने लगा कि इस ज़बरदस्त योजना का इन्तिज़ाम कैसे हो और कौन करे, इस पर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

اِجْعَلْنِىْ عَلٰى خَزَآئِنِ الْاَرْضِ اِنِّىْ حَفِيْظٌ عَلِيْمٌ۝

यानी मुल्क के ख़ज़ाने (जिनमें ज़मीन की पैदावार भी शामिल है) आप मेरे सुपुर्द कर दें मैं उनकी हिफ़ाज़त भी पूरी कर सकता हूँ और ख़र्च करने के मौक़ों और ख़र्च की मात्रा के अन्दाज़े से भी पूरा वाक़िफ़ हूँ। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

इन दो लफ़्ज़ों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उन तमाम गुणों को जता दिया जो एक वित्त मंत्री में होने चाहियें। क्योंकि पहली ज़रूरत तो ख़ज़ाने के अमीन के लिये इसकी है कि वह सरकारी मालों को ज़ाया न होने दे बल्कि पूरी हिफ़ाज़त से जमा करे, फिर ग़ैर-मुस्तहिक़ (अपात्र) लोगों और ग़लत क़िस्म के मौक़ों में ख़र्च न होने दे। और दूसरी ज़रूरत इसकी है कि जहाँ जिस क़द्र ख़र्च करना ज़रूरी है उसमें न कोताही करे और न ज़रूरत की मात्रा से ज़्यादा ख़र्च करे। लफ़्ज़ "हफ़ीज़" पहली ज़रूरत की पूरी ज़मानत है और लफ़्ज़ "अ़लीम" दूसरी ज़रूरत की।

मिस्र का बादशाह अगरचे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कमालात का मुरीद और उनकी दियानत (ईमानदारी) और कामिल अ़क़्ल का पूरा मोतक़िद हो चुका था मगर फ़ौरी तौर पर वित्त मंत्रालय का पद उनको सुपुर्द न किया बल्कि एक साल तक एक सम्मानित मेहमान की तरह रखा।

साल भर पूरा होने के बाद न सिर्फ़ वित्त मंत्रालय बल्कि हुकूमत के पूरे मामलात उनके सुपुर्द कर दिये, शायद यह मक़सद था कि जब तक घर में रखकर उनके अख़्लाक़ व आ़दतों का पूरा तजुर्बा न हो जाये इतना बड़ा ओहदा सुपुर्द करना मुनासिब नहीं, जैसा कि शैख़ सअ़दी

शीराज़ी रह. ने फ़रमाया हैः

चू यूसुफ़ कसे दर सलाह व तमीज़ ۞ ब-यक साल बायद कि गर्दद अ़ज़ीज़

कुछ मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि उसी ज़माने में ज़ुलैख़ा के शौहर क़तफ़ीर का इन्तिक़ाल हो गया तो मिस्र के बादशाह ने हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से उनकी शादी कर दी। उस वक़्त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उनसे फ़रमाया कि यह सूरत उससे बेहतर नहीं है जो तुम चाहती थीं, ज़ुलैख़ा ने अपनी ग़लती को मानने के साथ अपना उज़्र बयान किया।

अल्लाह तआ़ला जल्ल शानुहू ने बड़ी इज़्ज़त व शान के साथ उनकी मुराद पूरी फ़रमाई और ऐश व आराम के साथ ज़िन्दगी गुज़री। तारीख़ी रिवायतों के मुताबिक़ दो लड़के भी पैदा हुए जिनका नाम इफ़राईम और मंशा था।

कुछ रिवायतों में है कि अल्लाह तआ़ला ने शादी के बाद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दिल में ज़ुलैख़ा की मुहब्बत उससे ज़्यादा पैदा कर दी थी जितनी ज़ुलैख़ा को यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से थी, यहाँ तक कि एक मर्तबा हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने उनसे शिकायत की कि इसकी क्या वजह है कि तुम मुझसे अब उतनी मुहब्बत नहीं रखतीं जितनी पहले थी। ज़ुलैख़ा ने अ़र्ज़ किया कि आपके माध्यम से मुझे अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत हासिल हो गई, उसके सामने सब ताल्लुक़ात और ख़्यालात कमज़ोर हो गये। यह वाक़िआ़ कुछ दूसरी तफ़सीलात के साथ तफ़सीरे क़ुर्तुबी और मज़हरी में बयान हुआ है।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से के तहत में आम इनसानों की बेहतरी व कामयाबी के लिये जो बहुत-सी हिदायतें और तालीमात आई हैं उनमें कुछ का ज़िक्र पहले हो चुका है, ऊपर बयान हुई आयतों में मज़ीद मसाईल और हिदायतें इस प्रकार हैं:

पहला मसलाः हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़ौल 'व मा उबर्रिउ नफ़्सी.......' (यानी आयत नम्बर 53) में नेक और परहेज़गार बन्दों के लिये यह हिदायत है कि जब उनको किसी गुनाह से बचने की तौफ़ीक़ हो जाये तो उस पर नाज़ न करें, और उसके मुक़ाबले में गुनाहगारों को हक़ीर न समझें, बल्कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इरशाद के मुताबिक़ इस बात को अपने दिल में जमायें कि यह हमारा कोई ज़ाती कमाल नहीं बल्कि अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल है कि उसने नफ़्से अम्मारा को हम पर ग़ालिब नहीं आने दिया, वरना हर इनसान का नफ़्स उसको तबई तौर पर बुरे ही कामों की तरफ़ खींचता है।

हुकूमत का कोई पद ख़ुद तलब करना जायज़ नहीं, मगर चन्द शर्तों के साथ इजाज़त है

दूसरा मसलाः 'इज्अ़ल्नी अ़ला ख़ज़ाइनिल् अर्ज़ि' (यानी आयत नम्बर 55) से यह मालूम हुआ कि किसी सरकारी ओ़हदे और पद को तलब करना ख़ास सूरतों में जायज़ है, जैसे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मुल्क के माली मामलात का इन्तिज़ाम और ज़िम्मेदारी तलब फ़रमाई।

मगर इसमें यह तफ़सील है कि जब किसी ख़ास ओहदे के मुताल्लिक़ यह मालूम हो कि कोई दूसरा आदमी उसका अच्छा इन्तिज़ाम नहीं कर सकेगा और अपने बारे में यह अन्दाज़ा हो कि ओहदे के काम को अच्छा अन्जाम दे सकेगा और किसी गुनाह में मुब्तला होने का ख़तरा न हो, ऐसी हालत में ओहदे का खुद तलब कर लेना भी जायज़ है, बशर्तेकि माल व रुतबे की मुहब्बत उसका सबब न हो, बल्कि अल्लाह की मख़्लूक़ की सही ख़िदमत और इन्साफ़ के साथ उनके हुक़ूक़ पहुँचाना मक़सद हो, जैसे हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के सामने सिर्फ़ यही मक़सद था और जहाँ यह सूरत न हो तो हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हुकूमत का कोई ओहदा खुद तलब करने से मना फ़रमाया है, और जिसने खुद किसी ओहदे की दरख़्वास्त की उसको ओहदा नहीं दिया।

सही मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन समुरा रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि कभी कोई सरदारी (यानी पद वग़ैरह) तलब न करो, क्योंकि तुमने खुद सवाल करके सरदारी का ओहदा हासिल भी कर लिया तो अल्लाह तआ़ला की ताईद नहीं होगी, जिसके ज़रिये तुम ग़लती और ख़ताओं से बच सको, और अगर बग़ैर दरख़्वास्त और तलब के तुम्हें कोई ओहदा मिल गया तो अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ताईद व मदद होगी जिसकी वजह से तुम उस ओहदे के पूरे हुक़ूक़ अदा कर सकोगे।

इसी तरह सही मुस्लिम की एक दूसरी हदीस में है कि एक शख़्स ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किसी ओहदे की दरख़्वास्त की तो आपने फ़रमायाः

اِنَّالَنْ نَّسْتَعْمِلَ عَلٰی عَمَلِنَامَنْ اَرَادَهٗ.

"यानी हम अपना ओहदा किसी ऐसे शख़्स को नहीं दिया करते जो खुद उसका इच्छुक व तलबगार हो।"

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का ओहदा तलब करना ख़ास हिक्मत पर आधारित था

मगर हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का मामला इससे भिन्न और अलग है क्योंकि वह जानते थे कि मिस्र का बादशाह काफ़िर है, उसका अ़मल भी ऐसा ही है और मुल्क पर एक तूफ़ानी सूखा पड़ने वाला है, उस वक़्त खुदग़र्ज़ लोग अल्लाह की आ़म मख़्लूक़ पर रहम न खायेंगे और लाखों इनसान भूख से मर जायेंगे, कोई दूसरा आदमी ऐसा मौजूद न था जो ग़रीबों के हुक़ूक़ में इन्साफ़ कर सके, इसलिये खुद इस ओहदे की दरख़्वास्त की, अगरचे इसके साथ कुछ अपने कमालात का इज़हार भी ज़रूरत के सबब करना पड़ा, ताकि बादशाह मुत्मईन होकर ओहदा उनको सुपुर्द कर दे।

अगर आज भी कोई शख़्स यह महसूस करे कि हुकूमत का कोई ओहदा ऐसा है जिसके फ़राईज़ को दूसरा आदमी सही तौर पर अन्जाम देने वाला मौजूद नहीं और खुद उसको यह

अन्दाज़ा है कि मैं सही अन्जाम दे सकता हूँ तो उसके लिये जायज़ है बल्कि वाजिब है कि उस ओहदे की दरख़्वास्त करे, मगर अपने रुतबे व माल के लिये नहीं बल्कि पब्लिक की ख़िदमत के लिये जिसका ताल्लुक़ दिल की नीयत और इरादे से है जो अल्लाह तआ़ला पर पूरी तरह स्पष्ट है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हज़राते ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन का ख़िलाफ़त की ज़िम्मेदारी उठा लेना इसी वजह से था कि वे जानते थे कि कोई दूसरा इस वक़्त इस ज़िम्मेदारी को सही अन्जाम न दे सकेगा। सहाबा किराम हज़रत अ़ली और हज़रत मुआ़विया व हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और अ़ब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह के जो मतभेद पेश आये वे सब इसी पर आधारित थे कि उनमें से हर एक यह ख़्याल करता था कि इस वक़्त ख़िलाफ़त की ज़िम्मेदारी को मैं अपने मुक़ाबिल से ज़्यादा समझदारी व ताक़त के साथ पेश कर सकूँगा, रुतबे व माल की तलब किसी का असली मक़सद न था।

क्या किसी काफ़िर हुकूमत में ओहदा क़ुबूल करना जायज़ है

तीसरा मसला यह है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मिस्र के बादशाह की नौकरी क़ुबूल फ़रमाई हालाँकि वह काफ़िर था जिससे मालूम हुआ कि काफ़िर या फ़ासिक़ हुक्मराँ की हुकूमत का ओहदा क़ुबूल करना ख़ास हालात में जायज़ है।

लेकिन इमाम जस्सास रह. ने आयते करीमाः

فَلَنْ اَكُوْنَ ظَهِيْرًا لِّلْمُجْرِمِيْنَ○

के तहत लिखा है कि इस आयत के एतिबार से ज़ालिमों काफ़िरों की मदद व सहयोग करना जायज़ नहीं, और ज़ाहिर है कि उनकी हुकूमत का ओहदा क़ुबूल करना उनके काम में शरीक होना और मदद करना है, और ऐसी मदद को क़ुरआने करीम की बहुत-सी आयतों में हराम क़रार दिया गया है।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जो इस नौकरी को न सिर्फ़ क़ुबूल फ़रमाया बल्कि दरख़्वास्त करके हासिल किया, इसकी ख़ास वजह इमामे तफ़सीर मुजाहिद रह. ने तो यह क़रार दी है कि मिस्र का बादशाह उस वक़्त मुसलमान हो चुका था मगर चूँकि क़ुरआन व सुन्नत में इसकी कोई दलील मौजूद नहीं इसलिये आ़म मुफ़स्सिरीन ने इसकी वजह यह क़रार दी है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम मिस्र के बादशाह के मामले से यह मालूम कर चुके थे कि वह उनके काम में दख़ल न देगा, और किसी ख़िलाफ़े शरीअ़त क़ानून जारी करने पर उनको मजबूर न करेगा बल्कि उनको मुकम्मल इख़्तियारात देगा जिसके ज़रिये वह अपनी मर्ज़ी से और सही क़ानून पर अ़मल कर सकेंगे। ऐसे मुकम्मल इख़्तियार के साथ कि किसी ख़िलाफ़े शरीअ़त क़ानून पर मजबूर न हो

कोई काफ़िर या ज़ालिम की नौकरी इख़्तियार कर ले अगरचे उस काफ़िर ज़ालिम के साथ सहयोग करने की बुराई फिर भी मौजूद है मगर जिन हालात में उसको सत्ता व हुकूमत से हटाना क़ुदरत में न हो और उसका ओहदा क़ुबूल न करने की सूरत में अल्लाह की मख़्लूक़ के हुक़ूक़ बरबाद होने या ज़ुल्म व ज़्यादती का प्रबल अन्देशा हो तो मजबूरी में इतने सहयोग की गुन्जाईश हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के अ़मल से साबित हो जाती है जिसमें ख़ुद किसी ख़िलाफ़े शरीअ़त काम को न करना पड़े, क्योंकि दर हक़ीक़त यह उसके गुनाह में मदद नहीं होगी अगरचे एक दूर के सबब के तौर पर इससे भी उसकी मदद और सहयोग का फ़ायदा हासिल हो जाये। सहयोग व मदद के ऐसे दूर के असबाब के बारे में उक्त हालात में शरई तौर पर गुन्जाईश है जिसकी तफ़सील दीनी मसाईल के माहिर उलेमा ने बयान फ़रमाई है। पहले बुज़ुर्गों, सहाबा व ताबिईन में बहुत से हज़रात का ऐसे ही हालात में ज़ालिम व जाबिर हुक्मरानों का ओहदा क़ुबूल कर लेना साबित है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

अ़ल्लामा मावरदी ने शरई सियासत के बारे में अपनी किताब में नक़ल किया है कि कुछ हज़रात ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस अ़मल की बिना पर काफ़िर और ज़ालिम हुक्मरानों का ओहदा क़ुबूल करना इस शर्त के साथ जायज़ रखा है कि ख़ुद उसको कोई काम ख़िलाफ़े शरीअ़त न करना पड़े। और कुछ हज़रात ने इस शर्त के साथ भी इसको इसलिये जायज़ नहीं रखा कि इसमें भी ज़ालिमों को मज़बूत करना और उनकी ताईद होती है। ये हज़रात हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के अ़मल की विभिन्न वुजूहात बयान करते हैं जिनका हासिल यह है कि यह अ़मल हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की ज़ात या उनकी शरीअ़त के साथ मख़्सूस था, अब दूसरों के लिये जायज़ नहीं। मगर उलेमा व फ़ुक़हा की अक्सरियत ने पहले ही क़ौल को इख़्तियार फ़रमाकर जायज़ क़रार दे दिया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

तफ़सीर **बहर-ए-मुहीत** में है कि जहाँ यह मालूम हो कि उलेमा और नेक लोग अगर यह ओहदा क़ुबूल न करेंगे तो लोगों के हुक़ूक़ ज़ाया हो जायेंगे, इन्साफ़ न हो सकेगा, वहाँ ऐसा ओहदा क़ुबूल कर लेना जायज़ बल्कि सवाब है, बशर्तेकि उस ओहदे में ख़ुद उसको शरीअ़त के ख़िलाफ़ बातों के करने पर मजबूरी पेश न आये।

चौथा मसला हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़ौल 'इन्नी हफ़ीज़ुन अ़लीम' से यह साबित हुआ कि ज़रूरत के मौक़े पर अपने किसी कमाल या ख़ूबी व श्रेष्ठता का ज़िक्र कर देना अपनी पाकबाज़ी जतलाने में दाख़िल नहीं, जिसकी क़ुरआने करीम में मनाही आई है, बशर्तेकि उसका ज़िक्र करना तकब्बुर व ग़ुरूर और अपनी शान जतलाने और फ़ख़्र की वजह से न हो।

وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوْسُفَ فِى الْاَرْضِ يَتَبَوَّاُ مِنْهَا حَيْثُ يَشَآءُ نُصِيْبُ بِرَحْمَتِنَا مَنْ نَّشَآءُ وَلَا نُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ ○

"यानी जिस तरह हमने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को मिस्र के बादशाह के दरबार में इज़्ज़त व रुतबा अ़ता किया उसी तरह हमने उनको पूरे मुल्के मिस्र पर पूरा इख़्तियार व हुकूमत अ़ता कर दी कि उसकी ज़मीन में जिस क़द्र चाहें अहकाम जारी करें, हम जिसको चाहते हैं अपनी रहमत

व नेमत से यूँ ही नवाज़ा करते हैं और हम नेक काम करने वालों का अज्र (बदला) कभी ज़ाया नहीं करते।"

तफ़सील इसकी यह है कि मिस्र के बादशाह ने एक साल तजुर्बा करने के बाद दरबार में एक जश्न मनाया जिसमें तमाम हुकूमत के काम करने वालों और सम्मानित लोगों को जमा किया और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के सर पर ताज रखकर उस मज्लिस में लाया गया और सिर्फ़ ख़ज़ाने की ज़िम्मेदारी नहीं बल्कि हुकूमत के तमाम मामलात को अमलन् उनके सुपुर्द करके ख़ुद तन्हाई इख़्तियार कर ली। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी वग़ैरह)

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने हुकूमत के मामलात को ऐसा संभाला कि किसी को कोई शिकायत बाक़ी न रही, सारा मुल्क आपका मुरीद हो गया और पूरे मुल्क में अमन व ख़ुशहाली आम हो गई, ख़ुद हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को भी हुकूमत की इस तमाम ज़िम्मेदारी में कोई दुश्वारी या रंज व तकलीफ़ पेश न आई।

इमामे तफ़सीर मुजाहिद रह. ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के सामने चूँकि इस सारे रुतबे व जलाल से सिर्फ़ अल्लाह तआला के अहकाम को फैलाना और उसके दीन को क़ायम करना था, इसलिये वह किसी वक़्त भी इससे ग़ाफ़िल न हुए कि मिस्र के बादशाह को इस्लाम व ईमान की दावत दें, यहाँ तक कि निरन्तर दावत व कोशिश का यह नतीजा ज़ाहिर हुआ कि मिस्र का बादशाह भी मुसलमान हो गया।

وَلَاَجْرُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَكَانُوْا يَتَّقُوْنَ○

यानी "और आख़िरत का अज्र व सवाब इस दुनिया की नेमत से कहीं ज़्यादा बढ़ा हुआ है, उन लोगों के लिये जो मोमिन हुए और जिन्होंने तक़वा और परहेज़गारी इख़्तियार की।"

मतलब यह है कि दुनिया की दौलत व बादशाही और मिसाली हुकूमत तो अता हुई ही थी इसके साथ आख़िरत के बुलन्द दर्जे भी उनके लिये तैयार हैं। इसके साथ यह भी बतला दिया कि ये दुनिया व आख़िरत के दर्जे यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की विशेषता नहीं बल्कि आम ऐलान है हर उस शख़्स के लिये जो ईमान, तक़वा और परहेज़गारी इख़्तियार कर ले।

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने अपनी हुकूमत के ज़माने में अवाम को राहत पहुँचाने के वे काम किये जिनकी नज़ीर मिलना मुश्किल है। जब ख़्वाब की ताबीर के मुताबिक़ सात साल ख़ुशहाली के गुज़र गये और क़हत (सूखा पड़ना) शुरू हुआ तो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने पेट भरकर खाना छोड़ दिया, लोगों ने कहा कि मुल्के मिस्र के सारे ख़ज़ाने आपके क़ब्ज़े में हैं और आप भूखे रहते हैं? तो फ़रमाया कि मैं यह इसलिये करता हूँ ताकि आम लोगों की भूख का एहसास मेरे दिल से ग़ायब न हो, और शाही बावर्चियों को भी हुक्म दे दिया कि दिन में सिर्फ़ एक मर्तबा दोपहर को खाना पका करे, ताकि शाही महल के सब अफ़राद भी अवाम की भूख में कुछ हिस्सा ले सकें।

وَجَآءَ اِخْوَةُ يُوْسُفَ فَدَخَلُوْا عَلَيْهِ فَعَرَفَهُمْ وَهُمْ لَهٗ مُنْكِرُوْنَ ۝ وَلَمَّا جَهَّزَهُمْ بِجَهَازِهِمْ قَالَ ائْتُوْنِيْ بِاَخٍ لَّكُمْ مِّنْ اَبِيْكُمْ ۚ اَلَا تَرَوْنَ اَنِّيْٓ اُوْفِي الْكَيْلَ وَاَنَا خَيْرُ الْمُنْزِلِيْنَ ۝ فَاِنْ لَّمْ تَاْتُوْنِيْ بِهٖ فَلَا كَيْلَ لَكُمْ عِنْدِيْ وَلَا تَقْرَبُوْنِ ۝ قَالُوْا سَنُرَاوِدُ عَنْهُ اَبَاهُ وَاِنَّا لَفٰعِلُوْنَ ۝ وَقَالَ لِفِتْيٰنِهِ اجْعَلُوْا بِضَاعَتَهُمْ فِيْ رِحَالِهِمْ لَعَلَّهُمْ يَعْرِفُوْنَهَآ اِذَا انْقَلَبُوْٓا اِلٰٓى اَهْلِهِمْ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ ۝

व जा-अ इख़्वतु यूसु-फ़ फ़-द-ख़लू अ़लैहि फ़-अ़-र-फ़हुम् व हुम् लहू मुन्किरून (58) व लम्मा जह्ह-ज़हुम् बि-जहाज़िहिम् क़ालअ्तूनी बि-अख़िल्-लकुम् मिन् अबीकुम् अला तरौ-न अन्नी ऊफ़िल्-कै-ल व अ-न ख़ैरुल्-मुन्ज़िलीन (59) फ़-इल्लम् तअ्तूनी बिही फ़ला कै-ल लकुम् अ़िन्दी व ला तक़रबून (60) क़ालू सनुराविदु अ़न्हु अबाहु व इन्ना लफ़ाअ़िलून (61) व क़ा-ल लिफ़ित्यानिहिज्-अ़लू बिज़ा-अ़-तहुम् फ़ी रिहालिहिम् लअ़ल्लहुम् यअ्रिफ़ूनहा इज़न्क़-लबू इला अह्लिहिम् लअ़ल्लहुम् यर्जिअ़ून (62)	और आये भाई यूसुफ़ के फिर दाख़िल हुए उसके पास तो उसने पहचान लिया उनको और वे नहीं पहचानते। (58) और जब तैयार कर दिया उनके लिये उनका असबाब, कहा ले आईयो मेरे पास एक भाई जो तुम्हारा है बाप की तरफ़ से, तुम नहीं देखते हो कि मैं पूरा देता हूँ नाप और अच्छी तरह उतारता हूँ मेहमानों को। (59) फिर अगर उसको न लाये मेरे पास तो तुम्हारे लिये भरती नहीं मेरे नज़दीक और मेरे पास न आईयो। (60) बोले हम ख़्वाहिश करेंगे उसके बाप से और हमको यह काम करना है। (61) और कह दिया अपने ख़ादिमों से कि रख दो उनकी पूँजी उनके असबाब (सामान) में शायद उसको पहचानें जब फिरकर पहुँचें अपने घर, शायद वे फिर आ जायें। (62)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ग़र्ज़ कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने इख़्तियार वाला होकर ग़ल्ला काश्त कराना और जमा कराना शुरू किया और सात साल के बाद क़हत शुरू हुआ, यहाँ तक कि दूर-दूर से यह ख़बर सुनकर कि मिस्र में हुकूमत की तरफ़ से ग़ल्ला फ़रोख़्त होता है समूह के समूह लोग आना शुरू

हुए) और (किनआन में भी अकाल पड़ा तो) यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) के भाई (भी सिवाय बिनयामीन के ग़ल्ला लेने मिस्र में) आये, फिर उनके (यानी यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के) पास पहुँचे, सो हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने (तो) उनको पहचान लिया और उन्होंने यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को नहीं पहचाना (क्योंकि उनमें बदलाव कम हुआ था और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को उनके आने का ख़्याल और पूरा गुमान व अन्दाज़ा भी था, फिर नये आने वाले पूछ भी लेते हैं कि आप कौन हैं? कहाँ से आये हैं? और पहचान के लोगों को थोड़े-से पते से अक्सर पहचान भी लेते हैं, बख़िलाफ़ यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के कि उनमें चूँकि जुदा होने के वक़्त बहुत कम-उम्र थे) बदलाव भी ज़्यादा हो गया था और उनको यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के होने का गुमान व शुब्हा भी न था। फिर हाकिमों से कोई पूछ भी नहीं सकता कि आप कौन हैं? यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का मामूल था कि हर शख़्स को उसकी ज़रूरत के मुताबिक़ ग़ल्ला फ़रोख़्त करते थे, चुनाँचे उनको भी जब प्रति व्यक्ति एक-एक ऊँट ग़ल्ला क़ीमत देकर मिलने लगा तो इन्होंने कहा कि हमारा एक बाप-शरीक भाई और है, उसको हमारे बाप ने इस वजह से कि उनका एक बेटा गुम हो गया था अपनी तसल्ली के लिये अपने पास रख लिया है, उसके हिस्से का भी एक ऊँट ग़ल्ला ज़्यादा दे दिया जाये। यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि यह क़ानून के ख़िलाफ़ है, अगर उसका हिस्सा लेना है तो वह खुद आकर ले जाये। ग़र्ज़ कि उनके हिस्से का ग़ल्ला उनको दिलवा दिया)। और जब उन्होंने यानी यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने उनके (ग़ल्ले का) सामान तैयार कर दिया तो (चलते वक़्त) फ़रमा दिया कि (अगर यह ग़ल्ला ख़र्च करके अब के आने का इरादा करो तो) अपने बाप-शरीक भाई को भी (साथ) लाना (ताकि उसका हिस्सा भी दिया जा सके), तुम देखते नहीं हो कि मैं पूरा नाप कर देता हूँ, और मैं सबसे ज़्यादा मेहमान नवाज़ी करता हूँ (पस अगर तुम्हारा वह भाई आयेगा उसको भी पूरा हिस्सा दूँगा और उसकी ख़ूब ख़ातिर मुदारात करूँगा जैसा कि तुमने अपने साथ देखा। ग़र्ज़ कि आने में तो नफ़ा ही नफ़ा है)। और अगर तुम (दोबारा आये और) उसको मेरे पास न लाये तो (मैं समझूँगा कि तुम मुझको धोखा देकर ग़ल्ला ज़्यादा लेना चाहते थे तो इसकी सज़ा में) न मेरे पास तुम्हारे नाम का ग़ल्ला होगा और न तुम मेरे पास आना (पस उसके न लाने में यह नुक़सान होगा कि तुम्हारे हिस्से का ग़ल्ला भी ख़त्म हो जायेगा)।

वे बोले (देखिए) हम (अपनी कोशिश भर तो) उसके बाप से उसको माँगेंगे और हम इस काम को (यानी कोशिश और दरख़्वास्त को) ज़रूर करेंगे (आगे बाप के इख़्तियार में है)। और (जब वहाँ से बिल्कुल चलने लगे तो) यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने अपने नौकरों से कह दिया कि इनकी जमा-पूँजी (जिसके बदले में इन्होंने ग़ल्ला मोल लिया है) इन (ही) के सामान में (छुपाकर) रख दो, ताकि जब घर जाएँ तो उसको (जब वह सामान में से निकले) पहचानें, शायद (यह एहसान व करम देखकर) फिर दोबारा आएँ (चूँकि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को उनका दोबारा आना और उनके भाई का लाना मन्ज़ूर था इसलिये किसी तरह से इसकी तदबीर की, पहले वादा किया कि अगर उसको लाओगे तो उसका भी हिस्सा मिलेगा, दूसरे धमकी सुना दी कि अगर न

लाओगे तो अपना हिस्सा भी न पाओगे, तीसरे दाम जो कि नक़द के अलावा कोई और चीज़ थी वापस कर दी, दो ख़्याल से एक यह कि इससे एहसान व करम पर निगाह करके फिर आयेंगे दूसरे इसलिये कि शायद इनके पास और दाम न हों इसलिये फिर न आ सकें। और जब यह दाम होंगे तो इन्हीं को लेकर फिर आ सकते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को मिस्र देश का कामिल इख़्तिदार (सत्ता) अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल से हासिल हो जाने का बयान था, उपर्युक्त आयतों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों का ग़ल्ला लेने के लिये मिस्र आना बयान हुआ है, और यह भी ज़िमनी तौर पर आ गया कि दस भाई मिस्र आये थे, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सगे छोटे भाई साथ न थे।

बीच के क़िस्से की तफ़सील क़ुरआन ने इसलिये नहीं दी कि पिछले वाक़िआत से वह अपने आप समझ में आ जाती है।

इमाम इब्ने कसीर रह. ने तफ़सीर के इमामों में से सुद्दी और मुहम्मद बिन इस्हाक़ वग़ैरह के हवाले से जो तफ़सील बयान की है वह अगर तारीख़ी और इस्राईली रिवायतों से भी ली गई हो तो इसलिये कुछ क़ाबिले क़ुबूल है कि क़ुरआनी बयान में ख़ुद उसकी तरफ़ इशारे मौजूद हैं।

इन हज़रात ने फ़रमाया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को मिस्र देश का मंत्री पद हासिल होने के बाद ख़्वाब की ताबीर के मुताबिक़ शुरू के सात साल पूरे मुल्क के लिये बड़ी ख़ुशहाली और बेहतरी के आये, पैदावार ख़ूब हुई और ज़्यादा से ज़्यादा हासिल करने और जमा करने की कोशिश की। उसके बाद इसी ख़्वाब का दूसरा हिस्सा सामने आया कि बहुत ज़बरदस्त सूखा पड़ा, जो सात साल तक जारी रहा। उस वक़्त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम चूँकि पहले से बाख़बर थे कि यह क़हत (सूखा) सात साल तक लगातार रहेगा इसलिये क़हत के शुरू के साल में मुल्क के मौजूदा ज़ख़ीरे को बड़ी एहतियात से जमा कर लिया और पूरी हिफ़ाज़त से रखा।

मिस्र के बाशिन्दों के पास उनकी ज़रूरत की मात्रा में पहले से जमा करा दिया गया, अब क़हत आ़म हुआ और आस-पास से लोग सिमट कर मिस्र आने लगे तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने एक ख़ास अन्दाज़ से ग़ल्ला फ़रोख़्त करना शुरू किया कि एक शख़्स को एक ऊँट के बोझ से ज़्यादा न देते थे, जिसकी मात्रा इमाम क़ुर्तुबी ने एक वसक़ यानी साठ साअ़ लिखी है जो हमारे वज़न के एतिबार से दो सौ दस सैर यानी पाँच मन से कुछ ज़्यादा होती है।

और इस काम का इतना ध्यान रखा कि ग़ल्ले की फ़रोख़्त ख़ुद अपनी निगरानी में कराते थे। यह क़हत (सूखा और अकाल) सिर्फ़ मुल्के मिस्र ही में न था बल्कि दूर-दूर के इलाक़ों तक फैला हुआ था। किनआ़न का इलाक़ा जो फ़िलिस्तीन का एक हिस्सा है और हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का वतन है और आज भी उसका शहर ख़लील के नाम से एक रौनक़दार शहर की सूरत में मौजूद है, यहीं हज़रत इब्राहीम व इस्हाक़ और याक़ूब व यूसुफ़ अ़लैहिमुस्सलाम के मज़ार परिचित हैं, यह ख़ित्ता भी उस क़हत की मार से न बचा, और याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के

ख़ानदान में बेचैनी पैदा हुई। साथ ही साथ मिस्र की यह शोहरत आ़म हो गई थी कि वहाँ ग़ल्ला क़ीमत के बदले मिल जाता है। हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम तक भी यह ख़बर पहुँची कि मिस्र का बादशाह कोई नेक रहमदिल आदमी है वह अल्लाह की तमाम मख़्लूक़ को ग़ल्ला देता है, तो अपने बेटों से कहा कि तुम भी जाओ मिस्र से ग़ल्ला लेकर आओ।

और चूँकि यह भी मालूम हो चुका था कि एक आदमी को एक ऊँट के भार से ज़्यादा ग़ल्ला नहीं दिया जाता, इसलिये सब ही बेटों को भेजने की तजवीज़ हुई, मगर सबसे छोटे भाई बिनयामीन जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सगे भाई थे, और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के गुम हो जाने के बाद से हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की मुहब्बत व शफ़क़त उनके साथ ज़्यादा हो गई थी, उनको अपने पास अपनी तसल्ली और ख़बरगीरी के लिये रोक लिया।

दस भाई किनआ़न से सफ़र करके मिस्र पहुँचे। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम शाही लिबास में शाहाना तख़्त व ताज के मालिक होने की हैसियत में सामने आये, और भाईयों ने उनको बचपन की सात साल की उम्र में क़ाफ़िले वालों के हाथ बेचा था जिसको उस वक़्त हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत के मुताबिक़ 40 साल हो चुके थे। (क़ुर्तुबी, मज़हरी)

ज़ाहिर है कि इतने अ़रसे में इनसान का हुलिया भी कुछ का कुछ हो जाता है, और उनका यह वहम व ख़्याल भी न हो सकता था कि जिस बच्चे को ग़ुलाम बनाकर बेचा गया था वह किसी मुल्क का वज़ीर या बादशाह हो सकता है, इसलिये भाईयों ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को न पहचाना मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने पहचान लिया। उक्त आयत में:

فَعَرَفَهُمْ وَهُمْ لَهُ مُنْكِرُوْنَ○

के यही मायने हैं। अ़रबी भाषा में इनकार के असली मायने अजनबी समझने ही के आते हैं, इसलिये मुन्किरीन के मायने नावाक़िफ़ और अन्जान के हो गये।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पहचान लेने के बारे में इमाम इब्ने कसीर ने सुद्दी के हवाले से यह भी बयान किया है कि जब ये दस भाई दरबार में पहुँचे तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मज़ीद इत्मीनान के लिये इनसे ऐसे सवालात किये जैसे संदिग्ध लोगों से किये जाते हैं ताकि वे पूरी हक़ीक़त वाज़ेह करके बयान कर दें। अव्वल तो इनसे पूछा कि आप लोग मिस्र के रहने वाले नहीं आपकी भाषा भी इबरानी है, आप यहाँ कैसे पहुँचे? इन्होंने अ़र्ज़ किया कि हमारे मुल्क में बहुत ज़बरदस्त सूखा पड़ा है, और हमने आपकी तारीफ़ सुनी इसलिये ग़ल्ला हासिल करने के लिये आये हैं। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फिर पूछा कि हमें यह कैसे इत्मीनान हो कि तुम सच कह रहे हो, और तुम किसी दुश्मन के जासूस नहीं हो? तो इन सब भाईयों ने अ़र्ज़ किया कि मआ़ज़ल्लाह हम से ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता, हम तो अल्लाह के रसूल याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के बेटे हैं जो किनआ़न में रहते हैं।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का इन सवालात से मक़सद ही यह था कि ये ज़रा खुलकर पूरे वाक़िआ़त बयान कर दें, तब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मालूम किया कि तुम्हारे वालिद के और भी

कोई औलाद तुम्हारे अ़लावा है? तो इन्होंने बतलाया कि हम बारह भाई थे जिनमें से एक छोटा भाई जंगल में गुम हो गया और हमारे वालिद को सबसे ज़्यादा उसी की मुहब्बत थी, उसके बाद से उसके सगे छोटे भाई के साथ ज़्यादा मुहब्बत करने लगे और इसी लिये इस वक़्त भी उसको सफ़र में हमारे साथ नहीं भेजा ताकि वह उसकी तसल्ली का सबब बने।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ये सब बातें सुनकर हुक्म दिया कि इनको शाही मेहमान की हैसियत से ठहरायें और नियम के मुताबिक़ ग़ल्ला दें।

ग़ल्ले के बंटवारे में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने यह उसूल बनाया था कि एक मर्तबा में किसी एक शख़्स को एक ऊँट के बोझ से ज़्यादा न देते, मगर जब हिसाब के मुवाफ़िक़ वह ख़त्म हो जाये तो फिर दोबारा दे देते थे।

भाईयों से सारी तफ़सीलात मालूम कर लेने के बाद उनके दिल में यह ख़्याल आना तबई चीज़ थी कि ये फिर दोबारा आयें, इसके लिये एक इन्तिज़ाम तो ज़ाहिर में यह किया कि ख़ुद इन भाईयों से कहाः

ائْتُونِي بِأَخٍ لَّكُم مِّنْ أَبِيكُمْ أَلَا تَرَوْنَ أَنِّي أُوفِي الْكَيْلَ وَأَنَا خَيْرُ الْمُنزِلِينَ ۝

"यानी जब तुम दोबारा आओ तो अपने सौतेले भाई (बाप शरीक) को भी ले आना, तुम देख रहे हो कि मैं किस तरह पूरा-पूरा ग़ल्ला देता हूँ और किस तरह मेहमान-नवाज़ी करता हूँ।"

और फिर एक धमकी भी दे दी किः

فَإِن لَّمْ تَأْتُونِي بِهِ فَلَا كَيْلَ لَكُمْ عِندِي وَلَا تَقْرَبُونِ ۝

"यानी अगर तुम अपने उस भाई को साथ न लाये तो फिर मैं तुम में से किसी को भी ग़ल्ला न दूँगा (क्योंकि मैं समझूँगा कि तुमने मुझसे झूठ बोला है) इस तरह तुम मेरे पास न आना।

दूसरा इन्तिज़ाम यह किया कि जो नक़दी या ज़ेवर वग़ैरह उन भाईयों ने ग़ल्ले की क़ीमत के तौर पर अदा किया था उसके बारे में कारिन्दों को हुक्म दे दिया कि उसको छुपाकर उन्हीं के सामान में इस तरह बाँध दो कि उनको इस वक़्त पता न लगे ताकि आईन्दा जब ये घर पहुँचकर सामान खोलें और अपनी नक़दी व ज़ेवर भी इनको वापस मिले तो फिर ये दोबारा ग़ल्ला लेने के लिये आ सकें।

इमाम इब्ने कसीर ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस अ़मल में कई एहतिमाल (संभावनायें) बयान किये हैं- एक यह कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को यह ख़्याल आया कि शायद इनके पास इस नक़दी व ज़ेवर वग़ैरह के सिवा और कुछ मौजूद न हो तो फिर दोबारा ग़ल्ला लेने के लिये नहीं आ सकेंगे। दूसरे यह भी हो सकता है कि अपने वालिद और भाईयों से खाने की क़ीमत लेना गवारा न हो, इसलिये शाही ख़ज़ाने में अपने पास से जमा कर दिया, उनकी रक़म उनको वापस कर दी। और एक संभावना यह भी है कि वह जानते थे कि जब उनका सामान उनके पास वापस पहुँच जायेगा और वालिद साहिब को इल्म होगा तो वह अल्लाह के रसूल हैं, इस वापस

हुए सामान को मिस्री ख़ज़ाने की अमानत समझकर ज़रूर वापस भेजेंगे, इसलिये भाईयों का दोबारा आना और यक़ीनी हो जायेगा।

बहरहाल! यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ये सब इन्तिज़ामात इसलिये किये कि आईन्दा भी भाईयों के आने का सिलसिला जारी रहे और छोटे सगे भाई से मुलाक़ात भी हो जाये।

मसाईल व फ़ायदे

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस वाक़िए से इसका जवाज़ (जायज़ व दुरुस्त होना) मालूम हुआ कि जब किसी मुल्क में आर्थिक हालात ऐसे ख़राब हो जायें कि अगर हुकूमत व्यवस्था क़ायम न करे तो बहुत-से लोग अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरतों से मेहरूम हो जायें तो हुकूमत ऐसी चीज़ों को अपने कन्ट्रोल और क़ब्ज़े में ले सकती है और ग़ल्ले की मुनासिब क़ीमत मुक़र्रर कर सकती है, क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा ने इसको स्पष्ट तौर पर बयान फ़रमाया है।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का अपने हालात से वालिद को इत्तिला न देना अल्लाह के हुक्म से था

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस वाक़िए में एक बात इन्तिहाई हैरत-अंगेज़ है कि एक तरफ़ तो उनके वालिद माजिद पैग़म्बरे ख़ुदा याक़ूब अ़लैहिस्सलाम उनकी जुदाई से इतने प्रभावित कि रोते-रोते अंधे हो गये, और दूसरी तरफ़ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जो ख़ुद भी नबी व रसूल हैं बाप से फ़ितरी और तबई मुहब्बत के अ़लावा उनके हुक़ूक़ से भी पूरी तरह बाख़बर हैं, लेकिन चालीस साल के लम्बे ज़माने में एक मर्तबा भी कभी यह ख़्याल न आया कि मेरे वालिद मेरी जुदाई से बेचैन हैं, अपनी ख़ैरियत की ख़बर किसी माध्यम से उन तक पहुँचवा दूँ। ख़बर पहुँचवा देना तो उस हालत में भी कुछ मुश्किल न था जब वह ग़ुलामी की सूरत में मिस्र पहुँच गये थे, फिर अ़ज़ीज़े मिस्र के घर में तो हर तरह की आज़ादी और सहूलत के सामान भी थे, उस वक़्त किसी ज़रिये से घर तक ख़त या ख़बर पहुँचवा देना कुछ मुश्किल न था, इसी तरह जेल की ज़िन्दगी में दुनिया जानती है कि सब ख़बरें इधर की उधर पहुँचती ही रहती हैं, ख़ुसूसन जब अल्लाह तआ़ला ने इज़्ज़त के साथ जेल से रिहा फ़रमाया और मुल्क मिस्र की हुकूमत हाथ में आई उस वक़्त तो ख़ुद चलकर वालिद की ख़िदमत में हाज़िर होना सबसे पहला काम होना चाहिये था, और यह किसी वजह से मस्लेहत के ख़िलाफ़ होता तो कम से कम क़ासिद भेजकर वालिद को मुत्मईन कर देना तो मामूली बात थी।

लेकिन पैग़म्बरे ख़ुदा हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से कहीं मन्क़ूल नहीं कि इसका इरादा भी किया हो, और ख़ुद क्या इरादा करते जब भाई ग़ल्ला लेने के लिये आये तो उनको भी असल वाक़िए के इज़हार के बग़ैर रुख़्सत कर दिया।

इन तमाम हालात की किसी मामूली से इनसान से भी कल्पना नहीं की जा सकती, अल्लाह

के मक़बूल व ख़ास रसूल से यह सूरत कैसे बरदाश्त हुई?

इस हैरत-अंगेज़ (आश्चर्यजनक) ख़ामोशी का हमेशा यही जवाब दिल में आया करता था कि ग़ालिबन अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल हिक्मत के मातहत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ख़ुद के ज़ाहिर करने से रोक दिया होगा, तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इसकी वज़ाहत मिल गई कि अल्लाह तआ़ला ने वही के ज़रिये हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को रोक दिया था कि अपने घर अपने मुताल्लिक़ कोई ख़बर न भेजें।

अल्लाह तआ़ला की हिक्मतों को वही जानते हैं इनसान उनका क्या इहाता कर सकता है, कभी कोई चीज़ किसी की समझ में भी आ जाती है, यहाँ बज़ाहिर इसकी असल हिक्मत उस परीक्षा को पूरा करना था जो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की ली जा रही थी और यही वजह थी कि इस वाक़िए के शुरू ही में जब याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को यह अन्दाज़ा हो चुका था कि यूसुफ़ को भेड़िये ने नहीं खाया बल्कि भाईयों की कोई शरारत है, तो इसका तबई तक़ाज़ा यह था कि उसी वक़्त जगह पर पहुँचते, तहक़ीक़ करते, मगर अल्लाह तआ़ला ने उनका ध्यान इस तरफ़ न जाने दिया और फिर मुद्दतों के बाद उन्होंने भाईयों से यह भी फ़रमाया कि "जाओ यूसुफ़ और उसके भाई को तलाश करो।" जब अल्लाह तआ़ला कोई काम करना चाहते हैं तो उसके सब असबाब इसी तरह जमा फ़रमा देते हैं।

فَلَمَّا رَجَعُوٓا إِلَىٰٓ أَبِيهِمْ قَالُوا يَٰٓأَبَانَا مُنِعَ مِنَّا ٱلْكَيْلُ فَأَرْسِلْ
مَعَنَآ أَخَانَا نَكْتَلْ وَإِنَّا لَهُۥ لَحَٰفِظُونَ ۝ قَالَ هَلْ ءَامَنُكُمْ عَلَيْهِ إِلَّا كَمَآ أَمِنتُكُمْ عَلَىٰٓ أَخِيهِ مِن قَبْلُ ۖ
فَٱللَّهُ خَيْرٌ حَٰفِظًا ۖ وَهُوَ أَرْحَمُ ٱلرَّٰحِمِينَ ۝ وَلَمَّا فَتَحُوا مَتَٰعَهُمْ وَجَدُوا بِضَٰعَتَهُمْ رُدَّتْ إِلَيْهِمْ ۖ
قَالُوا يَٰٓأَبَانَا مَا نَبْغِى ۖ هَٰذِهِۦ بِضَٰعَتُنَا رُدَّتْ إِلَيْنَا ۖ وَنَمِيرُ أَهْلَنَا وَنَحْفَظُ أَخَانَا وَنَزْدَادُ كَيْلَ بَعِيرٍ ۖ
ذَٰلِكَ كَيْلٌ يَسِيرٌ ۝ قَالَ لَنْ أُرْسِلَهُۥ مَعَكُمْ حَتَّىٰ تُؤْتُونِ مَوْثِقًا مِّنَ ٱللَّهِ لَتَأْتُنَّنِى بِهِۦٓ إِلَّآ أَن
يُحَاطَ بِكُمْ ۖ فَلَمَّآ ءَاتَوْهُ مَوْثِقَهُمْ قَالَ ٱللَّهُ عَلَىٰ مَا نَقُولُ وَكِيلٌ ۝

फ़-लम्मा र-जअ़ू इला अबीहिम् क़ालू या अबाना मुनि-अ़ मिन्नल्कैलु फ़-अर्सिल् म-अ़ना अख़ाना नक्तल् व इन्ना लहू लहाफ़िज़ून (63) क़ा-ल हल् आमनुकुम् अ़लैहि इल्ला कमा अमिन्तुकुम् अ़ला अख़ीहि मिन् क़ब्लु,	फिर जब पहुँचे अपने बाप के पास बोले ऐ बाप! रोक दी गई हमसे भरती, सो भेज हमारे साथ हमारे भाई को कि भरती ले आयें और हम उसके निगहबान हैं। (63) कहा मैं क्या एतिबार करूँ तुम्हारा उस पर मगर वही जैसा एतिबार किया था उसके भाई पर इससे पहले, सो अल्लाह

फ़ल्लाहु ख़ैरुन् हाफ़िज़ंव्-व हु-व अर्हमुर्-राहिमीन (64) व लम्मा फ़-तहू मता-अ़हुम् व-जदू बिज़ाअ़-तहुम् रुद्दत् इलैहिम्, क़ालू या अबाना मा नब्ग़ी, हाज़िही बिज़ा-अ़तुना रुद्दत् इलैना व नमीरु अह्लना व नह्फ़ज़ु अख़ाना व नज़्दादु कै-ल बअ़ीरिन्, ज़ालि-क कैलुंय्यसीर (65) क़ा-ल लन् उर्सि-लहू म-अ़कुम् हत्ता तुअ्तूनि मौसिक़म्-मिनल्लाहि ल-तअ्तुन्ननी बिही इल्ला अंय्युहा-त बिकुम् फ़-लम्मा आतौहु मौसि-क़हुम् क़ालल्लाहु अ़ला मा नक़ूलु वकील (66)

बेहतर है निगहबान और वही है सब मेहरबानों से मेहरबान। (64) और जब खोली अपनी बंधी हुई चीज़ पाई अपनी पूँजी कि फेर दी गई उनकी तरफ़, बोले ऐ बाप! हमको और क्या चाहिए यह पूँजी हमारी फेर दी है हमको, अब जायें तो रसद लायें हम अपने घर को और ख़बरदारी करेंगे अपने भाई की, और ज़्यादा लें भरती एक ऊँट की, वह भरती आसान है। (65) कहा हरगिज़ न भेजूँगा इसको तुम्हारे साथ यहाँ तक कि दो मुझको अ़हद ख़ुदा का कि यक़ीनन पहुँचा दोगे इसको मेरे पास मगर यह कि घेरे जाओ तुम सब, फिर जब दिया उसको सब ने अ़हद, बोला अल्लाह हमारी बातों पर निगहबान है। (66)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ग़र्ज़ कि जब लौटकर अपने बाप (याक़ूब अ़लैहिस्सलाम) के पास पहुँचे, कहने लगे ऐ अब्बा! (हमारी बड़ी ख़ातिर हुई और ग़ल्ला भी मिला मगर बिनयामीन का हिस्सा नहीं मिला, बल्कि बिना बिनयामीन को साथ ले जाये हुए आईन्दा भी) हमारे लिये (क़तई तौर पर) ग़ल्ले की बन्दिश कर दी गई, सो (इस सूरत में ज़रूरी है कि) आप हमारे भाई (बिनयामीन) को हमारे साथ भेज दीजिये ताकि (दोबारा ग़ल्ला लाने से जो बात रुकावट है वह ख़त्म हो जाये और) हम (फिर) ग़ल्ला ला सकें। और (अगर इनके भेजने से आपको कोई अन्देशा ही रुकावट है तो उसके बारे में यह अ़र्ज़ है कि) हम इनकी पूरी हिफ़ाज़त रखेंगे। याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि बस (रहने दो) मैं इसके बारे में भी तुम्हारा वैसा ही एतिबार करता हूँ जैसा इससे पहले इसके भाई (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम) के बारे में तुम्हारा एतिबार कर चुका हूँ (यानी दिल तो मेरा गवाही देता नहीं कि मगर तुम कहते हो कि बिना इसके गये आईन्दा ग़ल्ला न मिलेगा, और आ़दतन ज़िन्दगी का मदार ग़ल्ले ही पर है और जान बचाना फ़र्ज़ है) सो (ख़ैर अगर ले ही जाओगे तो) अल्लाह (के सुपुर्द, वही) सबसे बढ़कर निगहबान है (मेरी निगहबानी से क्या होता

है) और वह सब मेहरबानों से ज़्यादा मेहरबान है (मेरी मुहब्बत और शफ़क़त से क्या होता है)।

और (इस गुफ़्तगू के बाद) जब उन्होंने अपना सामान खोला तो (उसमें) उनको उनकी जमा-पूँजी (भी) मिली कि उन्हीं को वापस कर दी गई। कहने लगे कि ऐ अब्बा! (लीजिये) और हमको क्या चाहिए, यह हमारी जमा-पूँजी भी तो हम ही को लौटा दी गई है (ऐसा करीम बादशाह, और इससे ज़्यादा किस इनायत का इन्तिज़ार करें, यह इनायत काफ़ी है, इसका तक़ाज़ा भी यही है कि ऐसे करीम बादशाह के पास फिर जायें और वह निर्भर है भाई के साथ ले जाने पर, इसलिये इजाज़त ही दे दीजिये इनको साथ ले जायेंगे) और अपने घर वालों के वास्ते (और) रसद लाएँगे और अपने भाई की ख़ूब हिफ़ाज़त रखेंगे, और एक ऊँट का बोझ ग़ल्ला और ज़्यादा लाएँगे (क्योंकि जिस क़द्र इस वक़्त लाये हैं) यह तो थोड़ा-सा ग़ल्ला है (जल्दी ख़त्म हो जायेगा फिर और ज़रूरत होगी और उसका मिलना मौक़ूफ़ है इनके लेजाने पर)।

याक़ूब (अलैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (ख़ैर इस हालत में भेजने से इनकार नहीं लेकिन) उस वक़्त तक हरगिज़ इसको तुम्हारे साथ न भेजूँगा जब तक कि अल्लाह की क़सम खाकर मुझको पक्का क़ौल न दोगे कि तुम इसको ज़रूर ले ही आओगे, हाँ अगर कहीं घिर ही जाओ तो मजबूरी है। (चुनाँचे सब ने इस पर क़सम खा ली) सो जब वे क़सम खाकर अपने बाप को क़ौल दे चुके तो उन्होंने फ़रमाया कि हम लोग जो कुछ बातचीत कर रहे हैं यह सब अल्लाह ही के हवाले है (यानी वही हमारे क़ौल व इक़रार का गवाह है कि सुन रहा है और वही इस क़ौल को पूरा कर सकता है, पस इस कहने से दो ग़र्ज़ हुईं- अव्वल उनको अपने क़ौल के ख़्याल रखने का ध्यान रखने की ताकीद और तंबीह कि अल्लाह को हाज़िर व नाज़िर समझने से यह बात होती है, और दूसरे इस तदबीर को पूरा करने वाला तक़दीर को क़रार देना जो कि तवक्कुल का हासिल है, और इसके बाद बिनयामीन को साथ ले जाने की इजाज़त दे दी। ग़र्ज़ कि दोबारा मिस्र के सफ़र को मय बिनयामीन के सब तैयार हो गये)।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में वाक़िए का बाक़ी हिस्सा इस तरह बयान हुआ है कि जब यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के भाई मिस्र से ग़ल्ला लेकर वापस घर आये तो मिस्र के मामले का तज़किरा वालिद माजिद से करते हुए यह भी बतलाया कि अज़ीज़े मिस्र ने आईन्दा के लिये हमें ग़ल्ला देने के लिये यह शर्त रख दी है कि अपने छोटे भाई को साथ लाओगे तो मिलेगा वरना नहीं, इसलिये आप आईन्दा बिनयामीन को भी हमारे साथ भेज दें ताकि हमें आईन्दा भी ग़ल्ला मिल सके, और हम इस भाई की तो पूरी हिफ़ाज़त करने वाले हैं इनको किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होगी।

वालिद माजिद ने फ़रमाया कि क्या इनके बारे में तुम पर ऐसा ही इत्मीनान करूँ जैसा इससे पहले इनके भाई यूसुफ़ के बारे में किया था? मतलब ज़ाहिर है कि अब तुम्हारी बात का एतिबार क्या है, एक मर्तबा तुम पर इत्मीनान करके मुसीबत उठा चुका हूँ, तुमने यही अलफ़ाज़ हिफ़ाज़त करने के उस वक़्त भी बोले थे।

यह तो उनकी बात का जवाब था मगर फिर ख़ानदान की ज़रूरत को देखते हुए पैग़म्बराना तवक्कुल और इस हक़ीक़त को असल क़रार दिया कि कोई नफ़ा नुक़सान किसी बन्दे के हाथ में नहीं जब तक अल्लाह तआ़ला ही की मर्ज़ी व इरादा न हो, और जब उनका इरादा हो जाये तो फिर उसको कोई टाल नहीं सकता, इसलिये मख़्लूक़ पर भरोसा भी ग़लत है और उनकी शिकायत पर मामले का मदार रखना भी मुनासिब नहीं है। इसलिये फ़रमायाः

فَاللّٰهُ خَيْرٌ حٰفِظًا

यानी तुम्हारी हिफ़ाज़त का नतीजा तो पहले देख चुका हूँ अब तो मैं अल्लाह तआ़ला ही की हिफ़ाज़त पर भरोसा करता हूँ।

وَّهُوَ اَرْحَمُ الرّٰحِمِيْنَ○

और वह सबसे ज़्यादा रहमत करने वाला है। उसी से उम्मीद है कि वह मेरी ज़ईफ़ी (बुढ़ापे व कमज़ोरी) और मौजूदा ग़म व परेशानी पर नज़र फ़रमाकर मुझ पर दोहरे सदमे न डालेगा।

ख़ुलासा यह है कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने ज़ाहिरी हालात और अपनी औलाद के अ़हद व पैमान पर भरोसा न किया मगर अल्लाह तआ़ला के भरोसे पर छोटे बेटे को भी साथ भेजने के लिये तैयार हो गये।

وَلَمَّا فَتَحُوْا مَتَاعَهُمْ وَجَدُوْا بِضَاعَتَهُمْ رُدَّتْ اِلَيْهِمْ قَالُوْا يٰۤاَبَانَا مَا نَبْغِيْ هٰذِهٖ بِضَاعَتُنَا رُدَّتْ اِلَيْنَا وَنَمِيْرُ اَهْلَنَا وَ نَحْفَظُ اَخَانَا وَنَزْدَادُ كَيْلَ بَعِيْرٍ ذٰلِكَ كَيْلٌ يَّسِيْرٌ○

यानी अब तक तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों की यह प्रारम्भिक गुफ़्तगू सफ़र के हालात बयान करने के दौरान में हो रही थी, अभी सामान खोला न था, इसके बाद जब सामान खोला और देखा कि उनकी वह पूँजी जो ग़ल्ले की क़ीमत में अदा करके आये थे, वह भी सामान के अन्दर मौजूद है, तो उस वक़्त उन्होंने यह महसूस किया कि यह काम भूल से नहीं बल्कि जान-बूझकर हमारी पूँजी हमें वापस कर दी गई है। इसी लिये 'रुद्दत् इलैना' कहा, यानी यह पूँजी हमें वापस कर दी गई है। और फिर वालिद मोहतरम से अ़र्ज़ किया 'मा नब्ग़ी' यानी हमें और क्या चाहिये कि ग़ल्ला भी आ गया और उसकी क़ीमत भी वापस मिल गई। अब तो हमें ज़रूर दोबारा अपने भाई को साथ लेकर इत्मीनान से जाना चाहिये, क्योंकि इस मामले से मालूम हुआ कि अ़ज़ीज़े मिस्र हम पर बहुत मेहरबान है, इसलिये कोई अन्देशा नहीं, हम अपने ख़ानदान के लिये ग़ल्ला लायें और भाई को भी हिफ़ाज़त से रखें, और भाई के हिस्से का ग़ल्ला अतिरिक्त मिल जाये, क्योंकि हम जो लाये हैं यह तो हमारे ख़र्च के मुक़ाबले में बहुत थोड़ा है, चन्द दिन में ख़त्म हो जायेगा।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने जो यह जुमला 'मा नब्ग़ी' कहा इसका एक मफ़्हूम तो वही है जो अभी बतलाया गया कि हमें और इससे ज़्यादा क्या चाहिये, और इस जुमले में हर्फ़ 'मा' को नफ़ी के मायने में लिया जाये तो यह मतलब भी हो सकता है कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की औलाद ने अपने वालिद से अ़र्ज़ किया कि अब तो हमारे पास ग़ल्ला लाने के लिये क़ीमत

मौजूद है, हम आपसे कुछ नहीं माँगते, आप सिर्फ़ भाई को हमारे साथ भेज दें।

वालिद साहिब ने ये सब बातें सुनकर जवाब दियाः

لَنْ اُرْسِلَهٗ مَعَكُمْ حَتّٰى تُؤْتُوْنِ مَوْثِقًا مِّنَ اللّٰهِ لَتَاْتُنَّنِىْ بِهٖ

"यानी मैं बिनयामीन को तुम्हारे साथ उस वक़्त तक न भेजूँगा जब तक तुम अल्लाह की क़सम और यह अ़हद व पैमान मुझे न दे दो कि तुम इसको ज़रूर अपने साथ वापस लाओगे।" मगर चूँकि हक़ीक़त को देखने वाली नज़रों से यह बात किसी वक़्त ग़ायब नहीं होती कि इनसान बेचारा ज़ाहिरी क़ुव्वत व क़ुदरत कितनी ही रखता हो फिर भी हर चीज़ में मजबूर और हक़ तआ़ला की क़ुदरत के सामने आ़जिज़ है, वह किसी शख़्स को हिफ़ाज़त के साथ वापस लाने का अ़हद व पैमान ही क्या कर सकता है, क्योंकि वह इस पर मुकम्मल क़ुदरत नहीं रखता। इसलिये इस अ़हद व पैमान के साथ एक सूरत इससे अलग भी रखीः

اِلَّآ اَنْ يُّحَاطَ بِكُمْ

यानी सिवाय उस सूरत के कि तुम सब किसी घेरे में आ जाओ। इमामे तफ़सीर मुजाहिद रह. ने इसका मतलब यह बयान किया कि तुम सब हलाक हो जाओ, और क़तादा रह. ने फ़रमाया कि मतलब यह है कि तुम बिल्कुल आ़जिज़ और मग़लूब हो जाओ।

فَلَمَّآ اٰتَوْهُ مَوْثِقَهُمْ قَالَ اللّٰهُ عَلٰى مَا نَقُوْلُ وَكِيْلٌ○

यानी जब बेटों ने मतलूबा तरीक़े पर अ़हद व पैमान कर लिया यानी सब ने क़समें खाईं और वालिद को इत्मीनान दिलाने के लिये बड़ी सख़्ती से हलफ़ किये, तो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि बिनयामीन की हिफ़ाज़त के लिये हलफ़ देने और हलफ़ उठाने का जो काम हम कर रहे हैं इस सारे मामले का भरोसा अल्लाह तआ़ला ही पर है, उसी की तौफ़ीक़ से कोई किसी की हिफ़ाज़त कर सकता और अपने अ़हद को पूरा कर सकता है, वरना इनसान बेबस है उसके ज़ाती क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में कुछ नहीं।

हिदायात व मसाईल

उक्त आयतों में इनसान के लिये बहुत-सी हिदायतें और अहकाम हैं उनको याद रखियेः

औलाद से गुनाह व ख़ता हो जाये तो ताल्लुक़ तोड़ने के बजाय उनके सुधार की फ़िक्र करनी चाहिये

पहली हिदायतः यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों से जो ख़ता इससे पहले हुई वह बहुत-से बड़े और सख़्त गुनाहों को शामिल थी, जैसेः

अव्वलः झूठ बोलकर वालिद को इस पर तैयार करना कि वह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को उनके साथ तफ़रीह के लिये भेज दें।

दूसरेः वालिद से अ़हद करके उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (यानी उल्लंघन करना)।

तीसरेः छोटे मासूम भाई से बेरहमी और हिंसा व ज़्यादती का बर्ताव करना।

चौथेः ज़ईफ़ वालिद को हद से ज़्यादा तकलीफ़ पहुँचने की परवाह न करना।

पाँचवेः एक बेगुनाह इनसान को क़त्ल करने की योजना बनाना।

छठेः एक आज़ाद इनसान को ज़बरदस्ती और ज़ुल्म से फ़रोख़्त कर देना।

ये ऐसे इन्तिहाई और सख़्त जुर्म थे कि जब याक़ूब अ़लैहिस्सलाम पर वाज़ेह हो गया कि इन्होंने झूठ बोला है और जान-बूझकर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को ज़ाया किया है तो इसका तक़ाज़ा बज़ाहिर तो यह था कि वह इन बेटों से ताल्लुक़ तोड़ लेते या इनको निकाल देते, मगर हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने ऐसा नहीं किया, बल्कि वे बदस्तूर वालिद की ख़िदमत में रहे यहाँ तक कि उन्हीं को मिस्र से ग़ल्ला लाने के लिये भेजा, और इस पर मज़ीद यह कि दोबारा फिर उनको छोटे भाई के मुताल्लिक़ वालिद से दरख़्वास्त करने का मौक़ा मिला और आख़िरकार उनकी बात मानकर छोटे बेटे को भी उनके हवाले कर दिया।

इससे मालूम हुआ कि औलाद से कोई गुनाह व ख़ता हो जाये तो बाप को चाहिये कि तरबियत करके उनकी इस्लाह (सुधारने) की फ़िक्र करे और जब तक इस्लाह की उम्मीद हो ताल्लुक़ ख़त्म न करे, जैसा कि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने ऐसा ही किया, और आख़िरकार वे सब अपनी ख़ताओं पर शर्मिन्दा और गुनाहों से तौबा करने वाले हुए। हाँ अगर इस्लाह से मायूसी हो जाये और उनके साथ ताल्लुक़ क़ायम रखने में दूसरों के दीन का नुक़सान महसूस हो तो फिर ताल्लुक़ तोड़ लेना ज़्यादा मुनासिब है।

दूसरी हिदायत उस अच्छे बर्ताव और अच्छे अख़्लाक़ की है जो यहाँ हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम से ज़ाहिर हुआ, कि बेटों के इतने सख़्त और बड़े अपराधों के बावजूद उनका मामला ऐसा रहा कि दोबारा छोटे भाई को साथ लेजाने की दरख़्वास्त करने की जुर्रत कर सके।

तीसरी हिदायत यह भी है कि ऐसी सूरत में इस्लाह करने की ग़र्ज़ से ख़ताकार को जतला देना भी मुनासिब है कि तुम्हारे मामले का तक़ाज़ा तो यह था कि तुम्हारी बात न मानी जाती मगर हम उससे माफ़ी देते हैं ताकि वह आईन्दा शर्मिन्दा होकर उससे पूरी तरह तौबा करने वाला हो जाये जैसा कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने पहले जतलाया कि क्या बिनयामीन के मामले में भी तुम पर ऐसा ही इत्मीनान कर लूँ जैसा यूसुफ़ के मामले में किया था? मगर जतलाने के बाद हालात को देखने से उनका तौबा करने वाला होना मालूम करके अल्लाह तआ़ला पर तवक्कुल (भरोसा) किया और छोटे बेटे को उनके हवाले कर दिया।

चौथी हिदायत यह है कि किसी इनसान के वायदे और हिफ़ाज़त पर असली तौर से भरोसा करना ग़लती है, असल भरोसा सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला पर होना चाहिये, वही वास्तविक तौर पर कारसाज़ और तमाम असबाब को बनाने वाला है, असबाब को मुहैया करना फिर उनमें तासीर पैदा करना सब अल्लाह की क़ुदरत में है, इसी लिये याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

فَاللّٰهُ خَيْرٌ حٰفِظًا

(कि अल्लाह ही है सबसे बढ़कर निगहबान) हज़रत कअ़ब अहबार का क़ौल है कि इस मर्तबा चूँकि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने सिर्फ़ औलाद के कहने पर भरोसा नहीं किया बल्कि मामले को अल्लाह तआ़ला के सुपुर्द किया इसलिये अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि क़सम है मेरी इज़्ज़त व जलाल की कि अब मैं आपके दोनों बेटों को आपके पास वापस भेजूँगा।

पाँचवाँ मसला इसमें यह है कि अगर दूसरे शख़्स का माल या कोई चीज़ अपने सामान में निकले और अन्दाज़े व इशारे इस पर गवाह हों कि उसने जान-बूझकर हमें देने ही के लिये हमारे सामान में बाँध दिया है तो उसको अपने लिये रखना और उसका इस्तेमाल व ख़र्च करना जायज़ है। जैसे यह पूँजी जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों के सामान से बरामद हुई और प्रबल इशारों और अन्दाज़ों से स्पष्ट रूप से यह मालूम हुआ कि किसी भूल या धोखे से ऐसा नहीं हुआ बल्कि इरादे से इसको वापस दे दिया गया है, इसलिये हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने उस रक़म की वापसी की हिदायत नहीं फ़रमाई, लेकिन जहाँ यह संदेह व गुमान मौजूद हो कि शायद भूले से हमारे पास आ गई वहाँ मालिक से तहक़ीक़ और मालूम किये बग़ैर उसका इस्तेमाल करना जायज़ नहीं।

छठा मसला इसमें यह है कि किसी शख़्स को ऐसी क़सम नहीं देनी चाहिये जिसका पूरा करना बिल्कुल उसके क़ब्ज़े में न हो, जैसे हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने बिनयामीन को सही व सालिम वापस लाने की क़सम दी तो इसमें से उस हालत को अलग रखा कि वे बिल्कुल आ़जिज़ व मजबूर हो जायें या ख़ुद भी सब हलाकत में पड़ जायें।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से अपनी इताअ़त (पैरवी व फ़रमाँबरदारी) का अ़हद लिया तो ख़ुद उसमें ताक़त व गुंजाईश की क़ैद लगा दी, यानी जहाँ तक हमारी क़ुदरत व गुंजाईश में दाख़िल है हम आपकी पूरी इताअ़त करेंगे।

सातवाँ मसला इसमें यह है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों से अ़हद व पैमान लेना कि वे बिनयामीन को वापस लायेंगे, इससे मालूम होता है कि **किफ़ालत बिन्नफ़्स** जायज़ है, यानी किसी मुक़द्दिमे में पकड़े गये इनसान को मुक़द्दिमे की तारीख़ पर हाज़िर करने की ज़मानत कर लेना दुरुस्त है।

इस मसले में इमाम मालिक रह. का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है, वह सिर्फ़ माली ज़मानत को जायज़ रखते हैं, इनसानी नफ़्स (जान) की ज़मानत को जायज़ नहीं रखते।

وَقَالَ يٰبَنِيَّ لَا تَدْخُلُوْا مِنْ بَابٍ وَّاحِدٍ وَّادْخُلُوْا مِنْ اَبْوَابٍ مُّتَفَرِّقَةٍ ۗ
وَمَآ اُغْنِيْ عَنْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ ۗ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ ۗ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ ۚ وَعَلَيْهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُوْنَ ۝
وَلَمَّا دَخَلُوْا مِنْ حَيْثُ اَمَرَهُمْ اَبُوْهُمْ ۗ مَا كَانَ يُغْنِيْ عَنْهُمْ مِّنَ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ اِلَّا حَاجَةً فِيْ
نَفْسِ يَعْقُوْبَ قَضٰىهَا ۗ وَاِنَّهٗ لَذُوْ عِلْمٍ لِّمَا عَلَّمْنٰهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَلَمَّا دَخَلُوْا

عَلٰى يُوْسُفَ اٰوٰٓى اِلَيْهِ اَخَاهُ قَالَ اِنِّيْٓ اَنَا اَخُوْكَ فَلَا تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝

व क़ा-ल या बनिय्-य ला तद्ख़ुलू मिम्बाबिंव्-वाहिदिंव्-वद्ख़ुलू मिन् अब्वाबिम् मु-तफ़र्रि-क़तिन्, व मा उग़्नी अ़न्कुम् मिनल्लाहि मिन् शैइन्, इनिल्हुक्मु इल्ला लिल्लाहि, अ़लैहि तवक्कल्तु व अ़लैहि फ़ल्य-तवक्कलिल्-मु-तवक्किलून (67) व लम्मा द-ख़लू मिन् हैसु अ-म-रहुम् अबूहुम्, मा का-न युग़्नी अ़न्हुम् मिनल्लाहि मिन् शैइन् इल्ला हा-जतन् फ़ी नफ़्सि यअ़्क़ू-ब क़ज़ाहा, व इन्नहू लज़ू अ़िल्मिल्-लिमा अ़ल्लम्नाहु व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यअ़्लमून (68) ❁

व लम्मा द-ख़लू अ़ला यूसु-फ़ आवा इलैहि अख़ाहु क़ा-ल इन्नी अ-न अख़ू-क फ़ला तब्तइस् बिमा कानू यअ़्मलून (69)

और कहा ऐ बेटो! न दाख़िल होना एक दरवाज़े से, और दाख़िल होना कई दरवाज़ों से अलग-अलग, और मैं नहीं बचा सकता तुमको अल्लाह की किसी बात से, हुक्म किसी का नहीं सिवाय अल्लाह के, उसी पर मुझको भरोसा है और उसी पर भरोसा करना चाहिये भरोसा करने वालों को। (67) और जब दाख़िल हुए जहाँ से कहा था उनके बाप ने, कुछ नहीं बचा सकता था उनको अल्लाह की किसी बात से मगर एक इच्छा थी याक़ूब के जी में सो पूरी कर चुका, और वह तो ख़बरदार था जो कुछ हमने सिखाया उसको लेकिन बहुत लोगों को ख़बर नहीं। (68) ❁

और जब दाख़िल हुए यूसुफ़ के पास अपने पास रखा अपने भाई को, बेशक मैं हूँ तेरा भाई, सो ग़मगीन मत हो उन कामों से जो उन्होंने किये हैं। (69)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (चलते वक़्त) याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने (उनसे) फ़रमाया कि ऐ मेरे बेटो! (जब मिस्र में पहुँचो तो) सब-के-सब एक ही दरवाज़े से मत जाना, बल्कि अलग-अलग दरवाज़ों से जाना, और (यह महज़ एक ज़ाहिरी तदबीर है बुरी नज़र वग़ैरह के असरात से बचने की, बाक़ी) मैं ख़ुदा के हुक्म को तुम पर से टाल नहीं सकता। हुक्म तो बस अल्लाह ही का (चलता) है, (बावजूद इस ज़ाहिरी तदबीर के दिल से) उसी पर भरोसा रखता हूँ और भरोसा करने वालों को उसी पर भरोसा करना चाहिए (यानी तुम भी उसी पर भरोसा रखना, तदबीर पर नज़र मत करना। ग़र्ज़

कि सब रुख़्सत होकर चले) और जब (मिस्र पहुँचकर) जिस तरह उनके बाप ने कहा था (उसी तरह शहर के) अन्दर दाख़िल हुए तो बाप का अरमान पूरा हो गया, (बाक़ी) उनके बाप को (यह तदबीर बतलाकर) उनसे ख़ुदा का हुक्म टालना मक़सूद न था (ताकि उन पर किसी क़िस्म का एतिराज़ या इस तदबीर के लाभदायक न होने से उन पर शुब्हा लाज़िम आये, चुनाँचे ख़ुद उन्होंने ही फ़रमा दिया था 'मा उग़्नी अ़न्कुम् मिनल्लाहि मिन् शैइन्।

लेकिन याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) के जी में (तदबीर के दर्जे में) एक अरमान (आया) था जिसको उन्होंने ज़ाहिर कर दिया, और वह बेशक बड़े आ़लिम थे, इस वजह से कि हमने उनको इल्म दिया था (और वह इल्म के ख़िलाफ़ तदबीर को एतिक़ादी तौर पर असल प्रभावी कब समझ सकते थे, सिर्फ़ उनके इस क़ौल की वजह से वही अ़मली तौर पर एक तदबीर का इख़्तियार करना था जो कि जायज़ व पसन्दीदा है) लेकिन अक्सर लोग इसका इल्म नहीं रखते (बल्कि जहालत के सबब तदबीर को असल प्रभावी एतिक़ाद कर लेते हैं)।

और जब ये लोग (यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई) यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) के पास पहुँचे (और बिनयामीन को पेश करके कहा कि हम आपके हुक्म के मुताबिक़ इनको लाये हैं) तो उन्होंने अपने भाई को अपने साथ मिला लिया (और तन्हाई में उनसे) कहा कि मैं तेरा भाई (यूसुफ़) हूँ, सो ये लोग जो कुछ (बद-सुलूकी) करते रहे हैं उसका रंज मत करना (क्योंकि अब तो अल्लाह ने हमको मिला दिया, अब सब ग़म भुला देना चाहिये। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के साथ बदसुलूकी तो ज़ाहिर और मशहूर है, रहा बिनयामीन के साथ सो या तो उनको भी कुछ तकलीफ़ दी हो वरना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की जुदाई क्या उनके हक़ में कुछ कम तकलीफ़ थी। फिर दोनों भाईयों ने मश्विरा किया कि कोई ऐसी सूरत हो कि बिनयामीन यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास रहें, क्योंकि वैसे रहने में तो और भाईयों का अ़हद व क़सम खाने के सबब इसरार होगा, बिना वजह का झगड़ा होगा, और फिर वजह भी ज़ाहिर हो गई तो राज़ खुला, और अगर गुप्त रही तो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का रंज बढ़ेगा कि बिना सबब बिनयामीन को क्यों रोक लिया गया, या वह ख़ुद क्यों रहे। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि तदबीर तो है मगर ज़रा तुम्हारी बदनामी है, बिनयामीन ने कहा कुछ परवाह नहीं। ग़र्ज़ कि उनमें यह बात तय पा गयी और उधर सब को ग़ल्ला देकर उनके रुख़्सत करने का सामान दुरुस्त किया गया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में भाईयों का यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के छोटे भाई को साथ लेकर दूसरी मर्तबा मिस्र के सफ़र का ज़िक्र है। उस वक़्त हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने उनको मिस्र शहर में दाख़िल होने के लिये एक ख़ास हिदायत यह फ़रमाई कि अब तुम ग्यारह भाई वहाँ जा रहे हो, तो शहर के एक ही दरवाज़े से सब दाख़िल न होना बल्कि शहरे-पनाह के पास पहुँचकर अलग-अलग हो जाना और शहर के अलग-अलग दरवाज़ों से दाख़िल होना।

सबब इस हिदायत का यह अन्देशा था कि ये सब माशा-अल्लाह नौजवान, सेहतमन्द,

क़द्दावर, हसीन व ख़ूबसूरत और आकर्षक व्यक्तित्व के मालिक हैं, ऐसा न हो कि जब लोगों को यह मालूम हो कि ये सब एक ही बाप की औलाद और भाई-भाई हैं तो किसी बुरी नज़र वाले की नज़र लग जाये, जिससे इनको कोई तकलीफ़ पहुँचे, या सामूहिक तौर से दाख़िल होने की वजह से कुछ लोग हसद करने (जलने) लगें और तकलीफ़ पहुँचायें।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने उनको यह वसीयत पहली मर्तबा नहीं की, इस दूसरे सफ़र के मौक़े पर फ़रमाई। इसकी वजह ग़ालिबन यह है कि पहली मर्तबा तो ये लोग मिस्र में मुसाफ़िरों की और शिकस्ता हालत में दाख़िल हुए थे, न कोई इनको पहचानता था न किसी से इनके हाल पर ज़्यादा तवज्जोह देने का ख़तरा था, मगर पहले ही सफ़र में मिस्र के बादशाह ने इनका असाधारण सम्मान किया जिससे हुकूमत के आ़म कारिन्दों और शहर के लोगों में परिचय हो गया तो अब यह ख़तरा प्रबल हो गया कि किसी की नज़र लग जाये, या सब को एक शान व शौकत वाली जमाअ़त समझकर कुछ लोग हसद करने लगें, और इस मर्तबा बिनयामीन छोटे बेटे का साथ होना भी वालिद के लिये और ज़्यादा तवज्जोह देने का सबब हुआ।

बुरी नज़र का असर होना हक़ है

इससे मालूम हुआ कि इनसान की नज़र लग जाना और उससे किसी दूसरे इनसान या जानवर वग़ैरह को तकलीफ़ हो जाना या नुक़सान पहुँच जाना हक़ (सही और वास्तविक) है, महज़ जाहिलाना वहम व ख़्याल नहीं। इसी लिये हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को इसकी फ़िक्र हुई। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इसकी तस्दीक़ फ़रमाई है। एक हदीस में है कि बुरी नज़र एक इनसान को क़ब्र में और ऊँट को हण्डिया में दाख़िल कर देती है, इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिन चीज़ों से पनाह माँगी और उम्मत को पनाह माँगने की तालीम व हिदायत फ़रमाई है उनमें 'मिन् कुल्लि अ़ैनिल्-लाम्मतिन्' भी मज़कूर है, यानी मैं पनाह माँगता हूँ बुरी नज़र से। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में सहल बिन हुनैफ़ का वाक़िआ मशहूर है कि उन्होंने एक मौक़े पर नहाने के लिये कपड़े उतारे तो उनके सफ़ेद रंग तन्दुरुस्त बदन पर आ़मिर बिन रबीआ़ की नज़र पड़ गई और उनकी ज़बान से निकला कि मैंने तो आज तक इतना हसीन बदन किसी का नहीं देखा, यह कहना था कि फ़ौरन सहल बिन हुनैफ़ को तेज़ बुख़ार चढ़ गया, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जब इसकी इत्तिला हुई तो आपने यह इलाज तजवीज़ किया कि आ़मिर बिन रबीआ़ को हुक्म दिया कि वह वुज़ू करें और वुज़ू का पानी किसी बरतन में जमा करें, यह पानी सहल बिन हुनैफ़ के बदन पर डाला जाये, ऐसा ही किया गया तो फ़ौरन बुख़ार उतर गया और वह बिल्कुल तन्दुरुस्त होकर जिस मुहिम पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जा रहे थे उस पर रवाना हो गये। इस वाक़िए में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आ़मिर बिन रबीआ़ को यह तंबीह भी फ़रमाईः

علام يقتل احدكم اخاه الا برّكت انّ العين حقٌ

"कोई शख़्स अपने भाई को क्यों क़त्ल करता है? तुमने ऐसा क्यों न किया कि जब उनका बदन तुम्हें अच्छा नज़र आया तो बरकत की दुआ़ कर लेते, नज़र का असर हो जाना हक़ है।"

इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि जब किसी शख़्स को किसी दूसरे की जान व माल में कोई अच्छी बात ताज्जुब में डालने वाली नज़र आये तो उसको चाहिये कि उसके वास्ते यह दुआ़ करे कि अल्लाह तआ़ला उसमें बरकत अ़ता फ़रमा दें। कुछ रिवायतों में है कि:

مَاشَآءَ اللّٰهُ لَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ

माशा-अल्लाहु ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाह

कहे। इससे बुरी नज़र का असर जाता रहता है। और यह भी मालूम हुआ कि किसी की बुरी नज़र किसी को लग जाये तो नज़र लगाने वाले के हाथ-पाँव और चेहरे का धुलने वाला पानी उसके बदन पर डालना बुरी नज़र के असर को दूर कर देता है।

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि उम्मत के तमाम उलेमा-ए-अहले सुन्नत वल्-जमाअ़त का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि बुरी नज़र लग जाना और उससे नुक़सान पहुँच जाना हक़ है।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने एक तरफ़ तो बुरी नज़र या हसद (दूसरों के जलने) के अन्देशे से औलाद को यह वसीयत फ़रमाई कि सब मिलकर एक दरवाज़े से शहर में दाख़िल न हों, दूसरी तरफ़ एक हक़ीक़त का इज़हार भी ज़रूरी समझा जिससे ग़फ़लत की बिना पर ऐसे मामलों में बहुत-से अ़वाम जाहिलाना ख़्यालात और वहमों के शिकार हो जाते हैं, वह यह कि बुरी नज़र की तासीर (प्रभाव) किसी इनसान के जान व माल में एक क़िस्म का मिस्मरेज़्म है और वह ऐसा ही है जैसे नुक़सानदेह दवा या ग़िज़ा इनसान को बीमार कर देती है, गर्मी-सर्दी की शिद्दत से रोग पैदा हो जाते हैं, इसी तरह बुरी नज़र या मिस्मरेज़्म के तसर्रुफ़ात भी उन्हीं आ़दी असबाब में से हैं कि नज़र या ख़्याल की क़ुव्वत से उसके आसार ज़ाहिर हो जाते हैं, उनमें ख़ुद कोई वास्तविक तासीर नहीं होती बल्कि सब असबाब अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत और चाहत व इरादे के ताबे हैं, अल्लाह की तक़दीर के मुक़ाबले में न कोई मुफ़ीद तदबीर मुफ़ीद हो सकती है न नुक़सान देने वाली तदबीर का नुक़सान असर डालने वाला हो सकता है। इसलिये इरशाद फ़रमायाः

وَمَآ اُغْنِیْ عَنْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ مِنْ شَیْءٍ. اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ. عَلَیْهِ تَوَكَّلْتُ وَعَلَیْهِ فَلْیَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُوْنَ○

यानी बुरी नज़र से बचने की जो तदबीर मैंने बतलाई है मैं जानता हूँ कि वह अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी व इरादे को नहीं टाल सकती, हुक्म तो सिर्फ़ अल्लाह ही का चलता है, अलबत्ता इनसान को ज़ाहिरी तदबीर करने का हुक्म है, इसलिये यह वसीयत की गई। मगर मेरा भरोसा इस तदबीर पर नहीं बल्कि अल्लाह ही पर है और हर शख़्स को यही लाज़िम है कि उसी पर एतिमाद और भरोसा करे, ज़ाहिरी और माद्दी तदबीरों पर भरोसा न करे।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने जिस हक़ीक़त का इज़हार फ़रमाया इत्तिफ़ाक़न हुआ भी कुछ ऐसा ही कि उस सफ़र में बिनयामीन को हिफ़ाज़त के साथ वापस लाने की सारी तदबीरें

मुकम्मल कर लेने के बावजूद सब चीज़ें नाकाम रह गईं, और बिनयामीन को मिस्र में रोक लिया गया, जिसके नतीजे में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को एक दूसरा सख़्त सदमा पहुँचा, उनकी तदबीर का नाकाम होना जो अगली आयत में बयान हुआ है उसका मक़सद यही है कि असल मक़सद के लिहाज़ से तदबीर नाकाम हो गई अगरचे बुरी नज़र या हसद (दूसरों के जलने) वग़ैरह से बचने की तदबीर कामयाब हुई। क्योंकि इस सफ़र में ऐसा वाक़िआ़ पेश नहीं आया मगर अल्लाह की तक़दीर से जो हादसा पेश आने वाला था उस तरफ़ याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की नज़र नहीं गई, और न उसके लिये कोई तदबीर कर सके, मगर इस ज़ाहिरी नाकामी के बावजूद उनके तवक्कुल की बरकत से यह दूसरा सदमा पहले सदमे का भी इलाज साबित हुआ, और अंततः बड़ी आ़फ़ियत व इ़ज़्ज़त के साथ यूसुफ़ और बिनयामीन दोनों से मुलाक़ात नसीब हुई।

इसी मज़मून का बयान इसके बाद की आयत में इस तरह आया कि बेटों ने वालिद के हुक्म की तामील की, शहर के अलग-अलग दरवाज़ों से मिस्र में दाख़िल हुए तो बाप का अरमान पूरा हो गया। उनकी यह तदबीर अल्लाह के किसी हुक्म को टाल न सकती थी मगर याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की एक बाप होने की शफ़क़त व मुहब्बत का तक़ाज़ा था जो उन्होंने पूरा कर लिया।

इस आयत के आख़िर में हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की तारीफ़ इन अलफ़ाज़ में की गई हैः

وَاِنَّهٗ لَذُوْ عِلْمٍ لِّمَا عَلَّمْنٰهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ۝

यानी याक़ूब अ़लैहिस्सलाम बड़े इ़ल्म वाले थे, क्योंकि उनको हमने इ़ल्म दिया था। मतलब यह है कि आ़म लोगों की तरह उनका इ़ल्म किताबी और हासिल किया हुआ नहीं बल्कि बिना वास्ते के अल्लाह तआ़ला का बख़्शा हुआ और उसकी अ़ता था, इसी लिये उन्होंने ज़ाहिरी तदबीर जो शरई तौर पर जायज़ और अच्छी है वह तो कर ली मगर उस पर भरोसा नहीं किया, मगर बहुत से लोग इस बात की हक़ीक़त को नहीं जानते और नावाक़फ़ियत (अज्ञानता) से याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के बारे में ऐसे शुब्हात में मुब्तला हो जाते हैं कि ये तदबीरें पैग़म्बर की शान के लायक़ न थीं।

क़ुरआने पाक के कुछ व्याख्यापकों (मुफ़स्सिरीन) ने फ़रमाया कि पहले लफ़्ज़े इ़ल्म से मुराद इ़ल्म के तक़ाज़े पर अ़मल करना है, और मतलब यह है कि हमने जो इ़ल्म उनको अ़ता किया वह उस पर आ़मिल और उसके पाबन्द थे, इसी लिये ज़ाहिरी तदबीरों पर भरोसा नहीं फ़रमाया बल्कि एतिमाद और भरोसा सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही पर फ़रमायाः

وَلَمَّا دَخَلُوْا عَلٰى يُوْسُفَ اٰوٰۤى اِلَيْهِ اَخَاهُ قَالَ اِنِّىْۤ اَنَا اَخُوْكَ فَلَا تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ۝

यानी जब मिस्र शहर पहुँचने के बाद ये सब भाई यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दरबार में हाज़िर हुए और इन्होंने देखा कि ये वायदे के मुताबिक़ उनके सगे भाई को भी साथ ले आये हैं तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने सगे भाई बिनयामीन को ख़ास अपने साथ ठहराया। इमामे तफ़सीर क़तादा रह. ने फ़रमाया कि उन सब भाईयों के ठहरने का यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने यह इन्तिज़ाम

फ़रमाया था कि दो-दो को एक कमरे में ठहराया तो बिनयामीन अकेले रह गये, उनको अपने साथ ठहरने के लिये फ़रमाया। जब तन्हाई का मौक़ा आया तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने सगे भाई पर राज़ खोल दिया और बतला दिया कि मैं ही तुम्हारा भाई यूसुफ़ हूँ अब तुम कोई फ़िक्र न करो और जो कुछ इन भाईयों ने अब तक किया है उससे परेशान न हो।

अहकाम व मसाईल

ऊपर बयान हुई दो आयतों से चन्द मसाईल और अहकाम मालूम हुए:

अव्वल यह कि बुरी नज़र का लग जाना हक़ है, उससे बचने की तदबीर करना उसी तरह जायज़ व पसन्दीदा है जिस तरह नुक़सानदेह ग़िज़ाओं और कामों से बचने की तदबीर करना।

दूसरे यह कि लोगों के हसद (जलने) से बचने के लिये अपनी मख़्सूस नेमतों और कमालात का लोगों से छुपाना दुरुस्त है।

तीसरे यह कि नुक़सानदेह आसार से बचने के लिये ज़ाहिरी और माद्दी तदबीरें करना तवक्कुल और नबियों की शान के ख़िलाफ़ नहीं।

चौथे यह कि जब एक शख़्स को किसी दूसरे शख़्स के बारे में किसी तकलीफ़ के पहुँच जाने का अन्देशा हो तो बेहतर यह है कि उसको आगाह कर दे, और अन्देशे से बचने की मुम्किन तदबीर बतला दे, जैसे याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने किया।

पाँचवे यह कि जब किसी शख़्स को दूसरे शख़्स का कोई कमाल (ख़ूबी व हुनर) या नेमत ताज्जुब में डालने वाला मालूम हो और ख़तरा हो कि उसको बुरी नज़र लग जायेगी तो उस पर वाजिब है कि उसको देखकर 'बारकल्लाह' या 'माशा-अल्लाह' कह ले, ताकि दूसरे को कोई तकलीफ़ न पहुँचे।

छठे यह कि बुरी नज़र से बचने के लिये हर मुम्किन तदबीर करना जायज़ है, उनमें से एक यह भी है कि किसी दुआ़ और तावीज़ वग़ैरह से इलाज किया जाये जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब के दो लड़कों को कमज़ोर देखकर इसकी इजाज़त दी कि तावीज़ वग़ैरह के ज़रिये इनका इलाज किया जाये।

सातवें यह कि अ़क्लमन्द मुसलमान का काम यह है कि हर काम में असल भरोसा तो अल्लाह तआ़ला पर रखे मगर ज़ाहिरी और माद्दी असबाब को भी नज़र-अन्दाज़ न करे, जिस क़द्र जायज़ असबाब (साधन और तरीक़े) अपने मक़सद के हासिल करने के लिये उसके इख़्तियार में हों उनको अ़मल में लाने में कोताही न करे, जैसे हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने किया, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इसकी तालीम फ़रमाई है। मौलाना रूमी रह. ने फ़रमायाः "बर तवक्कुल ज़ानू-ए-उश्तुर ब-बन्द।"

यानी अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करो मगर ऊँट के पैर में रस्सी भी बाँध दो। मतलब यह है अपने इख़्तियार में जो तदबीर व कोशिश है उसे भी अ़मल में लाओ और फिर अल्लाह पर भरोसा करो। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

यही पैग़म्बराना तवक्कुल और सुन्नते रसूल है।

आठवें यह कि यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने छोटे भाई को तो बुलाने के लिये भी कोशिश और ताकीद की, और फिर जब वह आ गये तो उन पर अपना राज़ भी ज़ाहिर कर दिया, मगर वालिदे मोहतरम के न बुलाने की फ़िक्र फ़रमाई और न उनको अपनी ख़ैरियत से बाख़बर करने के लिये कोई क़दम उठाया, इसकी वजह वही है जो पहले बयान की गई है कि इस पूरे चालीस साल के अ़रसे में बहुत से मौक़े थे कि वालिद को अपने हाल और ख़ैरियत की इत्तिला दे देते लेकिन यह जो कुछ हुआ वह अल्लाह के हुक्म और तक़दीरी फ़ैसले के मुताबिक़ हुआ, अभी तक अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से इसकी इजाज़त न मिली होगी कि वालिदे मोहतरम को हालात से बाख़बर किया जाये, क्योंकि अभी उनका एक और इम्तिहान बिनयामीन की जुदाई के ज़रिये भी होने वाला था, उसके पूरा करने ही के लिये ये सब सूरतें पैदा की गईं।

فَلَمَّا جَهَّزَهُمْ بِجَهَازِهِمْ جَعَلَ السِّقَايَةَ فِي

رَحْلِ أَخِيهِ ثُمَّ أَذَّنَ مُؤَذِّنٌ أَيَّتُهَا الْعِيرُ إِنَّكُمْ لَسَارِقُونَ ۝ قَالُوا وَأَقْبَلُوا عَلَيْهِمْ مَاذَا تَفْقِدُونَ ۝ قَالُوا نَفْقِدُ صُوَاعَ الْمَلِكِ وَلِمَنْ جَاءَ بِهِ حِمْلُ بَعِيرٍ وَأَنَا بِهِ زَعِيمٌ ۝ قَالُوا تَاللَّهِ لَقَدْ عَلِمْتُمْ مَا جِئْنَا لِنُفْسِدَ فِي الْأَرْضِ وَمَا كُنَّا سَارِقِينَ ۝ قَالُوا فَمَا جَزَاؤُهُ إِنْ كُنْتُمْ كَاذِبِينَ ۝ قَالُوا جَزَاؤُهُ مَنْ وُجِدَ فِي رَحْلِهِ فَهُوَ جَزَاؤُهُ ۚ كَذَٰلِكَ نَجْزِي الظَّالِمِينَ ۝ فَبَدَأَ بِأَوْعِيَتِهِمْ قَبْلَ وِعَاءِ أَخِيهِ ثُمَّ اسْتَخْرَجَهَا مِنْ وِعَاءِ أَخِيهِ ۚ كَذَٰلِكَ كِدْنَا لِيُوسُفَ ۖ مَا كَانَ لِيَأْخُذَ أَخَاهُ فِي دِينِ الْمَلِكِ إِلَّا أَنْ يَشَاءَ اللَّهُ ۚ نَرْفَعُ دَرَجَاتٍ مَنْ نَشَاءُ ۗ وَفَوْقَ كُلِّ ذِي عِلْمٍ عَلِيمٌ ۝

फ़-लम्मा जह्ह-ज़हुम् बि-जहाज़िहिम् ज-अ़लस्सिकाय-त फ़ी रह्लि अख़ीहि सुम्-म अज़्ज़-न मुअज़्ज़िनुन् अय्यतुहल्-ओ़रु इन्नकुम् लसारिक़ून (70) क़ालू व अक़्बलू अ़लैहिम् माज़ा तफ़्क़िदून (71) क़ालू नफ़्क़िदु सुवाअ़ल्-मलिकि व लिमन् जा-अ बिही हिम्लु बओ़रिंव्-व अ-न बिही	फिर जब तैयार कर दिया उनके वास्ते असबाब उनका, रख दिया पीने का प्याला असबाब में अपने भाई के, फिर पुकारा पुकारने वाले ने ऐ क़ाफ़िले वालो! तुम तो यक़ीनन चोर हो। (70) कहने लगे मुँह करके उनकी तरफ़ तुम्हारी क्या चीज़ गुम हो गई है? (71) बोले हम नहीं पाते बादशाह का पैमाना, और जो कोई उसको लाये उसको मिले एक बोझ ऊँट का और

ज़ओ़म (72) क़ालू तल्लाहि ल-क़द् अ़लिम्तुम् मा जिअ्ना लिनुफ़्सि-द फ़िल्अर्ज़ि व मा कुन्ना सारिक़ीन (73) क़ालू फ़मा जज़ाउहू इन् कुन्तुम् काज़िबीन (74) क़ालू जज़ाउहू मंव्वुजि-द फ़ी रह्लिही फ़हु-व जज़ाउहू, कज़ालि-क नज्ज़िज़्-ज़ालिमीन (75) फ़-ब-द-अ बिऔअ़ि-यतिहिम् क़ब्-ल विआ़-इ अख़ीहि सुम्मस्तख़्र-जहा मिंव्विआ़-इ अख़ीहि, कज़ालि-क किद्ना लियूसु-फ़, मा का-न लियअ्ख़ु-ज़ अख़ाहु फ़ी दीनिल्-मलिकि इल्ला अंय्यशाअल्लाहु, नर्फ़अ़ु द-रजातिम् मन्-नशा-उ, व फ़ौ-क़ कुल्लि ज़ी अ़िल्मिन् अ़लीम (76)	मैं हूँ उसका ज़मानती। (72) बोले क़सम अल्लाह की तुमको मालूम है हम शरारत करने को नहीं आये मुल्क में, और न हम कभी चोर थे। (73) बोले फिर क्या सज़ा है उसकी अगर तुम निकले झूठे। (74) कहने लगे उसकी सज़ा यह है कि जिसके सामान में से हाथ आये वही उसके बदले में जाये, हम यही सज़ा देते हैं ज़ालिमों को। (75) फिर शुरू की यूसुफ़ ने उनकी ख़ुरजियाँ देखनी अपने भाई की ख़ुरजी से पहले, आख़िर में वह बरतन निकाला अपने भाई की ख़ुरजी से, यूँ दाव बताया हमने यूसुफ़ को, वह हरगिज़ न ले सकता था अपने भाई को दीन में उस बादशाह के, मगर जो चाहे अल्लाह, हम दर्जे बुलन्द करते हैं जिसके चाहें और हर जानने वाले से ऊपर है एक जानने वाला। (76)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर जब यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने उनका सामान (ग़ल्ला और रवानगी का) तैयार कर दिया तो (ख़ुद या किसी भरोसेमन्द के ज़रिये) पानी पीने का बरतन (कि वही पैमाना ग़ल्ला देने का भी था) अपने भाई के सामान में रख दिया। फिर (जब ये लादकर चले तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हुक्म से पीछे से) एक पुकारने वाले ने पुकारा कि ऐ क़ाफ़िले वालो! तुम ज़रूर चोर हो। वे उन (तलाश करने वालों) की तरफ़ मुतवज्जह होकर कहने लगे कि तुम्हारी क्या चीज़ गुम हो गई है (जिसकी चोरी का हम पर शुब्हा हुआ)? उन्होंने कहा कि हमको बादशाही पैमाना नहीं मिलता (वह ग़ायब है) और जो शख़्स उसको (लाकर) हाज़िर करे उसको एक ऊँट के बोझ के बराबर ग़ल्ला (बतौर इनाम के ख़ज़ाने से) मिलेगा (और या यह मतलब हो कि अगर ख़ुद चोर भी माल दे दे तो माफ़ी के बाद इनाम पायेगा), और मैं उस (के दिलवाने) का ज़िम्मेदार हूँ (ग़ालिबन यह पुकार और यह इनाम का वादा यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के हुक्म से हुआ होगा)। ये लोग कहने लगे

कि ख़ुदा की क़सम तुमको ख़ूब मालूम है कि हम लोग मुल्क में फ़साद फैलाने (जिसमें चोरी भी दाख़िल है) नहीं आये, और हम लोग चोरी करने वाले नहीं (यानी हमारा यह तरीक़ा नहीं है)। उन (ढूँढने वाले) लोगों ने कहा अच्छा अगर तुम झूठे निकले (और तुम में से किसी पर चोरी साबित हो गयी) तो उस (चोर) की क्या सज़ा? उन्होंने (याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त के मुताबिक़) जवाब दिया कि उसकी सज़ा यह है कि वह जिस शख़्स के सामान में मिले बस वही अपनी सज़ा है (यानी चोरी के बदले में ख़ुद उसकी ज़ात को माल वाला अपना ग़ुलाम बना ले), हम लोग ज़ालिमों (यानी चोरों) को ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं (यानी हमारी शरीअ़त में यही मसला और अ़मल है)।

(ग़र्ज़ कि आपस में ये बातें तय होने के बाद सामान उतरवा दिया गया)। फिर (तलाशी के वक़्त) यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने (ख़ुद या किसी भरोसेमन्द के ज़रिये) अपने भाई के (सामान के) थेले से पहले तलाशी की शुरूआत दूसरे भाईयों के (सामान के) थेलों से की, फिर (आख़िर में) उस (बरतन) को अपने भाई के (सामान के) थेले से बरामद कर लिया। हमने यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) की ख़ातिर इस तरह (बिनयामीन के रखने की) तदबीर फ़रमाई (वजह इस तदबीर की यह हुई कि) यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) अपने भाई को उस (मिस्र के) बादशाह के क़ानून के एतिबार से नहीं ले सकते थे (क्योंकि उसके क़ानून में कुछ सज़ा व जुर्माना था जैसा कि तबरानी रूहुल-मआ़नी में इसकी वज़ाहत है) मगर यह कि अल्लाह ही को मन्ज़ूर था (इसलिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दिल में यह तदबीर आई और उन लोगों के मुँह से यह फ़तवा निकला और इस तरीक़े से तदबीर फ़िट बैठ गई, और चूँकि यह हक़ीक़त में ग़ुलाम बनाना न था बल्कि बिनयामीन की ख़ुशी से ग़ुलामी की सूरत इख़्तियार की थी, इसलिये किसी आज़ाद को ग़ुलाम बनाने का शुब्हा लाज़िम नहीं आया, और अगरचे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम बड़े आ़लिम व अ़क़्लमन्द थे मगर फिर भी हमारे तदबीर सिखाने के मोहताज थे, बल्कि) हम जिसको चाहते हैं (इल्म में) ख़ास दर्जों तक बढ़ा देते हैं, और तमाम इल्म वालों से बढ़कर एक बड़ा इल्म वाला है (यानी अल्लाह तआ़ला। जब मख़्लूक़ का इल्म नाक़िस ठहरा और ख़ालिक़ का इल्म कामिल तो लाज़िमी तौर पर हर मख़्लूक़ अपने इल्म और तदबीर में मोहताज होगी ख़ालिक़ की, इसलिये 'किदना' और 'इल्ला अंय्यशा-अल्लाहु' कहा गया। हासिल यह है कि जब उनके सामान से वह बरतन बरामद हो गया और बिनयामीन रोक लिये गये तो वे सब बड़े शर्मिन्दा हुए)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में इसका बयान है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने सगे भाई बिनयामीन को अपने पास रोक लेने के लिये यह बहाना और तदबीर इख़्तियार की कि जब सब भाईयों को नियम के अनुसार ग़ल्ला दिया गया तो हर भाई का ग़ल्ला एक मुस्तक़िल ऊँट पर अलग-अलग नाम-बनाम लादा गया।

बिनयामीन के लिये जो ग़ल्ला ऊँट पर लादा गया उसमें एक बरतन छुपा दिया गया, उस

बरतन को क़ुरआने करीम ने एक जगह "सिक़ाया" के लफ़्ज़ से और दूसरी जगह "सुवाअ़ल्-मलिकि" के अलफ़ाज़ से ताबीर किया है। **सिक़ाया** के मायने पानी पीने का बरतन और सुवाअ़ भी इसी तरह के बरतन को कहते हैं। इसको बादशाह की तरफ़ मन्सूब करने से इतनी बात और मालूम हुई कि यह बरतन कोई ख़ास क़ीमत और हैसियत रखता था। कुछ रिवायतों में है कि ज़बर्जद का बना हुआ था। कुछ हज़रात ने सोने का कुछ ने चाँदी का बतलाया है। बहरहाल यह बरतन जो बिनयामीन के सामान में छुपा दिया गया था अच्छा-ख़ासा क़ीमती बरतन होने के अ़लावा मिस्र देश से कोई विशेषता भी रखता था, चाहे यह कि वह ख़ुद उसको इस्तेमाल करते थे या यह कि बादशाह ने ख़ुद अपने हुक्म से उस बरतन को ग़ल्ला मापने का पैमाना बना दिया था।

ثُمَّ اَذَّنَ مُؤَذِّنٌ اَيَّتُهَا الْعِيْرُ اِنَّكُمْ لَسٰرِقُوْنَ۝

"यानी कुछ देर के बाद एक मुनादी करने वाले ने पुकारा कि ऐ क़ाफ़िले वालो! तुम चोर हो।"

यहाँ लफ़्ज़ 'सुम्-म' से मालूम होता है कि यह मुनादी फ़ौरन ही नहीं की गई बल्कि कुछ मोहलत दी गई, यहाँ तक कि क़ाफ़िला रवाना हो गया, उसके बाद यह मुनादी की गई ताकि किसी को जालसाज़ी का शुब्हा न हो जाये। बहरहाल! उस मुनादी करने वाले ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों को चोर क़रार दे दिया।

قَالُوْا وَاَقْبَلُوْا عَلَيْهِمْ مَّاذَا تَفْقِدُوْنَ۝

"यानी यूसुफ़ के भाई मुनादी करने वालों की तरफ़ मुतवज्जह होकर कहने लगे कि तुम हमें चोर बना रहे हो, यह तो कहो कि तुम्हारी क्या चीज़ गुम हो गई है।"

قَالُوْا نَفْقِدُ صُوَاعَ الْمَلِكِ وَلِمَنْ جَآءَ بِهٖ حِمْلُ بَعِيْرٍ وَّاَنَا بِهٖ زَعِيْمٌ۝

"मुनादी करने वालों ने कहा कि बादशाह का सुवाअ़ यानी बरतन गुम हो गया है और जो शख़्स उसको कहीं से बरामद करेगा उसको एक ऊँट भर ग़ल्ला इनाम में मिलेगा, और मैं उसका ज़िम्मेदार हूँ।"

यहाँ एक सवाल तो यह पैदा होता है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने बिनयामीन को अपने पास रोकने का यह बहाना क्यों किया, जबकि उनको मालूम था कि वालिद माजिद पर ख़ुद उनकी जुदाई का सदमा नाक़ाबिले बरदाश्त था, अब दूसरे भाई को रोककर उनको दूसरा सदमा देना कैसे गवारा किया?

दूसरा सवाल इससे ज़्यादा अहम यह है कि बेगुनाह भाईयों पर चोरी का इल्ज़ाम लगाना और उसके लिये यह जालसाज़ी कि उनके सामान में ख़ुफ़िया तौर से कोई चीज़ रख दी और फिर सरेआ़म उनकी रुस्वाई ज़ाहिर हो, ये सब काम नाजायज़ हैं, अल्लाह के नबी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने इनको कैसे गवारा किया?

कुछ मुफ़स्सिरीन इमाम क़ुर्तुबी वग़ैरह ने बयान किया है कि जब बिनयामीन ने यूसुफ़

अ़लैहिस्सलाम को पहचान लिया और वह मुत्मईन हो गये तो भाई से यह दरख़्वास्त की कि अब आप मुझे इन भाईयों के साथ वापस न भेजिये, मुझे अपने पास रखिये। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने पहले यही उज़्र किया कि अगर तुम यहाँ रुक गये तो वालिद साहिब को सख़्त सदमा होगा, दूसरे तुम्हें अपने पास रोकने की इसके सिवा कोई सूरत नहीं कि मैं तुम पर चोरी का इल्ज़ाम लगाऊँ, और उस इल्ज़ाम में गिरफ़्तार करके अपने पास रख लूँ। बिनयामीन उन भाईयों के मामले व बर्ताव से कुछ ऐसे तंगदिल थे कि इन सब बातों के लिये तैयार हो गये।

लेकिन यह वाक़िआ़ सही भी हो तो वालिद साहिब का दिल दुखाना और सब भाईयों की रुस्वाई और उनको चोर कहना सिर्फ़ बिनयामीन के राज़ी हो जाने से जायज़ तो नहीं हो सकता। और कुछ हज़रात का यह वजह बयान करना कि ऐलान करने वाले का उनको चोर कहना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इल्म व इजाज़त से न होगा एक बिना दलील का दावा और वाक़िए की सूरत के लिहाज़ से बेजोड़ बात है। इसी तरह यह कहना कि उन भाईयों ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को वालिद से चुराया और फ़रोख़्त किया था इसलिये उनको चोर कहा गया, यह भी एक दूर की बात कहना है, इसलिये इन सब सवालों का सही जवाब वही है जो अ़ल्लामा क़ुर्तुबी और मज़हरी के लेखक वग़ैरह ने दिया है कि इस वाक़िए में जो कुछ किया गया है और कहा गया है वह न बिनयामीन की इच्छा का नतीजा था न यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की अपनी तजवीज़ का, बल्कि ये सब काम अल्लाह के हुक्म से उसी की कामिल हिक्मत को ज़ाहिर करने वाले थे, जिनमें हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की आज़माईश व इम्तिहान की तकमील हो रही थी, इस जवाब की तरफ़ ख़ुद क़ुरआन की इस आयत में इशारा मौजूद है:

كَذٰلِكَ كِدْنَا لِيُوْسُفَ

यानी हमने इसी तरह तदबीर की यूसुफ़ के लिये अपने भाई को रोकने की।

इस आयत में स्पष्ट तौर पर इस हीले व तदबीर को हक़ तआ़ला ने अपनी तरफ़ मन्सूब किया है कि ये सब काम जबकि अल्लाह तआ़ला के हुक्म से हुए तो इनको नाजायज़ कहने के कोई मायने नहीं रहते। इनकी मिसाल ऐसी ही होगी जैसे हज़रत मूसा और ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए में कश्ती तोड़ना, लड़के को क़त्ल करना वग़ैरह, जो बज़ाहिर गुनाह थे, इसलिये मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उन पर एतिराज़ किया मगर ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ये सब काम अल्लाह की मर्ज़ी पर ख़ास मस्लेहत के तहत कर रहे थे, इसलिये उनका कोई गुनाह न था।

قَالُوْا تَاللّٰهِ لَقَدْ عَلِمْتُمْ مَّاجِئْنَا لِنُفْسِدَ فِى الْاَرْضِ وَمَا كُنَّا سٰرِقِيْنَ○

यानी जब शाही ऐलान करने वाले ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों पर चोरी का इल्ज़ाम लगाया तो "उन्होंने कहा कि हुकूमत के अरकान (सदस्य और दरबारी लोग) भी ख़ुद हमारे हालात से वाक़िफ़ हैं कि हम कोई फ़साद करने यहाँ नहीं आये, और न हम चोर हैं।"

قَالُوْا فَمَا جَزَآؤُهٗۤ اِنْ كُنْتُمْ كٰذِبِيْنَ○

"यानी शाही नौकरों ने कहा कि अगर तुम्हारा झूठ साबित हो जाये तो बतलाओ कि चोर

की क्या सज़ा है।"

قَالُوْا جَزَآؤُهٗ مَنْ وُّجِدَ فِیْ رَحْلِهٖ فَهُوَ جَزَآؤُهٗ كَذٰلِكَ نَجْزِی الظّٰلِمِیْنَ۝

"यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने कहा कि जिस शख़्स के सामान में चोरी का माल बरामद हो वह शख़्स ख़ुद ही उसकी जज़ा है, हम चोरों को इसी तरह सज़ा दिया करते हैं।"

मतलब यह है कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त में चोर की सज़ा यह है कि जिस शख़्स का माल चुराया है वह शख़्स उस चोर को अपना ग़ुलाम बनाकर रखे। सरकारी मुलाज़िमों ने इस तरह ख़ुद यूसुफ़ के भाईयों से चोर की सज़ा याक़ूबी शरीअ़त के मुताबिक़ मालूम करके उनको इसका पाबन्द कर दिया कि बिनयामीन के सामान में चोरी का माल बरामद हो तो वे अपने ही फ़ैसले के मुताबिक़ बिनयामीन को यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सुपुर्द करने पर मजबूर हो जायें।

فَبَدَاَ بِاَوْعِیَتِهِمْ قَبْلَ وِعَآءِ اَخِیْهِ

"यानी सरकारी तफ़्तीश करने वालों ने असल साज़िश पर पर्दा डालने के लिये पहले सब भाईयों के सामान की तलाशी ली, पहले ही बिनयामीन का सामान नहीं खोला ताकि उनको शुब्हा न हो जाये।"

ثُمَّ اسْتَخْرَجَهَا مِنْ وِّعَآءِ اَخِیْهِ

"यानी आख़िर में बिनयामीन का सामान खोला गया तो उसमें से सुवाअ़ल्-मलिक को बरामद कर लिया।" उस वक़्त तो सब भाईयों की गर्दनें शर्म से झुक गईं और बिनयामीन को बुरा-भला कहने लगे कि तूने हमारा मुँह काला कर दिया।

كَذٰلِكَ كِدْنَا لِیُوْسُفَ مَا كَانَ لِیَاْخُذَ اَخَاهُ فِیْ دِیْنِ الْمَلِكِ اِلَّآ اَنْ یَّشَآءَ اللّٰهُ

यानी इसी तरह हमने तदबीर की यूसुफ़ के लिये, वह अपने भाई को मिस्र के बादशाह के क़ानून के मातहत गिरफ़्तार नहीं कर सकते थे, क्योंकि मिस्र का क़ानून चोर के मुताल्लिक़ यह था कि चोर को मार-पीट की सज़ा दी जाये और चोरी के माल से दोगुनी क़ीमत वसूल करके छोड़ दिया जाये, मगर उन्होंने यहाँ यूसुफ़ के भाईयों ही से चोर का हुक्म शरीअ़ते याक़ूबी के मुताबिक़ पूछ लिया था, उसके एतिबार से बिनयामीन को अपने पास रोक लेना सही हो गया इस तरह अल्लाह तआ़ला की हिक्मत व मर्ज़ी से यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की यह मुराद पूरी हो गई।

نَرْفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنْ نَّشَآءُ وَفَوْقَ كُلِّ ذِیْ عِلْمٍ عَلِیْمٌ۝

"यानी हम जिसके चाहते हैं उसके बुलन्द दर्जे कर देते हैं, जैसा कि इस वाक़िए में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दर्जे उनके भाईयों के मुक़ाबले में बुलन्द कर दिये गये, और हर इल्म वाले के ऊपर उससे ज़्यादा इल्म वाला मौजूद है।"

मतलब यह है कि मख़्लूक़ में हमने इल्म के एतिबार से बाज़े को बाज़े पर बरतरी दी है, बड़े से बड़े आ़लिम के मुक़ाबले में कोई उससे ज़्यादा इल्म रखने वाला होता है, और अगर कोई शख़्स ऐसा है कि पूरी मख़्लूक़ात में कोई उससे ज़्यादा इल्म नहीं रखता तो फिर रब्बुल-इज़्ज़त जल्ल शानुहू का इल्म तो सबसे बालातर (ज़्यादा और बढ़कर) है ही।

अहकाम व मसाईल

मज़्कूरा आयतों से चन्द अहकाम व मसाईल हासिल हुएः

अव्वल आयतः

وَلِمَنْ جَآءَ بِهٖ حِمْلُ بَعِيْرٍ

(यानी आयत नम्बर 72) से साबित हुआ कि किसी निर्धारित काम के करने पर कोई उजरत या इनाम मुक़र्रर करके सार्वजनिक ऐलान कर देना कि जो शख़्स यह काम करेगा उसको इस क़द्र इनाम या उजरत मिलेगी, जैसे इश्तिहारी मुजरिमों के गिरफ़्तार करने पर या गुमशुदा चीज़ों की वापसी पर इस तरह के इनामी ऐलानात का आ़म तौर पर रिवाज है, अगरचे मामले की इस सूरत पर फ़िक़्ही इजारे की तारीफ़ सादिक़ नहीं आती, मगर इस आयत के एतिबार से इसका भी जायज़ होना साबित हो गया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

दूसरे 'अ-न बिही ज़ओ़म' (मैं इसका ज़िम्मेदार हूँ) से मालूम हुआ कि कोई शख़्स किसी दूसरे शख़्स की तरफ़ से माली हक़ का ज़मानती बन सकता है, और इस सूरत का हुक्म उम्मत के फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) के नज़दीक यह है कि हक़ वाले को इख़्तियार होता है कि वह अपना माल असल क़र्ज़दार से या ज़मानती से जिससे भी चाहे वसूल कर सकता है, हाँ! अगर ज़मानती से वसूल किया गया तो ज़मानती को हक़ होगा कि जिस क़द्र माल उससे लिया गया है वह असल क़र्ज़दार से वसूल करे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, इसमें इमाम मालिक की राय अलग है)

तीसरे 'कज़ालि-क किद्ना लियूसु-फ़.....' से मालूम हुआ कि किसी शरई मस्लेहत की बिना पर मामले की सूरत में कोई ऐसी तब्दीली इख़्तियार करना जिससे अहकाम बदल जायें, जिसको फ़ुक़हा की इस्तिलाह (परिभाषा) में हीला-ए-शरई कहा जाता है, यह शरई तौर पर जायज़ है, शर्त यह है कि उससे शरई अहकाम का बातिल और कण्डम करना लाज़िम न आता हो, वरना ऐसे बहाने तमाम फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस और मसाईल के माहिर उलेमा) की सर्वसम्मति से हराम हैं। जैसे ज़कात से बचने के लिये कोई हीला करना या रमज़ान से पहले कोई ग़ैर-ज़रूरी सफ़र सिर्फ़ इसलिये इख़्तियार करना कि रोज़े न रखने की गुन्जाईश निकल आये, यह सब हज़रात के नज़दीक हराम है। ऐसे ही बहाने करने पर पहली क़ौमों पर अल्लाह का अ़ज़ाब आया है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसे बहानों से मना फ़रमाया है, और पूरी उम्मत इस पर सहमत है कि ऐसे बहाने हराम हैं, उन पर अ़मल करने से कोई काम जायज़ नहीं हो जाता बल्कि दोहरा गुनाह लाज़िम आता है, एक तो असल नाजायज़ काम का दूसरे यह नाजायज़ बहाना जो एक हैसियत से अल्लाह और उसके रसूल के साथ चालबाज़ी के बराबर है। इसी तरह के हीलों के नाजायज़ होने को इमाम बुख़ारी रह. ने **किताबुल-हियल** में साबित किया है।

قَالُوْٓا اِنْ يَّسْرِقْ فَقَدْ سَرَقَ اَخٌ لَّهٗ مِنْ قَبْلُ ۚ فَاَسَرَّهَا يُوْسُفُ فِيْ نَفْسِهٖ وَلَمْ يُبْدِهَا لَهُمْ ۚ قَالَ اَنْتُمْ شَرٌّ مَّكَانًا ۚ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا تَصِفُوْنَ ﴿۷۷﴾ قَالُوْا يٰٓاَيُّهَا الْعَزِيْزُ اِنَّ لَهٗٓ اَبًا شَيْخًا كَبِيْرًا فَخُذْ اَحَدَنَا مَكَانَهٗ ۚ اِنَّا نَرٰىكَ مِنَ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿۷۸﴾ قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اَنْ نَّاْخُذَ اِلَّا مَنْ وَّجَدْنَا مَتَاعَنَا عِنْدَهٗٓ ۙ اِنَّآ اِذًا لَّظٰلِمُوْنَ ﴿۷۹﴾ فَلَمَّا اسْتَيْـَٔسُوْا مِنْهُ خَلَصُوْا نَجِيًّا ۚ قَالَ كَبِيْرُهُمْ اَلَمْ تَعْلَمُوْٓا اَنَّ اَبَاكُمْ قَدْ اَخَذَ عَلَيْكُمْ مَّوْثِقًا مِّنَ اللّٰهِ وَمِنْ قَبْلُ مَا فَرَّطْتُّمْ فِيْ يُوْسُفَ ۚ فَلَنْ اَبْرَحَ الْاَرْضَ حَتّٰى يَاْذَنَ لِيْٓ اَبِيْٓ اَوْ يَحْكُمَ اللّٰهُ لِيْ ۚ وَهُوَ خَيْرُ الْحٰكِمِيْنَ ﴿۸۰﴾ اِرْجِعُوْٓا اِلٰٓى اَبِيْكُمْ فَقُوْلُوْا يٰٓاَبَانَآ اِنَّ ابْنَكَ سَرَقَ ۚ وَمَا شَهِدْنَآ اِلَّا بِمَا عَلِمْنَا وَمَا كُنَّا لِلْغَيْبِ حٰفِظِيْنَ ﴿۸۱﴾ وَسْـَٔلِ الْقَرْيَةَ الَّتِيْ كُنَّا فِيْهَا وَالْعِيْرَ الَّتِيْٓ اَقْبَلْنَا فِيْهَا ۚ وَاِنَّا لَصٰدِقُوْنَ ﴿۸۲﴾

क़ालू इंय्यस्रिक़् फ़-क़द् स-र-क़ अख़ुल्लहू मिन् क़ब्लु, फ़-असर्रहा यूसुफ़ु फ़ी नफ़्सिही व लम् युब्दिहा लहुम् क़ा-ल अन्तुम् शर्रुम्-मकानन् वल्लाहु अअ्लमु बिमा तसिफ़ून (77) क़ालू या अय्युहल्-अ़ज़ीज़ु इन्-न लहू अबन् शैख़न् कबीरन् फ़ख़ुज़् अ-ह-दना मकानहू इन्ना नरा-क मिनल्-मुह्सिनीन (78) क़ा-ल मआ़ज़ल्लाहि अन् नअ्ख़ु-ज़ इल्ला मंव्वजद्ना मता-अ़ना अ़िन्दहू इन्ना इज़ल्-लज़ालिमून (79) ❁ फ़लम्मस्तै-असू मिन्हु ख़ा-लसू नजिय्यन्, क़ा-ल कबीरुहुम् अलम्	कहने लगे अगर इसने चुराया तो चोरी की थी इसके भाई ने भी इससे पहले, तब आहिस्ता से कहा यूसुफ़ ने अपने जी में और उनको न जताया, कहा जी में कि तुम बदतर हो दर्जे में, और अल्लाह ख़ूब जानता है जो तुम बयान करते हो। (77) कहने लगे ऐ अ़ज़ीज़! इसका एक बाप है बहुत बूढ़ा बड़ी उम्र का, सो रख ले एक को हम में से इसकी जगह, हम देखते हैं तू है एहसान करने वाला। (78) बोला अल्लाह पनाह दे कि हम किसी को पकड़ें मगर जिसके पास पाई हमने अपनी चीज़, तो तो हम ज़रूर बेइन्साफ़ हुए। (79) ❁ फिर जब नाउम्मीद हुए उससे अकेले हो बैठे मश्विरा करने को, बोला उनका बड़ा

तअ्लमू अन्-न अबाकुम् क़द् अ-ख़ा-ज अ़लैकुम् मौसिकम्-मिनल्लाहि व मिन् क़ब्लु मा फ़र्रत्तुम् फ़ी यूसु-फ़ फ़-लन् अब्रहल्-अर्-ज़ हत्ता यअ्ज़-न ली अबी औ यह्कुमल्लाहु ली व हु-व ख़ैरुल्-हाकिमीन (80) इर्जिअू इला अबीकुम् फ़क़ूलू या अबाना इन्नब्न-क स-र-क़, व मा शहिद्ना इल्ला बिमा अ़लिम्ना व मा कुन्ना लिल्ग़ैबि हाफ़िज़ीन (81) वस्अलिल्-क़र्य-तल्लती कुन्ना फ़ीहा वल्अ़ीरल्लती अक़्बल्ना फ़ीहा, व इन्ना लसादिक़ून (82)	क्या तुमको मालूम नहीं कि तुम्हारे बाप ने लिया है तुमसे अ़हद अल्लाह का और पहले जो क़सूर कर चुके हो यूसुफ़ के हक़ में, सो मैं तो हरगिज़ न सरकूँगा इस मुल्क से जब तक कि हुक्म दे मुझको मेरा बाप या कज़िया चुका दे अल्लाह मेरी तरफ़, और वह है सबसे बेहतर चुकाने वाला। (80) फिर जाओ अपने बाप के पास और कहो ऐ बाप! तेरे बेटे ने तो चोरी की, और हमने वही कहा था जो हमको ख़बर थी और हमको ग़ैब की बात का ध्यान न था। (81) और पूछ ले उस बस्ती से जिसमें हम थे और उस क़ाफ़िले से जिसमें हम आये हैं, और हम बेशक सच कहते हैं। (82)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

कहने लगे (साहिब) अगर इसने चोरी की तो (ताज्जुब नहीं, क्योंकि) इसका एक भाई (था वह) भी (इसी तरह) इससे पहले चोरी कर चुका है (जिसका किस्सा दुर्रे-मन्सूर में इस तरह लिखा है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की उनकी फूफी परवरिश करती थीं, जब होशियार हुए तो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने लेना चाहा, वह उनको चाहती बहुत थीं, उन्होंने उनको रखना चाहा इसलिये उन्होंने उनकी कमर पर एक पटका कपड़ों के अन्दर बाँधकर मशहूर कर दिया कि पटका गुम हो गया और सब की तलाशी ली तो उनकी कमर में निकला, और उस शरीअ़त के क़ानून के मुवाफ़िक़ उनको फूफी के क़ब्ज़े में रहना पड़ा, यहाँ तक कि उनकी फूफी ने वफ़ात पाई। फिर याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के पास आ गये। और मुम्किन है कि ग़ुलाम बनाने की यह सूरत की भी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की रज़ामन्दी से हुई हो, इसलिये यहाँ भी आज़ाद का ग़ुलाम बनाना लाज़िम नहीं आया, और हर चन्द कि इशारात व परिस्थितियों और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के अख़्लाक़ में ज़रा से विचार करने से आपकी बराअत इस फ़ेल से यक़ीनन मालूम थी मगर बिनयामीन पर जो भाईयों को गुस्सा था उसमें यह बात भी कह दी)।

पस यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने इस बात को (जो आगे आती है) अपने दिल में छुपा रखा और इसको उनके सामने (ज़बान से) ज़ाहिर नहीं किया, यानी (दिल में) यूँ कहा कि इस (चोरी) के मामले

में तुम तो और भी ज़्यादा बुरे हो (यानी हम दोनों भाईयों से तो हक़ीक़त में चोरी का काम नहीं हुआ और तुमने तो इतना बड़ा काम किया कि कोई माल ग़ायब करता है तुमने आदमी ग़ायब कर दिया कि मुझको बाप से बिछड़ा दिया, और ज़ाहिर है कि आदमी की चोरी माल की चोरी से ज़्यादा सख़्त जुर्म है) और जो कुछ तुम (हम दोनों भाईयों के बारे में) बयान कर रहे हो (कि हम चोर हैं) इस (की हक़ीक़त) का अल्लाह ही को ख़ूब इल्म है (कि हम चोर नहीं हैं। जब भाईयों ने देखा कि इन्होंने बिनयामीन को गिरफ़्तार कर लिया और उस पर क़ाबिज़ हो गये तो ख़ुशामद के तौर पर) कहने लगे कि ऐ अ़ज़ीज़! इस (बिनयामीन) का एक बहुत बूढ़ा बाप है (और इसको बहुत चाहता है इसके ग़म में ख़ुदा जाने क्या हाल हो, और हम से इस क़द्र मुहब्बत नहीं) सो आप (ऐसा कीजिए कि) इसकी जगह हम में से एक को रख लीजिये (और अपना ग़ुलाम बना लीजिये), हम आपको नेक-मिज़ाज देखते हैं (उम्मीद है कि इस दरख़्वास्त को मन्ज़ूर फ़रमा लेंगे)। यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने कहा कि ऐसी (बेइन्साफ़ी की) बात से ख़ुदा बचाये कि जिसके पास हमने अपनी चीज़ पाई है उसके सिवा दूसरे शख़्स को पकड़ कर रख लें (अगर हम ऐसा करें तो) इस हालत में तो हम बड़े बेइन्साफ़ समझे जाएँगे (किसी आज़ाद आदमी को ग़ुलाम बना लेना और ग़ुलामों का मामला करना उसकी रज़ामन्दी से भी हराम है)।

फिर जब उनको यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) से तो (उनके साफ़ जवाब के सबब) बिल्कुल उम्मीद न रही (कि बिनयामीन को देंगे) तो (उस जगह से) अलग होकर आपस में मश्विरा करने लगे (कि क्या करना चाहिये, फिर अक्सर की यह राय हुई कि मजबूरी है सब को वापस चलना चाहिये, मगर) उन सब में जो बड़ा था उसने कहा कि (तुम जो सब के सब वापस चलने की सलाह कर रहे हो तो) क्या तुमको मालूम नहीं तुम्हारे बाप तुमसे ख़ुदा की क़सम खिलाकर पक्का क़ौल ले चुके हैं (कि तुम इसको अपने साथ लाना, लेकिन अगर घिर जाओ तो मजबूरी है। सो हम सब के सब तो घिरे नहीं कि तदबीर की गुंजाईश न रहती, इसलिये जहाँ तक मुम्किन हो कुछ तदबीर करनी चाहिये) और इससे पहले यूसुफ़ के बारे में तुम किस क़द्र कोताही कर ही चुके हो (कि उनके साथ जो कुछ बर्ताव हुआ उससे बाप के हुक़ूक़ बिल्कुल ज़ाया हुए। सो वह पुरानी शर्मिन्दगी क्या कम है जो एक नई शर्मिन्दगी लेकर जायें) सो मैं तो इस ज़मीन से टलता नहीं जब तक कि मेरे बाप मुझको (हाज़िरी की) इजाज़त न दें, या अल्लाह तआ़ला मेरे लिये इस मुश्किल को सुलझा दे, और वही ख़ूब सुलझाने वाला है (यानी किसी तदबीर से बिनयामीन छूट जाये। ग़र्ज़ कि मैं या तो इसको लेकर जाऊँगा या बुलाया हुआ जाऊँगा, सो मुझको तो यहाँ छोड़ो और) तुम वापस अपने बाप के पास जाओ, और (जाकर उनसे) कहो कि ऐ अब्बा! आपके बेटे (बिनयामीन) ने चोरी की, (इसलिये गिरफ़्तार हुए) और हम तो वही बयान करते हैं जो हमको (देखने से) मालूम हुआ है, और हम (क़ौल व क़रार देने के वक़्त) ग़ैब की बातों के तो हाफ़िज़ नहीं थे (कि यह चोरी करेगा वरना हम कभी क़ौल न देते)। और (अगर हमारे कहने का यक़ीन न हो तो) उस बस्ती (यानी मिस्र) वालों से (किसी अपने भरोसेमन्द के ज़रिये) पूछ लीजिये जहाँ हम (उस वक़्त) मौजूद थे (जब चोरी बरामद हुई है) और उस क़ाफ़िले वालों से पूछ

लीजिये जिनमें हम शामिल होकर (यहाँ) आये हैं। (मालूम होता है कि और भी किनआन के या आस पास के लोग ग़ल्ला लेने गये होंगे) और यक़ीन जानिये कि हम बिल्कुल सच कहते हैं (चुनाँचे सब ने बड़े को वहाँ छोड़ा और ख़ुद आकर सारा माजरा बयान किया)।

मआरिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में ज़िक्र हुआ था कि मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सगे भाई बिनयामीन के सामान में एक शाही बरतन छुपाकर और फिर उनके सामान से तदबीर के साथ बरामद करके उन पर चोरी का जुर्म आ़यद कर दिया गया था।

उक्त आयतों में से पहली आयत में यह है कि जब यूसुफ़ के भाईयों के सामने बिनयामीन के सामान से चोरी का माल बरामद हो गया और शर्म से उनकी आँखें झुक गईं तो झुंझलाकर कहने लगेः

اِنْ يَّسْرِقْ فَقَدْ سَرَقَ اَخٌ لَّهٗ مِنْ قَبْلُ

यानी "अगर इसने चोरी कर ली तो कुछ ज़्यादा ताज्जुब नहीं, इसका एक भाई था उसने भी इसी तरह इससे पहले चोरी की थी।" मतलब यह था कि यह हमारा सगा भाई नहीं, बाप-शरीक है, इसका एक सगा भाई था उसने भी चोरी की थी।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने उस वक़्त ख़ुद यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर भी चोरी का इल्ज़ाम लगा दिया जिसमें एक वाक़िए की तरफ़ इशारा है जो हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के बचपन में पेश आया था, जिसमें ठीक इसी तरह जैसे यहाँ बिनयामीन पर चोरी का इल्ज़ाम लगाने की साज़िश की गई है, उस वक़्त यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर उनकी बेख़बरी में ऐसी ही साज़िश की गई थी, और यह सब भाईयों को पूरी तरह मालूम था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम उस इल्ज़ाम से बिल्कुल बरी हैं मगर इस वक़्त बिनयामीन पर ग़ुस्से की वजह से उस वाक़िए को भी चोरी क़रार देकर उसका इल्ज़ाम उनके भाई यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर लगा दिया।

वह वाक़िआ क्या था, इसमें रिवायतें अलग-अलग हैं। इमाम इब्ने कसीर रह. ने मुहम्मद बिन इस्हाक़, इमाम मुजाहिद रह. इमामे तफ़सीर के हवाले से नक़ल किया है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश के थोड़े ही अ़रसे बाद बिनयामीन पैदा हुए तो यह पैदाईश ही वालिदा की मौत का सबब बन गई, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम और बिनयामीन दोनों भाई बग़ैर माँ के रह गये तो उनका पालन-पोषण उनकी फूफी की गोद में हुआ, अल्लाह तआ़ला ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को बचपन ही से कुछ ऐसी शान अ़ता फ़रमाई थी कि जो देखता उनसे बेहद मुहब्बत करने लगता था, फूफी का भी यही हाल था कि किसी वक़्त उनको नज़रों से ग़ायब करने पर क़ादिर न थीं। दूसरी तरफ़ वालिदे बुज़ुर्गवार हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का भी कुछ ऐसा ही हाल था मगर बहुत छोटा होने की वजह से इसकी ज़रूरत थी कि किसी औ़रत की निगरानी में रखा जाये, इसलिये फूफी के हवाले कर दिया था। अब जबकि वह चलने फिरने के क़ाबिल हो गये तो

याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का इरादा हुआ कि यूसुफ़ को अपने साथ रखें, फूफी से कहा तो उन्होंने उज़्र किया, फिर ज़्यादा ज़ोर देने पर मजबूर होकर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को उनके वालिद के हवाले तो कर दिया मगर एक तदबीर उनको वापस लेने की यह कर दी कि फूफी के पास एक पटका था जो हज़रत इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ से उनको पहुँचा था और उसकी बड़ी क़द्र व क़ीमत समझी जाती थी, यह पटका फूफी ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कपड़ों के नीचे कमर पर बाँध दिया।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के जाने के बाद यह शोहरत कर दी कि मेरा पटका चोरी हो गया, फिर तलाशी ली गई तो वह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास निकला, याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त के हुक्म के मुताबिक़ अब फूफी को यह हक़ हो गया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को अपना ग़ुलाम बनाकर रखें। याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने जब यह देखा कि शरई हुक्म के इख़्तियार करने से फूफी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की मालिक बन गई तो उनके हवाले कर दिया, और जब तक फूफी ज़िन्दा रहीं यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम उन्हीं की तरबियत में रहे।

यह वाक़िआ था जिसमें चोरी का इल्ज़ाम हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर लगा और फिर हर शख़्स पर असल हक़ीक़त खुल गई कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम चोरी के मामूली शुब्हे से भी बरी हैं, फूफी की मुहब्बत ने उनसे यह साज़िश का जाल फैलवाया था, भाईयों को भी यह हक़ीक़त मालूम थी इसकी बिना पर किसी तरह मुनासिब न था कि उनकी तरफ़ चोरी को मन्सूब करते मगर उनके हक़ में भाईयों की जो ज़्यादती और ग़लत रविश अब तक होती चली आई थी यह भी उसी का एक आख़िरी हिस्सा था।

فَاَسَرَّهَا یُوْسُفُ فِیْ نَفْسِهٖ وَلَمْ یُبْدِهَا لَهُمْ

यानी ''यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने भाईयों की यह बात सुनकर अपने दिल में रखी कि ये लोग अब तक भी मेरी मुख़ालफ़त पर लगे हैं कि चोरी का इल्ज़ाम लगा रहे हैं, मगर इसका इज़हार भाईयों पर नहीं होने दिया कि यूसुफ़ ने उनकी यह बात सुनी है और इससे कुछ असर लिया है।

قَالَ اَنْتُمْ شَرٌّ مَّكَانًا وَّ اللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا تَصِفُوْنَ○

''यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने (अपने दिल में) कहा कि तुम लोग ही बुरे दर्जे और बुरे हाल में हो कि भाई पर चोरी की तोहमत जान-बूझकर लगाते हो, और फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ही ज़्यादा जानने वाले हैं कि जो कुछ तुम कह रहे हो वह सही है या ग़लत।'' पहला जुमला तो दिल में कहा गया है यह दूसरा जुमला मुम्किन है कि भाईयों के जवाब में ऐलानिया कह दिया हो।

قَالُوْا یٰۤاَیُّهَا الْعَزِیْزُ اِنَّ لَهٗۤ اَبًا شَیْخًا كَبِیْرًا فَخُذْ اَحَدَنَا مَكَانَهٗ. اِنَّا نَرٰىكَ مِنَ الْمُحْسِنِیْنَ○

यूसुफ़ के भाईयों ने जब देखा कि कोई बात चलती नहीं और बिनयामीन को यहाँ छोड़ने के सिवा चारा नहीं तो अ़ज़ीज़े मिस्र की ख़ुशामद की और यह दरख़्वास्त की कि इसके वालिद बहुत बूढ़े और ज़ईफ़ हैं (इसकी जुदाई उनसे बरदाश्त न होगी) इसलिये आप इसके बदले में हममें से किसी को गिरफ़्तार कर लें, यह दरख़्वास्त आपसे हम इस उम्मीद पर कर रहे हैं कि हम यह महसूस करते हैं कि

आप बहुत एहसान करने वाले हैं या यह कि आपने इससे पहले भी हमारे साथ एहसान का सुलूक फ़रमाया है।

قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اَنْ نَّاْخُذَ اِلَّا مَنْ وَّجَدْنَا مَتَاعَنَا عِنْدَهٗۤ اِنَّاۤ اِذًا لَّظٰلِمُوْنَ○

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने भाईयों की दरख़्वास्त का जवाब क़ानून के मुताबिक़ यह दिया कि यह बात तो हमारे इख़्तियार में नहीं कि जिसको चाहें पकड़ लें, बल्कि जिसके पास चोरी का माल बरामद हुआ अगर उसके सिवा किसी दूसरे को पकड़ लें तो हम तुम्हारे ही फ़तवे और फ़ैसले के मुताबिक़ ज़ालिम हो जायेंगे, क्योंकि तुमने ही यह कहा है कि जिसके पास चोरी का माल बरामद हो वही उसकी जज़ा है।

فَلَمَّا اسْتَيْئَسُوْا مِنْهُ خَلَصُوْا نَجِيًّا.

यानी जब यूसुफ़ के भाई बिनयामीन की रिहाई से मायूस हो गये तो आपस में मश्विरे के लिये अलग जगह में जमा हो गये।

قَالَ كَبِيْرُهُمْ............الخ

उनके बड़े भाई ने कहा कि तुम्हें यह मालूम नहीं कि तुम्हारे बाप ने तुमसे बिनयामीन के वापस लाने का पुख़्ता अ़हद लिया था, और यह कि तुम इससे पहले भी यूसुफ़ के मामले में एक कोताही और ग़लती कर चुके हो, इसलिये मैं तो अब मिस्र की ज़मीन को उस वक़्त तक न छोड़ूँगा जब तक मेरे वालिद ख़ुद ही मुझे यहाँ से वापस आने का हुक्म न दें, या अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वही के ज़रिये मुझे यहाँ से निकलने का हुक्म हो और अल्लाह तआ़ला ही बेहतरीन हुक्म करने वाले हैं।

यह बड़े भाई जिनका कलाम बयान हुआ है कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यहूदा हैं, और यह अगरचे उम्र में सबसे बड़े नहीं मगर इल्म व फ़ज़्ल में बड़े थे। और कुछ मुफ़स्सिरीन ने कहा कि रोबील हैं जो उम्र में सबसे बड़े हैं, और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़त्ल न करने का मश्विरा इन्होंने ही दिया था। और कुछ ने कहा कि यह बड़े भाई शमऊन हैं जो रुतबे व मक़ाम के एतिबार से सब भाईयों में बड़े समझे जाते थे।

اِرْجِعُوْۤا اِلٰۤى اَبِيْكُمْ

यानी बड़े भाई ने कहा कि मैं तो यहीं रहूँगा, आप सब लोग अपने वालिद के पास वापस जायें और उनको बतलायें कि आपके बेटे ने चोरी की, और हम जो कुछ कह रहे हैं वह अपने चश्मदीद हालात हैं कि चोरी का माल उनके सामान से हमारे सामने बरामद हुआ है।

وَمَا كُنَّا لِلْغَيْبِ حٰفِظِيْنَ○

यानी हमने जो आप से अ़हद किया था कि हम बिनयामीन को ज़रूर वापस लायेंगे यह अ़हद ज़ाहिरी हालात के एतिबार से था, ग़ैब का हाल तो हम न जानते थे कि यह चोरी करके गिरफ़्तार और हम मजबूर हो जायेंगे। और इस जुमले के यह मायने भी हो सकते हैं कि हमने अपने भाई बिनयामीन की पूरी हिफ़ाज़त की कि कोई ऐसा काम उनसे न हो जाये जिसके सबब वह तकलीफ़ में

पड़ें, मगर हमारी यह कोशिश ज़ाहिरी हालात ही की हद तक हो सकती थी, हमारी नज़रों से ग़ायब ना-जानकारी में उनसे यह काम हो जायेगा इसका हमको कोई इल्म न था।

चूँकि यूसुफ़ के भाई इससे पहले एक फ़रेब अपने वालिद को दे चुके थे और यह जानते थे कि हमारे ऊपर वाले बयान से वालिद को हरगिज़ इत्मीनान न होगा और वह हमारी बात पर यकीन न करेंगे इसलिये मज़ीद ताकीद के लिये कहा कि आपको हमारा यकीन न आये तो आप उस शहर के लोगों से तहक़ीक़ कर लें जिसमें हम थे, यानी मिस्र शहर, और आप उस क़ाफ़िले से भी तहक़ीक़ कर लें जो हमारे साथ ही मिस्र से किनआ़न आया है, और हम इस बात में बिल्कुल सच्चे हैं।

तफ़सीरे मज़हरी में इस जगह इस सवाल को दोहराया गया है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने वालिद के साथ इस क़द्र बेरहमी का मामला कैसे गवारा कर लिया कि ख़ुद अपने हालात से भी इत्तिला नहीं दी, फिर छोटे भाई को भी रोक लिया जबकि बार-बार ये भाई मिस्र आते रहे, न उनको अपना राज़ बताया न वालिद के पास इत्तिला भेजी। इन सब बातों का जवाब तफ़सीरे मज़हरी ने यही दिया है:

اِنَّهٗ عَمِلَ ذٰلِكَ بِاَمْرِ اللّٰهِ تَعَالٰى لِيَزِيْدَ فِىْ بَلَاۤءِ يَعْقُوْبَ.

"यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ये सारे काम अल्लाह तआ़ला के हुक्म से किये जिनका मंशा हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के इम्तिहान और आज़माईश को पूरा करना था।

अहकाम व मसाईल

وَمَاشَهِدْنَآ اِلَّا بِمَا عَلِمْنَا

(और हमने वही कहा जिसकी हमको ख़बर थी.........) से साबित हुआ कि इनसान जब किसी से कोई मामला और अ़हद व इक़रार करता है तो वह ज़ाहिरी हालात ही पर महमूल होता है, ऐसी चीज़ों पर हावी नहीं होता जो किसी के इल्म में नहीं। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों ने वालिद से जो भाई की हिफ़ाज़त का वायदा किया था वह अपने इख़्तियारी मामलात के बारे में था और यह मामला कि उन पर चोरी का इल्ज़ाम आ गया और उसमें पकड़े गये इससे मुआ़हदे पर कुछ असर नहीं पड़ता।

दूसरा मसला तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इस आयत से यह निकाला गया है कि इस जुमले से यह साबित हुआ कि शहादत (गवाही) का मदार इल्म पर है, इल्म चाहे किसी तरीक़े से हासिल हो उसके मुताबिक़ शहादत दी जा सकती है। इसलिये किसी वाक़िए की शहादत जिस तरह उसको अपनी आँख से देखकर दी जा सकती है इसी तरह किसी मोतबर से सुनकर भी दी जा सकती है। शर्त यह है कि असल मामले को छुपाये नहीं, बयान कर दे कि यह वाक़िआ़ ख़ुद नहीं देखा, फ़ुलाँ मोतबर आदमी से सुना है, इसी उसूल की बिना पर मालिकी फ़ुक़हा ने अंधे की गवाही को भी जायज़ क़रार दिया है।

मसलाः उक्त आयतों से यह भी साबित हुआ कि अगर कोई शख़्स हक़ और सही रास्ते पर है मगर मौक़ा ऐसा है कि देखने वालों को नाहक़ या गुनाह का शुब्हा हो सकता है तो उसको चाहिये कि इस संदेह व धोखे में पड़ने को दूर कर दे ताकि देखने वाले बदगुमानी के गुनाह में मुब्तला न हों। जैसे

बिनयामीन के इस वाकिए में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पिछले वाकिए की बिना पर तोहमत और शुब्हे का मौक़ा पैदा हो गया था इसलिये इसकी सफ़ाई के लिये बस्ती वालों की गवाही और क़ाफ़िले वालों की गवाही पेश की गई।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने अ़मल से भी इसकी ताकीद फ़रमाई है, जबकि आप उम्मुल-मोमिनीन हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अ़न्हा के साथ मस्जिद से एक गली में तशरीफ़ ले जा रहे थे तो उस गली के सिरे पर दो शख़्स नज़र पड़े, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दूर ही से फ़रमा दिया कि मेरे साथ सफ़िया बिन्ते हुय्यि हैं। उन दोनों हज़रात ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या आपके बारे में किसी को कोई बदगुमानी हो सकती है? तो फ़रमाया कि हाँ शैतान इनसान की रग-रग में घुस जाता है, हो सकता है कि किसी के दिल में शुब्हा डाल दे। (बुख़ारी, मुस्लिम व क़ुर्तुबी)

قَالَ بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ أَنْفُسُكُمْ أَمْرًا ۖ

فَصَبْرٌ جَمِيلٌ ۖ عَسَى اللَّهُ أَنْ يَأْتِيَنِي بِهِمْ جَمِيعًا ۚ إِنَّهُ هُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿٨٣﴾ وَتَوَلَّىٰ عَنْهُمْ وَقَالَ يَا أَسَفَىٰ عَلَىٰ يُوسُفَ وَابْيَضَّتْ عَيْنَاهُ مِنَ الْحُزْنِ فَهُوَ كَظِيمٌ ﴿٨٤﴾ قَالُوا تَاللَّهِ تَفْتَأُ تَذْكُرُ يُوسُفَ حَتَّىٰ تَكُونَ حَرَضًا أَوْ تَكُونَ مِنَ الْهَالِكِينَ ﴿٨٥﴾ قَالَ إِنَّمَا أَشْكُو بَثِّي وَحُزْنِي إِلَى اللَّهِ وَأَعْلَمُ مِنَ اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٨٦﴾ يَا بَنِيَّ اذْهَبُوا فَتَحَسَّسُوا مِنْ يُوسُفَ وَأَخِيهِ وَلَا تَيْأَسُوا مِنْ رَوْحِ اللَّهِ ۖ إِنَّهُ لَا يَيْأَسُ مِنْ رَوْحِ اللَّهِ إِلَّا الْقَوْمُ الْكَافِرُونَ ﴿٨٧﴾

क़ा-ल बल् सव्वलत् लकुम् अन्फ़ुसुकुम् अम्रन्, फ़-सब्रुन् जमीलुन्, अ़सल्लाहु अंय्यअ्ति-यनी बिहिम् जमीअ़न्, इन्नहू हुवल्-अ़लीमुल्-हकीम (83) व तवल्ला अ़न्हुम् व क़ा-ल या अ-सफ़ा अ़ला यूसु-फ़ वब्यज़्ज़त् अ़ैनाहु मिनल्-हुज़्नि फ़हु-व कज़ीम (84) क़ालू तल्लाहि तफ़्तउ तज़्कुरु यूसु-फ़ हत्ता तकू-न ह-रज़न् औ तकू-न मिनल्-हालिकीन (85) क़ा-ल इन्नमा अश्कू बस्सी व	बोला कोई नहीं, बना ली है तुम्हारे जी ने एक बात, अब सब्र ही बेहतर है, शायद अल्लाह ले आये मेरे पास उन सब को, वही है ख़बरदार हिक्मतों वाला। (83) और उल्टा फिरा उनके पास से और बोला ऐ अफ़सोस! यूसुफ़ पर, और सफ़ेद हो गईं आँखें उसकी ग़म से, सो वह ख़ुद को घोंट रहा था। (84) कहने लगे क़सम है अल्लाह की तू न छोड़ेगा यूसुफ़ की याद को जब तक कि घुल जाये या हो जाये मुर्दा। (85) बोला मैं तो खोलता हूँ अपनी बेक़रारी और ग़म अल्लाह के

हुज़्नी इलल्लाहि व अअ्लमु मिनल्लाहि मा ला तअ्लमून (86) या बनिय्यज़्हबू फ़-तहस्ससू मिंय्यूसु-फ़ व अख़ीहि व ला तै-असू मिर्रौहिल्लाहि, इन्नहू ला यै-असु मिर्रौहिल्लाहि इल्लल् क़ौमुल्-काफ़िरून (87)	सामने और जानता हूँ अल्लाह की तरफ़ से जो तुम नहीं जानते। (86) ऐ बेटो! जाओ और तलाश करो यूसुफ़ की, और उसके भाई की और नाउम्मीद मत हो अल्लाह के फ़ैज़ से, बेशक नाउम्मीद नहीं होते अल्लाह के फ़ैज़ से मगर वही लोग जो काफ़िर हैं। (87)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के मामले में उन सबसे असंतुष्ट हो चुके थे तो उनके पहले मामले पर अन्दाज़ा करके) फ़रमाने लगे (कि बिनयामीन चोरी में गिरफ़्तार नहीं हुआ) बल्कि तुमने अपने दिल से एक बात बना ली है, सो (ख़ैर पहले की तरह) सब्र ही करूँगा, जिसमें शिकायत का नाम न होगा (मुझको) अल्लाह से उम्मीद है कि उन सब को (यानी यूसुफ़ और बिनयामीन और जो बड़ा भाई अब मिस्र में रह गया है उन तीनों को) मुझ तक पहुँचा देगा, (क्योंकि) वह (असल हक़ीक़त से) ख़ूब वाक़िफ़ है (इसलिये उसको सब की ख़बर है कि कहाँ-कहाँ और किस-किस हाल में हैं, और वह) बड़ी हिक्मत वाला है (जब मिलाना चाहेगा तो हज़ारों असबाब व तदबीरें दुरुस्त कर देगा)। और (यह जवाब देकर इस वजह से कि उनसे रंज पहुँचा था) उनसे दूसरी तरफ़ रुख़ कर लिया और (इस वजह से कि इस नये ग़म से वह पुराना ग़म और ताज़ा हो गया यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को याद करके) कहने लगे कि हाय यूसुफ़ अफ़सोस! और ग़म से (रोते-रोते) उनकी आँखें सफ़ेद पड़ गईं (क्योंकि ज़्यादा रोने से आँखों की सियाही कम हो जाती है और आँखें बेरौनक़ या बिल्कुल बेनूर हो जाती हैं)। और वह (ग़म से जी ही जी में) घुटा करते थे (क्योंकि ग़म की ज़्यादती के साथ जब बरदाश्त में बहुत ज़्यादा होगी जैसा कि साबिर लोगों की शान है तो घुटने की कैफ़ियत पैदा होगी)।

बेटे कहने लगे- ख़ुदा की क़सम (मालूम होता है) तुम हमेशा-हमेशा यूसुफ़ की यादगारी में लगे रहोगे, यहाँ तक कि घुल-घुलकर जान होंठों पर आ जायेगी या यह कि बिल्कुल मर ही जाओगे (तो इतने ग़म से फ़ायदा क्या)। याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (तुमको मेरे रोने से क्या बहस) मैं तो अपने रंज व ग़म की सिर्फ़ अल्लाह से शिकायत करता हूँ (तुमसे तो कुछ नहीं कहता) और अल्लाह की बातों को जितना मैं जानता हूँ तुम नहीं जानते (बातों से मुराद या तो लुत्फ़ व करम व कामिल रहमत है और या मुराद उन सबसे मिलने का इल्हाम है जो बिना किसी माध्यम के हो या यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के ख़्वाब के द्वारा हो, जिसकी ताबीर अब तक ज़ाहिर नहीं हुई थी, और उसका ज़ाहिर होना और सामने आना ज़रूरी है)। ऐ मेरे बेटो! (मैं अपने ग़म का इज़हार सिर्फ़ अल्लाह की जनाब में करता हूँ, वही तमाम असबाब को पैदा करने और बनाने वाला है लेकिन ज़ाहिरी तदबीर तुम

भी करो कि एक बार फिर सफ़र में) जाओ और यूसुफ़ और उसके भाई की तलाश करो (यानी उस फ़िक्र व तदबीर की जुस्तजू करो जिससे यूसुफ़ का निशान मिले और बिनयामीन को रिहाई हो) और अल्लाह तआला की रहमत से नाउम्मीद मत हो, बेशक अल्लाह की रहमत से वही लोग नाउम्मीद होते हैं जो काफ़िर हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम के छोटे बेटे बिनयामीन की मिस्र में गिरफ़्तारी के बाद उनके भाई वतन वापस आये और याक़ूब अलैहिस्सलाम को यह माजरा सुनाया, और यकीन दिलाना चाहा कि हम इस वाकिए में बिल्कुल सच्चे हैं आप इस बात की तस्दीक़ मिस्र के लोगों से भी कर सकते हैं, और जो क़ाफ़िला हमारे साथ मिस्र से किनआन आया है उससे भी मालूम कर सकते हैं कि बिनयामीन की चोरी पकड़ी गई इसलिये वह गिरफ़्तार हो गये। याक़ूब अलैहिस्सलाम को चूँकि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के मामले में इन बेटों का झूठ साबित हो चुका था इसलिये इस मर्तबा भी यक़ीन नहीं आया, अगरचे वास्तव में इस वक़्त उन्होंने कोई झूठ नहीं बोला था, इसलिये इस मौक़े पर भी वही कलिमात फ़रमाये जो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की गुमशुदगी के वक़्त फ़रमाये थेः

بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا، فَصَبْرٌ جَمِيْلٌ.

यानी यह बात जो तुम कह रहो हो सही नहीं, तुमने ख़ुद बात बनाई है, मगर मैं अब भी सब्र ही करता हूँ, वही मेरे लिये बेहतर है।

इमाम क़ुर्तुबी ने इसी से यह नतीजा निकाला है कि मुज्तहिद जो बात अपने इज्तिहाद से कहता है उसमें ग़लती भी हो सकती है यहाँ तक कि पैग़म्बर भी जो बात अपने इज्तिहाद से कहें उसमें शुरू में ग़लती हो जाना मुम्किन है, जैसे इस मामले में पेश आया कि बेटों के सच को झूठ क़रार दे दिया मगर अम्बिया की ख़ुसूसियत यह है कि उनको अल्लाह की तरफ़ से ग़लती पर आगाह करके उससे हटा दिया जाता है और अन्जामकार वे हक़ को पा लेते हैं।

यहाँ यह भी मुम्किन है कि हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम के ज़ेहन में बात बनाने से मुराद वह बात बनाना हो जो मिस्र में बनाई गई कि एक ख़ास ग़र्ज़ के मातहत जालसाज़ी चोरी दिखलाकर बिनयामीन को गिरफ़्तार किया गया, जिसका अन्जाम आईन्दा बेहतरीन सूरत में खुलकर सामने आने वाला था, इस आयत के अगले जुमले से इस तरफ़ इशारा भी हो सकता है जिसमें फ़रमायाः

عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَنِىْ بِهِمْ جَمِيْعًا.

यानी क़रीब है कि अल्लाह तआला उन सब को मुझसे मिला देगा।

ख़ुलासा यह है कि हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम ने इस मर्तबा जो बेटों की बात को तस्लीम नहीं किया इसका हासिल यह था कि दर हक़ीक़त न कोई चोरी हुई है और न बिनयामीन गिरफ़्तार हुए हैं, बात कुछ और है, यह अपनी जगह सही था मगर बेटों ने अपनी जानकारी के मुताबिक़ जो कुछ कहा था वह भी ग़लत न था।

وَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يٰۤاَسَفٰى عَلٰى يُوْسُفَ وَابْيَضَّتْ عَيْنٰهُ مِنَ الْحُزْنِ فَهُوَ كَظِيْمٌ○

यानी हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने इस दूसरे सदमे के बाद बेटों से इस मामले में बातचीत को छोड़कर अपने रब के सामने फ़रियाद शुरू की, और फ़रमाया कि मुझे सख़्त रंज व ग़म है यूसुफ़ पर, और इस रंज व ग़म में रोते-रोते उनकी आँखें सफ़ेद हो गईं यानी बीनाई जाती रही या बहुत कमज़ोर हो गई। इमाम मुक़ातल ने फ़रमाया कि यह कैफ़ियत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की छह साल रही कि बीनाई (आँखों की रोशनी) तक़रीबन जाती रही थी। 'फ़हु-व कज़ीम' यानी फिर वह ख़ामोश हो गये, किसी से अपना दुख न कहते थे। 'कज़ीम', कज़्म से बना है, जिसके मायने बन्द हो जाने और भर जाने के हैं। मुराद यह है कि रंज व ग़म से उनका दिल भर गया और ज़बान बन्द हो गई कि किसी से अपना रंज व ग़म बयान न करते थे।

इसलिये कज़्म के मायने ग़ुस्सा पी जाने के आते हैं कि ग़ुस्सा दिल में भरा हुआ होने के बावजूद ज़बान या हाथ से कोई चीज़ ग़ुस्से के तक़ाज़े के मुताबिक़ ज़ाहिर न हुई, हदीस में है:

وَمَنْ يَّكْظِمِ الْغَيْظَ يَاْجُرْهُ اللّٰهُ.

"यानी जो शख़्स अपने ग़ुस्से को पी जाये और उसके तक़ाज़े पर बावजूद ताक़त के अ़मल न करे, अल्लाह तआ़ला उसको बड़ा अज्र देंगे।"

एक हदीस में है कि हश्र के दिन अल्लाह तआ़ला ऐसे लोगों को आ़म मजमे के सामने लाकर जन्नत की नेमतों में इख़्तियार देंगे कि जो चाहें ले लें।

इमाम इब्ने जरीर रह. ने इस जगह एक हदीस नक़ल की है कि मुसीबत के वक़्त 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न' पढ़ने की तालीम इस उम्मत की ख़ुसूसियात में से है, और यह कलिमा इनसान को रंज व ग़म की तकलीफ़ से निजात देने में बड़ा असरदार है। उम्मते मुहम्मदिया की ख़ुसूसियत इससे मालूम हुई कि इस सख़्त ग़म व सदमे के वक़्त हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने इस कलिमे के बजाय 'या अ-सफ़ा अ़ला यूसु-फ़' फ़रमाया। इमाम बैहक़ी ने शअ़बुल-ईमान में भी यह हदीस इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल की है।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के साथ हद से ज़्याद मुहब्बत क्यों थी?

इस मक़ाम पर हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के साथ ग़ैर-मामूली (बहुत ज़्यादा) मुहब्बत और उनके गुम होने पर इतना असर कि उस जुदाई की सारी मुद्दत में जो कुछ रिवायतों की बिना पर चालीस साल और कुछ की बिना पर अस्सी साल बतलाई जाती है मुसलसल रोते रहना, यहाँ तक कि बीनाई जाती रही, बज़ाहिर उनकी पैग़म्बराना शान के लायक़ नहीं कि औलाद से इतनी मुहब्बत करें जबकि क़ुरआने करीम ने औलाद को फ़ितना क़रार दिया है। इरशाद है:

إِنَّمَا أَمْوَالُكُمْ وَأَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ

"यानी तुम्हारे माल और औलाद फ़ितने और आज़माईश हैं।" और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की शान क़ुरआने करीम ने यह बतलाई है कि:

إِنَّا أَخْلَصْنٰهُمْ بِخَالِصَةٍ ذِكْرَى الدَّارِ ٥

यानी "हमने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को एक ख़ास सिफ़त का मालिक बना दिया है, वह सिफ़त है आख़िरत के जहान की याद।" मालिक बिन दीनार रह. ने इसके मायने यह बयान फ़रमाये हैं कि हमने उनके दिलों से दुनिया की मुहब्बत निकाल दी और सिर्फ़ आख़िरत की मुहब्बत से उनके दिलों को भर दिया, किसी चीज़ के लेने या छोड़ने में उनकी निगाह और मक़सद सिर्फ़ आख़िरत होती है।

इस मजमूए से यह इश्काल मज़बूत होकर सामने आता है कि हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का औलाद की मुहब्बत में ऐसा मशग़ूल होना किस तरह सही हुआ?

हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीर-ए-मज़हरी में इस इश्काल को ज़िक्र करके हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रह. की एक ख़ास तहक़ीक़ नक़ल फ़रमाई है, जिसका ख़ुलासा यह है कि बेशक दुनिया और दुनिया से संबन्धित चीज़ों की मुहब्बत बुरी और नापसन्दीदा है, क़ुरआन व हदीस की बेशुमार वज़ाहतें इस पर गवाह और सुबूत हैं मगर दुनिया में जो चीज़ें आख़िरत से मुताल्लिक़ हैं उनकी मुहब्बत दर हक़ीक़त आख़िरत ही की मुहब्बत में दाख़िल है। यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कमालात सिर्फ़ ज़ाहिरी हुस्न ही नहीं बल्कि पैग़म्बराना पाकदामनी और सीरत का हुस्न भी हैं, इस मजमूए की वजह से उनकी मुहब्बत किसी दुनियावी सामान की मुहब्बत न थी बल्कि दर हक़ीक़त आख़िरत ही की मुहब्बत थी।

यहाँ यह बात भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि यह मुहब्बत अगरचे हक़ीक़त में दुनिया की मुहब्बत न थी मगर बहरहाल इसमें एक हैसियत दुनियावी भी थी, इसी वजह से यह मुहब्बत हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के इम्तिहान का ज़रिया बनी, और चालीस साल की जुदाई का नाक़ाबिले बरदाश्त सदमा सहन करना पड़ा। और इस वाक़िए के पहले हिस्सों से लेकर आख़िर तक इस पर सुबूत हैं कि अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से कुछ ऐसी सूरतें बनती चली गईं कि यह सदमा लम्बे से लम्बा होता चला गया, वरना वाक़िए के शुरू में इतनी ज़्यादा मुहब्बत वाले बाप से यह मुम्किन न होता कि वह बेटों की बात सुनकर घर में बैठे रहते, बल्कि मौक़े पर पहुँचकर तफ़्तीश व तलाश करते तो उसी वक़्त पता चल जाता, मगर अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से ऐसी सूरतें बन गईं कि उस वक़्त यह ध्यान न आया, फिर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को वही के ज़रिये इससे रोक दिया गया कि वह अपने हाल की अपने वालिद को ख़बर भेजें, यहाँ तक कि मिस्र की हुकूमत व सत्ता मिलने के बाद भी उन्होंने कोई ऐसा क़दम नहीं उठाया।

और इससे भी ज़्यादा सब्र की आज़माईश करने वाले वे वाक़िआत थे जो बार-बार उनके भाईयों के मिस्र जाने के मुताल्लिक़ पेश आते रहे, उस वक़्त भी न भाईयों पर इज़्हार फ़रमाया

न वालिद को ख़बर भेजने की कोशिश फ़रमाई बल्कि दूसरे भाई को भी अपने पास एक तदबीर के ज़रिये रोककर वालिद के सदमे को दोहरा कर दिया। ये सब चीज़ें यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जैसे मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर से उस वक़्त तक मुम्किन नहीं जब तक उनको **वही** (अल्लाह की तरफ़ से पैग़ाम) के ज़रिये इससे न रोक दिया गया हो, इसी लिये इमाम क़ुर्तुबी वग़ैरह ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के इस सारे अ़मल को अल्लाह की वही की हिदायत क़रार दिया है और 'कज़ालि-क किदना लियूसु-फ़..........' के क़ुरआनी इरशाद में भी इस तरफ़ इशारा मौजूद है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

قَالُوْا تَاللّٰهِ تَفْتَؤُا تَذْكُرُ يُوْسُفَ.

यानी बेटे वालिद साहिब के इस सख़्त रंज व ग़म, परेशानी व बेक़रारी उस पर सब्रे-जमील को देखकर कहने लगे कि ख़ुदा की क़सम आप तो यूसुफ़ को हमेशा याद ही करते रहेंगे यहाँ तक कि आप बीमार पड़ जायें और हलाक होने वालों में दाख़िल हो जायें (आख़िर हर सदमे और ग़म की कोई इन्तिहा होती है, वक़्त गुज़रने से इनसान उसको भूल जाता है, मगर आप इतना लम्बा अ़रसा गुज़र जाने के बाद भी उसी पहले दिन में हैं, और आपका ग़म उसी तरह ताज़ा है)।

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने बेटों की बात सुनकर फ़रमायाः

اِنَّمَآ اَشْكُوْا بَثِّيْ وَحُزْنِيْٓ اِلَى اللّٰهِ.

यानी मैं तो अपनी फ़रियाद और रंज व ग़म का इज़हार तुम से या किसी दूसरे से नहीं करता, बल्कि अल्लाह जल्ल शानुहू की ज़ात से करता हूँ इसलिये मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो, और साथ ही यह भी ज़ाहिर फ़रमाया कि मेरा यह याद करना ख़ाली न जायेगा, मैं अपने अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वह चीज़ जानता हूँ जिसकी तुमको ख़बर नहीं। यानी अल्लाह तआ़ला ने मुझसे वायदा फ़रमाया हुआ है कि वह फिर मुझे उन सब से मिलायेंगे।

يٰبَنِيَّ اذْهَبُوْا فَتَحَسَّسُوْا مِنْ يُّوْسُفَ وَاَخِيْهِ

"यानी ऐ मेरे बेटो! जाओ, यूसुफ़ और उसके भाई को तलाश करो और अल्लाह तआ़ला की रहमत से मायूस न हो क्योंकि उसकी रहमत से सिवाय काफ़िरों के कोई मायूस नहीं होता।"

हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने इतने समय के बाद बेटों को यह हुक्म दिया कि जाओ यूसुफ़ और उनके भाई को तलाश करो, और उनके मिलने से मायूस न हो। इससे पहले कभी इस तरह का हुक्म न दिया था, ये सब चीज़ें अल्लाह की तक़दीर व फ़ैसले के ताबे थीं, इससे पहले मिलना मुक़द्दर में न था, इसलिये ऐसा कोई काम भी नहीं किया गया, और अब मुलाक़ात का वक़्त आ चुका था इसलिये अल्लाह तआ़ला ने उसके मुनासिब तदबीर दिल में डाली।

और दोनों की तलाश का रुख़ मिस्र ही की तरफ़ क़रार दिया, जो बिनयामीन के हक़ में तो मालूम और मुतैयन था मगर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को मिस्र में तलाश करने की ज़ाहिरी हालात के एतिबार से कोई वजह न थी, लेकिन अल्लाह तआ़ला जब किसी काम का इरादा फ़रमाते हैं

तो उसके मुनासिब असबाब जमा फ़रमा देते हैं, इसलिये इस मर्तबा तलाश व तफ़्तीश के लिये फिर बेटों को मिस्र जाने की हिदायत फ़रमाई।

कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को पहली मर्तबा अ़ज़ीज़े मिस्र के इस मामले से कि उनकी पूँजी भी उनके सामान में वापस कर दी, इस तरफ़ ख़्याल हो गया था कि यह अ़ज़ीज़ कोई बहुत ही शरीफ़ व करीम है, शायद यूसुफ़ ही हों।

अहकाम व मसाईल

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए से साबित हुआ कि हर मुसलमान पर वाजिब है कि जब उसको कोई मुसीबत और तकलीफ़ अपनी जान या औलाद या माल के बारे में पेश आये तो उसका इलाज सब्रे-जमील (यानी अच्छे सब्र से करे जिसमें न तो शिकवा शिकायत हो और न नाशुक्री व नाफ़रमानी) और अल्लाह तआ़ला की तक़दीर व फ़ैसले पर राज़ी होने से करे, और याक़ूब अ़लैहिस्सलाम और दूसरे अम्बिया की पैरवी करे।

हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि इनसान जिस क़द्र घूँट पीता है उन सब में अल्लाह तआ़ला के नज़दीक दो घूँट ज़्यादा महबूब हैं एक मुसीबत पर सब्र और दूसरे ग़ुस्से को पी जाना।

और हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद हैः

مَنْ بَثَّ لَمْ يَصْبِرْ

यानी जो शख़्स अपनी मुसीबत सब के सामने बयान करता फिरे उसने सब्र नहीं किया।

और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को इस सब्र पर शहीदों का सवाब अ़ता फ़रमाया, और इस उम्मत में भी जो शख़्स मुसीबत पर सब्र करेगा उसको ऐसा ही अज्र मिलेगा।

इमाम क़ुर्तुबी ने हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के इस सख़्त इम्तिहान व आज़माईश की एक वजह यह बयान की है जो कुछ रिवायतों में आई है कि एक दिन हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम तहज्जुद की नमाज़ पढ़ रहे थे, और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम उनके सामने सो रहे थे, अचानक यूसुफ़ से कुछ ख़र्राटे की आवाज़ निकली तो उनकी तवज्जोह यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ चली गई। फिर दूसरी और तीसरी मर्तबा ऐसा ही हुआ तो अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़रिश्तों से फ़रमाया देखो यह मेरा दोस्त और मक़बूल बन्दा मुझसे ख़िताब और अ़र्ज़-मारूज़ करने के बीच मेरे ग़ैर की तरफ़ तवज्जोह करता है, क़सम है मेरी इ़ज़्ज़त व जलाल की कि मैं इनकी यह दोनों आँखें निकाल लूँगा जिनसे मेरे ग़ैर की तरफ़ तवज्जोह की है, और जिसकी तरफ़ तवज्जोह की है उसको इनसे लम्बी मुद्दत के लिये जुदा कर दूँगा।

इसी लिये बुख़ारी की हदीस में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत से आया है कि उन्होंने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया कि नमाज़ में किसी दूसरी तरफ़

देखना कैसा है? तो आपने फ़रमाया कि इस ज़रिये से शैतान बन्दे की नमाज़ को उचक लेता है। अल्लाह तआ़ला हमें इस शैतानी वस्वसे से अपनी पनाह में रखे।

فَلَمَّا دَخَلُوْا عَلَيْهِ قَالُوْا يٰٓاَيُّهَا الْعَزِيْزُ مَسَّنَا وَاَهْلَنَا
الضُّرُّ وَجِئْنَا بِبِضَاعَةٍ مُّزْجٰىةٍ فَاَوْفِ لَنَا الْكَيْلَ وَتَصَدَّقْ عَلَيْنَا ۭ اِنَّ اللّٰهَ يَجْزِي الْمُتَصَدِّقِيْنَ ۝
قَالَ هَلْ عَلِمْتُمْ مَّا فَعَلْتُمْ بِيُوْسُفَ وَاَخِيْهِ اِذْ اَنْتُمْ جٰهِلُوْنَ ۝ قَالُوْٓا ءَاِنَّكَ لَاَنْتَ يُوْسُفُ ۭ قَالَ اَنَا
يُوْسُفُ وَهٰذَآ اَخِيْ ۡ قَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا ۭ اِنَّهٗ مَنْ يَّتَّقِ وَيَصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ ۝
قَالُوْا تَاللّٰهِ لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَاِنْ كُنَّا لَخٰطِـــِٕيْنَ ۝ قَالَ لَا تَثْرِيْبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ ۭ يَغْفِرُ اللّٰهُ لَكُمْ ۡ
وَهُوَ اَرْحَمُ الرّٰحِمِيْنَ ۝

फ़-लम्मा द-ख़लू अ़लैहि क़ालू या अय्युहल्-अ़ज़ीज़ु मस्सना व अह्ल-नज़्ज़ुर्रु व जिअ्ना बिबिज़ा-अ़तिम्-मुज़्जातिन् फ़औफ़ि लनल्कै-ल व तसद्दक् अ़लैना, इन्नल्ला-ह यज्ज़िल् मु-तसद्दिक़ीन (88) क़ा-ल हल् अ़लिम्तुम् मा फ़अ़ल्तुम् बियूसु-फ़ व अख़ीहि इज़् अन्तुम् जाहिलून (89) क़ालू अ-इन्न-क ल-अन्-त यूसुफ़ु, क़ा-ल अ-न यूसुफ़ु व हाज़ा अख़ी, क़द् मन्नल्लाहु अ़लैना, इन्नहू मंय्यत्तक़ि व यस्बिर् फ़-इन्नल्ला-ह ला युज़ीअ़ु अज्रल्-मुह्सिनीन (90) क़ालू तल्लाहि ल-क़द् आस-रकल्लाहु अ़लैना व इन् कुन्ना लख़ातिईन (91) क़ा-ल ला	फिर जब दाख़िल हुए उसके पास बोले ऐ अ़ज़ीज़! पड़ी हम पर और हमारे घर पर सख़्ती और लाये हैं हम पूँजी नाक़िस, सो पूरी दे हमको भरती और ख़ैरात कर हम पर, अल्लाह बदला देता है ख़ैरात करने वालों को। (88) कहा कुछ तुमको ख़बर है कि क्या किया तुमने यूसुफ़ से और उसके भाई से जब तुमको समझ न थी। (89) बोले क्या सच में तू ही है यूसुफ़? कहा मैं यूसुफ़ हूँ और यह है मेरा भाई, अल्लाह ने एहसान किया हम पर यक़ीनन जो कोई डरता है और सब्र करता है तो अल्लाह ज़ाया नहीं करता हक़ नेकी वालों का। (90) बोले क़सम अल्लाह की ज़रूर पसन्द कर लिया तुझको अल्लाह ने हमसे और हम थे चूकने वाले। (91) कहा कुछ

तस्री-ब अ़लैकुमुल्-यौ-म, यग़्फ़िरुल्लाहु लकुम् व हु-व अर्हमुर्-राहिमीन (92)	इल्ज़ाम नहीं तुम पर आज, बख़्शे अल्लाह तुमको और वह है सब मेहरबानों से ज़्यादा मेहरबान। (92)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर (हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के हुक्म के मुवाफ़िक़ जो कि उन्होंने फ़रमाया थाः

تَحَسَّسُوْا مِنْ يُّوْسُفَ وَاَخِيْهِ.

"तलाश करो यूसुफ़ की और उसके भाई की" मिस्र को चले, क्योंकि बिनयामीन को मिस्र ही में छोड़ा था, यह ख़्याल हुआ होगा कि जिसका निशान मालूम है पहले उसके लाने की तदबीर करनी चाहिये कि बादशाह से माँगें, फिर यूसुफ़ के निशान को ढूँढेंगे। ग़र्ज़ कि मिस्र पहुँचकर) जब वे यूसुफ़ के पास (जिसको अ़ज़ीज़ समझ रहे थे) पहुँचे (और ग़ल्ले की भी ज़रूरत थी, पस यह ख़्याल हुआ कि ग़ल्ले के बहाने से अ़ज़ीज़ के पास चलेंगे और उसकी ख़रीद के ज़िमन में ख़ुशामद की बातें करेंगे। जब उसकी तबीयत में नर्मी देखेंगे और मिज़ाज ख़ुश पायेंगे तो बिनयामीन की दरख़्वास्त करेंगे, इसलिये पहले ग़ल्ला लेने के बारे में बातचीत शुरू की और) कहने लगे ऐ अ़ज़ीज़! हमको और हमारे घर वालों को (सूखे की वजह से) बड़ी तकलीफ़ पहुँच रही है, और (चूँकि हमको ग़रीबी ने घेर रखा है इसलिये ग़ल्ला ख़रीदने के लिये खरे दाम भी मयस्सर नहीं हुए) हम कुछ यह निकम्मी "यानी बेकार-सी और मामूली" चीज़ लाये हैं, सो आप (इसके निकम्मे होने को अनदेखा करके) पूरा ग़ल्ला दे दीजिए (और इस निकम्मे होने से ग़ल्ले की मात्रा में कमी न कीजिये) और (हमारा कुछ हक़ नहीं) हमको ख़ैरात (समझकर) दे दीजिये, बेशक अल्लाह तआ़ला ख़ैरात देने वालों को (चाहे हक़ीक़त में ख़ैरात दें चाहे सहूलत व रियायत करें कि वह भी ख़ैरात करने के जैसा ही है, बेहतरीन) बदला देता है (अगर मोमिन है तो आख़िरत में भी वरना दुनिया ही में)।

यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने (जो उनके ये आ़जिज़ाना और ग़ुर्बत को दर्शाने वाले अलफ़ाज़ सुने तो रहा न गया और बेइख़्तियार चाहा कि उनसे खुल जाऊँ, और अ़जब नहीं कि दिल के नूर से मालूम हो गया हो कि अब की बार उनको तलाश और तफ़्तीश भी मक़सूद है, और यह भी खुल गया हो कि अब जुदाई का ज़माना ख़त्म हो चुका, पस परिचय की शुरूआ़त के तौर पर) फ़रमाया- (कहो) वह भी तुमको याद है जो कुछ तुमने यूसुफ़ और उसके भाई के साथ (बर्ताव) किया था? जबकि तुम्हारी जहालत का ज़माना था (और बुरे-भले की समझ न थी। यह सुनकर पहले तो चकराये कि अ़ज़ीज़े मिस्र को यूसुफ़ के क़िस्से से क्या वास्ता, उधर उस शुरू ज़माने के ख़्वाब से ग़ालिब गुमान था ही कि शायद यूसुफ़ किसी बड़े रुतबे को पहुँचें कि हम सब को उनके सामने गर्दन झुकानी पड़े, इसलिये इस कलाम से शक हुआ और ग़ौर किया तो कुछ-कुछ पहचाना और मज़ीद तहक़ीक़ के लिये) कहने लगे- क्या सचमुच तुम ही यूसुफ़ हो? उन्होंने फ़रमाया- (हाँ) मैं यूसुफ़ हूँ और यह (बिनयामीन) मेरा (सगा)

भाई है (यह इसलिये बढ़ा दिया कि अपने यूसुफ़ होने की और ताकीद हो जाये, या उनकी तलाश व खोज की कामयाबी की ख़ुशख़बरी है कि जिनको तुम ढूँढने निकले हो हम दोनों एक जगह जमा हैं)। हम पर अल्लाह तआ़ला ने बड़ा एहसान किया (कि हम दोनों को पहले सब्र व तक़वे की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई फिर उसकी बरकत से हमारी तकलीफ़ को राहत से और जुदाई को मिलन से और माल व रुतबे की कमी को माल व इज़्ज़त की ज़्यादती से बदल दिया), वाक़ई जो शख़्स गुनाहों से बचता है और (तकलीफ़ों व मुसीबतों पर) सब्र करता है तो अल्लाह ऐसे नेक काम करने वालों का अज्र ज़ाया नहीं किया करता। वे (पिछले तमाम क़िस्सों को याद करके शर्मिन्दा हुए और खेद जताने के तौर पर) कहने लगे कि ख़ुदा की क़सम कुछ शक नहीं कि तुमको अल्लाह तआ़ला ने हम पर फ़ज़ीलत अ़ता फ़रमाई (और तुम इसी लायक़ थे), और (हमने जो कुछ किया) बेशक हम (उसमें) ख़तावार थे (अल्लाह के लिये माफ़ कर दो)। यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि नहीं! तुम पर आज (मेरी तरफ़ से) कोई इल्ज़ाम नहीं (बेफ़िक्र रहो, मेरा दिल साफ़ हो गया), अल्लाह तआ़ला तुम्हारा क़सूर माफ़ करे, और वह सब मेहरबानों से ज़्यादा मेहरबान है (तौबा करने वाले का क़सूर माफ़ कर ही देता है, इसी दुआ़ से यह भी समझ में आ गया कि मैंने भी माफ़ कर दिया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम और उनके भाईयों का बाक़ी क़िस्सा ज़िक्र हुआ है कि उनके वालिद हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने उनको यह हुक्म दिया कि जाओ यूसुफ़ और उसके भाई को तलाश करो तो उन्होंने तीसरी मर्तबा मिस्र का सफ़र किया, क्योंकि बिनयामीन का तो वहाँ होना मालूम था, पहली कोशिश उसके रिहा होने की करनी थी और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का वजूद अगरचे मिस्र में मालूम न था मगर जब किसी काम का वक़्त आ जाता है तो इनसान की तदबीरें ग़ैर-महसूस तौर पर भी दुरुस्त होती चली जाती हैं, जैसा कि एक हदीस में है कि जब अल्लाह तआ़ला किसी काम का इरादा फ़रमा लेते हैं तो उसके असबाब ख़ुद-ब-ख़ुद जमा कर देते हैं, इसलिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की तलाश के लिये भी ग़ैर-शऊरी तौर पर मिस्र ही का सफ़र मुनासिब था, और ग़ल्ले की ज़रूरत भी थी और यह बात भी थी कि ग़ल्ला तलब करने के बहाने से अ़ज़ीज़े मिस्र से मुलाक़ात होगी और उनसे अपने भाई बिनयामीन की रिहाई के बारे में दरख़्वास्त कर सकेंगे।

فَلَمَّا دَخَلُوْا عَلَيْهِ قَالُوْا.............. الاٰية

यानी जब यूसुफ़ के भाई वालिद के हुक्म के मुताबिक़ मिस्र पहुँचे और अ़ज़ीज़े मिस्र से मिले तो ख़ुशामद की गुफ़्तगू शुरू की, अपनी मोहताजी और बेकसी का इज़्हार किया कि ऐ अ़ज़ीज़! हमको और हमारे घर वालों को क़हत (सूखा पड़ने) की वजह से सख़्त तकलीफ़ पहुँच रही है, यहाँ तक कि अब हमारे पास ग़ल्ला ख़रीदने के लिये भी कोई मुनासिब क़ीमत मौजूद नहीं है, हम मजबूर होकर कुछ निकम्मी (बेकार-सी) चीज़ें ग़ल्ला ख़रीदने के लिये ले आये हैं, आप अपने करीमाना अख़्लाक़ से उन्हीं बेकार चीज़ों को क़ुबूल कर लें और उनके बदले में ग़ल्ला

पूरा उतना ही दे दें जितना अच्छी क़ीमती चीज़ों के मुक़ाबले में दिया जाता है। यह ज़ाहिर है कि हमारा कोई हक़ नहीं आप हमको ख़ैरात समझकर दे दीजिये, बेशक अल्लाह तआ़ला ख़ैरात देने वालों को जज़ा-ए-ख़ैर (बेहतरीन बदला) देता है।

ये निकम्मी चीज़ें क्या थीं? क़ुरआन व हदीस में इनकी कोई वज़ाहत नहीं। मुफ़स्सिरीन के अक़वाल अलग-अलग हैं, कुछ ने कहा कि खोटे दिरहम थे जो बाज़ार में न चल सकते थे, कुछ ने कहा कि कुछ घरेलू सामान था। यह लफ़्ज़ 'मुज़जातिन्' का तर्जुमा है, इसके असल मायने ऐसी चीज़ के हैं जो ख़ुद न चले बल्कि उसको ज़बरदस्ती चलाया जाये।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जब भाईयों के ये आ़जिज़ी व लाचारी भरे अलफ़ाज़ सुने और शिकस्ता हालत देखी तो तबई तौर पर अब असल हक़ीक़त ज़ाहिर कर देने पर मजबूर हो गये और वाक़िआ़त की रफ़्तार का अन्दाज़ यह है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर जो अपने हाल के इज़हार की पाबन्दी अल्लाह की तरफ़ से थीं अब उसके ख़ात्मे का वक़्त भी आ चुका था, और तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि उस मौक़े पर याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने अ़ज़ीज़े मिस्र के नाम एक ख़त लिखकर दिया था जिसका मज़मून यह थाः

"याक़ूब सफ़ीयुल्लाह पुत्र इस्हाक़ ज़बीहुल्लाह (1) पुत्र इब्राहीम ख़लीलुल्लाह की ओर से, अ़ज़ीज़े मिस्र की ख़िदमत में! अम्मा बाद। हमारा पूरा ख़ानदान बलाओं और आज़माईशों में परिचित है, मेरे दादा इब्राहीम ख़लीलुल्लाह का नमरूद की आग से इम्तिहान लिया गया, फिर मेरे वालिद इस्हाक़ का सख़्त इम्तिहान लिया गया, फिर मेरे एक लड़के के ज़रिये मेरा इम्तिहान लिया गया जो मुझको सबसे ज़्यादा प्यारा था, यहाँ तक कि उसकी जुदाई में मेरी बीनाई (आँखों की रोशनी) जाती रही। उसके बाद उसका एक छोटा भाई मुझ ग़मज़दा की तसल्ली का सामान था जिसको आपने चोरी के इल्ज़ाम में गिरफ़्तार कर लिया और मैं बतलाता हूँ कि हम नबियों की औलाद हैं, न हमने कभी चोरी की है न हमारी औलाद में कोई चोर पैदा हुआ। वस्सलाम"

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जब यह ख़त पढ़ा तो काँप गये और बेइख़्तियार रोने लगे, और अपने राज़ को ज़ाहिर कर दिया, और परिचय की भूमिका के तौर पर भाईयों से यह सवाल किया कि तुमको कुछ यह भी याद है कि तुमने यूसुफ़ और उसके भाई के साथ क्या बर्ताव किया था जबकि तुम्हारी जहालत का ज़माना था, कि भले-बुरे की सोच और अन्जाम पर नज़र करने की फ़िक्र से ग़ाफ़िल थे।

भाईयों ने जब यह सवाल सुना तो चकरा गये कि अ़ज़ीज़े मिस्र को यूसुफ़ के क़िस्से से क्या वास्ता? फिर उधर भी ध्यान गया कि यूसुफ़ ने जो बचपन में ख़्वाब देखा था उसकी ताबीर यही थी कि उनको कोई बुलन्द मर्तबा हासिल होगा कि हम सब को उसके सामने झुकना पड़ेगा, कहीं यह अ़ज़ीज़े मिस्र ख़ुद यूसुफ़ ही न हों। फिर जब ग़ौर व ध्यान किया तो कुछ निशानियों से

(1) ज़बीह कौन हज़रत इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम थे या हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम इसकी पूरी तहक़ीक़ सातवीं जिल्द सूरः साफ़्फ़ात की आयत नम्बर 107 की तफ़सीर में देखिये। प्रकाशक

पहचान लिया और मज़ीद तहक़ीक़ के लिये उनसे कहाः

ءَاِنَّكَ لَاَنْتَ يُوْسُفُ.

"क्या सचमुच तुम ही यूसुफ़ हो?" तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि हाँ! मैं ही यूसुफ़ हूँ, और यह बिनयामीन मेरा सगा भाई है। भाई का ज़िक्र इसलिये बढ़ा दिया कि उनको अच्छी तरह यक़ीन आ जाये, साथ ही इसलिये भी कि उन पर उस वक़्त अपने मक़सद की मुकम्मल कामयाबी वाज़ेह हो जाये कि जिन दो की तलाश में तुम निकले थे वे दोनों एक जगह तुम्हें मिल गये। फिर फ़रमायाः

قَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا، اِنَّهٗ مَنْ يَّتَّقِ وَيَصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَo

"यानी अल्लाह तआ़ला ने हम पर एहसान व करम फ़रमाया कि पहले हम दोनों को सब्र व परहेज़गारी की दो सिफ़तें अ़ता फ़रमाई जो कामयाबी की कुन्जी और हर मुसीबत से अमान हैं, फिर हमारी तकलीफ़ को राहत से, जुदाई को मिलन से, माल व रुतबे की कमी को इन सब की कसरत (अधिकता) से तब्दील फ़रमा दिया, बेशक जो शख़्स गुनाहों से बचता और मुसीबतों पर सब्र करता है तो अल्लाह तआ़ला ऐसे नेक काम करने वालों का अज्र ज़ाया नहीं किया करते हैं।

अब तो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों के पास सिवाय जुर्म व ख़ता के इक़रार और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के फ़ज़्ल व कमाल के मान लेने के चारा न था, सब ने एक ज़बान होकर कहाः

تَاللّٰهِ لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَاِنْ كُنَّا لَخٰطِئِيْنَo

"ख़ुदा की क़सम! अल्लाह तआ़ला ने आपको हम सब पर फ़ज़ीलत और बरतरी अ़ता फ़रमाई और आप इसी के हक़दार थे, और हमने जो कुछ किया बेशक हम उसमें ख़तावार थे, अल्लाह के लिये माफ़ कर दीजिये।" यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जवाब में अपनी पैग़म्बराना शान के मुताबिक़ फ़रमायाः

لَا تَثْرِيْبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ

"यानी मैं तुमसे तुम्हारे ज़ुल्मों का बदला तो क्या लेता, आज तुम पर कोई मलामत भी नहीं करता।" यह तो अपनी तरफ़ से माफ़ी की ख़ुशख़बरी सुना दी फिर अल्लाह तआ़ला से दुआ़ कीः

يَغْفِرُ اللّٰهُ لَكُمْ وَهُوَ اَرْحَمُ الرّٰحِمِيْنَo

"यानी अल्लाह तआ़ला तुम्हारी ख़ताओं को माफ़ फ़रमा दें, वह सब मेहरबानों से ज़्यादा मेहरबान हैं।"

फिर फ़रमायाः

اِذْهَبُوْا بِقَمِيْصِيْ هٰذَا فَاَلْقُوْهُ عَلٰى وَجْهِ اَبِيْ يَاْتِ بَصِيْرًا، وَاْتُوْنِيْ بِاَهْلِكُمْ اَجْمَعِيْنَo

"यानी मेरा यह कुर्ता ले जाओ और इसको मेरे वालिद के चेहरे पर डाल दो, इससे उनकी आँखें रोशन हो जायेंगी, जिससे वह यहाँ तशरीफ़ ला सकेंगे और अपने बाक़ी घर वालों को भी सब को मेरे पास ले आओ ताकि सब मिलें और ख़ुश हों, और अल्लाह तआ़ला की दी हुई

नेमतों से फ़ायदा उठायें और शुक्रगुज़ार हों।"

अहकाम व हिदायतें

उक्त आयतों से बहुत से अहकाम व मसाईल और इनसानी ज़िन्दगी के लिये अहम हिदायतें हासिल हुईं:

अव्वल लफ़्ज़ 'तसद्दक़् अ़लैना' से यह सवाल पैदा होता है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई नबियों की औलाद हैं, उनके लिये सदक़ा ख़ैरात कैसे हलाल था? दूसरे अगर सदक़ा हलाल भी हो तो सवाल करना कैसे जायज़ था? यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाई अगर नबी भी न हों तो भी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम तो पैग़म्बर थे, उन्होंने इस ग़लती पर क्यों सचेत नहीं फ़रमाया?

इसका एक स्पष्ट जवाब तो यह है कि यहाँ लफ़्ज़ सदक़े से असली सदक़ा मुराद नहीं बल्कि मामले में रियायत करने को सदक़ा ख़ैरात करने से ताबीर कर दिया है, क्योंकि बिल्कुल मुफ़्त ग़ल्ले का सवाल तो उन्होंने किया ही नहीं था, बल्कि कुछ निकम्मी चीज़ें पेश की थीं और दरख़्वास्त का हासिल यह था कि इन कम-क़ीमत चीज़ों को रियायत करके क़ुबूल फ़रमा लें। इसके अ़लावा यह भी हो सकता है कि नबियों की औलाद के लिये सदक़ा व ख़ैरात का हराम होना सिर्फ़ उम्मते मुहम्मदिया के साथ मख़्सूस हो, जैसा कि तफ़सीर के इमामों में से इमाम मुजाहिद रह. का यही क़ौल है। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

إِنَّ اللّٰهَ يَجْزِى الْمُتَصَدِّقِيْنَ٥

से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला सदक़ा ख़ैरात करने वालों को जज़ा-ए-ख़ैर (बेहतरीन बदला) देते हैं, मगर इसमें तफ़सील यह है कि सदक़ा व ख़ैरात की एक जज़ा तो आ़म है जो हर मोमिन काफ़िर को दुनिया में मिलती है, वह है बलाओं और मुसीबतों का दूर होना, और एक जज़ा आख़िरत के साथ मख़्सूस है यानी जन्नत, वह सिर्फ़ ईमान वालों का हिस्सा है। यहाँ चूँकि मुख़ातब अ़ज़ीज़े मिस्र है और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों को अभी तक यह मालूम नहीं था कि यह मोमिन है या नहीं, इसलिये ऐसा आ़म जुमला इख़्तियार किया जिसमें दुनिया व आख़िरत दोनों की जज़ा (बदला) शामिल है। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

इसके अ़लावा बज़ाहिर मौक़ा तो इस जगह इसका था कि चूँकि अ़ज़ीज़े मिस्र से ख़िताब था इसलिये इस जुमले में भी ख़िताब ही के लफ़्ज़ से यह कहा जाता कि तुमको अल्लाह तआ़ला जज़ा-ए-ख़ैर देंगे, लेकिन चूँकि उनका तो मोमिन होना मालूम न था इसलिये आ़म उनवान इख़्तियार किया और ख़ुसूसी तौर पर उनको जज़ा मिलने का ज़िक्र नहीं किया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

قَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا.

से साबित हुआ कि जब इनसान किसी तकलीफ़ व मुसीबत में गिरफ़्तार हो और फिर अल्लाह तआ़ला उससे निजात अ़ता फ़रमाकर अपनी नेमत से नवाज़ें तो अब उसको पिछली मुसीबतों का ज़िक्र करने के बजाय अल्लाह तआ़ला के उस इनाम व एहसान ही का ज़िक्र करना

चाहिये जो अब हासिल हुआ हो, मुसीबत से निजात और अल्लाह के इनाम के हासिल होने के बाद भी पिछली तकलीफ़ व मुसीबत को रोते रहना नाशुक्री है, ऐसे ही नाशुक्रे को क़ुरआने करीम में 'कनूद' कहा गया है:

اِنَّ الْاِنْسَانَ لِرَبِّهٖ لَكَنُوْدٌ۝

कनूद कहते हैं, उस शख़्स को जो एहसानात को याद न रखे सिर्फ़ तकलीफ़ों और मुसीबतों को याद रखे।

इसी लिये यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को भाईयों के अ़मल से लम्बे समय तक जिन मुसीबतों से साबक़ा पड़ा था उनका इस वक़्त कोई ज़िक्र नहीं किया, बल्कि अल्लाह जल्ल शानुहू के इनामात ही का ज़िक्र फ़रमाया।

सब्र व परहेज़गारी हर मुसीबत का इलाज है

اِنَّهٗ مَنْ يَّتَّقِ وَيَصْبِرْ.

से मालूम हुआ कि तक़वा यानी गुनाहों से बचना और तकलीफ़ों पर सब्र व साबित-क़दमी, ये दो सिफ़तें ऐसी हैं जो इनसान को हर बला व मुसीबत से निकाल देती हैं। क़ुरआने करीम ने बहुत से मौक़ों पर इन्हीं दो सिफ़तों पर इनसान की फ़लाह व कामयाबी का मदार रखा है। इरशाद है:

وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُهُمْ شَيْئًا.

"यानी अगर तुमने सब्र व तक़वा इख़्तियार कर लिया तो दुश्मनों की मुख़ालिफ़ाना तदबीरें तुम्हें कोई तकलीफ़ और नुक़सान न पहुँचा सकेंगी।"

यहाँ बज़ाहिर यह दावा मालूम होता है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपने मुत्तक़ी और साबिर होने का दावा कर रहे हैं कि हमारे सब्र व तक़वे की वजह से हमें मुश्किलों से निजात और बुलन्द दर्जे नसीब हुए मगर किसी को ख़ुद अपने तक़वे का दावा करना क़ुरआनी हिदायत के अनुसार वर्जित और मना है:

فَلَا تُزَكُّوْٓا اَنْفُسَكُمْ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنِ اتَّقٰى۝

"यानी अपनी पाकी न जतलाओ, अल्लाह ही ज़्यादा जानता है कि कौन मुत्तक़ी है।"

मगर यहाँ दर हक़ीक़त दावा नहीं बल्कि अल्लाह तआ़ला की नेमत व एहसानात का ज़िक्र है कि उसने अव्वल हमको सब्र व तक़वे की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई फिर उसके ज़रिये तमाम नेमतें अ़ता फ़रमाईं।

لَا تَثْرِيْبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ.

"यानी आज तुम पर कोई मलामत नहीं।" यह उम्दा और बेहतरीन अख़्लाक़ का आला मक़ाम है कि ज़ालिम को सिर्फ़ माफ़ ही नहीं कर दिया बल्कि यह भी स्पष्ट कर दिया कि अब तुम पर कोई मलामत भी नहीं।

اِذْهَبُوْا بِقَمِيْصِيْ هٰذَا فَاَلْقُوْهُ عَلٰى وَجْهِ اَبِيْ يَاْتِ بَصِيْرًا ۚ وَاْتُوْنِيْ بِاَهْلِكُمْ
اَجْمَعِيْنَ ۞ وَلَمَّا فَصَلَتِ الْعِيْرُ قَالَ اَبُوْهُمْ اِنِّيْ لَاَجِدُ رِيْحَ يُوْسُفَ لَوْلَآ اَنْ تُفَنِّدُوْنِ ۝
قَالُوْا تَاللّٰهِ اِنَّكَ لَفِيْ ضَلٰلِكَ الْقَدِيْمِ ۝ فَلَمَّآ اَنْ جَآءَ الْبَشِيْرُ اَلْقٰىهُ عَلٰى وَجْهِهٖ فَارْتَدَّ بَصِيْرًا ۚ
قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَّكُمْ ۚ اِنِّيْٓ اَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝ قَالُوْا يٰٓاَبَانَا اسْتَغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَآ اِنَّا كُنَّا
خٰطِـِٕيْنَ ۝ قَالَ سَوْفَ اَسْتَغْفِرُ لَكُمْ رَبِّيْ ۗ اِنَّهٗ هُوَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ ۝ فَلَمَّا دَخَلُوْا عَلٰى يُوْسُفَ اٰوٰٓى
اِلَيْهِ اَبَوَيْهِ وَقَالَ ادْخُلُوْا مِصْرَ اِنْ شَآءَ اللّٰهُ اٰمِنِيْنَ ۞ وَرَفَعَ اَبَوَيْهِ عَلَى الْعَرْشِ وَخَرُّوْا لَهٗ
سُجَّدًا ۚ وَقَالَ يٰٓاَبَتِ هٰذَا تَاْوِيْلُ رُءْيَايَ مِنْ قَبْلُ ۡ قَدْ جَعَلَهَا رَبِّيْ حَقًّا ۗ وَقَدْ اَحْسَنَ بِيْٓ اِذْ
اَخْرَجَنِيْ مِنَ السِّجْنِ وَجَآءَ بِكُمْ مِّنَ الْبَدْوِ مِنْۢ بَعْدِ اَنْ نَّزَغَ الشَّيْطٰنُ بَيْنِيْ وَبَيْنَ اِخْوَتِيْ ۗ اِنَّ
رَبِّيْ لَطِيْفٌ لِّمَا يَشَآءُ ۗ اِنَّهٗ هُوَ الْعَلِيْمُ الْحَكِيْمُ ۝

ع الربع

इज़्हबू बि-क़मीसी हाज़ा फ़अल्क़ूहु अ़ला वज्हि-अबी यअ्ति बसीरन् वअ्तूनी बिअह्लिकुम् अज्मअ़ीन (93) ❁ व लम्मा फ़-स-लतिल्-अ़ीरु क़ा-ल अबूहुम् इन्नी ल-अजिदु री-ह यूसु-फ़ लौ ला अन् तुफ़न्निदून (94) क़ालू तल्लाहि इन्न-क लफ़ी ज़लालिकल्-क़दीम (95) ❖ फ़-लम्मा अन् जाअल्-बशीरु अल्क़ाहु अ़ला वज्हिही फ़र्तद्-द बसीरन्, क़ा-ल अलम् अक़ुल् लकुम् इन्नी अअ़्लमु मिनल्लाहि मा ला तअ़्लमून (96) क़ालू या अबानस्तग़्फ़िर् लना

ले जाओ यह कुर्ता मेरा और डालो इसको मुँह पर मेरे बाप के कि चला आये आँखों से देखता हुआ, और ले आओ मेरे पास घर अपना सारा। (93) ❁ और जब जुदा हुआ क़ाफ़िला कहा उनके बाप ने मैं पाता हूँ बू (गंध) यूसुफ़ की अगर न कहो मुझको कि बूढ़ा बहक गया। (94) लोग बोले क़सम अल्लाह की तू तो अपनी उसी पुरानी ग़लती में है। (95) ❖ फिर जब पहुँचा ख़ुशख़बरी वाला डाला उसने वह कुर्ता उसके मुँह पर फिर लौट कर हो गया देखने वाला, बोला मैंने यह न कहा था तुमको कि मैं जानता हूँ अल्लाह की तरफ़ से जो तुम नहीं जानते। (96) बोले ऐ बाप! बख़्शवा हमारे गुनाहों को

जुनूबना इन्ना कुन्ना ख़ातिईन (97) का-ल सौ-फ़ अस्तग़्फ़िरु लकुम् रब्बी, इन्नहू हुवल् ग़फ़ूरुर्रहीम (98) फ़-लम्मा द-ख़लू अ़ला यूसु-फ़ आवा इलैहि अ-बवैहि व क़ालद्ख़ुलू मिस्-र इन्शा-अल्लाहु आमिनीन (99) व र-फ़-अ़ अ-बवैहि अ़लल्-अ़र्शि व ख़र्रू लहू सुज्जदन् व क़ा-ल या अ-बति हाज़ा तअ्वीलु रुअ्या-य मिन् क़ब्लु, क़द् ज-अ़-लहा रब्बी हक़्क़न्, व क़द् अह्स-न बी इज़् अख़्र-जनी मिनस्सिज्नि व जा-अ बिकुम् मिनल्बद्वि मिम्-बअ़्दि अन् न-ज़ग़श्शैतानु बैनी व बै-न इख़्वती, इन्-न रब्बी लतीफ़ुल्लिमा यशा-उ, इन्नहू हुवल् अ़लीमुल्-हकीम (100)	बेशक हम थे चूकने वाले। (97) कहा दम लो बख़्शवाऊँगा तुमको अपने रब से, वही है बख़्शने वाला मेहरबान। (98) फिर जब दाख़िल हुए यूसुफ़ के पास जगह दी अपने पास अपने माँ-बाप को और कहा दाख़िल होओ मिस्र में अल्लाह ने चाहा तो दिल के सुकून के साथ। (99) और ऊँचा बिठाया अपने माँ बाप को तख़्त पर और सब गिरे उसके आगे सज्दे में और कहा- ऐ बाप! यह बयान है मेरे उस पहले ख़्वाब का, उसको मेरे रब ने सच कर दिया और उसने इनाम किया मुझ पर जब मुझको निकाला क़ैदख़ाने से और तुमको ले आया गाँव से इसके बाद कि झगड़ा डाल चुका था शैतान मुझ में और मेरे भाईयों में, मेरा रब तदबीर से करता है जो चाहता है, बेशक वही है ख़बरदार हिक्मत वाला। (100)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अब तुम (मेरे बाप को जाकर खुशख़बरी दो और खुशख़बरी के साथ) मेरा यह कुर्ता (भी) लेते जाओ और इसको मेरे बाप के चेहरे पर डाल दो (इससे) उनकी आँखें रोशन हो जाएँगी (और यहाँ तशरीफ़ ले आयेंगे), और अपने (बाक़ी) घर वालों को (भी) सब को मेरे पास ले आओ (कि सब मिलें और खुश हों, क्योंकि मौजूदा हालत में मेरा जाना मुश्किल है, इसलिये घर वाले ही चले आयें)।

और जब (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से बातचीत हो चुकी और आपके फ़रमाने के मुताबिक़ कुर्ता लेकर चलने की तैयारी की और) क़ाफ़िला (मिस्र शहर से) चला (जिसमें ये लोग भी थे) तो उनके बाप ने (अपने पास वालों से) कहना शुरू किया कि अगर तुम मुझको बुढ़ापे में बहकी बातें करने वाला न समझो तो एक बात कहूँ कि मुझको तो यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) की खुशबू

आ रही है (मोजिज़ा इख़्तियारी नहीं होता इसलिये इससे पहले यह एहसास व इल्म न हुआ)। वे (पास वाले) कहने लगे कि ख़ुदा की क़सम! आप तो अपने उसी पुराने ग़लत ख़्याल में मुब्तला हैं (कि यूसुफ़ ज़िन्दा हैं और मिलेंगे, उसी ख़्याल के ग़लबे से अब ख़ुशबू का वहम हो गया और वास्तव में न ख़ुशबू है न कुछ और है। याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ख़ामोश हो गये)। पस जब (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सही सलामत होने की) ख़ुशख़बरी लाने वाला (मय कुर्ते के यहाँ) आ पहुँचा तो (आते ही) उसने वह कुर्ता उनके मुँह पर लाकर डाल दिया। पस (आँखों को लगना था और दिमाग़ में ख़ुशबू पहुँचना कि) फ़ौरन ही उनकी आँखें खुल गईं (और उन्होंने सारा माजरा आप से बयान किया) आपने (बेटों से) फ़रमाया, क्यों! मैंने तुमसे कहा न था कि अल्लाह तआ़ला की बातों को जितना मैं जानता हूँ तुम नहीं जानते (और इसलिये मैंने तुमको यूसुफ़ की तलाश के लिये भेजा था, देखो आख़िर अल्लाह तआ़ला ने मेरी उम्मीद पूरी की। उनका यह क़ौल इससे ऊपर के रुकूअ़ में आ चुका है, उस वक़्त) सब बेटों ने कहा कि ऐ हमारे बाप! हमारे लिये (ख़ुदा से) हमारे गुनाहों की मग़फ़िरत की दुआ़ कीजिए (हमने जो कुछ आपको यूसुफ़ के मामले में तकलीफ़ दी) हम बेशक ख़तावार थे (मतलब यह है कि आप भी माफ़ कर दीजिये क्योंकि आ़दतन किसी के लिये इस्तिग़फ़ार वही करता है जो ख़ुद भी पकड़ करना नहीं चाहता)।

याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया जल्द ही तुम्हारे लिये अपने रब से मग़फ़िरत की दुआ़ करूँगा, बेशक वह बख़्शने वाला, रहम करने वाला है (और इसी से उनका माफ़ कर देना भी मालूम हो गया और जल्द ही का मतलब यह है कि तहज्जुद का वक़्त आने दो जो कि क़ुबूलियत की घड़ी है, जैसा कि किताब दुर्रे मन्सूर में मरफ़ूअ़न नक़ल किया गया है)।

(ग़र्ज़ कि सब मिस्र को तैयार होकर चल दिये और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ख़बर सुनकर स्वागत के लिये मिस्र से बाहर तशरीफ़ लाये और बाहर ही मुलाक़ात का सामान किया गया) फिर जब ये सब-के-सब यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) के पास पहुँचे तो उन्होंने (सबसे मिल-मिलाकर) अपने माँ-बाप को (अदब के तौर पर) अपने पास जगह दी, और (बातचीत से फ़ारिग़ होकर) कहा कि सब मिस्र में चलिये (और) ख़ुदा को मन्ज़ूर है तो (वहाँ) अमन-चैन से रहिये (जुदाई का ग़म और सूखा पड़ने की परेशानी सब दूर हो गये। ग़र्ज़ कि सब मिस्र में पहुँचे) और (वहाँ पहुँचकर अदब के तौर पर) अपने माँ-बाप को (शाही) तख़्त पर ऊँचा बिठाया, और (उस वक़्त सब के दिलों पर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की बड़ाई ऐसी ग़ालिब हुई कि) सब-के-सब उनके आगे सज्दे में गिर गये, और (यह हालत देखकर) वह कहने लगे कि ऐ अब्बा! यह है मेरे ख़्वाब की ताबीर जो पहले ज़माने में देखा था (कि सूरज व चाँद और ग्यारह सितारे मुझको सज्दा करते हैं) मेरे रब ने उस (ख़्वाब) को सच्चा कर दिया (यानी उसकी सच्चाई का ज़हूर कर दिया) और (इस सम्मान के सिवा मेरे रब ने मुझ पर और इनामात भी फ़रमाये, चुनाँचे) मेरे साथ (एक) उस वक़्त एहसान फ़रमाया जिस वक़्त मुझको क़ैद से निकाला (और इस बादशाहत के मर्तबे तक पहुँचाया) और (दूसरा यह इनाम फ़रमाया कि) इसके बाद कि शैतान ने मेरे और मेरे भाईयों के बीच फ़साद डलवा दिया था (जिसका तक़ाज़ा तो यह था कि उम्र भर भी इकट्ठे और मुत्तफ़िक़ न होते

मगर अल्लाह तआ़ला की इनायत है कि वह) तुम सब को (जिनमें मेरे भाई भी हैं) बाहर से (यहाँ) ले आया (और सब को मिला दिया)। बेशक मेरा रब जो चाहता है उसकी उम्दा तदबीर कर देता है, बेशक वह बड़ा इल्म वाला और हिक्मत वाला है (अपने इल्म व हिक्मत से सब मामलात की तदबीर दुरुस्त कर देता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से से मुताल्लिक़ पहले गुज़री आयतों में यह मालूम हो चुका है कि जब अल्लाह की मंशा के मुताबिक़ इसका वक़्त आ गया कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपना राज़ भाईयों पर ज़ाहिर कर दें तो उन्होंने हक़ीक़त ज़ाहिर कर दी, भाईयों ने माफ़ी माँगी, उन्होंने न सिर्फ़ यह कि माफ़ कर दिया बल्कि पिछले वाक़िआ़त पर कोई मलामत करना भी पसन्द नहीं किया। उनके लिये अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की और अब वालिद से मुलाक़ात की फ़िक्र हुई। हालात के लिहाज़ से मुनासिब यह समझा कि वालिद साहिब ही मय ख़ानदान के यहाँ तशरीफ़ लायें, मगर मालूम हो चुका था कि उनकी बीनाई (आँखों की रोशनी) इस जुदाई में जाती रही, इसलिये सबसे पहले इसकी फ़िक्र हुई और भाईयों से कहाः

اِذْهَبُوْا بِقَمِيْصِىْ هٰذَا فَاَلْقُوْهُ عَلٰى وَجْهِ اَبِىْ يَاْتِ بَصِيْرًا.

"यानी तुम मेरा यह कुर्ता ले जाओ और मेरे वालिद के चेहरे पर डाल दो तो उनकी बीनाई वापस आ जायेगी।" यह ज़ाहिर है कि किसी के कुर्ते का चेहरे पर डाल देना बीनाई के वापस आने का कोई माद्दी सबब नहीं हो सकता, बल्कि यह एक मोजिज़ा था हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कि उनको अल्लाह के हुक्म से मालूम हो गया कि जब उनका कुर्ता वालिद के चेहरे पर डाला जायेगा तो अल्लाह तआ़ला उनकी बीनाई बहाल फ़रमा देंगे।

और इमाम ज़ह्हाक और इमाम मुजाहिद वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने फ़रमाया कि यह उस कुर्ते की ख़ुसूसियत थी, क्योंकि यह आ़म कपड़ों की तरह न था बल्कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के लिये जन्नत से उस वक़्त लाया गया था जब उनको नंगा करके नमरूद ने आग में डाला था, फिर यह जन्नत का लिबास हमेशा हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के पास महफ़ूज़ रहा और उनकी वफ़ात के बाद हज़रत इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम के पास रहा, उनकी वफ़ात के बाद हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम को मिला, आपने इसको एक बड़ी तबर्रुक (बरकत) वाली चीज़ की हैसियत से एक नुल्की में बन्द करके यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के गले में तावीज़ के तौर पर डाल दिया था ताकि बुरी नज़र से महफ़ूज़ रहें, और उनके भाईयों ने जब उनका कुर्ता वालिद को धोखा देने के लिये उतार लिया और वह नंगा बदन करके कुएँ में डाल दिये गये तो जिब्रीले अमीन तशरीफ़ लाये और गले में पड़ी हुई नुल्की खोलकर उससे यह कुर्ता बरामद किया और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को पहना दिया, और यह उनके पास बराबर महफ़ूज़ चला आया, इस वक़्त भी जिब्रीले अमीन ही ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को यह मश्विरा दिया कि यह जन्नत का लिबास

है इसकी ख़ासियत यह है कि नाबीना के चेहरे पर डाल दो तो वह बीना (देखने वाला) हो जाता है, और फ़रमाया कि इसको अपने वालिद के पास भेज दीजिये तो वह बीना हो जायेंगे।

और हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रह. की तहक़ीक़ यह है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का हुस्न व जमाल (सुन्दरता) और उनका वजूद ख़ुद जन्नत ही की एक चीज़ थी इसलिये उनके जिस्म से लग जाने की वजह से हर कुर्ते में यह ख़ासियत हो सकती है। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَاْتُوْنِیْ بِاَھْلِکُمْ اَجْمَعِیْنَ○

"यानी तुम सब भाई अपने सब बाल-बच्चों और घर वालों को मेरे पास मिस्र ले आओ।"

असल मक़सद तो वालिद मोहतरम को बुलाने का था मगर यहाँ स्पष्ट रूप से वालिद के बजाय ख़ानदान को लाने का ज़िक्र किया, शायद इसलिये कि वालिद को यहाँ लाने के लिये कहना अदब के ख़िलाफ़ समझा, और यह यक़ीन था ही कि जब वालिद की बीनाई वापस आ जायेगी और यहाँ आने से कोई उज़्र (मजबूरी) रुकावट नहीं रहेगा तो वह ख़ुद ही ज़रूर तशरीफ़ लायेंगे। इमाम क़ुर्तुबी ने एक रिवायत नक़ल की है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों में से यहूदा ने कहा कि यह कुर्ता मैं ले जाऊँगा, क्योंकि इनके कुर्ते पर झूठा ख़ून लगाकर भी मैं ही ले गया था जिससे वालिद को सदमे पहुँचे, अब उसकी तलाफ़ी भी मेरे ही हाथ से होना चाहिये।

وَلَمَّا فَصَلَتِ الْعِیْرُ

"यानी जब क़ाफ़िला शहर से बाहर निकला ही था" तो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने अपने पास वालों से कहा कि अगर तुम मुझे बेवक़ूफ़ न कहो तो मैं तुम्हें बतलाऊँ कि मुझे यूसुफ़ की ख़ुशबू आ रही है। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत के मुताबिक़ शहर मिस्र से किनआ़न तक आठ दिन के सफ़र का रास्ता था, और हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अस्सी फ़र्सख़ यानी तक़रीबन अढ़ाई सौ मील का फ़ासला था, अल्लाह तआ़ला ने इतनी दूर से यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की क़मीज़ के ज़रिये हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की ख़ुशबू याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के दिमाग़ तक पहुँचा दी, और यह अ़जीब बातों में से है कि जब यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपने वतन किनआ़न ही के एक कुएँ में तीन दिन तक पड़े रहे तो उस वक़्त यह ख़ुशबू महसूस नहीं हुई। यहीं से मालूम होता है कि कोई मोजिज़ा पैग़म्बर के इख़्तियार में नहीं होता, बल्कि दर हक़ीक़त मोजिज़ा पैग़म्बर का अपना फ़ेल व अ़मल भी नहीं होता, वह डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला का फ़ेल होता है, जब अल्लाह तआ़ला इरादा फ़रमाते हैं तो मोजिज़ा ज़ाहिर कर देते हैं और जब अल्लाह की इजाज़त नहीं होती तो क़रीब से क़रीब भी दूर हो जाता है।

قَالُوْا تَاللّٰہِ اِنَّکَ لَفِیْ ضَلٰلِکَ الْقَدِیْمِ○

"यानी मज्लिस में मौजूद लोगों ने याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की बात सुनकर कहा कि बख़ुदा! आप तो अपने उसी पुराने ख़्याल में मुब्तला हैं" कि यूसुफ़ ज़िन्दा हैं और वह फिर मिलेंगे।

فَلَمَّآ اَنْ جَآءَ الْبَشِیْرُ

"यानी जब यह ख़ुशख़बरी देने वाला किनआ़न पहुँचा" और यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के कुर्ते को याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के चेहरे पर डाल दिया तो फ़ौरन उनकी बीनाई वापस आ गई। ख़ुशख़बरी देने वाला वही हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का भाई यहूदा था जो उनका कुर्ता मिस्र से लाया था।

قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَّكُمْ اِنِّىٓ اَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ۝

"यानी क्या मैं न कह रहा था कि मुझे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वह इल्म हासिल है जिसकी आप लोगों को ख़बर नहीं, कि यूसुफ़ ज़िन्दा हैं और वह फिर मिलेंगे।"

قَالُوْا يٰٓاَبَانَا اسْتَغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَآ اِنَّا كُنَّا خٰطِـِٕيْنَ۝

अब जबकि असल हक़ीक़त स्पष्ट होकर सामने आ गई तो यूसुफ़ के भाईयों ने वालिद से अपनी ख़ताओं की माफ़ी इस शान से माँगी कि वालिद से दरख़्वास्त की कि हमारे लिये अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत की दुआ़ करें, और यह ज़ाहिर है कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला से उनकी ख़ता माफ़ करने की दुआ़ करेगा वह ख़ुद भी उनकी ख़ता माफ़ कर देगा।

قَالَ سَوْفَ اَسْتَغْفِرُ لَكُمْ رَبِّىْ

यानी याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं जल्द ही तुम्हारे लिये अल्लाह तआ़ला से माफ़ी की दुआ़ करूँगा।

यहाँ हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़ौरन ही दुआ़ करने के बजाय वादा किया कि जल्द ही दुआ़ करूँगा। इसकी वजह आ़म मुफ़स्सिरीन ने यह लिखी है कि इससे मक़सद यह था कि एहतिमाम के साथ रात के आख़िरी हिस्से में दुआ़ करें, क्योंकि उस वक़्त की दुआ़ ख़ुसूसियत से क़ुबूल की जाती है, जैसा कि सही बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि अल्लाह तआ़ला हर रात के आख़िरी तिहाई हिस्से में ज़मीन से बहुत ज़्यादा क़रीब आसमान पर अपनी तवज्जोह नाज़िल फ़रमाते हैं और यह ऐलान करते हैं कि कौन है जो मुझसे दुआ़ माँगे तो मैं उसको क़ुबूल कर लूँ। कौन है जो मुझसे मग़फ़िरत तलब करे और मैं उसकी मग़फ़िरत कर दूँ।

فَلَمَّا دَخَلُوْا عَلَيْهِ

कुछ रिवायतों में है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने इस मर्तबा अपने भाईयों के साथ दो सौ ऊँटों पर लदा हुआ बहुत-सा सामान कपड़ों और दूसरी ज़रूरतों का भेजा था, ताकि पूरा ख़ानदान मिस्र आने के लिये उम्दा तैयारी कर सके, उसके मुताबिक़ याक़ूब अ़लैहिस्सलाम और उनकी औलाद और तमाम मुताल्लिक़ीन मिस्र के लिये तैयार होकर निकले, तो एक रिवायत में उनकी संख्या 72 और दूसरी में 93 मर्द व औरत आदमियों पर मुश्तमिल थी।

दूसरी तरफ़ जब मिस्र पहुँचने का वक़्त क़रीब आया तो हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम और मिस्र मुल्क के लोग स्वागत के लिये शहर से बाहर तशरीफ़ लाये, और चार हज़ार सिपाही उनके साथ सलामी देने के लिये निकले। जब ये हज़रात मिस्र में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के मकान में दाख़िल हुए तो उन्होंने अपने माँ-बाप को अपने पास ठहराया।

यहाँ ज़िक्र माँ-बाप का है, हालाँकि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा का इन्तिक़ाल बचपन ही में हो चुका था, मगर उनके बाद याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने मरहूमा की बहन लय्या से निकाह कर लिया था जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की ख़ाला होने की हैसियत से भी माँ के जैसी थीं, और वालिद के निकाह में होने की हैसियत भी वालिदा ही कहलाने की हक़दार थीं। (1)

وَقَالَ ادْخُلُوْا مِصْرَ اِنْ شَآءَ اللّٰهُ اٰمِنِيْنَ۝

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ख़ानदान के सब लोगों से कहा कि आप सब अल्लाह की इजाज़त से मिस्र में बिना किसी ख़ौफ़ व ख़तरे और बिना किसी पाबन्दी के दाख़िल हो जायें। मतलब यह था कि दूसरे मुल्क में दाख़िल होने वाले मुसाफ़िरों पर जो पाबन्दियाँ आ़दतन हुआ करती हैं आप उन सब पाबन्दियों से आज़ाद हैं।

وَرَفَعَ اَبَوَيْهِ عَلَى الْعَرْشِ

यानी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने माँ-बाप को अपने शाही तख़्त पर बैठाया।

وَخَرُّوْا لَهٗ سُجَّدًا

यानी माँ-बाप और सब भाईयों ने यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सामने सज्दा किया। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि यह सज्दा-ए-शुक्र अल्लाह तआ़ला के लिये किया गया था, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को नहीं था। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इबादत का सज्दा तो हर पैग़म्बर की शरीअ़त में ग़ैरुल्लाह के लिये हराम था लेकिन ताज़ीम (सम्मान) के तौर पर सज्दा पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की शरीअ़तों में जायज़ था जो इस्लामी शरीअ़त में शिर्क का ज़रिया होने की वजह से ममनू (वर्जित) हो गया है, जैसा कि बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में ज़िक्र किया गया है कि किसी ग़ैरुल्लाह के लिये सज्दा हलाल नहीं।

وَقَالَ يٰۤاَبَتِ هٰذَا تَاْوِيْلُ رُءْيَايَ.

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के सामने जब दोनों माँ-बाप और ग्यारह भाईयों ने एक साथ सज्दा किया तो उनको अपना वह बचपन का ख़्वाब याद आ गया और फ़रमाया कि ऐ अब्बा जान!

---

(1) यह स्पष्टता उस रिवायत के मुताबिक़ है जिसमें कहा गया है कि हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा बिनयामीन की विलादत के वक़्त वफ़ात पा गई थीं, इस बिना पर यहाँ हज़रत मुसन्निफ़ रह. की यह इबारत पहले गुज़री (आयत नम्बर 7-20 की तफ़सीर में) इबारत से टकराने वाली मालूम होती है, जिसमें हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा राहील को क़रार दिया गया है, लेकिन दर असल इस मामले में कोई मोतबर रिवायत तो है नहीं, इस्राईली रिवायतें हैं और उनमें भी विरोधाभास है, ख़ुद तफ़सीर रूहुल-मआ़नी के लेखक ने लिखा है कि यहूदी हज़रात हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की वालिदा के बिनयामीन की विलादत के वक़्त इन्तिक़ाल के क़ायल नहीं हैं, अगर इस रिवायत को लिया जाये तो कोई इश्काल बाक़ी नहीं रहता। इस सूरत में शाही तख़्त पर माँ-बाप को बैठाने में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की सगी वालिदा मुराद होंगी। इमाम इब्ने जरीर और इब्ने कसीर रह. ने इसी को ज़्यादा सही क़रार दिया है। चुनाँचे इमाम इब्ने कसीर रह. इस पर बहस करते हुए फ़रमाते हैं:

قال ابن جرير ولم يقم دليل على موت امه (اى ام يوسف عليه السلام) وظاهر القران يدل على حياتها.

मुहम्मद तक़ी उस्मानी।

यह मेरे उस ख़्वाब की ताबीर है जो बचपन में देखा था कि सूरज व चाँद और ग्यारह सितारे मुझे सज्दा कर रहे हैं, अल्लाह तआ़ला का शुक्र है जिसने उस ख़्वाब की सच्चाई को आँखों से दिखला दिया।

अहकाम व मसाईल

1. हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने बेटों की माफ़ी व दुआ़-ए-इस्तिग़फ़ार की दरख़्वास्त पर जो यह फ़रमाया कि "जल्द ही तुम्हारे लिये दुआ़-ए-मग़फ़िरत करूँगा" और फ़ौरन दुआ़ नहीं की, इस देरी की एक वजह कुछ हज़रात ने यह भी बयान की है कि मन्ज़ूर यह था कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम से मिलकर पहले यह तहक़ीक़ हो जाये कि उन्होंने इनकी ख़ता माफ़ कर दी है या नहीं, क्योंकि जब तक मज़लूम माफ़ी न दे अल्लाह के नज़दीक भी माफ़ी नहीं होती, ऐसी हालत में दुआ़-ए-मग़फ़िरत भी मुनासिब न थी।

यह बात अपनी जगह बिल्कुल सही और उसूली है कि बन्दों के हुक़ूक़ की तौबा बग़ैर इसके माफ़ नहीं होती कि हक़ वाला अपना हक़ वसूल कर ले या माफ़ कर दे, महज़ ज़बानी तौबा व इस्तिग़फ़ार काफ़ी नहीं।

2. हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. की रिवायत है कि जब यहूदा यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की क़मीज़ लेकर आये और याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के चेहरे पर डाली तो पूछा कि यूसुफ़ कैसे हैं? उन्होंने बतलाया कि वह मिस्र के बादशाह हैं। याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं इसको नहीं पूछता कि वह बादशाह हैं या फ़क़ीर, पूछना यह है कि ईमान और अ़मल के एतिबार से क्या हाल है? तब उन्होंने उनके तक़वे व पाकीज़गी के हालात बतलाये। यह है नबियों की मुहब्बत और ताल्लुक़ कि औलाद की जिस्मानी राहत से ज़्यादा उनकी रूहानी हालत की फ़िक्र करते हैं, हर मुसलमान को इसी की पैरवी करनी चाहिये।

3. हज़रत हसन रह. से रिवायत है कि जब ख़ुशख़बरी देने वाला यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का कुर्ता लेकर पहुँचा तो याक़ूब अ़लैहिस्सलाम चाहते थे कि उसको कुछ इनाम दें मगर हालात साज़गार न थे, इसलिये उज़्र किया कि सात दिन से हमारे घर में रोटी नहीं पकी, इसलिये मैं कुछ माद्दी इनाम तो नहीं दे सकता, मगर यह दुआ़ देता हूँ कि अल्लाह तआ़ला तुम पर मौत की सख़्ती को आसान कर दें। इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि यह दुआ़ उनके लिये सबसे बेहतर इनाम था।

4. इस वाकिए से यह भी मालूम हुआ कि ख़ुशख़बरी देने वाले को इनाम देना नबियों की सुन्नत है। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में हज़रत कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु का वाक़िआ़ मशहूर है कि ग़ज़्वा-ए-तबूक में शिर्कत न करने पर जब उन पर नाराज़गी पड़ी और बाद में तौबा क़ुबूल की गई तो जो शख़्स तौबा क़ुबूल होने की ख़ुशख़बरी लाया था आपने अपना जोड़ा कपड़ों का उतार कर उसको पहना दिया।

और इससे यह भी साबित हुआ कि ख़ुशी के मौक़े पर ख़ुशी के इज़हार के लिये दोस्तों

वग़ैरह को खाने की दावत देना भी सुन्नत है। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब सूरः ब-क़रह पढ़कर ख़त्म की तो ख़ुशी में एक ऊँट ज़िबह करके लोगों को खिलाया।

5. हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के बेटों ने वाक़िए की हक़ीक़त ज़ाहिर हो जाने के बाद अपने वालिद और भाई से माफ़ी माँगी। इससे मालूम हुआ कि जिस शख़्स के हाथ या ज़बान से किसी शख़्स को तकलीफ़ पहुँची या उसका कोई हक़ उसके ज़िम्मे रहा तो उस पर लाज़िम है कि फ़ौरन उस हक़ को अदा कर दे या उससे माफ़ करा ले।

बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स के ज़िम्मे दूसरे का कोई माली हक़ वाजिब हो या उसको कोई तकलीफ़ हाथ या ज़बान से पहुँचाई हो तो उसको चाहिये कि आज उसको अदा कर दे, या माफ़ी माँगकर उससे छुटकारा हासिल कर ले, इससे पहले कि क़ियामत का दिन आ जाये जहाँ किसी के पास कोई माल हक़ अदा करने के लिये न होगा, इसलिये उसके नेक आमाल मज़लूम को दे दिये जायेंगे, यह ख़ाली रह जायेगा, और अगर उसके आमाल भी नेक नहीं तो दूसरे के जो गुनाह हैं उसके सर पर डाल दिये जायेंगे। अल्लाह तआ़ला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का सब्र व शुक्र

इसके बाद हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने माँ-बाप के सामने कुछ अपनी आप बीती बयान करनी शुरू की। यहाँ एक मिनट ठहरकर ग़ौर कीजिये कि आज अगर किसी को इतनी मुसीबतों का सामना करना पड़े जितनी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम पर गुज़री और माँ-बाप से इतनी लम्बी जुदाई और मायूसी के बाद मिलने का इत्तिफ़ाक़ हो तो वह माँ-बाप के सामने अपनी आप बीती क्या बयान करेगा, कितना रोयेगा और रुलायेगा, और कितने दिन रात मुसीबतों की दास्तान सुनाने में ख़र्च करेगा, मगर यहाँ दोनों तरफ़ अल्लाह तआ़ला के रसूल और पैग़म्बर हैं, उनका तर्ज़े अ़मल देखिये। याक़ूब अ़लैहिस्सलाम के बिछड़े हुए बेटे हज़ारों मुसीबतों के दौर से गुज़रने के बाद जब वालिद से मिलते हैं तो क्या फ़रमाते हैं:

وَقَدْ اَحْسَنَ بِیْٓ اِذْ اَخْرَجَنِیْ مِنَ السِّجْنِ وَجَآءَ بِکُمْ مِّنَ الْبَدْوِ مِنْ ۢبَعْدِ اَنْ نَّزَغَ الشَّیْطٰنُ بَیْنِیْ وَبَیْنَ اِخْوَتِیْ۔

"यानी अल्लाह तआ़ला ने मुझ पर एहसान फ़रमाया जबकि मुझे क़ैदख़ाने से निकाल दिया, और आपको बाहर से यहाँ ले आया, इसके बाद कि शैतान ने मेरे और मेरे भाईयों के बीच फ़साद डलवा दिया था।"

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की मुसीबतें तरतीबवार तीन हिस्सों में तक़सीम होती हैं- अव्वल भाईयों का ज़ुल्म व ज़्यादती, दूसरे माँ-बाप से लम्बी जुदाई, तीसरे क़ैदख़ाने की तकलीफ़ें। ख़ुदा तआ़ला के इस मक़बूल पैग़म्बर ने अपने बयान में पहले तो वाक़िआ़त की तरतीब को बदलकर क़ैद से बात शुरू की और इसमें क़ैदख़ाने में दाख़िल होने और वहाँ की तकलीफ़ों का नाम नहीं

लिया बल्कि क़ैदख़ाने से निकलने का ज़िक्र अल्लाह तआला के शुक्र के साथ बयान किया, क़ैदख़ाने से निजात और उस पर अल्लाह का शुक्र के ज़िमन में यह भी बतला दिया कि मैं किसी वक़्त क़ैदख़ाने में भी रहा हूँ।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने जेलख़ाने से निकलने का ज़िक्र किया, भाईयों ने जिस कुएँ में डाला था उसका इस हैसियत से भी ज़िक्र नहीं किया कि अल्लाह तआ़ला ने मुझे उस कुएँ से निकाला, वजह यह है कि भाईयों की ख़ता पहले माफ़ कर चुके थे, और फ़रमा चुके थे 'आज तुम पर कोई मलामत नहीं' इसलिये मुनासिब न समझा कि अब उस कुएँ का किसी तरह से भी ज़िक्र आये, ताकि भाई शर्मिन्दा न हों। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

उसके बाद माँ-बाप की लम्बी और सब्र का इम्तिहान लेने वाली जुदाई और उसके अनुभवों और पेश आने वाले हालात को ज़िक्र करना था तो इन सब बातों को छोड़कर उसके आख़िरी अन्जाम और माँ-बाप से मुलाक़ात का ज़िक्र अल्लाह तआ़ला के शुक्र के साथ किया कि आपको देहात से मिस्र शहर में पहुँचा दिया। इसमें इस नेमत की तरफ़ भी इशारा है कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम का वतन देहात में था, जहाँ रोज़गार की सहूलतें और आसानियाँ कम होती हैं अल्लाह तआ़ला ने शहर में शाही सम्मान के साथ अन्दर पहुँचा दिया।

अब पहली बात रह गई 'भाईयों का ज़ुल्म व ज़्यादती' सो उसको भी शैतान के हवाले करके इस तरह बेबाक़ कर दिया कि मेरे भाई तो ऐसे न थे जो यह काम करते, शैतान ने उनको धोखे में डालकर यह फ़साद करा दिया।

यह है नुबुव्वत की शान कि मुसीबतों और तकलीफ़ों पर सिर्फ़ सब्र ही नहीं बल्कि हर जगह शुक्र का पहलू निकाल लेते हैं, इसी लिये उनका कोई हाल ऐसा नहीं होता जिसमें ये अल्लाह तआ़ला के शुक्रगुज़ार न हों, बख़िलाफ़ आ़म इनसानों के कि उनका यह हाल होता है कि अल्लाह तआ़ला की हज़ारों नेमतें बरसती रहें तो भी किसी का ज़िक्र न करें और किसी वक़्त कोई मुसीबत पड़ जाये तो उसको उम्र भर गाते रहें। क़ुरआन में इसी की शिकायत की गई है:

إِنَّ الْإِنسَانَ لِرَبِّهِ لَكَنُودٌ ۝

"यानी इनसान अपने रब का बहुत नाशुक्रा है।"

यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने मुसीबतों की दास्तान को तीन लफ़्ज़ों में मुख़्तसर करने के बाद फ़रमायाः

إِنَّ رَبِّي لَطِيفٌ لِّمَا يَشَاءُ ۚ إِنَّهُ هُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ۝

"यानी मेरा परवर्दिगार जो चाहता है उसकी बारीक तदबीर कर देता है, बिला शुब्हा वह बड़ा इल्म वाला हिक्मत वाला है।"

رَبِّ قَدْ آتَيْتَنِي مِنَ الْمُلْكِ وَعَلَّمْتَنِي مِن تَأْوِيلِ الْأَحَادِيثِ ۚ فَاطِرَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ أَنتَ وَلِيِّي فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۖ تَوَفَّنِي مُسْلِمًا وَأَلْحِقْنِي بِالصَّالِحِينَ ۝

रब्बि कद् आतैतनी मिनल्मुल्कि व अ़ल्लम्तनी मिन् तअ्वीलिल्-अहादीसि फ़ातिरस्समावाति वल्अर्ज़ि, अन्-त वलिय्यी फ़िद्दुन्या वल्आख़िरति तवफ़्फ़नी मुस्लिमंव्-व अल्हिक्नी बिस्सालिहीन (101)	ऐ रब! तूने दी मुझको कुछ हुकूमत और सिखाया मुझको कुछ फेरना बातों का, ऐ पैदा करने वाले आसमान और ज़मीन के तू ही मेरा कारसाज़ है दुनिया में और आख़िरत में, मौत दे मुझको इस्लाम पर और मिला मुझको नेकबख़्तों में। (101)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इसके बाद सब हंसी-ख़ुशी रहते रहे यहाँ तक कि याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की उम्र ख़त्म पर पहुँची और वफ़ात के बाद उनकी वसीयत के मुताबिक़ मुल्के शाम में लेजाकर अपने बुज़ुर्गों के पास दफ़न किये गये। फिर यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को भी आख़िरत का शौक़ बढ़ा और दुआ़ की कि) ऐ मेरे परवर्दिगार! आपने मुझको (हर तरह की नेमतें दीं, ज़ाहिरी भी बातिनी भी, ज़ाहिरी यह कि जैसे) सल्तनत का बड़ा हिस्सा दिया, और (बातिनी यह कि जैसे) मुझको ख़्वाबों की ताबीर देना तालीम फ़रमाया (जो कि एक बड़ा इल्म है, ख़ुसूसन जबकि वह यक़ीनी हो जो मौक़ूफ़ है वही पर, पस उसका वजूद जुड़ा होगा नुबुव्वत के अ़ता करने को) ऐ आसमान व ज़मीन के पैदा करने वाले! आप मेरे कारसाज़ हैं दुनिया में भी और आख़िरत में भी (पस जिस तरह दुनिया में मेरे सारे काम बना दिये कि सल्तनत दी, इल्म दिया, उसी तरह आख़िरत के काम भी बना दीजिये कि) मुझको फ़रमाँबरदारी की हालत में दुनिया से उठा लीजिये और ख़ास नेक बन्दों में शामिल कर दीजिये (यानी मेरे बुज़ुर्गों में जो बड़े-बड़े नबी हुए हैं उनमें मुझको भी पहुँचा दीजिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में तो वालिदे बुज़ुर्गवार से ख़िताब था, उसके बाद जबकि माँ-बाप और भाईयों की मुलाक़ात से एक अहम मक़सद हासिल होकर सुकून मिला तो डायरेक्ट हक़ तआ़ला की तारीफ़ व सना और दुआ़ में मशग़ूल हो गये। फ़रमायाः

رَبِّ قَدْ اٰتَيْتَنِىْ مِنَ الْمُلْكِ وَعَلَّمْتَنِىْ مِنْ تَاْوِيْلِ الْاَحَادِيْثِ فَاطِرَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ اَنْتَ وَلِيّٖ فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ. تَوَفَّنِىْ مُسْلِمًا وَّاَلْحِقْنِىْ بِالصّٰلِحِيْنَ۝

"यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! आपने ही मुझको सल्तनत का बड़ा हिस्सा दिया, और मुझको ख़्वाबों की ताबीर देना तालीम फ़रमाया। ऐ आसमान व ज़मीन के ख़ालिक़! आप ही दुनिया व आख़िरत में मेरे कारसाज़ हैं, मुझको पूरी फ़रमाँबरदारी की हालत में दुनिया से उठा लीजिये, और

मुझको कामिल नेक बन्दों में शामिल रखिये।'' कामिल नेक बन्दे अम्बिया अलैहिमुस्सलाम ही हो सकते हैं जो हर गुनाह से मासूम (सुरक्षित) हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस दुआ में अच्छे ख़ात्मे की दुआ ख़ास तौर पर ग़ौर करने के क़ाबिल है कि अल्लाह तआ़ला के मक़बूल बन्दों का रंग यह होता है कि कितने ही बुलन्द दर्जे दुनिया व आख़िरत के उनको नसीब हों और कितने ही रुतबे व पद उनके क़दमों में हों वे किसी वक़्त उन पर मग़रूर (इतराने वाले) नहीं होते, बल्कि हर वक़्त इसका खटका लगा रहता है कि कहीं ये हालात छिन न जायें या कम न हो जायें। इसकी दुआयें माँगते रहते हैं कि अल्लाह तआ़ला की दी हुई ज़ाहिरी और बातिनी नेमतें मौत तक बरक़रार रहें, बल्कि उनमें इज़ाफ़ा होता रहे।

यहाँ तक हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का अजीब व ग़रीब क़िस्सा और इसके ज़िमन में आई हुई हिदायतों का सिलसिला जो क़ुरआने करीम में बयान हुआ है पूरा हो गया, इसके बाद का क़िस्सा क़ुरआने करीम या किसी मरफ़ूअ़ हदीस में मन्क़ूल नहीं, तफ़सीर के अक्सर उलेमा ने तारीख़ी या इस्राईली रिवायतों के हवाले से नक़ल किया है।

तफ़सीर इब्ने कसीर में हज़रत हसन रह. की रिवायत से नक़ल किया है कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को जिस वक़्त भाईयों ने कुएँ में डाला था तो उनकी उम्र सत्रह साल की थी, फिर अस्सी साल वालिद से ग़ायब रहे और माँ-बाप की मुलाक़ात के बाद तेईस साल ज़िन्दा रहे, और एक सौ बीस साल की उम्र में वफ़ात पाई।

और मुहम्मद बिन इस्हाक़ ने फ़रमाया कि अहले किताब की रिवायत में है कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम और याक़ूब अलैहिस्सलाम की जुदाई का ज़माना चालीस साल का था, फिर याक़ूब अलैहिस्सलाम मिस्र में तशरीफ़ लाने के बाद यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के साथ सत्रह साल ज़िन्दा रहे, इसके बाद उनकी वफ़ात हो गई।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इतिहासकारों के हवाले से मज़कूर है कि मिस्र में चौबीस साल रहने के बाद याक़ूब अलैहिस्सलाम की वफ़ात हुई, और वफ़ात से पहले यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को यह वसीयत फ़रमाई थी कि मेरी लाश को मेरे वतन भेजकर मेरे वालिद इस्हाक़ अलैहिस्सलाम के पास दफ़न किया जाये।

सईद बिन जुबैर रह. ने फ़रमाया कि हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम को साल की लकड़ी के ताबूत में रखकर बैतुल-मुक़द्दस की तरफ़ मुन्तक़िल किया गया, इसी वजह से आम यहूदियों में यह रस्म चल गई कि अपने मुर्दों को दूर-दूर से बैतुल-मुक़द्दस में लेजाकर दफ़न करते हैं। हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम की उम्र वफ़ात के वक़्त एक सौ सैंतालीस साल थी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि याक़ूब अलैहिस्सलाम मय अपनी औलाद के जब मिस्र में दाख़िल हुए तो उनकी तादाद तिरानवे मर्द व औरत पर मुश्तमिल थी, और जब याक़ूब की यह औलाद यानी बनी इस्राईल मूसा अलैहिस्सलाम के साथ मिस्र से निकले तो इनकी तादाद छह लाख सत्तर हज़ार थी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व इब्ने कसीर)

यह पहले ज़िक्र हो चुका है कि पूर्व अज़ीज़े मिस्र के इन्तिक़ाल के बाद मिस्र के बादशाह ने

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की शादी ज़ुलैख़ा के साथ करा दी थी।

तौरात और अहले किताब की तारीख़ में है कि उनसे यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के दो लड़के इफ़राईम और मंशा और एक लड़की रहमत बिन्ते यूसुफ़ पैदा हुए। रहमत का निकाह हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम के साथ हुआ, और इफ़राईम की औलाद में यूशा बिन नून पैदा हुए जो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के साथी थे। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का इन्तिक़ाल एक सौ बीस साल की उम्र में हुआ और दरिया-ए-नील के किनारे पर दफ़न किये गये।

इब्ने इस्हाक़ ने हज़रत उरवा इब्ने ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से बयान किया है कि जब मूसा अलैहिस्सलाम को हुक्म हुआ कि बनी इस्राईल को साथ लेकर मिस्र से निकल जायें, तो वही के द्वारा अल्लाह तआला ने उनको हुक्म दे दिया कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की लाश को मिस्र में न छोड़ें, उसको अपने साथ लेकर मुल्के शाम चले जायें, और उनके बाप दादा के पास दफ़न करें। इस हुक्म के मुताबिक़ मूसा अलैहिस्सलाम ने तलाश करके उनकी क़ब्र खोजी जो एक संगे मरमर के ताबूत में थी, उसको अपने साथ किनआन की ज़मीन फ़िलिस्तीन में ले गये और हज़रत इस्हाक़ और याक़ूब अलैहिमस्सलाम के बराबर में दफ़न कर दिया। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के बाद अमालिक़ क़ौम के फ़िरऔन मिस्र पर क़ाबिज़ हो गये और बनी इस्राईल उनकी हुकूमत में रहते हुए यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के दीन पर क़ायम रहे, मगर इनको विदेशी समझकर तरह-तरह की तकलीफ़ें दी जाने लगीं, यहाँ तक कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के ज़रिये अल्लाह तआला ने इनको इस अज़ाब से निकाला। (तफ़सीरे मज़हरी)

हिदायतें व अहकाम

बयान हुई आयतों में एक मसला तो यह मालूम हुआ कि माँ-बाप का अदब व सम्मान वाजिब है जैसा कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के वाक़िए से साबित हुआ। दूसरा मसला यह मालूम हुआ कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की शरीअत में अदब व सम्मान का सज्दा जायज़ था, इसी लिये माँ-बाप और भाईयों ने सज्दा किया, मगर शरीअते मुहम्मदिया में सज्दे को ख़ास इबादत की निशानी क़रार देकर ग़ैरुल्लाह के लिये हराम क़रार दिया गया। क़ुरआन मजीद में फ़रमायाः

لَا تَسْجُدُوْا لِلشَّمْسِ وَلَا لِلْقَمَرِ

(कि सूरज को सज्दा न करो और न चाँद को) और हदीस में है कि हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु जब मुल्के शाम गये और वहाँ देखा कि ईसाई लोग अपने बुज़ुर्गों को सज्दा करते हैं तो वापस आकर- रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने सज्दा करने लगे, आपने मना फ़रमाया और फ़रमाया कि अगर मैं किसी को सज्दा करना जायज़ समझता तो औरत को कहता कि अपने शौहर को सज्दा किया करे। इसी तरह हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सज्दा करना चाहा तो आपने मना

फ़रमायाः

لَا تَسْجُدْ لِیْ یَاسَلْمَانُ وَاسْجُدْ لِلْحَیِّ الَّذِیْ لَا یَمُوْتُ

"यानी ऐ सलमान! मुझे सज्दा न करो, बल्कि सज्दा सिर्फ़ उस ज़ात को करो जो हमेशा ज़िन्दा व क़ायम रहने वाली है, जिसको कभी फ़ना नहीं।" (इब्ने कसीर)

इससे मालूम हुआ कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये अदब व सम्मान का सज्दा जायज़ नहीं तो और किसी बुज़ुर्ग या पीर के लिये कैसे जायज़ हो सकता है।

هٰذَا تَاْوِیْلُ رُءْیَایَ

से मालूम हुआ कि कई बार ख़्वाब की ताबीर लम्बे ज़माने के बाद ज़ाहिर होती है, जैसे इस वाक़िए में चालीस या अस्सी साल के बाद ज़हूर हुआ। (इब्ने जरीर व इब्ने कसीर)

قَدْ اَحْسَنَ بِیْ

(और उसने मुझ पर इनाम फ़रमाया) से साबित हुआ कि जो शख़्स किसी बीमारी या मुसीबत में मुब्तला हो फिर उससे निजात हो जाये तो पैग़म्बरों वाली सुन्नत यह है कि निजात पर शुक्र अदा करे और बीमारी व मुसीबत के ज़िक्र को भूल जाये।

اِنَّ رَبِّیْ لَطِیْفٌ لِّمَا یَشَآءُ

से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला जिस काम का इरादा फ़रमाते हैं उसकी ऐसी लतीफ़ और छुपी तदबीरें और सामान कर देते हैं कि किसी को उसका वहम व गुमान भी नहीं हो सकता।

تَوَفَّنِیْ مُسْلِمًا

(मौत दे मुझको इस्लाम पर) में यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने ईमान व इस्लाम पर मौत की दुआ़ माँगी है। इससे मालूम हुआ कि ख़ास हालात में मौत की दुआ़ करना मना नहीं, और सही हदीसों में जो मौत की तमन्ना को मना फ़रमाया है उसका हासिल यह है कि दुनिया की तकलीफ़ों से घबराकर बेसब्री से मौत माँगने लगे, यह दुरुस्त नहीं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई शख़्स किसी मुसीबत की वजह से मौत की तमन्ना न करे, अगर कहना ही है तो यूँ कहे कि या अल्लाह! मुझे जब तक मेरे लिये ज़िन्दगी बेहतर है उस वक़्त तक ज़िन्दा रख और जब मौत बेहतर हो तो मुझे मौत दे दे।

ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْغَیْبِ نُوْحِیْهِ اِلَیْكَ ۚ وَمَا كُنْتَ لَدَیْهِمْ اِذْ اَجْمَعُوْٓا اَمْرَهُمْ وَهُمْ یَمْكُرُوْنَ ۝ وَمَآ اَكْثَرُ النَّاسِ وَلَوْ حَرَصْتَ بِمُؤْمِنِیْنَ ۝ وَمَا تَسْـَٔلُهُمْ عَلَیْهِ مِنْ اَجْرٍ ؕ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ لِّلْعٰلَمِیْنَ ۝ وَكَاَیِّنْ مِّنْ اٰیَةٍ فِی السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ یَمُرُّوْنَ عَلَیْهَا وَهُمْ عَنْهَا مُعْرِضُوْنَ ۝ وَمَا یُؤْمِنُ اَكْثَرُهُمْ بِاللّٰهِ اِلَّا وَهُمْ مُّشْرِكُوْنَ ۝ اَفَاَمِنُوْٓا اَنْ تَاْتِیَهُمْ غَاشِیَةٌ مِّنْ

عَذَابِ اللّٰهِ اَوْ تَاْتِيَهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً وَّهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ ۝ قُلْ هٰذِهٖ سَبِيْلِيْٓ اَدْعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ ۣ عَلٰى بَصِيْرَةٍ اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِيْ ۭ وَسُبْحٰنَ اللّٰهِ وَمَآ اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِيْٓ اِلَيْهِمْ مِّنْ اَهْلِ الْقُرٰى ۭ اَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ اتَّقَوْا ۭ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝

ज़ालि-क मिन् अम्बाइल्ग़ैबि नूहीहि इलै-क व मा कुन्-त लदैहिम् इज़् अज्मअ़ू अम्रहुम् व हुम् यम्कुरून (102) व मा अक्सरुन्नासि व लौ हरस्-त बिमुअ्मिनीन (103) व मा तस्अलुहुम् अ़लैहि मिन् अज्रिन्, इन् हु-व इल्ला ज़िक्रुल्-लिल्-आ़लमीन (104) ✿

व क-अय्यिम्-मिन् आयतिन् फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि यमुर्रू-न अ़लैहा व हुम् अ़न्हा मुअ्रिज़ून (105) व मा युअ्मिनु अक्सरुहुम् बिल्लाहि इल्ला व हुम् मुश्रिकून (106) अ-फ़-अमिनू अन् तअ्ति-यहुम् ग़ाशि-यतुम् मिन् अ़ज़ाबिल्लाहि औ तअ्ति-यहुमुस्साअ़तु बग़्त-तंव्-व हुम् ला यश्अ़ुरून (107) क़ुल् हाज़िही सबीली अद्अ़ू इलल्लाहि, अ़ला बसीरतिन् अ-न व मनित्त-ब-अ़नी, व

ये ख़बरें हैं ग़ैब की हम भेजते हैं तेरे पास और तू नहीं था उनके पास जब वे ठहराने लगे अपना काम और फ़रेब करने लगे। (102) और अक्सर लोग नहीं हैं यक़ीन करने वाले अगरचे तू कितना ही चाहे। (103) और तू माँगता नहीं उनसे इस पर कुछ बदला, यह तो और कुछ नहीं मगर नसीहत है सारे आ़लम के लिये। (104) ✿

और बहुत निशानियाँ हैं आसमान और ज़मीन में जिन पर गुज़र होता रहता है उनका और वे उन पर ध्यान नहीं करते। (105) और नहीं ईमान लाते बहुत लोग अल्लाह पर मगर साथ ही शरीक भी करते हैं। (106) क्या निडर हो गये इससे कि आ ढाँके उनको एक आफ़त अल्लाह के अ़ज़ाब की, या आ पहुँचे क़ियामत अचानक और उनको ख़बर न हो। (107) कह दे यह मेरी राह है, बुलाता हूँ अल्लाह की तरफ़, समझ बूझकर मैं और जो मेरे

सुब्हानल्लाहि व मा अ-न मिनल्-मुश्रिकीन (108) व मा अर्सल्ना मिन् क़ब्लि-क इल्ला रिजालन् नूही इलैहिम् मिन् अह़्लिल्क़ुरा, अ-फ़लम् यसीरू फ़िल्अर्ज़ि फ़-यन्ज़ुरू कै-फ़ का-न आक़ि-बतुल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम्, व लदारुल्-आख़िरति ख़ैरुल्-लिल्लज़ीनत्तक़ौ, अ-फ़ला तअ़्क़िलून (109)	साथ है, और अल्लाह पाक है, और मैं नहीं शरीक बनाने वालों में। (108) और जितने भेजे हमने तुझसे पहले वे सब मर्द ही थे कि वही भेजते थे हम उनको बस्तियों के रहने वाले, सो क्या उन लोगों ने नहीं सैर की मुल्क की कि देख लेते कैसा हुआ अन्जाम उन लोगों का जो उनसे पहले थे, और आख़िरत का घर तो बेहतर है परहेज़ करने वालों को, क्या अब भी नहीं समझते? (109)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

यह क़िस्सा (जो ऊपर बयान किया गया आपके एतिबार से) ग़ैब की ख़बरों में से है (क्योंकि आपके पास कोई ज़ाहिरी ज़रिया और माध्यम इसके जानने का नहीं था सिर्फ़) हम (ही) वही के ज़रिये से आपको यह क़िस्सा बतलाते हैं, और (यह ज़ाहिर है कि) आप उन (यूसुफ़ के भाईयों) के पास उस वक़्त मौजूद न थे जबकि उन्होंने अपना इरादा (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को कुएँ में डालने का) पुख़्ता कर लिया था और वे (उसके मुताल्लिक़) तदबीरें कर रहे थे (कि आप से यूँ कहें कि आप उनको ले जायें, इसी तरह और दूसरी बातें। और इस तरह यह मामला यक़ीनी है कि आपने किसी से यह क़िस्सा सुना सुनाया भी नहीं पस यह साफ़ दलील है नुबुव्वत की और वही वाला होने की)। और (बावजूद नुबुव्वत पर दलीलें क़ायम होने के) अक्सर लोग ईमान नहीं लाते चाहे आपका कैसा ही जी चाहता हो। और (उनके ईमान न लाने से आपका तो कोई नुक़सान ही नहीं, क्योंकि) आप उनसे इस (क़ुरआन) पर कुछ मुआ़वज़ा तो चाहते नहीं (जिसमें यह शुब्हा व गुमान हो कि अगर ये क़ुरआन को क़ुबूल न करेंगे तो आपका मुआ़वज़ा जाता रहेगा)। यह (क़ुरआन) तो तमाम जहान वालों के लिये सिर्फ़ एक नसीहत है (जो न मानेगा उसी का नुक़सान होगा)।

और (जैसे ये लोग नुबुव्वत के इनकारी हैं इसी तरह दलीलों के बावजूद तौहीद के भी इनकारी हैं चुनाँचे) बहुत-सी निशानियाँ हैं (कि तौहीद पर दलालत करने वाली) आसमानों में (जैसा कि सितारे वग़ैरह) और ज़मीन में (जैसे तत्व और मख़्लूक़ात) जिन पर उनका गुज़र होता रहता है (यानी उनको देखते रहते हैं), और वे उनकी तरफ़ (ज़रा) तवज्जोह नहीं करते (यानी उनसे दलील हासिल नहीं करते)। और अक्सर लोग जो ख़ुदा को मानते भी हैं तो इस तरह कि

शिर्क भी करते जाते हैं (पस बिना तौहीद ख़ुदा का मानना न मानने के जैसा है, पस ये लोग अल्लाह के साथ भी कुफ़्र करते हैं और नुबुव्वत के साथ भी कुफ़्र करते हैं)। सो क्या (अल्लाह व रसूल के इनकारी होकर) फिर भी इस बात से मुत्मईन हुए बैठे हैं कि उन पर ख़ुदा के अ़ज़ाब की कोई ऐसी आफ़त आ पड़े जो उनको घेर ले या उन पर अचानक क़ियामत आ जाये और उनको (पहले से) ख़बर भी न हो (मतलब यह है कि कुफ़्र का नतीजा सज़ा व अ़ज़ाब है चाहे दुनिया में नाज़िल हो जाये या क़ियामत के दिन वाक़े हो, उनको डरना और कुफ़्र को छोड़ देना चाहिये)।

आप फ़रमा दीजिये कि मैं ख़ुदा की तरफ़ इस अन्दाज़ से बुलाता हूँ कि मैं (तौहीद की और अपने अल्लाह की तरफ़ बुलाने वाला होने की) दलील पर क़ायम हूँ, मैं भी और मेरे साथ वाले भी (यानी मेरे पास भी दलील है तौहीद व रिसालत की और मेरे साथ वाले भी दलील से संतुष्ट होकर मुझ पर ईमान लाये हैं, मैं बिना दलील की बात की तरफ़ किसी को नहीं बुलाता, दलील सुनो और समझो। पस रास्ते का हासिल यह हुआ कि ख़ुदा एक है और मैं उसकी तरफ़ दावत देने वाला हूँ), और अल्लाह (शिर्क से) पाक है और मैं (इस तरीक़े को क़ुबूल करता हूँ और) मुश्रिकों में से नहीं हूँ।

और (ये जो नुबुव्वत पर शक करते हैं कि नबी फ़रिश्ता होना चाहिये यह बिल्कुल बेकार बात है, क्योंकि) हमने आप से पहले अनेक बस्ती वालों में से जितने (रसूल) भेजे सब आदमी ही थे जिनके पास हम वही भेजते थे (कोई भी फ़रिश्ता न था, जिन्होंने उनको न माना और ऐसे ही बेकार के शुब्हात करते रहे उनको सज़ायें दी गईं, इसी तरह इनको भी सज़ा होगी चाहे दुनिया में चाहे आख़िरत में। और ये लोग जो बेफ़िक्र हैं) तो क्या ये लोग मुल्क में (कहीं) चले-फिरे नहीं कि (अपनी आँखों से) देख लेते कि उन लोगों का कैसा (बुरा) अन्जाम हुआ जो इनसे पहले (काफ़िर) हो गुज़रे हैं, और (याद रखो कि जिस दुनिया की मुहब्बत में मदहोश होकर तुमने कुफ़्र इख़्तियार किया है यह दुनिया फ़ानी और बेहक़ीक़त है) अलबत्ता आख़िरत की दुनिया उन लोगों के लिये बहुत ही बेहतरी व कामयाबी की चीज़ है जो (शिर्क वग़ैरह से) एहतियात रखते हैं (और तौहीद व इताअ़त इख़्तियार करते हैं) सो क्या तुम इतना भी नहीं समझते (कि फ़ानी और बेहक़ीक़त चीज़ अच्छी है या बाक़ी और हमेशा रहने वाली)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा पूरा बयान फ़रमाने के बाद पहले नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब हैः

ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْكَ

"यानी यह क़िस्सा ग़ैब की उन ख़बरों में से है जो हमने वही के ज़रिये आपको बताया है।" आप यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के भाईयों के पास मौजूद न थे, जबकि वे यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को

कुएँ में डालना तय कर चुके थे और उनके लिये तदबीरें कर रहे थे।

इस इज़हार का मकसद यह है कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के इस किस्से को पूरी तफ़सील के साथ सही-सही बयान कर देना आपकी नुबुव्वत और वही (अल्लाह की तरफ़ से आप पर उसका पैग़ाम व हिदायत उतरने) की स्पष्ट दलील है, क्योंकि यह किस्सा आपके ज़माने से हज़ारों साल पहले का है, न आप वहाँ मौजूद थे कि देखकर बयान फ़रमा दिया हो और न आपने कहीं किसी से तालीम हासिल की कि इतिहास की किताबें देखकर या किसी से सुनकर बयान फ़रमा दिया हो, इसलिये सिवाय अल्लाह की वही होने के और कोई रास्ता इसके इल्म का नहीं।

क़ुरआने करीम ने इस जगह सिर्फ़ इतनी बात पर बस फ़रमाया है कि आप वहाँ मौजूद न थे, किसी दूसरे शख़्स या किताब से इसका इल्म हासिल न होने का ज़िक्र इसलिये ज़रूरी नहीं समझा कि पूरा अरब जानता था कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उम्मी (बिना पढ़े-लिखे) हैं, आपने किसी से लिखना पढ़ना नहीं सीखा। और यह भी सब को मालूम था कि आपकी पूरी उम्र मक्का में गुज़री है, मुल्के शाम का एक सफ़र तो अपने चचा अबू तालिब के साथ किया था, जिसमें रास्ते ही से वापस तशरीफ़ ले आये, दूसरा सफ़र तिजारत के लिये किया, चन्द दिनों में काम करके वापस तशरीफ़ ले आये, उस सफ़र में भी किसी आलिम से मुलाक़ात या किसी इल्मी संस्था से ताल्लुक़ का कोई गुमान नहीं था, इसलिये इस जगह इसके ज़िक्र करने की ज़रूरत न समझी गई और क़ुरआने करीम में दूसरी जगह इसका भी ज़िक्र फ़रमा दिया है:

مَا كُنْتَ تَعْلَمُهَا أَنْتَ وَلَا قَوْمُكَ مِنْ قَبْلِ هٰذَا.

"यानी क़ुरआन नाज़िल होने से पहले इन वाक़िआत को न आप जानते थे और न आपकी कौम।"

इमाम बग़वी रह. ने फ़रमाया कि यहूद और क़ुरैश ने मिलकर आज़माईश और इम्तिहान के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह सवाल किया था कि अगर आप अपने नुबुव्वत के दावे में सच्चे हैं तो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का वाक़िआ बतलाईये कि क्या और किस तरह हुआ? जब आपने वही की मदद से यह सब बतला दिया और वे फिर भी अपने कुफ़्र व इनकार पर जमे रहे तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सदमा पहुँचा, इस पर अगली आयत में फ़रमाया गया कि आपकी नुबुव्वत व रिसालत की निशानियाँ स्पष्ट होने के बावजूद बहुत-से लोग ईमान लाने वाले नहीं, आप कितनी ही कोशिश करें। मतलब यह है कि आपका काम तब्लीग़ और इस्लाह की कोशिश है, उसका कामयाब बनाना न आपके इख़्तियार में है न आपके ज़िम्मे है, न आपको इसका कोई रंज होना चाहिये। इसके बाद फ़रमाया:

وَمَا تَسْـَٔلُهُمْ عَلَيْهِ مِنْ أَجْرٍ إِنْ هُوَ إِلَّا ذِكْرٌ لِّلْعٰلَمِيْنَ٥

यानी आप जो कुछ इनको तब्लीग़ करने और सही रास्ते पर लाने के लिये कोशिश करते हैं उस पर इन लोगों से कुछ मुआवज़ा तो नहीं माँगते, जिसकी वजह से इनको उसके सुनने या मानने में कोई दुश्वारी हो, बल्कि आपका काम तो ख़ालिस हमदर्दी, नसीहत और उनकी भलाई

है, तमाम जहान वालों के लिये इसमें इस तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि जब इस कोशिश से आपका मक़सद कोई दुनियावी फ़ायदा नहीं, बल्कि आख़िरत के सवाब और क़ौम की ख़ैरख़्वाही (हमदर्दी) है तो वह मक़सद आपका हासिल हो चुका फिर आप क्यों ग़मगीन होते हैं।

وَكَاَيِّنْ مِّنْ اٰيَةٍ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ يَمُرُّوْنَ عَلَيْهَا وَهُمْ عَنْهَا مُعْرِضُوْنَ۝

"यानी ये लोग सिर्फ़ यही नहीं कि किसी नसीहत करने वाले की नसीहत ज़िद और हठधर्मी से नहीं सुनते, बल्कि इनका तो हाल यह है कि अल्लाह तआला की कामिल क़ुदरत की जो खुली खुली निशानियाँ आसमान व ज़मीन में हर वक़्त सामने रहती हैं उन पर भी ये ग़फ़लत व हठधर्मी से गुज़रे चले जाते हैं, ज़रा भी ध्यान नहीं देते कि यह किसकी क़ुदरत व बड़ाई की निशानियाँ हैं, आसमान व ज़मीन में हक़ तआला शानुहू की ख़ुदाई और हिक्मत व क़ुदरत की निशानियाँ बेशुमार हैं उनमें से यह भी है कि पिछली क़ौमों पर जो अ़ज़ाब आये और उनकी उल्टी हुई या बरबाद की हुई बस्तियाँ इनकी नज़रों से गुज़रती हैं मगर उनसे भी कोई नसीहत नहीं पकड़ते।

यह बयान तो ऐसे लोगों का था जो ख़ुदा तआला के वजूद और उसकी हिक्मत व क़ुदरत ही के क़ायल नहीं थे, आगे उनका बयान है जो अल्लाह तआला के वजूद के तो क़ायल हैं मगर उसकी ख़ुदाई में दूसरी चीज़ों को शरीक क़रार देते हैं। फ़रमायाः

وَمَا يُؤْمِنُ اَكْثَرُهُمْ بِاللّٰهِ اِلَّا وَهُمْ مُّشْرِكُوْنَ۝

"यानी उनमें जो लोग अल्लाह तआला पर ईमान लाते हैं तो वे भी शिर्क के साथ, यानी अल्लाह तआला के इल्म व क़ुदरत वग़ैरह सिफ़तों में दूसरों को शरीक ठहराते हैं जो सरासर ज़ुल्म और जहालत है।

अ़ल्लामा इब्ने कसीर ने फ़रमाया कि इस आयत के मफ़्हूम में वे मुसलमान भी दाख़िल हैं जो ईमान के बावजूद विभिन्न क़िस्म के शिर्क में मुब्तला हैं। मुस्नद अहमद में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे तुम पर जिस चीज़ का ख़तरा है उनमें सबसे ज़्यादा ख़तरनाक छोटा शिर्क है। सहाबा के पूछने पर फ़रमाया कि रिया (दिखावा) छोटा शिर्क है। इसी तरह एक हदीस में ग़ैरुल्लाह (अल्लाह के अ़लावा किसी) की क़सम खाने को शिर्क फ़रमाया है। (इब्ने कसीर तिर्मिज़ी के हवाले से)

अल्लाह तआला के सिवा किसी दूसरे के नाम की मन्नत और नियाज़ मानना भी तमाम फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) के नज़दीक इसमें दाख़िल है।

इसके बाद उनकी ग़फ़लत व जहालत पर अफ़सोस और ताज्जुब का इज़हार है कि ये लोग अपने इनकार व सरकशी के बावजूद इस बात से कैसे बेफ़िक्र हो गये कि इन पर अल्लाह तआला की तरफ़ से अ़ज़ाब कोई हादसा आ पड़े, या अचानक उन पर क़ियामत आ जाये और वे उसके लिये तैयार न हों।

قُلْ هٰذِهٖ سَبِيْلِىْٓ اَدْعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ عَلٰى بَصِيْرَةٍ اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِىْ ۚ وَسُبْحٰنَ اللّٰهِ وَمَآ اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ۝

"यानी आप उन लोगों से कह दें कि (तुम मानो या न मानो) मेरा तो यही तरीक़ा और मस्लक है कि लोगों को समझ और यक़ीन के साथ अल्लाह की तरफ़ दावत देता रहूँ, मैं भी और वे लोग भी जो मेरी पैरवी करने वाले हैं।"

मतलब यह है कि मेरी यह दावत किसी सरसरी नज़र पर आधारित नहीं बल्कि पूरी बसीरत (दिली तसल्ली, इत्मीनान) और अ़क़्ल व हिक्मत का नतीजा है। इस दावत व दीनी समझ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने मानने वालों और पैरोकारों को भी शामिल फ़रमाया है। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इससे मुराद सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम हैं जो रिसालत के उलूम के ख़ज़ाने और अल्लाह तआ़ला के सिपाही हैं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सहाबा इस तमाम उम्मत के बेहतरीन अफ़राद हैं जिनके दिल पाक और इल्म गहरा है, तकल्लुफ़ का उनमें नाम नहीं, अल्लाह तआ़ला ने उनको अपने रसूल की सोहबत व ख़िदमत के लिये चुन लिया है, तुम उन्हीं के अख़्लाक़, आ़दतों और तरीक़ों को सीखो, क्योंकि वही सीधे रास्ते पर हैं।

और यह भी मायने हो सकते हैं कि 'मनित्त-ब-अ़नी' (जो मेरी पैरवी करे) आ़म हो हर उस शख़्स के लिये जो क़ियामत तक रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दावत को उम्मत तक पहुँचाने की ख़िदमत में मशग़ूल हो। इमाम कलबी और इब्ने ज़ैद ने फ़रमाया कि इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि जो शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी का दावा करे उस पर लाज़िम है कि आपकी दावत को लोगों में फैलाये और क़ुरआन की तालीम को आ़म करे। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَسُبْحٰنَ اللّٰهِ وَمَآ اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ۝

"यानी शिर्क से पाक है अल्लाह, और मैं शिर्क करने वालों में से नहीं।" ऊपर चूँकि यह ज़िक्र आया था कि अक्सर लोग जब अल्लाह पर ईमान भी लाते हैं तो उसके साथ खुला या छुपा शिर्क मिला देते हैं इसलिये पूर्ण रूप से शिर्क से अपनी बराअत का ऐलान फ़रमाया। ख़ुलासा यह है कि मेरी दावत का यह मतलब नहीं कि मैं लोगों को अपना बन्दा बनाऊँ बल्कि मैं ख़ुद भी अल्लाह का बन्दा हूँ और लोगों को भी उसी की बन्दगी की तरफ़ दावत देता हूँ, अलबत्ता दाओ़ (अल्लाह की तरफ़ दावत देने वाला) होने की हैसियत से मुझ पर ईमान लाना फ़र्ज़ है।

इस पर जो मक्का के मुश्रिक यह शुब्हा पेश किया करते थे कि अल्लाह तआ़ला का रसूल और क़ासिद तो इनसान नहीं बल्कि फ़रिश्ता होना चाहिये, इसका जवाब अगली आयत में इस तरह इरशाद फ़रमायाः

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِيْٓ اِلَيْهِمْ مِّنْ اَهْلِ الْقُرٰى.

यानी उनका यह ख़्याल बेबुनियाद और बेहूदा है कि अल्लाह का रसूल और पैग़म्बर फ़रिश्ता

होना चाहिये, इनसान नहीं हो सकता, बल्कि मामला उल्टा है कि इनसानों के लिये अल्लाह का रसूल हमेशा इनसान ही होता चला आया है, अलबत्ता आ़म इनसानों से उसको यह विशेषता हासिल होती है कि उसकी तरफ़ डायरेक्ट हक़ तआ़ला की वही और पैग़ाम आता है और वह किसी की कोशिश व अ़मल का नतीजा नहीं होता, अल्लाह तआ़ला ख़ुद ही अपने बन्दों में से जिसको मुनासिब समझते हैं इस काम के लिये चुन लेते हैं, और यह चयन कमाल की ऐसी ख़ास सिफ़ात की बिना पर होता है जो आ़म इनसानों में नहीं होतीं।

आगे उन लोगों को तंबीह है जो अल्लाह की तरफ़ दावत देने वाले और रसूल की हिदायतों की ख़िलाफ़वर्ज़ी करके अल्लाह के अ़ज़ाब को दावत देते हैं, फ़रमायाः

أَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِي الْأَرْضِ فَيَنْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ اتَّقَوْا أَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ○

"यानी क्या ये लोग ज़मीन में चलते फिरते नहीं कि इनको पिछली क़ौमों के हालात का इल्म हो कि रसूलों के इनकार ने उनको कैसे बुरे अन्जाम में मुब्तला किया, मगर ये लोग दुनिया की ज़ाहिरी ज़ीनत व राहत में मस्त होकर आख़िरत को भुला बैठे हैं हालाँकि परहेज़गारों के लिये आख़िरत इस दुनिया से कहीं ज़्यादा बेहतर है। क्या उन लोगों को इतनी भी अ़क्ल नहीं कि दुनिया की चन्द दिन की राहत को आख़िरत की हमेशा वाली और मुकम्मल नेमतों और राहतों पर तरजीह (वरीयता) देते हैं।

अहकाम व हिदायतें

ग़ैब की ख़बर देने और ग़ैब के इल्म में फ़र्क़

ذٰلِكَ مِنْ أَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ إِلَيْكَ.

"यह सब कुछ ग़ैब की ख़बरों में से है जो हम आपको वही के ज़रिये बतलाते हैं।"

यही मज़मून तक़रीबन इन्हीं अलफ़ाज़ के साथ सूरः आले इमरान आयत 44 में हज़रत मरियम के क़िस्से में आया हैः

ذٰلِكَ مِنْ أَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ إِلَيْكَ.

और सूरः हूद आयत नम्बर 49 में नूह अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए के बारे में आया हैः

تِلْكَ مِنْ أَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهَآ إِلَيْكَ.

इन आयतों से एक तो यह बात मालूम हुई कि हक़ तआ़ला अपने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को बहुत-सी ग़ैब की ख़बरों पर वही के ज़रिये बाख़बर कर देते हैं, ख़ुसूसन हमारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उन ग़ैब की ख़बरों का ख़ास हिस्सा अ़ता फ़रमाया है जो तमाम पिछले नबियों से ज़्यादा है। यही वजह है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उम्मत को क़ियामत तक होने वाले बहुत-से वाक़िआ़त का विस्तार से या संक्षिप्त रूप से पता दिया है, हदीस की किताबों में 'किताबुल-फ़ितन्' की तमाम हदीसें इससे भरी हुई हैं।

आ़म लोग चूँकि इल्म-ए-ग़ैब सिर्फ़ इसी को जानते हैं कि कोई शख़्स ग़ैब की ख़बरों से किसी तरह वाक़िफ़ हो जाये, और यह वस्फ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम में मुकम्मल हैसियत से मौजूद है, इसलिये ख़्याल करते हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आ़लिमुल-ग़ैब (ग़ैब के जानने वाले) थे, मगर क़ुरआने करीम ने साफ़ लफ़्ज़ों में ऐलान फ़रमा दिया है कि:

لَا يَعْلَمُ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ الْغَيْبَ اِلَّا اللّٰهُ.

जिससे मालूम होता है कि आ़लिमुल-ग़ैब सिवाय ख़ुदा तआ़ला के और कोई नहीं हो सकता, इल्मे-ग़ैब अल्लाह जल्ल शानुहू की ख़ास सिफ़त है, उसमें किसी रसूल या फ़रिश्ते को शरीक समझना उनको अल्लाह के बराबर बनाने के जैसा और ईसाईयों का अ़मल है जो रसूल को ख़ुदा का बेटा और ख़ुदाई का शरीक क़रार देते हैं। क़ुरआने करीम की उक्त आयतों से मामले की पूरी हक़ीक़त खुलकर सामने आ गई कि इल्मे-ग़ैब तो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की ख़ास सिफ़त है और आ़लिमुल-ग़ैब सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू ही हैं, अलबत्ता ग़ैब की बहुत-सी ख़बरें अल्लाह तआ़ला अपने रसूलों को वही के ज़रिये से बतला देते हैं। यह क़ुरआने करीम की इस्तिलाह (परिभाषा) में इल्मे ग़ैब नहीं कहलाता, और अ़वाम चूँकि इस बारीक फ़र्क़ को नहीं समझते तो ग़ैब की ख़बरों ही को इल्मे ग़ैब कह देते हैं, और जब क़ुरआनी इस्तिलाह के मुताबिक़ ग़ैरुल्लाह से इल्मे-ग़ैब की नफ़ी का ज़िक्र किया जाता है तो उससे इख़्तिलाफ़ (मतभेद और विवाद) करने लगते हैं जिसकी हक़ीक़त इससे ज़्यादा कुछ नहीं कि यह अलफ़ाज़ का फेर है जब हक़ीक़त में ग़ौर करेंगे तो मालूम होगा कि इख़्तिलाफ़ व विवाद की तो कोई बात ही नहीं।

وَمَا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِيْٓ اِلَيْهِمْ مِّنْ اَهْلِ الْقُرٰى.

इस आयत में अल्लाह तआ़ला के रसूलों के बारे में लफ़्ज़ 'रिजालन' से मालूम हुआ कि रसूल हमेशा मर्द ही होते हैं औ़रत नबी या रसूल नहीं हो सकती।

इमाम इब्ने कसीर ने उलेमा की अक्सरियत का यही क़ौल नक़ल किया है कि अल्लाह तआ़ला ने किसी औ़रत को नबी या रसूल नहीं बनाया। कुछ उलेमा ने चन्द औ़रतों के बारे में नबी होने का इक़रार किया है, जैसे हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की बीवी सारा रज़ियल्लाहु अ़न्हा और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा और हज़रत मरियम ईसा अ़लैहिस्सलाम की माँ, क्योंकि इन तीनों औ़रतों के बारे में क़ुरआने करीम में ऐसे अलफ़ाज़ मौजूद हैं जिनसे समझा जाता है कि अल्लाह के हुक्म से फ़रिश्तों ने इनसे कलाम किया और ख़ुशख़बरी सुनाई या ख़ुद इनको अल्लाह की वही से कोई बात मालूम हुई, मगर उलेमा की अक्सरियत के नज़दीक इन आयतों से इन तीनों औ़रतों की बुज़ुर्गी और अल्लाह तआ़ला के नज़दीक इनका बड़ा दर्जा होना तो साबित होता है, मगर वे फ़रमाते हैं कि सिर्फ़ ये अलफ़ाज़ इनकी नुबुव्वत व रिसालत के सुबूत के लिये काफ़ी नहीं।

और इसी आयत में लफ़्ज़ 'अह्लिल्-क़ुरा' से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला अपने रसूल

उमूमन शहरों और कसबों के रहने वालों में से भेजते हैं, देहात और जंगल के बाशिन्दों में से रसूल नहीं होते। क्योंकि देहात और जंगल के बाशिन्दे आम तौर पर सख़्त मिज़ाज वाले होते हैं और अ़क्ल व समझ में कामिल (पूरे) नहीं होते। (इब्ने कसीर, क़ुर्तुबी वग़ैरह)

حَتّٰٓى اِذَا اسْتَيْـَٔسَ الرُّسُلُ وَ ظَنُّوْٓا اَنَّهُمْ قَدْ كُذِبُوْا جَآءَهُمْ نَصْرُنَا ۙ فَنُجِّيَ مَنْ نَّشَآءُ ؕ وَلَا يُرَدُّ بَاْسُنَا عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ ﴿۱۱۰﴾ لَقَدْ كَانَ فِيْ قَصَصِهِمْ عِبْرَةٌ لِّاُولِي الْاَلْبَابِ ؕ مَا كَانَ حَدِيْثًا يُّفْتَرٰى وَلٰكِنْ تَصْدِيْقَ الَّذِيْ بَيْنَ يَدَيْهِ وَتَفْصِيْلَ كُلِّ شَيْءٍ وَّهُدًى وَّ رَحْمَةً لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ﴿۱۱۱﴾

हत्ता इज़स्तै-असर्-रुसुलु व ज़न्नू अन्नहुम् क़द् कुज़िबू जा-अहुम् नस्रुना फ़नुज्जि-य मन् नशा-उ, व ला युरद्दु बअ्सुना अनिल् क़ौमिल्-मुज्रिमीन (110) ल-क़द् का-न फ़ी क़-ससिहिम् अिब्रतुल्-लिउलिल्-अल्बाबि, मा का-न हदीसंय्युफ़्तरा व लाकिन् तस्दीक़ल्लज़ी बै-न यदैहि व तफ़्सी-ल कुल्लि शैइंव्-व हुदंव्-व रह्मतल् लिक़ौमिंय्युअ्मिनून (111) ✿	यहाँ तक कि जब नाउम्मीद होने लगे रसूल और ख़्याल करने लगे कि उनसे झूठ कहा गया था, पहुँची उनको हमारी मदद, फिर बचा दिया जिनको हमने चाहा और फिरता नहीं हमारा अ़ज़ाब गुनाहगार क़ौम से। (110) अलबत्ता उनके अहवाल से अपना हाल क़ियास करना है अ़क़्ल वालों को, कुछ बनाई हुई बात नहीं लेकिन मुवाफ़िक़ है उस कलाम के जो इससे पहले है, और बयान हर चीज़ का और हिदायत और रहमत उन लोगों के लिये जो ईमान लाते हैं। (111) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(अगर तुमको काफ़िरों पर अ़ज़ाब आने में देरी से शुब्हा इसका हो कि उन पर अ़ज़ाब ही न आयेगा तो तुम्हारी ग़लती है, इसलिये कि पिछली उम्मतों के काफ़िरों को भी बड़ी-बड़ी मोहलतें दी गई थीं) यहाँ तक कि (मोहलत की मुद्दत लम्बी होने की वजह से) जब पैग़म्बर (इस बात से) मायूस हो गये (कि हमने अल्लाह की तरफ़ से काफ़िरों पर अ़ज़ाब आने के वायदे का जो वक़्त अपने क़ियास और अन्दाज़े से मुक़र्रर कर लिया था कि उस वक़्त में काफ़िरों पर अ़ज़ाब आकर हमारा ग़लबा और हक़ पर होना वाज़ेह हो जायेगा) और उन (पैग़म्बरों) को ग़ालिब गुमान हो गया कि (अल्लाह के वायदे का वक़्त मुक़र्रर करने में) हमारी समझ ने ग़लती की (कि बिना स्पष्ट हुक्म के सिर्फ़ हालात व अन्दाज़ों या अल्लाह की मदद के जल्द आने की इच्छा से क़रीब

का वक़्त मुतैयन कर लिया हालाँकि वायदा आम था जिसमें कोई क़ैद व शर्त नहीं है, ऐसी मायूसी की हालत में) उनको हमारी मदद पहुँची (वह मदद यह कि काफ़िरों पर अ़ज़ाब आया), फिर (उस अ़ज़ाब से) हमने जिसको चाहा वह बचा लिया गया (मुराद इससे मोमिन लोग हैं), और (उस अ़ज़ाब में काफ़िर हलाक किये गये, क्योंकि) हमारा अ़ज़ाब मुजरिम लोगों से नहीं हटता (बल्कि उन पर ज़रूर पड़कर रहता है चाहे देर से ही सही। पस ये मक्का के काफ़िर भी इस धोखे में न रहें)। इन (नबियों और पहली उम्मतों) के क़िस्से में समझदार लोगों के लिये (बड़ी) इब्रत है (जो इससे इब्रत हासिल करते हैं कि इताअ़त का यह अन्जाम है और नाफ़रमानी का यह अन्जाम है)। यह क़ुरआन (जिसमें क़िस्से हैं) कोई गढ़ी हुई बात तो है नहीं (कि इससे इब्रत और नसीहत न होती) बल्कि इससे पहले जो आसमानी किताबें (नाज़िल) हो चुकी हैं यह उनकी तस्दीक़ करने वाला है और हर (ज़रूरी) बात का ख़ुलासा करने वाला है, और ईमान वालों के लिये हिदायत व रहमत का ज़रिया है (पस ऐसी किताब में जो इब्रत व सबक़ लेने वाले मज़ामीन होंगे उनसे तो इब्रत हासिल करनी लाज़िम ही है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के भेजने और हक़ की दावत देने का ज़िक्र और नबियों के मुताल्लिक़ कुछ शुब्हात का जवाब दिया गया था। इन ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में इस पर तंबीह है कि ये लोग अम्बिया की मुख़ालफ़त के बुरे अन्जाम पर नज़र नहीं करते, अगर ये ज़रा भी ग़ौर करें और अपने आस-पास के शहरों और स्थानों की तारीख़ पर नज़र डालें तो इन्हें मालूम हो जायेगा कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की मुख़ालफ़त करने वालों का बुरा अन्जाम इस दुनिया में भी किस क़द्र सख़्त हुआ है। क़ौमे लूत की बस्ती उलट दी गई, क़ौमे आ़द व समूद को तरह-तरह के अ़ज़ाबों से नेस्त व नाबूद कर दिया गया, और आख़िरत का अ़ज़ाब इससे ज़्यादा सख़्त है।

दूसरी आयत में हिदायत की गई कि दुनिया की तकलीफ़ व राहत तो बहरहाल चन्द दिन की है असल फ़िक्र आख़िरत की होनी चाहिये, जहाँ का रहना हमेशा के लिये और रंज या राहत भी हमेशा वाली है, और फ़रमा दिया कि आख़िरत की दुरुस्ती (सही होना) तक़्वे पर मौक़ूफ़ है जिसके मायने शरीअ़त के तमाम अहकाम की पाबन्दी करने के हैं।

इस आयत में पिछले रसूलों और उनकी उम्मतों के हालात से मौजूदा लोगों को चेताना था इसलिये अगली आयत में उनके एक शुब्हे को दूर किया गया, वह यह कि अक्सर लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अल्लाह के अ़ज़ाब से डराने का ज़िक्र अ़रसे से सुन रहे थे और कोई अ़ज़ाब आता नज़र नहीं आता था, इससे उनकी हिम्मतें बढ़ रही थीं कि कोई अ़ज़ाब आना होता तो अब तक आ चुका होता, इसलिये फ़रमाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू अपनी रहमत और कामिल हिक्मत से कई बार मुजरिमों को मोहलत देते रहते हैं, और यह मोहलत कई बार बड़ी लम्बी भी हो जाती है, जिसकी वजह से नाफ़रमानों की जुर्रत बढ़ जाती है और पैग़म्बरों

को एक दर्जे में परेशानी पेश आती है। इरशाद फ़रमाया:

حَتّٰٓى إِذَا اسْتَيْـَٔسَ الرُّسُلُ وَظَنُّوْٓا أَنَّهُمْ قَدْ كُذِبُوْا جَآءَهُمْ نَصْرُنَا فَنُجِّىَ مَنْ نَّشَآءُ وَلَا يُرَدُّ بَأْسُنَا عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ٥

"यानी पिछली उम्मतों के नाफ़रमानों को बड़ी-बड़ी मोहलतें दी गईं, यहाँ तक कि लम्बी मुद्दत तक उन पर अज़ाब न आने से पैग़म्बर यह ख़्याल करके मायूस हो गये कि अल्लाह तआला के मुख़्तसर और संक्षिप्त अज़ाब के वादे का जो वक़्त हमने अपने अन्दाज़े से अपने ज़ेहनों में मुक़र्रर कर रखा था उस वक़्त में काफ़िरों पर अज़ाब न आयेगा और हक़ का ग़लबा ज़ाहिर न होगा, और उन पैग़म्बरों को ग़ालिब गुमान हो गया कि अल्लाह के वादे का अपने अन्दाज़ से वक़्त मुक़र्रर करने में हमारी समझ ने ग़लती की है कि अल्लाह तआला ने तो कोई निर्धारित वक़्त बतलाया नहीं था, हमने कुछ ख़ास कारणों, हालात और इशारों से एक मुद्दत मुतैयन कर ली थी, इसी मायूसी की हालत में उनको हमारी मदद पहुँची, वह यह कि वायदे के मुताबिक़ काफ़िरों पर अज़ाब आया। फिर उस अज़ाब से हमने जिसको चाहा उसको बचा लिया गया। मुराद इससे यह है कि नबियों के मानने वाले मोमिनों को बचा लिया गया और काफ़िरों को हलाक किया गया, क्योंकि हमारा अज़ाब मुजरिम लोगों से नहीं हटता, बल्कि ज़रूर आकर रहता है इसलिये मक्का के काफ़िर लोगों को चाहिये कि अज़ाब में देर होने से धोखे में न रहें।

इस आयत में लफ़्ज़ 'कुज़िबू' मशहूर क़िराअत के मुताबिक़ पढ़ा गया है और इसकी जो तफ़सीर हमने इख़्तियार की है वह सबसे ज़्यादा मानी हुई और बेग़ुबार है कि लफ़्ज़ कुज़िबू का हासिल अपने अन्दाज़े और ख़्याल का ग़लत होना है जो एक क़िस्म की वैचारिक ग़लती है और अम्बिया अ़लैहिस्सलाम से कोई ऐसी इज्तिहादी (वैचारिक) ग़लती हो सकती है, अलबत्ता अम्बिया और दूसरे मुज्तहिदीन (दीनी मामलात में ग़ौर व फ़िक्र करने वालों) में यह फ़र्क़ है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से जब कोई इज्तिहादी ग़लती (वैचारिक चूक) हो जाती है तो अल्लाह तआ़ला उनको उस ग़लती पर क़ायम नहीं रहने देते, बल्कि उनको बाख़बर करके हक़ीक़त खोल देते हैं, दूसरे मुज्तहिदीन का यह मक़ाम नहीं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का सुलह हुदैबिया का वाक़िआ इस मज़मून के लिये काफ़ी सुबूत है, क्योंकि क़ुरआने करीम में बयान हुआ है कि इस वाक़िए की बुनियाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का वह ख़्वाब है जो आपने देखा कि आप सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के साथ बैतुल्लाह का तवाफ़ कर रहे हैं और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का ख़्वाब भी वही के हुक्म में होता है इसलिये इस वाक़िए का होना यक़ीनी हो गया, मगर ख़्वाब में उसका कोई ख़ास वक़्त और मुद्दत नहीं बतलाई गई थी, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने अन्दाज़े से यह ख़्याल फ़रमाया कि इसी साल ऐसा होगा, इसलिये सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में यह ऐलान करके उनकी अच्छी-ख़ासी तादाद को साथ लेकर उमरे के लिये मक्का मुअ़ज़्ज़मा को रवाना हो गये, मगर मक्का के क़ुरैश ने रुकावट डाली और उस वक़्त तवाफ़ व उमरे की नौबत न आई बल्कि उसका मुकम्मल ज़हूर दो साल

बाद सन् 8 हिजरी में मक्का फ़तह होने की सूरत से हुआ। और इस वाक़िए से मालूम हो गया कि जो ख़्वाब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा था वह हक़ और यक़ीनी था, मगर उसका वक़्त जो हालात व इशारात या अन्दाज़े से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुक़र्रर फ़रमा लिया था उसमें ग़लती हुई, मगर उस ग़लती को दूर उसी वक़्त कर दिया गया।

इसी तरह उक्त आयत में 'क़द् कुज़िबू' का भी यही मतलब है कि काफ़िरों पर अ़ज़ाब आने में देर हुई, और जो वक़्त अन्दाज़े से अम्बिया ने अपने ज़ेहन में मुक़र्रर किया था उस वक़्त अ़ज़ाब न आया तो उनको यह गुमान हुआ कि हमने वक़्त तय करने में ग़लती की है। यह तफ़सीर हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल की गयी है और अ़ल्लामा तय्यिबी ने कहा कि यह रिवायत सही है क्योंकि सही बुख़ारी में ज़िक्र की गई है। (मज़हरी)

और कुछ क़िराअतों में यह लफ़्ज़ ज़ाल की तशदीद के साथ 'क़द् कुज़्ज़िबू' भी आया है जो तकज़ीब से निकला है। इस सूरत में मायने यह होंगे कि नबियों ने जो अन्दाज़े से अ़ज़ाब का वक़्त मुक़र्रर कर दिया था उस वक़्त पर अ़ज़ाब न आने से उनको यह ख़तरा हो गया कि अब जो मुसलमान हैं वे भी हमको झुठलाने न लगें कि जो कुछ हमने कहा था वह पूरा नहीं हुआ, ऐसी हालत में अल्लाह तआ़ला ने अपना वादा पूरा कर दिखाया, इनकारियों पर अ़ज़ाब आ पड़ा और मोमिनों को उससे निजात मिली। इस तरह उनका ग़लबा ज़ाहिर हो गया।

لَقَدْ كَانَ فِىْ قَصَصِهِمْ عِبْرَةٌ لِّاُولِى الْاَلْبَابِ.

"यानी इन हज़रात के क़िस्सों में अ़क़्ल वालों के लिये बड़ी इब्रत है।"

इससे मुराद तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के क़िस्से जो क़ुरआन में बयान हुए हैं वो भी हो सकते हैं और ख़ास हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा जो इस सूरत में बयान हुआ है वह भी, क्योंकि इस वाक़िए में यह बात पूरी तरह खुलकर सामने आ गई कि अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार बन्दों की किस-किस तरह से ताईद व मदद होती है कि कुएँ से निकालकर बादशाहत की कुर्सी पर और बदनामी से निकाल कर नेकनामी की इन्तिहा (बुलन्दी) पर पहुँचा दिये जाते हैं, और मक्र व फ़रेब करने वालों का अन्जाम ज़िल्लत व रुस्वाई होता है।

مَا كَانَ حَدِيْثًا يُّفْتَرٰى وَلٰكِنْ تَصْدِيْقَ الَّذِىْ بَيْنَ يَدَيْهِ.

"यानी नहीं है यह क़िस्सा कोई गढ़ी हुई बात, बल्कि तस्दीक़ (पुष्टि) है उन किताबों की जो इससे पहले नाज़िल हो चुकी हैं।" क्योंकि तौरात व इन्जील में भी यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम का यह क़िस्सा बयान हुआ है, और हज़रत वहब बिन मुनब्बेह फ़रमाते हैं कि जितनी आसमानी किताबें और सहीफ़े नाज़िल हुए हैं, यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से से कोई ख़ाली नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَتَفْصِيْلَ كُلِّ شَىْءٍ وَّهُدًى وَّرَحْمَةً لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ○

"यानी यह क़ुरआन तफ़सील (ख़ुलासा और स्पष्ट बयान) है हर चीज़ की। मुराद यह है कि क़ुरआने करीम में हर उस चीज़ की तफ़सील मौजूद है जिसकी दीन में इनसान को ज़रूरत है इबादतें, मामलात, अख़्लाक़, सामाजिक ज़िन्दगी, हुकूमत, सियासत वग़ैरह इनसानी ज़िन्दगी के हर

व्यक्तिगत और सामूहिक हाल से संबन्धित अहकाम व हिदायतें इसमें मौजूद हैं। और फ़रमाया कि "यह क़ुरआन हिदायत और रहमत है ईमान लाने वालों के लिये।" इसमें ईमान लाने वालों की विशेषता इसलिये की गई कि इसका नफ़ा ईमान वालों ही को पहुँच सकता है, काफ़िरों के लिये भी अगरचे क़ुरआन रहमत और हिदायत ही है मगर उनकी अपनी बद-अमली और नाफ़रमानी के सबब यह रहमत व हिदायत उनके लिये वबाल बन गई।

शैख़ अबू मन्सूर ने फ़रमाया कि पूरी सूरः यूसुफ़ और इसमें दर्ज हुए यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से के बयान से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली देना मक़सूद है कि आपको जो कुछ तकलीफ़ें अपनी क़ौम के हाथों पहुँच रही हैं पिछले नबियों को भी पहुँचती रहीं, मगर अन्जामकार (अंततः) अल्लाह तआ़ला ने अपने पैग़म्बरों को ग़ालिब फ़रमाया आपका मामला भी ऐसा ही होने वाला है।

(अल्लाह तआ़ला का शुक्र व एहसान है कि सूरः यूसुफ़ की तफ़सीर पूरी हुई।)

* सूरः रअ़्द *

यह सूरत मक्की है। इसमें 43 आयतें
और 6 रुकूअ़ हैं।

सूरः रअ़द

सूरः रअ़द मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 43 आयतें और 6 रुकूअ़ हैं।

آیاتُها ٤٣ (١٣) سُوْرَةُ الرَّعْدِ مَدَنِيَّةٌ (٩٦) رُكُوعَاتُها ٦

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۝

الٓمّٓرٰ ۚ تِلْكَ اٰيٰتُ الْكِتٰبِ ۗ وَالَّذِیْٓ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ الْحَقُّ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝١
اَللّٰهُ الَّذِیْ رَفَعَ السَّمٰوٰتِ بِغَيْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ ۗ
كُلٌّ يَّجْرِیْ لِاَجَلٍ مُّسَمًّى ۗ يُدَبِّرُ الْاَمْرَ يُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ بِلِقَآءِ رَبِّكُمْ تُوْقِنُوْنَ ۝٢ وَهُوَ الَّذِیْ
مَدَّ الْاَرْضَ وَجَعَلَ فِيْهَا رَوَاسِیَ وَاَنْهٰرًا ۗ وَمِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ جَعَلَ فِيْهَا زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ يُغْشِی
الَّيْلَ النَّهَارَ ۗ اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝٣ وَفِی الْاَرْضِ قِطَعٌ مُّتَجٰوِرٰتٌ وَّجَنّٰتٌ مِّنْ اَعْنَابٍ وَّ
زَرْعٌ وَّنَخِيْلٌ صِنْوَانٌ وَّغَيْرُ صِنْوَانٍ يُّسْقٰى بِمَآءٍ وَّاحِدٍ ۙ وَنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلٰى بَعْضٍ فِی الْاُكُلِ ۗ
اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ۝٤

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

आलिफ़्-लाम्-मीम्-रा। तिल्-क आयातुल्-किताबि, वल्लज़ी उन्ज़ि-ल इलै-क मिर्रब्बिकल्-हक़्क़ु व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला युअ्मिनून (1) अल्लाहुल्लज़ी र-फ़अ़स्समावाति बिग़ैरि अ़-मदिन् तरौनहा सुम्मस्तवा अ़लल्-अ़र्शि व सख़्ख़रश्शम्-स वल्क़-म-र, कुल्लुंय्यज्री लि-अ-जलिम्-मुसम्मन्, युदब्बिरुल्-अम्-र युफ़स्सिलुल्-आयाति	अलिफ़्-लाम्-मीम्-रा। ये आयतें हैं किताब की, और जो कुछ उतरा तुझ पर तेरे रब से सो हक़ है लेकिन बहुत लोग नहीं मानते। (1) अल्लाह वह है जिसने ऊँचे बनाये आसमान बग़ैर सुतून के देखते हो तुम उनको, फिर क़ायम हुआ अ़र्श पर और काम में लगा दिया सूरज और चाँद को, हर एक चलता है मुक़र्रर वक़्त पर, तदबीर करता है काम की ज़ाहिर करता है निशानियाँ कि शायद तुम

लअ़ल्लकुम् बिलिक़ा-इ रब्बिकुम् तूक़िनून (2) व हुवल्लज़ी मद्दल्अर्-ज़ व ज-अ-ल फ़ीहा रवासि-य व अन्हारन्, व मिन् कुल्लिस्स-मराति ज-अ-ल फ़ीहा ज़ौजैनिस्नैनि युग़्शिल्-लैलन्नहा-र, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल्-लिक़ौमिंय्-य-तफ़क्करून (3) व फ़िल्अर्ज़ि कि-तअुम् मु-तजाविरातुंव्-व जन्नातुम्-मिन् अअ्नाबिंव्-व ज़र्अुंव्-व नख़ीलुन् सिन्वानुंव्-व ग़ैरु सिन्वानिंय्युस्क़ा बिमाइंव्वाहिदिन्, व नुफ़ज़्ज़िलु बअ्ज़हा अ़ला बअ्ज़िन् फ़िल्उकुलि, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल्-लिक़ौमिंय्यअ्क़िलून (4)	अपने रब से मिलने का यक़ीन करो। (2) और वही है जिसने फैलाई ज़मीन और रखे उसमें बोझ और नदियाँ और हर मेवे के रखे उसमें जोड़े दो-दो क़िस्म, ढाँकता है दिन पर रात को, इसमें निशानियाँ हैं उनके वास्ते जो कि ध्यान करते हैं। (3) और ज़मीन में खेत हैं मुख़्तलिफ़ एक दूसरे से मिले हुए और बाग़ हैं अंगूर के और खेतियाँ और खजूरें हैं एक की जड़ दूसरी से मिली हुई, और बाज़ी बिन मिली, उन को पानी भी एक ही दिया जाता है, और हम हैं कि बढ़ा देते हैं उनमें से एक को एक से मेवों में, इन चीज़ों में निशानियाँ हैं उनके लिये जो ग़ौर करते हैं। (4)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम्-मीम्-रा (इसके मायने तो अल्लाह ही को मालूम हैं)। यह (जो आप सल्ल. सुन रहे हैं) आयतें हैं एक बड़ी किताब (यानी क़ुरआन) की, और जो कुछ आप पर आपके रब की तरफ़ से नाज़िल किया जाता है यह बिल्कुल सच है, और (इसका तक़ाज़ा तो यह था कि सब ईमान लाते) लेकिन बहुत-से आदमी ईमान नहीं लाते (इस आयत में तो क़ुरआन की हक़ीक़त का मज़मून था, आगे तौहीद का मज़मून है जो कि क़ुरआन के मक़ासिद में से सबसे बड़ा मक़सद है)। अल्लाह ऐसा (क़ादिर) है कि उसने आसमानों को बिना सुतून के ऊँचा खड़ा कर दिया, चुनाँचे तुम इन (आसमानों) को (इसी तरह) देख रहे हो, फिर अ़र्श पर (जो बादशाही तख़्त के जैसा है, इस तरह) क़ायम (और जलवा-फ़रमा) हुआ (जो कि उसकी शान के लायक़ है) और सूरज व चाँद को काम में लगा दिया (इन दोनों में से) हर एक (अपने चलने के दायरे पर) तयशुदा वक़्त पर चलता रहता है (चुनाँचे सूरज अपने मदार को साल भर में पूरा कर लेता है और चाँद महीने भर में) वही (अल्लाह) हर काम की (जो कुछ आ़लम में ज़ाहिर व उत्पन्न होता

है) तदबीर करता है, (और क़ानूनी व क़ुदरती) दलीलों को साफ़-साफ़ बयान करता है ताकि तुम अपने रब के पास जाने का (यानी क़ियामत का) यक़ीन कर लो (उसके मुम्किन होने का तो इस तरह कि जब अल्लाह तआ़ला ऐसी बड़ी और विशाल चीज़ों के बनाने पर क़ादिर है तो मुर्दों को ज़िन्दा करने पर क्यों नहीं क़ादिर होगा? और इसके वाक़े और ज़ाहिर होने का यक़ीन इस तरह कि सच्चे ख़बर देने वाले ने एक संभव मामले के वाक़े होने की ख़बर दी, लाज़िमी तौर पर वह सच्ची और सही है)। और वह ऐसा है कि उसने ज़मीन को फैलाया और उस (ज़मीन) में पहाड़ और नहरें पैदा कीं, और उसमें हर क़िस्म के फलों से दो-दो क़िस्म के पैदा किये (जैसे खट्टे और मीठे या छोटे और बड़े। कोई किसी रंग का और किसी रंग का और) रात (की अंधेरी) से दिन (की रोशनी) को छुपा देता है (यानी रात की अंधेरी से दिन की रोशनी छुप जाती और ख़त्म हो जाती है)। इन (ज़िक्र हुए) मामलों में सोचने वालों के (समझने के) वास्ते (तौहीद पर) दलीलें (मौजूद) हैं (जिसकी तक़रीर दूसरे पारे के चौथे रुकूअ़ के शुरू में गुज़री है)। और (इसी तरह और भी दलीलें हैं तौहीद की, चुनाँचे) ज़मीन में पास-पास (और फिर) मुख़्तलिफ़ टुकड़े हैं (जिनमें बावजूद एक-दूसरे से मिला हुआ होने के विभिन्न असर होना अ़जीब बात है) और अंगूरों के बाग़ हैं और (विभिन्न प्रकार की) खेतियाँ हैं और खजूर (के पेड़) हैं, जिनमें बाज़े तो ऐसे हैं कि एक तने से ऊपर जाकर दो तने हो जाते हैं और बाज़ों में दो तने नहीं होते (बल्कि जड़ से शाख़ों तक एक ही तना चला जाता है और) सब को एक ही तरह का पानी दिया जाता है, और (बावजूद इसके फिर भी) हम एक को दूसरे पर फलों में फ़ौक़ियत "यानी बरतरी" देते हैं। इन (ज़िक्र हुई) चीज़ों में (भी) समझदारों के (समझने के) वास्ते (तौहीद यानी अल्लाह के एक होने और उसी के लायक़े इबादत होने की) दलीलें (मौजूद) हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यह सूरत मक्की है और इसकी कुल आयतें 43 हैं। इस सूरत में भी क़ुरआन मजीद का सच्चा कलाम होना, और तौहीद व रिसालत का बयान और शुब्हात के जवाबात बयान हुए हैं।

अलिफ़्-लाम्-मीम्-रा। यह हुरूफ़-ए-मुक़त्तआ़ हैं जिनके मायने अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं उम्मत को इनके मायने नहीं बतलाये गये, आ़म उम्मत को इसकी तहक़ीक़ (खोजबीन) में पड़ना भी मुनासिब नहीं।

रसूल की हदीस भी क़ुरआन की तरह अल्लाह की वही है

पहली आयत में क़ुरआने करीम के अल्लाह का कलाम और हक़ होने का बयान है, किताब से मुराद क़ुरआन है और:

وَالَّذِیْٓ اُنْزِلَ اِلَیْكَ مِنْ رَّبِّكَ

(जो कुछ उतरा है तेरी तरफ़ तेरे रब की तरफ़) से भी हो सकता है कि क़ुरआन ही मुराद हो, लेकिन हर्फ़-ए-अ़त्फ़ वाव बज़ाहिर यह चाहता है कि किताब और:

الَّذِیٓ اُنْزِلَ اِلَیْکَ.

(जो कुछ उतरा है तेरी तरफ़) दो चीज़ें अलग-अलग हों। इस सूरत में किताब से मुराद क़ुरआन और:

الَّذِیٓ اُنْزِلَ اِلَیْکَ

(जो कुछ उतरा है तेरी तरफ़) से मुराद वह वही होगी जो क़ुरआने करीम के अ़लावा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर आई है, क्योंकि इसमें तो कोई कलाम नहीं हो सकता कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर आने वाली वही सिर्फ़ क़ुरआन में सीमित नहीं, ख़ुद क़ुरआने करीम में है:

وَمَا یَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰی اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْیٌ یُّوْحٰی٥

यानी रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो कुछ कहते हैं वह किसी अपनी ग़र्ज़ से नहीं कहते बल्कि एक वही (अल्लाह की तरफ़ से आया हुआ पैग़ाम व हिदायत) होती है जो अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उनको भेजी जाती है। इससे साबित हुआ कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो क़ुरआन के अ़लावा दूसरे अहकाम देते हैं वो भी अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल होने वाले अहकाम ही हैं, फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि क़ुरआन की तिलावत की जाती है और उसकी तिलावत नहीं की जाती, और इस फ़र्क़ की वजह यह है कि क़ुरआन के मायने और अलफ़ाज़ दोनों अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से होते हैं, और क़ुरआन के अ़लावा हदीस में जो अहकाम आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम देते हैं उनके भी मायने अगरचे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ही नाज़िल होते हैं मगर अलफ़ाज़ अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हुए नहीं होते। इसी लिये नमाज़ में उनकी तिलावत नहीं की जा सकती।

आयत के मायने यह हो गये कि यह क़ुरआन और जो कुछ अहकाम आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल किये जाते हैं वो सब हक़ हैं जिनमें किसी शक व शुब्हे की गुन्जाईश नहीं, लेकिन अक्सर लोग ग़ौर व फ़िक्र (सोच-विचार) न करने की वजह से इस पर ईमान नहीं लाते।

दूसरी आयत में अल्लाह तआ़ला के वजूद और उसकी तौहीद की दलीलें बयान हुई हैं कि उसकी मख़्लूक़ात और बनाई हुई चीज़ों को ज़रा ग़ौर से देखो तो यह यक़ीन करना पड़ेगा कि इनको बनाने वाली कोई ऐसी हस्ती है जो पूरी क़ुदरत रखने वाली है और तमाम मख़्लूक़ात व कायनात उसके क़ब्ज़े में हैं।

इरशाद फ़रमायाः

اَللّٰهُ الَّذِیْ رَفَعَ السَّمٰوٰتِ بِغَیْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا.

"यानी अल्लाह ऐसा है जिसने आसमानों के इतने बड़े, फैले हुए और बुलन्द क़ुब्बे (गुंबद) को बग़ैर किसी सुतून के ऊँचा खड़ा कर दिया, जैसा कि तुम इन आसमानों को इसी हालत में देख रहे हो।"

क्या आसमान का जिस्म आँखों से नज़र आता है?

आम तौर से यह कहा जाता है कि यह नीला रंग जो हमें ऊपर नज़र आता है आसमान का रंग है, मगर फ़ल्सफ़ी हज़रात कहते हैं कि यह रंग रोशनी और अंधेरे की मिलावट से महसूस होता है, क्योंकि नीचे सितारों की रोशनी और उसके ऊपर अंधेरा है, तो बाहर से नीला रंग महसूस होता है। जैसे गहरे पानी पर रोशनी पड़ती है तो वह नीला नज़र आता है। क़ुरआने करीम की चन्द आयतें ऐसी हैं जिनमें आसमान के देखने का ज़िक्र है जैसे इसी ऊपर बयान हुई आयत में 'तरौनहा' (तुम उसको देखते हो) के अलफ़ाज़ हैं और दूसरी आयत में:

اِلَى السَّمَآءِ كَيْفَ رُفِعَتْ

के अलफ़ाज़ हैं। फ़ल्सफ़ी हज़रात की यह तहक़ीक़ (शोध) अव्वल तो इस के विरुद्ध नहीं, क्योंकि ऐसा मुम्किन है कि आसमान का रंग भी नीलेपन पर हो या कोई दूसरा रंग हो मगर बीच की रोशनी और अंधेरी की मिलावट से नीला नज़र आता हो। इससे इनकार की कोई दलील नहीं कि इस फ़िज़ा के रंग में आसमान का रंग भी शामिल हो, और यह भी मुम्किन है कि क़ुरआने करीम में जहाँ आसमान के देखने का ज़िक्र है, वह ज़ाहिरी नहीं बल्कि हुक्मी और इस मायने में हो कि आसमान का वजूद ऐसे यक़ीनी दलाईल से साबित है गोया उसको देख ही लिया। (तफ़सीर रूहुल-मआनी)

इसके बाद फ़रमायाः

ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ.

"यानी फिर अ़र्श पर जो एक तरह से बादशाही तख़्त है क़ायम और उस तरह जलवा-फ़रमा हुआ जो उसकी शान के लायक़ है। इस जलवा फ़रमाने की कैफ़ियत को कोई नहीं समझ सकता, इतना एतिक़ाद व यक़ीन रखना काफ़ी है कि जिस तरह का क़ायम होना अल्लाह की शान के लायक़ व मुनासिब है वही मुराद है।

وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَّجْرِىْ لِاَجَلٍ مُّسَمًّى

"यानी अल्लाह तआ़ला ने सूरज और चाँद को क़ब्ज़े में और हुक्म के ताबे किया हुआ है, इनमें से हर एक, एक निर्धारित रफ़्तार से चलता है।"

मुसख़्ख़र करने (क़ब्ज़े में करने और हुक्म के ताबे होने) से मुराद यह है कि दोनों को जिस जिस काम पर लगा दिया गया है बराबर लगे हुए हैं। हज़ारों साल गुज़र गये हैं लेकिन न कभी इनकी रफ़्तार में कमी-बेशी होती है, न थकते हैं, न कभी अपने तयशुदा काम के ख़िलाफ़ किसी दूसरे काम में लगते हैं। और निर्धारित मुद्दत की तरफ़ चलने के यह मायने भी हो सकते हैं कि पूरे आ़लमे दुनिया के लिये जो क़ियामत की आख़िरी मुद्दत मुतैयन है, सब उसी की तरफ़ चल रहे हैं, उस मन्ज़िल पर पहुचँकर इनका यह सारा निज़ाम ख़त्म हो जायेगा।

और यह मायने भी हो सकते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने हर एक सय्यारे (चलने वाले तारे

और ग्रह) के लिये एक ख़ास रफ़्तार और ख़ास मदार (चलने का दायरा) मुक़र्रर कर दिया है, वह हमेशा अपने मदार पर अपनी निर्धारित रफ़्तार के साथ चलता रहता है। चाँद अपने मदार को एक माह में पूरा कर लेता है और सूरज साल भर में पूरा करता है।

इन सय्यारों का अज़ीमुश्शान और विशाल वजूद फिर एक ख़ास मदार पर ख़ास रफ़्तार के साथ हज़ारों साल से बराबर अन्दाज़ में इसी तरह चलते रहना कि न कभी इनकी मशीन घिसती है न टूटती है, न उसको ग्रिसींग की ज़रूरत होती है, इनसान की बनाई हुई चीज़ों में साईंस की इस इन्तिहाई तरक़्क़ी के बाद भी इसकी नज़ीर तो क्या इसका हज़ारवाँ हिस्सा भी मिलना नामुम्किन है। क़ुदरत का यह निज़ाम बुलन्द आवाज़ से पुकार रहा है कि इसको बनाने और चलाने वाली कोई ऐसी हस्ती ज़रूर है जो इनसान के इल्म व शऊर से ऊपर है।

हर चीज़ की तदबीर दर हक़ीक़त अल्लाह तआ़ला ही का काम है, इनसानी तदबीर नाम के लिये है

يُدَبِّرُ الْاَمْرَ

"यानी अल्लाह तआ़ला ही हर काम की तदबीर करता है।" इनसान जो अपनी तदबीरों पर नाज़ व घमंड करता है, ज़रा आँख खोलकर देखे तो मालूम होगा कि इसकी तदबीर किसी चीज़ को न पैदा कर सकती है न बना सकती है, इसकी सारी तदबीरों का हासिल इससे ज़्यादा नहीं कि अल्लाह तआ़ला की पैदा की हुई चीज़ों का सही इस्तेमाल समझ ले। दुनिया की तमाम चीज़ों के इस्तेमाल का निज़ाम भी इसकी ताक़त से बाहर की चीज़ है, क्योंकि इनसान अपने हर काम में दूसरे हज़ारों इनसानों, जानवरों और दूसरी मख़्लूक़ात का मोहताज है, जिनको अपनी तदबीर से अपने काम में नहीं लगा सकता, अल्लाह की क़ुदरत ही ने हर चीज़ की कड़ी दूसरी चीज़ से इस तरह जोड़ी है कि हर चीज़ खिंची चली आती है। आपको मकान बनाने की ज़रूरत पेश आती है नक़्शा बनाने वाले आर्किटेक्ट से लेकर रंग व रोग़न करने वालों तक सैंकड़ों इनसान अपनी जान और अपना हुनर लिये हुए आपकी ख़िदमत को तैयार नज़र आते हैं, तामीर का सामान जो बहुत सी दुकानों में बिखरा हुआ है सब आपको तैयार मिल जाता है, क्या आपकी ताक़त में था कि अपने माल या तदबीर के ज़ोर से ये सारी चीज़ें मुहैया और सारे इनसानों को अपनी ख़िदमत के लिये हाज़िर कर लेते? आप तो क्या बड़ी से बड़ी हुकूमत भी क़ानून के ज़ोर से यह निज़ाम क़ायम नहीं कर सकती, बिला शुब्हा यह तदबीर और दुनिया के निज़ाम को क़ायम रखना सिर्फ़ हय्यु व क़य्यूम (यानी अल्लाह तआ़ला) ही का काम है, इनसान अगर इसको अपनी तदबीर क़रार दे तो जहालत के सिवा क्या है।

يُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ

यानी वह अपनी आयतों को तफ़सील के साथ बयान करता है। इससे मुराद क़ुरआनी

आयतें भी हो सकती हैं जिनको हक़ तआ़ला ने तफ़सील के साथ नाज़िल फ़रमाया, फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये और ज़्यादा उनका बयान और तफ़सीर फ़रमाई।

और आयात से मुराद क़ुदरत की आयतें यानी अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत की निशानियाँ जो आसमान और ज़मीन और ख़ुद इनसान के वजूद में मौजूद हैं, वो भी हो सकती हैं, जो बड़ी तफ़सील के साथ हर वक़्त हर जगह इनसान की नज़र के सामने हैं।

لَعَلَّكُمْ بِلِقَاءِ رَبِّكُمْ تُوقِنُونَ○

यानी यह सब कायनात और इनका अ़जीब व ग़रीब निज़ाम व तदबीर अल्लाह तआ़ला ने इसलिये क़ायम फ़रमाये हैं कि तुम इसमें ग़ौर करो तो तुम्हें आख़िरत और क़ियामत का यक़ीन हो जाये, क्योंकि इस अ़जीब निज़ाम और दुनिया के बनाने पर नज़र करने के बाद यह शक व शुब्हा तो रह नहीं सकता कि आख़िरत में इनसान के दोबारा पैदा करने को अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत से ख़ारिज समझें, और जब क़ुदरत में दाख़िल और मुम्किन होना मालूम हो गया, और एक ऐसी हस्ती ने इसकी ख़बर दी जिसकी ज़बान पूरी उम्र में कभी झूठ पर नहीं चली, तो इसके ज़ाहिर व मौजूद और साबित होने में क्या शक रह सकता है।

وَهُوَ الَّذِي مَدَّ الْأَرْضَ وَجَعَلَ فِيهَا رَوَاسِيَ وَأَنْهَارًا

और वही वह ज़ात है जिसने ज़मीन को फैलाया और इसमें बोझल पहाड़ और नहरें बनाईं।"

ज़मीन का फैलाना इसके कुर्रा और गोल होने के विरुद्ध नहीं, क्योंकि गोल चीज़ जब बहुत बड़ी हो तो उसका हर हिस्सा अलग-अलग फैली हुई सतह ही नज़र आता है, और क़ुरआने करीम का ख़िताब आ़म लोगों से उन्हीं की नज़रों के मुताबिक़ होता है। ज़ाहिर देखने वाला इसको एक फैली हुई सतह देखता है इसलिये इसको फैलाने से ताबीर कर दिया गया, फिर इसका सन्तुलन क़ायम रखने के लिये साथ ही और बहुत-से दूसरे फ़ायदों के लिये इस पर ऊँचे-ऊँचे भारी पहाड़ क़ायम फ़रमा दिये, जो एक तरफ़ ज़मीन का सन्तुलन क़ायम रखते हैं दूसरी तरफ़ सारी मख़्लूक़ को पानी पहुँचाने का इन्तिज़ाम करते हैं। पानी का बहुत बड़ा भण्डार उनकी चोटियों पर जमे हुए समन्दर (बर्फ़) की शक्ल में रख दिया जाता है जिसके लिये न कोई हौज़ और न टंकी बनाने की ज़रूरत है, न नापाकी होने का शुब्हा व गुमान, न सड़ने की संभावना, फिर उसको ज़मीन के नीचे मौजूद एक क़ुदरती पाईप लाईन के ज़रिये सारी दुनिया में फैलाया जाता है, उससे कहीं तो खुली हुई नदियाँ और नहरें निकलती हैं और कहीं ज़मीन के नीचे छुपे रहकर कुँओं के ज़रिये इस पाईप लाइन का सुराग़ लगाया और पानी हासिल किया जाता है।

وَمِن كُلِّ الثَّمَرَاتِ جَعَلَ فِيهَا زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ

यानी फिर इस ज़मीन से तरह-तरह के फल निकाले और हर एक फल दो-दो क़िस्म के पैदा किये- छोटे-बड़े, सुर्ख़-सफ़ेद, खट्टे-मीठे। और यह भी मुम्किन है कि ज़ौजैन (जोड़ों) से मुराद सिर्फ़ दो न हों बल्कि अनेक प्रजातियाँ व क़िस्में मुराद हों जिनकी तादाद कम से कम दो होती

हो, इसलिये ज़ौजैनिस्नैनि से ताबीर कर दिया गया। और कुछ बईद नहीं कि ज़ौजैन से मुराद नर व मादा हों जैसा कि बहुत-से दरख़्तों के बारे में तो तजुर्बा गवाह हो चुका है कि उनमें नर व मादा होते हैं, जैसे खजूर, पपीता वग़ैरह, दूसरे दरख़्तों में भी इसकी संभावना है अगरचे अभी तक तहक़ीक़ात वहाँ तक न पहुँची हों।

يُغْشِى الَّيْلَ النَّهَارَ

यानी अल्लाह तआ़ला ही ढाँप देता है रात को दिन पर। मुराद यह है कि दिन की रोशनी के बाद रात ले आता है। जैसे किसी रोशन चीज़ को किसी पर्दे पर ढाँप दिया जाये।

اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ۝

इसमें कोई शुब्हा नहीं कि इस तमाम कायनात की तख़्लीक़ (पैदाईश) और इसकी तदबीर व निज़ाम में ग़ौर व फ़िक्र करने वालों के लिये अल्लाह तआ़ला शानुहू की कामिल क़ुदरत की बहुत-सी निशानियाँ मौजूद हैं।

وَفِى الْاَرْضِ قِطَعٌ مُّتَجٰوِرٰتٌ وَّجَنّٰتٌ مِّنْ اَعْنَابٍ وَّزَرْعٌ وَّنَخِيْلٌ صِنْوَانٌ وَّغَيْرُ صِنْوَانٍ يُّسْقٰى بِمَآءٍ وَّاحِدٍ وَّنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلٰى بَعْضٍ فِى الْاُكُلِ

यानी फिर ज़मीन में बहुत से टुकड़े आपस में मिले हुए होने के बावजूद मिज़ाज और ख़ासियत में भिन्न और अलग हैं, कोई अच्छी ज़मीन है कोई खारी, कोई नर्म कोई सख़्त, कोई खेती के क़ाबिल कोई बाग़ के क़ाबिल, और इन टुकड़ों में बाग़ात हैं अंगूर के और खेती है और खजूर के पेड़ हैं, जिनमें बाज़े ऐसे हैं कि एक तने से ऊपर जाकर दो तने हो जाते हैं, और बाज़ों में एक ही तना रहता है।

और ये सारे फल अगरचे एक ही ज़मीन से पैदा होते हैं, एक ही पानी से सैराब किये जाते हैं, और सूरज व चाँद की किरणें और विभिन्न प्रकार की हवायें भी इन सब को एक ही तरह की पहुँचती हैं मगर फिर भी इनके रंग और ज़ायक़े अलग-अलग और छोटे-बड़े का स्पष्ट और ख़ासा फ़र्क़ होता है।

आपस में मिले हुए होने के बावजूद फिर ये तरह-तरह के इख़्तिलाफ़ात (विविधतायें) इस बात की मज़बूत और स्पष्ट दलील है कि यह सब कारोबार किसी हकीम व मुदब्बिर के फ़रमान के ताबे चल रहा है, महज़ माद्दे की तब्दीलियाँ नहीं, जैसा कि कुछ जाहिल लोग समझते हैं। क्योंकि माद्दे के बदलाव होते तो सब मवाद के साझा होने के बावजूद यह भिन्नतायें कैसे होतीं, एक ही ज़मीन से एक फल एक मौसम में निकलता है दूसरा दूसरे मौसम में एक ही दरख़्त की एक ही शाख़ पर विभिन्न प्रकार के छोटे-बड़े और अलग-अलग ज़ायक़े के फल पैदा होते हैं।

اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ۝

"इसमें कोई शुब्हा नहीं कि अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत व बड़ाई और उसके वाहिद व अकेला होने पर दलालत करने वाली बहुत सी निशानियाँ हैं अ़क़्ल वालों के लिये।" इसमें इशारा

है कि जो लोग इन चीज़ों में ग़ौर नहीं करते वे अ़क्ल वाले नहीं चाहे दुनिया में उनको कैसा ही अ़क़्लमन्द समझा और कहा जाता हो।

وَإِنْ تَعْجَبْ فَعَجَبٌ قَوْلُهُمْ ءَإِذَا كُنَّا تُرٰبًا ءَإِنَّا لَفِىْ خَلْقٍ
جَدِيْدٍ ۚ أُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ ۚ وَأُولٰٓئِكَ الْأَغْلٰلُ فِىْٓ أَعْنَاقِهِمْ ۚ وَأُولٰٓئِكَ أَصْحٰبُ النَّارِ ۚ
هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝ وَيَسْتَعْجِلُوْنَكَ بِالسَّيِّئَةِ قَبْلَ الْحَسَنَةِ وَقَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِمُ الْمَثُلٰتُ ۚ
وَإِنَّ رَبَّكَ لَذُوْ مَغْفِرَةٍ لِّلنَّاسِ عَلٰى ظُلْمِهِمْ ۚ وَإِنَّ رَبَّكَ لَشَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ
كَفَرُوْا لَوْلَآ أُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ ۗ إِنَّمَآ أَنْتَ مُنْذِرٌ وَّلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ ۝ اَللّٰهُ يَعْلَمُ مَا
تَحْمِلُ كُلُّ أُنْثٰى وَمَا تَغِيْضُ الْأَرْحَامُ وَمَا تَزْدَادُ ۚ وَكُلُّ شَيْءٍ عِنْدَهٗ بِمِقْدَارٍ ۝

ع

व इन् तअ़्जब् फ़-अ़-जबुन् क़ौलुहुम् अ-इज़ा कुन्ना तुराबन् अ-इन्ना लफ़ी ख़ल्किन् जदीदिन्, उलाइ-कल्लज़ी-न क-फ़रू बिरब्बिहिम् व उलाइकल्-अग़्लालु फ़ी अअ़्नाक़िहिम् व उलाइ-क अस्हाबुन्नारि हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (5) व यस्तअ़्जिलून-क बिस्सय्यि-अति क़ब्लल्-ह-सनति व क़द् ख़लत् मिन् क़ब्लिहिमुल्-मसुलातु, व इन्-न रब्ब-क लज़ू मग़्फ़ि-रतिल् लिन्नासि अ़ला ज़ुल्मिहिम् व इन्-न रब्ब-क ल-शदीदुल्-ज़िक़ाब (6) व यक़ूलुल्लज़ी-न क-फ़रू लौ ला उन्ज़ि-ल अ़लैहि आयतुम्-मिर्रब्बिही, इन्नमा अन्-त मुन्ज़िरुंव्-व लिकुल्लि क़ौमिन् हाद (7) ✿

और अगर तू अ़जीब बात चाहे तो अ़जब है उनका कहना कि क्या जब हो गये हम मिट्टी क्या नये सिरे से बनाये जायेंगे? वही हैं जो इनकारी हो गये अपने रब से और वही हैं कि तौक़ हैं उनकी गर्दनों में, और वे हैं दोज़ख़ वाले वे उसी में रहेंगे बराबर। (5) और जल्द माँगते हैं तुझसे बुराई को पहले भलाई से, और गुज़र चुके हैं उनसे पहले बहुत से अ़ज़ाब और तेरा रब माफ़ भी करता है लोगों को बावजूद उनके ज़ुल्म के, और तेरे रब का अ़ज़ाब भी सख़्त है। (6) और कहते हैं काफ़िर क्यों न उतरी उस पर कोई निशानी उसके रब (की तरफ़) से, तेरा काम तो डर सुना देना है, और हर क़ौम के लिये हुआ है राह बताने वाला। (7) ✿

अल्लाहु यअ्लमु मा तह्मिलु कुल्लु उन्सा व मा तग़ीज़ुल्-अर्हामु व मा तज़्दादु, व कुल्लु शैइन् अिन्दहू बिमिक्दार (8)	अल्लाह जानता है जो पेट में रखती है हर मादा और जो सिकुड़ते हैं पेट और बढ़ते हैं, और हर चीज़ का उसके यहाँ अन्दाज़ा है। (8)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) अगर आपको (उन लोगों के क़ियामत के इनकार से) ताज्जुब हो तो (वाक़ई) उनका यह क़ौल ताज्जुब के लायक़ है कि जब हम (मरकर) ख़ाक हो गये तो क्या (ख़ाक होकर) हम फिर (क़ियामत के दिन) नये सिरे से पैदा होंगे? (ताज्जुब के लायक़ इसलिये कि जो ज़ात ऐसी ज़िक्र हुई चीज़ों के पैदा करने पर पहले यानी शुरू में क़ादिर है उसको दोबारा पैदा करना क्या मुश्किल है। और इसी से जवाब हो गया मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा होने को मुहाल समझने का और नुबुव्वत का इनकार करने का भी, जिसका आधार वही मुहाल व नामुम्किन समझना था। एक के जवाब से दूसरे का जवाब हो गया। आगे उनके लिये वईद और धमकी है कि) ये वे लोग हैं कि उन्होंने अपने रब के साथ कुफ़्र किया (क्योंकि मरने के बाद ज़िन्दा होने के इनकार से उसकी क़ुदरत का इनकार किया और क़ियामत के इनकार से नुबुव्वत का इनकार लाज़िम आता है) और ऐसे लोगों की गर्दनों में (दोज़ख़ में) तौक़ डाले जाएँगे, और ऐसे लोग दोज़ख़ी हैं (और) वे उसमें हमेशा रहेंगे। और ये लोग आ़फ़ियत (की मियाद ख़त्म होने) से पहले आप से मुसीबत (के नाज़िल होने) का तक़ाज़ा करते हैं (कि अगर आप नबी हैं तो जाईये अ़ज़ाब मंगा दीजिये, जिससे मालूम होता है कि ये अ़ज़ाब के पड़ने और होने को बहुत ही दूर की बात समझते हैं) हालाँकि इनसे पहले (और काफ़िरों पर सज़ाओं के) वाक़िआ़त गुज़र चुके हैं (तो इन पर आ जाना क्या मुहाल और दूर की बात है)। और (अल्लाह तआ़ला के ग़फ़ूर व रहीम होने को सुनकर ये लोग घमंडी न हो जायें कि अब हमको अ़ज़ाब न होगा, क्योंकि वह सिर्फ़ ग़फ़ूर व रहीम ही नहीं है और फिर सब के लिये ग़फ़ूर व रहीम नहीं है बल्कि दोनों बातें अपने-अपने मौक़े पर ज़ाहिर होती हैं यानी) यह बात भी यक़ीनी है कि आपका रब लोगों की ख़ताएँ बावजूद उनकी (एक ख़ास दर्जे की) बेजा हरकतों के माफ़ कर देता है, और यह बात भी यक़ीनी है कि आपका रब सख़्त सज़ा देता है (यानी उसमें दोनों सिफ़तें हैं और हर एक के ज़ाहिर होने की शर्तें और असबाब हैं। पस उन्होंने बिना सबब के अपने को रहमत व मग़फ़िरत का हक़दार कैसे समझ लिया, बल्कि कुफ़्र की वजह से उनके लिये तो अल्लाह तआ़ला सख़्त अ़ज़ाब देने वाला है)। और ये काफ़िर लोग (नुबुव्वत का इनकार करने की ग़र्ज़ से) यूँ (भी) कहते हैं कि उन पर वह ख़ास मोजिज़ा (जो हम चाहते हैं) क्यों नाज़िल नहीं किया गया (और यह एतिराज़ कोरी बेवक़ूफ़ी है क्योंकि आप मोजिज़ों के मालिक नहीं

बल्कि) आप सिर्फ़ (अल्लाह के अ़ज़ाब से काफ़िरों को) डराने वाले (यानी नबी) हैं (और नबी के लिये सिर्फ़ मोजिज़े की ज़रूरत है जो कि ज़ाहिर हो चुका है न कि किसी ख़ास मोजिज़े की) और (कोई आप अनोखे नबी नहीं हुए बल्कि पहले गुज़री हुई क़ौमों में) हर क़ौम के लिये हादी (सही राह बताने वाले यानी पैग़म्बर) होते चले आये हैं (उनमें भी यही क़ायदा चला आया है कि नुबुव्वत के दावे के लिये आ़म दलील को काफ़ी क़रार दिया गया, ख़ास दलील की पाबन्दी नहीं की गयी)।

अल्लाह तआ़ला को सब ख़बर रहती है जो कुछ किसी औ़रत को हमल "यानी गर्भ" रहता है, और जो कुछ रहम "यानी बच्चेदानी" में कमी व बेशी होती है। और हर चीज़ अल्लाह के नज़दीक एक ख़ास अन्दाज़े से (मुक़र्रर) है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों की पहली तीन आयतों में काफ़िरों के शुब्हात का जवाब है जो नुबुव्वत के बारे में थे और इसके साथ इनकार करने वालों के लिये अ़ज़ाब की वईद (डाँट और धमकी) बयान हुई है।

उनके शुब्हात तीन थे- एक यह कि वे लोग मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा होने और मेहशर के हिसाब व किताब को मुहाल व ख़िलाफ़े अ़क्ल समझते थे, इसी बिना पर आख़िरत की ख़बर देने वाले नबियों को झुठलाते और उनकी नुबुव्वत का इनकार करते थे, जैसा कि क़ुरआने करीम ने उनके शुब्हे का बयान इस आयत में फ़रमाया है:

هَلْ نَدُلُّكُمْ عَلٰى رَجُلٍ يُّنَبِّئُكُمْ اِذَا مُزِّقْتُمْ كُلَّ مُمَزَّقٍ اِنَّكُمْ لَفِيْ خَلْقٍ جَدِيْدٍ○

इसमें अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का मज़ाक़ उड़ाने के लिये कहते हैं कि आओ हम तुम्हें एक ऐसा आदमी बतायें जो तुम्हें यह बतलाता है कि जब तुम मरने के बाद रेज़ा-रेज़ा हो जाओगे और तुम्हारी मिट्टी के ज़र्रे भी सारे जहान में फैल जायेंगे तुम उस वक़्त फिर दोबारा ज़िन्दा किये जाओगे।

मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा होने का सुबूत

وَاِنْ تَعْجَبْ فَعَجَبٌ قَوْلُهُمْ ءَاِذَا كُنَّا تُرٰبًا ءَاِنَّا لَفِيْ خَلْقٍ جَدِيْدٍ○

इसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है कि अगर आपको इस पर ताज्जुब है कि ये काफ़िर लोग आपके लिये खुले हुए मोजिज़े और आपकी नुबुव्वत पर अल्लाह तआ़ला की खुली निशानियाँ देखने के बावजूद आपकी नुबुव्वत का इनकार क़रते हैं, और मानते हैं तो ऐसे बेजान पत्थरों को मानते हैं जिनमें न एहसास है न शऊर, ख़ुद अपने नफ़े व नुक़सान पर भी क़ादिर नहीं, दूसरों को क्या नफ़ा पहुँचा सकते हैं।

लेकिन इससे ज़्यादा ताज्जुब के क़ाबिल उनकी यह बात है कि वह कहते हैं कि क्या ऐसा हो सकता है कि जब हम मरकर मिट्टी हो जायेंगे तो हमें दोबारा पैदा किया जायेगा? क़ुरआन

ने इस ताज्जुब की स्पष्ट तौर पर वजह बयान नहीं की, क्योंकि पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत के अ़जीब अ़जीब नमूने बयान करके यह साबित कर दिया गया है कि वह ऐसा क़ादिरे मुतलक़ है जो सारी मख़्लूक़ को अ़दम से वजूद में लाया, और फिर हर चीज़ के वजूद में कैसी-कैसी हिक्मतें रखीं कि इनसान उनका इल्म व इहाता भी नहीं कर सकता, और यह ज़ाहिर है कि जो ज़ात पहली मर्तबा बिल्कुल अ़दम से एक चीज़ को मौजूद कर सकती है उसको दोबारा मौजूद करना क्या मुश्किल है। इनसान भी जब कोई नई चीज़ बनाना चाहता है तो पहली मर्तबा उसको मुश्किल पेश आती है और उसी को दोबारा बनाना चाहता है तो आसान हो जाता है।

तो ताज्जुब की बात यह है कि ये लोग इसके तो क़ायल हैं कि पहली मर्तबा तमाम कायनात को बेशुमार हिक्मतों के साथ उसी ने पैदा फ़रमाया है, फिर दोबारा पैदा करने को कैसे मुहाल और ख़िलाफ़े अ़क़्ल समझते हैं।

शायद उन इनकार करने वालों के नज़दीक बड़ा इश्काल (शुब्हे का कारण) यह है कि मरने और ख़ाक हो जाने के बाद इनसान के अंग और ज़र्रे दुनिया भर में बिखर जाते हैं, हवायें उनको कहीं से कहीं ले जाती हैं, और दूसरे असबाब व माध्यमों से भी ये ज़र्रे सारे जहान में फैल जाते हैं, फिर क़ियामत के दिन उन तमाम ज़र्रों को जमा किस तरह किया जायेगा और फिर उनको जमा करके दोबारा ज़िन्दा कैसे किया जायेगा?

मगर वे नहीं देखते कि इस वक़्त जो वजूद उनको हासिल है उसमें क्या सारे जहान के ज़र्रे जमा नहीं, दुनिया के पूरब व पश्चिम की चीज़ें पानी हवा और उनके लाये हुए ज़र्रे इनसान की ग़िज़ा में शामिल होकर उसके बदन का हिस्सा बनते हैं। इस ग़रीब को कई बार ख़बर भी नहीं होती कि एक लुक़्मा जो मुँह तक लेजा रहा है उसमें कितने ज़र्रे अफ़्रीक़ा के कितने अमेरिका के और कितने पूर्वी मुल्कों के हैं। तो जिस ज़ात ने अपनी कामिल हिक्मत और मामलात की व्यवस्था के ज़रिये इस वक़्त एक-एक इनसान और जानवर के वजूद को सारे जहान के बिखरे हुए ज़र्रे जमा करके खड़ा कर दिया है, कल उसके लिये यह क्यों मुश्किल हो जायेगा कि इन सब ज़र्रों को जमा कर डाले, जबकि दुनिया की सारी ताक़तें हवा और पानी और दूसरी क़ुव्वतें सब उसके हुक्म के ताबे और अधीन हैं, उसके इशारों पर हवा अपने अन्दर के, और पानी अपने अन्दर के और फ़िज़ा अपने अन्दर के सब ज़र्रों को जमा कर दें इसमें क्या शक व शुब्हा है?

हक़ीक़त यह है कि उन्होंने अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत और क़द्र को पहचाना ही नहीं, उसकी क़ुदरत को अपनी क़ुदरत पर गुमान व अन्दाज़ा करते हैं, हालाँकि आसमान व ज़मीन और इनके बीच की सब चीज़ें अपनी-अपनी हैसियत का इल्म व शऊर रखते हैं, और अल्लाह के हुक्म के ताबे चलते हैं:

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा-मन व तू मुर्दा बा-हक़ ज़िन्दा अन्द

"यानी मिट्टी, हवा, पानी और आग फ़रमाँबरदार हैं। अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।" मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

ख़ुलासा यह है कि खुली हुई निशानियों को देखने के बावजूद जिस तरह उनका नुबुव्वत से इनकार क़ाबिले ताज्जुब है इससे ज़्यादा क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने और हश्र के दिन से इनकार ताज्जुब की चीज़ है।

इसके बाद उन विरोधी इनकारियों की सज़ा का ज़िक्र किया गया है कि ये लोग सिर्फ़ आप ही का इनकार नहीं करते बल्कि दर हक़ीक़त अपने रब का इनकार करते हैं। इनकी सज़ा यह होगी कि इनकी गर्दनों में तौक़ डाले जायेंगे और हमेशा-हमेशा दोज़ख़ में रहेंगे।

इनकार करने वाले लोगों का दूसरा शुब्हा यह था कि अगर वास्तव में आप अल्लाह के नबी और रसूल हैं तो नबी की मुख़ालफ़त पर जो अ़ज़ाब की वईदें (वायदे और धमकियाँ) आप सुनाते हैं वह अ़ज़ाब आता क्यों नहीं। इसका जवाब दूसरी आयत में यह दिया गयाः

وَيَسْتَعْجِلُوْنَكَ بِالسَّيِّئَةِ قَبْلَ الْحَسَنَةِ وَقَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِمُ الْمَثُلٰتُ. وَاِنَّ رَبَّكَ لَذُوْ مَغْفِرَةٍ لِّلنَّاسِ عَلٰى ظُلْمِهِمْ وَاِنَّ رَبَّكَ لَشَدِيْدُ الْعِقَابِ.

"यानी ये लोग हमेशा आ़फ़ियत (चैन व सुकून) की मियाद ख़त्म होने से पहले आप से मुसीबत के नाज़िल होने का तक़ाज़ा करते हैं (कि अगर आप नबी हैं तो फ़ौरी अ़ज़ाब मंगा दीजिये, जिससे मालूम होता है कि ये लोग अ़ज़ाब के आने को बहुत ही दूर की या नामुम्किन बात समझते हैं, हालाँकि इनसे पहले दूसरे काफ़िरों पर अ़ज़ाब के बहुत से वाक़िआ़त गुज़र चुके हैं जिनको सब लोगों ने देखा और मालूम किया है, तो इन पर अ़ज़ाब आ जाना क्या मुहाल और नामुम्किन चीज़ है? यहाँ लफ़्ज़ 'मसुलात' 'मसुला' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं ऐसी सज़ा जो इनसान को सब के सामने रुस्वा कर दे, और दूसरों के लिये इब्रत का सबब बने।

फिर फ़रमाया कि बेशक आपका रब लोगों के गुनाहों और नाफ़रमानियों के बावजूद बड़ी मग़फ़िरत व रहमत वाला भी है और जो लोग इस मग़फ़िरत व रहमत से फ़ायदा न उठायें, अपनी सरकशी व नाफ़रमानी पर जमे रहें, उनके लिये सख़्त अ़ज़ाब देने वाला भी है। इसलिये अल्लाह तआ़ला के ग़फ़ूर व रहीम होने से किसी ग़लत-फ़हमी में न पड़ें कि हम पर अ़ज़ाब आ ही नहीं सकता।

तीसरा शुब्हा उन काफ़िरों का यह था कि अगरचे रसूल के बहुत से मोजिज़े हम देख चुके हैं लेकिन जिन ख़ास-ख़ास क़िस्म के मोजिज़ों का हमने मुतालबा किया है वो क्यों ज़ाहिर नहीं करते? इसका जवाब तीसरी आयत में यह दिया गया हैः

وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْلَآ اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ، اِنَّمَآ اَنْتَ مُنْذِرٌ وَّلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍo

"यानी ये काफ़िर लोग आप पर एतिराज़ करने के लिये यह कहते हैं कि इन पर ख़ास मोजिज़ा जिसको हम तलब करते हैं वह क्यों नाज़िल नहीं किया गया।" सो इसका जवाब स्पष्ट

है कि मोजिज़ा ज़ाहिर करना पैग़म्बर और नबी के इख़्तियार में नहीं होता, बल्कि वह डायरेक्ट हक़ तआ़ला का काम होता है, वह अपनी हिक्मत से जिस वक़्त जिस तरह का मोजिज़ा ज़ाहिर करना पसन्द फ़रमाते हैं उसको ज़ाहिर कर देते हैं, वह किसी के मुतालबे और इच्छा के पाबन्द नहीं, इसी लिये फ़रमायाः

اِنَّمَآ اَنْتَ مُنْذِرٌ

यानी आप काफ़िरों को ख़ुदा के अ़ज़ाब से सिर्फ़ डराने वाले हैं, मोजिज़ा ज़ाहिर करना आपका काम नहीं।

وَلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ۝

यानी हर क़ौम के लिये पिछली उम्मतों में हादी होते चले आये हैं, आप कोई अनोखे नबी नहीं, सब ही नबियों का काम और फ़रीज़ा यह था कि वे क़ौम को हिदायत करें, अल्लाह के अ़ज़ाब से डरायें, मोजिज़ों का ज़ाहिर करना किसी के इख़्तियार में नहीं दिया गया, अल्लाह तआ़ला जब और जिस तरह का मोजिज़ा ज़ाहिर करना पसन्द फ़रमाते हैं ज़ाहिर कर देते हैं।

क्या हर क़ौम और हर मुल्क में नबी आना ज़रूरी है?

इस आयत में जो यह इरशाद है कि हर क़ौम के लिये एक हादी है। इससे साबित हुआ कि कोई क़ौम और किसी मुल्क का कोई इलाक़ा अल्लाह तआ़ला की तरफ़ दावत देने और हिदायत करने वालों से ख़ाली नहीं हो सकता, चाहे वह कोई नबी हो या उसके क़ायम-मक़ाम नबी की दावत को फैलाने वाला हो जैसा कि सूरः यासीन में नबी की तरफ़ से किसी क़ौम की तरफ़ पहले दो शख़्सों को दावत व हिदायत के लिये भेजने का ज़िक्र है जो ख़ुद नबी नहीं थे, और फिर तीसरे आदमी को उनकी ताईद व मदद के लिये भेजने का ज़िक्र है।

इसलिये इस आयत से यह लाज़िम नहीं आता कि हिन्दुस्तान में भी कोई नबी व रसूल पैदा हुआ हो, अलबत्ता रसूल की दावत पहुँचाने और फैलाने वाले उलेमा का कसरत से यहाँ आना भी साबित है, और फिर यहाँ बेशुमार ऐसे हादियों का पैदा होना भी हर शख़्स को मालूम है।

यहाँ तक तीन आयतों में नुबुव्वत का इनकार करने वालों के शुब्हों का जवाब था। चौथी आयत में फिर वही तौहीद का असल मज़मून बयान हुआ है जिसका ज़िक्र इस सूरत के शुरूआ़त से चला आ रहा है। इरशाद हैः

اَللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تَحْمِلُ كُلُّ اُنْثٰى وَمَا تَغِيْضُ الْاَرْحَامُ وَمَا تَزْدَادُ وَكُلُّ شَيْءٍ عِنْدَهٗ بِمِقْدَارٍ۝

यानी अल्लाह को सब ख़बर रहती है जो कुछ किसी औ़रत को हमल (गर्भ) रहता है लड़का है या लड़की, हसीन या बद-शक्ल, नेक है या बद, और जो कुछ उन औ़रतों के रहम (गर्भ) में कमी-बेशी होती है, कि कभी एक बच्चा पैदा होता है कभी ज़्यादा और कभी जल्दी पैदा होता है कभी देर में।

इस आयत में हक़ तआ़ला की एक मख़्सूस सिफ़त का बयान है कि वह आ़लिमुल-ग़ैब हैं

तमाम कायनात व मख़्लूक़ात के ज़र्रे-ज़र्रे से वाक़िफ़ और हर ज़र्रे के बदलते हुए हालात से बाख़बर हैं। इसके साथ ही इनसान की पैदाईश के हर दौर और हर तब्दीली और हर सिफ़्त से पूरी तरह वाक़िफ़ होने का ज़िक्र है, कि हमल (गर्भ) का यक़ीनी और सही इल्म सिर्फ़ उसी को होता है कि लड़का है या लड़की, या दोनों या कुछ भी नहीं सिर्फ़ पानी या हवा है। हालात, इशारात और अन्दाज़ों से कोई हकीम या डॉक्टर जो कुछ इस मामले में राय देता है उसकी हैसियत एक गुमान और अन्दाज़े से ज़्यादा नहीं होती, कई बार हक़ीक़त उसके ख़िलाफ़ निकलती है। एक्सरे की नई मशीन भी इस हक़ीक़त को खोलने से मजबूर है। इसका वास्तविक और यक़ीनी इल्म सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही को हो सकता है, इसी का बयान एक दूसरी आयत में है:

وَيَعْلَمُ مَا فِى الْاَرْحَامِ

यानी अल्लाह तआ़ला ही जानता है जो कुछ रहमों (गर्भों) में है।

लफ़्ज़ 'तग़ीज़' अ़रबी भाषा में कम होने और ख़ुश्क होने के मायने में आता है। उक्त आयत में इसके मुक़ाबिल 'तज़दादु' के लफ़्ज़ ने मुतैयन कर दिया कि इस जगह मायने कम होने के हैं। मतलब यह है कि माँ के पेट में जो कुछ कमी या बेशी होती है उसका सही इल्म भी सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही को है। इस कमी और बेशी से मुराद यह भी हो सकता है कि पैदा होने वाले बच्चे की संख्या में कमी-बशी हो कि गर्भ में सिर्फ़ एक बच्चा है या ज़्यादा, और यह भी हो सकता है कि पैदाईश के समय की कमी-बेशी मुराद हो कि यह हमल (गर्भ) कितने महीने कितने दिन और कितने घन्टों में पैदा होकर एक इनसान को ज़ाहिरी वजूद देगा, इसका यक़ीनी इल्म भी सिवाय अल्लाह तआ़ला के किसी को नहीं हो सकता।

तफ़सीर के इमाम मुजाहिद रह. ने फ़रमाया कि गर्भ के समय में जो ख़ून औरत को आ जाता है वह गर्भ के आकार (बनावट) व सेहत के एतिबार से कमी का सबब होता है।

تَغِيْضُ الْاَرْحَامُ

(और जो सिकुड़ते हैं पेट) से मुराद यह कमी है, और हक़ीक़त यह है कि कमी होने की जितनी क़िस्में हैं आयत के अलफ़ाज़ उन सब को शामिल हैं, इसलिये कोई इख़्तिलाफ़ नहीं।

كُلُّ شَىْءٍ عِنْدَهٗ بِمِقْدَارٍ ○

यानी अल्लाह तआ़ला के पास हर चीज़ का एक ख़ास अन्दाज़ा और पैमाना मुक़र्रर है, न उससे कम हो सकती है न ज़्यादा। बच्चे के तमाम हालात भी इसमें दाख़िल हैं कि उसकी हर चीज़ अल्लाह के नज़दीक मुतैयन है, कि कितने दिन हमल में रहेगा, फिर कितने ज़माने तक दुनिया में ज़िन्दा रहेगा, कितना रिज़्क़ उसको हासिल होगा, अल्लाह जल्ल शानुहू का यह बेमिसाल इल्म उसकी तौहीद (तन्हा और अकेला माबूद होने) की स्पष्ट दलील है।

عٰلِمُ الْغَيْبِ وَ الشَّهَادَةِ الْكَبِيْرُ الْمُتَعَالِ ۝ سَوَآءٌ مِّنْكُمْ مَّنْ اَسَرَّ
الْقَوْلَ وَمَنْ جَهَرَ بِهٖ وَمَنْ هُوَ مُسْتَخْفٍۢ بِالَّيْلِ وَ سَارِبٌۢ بِالنَّهَارِ ۝ لَهٗ مُعَقِّبٰتٌ مِّنْۢ بَيْنِ يَدَيْهِ وَ
مِنْ خَلْفِهٖ يَحْفَظُوْنَهٗ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُغَيِّرُ مَا بِقَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوْا مَا بِاَنْفُسِهِمْ ؕ وَاِذَآ
اَرَادَ اللّٰهُ بِقَوْمٍ سُوْٓءًا فَلَا مَرَدَّ لَهٗ ۚ وَمَا لَهُمْ مِّنْ دُوْنِهٖ مِنْ وَّالٍ ۝ هُوَ الَّذِيْ يُرِيْكُمُ الْبَرْقَ خَوْفًا
وَّطَمَعًا وَّيُنْشِئُ السَّحَابَ الثِّقَالَ ۝ وَيُسَبِّحُ الرَّعْدُ بِحَمْدِهٖ وَالْمَلٰٓئِكَةُ مِنْ خِيْفَتِهٖ ۚ وَ يُرْسِلُ
الصَّوَاعِقَ فَيُصِيْبُ بِهَا مَنْ يَّشَآءُ وَهُمْ يُجَادِلُوْنَ فِي اللّٰهِ ۚ وَهُوَ شَدِيْدُ الْمِحَالِ ۝ لَهٗ دَعْوَةُ الْحَقِّ ؕ
وَالَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖ لَا يَسْتَجِيْبُوْنَ لَهُمْ بِشَيْءٍ اِلَّا كَبَاسِطِ كَفَّيْهِ اِلَى الْمَآءِ لِيَبْلُغَ فَاهُ وَمَا
هُوَ بِبَالِغِهٖ ۚ وَمَا دُعَآءُ الْكٰفِرِيْنَ اِلَّا فِيْ ضَلٰلٍ ۝ وَلِلّٰهِ يَسْجُدُ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَّ
كَرْهًا وَّظِلٰلُهُمْ بِالْغُدُوِّ وَ الْاٰصَالِ ۝

السجدة (٢)

आलिमुल्-ग़ैबि वश्शहादतिल् कबीरुल्-मु-तआ़ल (9) सवाउम्-मिन्कुम् मन् अ-सर्रल्-क़ौ-ल व मन् ज-ह-र बिही व मन् हु-व मुस्तख़्फ़िम् बिल्लैलि व सारिबुम्-बिन्नहार (10) लहू मुअ़क़्क़िबातुम् मिम्-बैनि यदैहि व मिन् ख़ल्फ़िही यह्फ़ज़ूनहू मिन् अम्रिल्लाहि, इन्नल्ला-ह ला युग़य्यिरु मा बिक़ौमिन् हत्ता युग़य्यिरू मा बिअन्फ़ुसिहिम्, व इज़ा अरादल्लाहु बिक़ौमिन् सूअन् फ़ला म-रद्-द लहू व मा लहुम् मिन् दूनिही मिंव्वाल (11) हुवल्लज़ी युरीकुमुल्-बर्-क़ ख़ौफ़ंव्-व त-म-अंव्-व युन्शिउस्-

जानने वाला छुपे और ज़ाहिर का, सबसे बड़ा बरतर। (9) बराबर है तुम में जो आहिस्ता बात कहे और जो कहे पुकारकर और जो छुप रहा है रात में और जो गलियों में फिरता है दिन को। (10) उसके पहरे वाले हैं बन्दे के आगे से और पीछे से उसकी निगहबानी करते हैं अल्लाह के हुक्म से, अल्लाह नहीं बदलता किसी क़ौम की हालत को जब तक वे न बदलें जो उनके जियों (दिलों) में है, और जब चाहता है अल्लाह किसी क़ौम पर आफ़त फिर वह नहीं फिरती, और कोई नहीं उनका उसके सिवा मददगार। (11) वही है तुमको दिखलाता है बिजली डरने के लिये और उम्मीद के लिये और जब

-सहाबस्-सिक़ाल (12) व युसब्बिहुर्-रअ्दु बिहम्दिही वल्मलाइ-कतु मिन् ख़ीफ़तिही व युर्सिलुस्सवाअि-क़ फ़युसीबु बिहा मंय्यशा-उ व हुम् युजादिलू-न फ़िल्लाहि व हु-व शदीदुल्-मिहाल (13) लहू दअ्वतुल्-हक़्क़ि, वल्लज़ी-न यद्अू-न मिन् दूनिही ला यस्तजीबू-न लहुम् बिशैइन् इल्ला कबासिति कफ़्फ़ैहि इलल्-मा-इ लियब्लु-ग़ फ़ाहु व मा हु-व बिबालिग़िही, व मा दुआउल्-काफ़िरी-न इल्ला फ़ी ज़लाल (14) व लिल्लाहि यस्जुदु मन् फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि तौअंव्-व कर्हंव्-व ज़िलालुहुम् बिल्गुदुव्वि वल्आसाल। (15) ۞

उठाता है बादल भारी। (12) और पढ़ता है गरजने वाला ख़ूबियाँ उसकी और सब फ़रिश्ते उसके डर से और भेजता है कड़क बिजलियाँ फिर डालता है जिस पर चाहे, और ये लोग झगड़ते हैं अल्लाह की बात में और उसकी आन सख़्त है। (13) उसी का पुकारना सच है, और जिन लोगों को कि पुकारते हैं उसके सिवा वे नहीं काम आते उनके कुछ भी मगर जैसे किसी ने फैला दिये दोनों हाथ पानी की तरफ़ कि आ पहुँचे उसके मुँह तक, और वह कभी न पहुँचेगा उस तक, और जितनी पुकार है काफ़िरों की सब गुमराही है। (14) और अल्लाह को सज्दा करता है जो कोई है आसमान और ज़मीन में ख़ुशी से और ज़ोर से, और उनकी परछाईयाँ सुबह और शाम। (15) ۞

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह तमाम छुपी और ज़ाहिर चीज़ों का जानने वाला है, सबसे बड़ा (और) आलीशान है। तुम में से जो शख़्स कोई बात चुपके से कहे और जो पुकारकर कहे, और जो शख़्स रात में कहीं छुप जाये और जो दिन में चले-फिरे, ये सब (ख़ुदा के इल्म में) बराबर हैं (यानी सब को बराबर जानता है, और जैसे तुम में से हर शख़्स को जानता है इसी तरह हर एक की हिफ़ाज़त भी करता है। चुनाँचे तुम में से) हर शख़्स (की हिफ़ाज़त) के लिये कुछ फ़रिश्ते (मुक़र्रर) हैं जिनकी बदली होती रहती है, कुछ उसके आगे और कुछ उसके पीछे कि वे अल्लाह के हुक्म से (बहुत बलाओं से) उसकी हिफ़ाज़त करते हैं (और इससे कोई यूँ न समझ जाये कि जब फ़रिश्ते हमारे मुहाफ़िज़ हैं फिर जो चाहो करो नाफ़रमानी चाहे कुफ़्र, किसी तरह अज़ाब नाज़िल ही न होगा, यह समझना बिल्कुल ग़लत है, क्योंकि) वाक़ई अल्लाह तआ़ला (शुरूआत में तो किसी को अज़ाब देता नहीं, चुनाँचे उसकी आदत यह है कि वह) किसी क़ौम की (अच्छी) हालत में

बदलाव नहीं करता जब तक कि वे लोग ख़ुद अपनी (सलाहियत की) हालत को नहीं बदल देते (मगर इसके साथ यह भी है कि जब वे अपनी सलाहियत में ख़लल डालने लगते हैं तो फिर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उन पर मुसीबत व सज़ा तजवीज़ की जाती है)। और जब अल्लाह किसी कौम पर मुसीबत डालना तजवीज़ कर लेता है तो फिर उसके हटने की कोई सूरत ही नहीं (वह उन पर पड़ जाती है), और (ऐसे वक़्त में) कोई ख़ुदा के सिवा (जिनकी हिफ़ाज़त का उनको नाज़ है) उनका मददगार नहीं रहता है (यहाँ तक कि फ़रिश्ते भी उनकी हिफ़ाज़त नहीं करते, और अगर करते भी तो हिफ़ाज़त उनके काम न आ सकती)।

वह ऐसा (बड़ी शान वाला) है कि तुमको (बारिश के वक़्त) बिजली (चमकती हुई) दिखलाता है जिससे (उसके गिरने का) डर भी होता है और (उससे बारिश की) उम्मीद भी होती है, और वह बादलों को (भी) ऊँचा करता है जो पानी से भरे होते हैं। और रअ़्द (फ़रिश्ता) उसकी तारीफ़ के साथ उसकी पाकी बयान करता है और (दूसरे) फ़रिश्ते भी उसके ख़ौफ़ से (उसकी तारीफ़ व पाकी बयान करते हैं) और वह (ज़मीन की तरफ़) बिजलियाँ भेजता है, फिर जिस पर चाहे उन्हें गिरा देता है। और वे लोग अल्लाह के बारे में (यानी उसकी तौहीद में बावजूद उसके ऐसे अ़ज़ीमुश्शान होने के) झगड़ते हैं, हालाँकि वह बड़ा ज़बरदस्त क़ुव्वत वाला है (कि जिससे डरना चाहिये मगर ये लोग डरते नहीं और उसके साथ शरीक ठहराते हैं। और वह ऐसा दुआ़ओं का क़ुबूल करने वाला है) कि सच्चा पुकारना उसी के लिये ख़ास है (क्योंकि उसको क़ुबूल करने की क़ुदरत है) और ख़ुदा के सिवा जिनको ये लोग (अपनी ज़रूरतों व मुसीबतों में) पुकारते हैं वे (क़ुदरत न होने की वजह से) इनकी दरख़्वास्त को उससे ज़्यादा मन्ज़ूर नहीं कर सकते जितना पानी उस शख़्स की दरख़्वास्त को मन्ज़ूर करता है जो अपने दोनों हाथ पानी की तरफ़ फैलाए हुए हो (और उसको इशारे से अपनी तरफ़ बुला रहा हो) ताकि वह (पानी) उसके मुँह तक (उड़कर) आ जाये, और वह (अपने आप) उसके मुँह तक (किसी तरह) आने वाला नहीं (पस जिस तरह पानी उनकी दरख़्वास्त क़ुबूल करने से आ़जिज़ है इसी तरह उनके माबूद आ़जिज़ हैं, इसलिये) काफ़िरों का (उनसे) दरख़्वास्त करना बिल्कुल बेअसर है।

और अल्लाह ही (ऐसा मुकम्मल क़ुदरत का मालिक है कि उसी) के सामने सब सर झुकाये हुए हैं जितने आसमानों में हैं और जितने ज़मीन में हैं, (बाज़े) ख़ुशी से और (बाज़े) मजबूरी से (ख़ुशी से यह कि अपने इख़्तियार से इबादत करते हैं, और मजबूरी के यह मायने हैं कि अल्लाह तआ़ला जिस मख़्लूक़ में जो इख़्तियार चलाना चाहते हैं वह उसका विरोध नहीं कर सकता) और उन (ज़मीन वालों) के साये भी (सर झुकाये हुए हैं) सुबह और शाम के वक़्तों में (यानी साये को जितना चाहें बढ़ायें जितना चाहें घटायें, और सुबह व शाम के वक़्त चूँकि लम्बा होने और घटने का ज़्यादा ज़ुहूर होता है इसलिये इन वक़्तों को विशेष तौर पर बयान किया वरना मतलब यह है कि साया भी हर तरह उसका फ़रमाँबरदार है)।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों से पहले अल्लाह जल्ल शानुहू की विशेष कामिल सिफ़तों के बयान का सिलसिला चल रहा है जो हकीकत में तौहीद (अल्लाह के एक होने और उसी के लायके इबादत होने) की दलीलें हैं। इस आयत में फ़रमाया:

عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْكَبِيْرُ الْمُتَعَالِ○

ग़ैब से मुराद वह चीज़ है जो इनसानी हवास से ग़ायब हो यानी न आँखों से उसको देखा जा सके, न कानों से सुना जा सके, न नाक से सूँघा जा सके, न ज़बान से चखा जा सके, न हाथों से छूकर मालूम किया जा सके।

शहादत इसके मुकाबले में वो चीज़ें हैं जिनको उक्त इनसानी हवास के ज़रिये मालूम किया जा सके। मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला ही की ख़ास सिफ़ते कमाल यह है कि वह हर ग़ैब को इसी तरह जानता है जिस तरह हाज़िर व मौजूद को जानता है।

अल्-कबीर के मायने बड़ा और **मुतआ़ल** के मायने बाला व बुलन्द। मुराद इन दोनों लफ़्ज़ों से यह है कि वह मख़्लूकात की सिफ़ात से बाला व बुलन्द और बड़ा है। काफ़िर व मुश्रिक लोग संक्षिप्त तौर पर अल्लाह तआ़ला की बड़ाई और किब्रियाई का तो इकरार करते थे मगर अपनी कम-समझी से अल्लाह तआ़ला को भी आ़म इनसानों पर कियास करके अल्लाह के लिये ऐसी सिफ़ात साबित करते थे जो उसकी शान से बहुत दूर हैं। जैसे यहूदियों व ईसाईयों ने अल्लाह के लिये बेटा साबित किया, किसी ने अल्लाह के लिये इनसान की तरह जिस्म और अंग साबित किये, किसी ने रुख़ और दिशा को साबित किया, हालाँकि वह इन तमाम हालात व सिफ़ात से बाला व बुलन्द और पाक है। कुरआने करीम ने उनकी बयान की हुई इन सिफ़ात से बराअत के लिये बार-बार फ़रमायाः

سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يَصِفُوْنَ○

"यानी पाक है अल्लाह उन सिफ़ात से जो ये लोग बयान करते हैं।"

पहले जुमलेः

عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ

में तथा इससे पहली आयतः

اَللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تَحْمِلُ كُلُّ اُنْثٰى

में अल्लाह जल्ल शानुहू के इल्मी कमाल का बयान था, इस दूसरे जुमलेः

الْكَبِيْرُ الْمُتَعَالِ○

में कुदरत व बड़ाई के कमाल का ज़िक्र है कि उसकी ताकत व कुदरत इनसानी तसव्वुरात (सोच और कल्पनाओं) से बालातर है। इसके बाद की आयत में भी इसी इल्मी कमाल और

कमाले क़ुदरत को एक ख़ास अन्दाज़ से बयान फ़रमाया है:

سَوَآءٌ مِّنْكُمْ مَّنْ اَسَرَّ الْقَوْلَ وَمَنْ جَهَرَ بِهٖ وَمَنْ هُوَ مُسْتَخْفٍ ۢ بِالَّيْلِ وَسَارِبٌ ۢ بِالنَّهَارِ ۝

'असर्रल्-कौल' असरार से बना है जिसके मायने ख़ुफ़िया कलाम और जहर के मायने ऐलानिया कलाम के हैं। जो कलाम इनसान किसी दूसरे को सुनाने के लिये करता है उसे जहर कहते हैं, और जो ख़ुद अपने आपको सुनाने के लिये करता है उसको **सिर्र** कहा जाता है। **मुस्तख़्फ़** के मायने छुपने वाला, **सारिब** के मायने आज़ादी और बेफ़िक्री से रास्ते पर चलने वाला।

आयत के मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला शानुहू के कामिल इल्म की वजह से उसके नज़दीक ख़ुफ़िया कलाम करने वाला और बुलन्द आवाज़ से कलाम करने वाला दोनों बराबर हैं, वह दोनों के कलाम को बराबर तौर पर सुनता और जानता है। इसी तरह जो शख़्स रात की अंधेरी में छुपा हुआ है और जो दिन के उजाले में खुले रास्ते पर चल रहा है, ये दोनों उसके इल्म और क़ुदरत के एतिबार से बराबर हैं, कि दोनों के अन्दरूनी और ज़ाहिरी सब हालात उसको बराबर मालूम हैं, और दोनों पर उसकी क़ुदरत बराबर हावी है, कोई उसकी क़ुदरत से बाहर नहीं। इसी का और अधिक बयान अगली आयत में इस तरह है:

لَهٗ مُعَقِّبٰتٌ مِّنْ ۢ بَيْنِ يَدَيْهِ وَمِنْ خَلْفِهٖ يَحْفَظُوْنَهٗ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ

'मुअ़क़्क़िबातुन' मुअ़क़्क़िबा की जमा (बहुवचन) है, उस जमाअ़त को जो दूसरी जमाअ़त के पीछे साथ लगकर आये उसको मुअ़क़्क़िबा या मुतअ़क़्क़िबा कहा जाता है।

مِنْ ۢ بَيْنِ يَدَيْهِ

के लफ़्ज़ी मायने हैं दोनों हाथों के दरमियान। मुराद इनसान के सामने की दिशा है।

وَمِنْ خَلْفِهٖ

पीछे की जानिब।

مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ

में 'मिन्' सबब के मायने बयान करने के लिये है और 'बिअम्रिल्लाहि' के मायने में आया है। कुछ क़िराअतों में यह लफ़्ज़ बिअम्रिल्लाहि मन्क़ूल भी है। (रूहुल-मआ़नी)

आयत के मायने यह हैं कि हर शख़्स चाहे अपने कलाम को छुपाता है या ज़ाहिर करना चाहता है, इसी तरह अपने चलने फिरने को रात की अंधेरियों के ज़रिये छुपाना चाहता है या खुलेआ़म सड़कों पर फिरे, इन सब इनसानों के लिये अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से फ़रिश्तों की जमाअ़तें मुक़र्रर हैं, जो उनके आगे और पीछे से घेरा डाले हुए हैं, जिनकी ख़िदमत और ड्यूटी बदलती रहती है और वे एक के बाद एक आती रहती हैं। उनके ज़िम्मे यह काम है कि वे अल्लाह के हुक्म से इनसानों की हिफ़ाज़त करें।

सही बुख़ारी की हदीस में है कि फ़रिश्तों की दो जमाअ़तें हिफ़ाज़त के लिये मुक़र्रर हैं- एक

रात के लिये, दूसरी दिन के लिये। और ये दोनों जमाअ़तें सुबह और अ़सर की नमाज़ों में जमा होती हैं, सुबह की नमाज़ के बाद रात के मुहाफ़िज़ (निगराँ) रुख़्सत हो जाते हैं, दिन के मुहाफ़िज़ काम संभाल लेते हैं, और अ़सर की नमाज़ के बाद ये रुख़्सत हो जाते हैं, रात के फ़रिश्ते ड्यूटी पर आ जाते हैं।

हदीस शरीफ़ की किताब अबू दाऊद की एक हदीस में हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि हर इनसान के साथ कुछ हिफ़ाज़त करने वाले फ़रिश्ते मुक़र्रर हैं जो उसकी हिफ़ाज़त करते रहते हैं कि उसके ऊपर कोई दीवार वग़ैरह न गिर जाये, या किसी गढ़े और ग़ार में न गिर जाये, या कोई जानवर या इनसान उसको तकलीफ़ न पहुँचाये, अलबत्ता जब अल्लाह का हुक्म किसी इनसान को बला व मुसीबत में मुब्तला करने के लिये नाफ़िज़ हो जाता है तो मुहाफ़िज़ फ़रिश्ते वहाँ से हट जाते हैं। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इब्ने जरीर की एक हदीस से जो हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से है यह भी मालूम होता है कि उन मुहाफ़िज़ फ़रिश्तों का काम सिर्फ़ दुनियावी मुसीबतों और तकलीफ़ों ही से हिफ़ाज़त नहीं बल्कि वे इनसान को गुनाहों से बचाने और महफ़ूज़ रखने की भी कोशिश करते हैं। इनसान के दिल में नेकी और ख़ौफ़े ख़ुदा का जज़्बा जगाते रहते हैं, जिसके ज़रिये वह गुनाह से बचे। और अगर फिर भी वह फ़रिश्तों के इल्हाम (दिल में बात डालने) से ग़फ़लत बरत कर गुनाह में मुब्तला ही हो जाये तो वे इसकी दुआ़ और कोशिश करते हैं कि यह जल्द तौबा करके गुनाह से पाक हो जाये, फिर अगर वह किसी तरह सचेत नहीं होता तब वे उसके नामा-ए-आमाल में गुनाह का काम लिख देते हैं।

ख़ुलासा यह है कि ये मुहाफ़िज़ फ़रिश्ते दीन व दुनिया दोनों की मुसीबतों और आफ़तों से इनसान की सोते जागते हिफ़ाज़त करते रहते हैं। हज़रत कअ़बे अहबार रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि अगर इनसान से अल्लाह की हिफ़ाज़त का यह पहरा हटा दिया जाये तो जिन्नात इनकी ज़िन्दगी वबाल कर दें, लेकिन ये सब हिफ़ाज़ती पहरे उसी वक़्त तक काम करते हैं जब तक अल्लाह की लिखी हुई तक़दीर उनकी हिफ़ाज़त की इजाज़त देती है, और जब अल्लाह तआ़ला ही किसी बन्दे को मुब्तला करना चाहें तो यह हिफ़ाज़ती पहरा हटा दिया जाता है।

इसी का बयान अगली आयत में इस तरह किया गया है:

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُغَيِّرُ مَا بِقَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوْا مَا بِأَنْفُسِهِمْ وَإِذَآ أَرَادَ اللّٰهُ بِقَوْمٍ سُوْٓءًا فَلَا مَرَدَّ لَهٗ وَمَا لَهُمْ مِّنْ دُوْنِهٖ مِنْ وَّالٍ٥

"यानी अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम की अमन व आ़फ़ियत की हालत को आफ़त व मुसीबत में उस वक़्त तक तब्दील नहीं करते जब तक वह क़ौम ख़ुद ही अपने आमाल व हालात को बुराई और फ़साद में तब्दील न कर ले। और जब वह अपने हालात को सरकशी और नाफ़रमानी से बदलती है तो अल्लाह तआ़ला भी अपना तरीक़ा बदल देते हैं। और यह ज़ाहिर है कि जब अल्लाह तआ़ला ही किसी का बुरा चाहें और अ़ज़ाब देना चाहें तो न फिर कोई उसको टाल सकता है और न कोई अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ उनकी मदद को पहुँच सकता है।

हासिल यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से इनसानों की हिफ़ाज़त के लिये फ़रिश्तों का पहरा लगा रहता है, लेकिन जब कोई कौम अल्लाह तआ़ला की नेमतों का शुक्र और उसकी इताअ़त छोड़कर बुरे आमाल, ग़लत किरदार और सरकशी ही इख़्तियार कर ले तो अल्लाह तआ़ला भी अपना हिफ़ाज़ती पहरा उठा लेते हैं, फिर ख़ुदा तआ़ला का क़हर व अ़ज़ाब उन पर आता है, जिससे बचने की कोई सूरत नहीं रहती।

इस वज़ाहत व तफ़सील से मालूम हुआ कि उक्त आयत में हालात के बदलने से मुराद यह है कि जब कोई कौम इताअ़त और शुक्रगुज़ारी छोड़कर अपने हालात में बुरी तब्दीली पैदा करे तो अल्लाह तआ़ला भी अपना रहमत व हिफ़ाज़त का मामला बदल देते हैं।

इस आयत का जो आ़म तौर पर यह मफ़्हूम (मतलब) बयान किया जाता है कि किसी क़ौम में अच्छा इन्क़िलाब उस वक़्त तक नहीं आता जब तक वह ख़ुद उस अच्छे इन्क़िलाब के लिये अपने हालात को दुरुस्त न कर ले, इसी मफ़्हूम में यह शे'र मशहूर है:

ख़ुदा ने आज तक उस क़ौम की हालत नहीं बदली
न हो जिसको ख़्याल ख़ुद अपनी हालत के बदलने का

यह बात अगरचे एक हद तक सही है मगर इस आयत का यह मफ़्हूम नहीं, और इसका सही होना भी एक आ़म क़ानून की हैसियत से है कि जो शख़्स ख़ुद अपने हालात की इस्लाह (सुधार) का इरादा नहीं करता अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से भी उसकी इमदाद व नुसरत का वादा नहीं, बल्कि यह वादा उसी हालत में है जब कोई ख़ुद भी इस्लाह की फ़िक्र करे जैसा कि आयते करीमाः

وَالَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا

से मालूम होता है कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से भी हिदायत के रास्ते तब ही खुलते हैं जब ख़ुद हिदायत की तलब मौजूद हो, लेकिन अल्लाह के इनामात इस क़ानून के पाबन्द नहीं, कई बार इसके बग़ैर भी अ़ता हो जाते हैं:

दादे हक़ रा क़ाबलियत शर्त नेस्त
बल्कि शर्ते क़ाबलियत दाद हस्त

ख़ुद हमारा वजूद और इसमें बेशुमार नेमतें न हमारी कोशिश का नतीजा हैं न हमने कभी इसके लिये दुआ़ माँगी थी कि हमें ऐसा वजूद अ़ता किया जाये जिसकी आँख, नाक, कान और सब क़ुव्वतें व अंग दुरुस्त हों, ये सब नेमतें बिना माँगे ही मिली हैं:

मा नबूदेम व तक़ाज़ा-ए-मा न बूद
लुत्फ़े तू नागुफ़्ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तक़ाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तक़ाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे क़ुबूल फ़रमाता है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

अलबत्ता इनामात का हक़्दार बनना और उनका वायदा बग़ैर अपनी कोशिश के हासिल नहीं होता, और किसी क़ौम का बग़ैर कोशिश व अ़मल के इनामात का इन्तिज़ार करते रहना अपने आपको धोखा देने के बराबर है।

هُوَ الَّذِىْ يُرِيْكُمُ الْبَرْقَ خَوْفًا وَّطَمَعًا وَّيُنْشِئُ السَّحَابَ الثِّقَالَ۝

यानी अल्लाह तआ़ला ही की ज़ात पाक है, जो तुम्हें बर्क़ व बिजली दिखलाता है, जो इनसान के लिये ख़ौफ़ भी बन सकती है कि जिस जगह गिर पड़े सब को खाक कर डाले, और उम्मीद व इच्छा भी होती है कि बिजली की चमक के बाद बारिश आयेगी जो इनसान और हैवानात की ज़िन्दगी का सहारा है। और वही पाक ज़ात है जो बड़े-बड़े भारी बादल समन्दर से मानसून बनाकर उठाता है और फिर उन पानी से भरे हुए बादलों को फ़िज़ा में बड़ी तेज़ी के साथ कहीं से कहीं ले जाता है, और अपने तयशुदा हुक्म के मुताबिक़ जिस ज़मीन पर चाहता है बरसाता है।

وَيُسَبِّحُ الرَّعْدُ بِحَمْدِهٖ وَالْمَلٰٓئِكَةُ مِنْ خِيْفَتِهٖ.

यानी तस्बीह पढ़ता है रअ़द अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व शुक्र की, और तस्बीह पढ़ते हैं फ़रिश्ते उसके ख़ौफ़ की। **रअ़द** उर्फ़ व मुहावरे में बादल की आवाज़ को कहा जाता है जो बादलों के आपसी टकराव से पैदा होती है। उसके तस्बीह पढ़ने से मुराद वही तस्बीह है जिसके बारे में क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत में आया है कि ज़मीन व आसमान में कोई चीज़ ऐसी नहीं जो अल्लाह की तस्बीह न करती हो, लेकिन यह तस्बीह आ़म लोग सुन नहीं सकते।

और हदीस की कुछ रिवायतों में है कि रअ़द उस फ़रिश्ते का नाम है जो बारिश बरसाने पर मुसल्लत और लगाया हुआ है। इस मायने के एतिबार से तस्बीह पढ़ना ज़ाहिर है।

وَيُرْسِلُ الصَّوَاعِقَ فَيُصِيْبُ بِهَا مَنْ يَّشَآءُ.

सवाअ़िक़ साअ़िक़ा की जमा (बहुवचन) है, ज़मीन पर गिरने वाली बिजली को साअ़िक़ा कहा जाता है। आयत का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला ही ये बिजलियाँ ज़मीन पर भेजता है जिनके ज़रिये जिसको चाहता है जला देता है।

وَهُمْ يُجَادِلُوْنَ فِى اللّٰهِ وَهُوَ شَدِيْدُ الْمِحَالِ۝

लफ़्ज़ **मिहाल** हीला व तदबीर के मायने में है, और अ़ज़ाब व सज़ा के मायने में भी, और क़ुदरत के मायने में भी। आयत के मायने यह हैं कि ये लोग अल्लाह तआ़ला की तौहीद के मामले में आपसी झगड़े और विवाद में मुब्तला हैं, हालाँकि अल्लाह तआ़ला बड़ी मज़बूत तदबीर करने वाले हैं, जिनके सामने किसी की चाल नहीं चलती।

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

قُلْ مَنْ رَّبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ قُلِ اللّٰهُ ؕ قُلْ اَفَاتَّخَذْتُمْ مِّنْ
دُوْنِهٖۤ اَوْلِيَآءَ لَا يَمْلِكُوْنَ لِاَنْفُسِهِمْ نَفْعًا وَّلَا ضَرًّا ؕ قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصِيْرُ ۙ اَمْ هَلْ تَسْتَوِي
الظُّلُمٰتُ وَالنُّوْرُ ۚ اَمْ جَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ خَلَقُوْا كَخَلْقِهٖ فَتَشَابَهَ الْخَلْقُ عَلَيْهِمْ ؕ قُلِ اللّٰهُ خَالِقُ
كُلِّ شَيْءٍ وَّهُوَ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ۝ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَسَالَتْ اَوْدِيَةٌۢ بِقَدَرِهَا فَاحْتَمَلَ السَّيْلُ
زَبَدًا رَّابِيًا ؕ وَمِمَّا يُوْقِدُوْنَ عَلَيْهِ فِي النَّارِ ابْتِغَآءَ حِلْيَةٍ اَوْ مَتَاعٍ زَبَدٌ مِّثْلُهٗ ؕ كَذٰلِكَ يَضْرِبُ
اللّٰهُ الْحَقَّ وَالْبَاطِلَ ؕ فَاَمَّا الزَّبَدُ فَيَذْهَبُ جُفَآءً ۚ وَاَمَّا مَا يَنْفَعُ النَّاسَ فَيَمْكُثُ فِي الْاَرْضِ ؕ كَذٰلِكَ
يَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ ۝

क़ुल् मर्रब्बुस्समावाति वल्अर्ज़ि, क़ुलिल्लाहु, क़ुल् अ-फ़त्तख़ज़्तुम् मिन् दूनिही औलिया-अ ला यम्लिकू-न लिअन्फ़ुसिहिम् नफ़्अंव्-व ला ज़र्रन्, क़ुल् हल् यस्तविल्-अअ़्मा वल्बसीरु अम् हल् तस्तविज़्ज़ुलुमातु वन्नूरु, अम् ज-अ़लू लिल्लाहि शु-रका-अ ख़-लक़ू क-ख़ल्क़िही फ़-तशाबहल्-ख़ल्क़ु अ़लैहिम्, क़ुलिल्लाहु ख़ालिक़ु कुल्लि शैइंव्-व हुवल् वाहिदुल्-क़ह्हार (16) अन्ज़-ल मिनस्समा-इ माअन् फ़सालत् औदि-यतुम् बि-क़-दरिहा फ़ह्त-मलस्सैलु ज़-बदर्-राबियन्, व मिम्मा यूक़िदू-न अ़लैहि फ़िन्नारिब्तिग़ा-अ हिल्यतिन् औ मताअ़िन् ज़-बदुम्-मिस्लुहू, कज़ालि-क यज़्रिबुल्लाहुल्-हक़्-क वल्बाति-ल,

पूछ कौन है रब आसमान और ज़मीन का, कह दे अल्लाह। कह फिर क्या तुमने पकड़े हैं उसके सिवा ऐसे हिमायती जो मालिक नहीं अपने भले और बुरे के। कह क्या बराबर होता है अंधा और देखने वाला? या कहीं बराबर है अंधेरा और उजाला? क्या ठहराये हैं उन्होंने अल्लाह के लिये शरीक कि उन्होंने कुछ पैदा किया है जैसे पैदा किया अल्लाह ने, फिर संदिग्ध हो गई पैदाईश उनकी नज़र में, कह अल्लाह है पैदा करने वाला हर चीज़ का, और वही है अकेला ज़बरदस्त। (16) उतारा उसने आसमान से पानी, फिर बहने लगे नाले अपनी-अपनी मात्रा के मुवाफ़िक़, फिर ऊपर ले आया वह नाला झाग फूला हुआ, और जिस चीज़ को धोंकते हैं आग में ज़ेवर के या असबाब के वास्ते, उसमें भी झाग है वैसा ही, यूँ बयान करता है अल्लाह हक़ और बातिल को, सो वह झाग तो जाता रहता है सूख

फ़-अम्मज़्ज़-बदु फ़-यज़्हबु जुफ़ा-अन् व अम्मा मा यन्फ़अुन्ना-स फ़यम्कुसु फ़िल्अर्ज़ि, कज़ालि-क यज़्रिबुल्लाहुल्-अम्साल (17)	कर और वह जो काम आता है लोगों के सो बाक़ी रहता है ज़मीन में, इस तरह बयान करता है अल्लाह मिसालें। (17)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उनसे यूँ) कहिये कि आसमानों और ज़मीन का परवर्दिगार (यानी बनाने और बाक़ी रखने वाला अर्थात् ख़ालिक़ व हाफ़िज़) कौन है? (और चूँकि इसका जवाब मुतैयन है इसलिये जवाब भी) आप (ही) कह दीजिये कि अल्लाह है। (फिर) आप यह कहिये कि क्या (ये तौहीद की दलीलें सुनकर) फिर भी तुमने ख़ुदा के सिवा दूसरे मददगार (यानी माबूद) क़रार दे रखे हैं जो (पूरी तरह बेबस होने की वजह से) ख़ुद अपनी ज़ात के नफ़े-नुक़सान का भी इख़्तियार नहीं रखते (और फिर शिर्क के रद्द और तौहीद के साबित करने के बाद ईमान वालों और शिर्क वालों और ख़ुद ईमान व शिर्क के दरमियान फ़र्क़ के इज़हार के लिये) आप यह (भी) कहिये कि क्या अन्धा और आँखों वाला बराबर हो सकता है? (यह मिसाल है मुश्रिक और ईमान वाले की) या कहीं अंधेरा और रोशनी बराबर हो सकती है? (यह मिसाल है शिर्क और तौहीद की), या उन्होंने अल्लाह के ऐसे शरीक क़रार दे रखे हैं कि उन्होंने भी (किसी चीज़ को) पैदा किया हो जैसे कि ख़ुदा (उनके मानने के मुवाफ़िक़ भी) पैदा करता है, फिर (इस वजह से) उनको (दोनों का) पैदा करना एक सा मालूम हुआ हो (और उससे दलील पकड़ी हो कि जब दोनों बराबर तौर पर ख़ालिक़ हैं तो दोनों बराबर तौर पर माबूद भी होंगे। इसके मुताल्लिक़ भी) आप (ही) कह दीजिये कि अल्लाह ही हर चीज़ का पैदा करने वाला है और वही (अपनी ज़ात और कामिल सिफ़ात में) वाहिद है (और सब मख़्लूक़ात पर) ग़ालिब है।

अल्लाह तआ़ला ने आसमानों से पानी नाज़िल फ़रमाया, फिर (उस पानी से) नाले (भरकर) अपनी मिक़्दार "यानी मात्रा" के मुवाफ़िक़ चलने लगे (यानी छोटे नाले में थोड़ा पानी और बड़े नाले में ज़्यादा पानी) फिर वह सैलाब (का पानी) कूड़े-कबाड़ को बहा लाया जो उस (पानी) की (सतह) के ऊपर (आ रहा) है। (एक कूड़ा करकट तो यह है) और जिन चीज़ों को आग के अन्दर (रखकर) ज़ेवर और असबाब (बरतन वग़ैरह) बनाने की ग़र्ज़ से तपाते हैं उसमें भी ऐसा ही मैल-कुचैल (ऊपर आ जाता) है (पस इन दो मिसालों में दो चीज़ें हैं, एक कारामद चीज़ कि असल पानी और असल माल है और एक नाकारा चीज़ कि कूड़ा-करकट मैल-कुचैल है। ग़र्ज़ कि) अल्लाह तआ़ला हक़ (यानी तौहीद व ईमान वग़ैरह) और बातिल (यानी कुफ़्र व शिर्क वग़ैरह) की इसी तरह की मिसाल बयान कर रहा है (जिसकी तकमील अगले मज़मून से होती है) सो (इन दोनों ज़िक्र हुई मिसालों में) जो मैल-कुचैल था वह तो फेंक दिया जाता है और जो चीज़

लोगों के लिये कारामद है वह दुनिया में (नफ़ा पहुँचाने के साथ) रहती है (और जिस तरह हक़ व बातिल की मिसाल बयान की गई) अल्लाह तआ़ला इसी तरह (हर ज़रूरी मज़मून में) मिसालें बयान किया करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हासिल दोनों मिसालों का यह है कि जैसे इन मिसालों में मैल-कुचैल कुछ ही वक़्त के लिये असली चीज़ के ऊपर नज़र आता है लेकिन अन्जामकार वह फेंक दिया जाता है और असली चीज़ रह जाती है, इसी तरह बातिल (ग़ैर-हक़) अगरचे चन्द दिन हक़ के ऊपर ग़ालिब नज़र आये, लेकिन आख़िरकार बातिल मिट जाता और झुक जाता है, और हक़ बाक़ी और साबित रहता है। यही मज़मून तफ़सीरे जलालैन में बयान किया गया है।

لِلَّذِينَ اسْتَجَابُوا لِرَبِّهِمُ الْحُسْنَىٰ ۚ وَالَّذِينَ لَمْ يَسْتَجِيبُوا لَهُ لَوْ أَنَّ لَهُم مَّا
فِي الْأَرْضِ جَمِيعًا وَمِثْلَهُ مَعَهُ لَافْتَدَوْا بِهِ ۚ أُولَٰئِكَ لَهُمْ سُوءُ الْحِسَابِ ۙ وَمَأْوَاهُمْ جَهَنَّمُ ۖ وَ
بِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٨﴾ أَفَمَن يَعْلَمُ أَنَّمَا أُنزِلَ إِلَيْكَ مِن رَّبِّكَ الْحَقُّ كَمَنْ هُوَ أَعْمَىٰ ۚ إِنَّمَا يَتَذَكَّرُ
أُولُو الْأَلْبَابِ ﴿١٩﴾ الَّذِينَ يُوفُونَ بِعَهْدِ اللَّهِ وَلَا يَنقُضُونَ الْمِيثَاقَ ﴿٢٠﴾ وَالَّذِينَ يَصِلُونَ مَا أَمَرَ اللَّهُ
بِهِ أَن يُوصَلَ وَيَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ وَيَخَافُونَ سُوءَ الْحِسَابِ ﴿٢١﴾ وَالَّذِينَ صَبَرُوا ابْتِغَاءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ وَ
أَقَامُوا الصَّلَاةَ وَأَنفَقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ سِرًّا وَعَلَانِيَةً وَيَدْرَءُونَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ أُولَٰئِكَ لَهُمْ عُقْبَى
الدَّارِ ﴿٢٢﴾ جَنَّاتُ عَدْنٍ يَدْخُلُونَهَا وَمَن صَلَحَ مِنْ آبَائِهِمْ وَأَزْوَاجِهِمْ وَذُرِّيَّاتِهِمْ ۖ وَالْمَلَائِكَةُ يَدْخُلُونَ
عَلَيْهِم مِّن كُلِّ بَابٍ ﴿٢٣﴾ سَلَامٌ عَلَيْكُم بِمَا صَبَرْتُمْ ۚ فَنِعْمَ عُقْبَى الدَّارِ ﴿٢٤﴾

लिल्लज़ीनस्तजाबू लिरब्बिहिमुल्-हुस्ना, वल्लज़ी-न लम् यस्तजीबू लहू लौ अन्-न लहुम् मा फ़िल्अर्ज़ि जमीअ़ंव्-व मिस्लहू म-अ़हू लफ़्तदौ बिही, उलाइ-क लहुम् सूउल्-हिसाबि व मअ्वाहुम् ज-हन्नमु, व बिअ्सल्-मिहाद। (18)

जिन्होंने माना अपने रब का हुक्म उनके वास्ते भलाई है, और जिन्होंने उसका हुक्म न माना अगर उनके पास हो जो कुछ कि ज़मीन में है सारा और इतना ही उसके साथ और तो सब देवें अपने बदले में, उन लोगों के लिये है बुरा हिसाब, और ठिकाना उनका दोज़ख़ है, और वह बुरी आराम की जगह है। (18)

अ-फ़मंय्यअ़्लमु अन्नमा उन्ज़ि-ल इलै-क मिर्रब्बिकल्-हक़्क़ु क-मन् हु-व अअ़्मा, इन्नमा य-तज़क्करु उलुल्-अल्बाब (19) अल्लज़ी-न यूफ़ू-न बिअ़ह्दिल्लाहि व ला यन्क़ुज़ूनल्-मीसाक़ (20) वल्लज़ी-न यसिलू-न मा अ-मरल्लाहु बिही अंय्यूस-ल व यख़्शौ-न रब्बहुम् व यख़ाफ़ू-न सूअल्-हिसाब (21) वल्लज़ी-न स-बरुब्तिग़ा-अ वज्हि रब्बिहिम् व अक़ामुस्सला-त व अन्फ़क़ू मिम्मा रज़क़्नाहुम् सिर्रंव्-व अ़लानि-यतंव्-व यद्रऊ-न बिल्ह-स-नतिस्सय्यि-अ-त उलाइ-क लहुम् अ़ुक़्बद्दार (22) जन्नातु अ़द्निंय्-यद्ख़ुलू-नहा व मन् स-ल-ह मिन् आबाइहिम् व अज़्वाजिहिम् व ज़ुर्रिय्यातिहिम् वल्मलाइ-कतु यद्ख़ुलू-न अ़लैहिम् मिन् कुल्लि बाब (23) सलामुन् अ़लैकुम् बिमा सबर्तुम् फ़निअ़्-म अ़ुक़्बद्दार (24)

भला जो शख़्स जानता है कि जो कुछ उतरा तुझ पर तेरे रब से हक़ है, बराबर हो सकता है उसके जो कि अंधा हो, समझते वही हैं जिनको अ़क्ल है। (19) वे लोग जो पूरा करते हैं अल्लाह के अ़हद को और नहीं तोड़ते उस अ़हद को। (20) और वे लोग जो मिलाते हैं जिसको अल्लाह ने फ़रमाया मिलाना और डरते हैं अपने रब से, और अन्देशा रखते हैं बुरे हिसाब का। (21) और वे लोग जिन्होंने सब्र किया अपने रब की रज़ा के लिये और क़ायम रखी नमाज़ और ख़र्च किया हमारे दिये में से छुपे और ज़ाहिर, और करते हैं बुराई के मुक़ाबले में भलाई, उन लोगों के लिये है आख़िरत का घर। (22) बाग़ हैं रहने के दाख़िल होंगे उनमें, और जो नेक हुए उनके बाप-दादाओं में और बीवियों में और औलाद में, और फ़रिश्ते आयेंगे उनके पास हर दरवाज़े से। (23) कहेंगे सलामती तुम पर बदले में इसके कि तुमने सब्र किया, सो ख़ूब मिला आक़िबत का घर। (24)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जिन लोगों ने अपने रब का कहना मान लिया (और ईमान और फ़रमाँबरदारी को इख़्तियार कर लिया) उनके वास्ते अच्छा बदला (यानी जन्नत मुक़र्रर) है, और जिन लोगों ने उसका कहना न माना (और कुफ़्र व नाफ़रमानी पर क़ायम रहे) उनके पास (क़ियामत के दिन) अगर तमाम

दुनिया भर की चीज़ें (मौजूद) हों और (बल्कि) उसके साथ उसी के बराबर और भी (माल व दौलत) हो, तो वह सब अपनी रिहाई के लिये दे डालें। उन लोगों का सख़्त हिसाब होगा (जिसको दूसरी आयत में 'हिसाब-ए-असीर' फ़रमाया है) और उनका ठिकाना (हमेशा के लिये) दोज़ख़ है, और वह बुरा ठिकाना है।

जो शख़्स यह यक़ीन रखता हो कि जो कुछ आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के रब की तरफ़ से आप पर नाज़िल हुआ है वह सब हक़ है, क्या ऐसा शख़्स उसकी तरह हो सकता है जो कि (इस इल्म से बिल्कुल) अन्धा है (यानी काफ़िर व मोमिन बराबर नहीं), पस नसीहत तो समझदार लोग ही क़ुबूल करते हैं। (और) ये (समझदार) लोग ऐसे हैं कि अल्लाह से जो कुछ इन्होंने अ़हद किया है उसको पूरा करते हैं और (उस) अ़हद को तोड़ते नहीं। और ये ऐसे हैं कि अल्लाह तआ़ला ने जिन ताल्लुक़ात के क़ायम रखने का हुक्म किया है उनको क़ायम रखते हैं, और अपने रब से डरते रहते हैं, और सख़्त अ़ज़ाब का अन्देशा रखते हैं (जो काफ़िरों के साथ ख़ास होगा, इसलिये कुफ़्र से बचते हैं)। और ये लोग ऐसे हैं कि अपने रब की रज़ामन्दी को ढूँढते हुए (दीने हक़ पर) मज़बूत रहते हैं, और नमाज़ की पाबन्दी रखते हैं, और जो कुछ हमने उनको रोज़ी दी है उसमें से चुपके से भी और ज़ाहिर करके भी (जैसा मौक़ा होता है) ख़र्च करते हैं। और (लोगों के) बुरे व्यवहार को (जो उनके साथ किया जाये) अच्छे सुलूक से टाल देते हैं (यानी कोई उनके साथ बुरा बर्ताव करे तो कुछ ख़्याल नहीं करते बल्कि उसके साथ अच्छा सुलूक करते हैं), उस जहान में (यानी आख़िरत में) नेक अन्जाम उन्हीं लोगों के वास्ते है, यानी हमेशा रहने की जन्नतें जिनमें वे लोग भी दाख़िल होंगे और उनके माँ-बाप और बीवियाँ और औलाद में से जो (जन्नत के) लायक़ (यानी मोमिन) होंगे (अगरचे वे उनके दर्जे के न हों) वे भी (जन्नत में उनकी बरकत से उन्हीं के दर्जों में) दाख़िल होंगे, और फ़रिश्ते उनके पास हर (तरफ़ के) दरवाज़े से आते होंगे (और यह कहते होंगे) कि तुम (हर आफ़त और ख़तरे से) सही-सलामत रहोगे इसकी बदौलत कि तुम (दीने हक़ पर) मज़बूत रहे थे, सो इस जहान में तुम्हारा अन्जाम बहुत अच्छा है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में हक़ व बातिल को मिसालों के ज़रिये वाज़ेह किया गया था। इन आयतों में हक़ वालों और ग़ैर-हक़ वालों की निशानियों व सिफ़ात और उनके अच्छे और बुरे आमाल और उनकी जज़ा व सज़ा का बयान है।

पहली आयत में अल्लाह के अहकाम की तामील व इताअ़त करने वालों के लिये अच्छे बदले का और नाफ़रमानी करने वालों के लिये सख़्त अ़ज़ाब का ज़िक्र है।

दूसरी आयत में इन दोनों की मिसाल बीना (देखने वाले) और नाबीना (अंधे) से दी गई है, और इसके आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّمَا يَتَذَكَّرُ اُولُوا الْاَلْبَابِ○

यानी अगरचे बात स्पष्ट है मगर इसको वही समझ सकते हैं जो अ़क्ल वाले हैं, जिनकी अ़क्लें लापरवाही और नाफ़रमानी ने बेकार कर रखी हैं वे इतने बड़े स्पष्ट फ़र्क़ को भी नहीं समझते।

तीसरी आयत से इन दोनों फ़रीक़ों के ख़ास-ख़ास आमाल और निशानियों का बयान शुरू हुआ है। पहले अल्लाह के अहकाम के मानने वालों की सिफ़ात यह ज़िक्र फ़रमाई हैं:

اَلَّذِيْنَ يُوْفُوْنَ بِعَهْدِ اللّٰهِ

यानी ये वे लोग हैं जो अल्लाह तआ़ला से किये हुए अ़हद को पूरा करते हैं। इससे मुराद वो तमाम अ़हद व पैमान हैं जो अल्लाह तआ़ला ने अपने बन्दों से लिये हैं, जिनमें सबसे पहला अपने रब होने का वह अ़हद है जो कायनात के पहले दिन में तमाम रूहों को हाज़िर करके लिया गया था:

اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ

यानी "क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ?" जिसके जवाब में सब ने एक ज़बान होकर कहा था:

بَلٰى

यानी "क्यों नहीं" आप ज़रूर हमारे रब हैं। इसी तरह तमाम अल्लाह के तमाम अहकाम की इताअ़त, तमाम फ़राईज़ की अदायेगी और नाजायज़ चीज़ों से बचने की अल्लाह की तरफ़ से वसीयत और बन्दों की तरफ़ से उसका इक़रार क़ुरआन की अनेक आयतों में बयान हुआ है।

दूसरी सिफ़तः

وَلَا يَنْقُضُوْنَ الْمِيْثَاقَ

है। यानी वे किसी अ़हद व पैमान की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) नहीं करते। इसमें वो अ़हद व पैमान भी दाख़िल हैं जो बन्दे और अल्लाह तआ़ला के बीच हैं, जिनका ज़िक्र अभी पहले जुमले में 'अ़हदुल्लाहि' के अलफ़ाज़ से किया गया है, और वो अ़हद भी जो उम्मत के लोग अपने नबी व रसूल से करते हैं, और वे मुआ़हदे भी जो एक इनसान दूसरे इनसान के साथ करता है।

इमाम अबू दाऊद ने हज़रत औ़फ़ इब्ने मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह हदीस नक़ल की है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम से इस पर अ़हद और बैअ़त ली कि अल्लाह के साथ किसी को शरीक न करेंगे और पाँच वक़्त नमाज़ को पाबन्दी से अदा करेंगे, और अपने अमीरों की इताअ़त करेंगे और किसी इनसान से किसी चीज़ का सवाल न करेंगे।

जो लोग इस बैअ़त में शरीक थे उनका हाल अ़हद की पाबन्दी में यह था कि अगर घोड़े पर सवारी के वक़्त उनके हाथ से कोड़ा गिर जाता तो किसी इनसान से न कहते कि यह कोड़ा उठा दो, बल्कि ख़ुद सवारी से उतरकर उठाते थे।

यह सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के दिलों में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत व अ़ज़मत और फ़रमाँबरदारी के जज़्बे का असर था, वरना यह ज़ाहिर था कि इस तरह के सवाल से मना फ़रमाना मक़सूद न था। जैसे हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु एक मर्तबा मस्जिद में दाख़िल हो रहे थे देखा कि आप सल्ल. ख़ुतबा दे रहे हैं और इत्तिफ़ाक़ से उनके मस्जिद में दाख़िल होने के वक़्त आपकी ज़बाने मुबारक से यह कलिमा निकला कि "बैठ जाओ" अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद जानते थे कि इसका यह मतलब नहीं कि सड़क पर या बेमौक़ा किसी जगह कोई है तो वहीं बैठ जाये, मगर फ़रमाँबरदारी और हुक्म मानने के जज़्बे ने उनको आगे क़दम बढ़ाने न दिया, दरवाज़े से बाहर ही जहाँ यह आवाज़ कानों में पड़ी उसी जगह बैठ गये।

तीसरी सिफ़त अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदारों की यह बतलाई गईः

وَالَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ

"यानी ये लोग ऐसे हैं कि अल्लाह तआ़ला ने जिन ताल्लुक़ात के क़ायम रखने का हुक्म दिया है उनको क़ायम रखते हैं।" इसकी मशहूर तफ़सीर तो यही है कि रिश्तेदारी के ताल्लुक़ात क़ायम रखने और उनके तक़ाज़ों पर अ़मल करने का अल्लाह तआ़ला ने जो हुक्म दिया है ये लोग उन ताल्लुक़ात को क़ायम रखते हैं। कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद यह है कि ये लोग ईमान के साथ नेक अ़मल को या आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआने करीम पर ईमान के साथ पिछले नबियों और उनकी किताबों पर ईमान को मिला देते हैं।

चौथी सिफ़त यह बयान फ़रमाईः

وَيَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ

यानी ये लोग अपने रब से डरते हैं। यहाँ लफ़्ज़ ख़ौफ़ के बजाय ख़शिय्यत का लफ़्ज़ इस्तेमाल करने में इस तरफ़ इशारा है कि अल्लाह तआ़ला से उनका ख़ौफ़ इस तरह का नहीं जैसे फाड़ खाने वाले जानवर या तकलीफ़ देने वाले इनसान से तबई तौर पर ख़ौफ़ हुआ करता है, बल्कि ऐसा ख़ौफ़ है जैसे औलाद को माँ-बाप का, शागिर्द को उस्ताद का ख़ौफ़ आ़दतन होता है, कि उसका मंशा किसी तकलीफ़ पहुँचाने का ख़ौफ़ नहीं होता बल्कि सम्मान व मुहब्बत की वजह से ख़ौफ़ इसका होता है कि कहीं हमारा कोई क़ौल व फ़ेल अल्लाह तआ़ला के नज़दीक नापसन्द और मक्रूह न हो जाये। इसी लिये तारीफ़ के मक़ाम में जहाँ कहीं अल्लाह तआ़ला के ख़ौफ़ का ज़िक्र है उमूमन वहाँ यही लफ़्ज़ यानी ख़शिय्यत इस्तेमाल हुआ है, क्योंकि ख़शिय्यत उसी ख़ौफ़ को कहा जाता है जो बड़ाई व मुहब्बत की वजह से पैदा होता है। इसी लिये अगले जुमले में जहाँ हिसाब की सख़्ती का ख़ौफ़ बयान किया गया है वहाँ ख़शिय्यत का लफ़्ज़ नहीं बल्कि ख़ौफ़ ही का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है। इरशाद फ़रमायाः

وَيَخَافُوْنَ سُوْٓءَ الْحِسَابِ۝

"यानी ये लोग बुरे हिसाब से डरते हैं।" बुरे हिसाब से मुराद हिसाब में सख़्ती और गहन

पूछताछ है। हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि इनसान की निजात तो अल्लाह की रहमत से हो सकती है, कि आमाल के हिसाब के वक़्त सरसरी तौर पर और माफ़ी व दरगुज़र से काम लिया जाये, वरना जिस शख़्स से भी पूरा-पूरा ज़र्रे-ज़र्रे का हिसाब ले लिया जाये उसका अ़ज़ाब से बचना मुम्किन नहीं। क्योंकि ऐसा कौन है जिससे कोई गुनाह व ख़ता कभी न हुआ हो? यह हिसाब की सख़्ती का ख़ौफ़ नेक व फ़रमाँबरदार लोगों की पाँचवीं सिफ़त है।

छठी सिफ़त यह बयान फ़रमाईः

وَالَّذِيْنَ صَبَرُوا ابْتِغَآءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ

"यानी वे लोग जो ख़ालिस अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलब करने के लिये सब्र करते हैं।"

सब्र के मायने अ़रबी भाषा में उस मफ़्हूम से बहुत आ़म हैं जो उर्दू भाषा में समझा जाता है कि किसी मुसीबत और तकलीफ़ पर सब्र करें। क्योंकि इसके असली मायने ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ों से परेशान न होना, बल्कि साबित-क़दमी के साथ अपने काम पर लगे रहना है, इसी लिये इसकी दो क़िस्में बयान की जाती हैं- एक 'सब्र अ़लल्-इताअ़त' यानी अल्लाह तआ़ला के अहकाम की तामील पर जमे रहना, दूसरे 'सब्र अ़निल्-मासियत' यानी गुनाहों से बचने पर साबित-क़दम रहना।

सब्र के साथ 'इब्तिग़ा-अ वज्हि रब्बिहिम' की क़ैद (शर्त) ने यह बतलाया कि आ़म सब्र कोई फ़ज़ीलत की चीज़ नहीं, क्योंकि कभी न कभी तो बेसब्रे इनसान को भी अन्जामकार एक मुद्दत के बाद सब्र आ ही जाता है, जो सब्र ग़ैर-इख़्तियारी हो उसकी कोई ख़ास फ़ज़ीलत नहीं, न ऐसी ग़ैर-इख़्तियारी कैफ़ियत का अल्लाह तआ़ला किसी को हुक्म देते हैं। इसी लिये हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اَلصَّبْرُ عِنْدَ الصَّدْمَةِ الْاُوْلٰى

"यानी असली और मोतबर सब्र तो वही है जो सदमे की शुरूआ़त के वक़्त इख़्तियार कर लिया जाये, वरना बाद में तो कभी न कभी जबरी (ग़ैर-इख़्तियारी) तौर पर इनसान को सब्र आ ही जाता है। बल्कि क़ाबिले तारीफ़ व प्रशंसा वह सब्र है कि अपने इख़्तियार से ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ को बरदाश्त करे, चाहे वह फ़राईज़ व वाजिबात की अदायेगी हो या हराम व नापसन्दीदा चीज़ों से बचना हो।

इसी लिये अगर कोई शख़्स चोरी की नीयत से किसी मकान में दाख़िल हो गया मगर वहाँ चोरी का मौक़ा न मिला, सब्र करके वापस आ गया तो यह ग़ैर-इख़्तियारी सब्र कोई तारीफ़ व सवाब की चीज़ नहीं, सवाब जब है कि गुनाह से बचना ख़ुदा के ख़ौफ़ और उसकी रज़ा चाहने के सबब से हो।

सातवीं सिफ़त हैः

اَقَامُوا الصَّلٰوةَ

'इक़ामत-ए-सलात' के मायने नमाज़ को उसके पूरे आदाब व शर्तों और दिली तवज्जोह के

साथ अदा करना है, सिर्फ़ नमाज़ पढ़ना नहीं। इसी लिये क़ुरआने करीम में उमूमन नमाज़ का हुक्म 'इक़ामत-ए-सलात' के अलफ़ाज़ से दिया गया है।

आठवीं सिफ़त है:

وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً.

"यानी वे लोग जो अल्लाह के दिये हुए रिज़्क़ में से कुछ अल्लाह के नाम पर भी ख़र्च करते हैं।" इसमें इशारा किया गया कि तुम से ज़कात वग़ैरह के जिस माल का मुतालबा अल्लाह तआ़ला करता है वह कुछ तुम से नहीं माँगता बल्कि अपने ही दिये हुए रिज़्क़ का कुछ हिस्सा वह भी सिर्फ़ अढ़ाई फ़ीसद जैसी मामूली व हक़ीर मात्रा में आप से माँगा जाता है, जिसके देने में आपको तबई तौर पर कोई पसोपेश (संकोच और दुविधा) न होनी चाहिये।

माल को अल्लाह की राह में ख़र्च करने के साथ 'सिर्रंव्-व अ़लानियतन्' (चुपके से और खुलेआ़म) की क़ैद से मालूम हुआ कि सदक़ा व ख़ैरात में हर जगह छुपाकर देना ही मुराद नहीं बल्कि कई बार इसका इज़्हार भी दुरुस्त और सही होता है। इसीलिये उलेमा ने फ़रमाया कि ज़कात और वाजिब सदक़ों का ऐलान व इज़्हार ही अफ़ज़ल व बेहतर है, उसका छुपाना मुनासिब नहीं, ताकि दूसरे लोगों को भी शौक़ व दिलचस्पी और तालीम व हिदायत हो, अलबत्ता नफ़्ली सदक़ों का ख़ुफ़िया देना अफ़ज़ल व बेहतर है। जिन हदीसों में छुपाकर देने की फ़ज़ीलत आई है वो नफ़्ली सदक़ों ही के बारे में हैं।

नवीं सिफ़त है:

يَدْرَءُوْنَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ.

यानी ये लोग बुराई को भलाई से, दुश्मनी को दोस्ती से, ज़ुल्म को माफ़ी व दरगुज़र से दूर करते हैं। बुराई के जवाब में बुराई से नहीं पेश आते। और कुछ हज़रात ने इसके यह मायने बयान फ़रमाये हैं कि गुनाह को नेकी से दूर करते हैं, यानी अगर किसी वक़्त कोई ख़ता व गुनाह हो जाता है तो उसके बाद नेकी व इबादत की कसरत और एहतिमाम इतना करते हैं कि उससे पिछला गुनाह मिट जाता है। हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु को वसीयत फ़रमाई कि "बदी के बाद नेकी कर लो तो वह बदी को मिटा देगी।" मुराद यह है कि जब उस बदी और गुनाह पर नादिम होकर तौबा कर ली और उसके बाद नेक अ़मल किया तो यह नेक अ़मल पिछले गुनाह को मिटा देगा, बग़ैर शर्मिन्दगी और तौबा के गुनाह के बाद कोई नेक अ़मल कर लेना गुनाह की माफ़ी के लिये काफ़ी नहीं होता।

अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदारों की ये नौ सिफ़तें बयान करने के बाद उनकी जज़ा यह बयान फ़रमाई:

اُولٰٓئِكَ لَهُمْ عُقْبَى الدَّارِ ۝

दार से मुराद आख़िरत का घर है। यानी उन्हीं लोगों के लिये आख़िरत के घर की फ़लाह है। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इस जगह दार से मुराद दुनिया का घर है, और मुराद यह

है कि नेक लोगों को अगरचे इस दुनिया में तकलीफ़ें भी पेश आती हैं मगर अन्जामकार दुनिया में भी फ़लाह व कामयाबी उन्हीं का हिस्सा होता है।

आगे इसी 'उक़्बद्दारि' यानी आख़िरत के घर की फ़लाह का बयान है कि वो ''जन्नाते अ़द्न'' होंगी जिनमें वे दाख़िल होंगे। **अ़दन** के मायने ठहरने और क़रार पकड़ने के हैं, मुराद यह है कि उन जन्नतों से किसी वक़्त उनको निकाला न जायेगा बल्कि उनमें उनका रहना और बसना हमेशा के लिये होगा। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि अ़दन जन्नत के बीच के हिस्से का नाम है जो जन्नत के मक़ामात में भी आला मक़ाम है।

इसके बाद उन हज़रात के लिये एक और इनाम यह ज़िक्र फ़रमाया गया कि अल्लाह का यह इनाम सिर्फ़ उन लोगों की ज़ात तक सीमित नहीं होगा बल्कि उनके बाप-दादा और उनकी बीवियों और औलाद को भी उसमें हिस्सा मिलेगा, शर्त यह है कि वे नेक हों, जिसका अदना दर्जा यह है कि मुसलमान हों, और मुराद यह है कि उन लोगों के बाप-दादा और उनकी बीवियों का अपना अ़मल अगरचे इस मक़ाम पर पहुँचने के क़ाबिल न था मगर अल्लाह के मक़बूल बन्दों की रियायत और बरकत से उनको भी इसी ऊँचे मक़ाम पर पहुँचा दिया जायेगा।

इसके बाद आख़िरत के जहान में उनकी फ़लाह व कामयाबी का मज़ीद बयान यह है कि फ़रिश्ते हर दरवाज़े से उनको सलाम करते हुए दाख़िल होते हैं, और कहते हैं कि तुम्हारे सब्र की वजह से तमाम तकलीफ़ों से सलामती है, और यह कैसा अच्छा अन्जाम है आख़िरत के घर का।

وَالَّذِيْنَ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَ اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مِيْثَاقِهٖ وَيَقْطَعُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ وَ
يُفْسِدُوْنَ فِي الْاَرْضِ ۙ اُولٰٓئِكَ لَهُمُ اللَّعْنَةُ وَلَهُمْ سُوْٓءُ الدَّارِ ۝ اَللّٰهُ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَّشَآءُ وَ
يَقْدِرُ ۭ وَفَرِحُوْا بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۭ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا مَتَاعٌ ۝ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْلَآ
اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ ۭ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ يُضِلُّ مَنْ يَّشَآءُ وَيَهْدِيْٓ اِلَيْهِ مَنْ اَنَابَ ۝ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
وَتَطْمَىِٕنُّ قُلُوْبُهُمْ بِذِكْرِ اللّٰهِ ۭ اَلَا بِذِكْرِ اللّٰهِ تَطْمَىِٕنُّ الْقُلُوْبُ ۝ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
طُوْبٰى لَهُمْ وَحُسْنُ مَاٰبٍ ۝ كَذٰلِكَ اَرْسَلْنٰكَ فِيْٓ اُمَّةٍ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهَآ اُمَمٌ لِّتَتْلُوَا۟ عَلَيْهِمُ
الَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ وَهُمْ يَكْفُرُوْنَ بِالرَّحْمٰنِ ۭ قُلْ هُوَ رَبِّيْ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ
مَتَابِ ۝

वल्लज़ी-न यन्क़ुज़ू-न अ़ह्दल्लाहि मिम्-बअ़्दि मीसाक़िही व यक़्तअ़ू-न मा अ-मरल्लाहु बिही अंय्यूस-ल व	और जो लोग तोड़ते हैं अ़हद अल्लाह का मज़बूत करने के बाद और काटते हैं उस चीज़ को जिसको फ़रमाया अल्लाह ने जोड़ना, और फ़साद उठाते हैं मुल्क में,

युफ़्सिदू-न फ़िल्अर्ज़ि उलाइ-क लहुमुल्लअ्-नतु व लहुम् सूउद्दार (25) अल्लाहु यब्सुतुर्रिज़्-क़ लिमंय्यशा-उ व यक़्दिरु, व फ़रिहू बिल्हयातिद्दुन्या, व मल्हयातुद्दुन्या फ़िल्-आख़िरति इल्ला मताअ् (26) ✿	ऐसे लोग उनके वास्ते है लानत और उनके लिये है बुरा घर। (25) और अल्लाह कुशादा करता है रोज़ी जिसको चाहे और तंग करता है, और फ़िदा हैं दुनिया की ज़िन्दगी पर, और दुनिया की ज़िन्दगी कुछ नहीं आख़िरत के आगे मगर मामूली से फ़ायदे की चीज़। (26) ✿
व यक़ूलुल्लज़ी-न क-फ़रू लौ ला उन्ज़ि-ल अ़लैहि आयतुम् मिर्रब्बिही, क़ुल् इन्नल्ला-ह युज़िल्लु मंय्यशा-उ व यह्दी इलैहि मन् अनाब (27) अल्लज़ी-न आमनू व तत्मइन्नु क़ुलूबुहुम् बिज़िक्रिल्लाहि, अला बिज़िक्रिल्लाहि तत्मइन्नुल्-क़ुलूब (28) अल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति तूबा लहुम् व हुस्नु मआब (29) कज़ालि-क अर्सल्ना-क फ़ी उम्मतिन् क़द् ख़लत् मिन् क़ब्लिहा उ-ममुल्-लितत्लु-व अ़लैहिमुल्लज़ी औहैना इलै-क व हुम् यक्फ़ुरू-न बिर्रह्मानि, क़ुल् हु-व रब्बी ला इला-ह इल्ला हु-व अ़लैहि तवक्कल्तु व इलैहि मताब (30)	और कहते हैं काफ़िर- क्यों न उतरी उस पर कोई निशानी उसके रब से? कह दे अल्लाह गुमराह करता है जिसको चाहे, और राह दिखलाता है अपनी तरफ़ उसको जो रुजू हुआ। (27) वे लोग जो ईमान लाये और चैन पाते हैं उनके दिल अल्लाह की याद से। सुनता है! अल्लाह की याद ही से चैन पाते हैं दिल। (28) जो लोग ईमान लाये और काम किये अच्छे, ख़ुशहाली है उनके वास्ते और अच्छा ठिकाना। (29) इसी तरह तुझको भेजा हमने एक उम्मत में कि गुज़र चुकी उससे पहले बहुत उम्मतें ताकि सुना दे तू उनको जो हुक्म भेजा हमने तेरी तरफ़, और वे इनकारी होते हैं रहमान से, तू कह दे वही मेरा रब है, किसी की बन्दगी नहीं उसके सिवा, उसी पर मैंने भरोसा किया है और उसी की तरफ़ आता हूँ रुजू करके। (30)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जो लोग ख़ुदा तआ़ला के मुआ़हदों को उनकी मज़बूती के बाद तोड़ते हैं, और ख़ुदा

तआला ने जिन ताल्लुक़ात "और रिश्तों" के क़ायम रखने का हुक्म फ़रमाया है उनको तोड़ते हैं, और दुनिया में फ़साद करते हैं, ऐसे लोगों पर लानत होगी, और उनके लिये उस जहान में ख़राबी होगी (यानी ज़ाहिरी माल व दौलत को देखकर यह धोखा न खाना चाहिये कि इन लोगों पर रहमत बरस रही है, क्योंकि रिज़्क़ की तो यह कैफ़ियत है कि) अल्लाह जिसको चाहे रिज़्क़ ज़्यादा देता है (और जिसके लिये चाहता है) तंगी कर देता है (और रहमत व ग़ज़ब का यह मेयार नहीं)। और ये (काफ़िर) लोग दुनियावी ज़िन्दगी पर (और इसके ऐश व आराम पर) इतराते हैं, और (इनका इतराना बिल्कुल फ़ुज़ूल और ग़लती है, क्योंकि) यह दुनियावी ज़िन्दगी (और इसकी ऐश व मस्ती) आख़िरत के मुक़ाबले में सिवाय एक मामूली फ़ायदे के और कुछ भी नहीं।

और ये काफ़िर लोग (आपकी नुबुव्वत में ताने देने और एतिराज़ करने के लिये यूँ) कहते हैं कि उन (पैग़म्बर) पर कोई मोजिज़ा (हमारे फ़रमाईशी मोजिज़ों में से) उनके रब की तरफ़ से क्यों नाज़िल नहीं किया गया? आप कह दीजिये कि वाक़ई (तुम्हारी इन बेहूदा फ़रमाईशों से साफ़ मालूम होता है कि) अल्लाह तआला जिसको चाहें गुमराह कर देते हैं (मालूम होने की वजह ज़ाहिर है कि बावजूद काफ़ी मोजिज़ों के जिनमें सबसे अ़ज़ीम क़ुरआन है फिर फ़ुज़ूल बातें करते हैं, जिससे मालूम होता है कि क़िस्मत ही में गुमराही लिखी है) और (जिस तरह उन इनकार करने वालों को क़ुरआन जो अ़ज़ीम मोजिज़ों में से है हिदायत के लिये काफ़ी न हुआ और गुमराही उनका नसीब बनी, इसी तरह) जो शख़्स उनकी तरफ़ मुतवज्जह होता है (और हक़ रास्ते का तालिब होता है जिसका ज़िक्र अभी आगे आयत 28 व 29 में आता है) उसको अपनी तरफ़ (रसाई देने के लिये) हिदायत कर देते हैं (और गुमराही से बचा लेते हैं)। इससे मुराद वे लोग हैं जो ईमान लाये और अल्लाह के ज़िक्र से (जिस ज़िक्र में क़ुरआन अहम मक़ाम रखता है) उनके दिलों को इत्मीनान होता है (जिसकी बड़ी फ़र्द ईमान है, यानी वे क़ुरआन के बेमिसाल होने को नुबुव्वत के लिये काफ़ी दलील समझते हैं और उल्टी-सीधी फ़रमाईश नहीं करते। फिर ख़ुदा की याद और उसकी फ़रमाँबरदारी में उनको ऐसी रुचि होती है कि काफ़िरों की तरह दुनियावी ज़िन्दगी के मामूली फ़ायदे और बेहक़ीक़त चीज़ों की तरफ़ उन्हें दिलचस्पी और मैलान नहीं होता। और) ख़ूब समझ लो कि अल्लाह के ज़िक्र (की ऐसी ही ख़ासियत है कि इस) से दिलों को इत्मीनान हो जाता है (यानी जिस दर्जे का ज़िक्र हो उसी दर्जे का इत्मीनान। चुनाँचे क़ुरआन से ईमान और नेक आमाल से नेकी करने का गहरा ताल्लुक़ और अल्लाह की तरफ़ तवज्जोह मयस्सर होती है। ग़र्ज़ कि) जो लोग ईमान लाये और नेक काम किये (जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ) उनके लिये (दुनिया में) ख़ुशहाली और (आख़िरत में) नेक अन्जाम होना है (जिसको दूसरी आयत में 'उम्दा और बेहतरीन ज़िन्दगी और उनके बेहतरीन अज्र' से ताबीर फ़रमाया है)।

(इसी तरह) हमने आपको एक ऐसी उम्मत में रसूल बनाकर भेजा है कि उस (उम्मत) से पहले और बहुत-सी उम्मतें गुज़र चुकी हैं (और आपको उनकी तरफ़ इसलिये रसूल बनाकर भेजा है) ताकि आप उनको वह किताब पढ़कर सुना दें जो हमने आपके पास वही के ज़रिये भेजी है,

और (उनको चाहिये था कि इस ज़बरदस्त नेमत की क़द्र करते और इस किताब पर जो कि मोजिज़ा भी है ईमान ले आते, मगर) वे लोग ऐसे बड़े रहमत वाले की नाशुक्री करते हैं (और क़ुरआन पर ईमान नहीं लाते)। आप फ़रमा दीजिये कि (तुम्हारे ईमान न लाने से मेरा कोई नुक़सान नहीं, क्योंकि तुम ज़्यादा से ज़्यादा मेरी मुख़ालफ़त करोगे, सो इससे मुझको इसलिये अन्देशा नहीं कि) वह मेरा पालने वाला (और निगहबान) है, उसके सिवा कोई इबादत के क़ाबिल नहीं (पस लाज़िमी तौर पर वह कामिल सिफ़तों वाला होगा और हिफ़ाज़त के लिये काफ़ी होगा इसलिये) मैंने उसी पर भरोसा कर लिया और उसी के पास मुझको जाना है (ख़ुलासा यह कि मेरी हिफ़ाज़त के लिये तो अल्लाह तआ़ला ही काफ़ी है तुम मुख़ालफ़त करके मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते, मगर यक़ीनन तुम्हारा ही नुक़सान है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

रुकूअ़ के शुरू में तमाम इनसानों की दो क़िस्म करके बतलाया गया था कि उनमें कुछ लोग अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार हैं कुछ नाफ़रमान। फिर फ़रमाँबरदार बन्दों की चन्द सिफ़तें व निशानियाँ बयान की गईं और आख़िरत में उनके लिये बेहतरीन जज़ा का ज़िक्र किया गया।

अब दूसरी क़िस्म के लोगों की निशानियाँ और सिफ़तें और उनकी सज़ा का बयान इन आयतों में है। इसमें उन सरकश और नाफ़रमान बन्दों की एक ख़स्लत तो यह बतलाई गईः

اَلَّذِيْنَ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَ اللّٰهِ مِنْ ۢ بَعْدِ مِيْثَاقِهٖ

"यानी ये लोग अल्लाह तआ़ला के अ़हद को पुख़्ता करने के बाद तोड़ देते हैं।" अल्लाह तआ़ला के अ़हद में वह अ़हद भी दाख़िल है जो अज़ल (कायनात के पहले दिन) में हक़ तआ़ला के रब और अकेला माबूद होने के मुताल्लिक़ तमाम पैदा होने वाली रूहों से लिया गया था, जिसको काफ़िरों व मुश्रिकों ने दुनिया में आकर तोड़ डाला और अल्लाह के साथ सैंकड़ों हज़ारों रब और माबूद बना बैठे।

और वो तमाम अ़हद भी इसमें दाख़िल हैं जिनकी पाबन्दी 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' के अ़हद के सबब इनसान पर लाज़िम हो जाती है। क्योंकि कलिमा-ए-तय्यिबा ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाहि दर असल एक ज़बरदस्त मुआ़हदे (इक़रार) का उनवान है, जिसके तहत अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बतलाये हुए तमाम अहकाम की पाबन्दी और जिन चीज़ों से रोका गया है उनसे परहेज़ का अ़हद भी आ जाता है। इसलिये जब कोई इनसान अल्लाह के किसी हुक्म या रसूल के किसी हुक्म से मुँह मोड़ता है तो इस ईमान वाले अ़हद को तोड़ता है।

दूसरी ख़स्लत उन नाफ़रमान बन्दों की यह बतलाई गईः

وَيَقْطَعُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ

"यानी ये लोग उन ताल्लुक़ात को काट देते और तोड़ देते हैं जिनको क़ायम रखने का

अल्लाह तआ़ला ने हुक्म दिया था। इनमें इनसान का वह ताल्लुक़ भी शामिल है जो उसको अल्लाह जल्ल शानुहू और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से है। इस ताल्लुक़ का तोड़ना यही है कि उनके अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी की जाये, और रिश्तेदारी के वो ताल्लुक़ात भी इसमें शामिल हैं जिनको क़ायम रखने और उनके हुक़ूक़ अदा करने की क़ुरआने करीम में जगह जगह हिदायत की गई है।

अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी करने वाले इन हुक़ूक़ व ताल्लुक़ात को भी तोड़ डालते हैं जैसे माँ-बाप, भाई-बहन, पड़ोसी और दूसरे संबन्धियों के जो हुक़ूक़ अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनसान पर लागू किये हैं, ये लोग उनको अदा नहीं करते।

तीसरी ख़स्लत यह बतलाई है:

وَيُفْسِدُوْنَ فِى الْاَرْضِ

"यानी ये लोग ज़मीन में फ़साद मचाते हैं।" और यह तीसरी ख़स्लत दर हक़ीक़त पहली ही दो ख़स्लतों का नतीजा है, कि जो लोग अल्लाह तआ़ला और बन्दों के अ़हद की परवाह नहीं करते और किसी के हुक़ूक़ व ताल्लुक़ात की रियायत नहीं करते, ज़ाहिर है कि उनके आमाल और काम दूसरे लोगों के लिये नुक़सान और तकलीफ़ का सबब बनेंगे, लड़ाई झगड़े, क़त्ल व क़िताल के बाज़ार गर्म होंगे, यही ज़मीन का सबसे बड़ा फ़साद है।

विमुख और नाफ़रमान बन्दों की ये तीन ख़स्लतें बतलाने के बाद उनकी सज़ा यह बतलाई गई है:

اُولٰٓئِكَ لَهُمُ اللَّعْنَةُ وَلَهُمْ سُوْٓءُ الدَّارِo

"यानी उनके लिये लानत है और बुरा ठिकाना है।"

लानत के मायने अल्लाह की रहमत से दूर और मेहरूम होने के हैं, और ज़ाहिर है कि उसकी रहमत से दूर होना सब अ़ज़ाबों से बड़ा अ़ज़ाब और सारी मुसीबतों से बड़ी मुसीबत है।

अहकाम व हिदायतें

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में इनसानी ज़िन्दगी के विभिन्न क्षेत्रों के बारे में ख़ास-ख़ास अहकाम व हिदायतें आई हैं। कुछ स्पष्ट रूप से और कुछ इशारे से। जैसे:

(١) اَلَّذِيْنَ يُوْفُوْنَ بِعَهْدِ اللّٰهِ وَلَا يَنْقُضُوْنَ الْمِيْثَاقَo

से साबित हुआ कि जो मुआ़हदा किसी से लिया जाये उसकी पाबन्दी फ़र्ज़ और उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन करना) हराम है, चाहे वह मुआ़हदा अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से हो जैसे ईमान का अ़हद, या मख़्लूक़ात में से किसी से हो, चाहे मुसलमान से या काफ़िर से, अ़हद का तोड़ना बहरहाल हराम है।

(٢) وَالَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ

से मालूम हुआ कि इस्लाम की तालीम दुनिया से बिल्कुल कट जाने और तमाम ताल्लुक़ात को ख़त्म करने की नहीं, बल्कि ज़रूरी ताल्लुक़ात को क़ायम रखने और उनके हक़ अदा करने को ज़रूरी क़रार दिया गया है। माँ-बाप के हुक़ूक़, औलाद, बीवी और बहन-भाईयों के हुक़ूक़, दूसरे रिश्तेदारों और पड़ोसियों के हुक़ूक़ अल्लाह तआ़ला ने हर इनसान पर लाज़िम किये हैं, इनको नज़र-अन्दाज़ करके नफ़्ली इबादत में या किसी दीनी ख़िदमत में लग जाना भी जायज़ नहीं, दूसरे कामों में लगकर इनको भुला देना तो कैसे जायज़ होता।

सिला-रहमी और रिश्तेदारी के ताल्लुक़ात को क़ायम रखने और उनकी ख़बरगीरी और हक़ अदा करने की ताकीद क़ुरआने करीम की बेशुमार आयतों में बयान हुई है।

और बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स यह चाहता है कि अल्लाह तआ़ला उसके रिज़्क़ में वुस्अ़त (ज़्यादती) और कामों में बरकत अ़ता फ़रमा दें तो उसको चाहिये कि सिला-रहमी करे, सिला-रहमी के मायने यही हैं कि जिनसे रिश्तेदारी के ख़ुसूसी ताल्लुक़ात हैं उनकी ख़बरगीरी और गुन्जाईश के मुताबिक़ इमदाद व सहयोग करे।

और हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक गाँव वाला देहाती नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मकान पर हाज़िर हुआ और सवाल किया कि मुझे यह बतला दीजिये कि वह अ़मल कौनसा है जो मुझे जन्नत से क़रीब और जहन्नम से दूर कर दे? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया अल्लाह तआ़ला की इबादत करो और उसके साथ किसी को शरीक न ठहराओ, और नमाज़ क़ायम करो, ज़कात अदा करो और सिला-रहमी करो। (तफ़सीरे बग़वी)

और सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सिला-रहमी (रिश्तों का जोड़ना और उनका ख़्याल रखना) इतनी बात का नाम नहीं कि तुम दूसरे रिश्तेदार के एहसान का बदला अदा करो और उसने तुम्हारे साथ कोई एहसान किया है तो तुम उस पर एहसान कर दो, बल्कि असल सिला-रहमी (रिश्ता जोड़ना) यह है कि तुम्हारा रिश्तेदार अ़ज़ीज़ तुम्हारे हुक़ूक़ में कोताही करे, तुम से ताल्लुक़ न रखे, तुम फिर भी महज़ अल्लाह के लिये उससे ताल्लुक़ को क़ायम रखो और उस पर एहसान करो।

रिश्तेदारों के हुक़ूक़ अदा करने और उनके ताल्लुक़ात को निभाने ही के ख़्याल से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपने नसब नामों (ख़ानदानी शजरों) को महफ़ूज़ रखो, जिनके ज़रिये तुम्हें अपनी रिश्तेदारियाँ याद रह सकें, और तुम उनके हुक़ूक़ अदा कर सको। फिर इरशाद फ़रमाया कि सिला-रहमी के फ़ायदे ये हैं कि इससे आपस में मुहब्बत पैदा होती है और माल में बरकत और ज़्यादती होती है, और उम्र में बरकत होती है (यह हदीस इमाम तिर्मिज़ी ने रिवायत की है)।

और सही मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने

फ़रमाया- बड़ी सिला-रहमी यह है कि आदमी अपने बाप के इन्तिक़ाल के बाद उनके दोस्तों से वही ताल्लुक़ात क़ायम रखे जो बाप के सामने थे।

(٣) وَالَّذِينَ صَبَرُوا ابْتِغَاءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ

से मालूम हुआ कि सब्र के जो फ़ज़ाईल क़ुरआन व हदीस में आये हैं कि सब्र करने वाले को अल्लाह जल्ल शानुहू का साथ और मदद व हिमायत हासिल होती है, और बेहिसाब अज्र व सवाब मिलता है, वह सब उसी वक़्त है जबकि अल्लाह तआ़ला की रज़ा को तलब करने के लिये सब्र इख़्तियार किया हो, वरना यूँ तो हर शख़्स को कभी न कभी सब्र आ ही जाता है।

सब्र के असली मायने अपने नफ़्स को क़ाबू में रखने और साबित-क़दम रहने के हैं। जिसकी विभिन्न और अनेक सूरतें हैं। एक यह कि मुसीबत और तकलीफ़ पर सब्र करे घबराये नहीं और मायूस न हो, अल्लाह तआ़ला पर नज़र रखे और उसी से उम्मीदवार रहे। दूसरे यह कि नेकी पर सब्र करे कि अल्लाह के अहकाम की पाबन्दी अगरचे नफ़्स को दुश्वार मालूम हो उस पर क़ायम रहे। तीसरे यह कि नाफ़रमानी और बुराईयों से सब्र करे कि अगरचे नफ़्स का तक़ाज़ा बुराई की तरफ़ चलने का हो लेकिन ख़ुदा तआ़ला के ख़ौफ़ से उस तरफ़ न चले।

(٤) وَاَنْفَقُوا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً

से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च करना छुपे और खुले तौर पर दोनों तरह से दुरुस्त है. अलबत्ता बेहतर और अच्छा यह है कि वाजिब सदक़ात जैसे ज़कात और फ़ित्रा वग़ैरह को ऐलानिया अदा करे ताकि दूसरे मुसलमानों को भी अदायेगी की तरग़ीब हो, और नफ़्ली सदक़े जो वाजिब नहीं उनको गोपनीय अदा करे, ताकि रियाकारी और दिखावे व नाम के शुब्हे से निजात हो।

(٥) يَدْرَءُوْنَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ

से मालूम हुआ कि हर बुराई को दूर करना जो अ़क़्ली और तबई तक़ाज़ा है इस्लाम में उसका तरीक़ा यह नहीं कि बुराई का जवाब बुराई से देकर दूर किया जाये, बल्कि इस्लामी तालीम यह है कि बुराई को भलाई के ज़रिये दूर करो। जिसने तुम पर ज़ुल्म किया है तुम उसके साथ इन्साफ़ का मामला करो, जिसने तुम्हारे ताल्लुक़ का हक़ अदा नहीं किया तुम उसका हक़ अदा करो, जिसने तुम पर गुस्सा किया तुम उसका जवाब हिल्म व बुर्दबारी से दो, जिसका लाज़िमी नतीजा यह होगा कि दुश्मन भी दोस्त हो जायेगा, और शरीर भी आपके सामने नेक बन जायेगा।

और इस जुमले के एक मायने यह भी हैं कि गुनाह का बदला ताअ़त (नेकी) से अदा करो कि अगर कभी कोई गुनाह हो जाये तो फ़ौरन तौबा करो और उसके बाद अल्लाह तआ़ला की इबादत में लग जाओ, तो इससे तुम्हारा पिछला गुनाह भी माफ़ हो जायेगा।

हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब तुम से कोई बुराई या गुनाह हो जाये तो उसके बाद तुम नेक

अ़मल कर लो, इससे वह गुनाह मिट जायेगा। (अहमद सही सनद से, तफ़सीरे मज़हरी)

इस नेक अ़मल की शर्त यह है कि पिछले गुनाह से तौबा करके नेक अ़मल इख़्तियार करे।

جَنّٰتُ عَدْنٍ یَّدْخُلُوْنَهَا وَمَنْ صَلَحَ مِنْ اٰبَآئِهِمْ وَاَزْوَاجِهِمْ وَذُرِّیّٰتِهِمْ

इससे मुराद यह है कि अल्लाह तआ़ला के मक़बूल और नेक बन्दों को ख़ुद भी जन्नत में मक़ाम मिलेगा और उनकी रियायत से उनके माँ-बाप, बीवी और औलाद को भी, शर्त यह है कि ये लोग नेक यानी मोमिन और मुसलमान हों, काफ़िर न हों। अगरचे नेक आमाल में अपने उस बुज़ुर्ग के बराबर न हों, मगर अल्लाह तआ़ला उस बुज़ुर्ग की बरकत से इन लोगों को भी जन्नत के उसी मक़ाम में पहुँचा देंगे जो उस बुज़ुर्ग का मक़ाम है। जैसे एक दूसरी आयत में मज़कूर है:

اَلْحَقْنَا بِهِمْ ذُرِّیَّتَهُمْ

यानी हम अपने नेक बन्दों की नस्ल और औलाद को भी उन्हीं के साथ कर देंगे।

इससे मालूम हुआ कि बुज़ुर्गों के साथ ताल्लुक़ चाहे नसब और रिश्तेदारी का हो या दोस्ती का वह आख़िरत में भी नफ़ा देने वाला होगा शर्त यह है उसके साथ ईमान भी हो।

(۲) سَلٰمٌ عَلَیْكُمْ بِمَا صَبَرْتُمْ فَنِعْمَ عُقْبَى الدَّارِ ۝

से मालूम हुआ कि आख़िरत की निजात और बुलन्द दर्जे सब इसका नतीजा होते हैं कि इनसान दुनिया में सब्र से काम ले, अल्लाह तआ़ला और बन्दों के हुक़ूक़ को अदा करने और उसकी नाफ़रमानियों से बचने पर अपने नफ़्स को मजबूर करता रहे।

اُولٰٓئِكَ لَهُمُ اللَّعْنَةُ وَلَهُمْ سُوْٓءُ الدَّارِ ۝

जिस तरह पहली आयतों में अल्लाह के फ़रमाँबरदार बन्दों की जज़ा यह ज़िक्र फ़रमाई है कि उनका मक़ाम जन्नत में बुलन्द है, फ़रिश्ते उनको सलाम करेंगे और बतलायेंगे कि ये जन्नत की हमेशा वाली नेमतें सब तुम्हारे सब्र व जमाव और फ़रमाँबरदारी का नतीजा हैं, इसी तरह इस आयत में नाफ़रमान व सरकश लोगों का बुरा अन्जाम यह बतलाया है कि उन पर अल्लाह की लानत है, यानी वे रहमत से दूर हैं और उनके लिये जहन्नम का ठिकाना मुक़र्रर है। इससे यह मालूम हुआ कि अ़हद का तोड़ना और रिश्तेदारों व अ़ज़ीज़ों से ताल्लुक़ ख़त्म करना लानत और जहन्नम का सबब है। नऊज़ु बिल्लाह

وَلَوْ اَنَّ قُرْاٰنًا سُیِّرَتْ بِهِ الْجِبَالُ اَوْ قُطِّعَتْ بِهِ الْاَرْضُ اَوْ كُلِّمَ بِهِ الْمَوْتٰى ؕ بَلْ لِّلّٰهِ الْاَمْرُ جَمِیْعًا ؕ اَفَلَمْ یَایْـَٔسِ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْٓا اَنْ لَّوْ یَشَآءُ اللّٰهُ لَهَدَى النَّاسَ جَمِیْعًا ؕ وَلَا یَزَالُ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا تُصِیْبُهُمْ بِمَا صَنَعُوْا قَارِعَةٌ اَوْ تَحُلُّ قَرِیْبًا مِّنْ دَارِهِمْ حَتّٰى یَاْتِیَ وَعْدُ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا یُخْلِفُ الْمِیْعَادَ ۝۳۱ وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَاَمْلَیْتُ لِلَّذِیْنَ كَفَرُوْا ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ ۫ فَكَیْفَ كَانَ عِقَابِ ۝۳۲ اَفَمَنْ هُوَ قَآئِمٌ عَلٰى كُلِّ نَفْسٍۭ بِمَا كَسَبَتْ ۚ وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ ؕ قُلْ سَمُّوْهُمْ ؕ اَمْ

تُنَبِّئُوْنَهٗ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي الْاَرْضِ اَمْ بِظَاهِرٍ مِّنَ الْقَوْلِ ۭ بَلْ زُيِّنَ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا مَكْرُهُمْ وَصُدُّوْا عَنِ السَّبِيْلِ ۭ وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهٗ مِنْ هَادٍ ۝

व लौ अन्-न क़ुर्आनन् सुय्यिरत् बिहिल्-जिबालु औ क़ुत्तिअ़त् बिहिल्-अर्-ज़ु औ कुल्लि-म बिहिल्-मौता, बल् लिल्लाहिल्-अम्रु जमीअ़न्, अ-फ़लम् यै-असिल्लज़ी-न आमनू अल्-लौ यशाउल्लाहु ल-हदन्ना-स जमीअ़न्, व ला यज़ालुल्लज़ी-न क-फ़रू तुसीबुहुम् बिमा स-नअू क़ारि-अ़तुन् औ तहुल्लु क़रीबम् मिन् दारिहिम् हत्ता यअ्ति-य वअ्दुल्लाहि, इन्नल्ला-ह ला युख़्लिफ़ुल्-मीआ़द (31) ❁

व ल-क़दिस्तुह्ज़ि-अ बिरुसुलिम् मिन् क़ब्लि-क फ़-अम्लैतु लिल्लज़ी-न क-फ़रू सुम्-म अख़ज़्तुहुम्, फ़कै-फ़ का-न अिक़ाब (32) अ-फ़-मन् हु-व क़ाइमुन् अ़ला कुल्लि नफ़्सिम्-बिमा क-सबत् व ज-अ़लू लिल्लाहि शु-रका-अ, क़ुल् सम्मूहुम् अम् तुनब्बिऊनहू बिमा ला यअ्लमु फ़िल्अर्ज़ि अम् बिज़ाहिरिम्-मिनल्-क़ौलि, बल् ज़ुय्यि-न लिल्लज़ी-न

और अगर कोई क़ुरआन हुआ होता कि चलें उससे पहाड़ या टुकड़े हो उससे ज़मीन या बोलें उससे मुर्दे तो क्या होता, बल्कि सब काम तो अल्लाह के हाथ में हैं, सो क्या दिली तसल्ली नहीं ईमान वालों को इस पर कि अगर चाहे अल्लाह तो राह पर लाये सब लोगों को, और बराबर पहुँचता रहेगा मुन्किरों को उनके करतूत पर सदमा, या उतरेगा उनके घर से नज़दीक, जब तक कि पहुँचे वादा अल्लाह का, बेशक अल्लाह ख़िलाफ़ नहीं करता अपने वादे के। (31) ❁

और ठट्ठा कर चुके (यानी मज़ाक़ उड़ा चुके) हैं कितने रसूलों से तुझसे पहले, सो ढील दी मैंने इनकारियों को, फिर उनको पकड़ लिया, सो कैसा था मेरा बदला। (32) भला जो लिये खड़ा है हर किसी के सर पर जो कुछ उसने किया है, और मुक़र्रर करते हैं अल्लाह के लिये शरीक, कह कि उनका नाम लो, या अल्लाह को बतलाते हो जो वह नहीं जानता ज़मीन में? या करते हो ऊपर ही ऊपर बातें? यह नहीं बल्कि भले सुझा दिये हैं इनकारियों को उनके फ़रेब और वे रोक

क-फ़रू मक्रुहुम् व सुद्दू अ़निस्सबीलि, व मंय्युज़्लिलिल्लाहु फ़मा लहू मिन् हाद (33)	दिये गये हैं राह से, और जिसको गुमराह करे अल्लाह सो कोई नहीं उसको राह बतलाने वाला। (33)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ पैग़म्बर और ऐ मुसलमानो! इन काफ़िरों की दुश्मनी व मुख़ालफ़त की यह कैफ़ियत है कि क़ुरआन की जो मौजूदा हालत है कि इसका मोजिज़ा होना ग़ौर व फ़िक्र पर मौक़ूफ़ है, बजाय इसके) अगर कोई ऐसा क़ुरआन होता जिसके ज़रिये से पहाड़ (अपनी जगह से) हटा दिये जाते या उसके ज़रिये से ज़मीन जल्दी-जल्दी तय हो जाती, या उसके ज़रिये से मुर्दों के साथ किसी को बातें करा दी जातीं (यानी मुर्दा ज़िन्दा हो जाता और कोई उससे बातें कर लेता, और ये वो मोजिज़े हैं जिनकी फ़रमाईश अक्सर काफ़िर लोग किया करते थे। बाज़े तो उमूमी तौर पर और बाज़े इस तरह से कि क़ुरआन को मौजूदा हालत में तो हम मोजिज़ा मानते नहीं, अलबत्ता अगर क़ुरआन से इन असाधारण और चमत्कारिक चीज़ों का ज़हूर हो तो हम इसको मोजिज़ा (बेमिसाल और दूसरों को आ़जिज़ कर देने वाला) मान लें। मतलब यह है कि क़ुरआन से ऐसे मोजिज़ों का भी ज़हूर होता जिससे दोनों तरह के लोगों की फ़रमाईशें पूरी हो जातीं, यानी जो उक्त चमत्कारिक बातों का मुतालबा करने वाले थे और जो इनका ज़हूर क़ुरआन से चाहते थे) तब भी ये लोग ईमान न लाते (क्योंकि वास्तव में ये चीज़ें प्रभावी नहीं) बल्कि सारा इख़्तियार ख़ास अल्लाह ही को है (वह जिसको तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाते हैं वही ईमान लाता है और उनकी आ़दत है कि तालिब को तौफ़ीक़ देते हैं और इनकार करने वालों को मेहरूम रखते हैं। और चूँकि बाज़े मुसलमानों का जी चाहता था कि इन मोजिज़ों का ज़हूर हो जाये तो शायद ईमान ले आयें, इसलिये आगे उनका जवाब है कि) क्या (यह सुनकर ये इनकार करने वाले ईमान ले आयेंगे और यह कि सब इख़्तियार ख़ुदा ही को है और यह कि असबाब अपनी ज़ात के एतिबार से अपने अन्दर असर रखने वाले नहीं हैं, क्या यह सुनकर) फिर भी ईमान वालों को इस बात में तसल्ली नहीं हुई कि अगर ख़ुदा तआ़ला चाहता तो तमाम (दुनिया भर के) आदमियों को हिदायत कर देता (मगर कुछ हिक्मतों के सबब उसकी मर्ज़ी व चाहत नहीं हुई, तो सब ईमान ले आयेंगे जिसकी बड़ी वजह दुश्मनी व बैर है, फिर उन विरोधियों और दुश्मनी रखने वालों के ईमान लाने की फ़िक्र में क्यों लगे हैं)।

और (जब यह साबित हो गया कि ये लोग ईमान न लायेंगे तो इस बात का ख़्याल आ सकता है कि फिर इनको सज़ा क्यों नहीं दी जाती, इसके बारे में इरशाद है कि) ये (मक्का के) काफ़िर तो हमेशा (हर दिन) इस हालत में रहते हैं कि इनके (बुरे) किरदारों के सबब इन पर कोई न कोई हादसा पड़ता रहता है (कहीं क़त्ल, कहीं क़ैद, कहीं पराजय व शिकस्त), या (बाज़ा

हादसा अगर इन पर नहीं भी पड़ता मगर) इनकी बस्ती के क़रीब नाज़िल होता रहता है (जैसे किसी क़ौम पर आफ़त आई और इनको ख़ौफ़ पैदा हो गया कि कहीं हम पर भी बला न आये) यहाँ तक कि (उसी हालत में) अल्लाह का वायदा आ जायेगा (यानी आख़िरत के अ़ज़ाब का सामना हो जायेगा, जो कि मरने के बाद शुरू हो जायेगा और) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला वायदे के ख़िलाफ़ नहीं करते (पस इन पर अ़ज़ाब का पड़ना यक़ीनी है अगरचे कई बार कुछ देर से सही)।

और (उन लोगों का यह झुठलाने और मज़ाक़ उड़ाने का मामला कुछ आपके साथ ख़ास नहीं बल्कि पहले रसूलों और उनकी उम्मतों के साथ भी ऐसा हो चुका है। चुनाँचे) बहुत-से पैग़म्बरों के साथ जो आप से पहले हो चुके हैं (काफ़िरों की तरफ़ से) हंसी-ठट्ठा हो चुका है, फिर मैं उन काफ़िरों को मोहलत देता रहा, फिर मैंने उन पर पकड़ की, सो (समझने की बात है कि) मेरी सज़ा किस तरह की थी (यानी निहायत सख़्त थी। जब अल्लाह तआ़ला की शान मालूम हो गई कि वही मुख़्तारे कुल हैं तो इसके मालूम और साबित होने के बाद), फिर (भी) क्या जो (ख़ुदा) हर शख़्स के आमाल पर बाख़बर हो और उन लोगों के शरीक क़रार दिए हुए बराबर हो सकते हैं? और (बावजूद इसके) उन लोगों ने ख़ुदा के लिये शरीक तजवीज़ किए हैं। आप कहिये कि (ज़रा) उन (शरीकों) का नाम तो लो (मैं भी सुनूँ कौन हैं और कैसे हैं), क्या (तुम हक़ीक़त में उनको ख़ुदा का शरीक समझकर दावा करते हो? तब तो यह लाज़िम आता है कि) तुम अल्लाह तआ़ला को ऐसी बात की ख़बर देते हो कि दुनिया (भर) में उस (के वजूद) की ख़बर अल्लाह तआ़ला को न हो (क्योंकि अल्लाह तआ़ला उसी को मौजूद जानते हैं जो वास्तव में मौजूद हो, और जो मौजूद ही न हो उसको मौजूद नहीं जानते, क्योंकि इससे इल्म का ग़लत होना लाज़िम आता है अगरचे खुलकर सामने आने में दोनों बराबर हैं। ग़र्ज़ कि उनको वास्तविक शरीक कहने से यह नामुम्किन बात लाज़िम आती है, पस उनका शरीक होना भी नामुम्किन है), या (यह कि उनको वास्तव में शरीक नहीं कहते बल्कि) ख़ाली ज़ाहिरी लफ़्ज़ के एतिबार से उनको शरीक कहते हो (और हक़ीक़त में उसका मिस्दाक़ कहीं नहीं है। अगर यह दूसरी सूरत है तो उनके शरीक न होने को ख़ुद ही मानते हो, पस मतलूब यानी ख़ुदा की ख़ुदाई में किसी का शरीक होने का बातिल और बेबुनियाद होना दोनों सूरतों में साबित हो गया, पहली सूरत में दलील से, दूसरी सूरत में तुम्हारे मान लेने से। और यह तक़रीर इसके बावजूद कि हर तरह मुकम्मल और काफ़ी है मगर ये लोग न मानेंगे) बल्कि इन काफ़िरों को अपनी धोखे भरी बातें (जिनको अपनाकर ये शिर्क में मुब्तला हैं) पसन्दीदा मालूम होती हैं, और (इसी वजह से) ये लोग (हक़) रास्ते से मेहरूम रह गये हैं। और (असल वही बात है जो ऊपर बताई जा चुकी कि सब कुछ अल्लाह ही के हाथ में है यानी) जिसको ख़ुदा तआ़ला गुमराही में रखे उसको कोई राह पर लाने वाला नहीं (अलबत्ता वह उसी को गुमराह रखता है जो बावजूद हक़ के खुल जाने और स्पष्ट होने के दुश्मनी व मुख़ालफ़त करता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मक्का के मुश्रिक लोगों के सामने इस्लाम का सच्चा और हक़ होना स्पष्ट दलीलों और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चे रसूल होने की खुली हुई निशानियाँ आपकी ज़िन्दगी के हर हिस्से और शोबे से, फिर हैरत-अंगेज़ मोजिज़ों से पूरी तरह रोशन हो चुकी थीं, और उनका सरदार अबू जहल यह कह चुका था कि बनू हाशिम (हाशिम की औलाद) से हमारा ख़ानदानी मुक़ाबला है, हम उनकी इस बरतरी को कैसे क़ुबूल कर लें कि ख़ुदा का रसूल उनमें से आया, इसलिये वे कुछ भी कहें और कैसी ही निशानियाँ दिखलायें हम उन पर किसी हाल में ईमान नहीं लायेंगे। इसी लिये वे हर मौक़े पर इस ज़िद का प्रदर्शन बेहूदा क़िस्म के सवालात और फ़रमाईशों के ज़रिये किया करते थे। ऊपर ज़िक्र हुई आयतें भी अबू जहल और उसके साथियों के एक सवाल के जवाब में नाज़िल हुई हैं।

तफ़सीर-ए-बग़वी में है कि मक्का के मुश्रिक लोग जिनमें अबू जहल बिन हिशाम और अ़ब्दुल्लाह इब्ने उमैया ख़ुसूसियत से क़ाबिले ज़िक्र हैं, एक दिन बैतुल्लाह के पीछे जाकर बैठ गये और अ़ब्दुल्लाह इब्ने उमैया को रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास भेजा, उसने कहा कि अगर आप यह चाहते हैं कि आपकी क़ौम और हम सब आपको रसूल तस्लीम कर लें और आपकी पैरवी करें, तो हमारे चन्द मुतालबे हैं, अपने क़ुरआन के ज़रिये उनको पूरा कर दीजिये तो हम सब इस्लाम क़ुबूल कर लेंगे।

मुतालबों में एक तो यह था कि मक्का शहर की ज़मीन बड़ी तंग है, सब तरफ़ पहाड़ों से घिरा एक लम्बा ज़मीनी टुकड़ा है जिसमें न काश्तकारी व खेती की गुन्जाईश है न बाग़ों और दूसरी ज़रूरतों की, आप मोजिज़े (ख़ुदाई चमत्कार) के ज़रिये इन पहाड़ों को दूर हटा दीजिये ताकि मक्का की ज़मीन खुल जाये, आख़िर आप ही के कहने के मुताबिक़ दाऊद अ़लैहिस्सलाम के लिये पहाड़ उनके ताबे कर दिये गये थे, जब वह तस्बीह पढ़ते तो पहाड़ भी साथ-साथ तस्बीह करते थे, आप अपने क़ौल के मुताबिक़ अल्लाह के नज़दीक दाऊद अ़लैहिस्सलाम से कमतर तो नहीं हैं।

दूसरा मुतालबा यह था कि जिस तरह सुलैमान अ़लैहिस्सलाम के लिये आपके क़ौल के मुताबिक़ अल्लाह तआ़ला ने हवा को ताबेदार करके ज़मीन के बड़े-बड़े फ़ासलों को मुख़्तसर कर दिया था, आप भी हमारे लिये ऐसा ही कर दें कि हमें शाम व यमन वग़ैरह के सफ़र आसान हो जायें।

तीसरा मुतालबा यह था कि जिस तरह ईसा अ़लैहिस्सलाम मुर्दों को ज़िन्दा कर देते थे आप उनसे कुछ कम तो नहीं, आप भी हमारे लिये हमारे दादा क़ुसई को ज़िन्दा कर दीजिये, ताकि हम उनसे यह मालूम कर सकें कि आपका दीन सच्चा है या नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी, बग़वी व इब्ने अबी हातिम और इब्ने मरदूया के हवाले से)

उपरोक्त आयतों में इन मुख़ालफ़त भरे मुतालबों का यह जवाब दिया गयाः

وَلَوْاَنَّ قُرْاٰنًا سُيِّرَتْ بِهِ الْجِبَالُ اَوْقُطِّعَتْ بِهِ الْاَرْضُ اَوْكُلِّمَ بِهِ الْمَوْتٰى، بَلْ لِّلّٰهِ الْاَمْرُ جَمِيْعًا.

इसमें पहाड़ों को अपनी जगह से हटाने और मुख़्तसर वक़्त में बड़ी दूरी और फ़ासले को तय करने और मुर्दों को ज़िन्दा करके कलाम करने के बारे में बयान हुआ है। और यह बताया गया है कि ये लोग ईमान लाने के लिये ये मुतालबे नहीं कर रहे हैं। बल्कि यह इनका मुख़ालफ़त भरा कलाम है। जैसा कि क़ुरआन मजीद में एक दूसरी जगह ऐसा ही मज़मून और उसका यही जवाब बयान हुआ है:

وَلَوْاَنَّنَا نَزَّلْنَآ اِلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةَ وَكَلَّمَهُمُ الْمَوْتٰى وَحَشَرْنَا عَلَيْهِمْ كُلَّ شَيْءٍ قُبُلًا مَّا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْٓا.

और मायने यह हैं कि अगर क़ुरआन के ज़रिये मोजिज़े के तौर पर उनके ये मुतालबे पूरे कर दिये जायें तब भी वे ईमान लाने वाले नहीं, क्योंकि वे इन मुतालबों से पहले ऐसे मोजिज़ों को देख चुके हैं जो उनके मतलूबा मोजिज़ों से बहुत ज़्यादा बढ़े हुए हैं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इशारे से चाँद के दो टुकड़े हो जाना पहाड़ों के अपनी जगह से हट जाने से और हवा के आपके ताबे होने से कहीं ज़्यादा हैरत-अंगेज़ है। इसी तरह बेजान कंकरियों का आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ मुबारक में बोलना और तस्बीह करना किसी मुर्दा इनसान के दोबारा ज़िन्दा होकर बोलने से कहीं ज़्यादा बड़ा मोजिज़ा है। मेराज की रात में मस्जिदे-अक़्सा और फिर वहाँ से आसमानों का सफ़र और बहुत मुख़्तसर वक़्त में वापसी हवा के ताबे होने और तख़्ते सुलैमानी के चमत्कार से कितना ज़्यादा अ़ज़ीम है, मगर ये ज़ालिम यह सब कुछ देखने के बाद भी जब ईमान न लाये तो अब इन मुतालबों से भी इनकी नीयत मालूम है कि सिर्फ़ वक़्ती तौर पर बात को टालना है, कुछ मानना और करना नहीं है।

मुश्रिकों के इन मुतालबों का मक़सद चूँकि यही था कि हमारे मुतालबे पूरे न किये जायेंगे तो हम कहेंगे कि मआ़ज़ल्लाह, अल्लाह तआ़ला ही को इन कामों पर क़ुदरत नहीं, या फिर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बात अल्लाह तआ़ला के यहाँ सुनी नहीं जाती और न मक़बूल होती है, जिससे समझा जाता है कि वह अल्लाह के रसूल नहीं। इसलिये इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

بَلْ لِّلّٰهِ الْاَمْرُ جَمِيْعًا

यानी अल्लाह ही के लिये है इख़्तियार सब का सब। मतलब यह है कि उक्त मुतालबों का पूरा न करना इस वजह से नहीं कि वो अल्लाह की क़ुदरत से ख़ारिज हैं, बल्कि हक़ीक़त यह है कि इस जहान की मस्लेहतों को वही जानने वाले हैं, उन्होंने अपनी हिक्मत से इन मुतालबों को पूरा करना मुनासिब नहीं समझा, क्योंकि मुतालबा करने वालों की हठधर्मी और बुरी नीयत उनको मालूम है। वह जानते हैं कि ये सब मुतालबे पूरे कर दिये जायेंगे तब भी ये ईमान न लायेंगे।

اَفَلَمْ يَايْئَسِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَنْ لَّوْيَشَآءُ اللّٰهُ لَهَدَى النَّاسَ جَمِيْعًا.

इमाम बग़वी रह. ने नक़ल किया है कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने जब मक्का के मुश्रिकों के ये मुतालबे सुने तो यह तमन्ना करने लगे कि मोजिज़े के तौर पर ये मुतालबे पूरे कर दिये जायें तो बेहतर है, सारे मक्के वाले मुसलमान हो जायेंगे और इस्लाम को बड़ी ताक़त हासिल हो जायेगी। इस पर यह आयत नाज़िल हुई जिसके मायने यह हैं कि क्या ईमान वाले उन मुश्रिकों की बहानेबाज़ी और दुश्मनी भरी बहसों को देखने और जानने के बावजूद अब तक उनके ईमान लाने से मायूस नहीं हुए कि ऐसी तमन्नायें करने लगे, जबकि वे यह भी जानते हैं कि अगर अल्लाह तआ़ला चाहता तो सब ही इनसानों को ऐसी हिदायत दे देता कि वे मुसलमान बने बग़ैर न रह सकते थे, मगर हिक्मत का तक़ाज़ा यह न था कि सब को इस्लाम व ईमान पर मजबूर कर दिया जाये, बल्कि हिक्मत यही थी कि हर शख़्स का अपना इख़्तियार बाक़ी रहे अपने इख़्तियार से इस्लाम को क़ुबूल करे या कुफ़्र को।

وَلَا يَزَالُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا تُصِيْبُهُمْ بِمَا صَنَعُوْا قَارِعَةٌ اَوْ تَحُلُّ قَرِيْبًا مِّنْ دَارِهِمْ

हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि 'क़ारिआ़' के मायने मुसीबत और आफ़त के हैं। आयत के मायने यह हैं कि इन मुश्रिकों के मुतालबे तो इसलिये मन्ज़ूर नहीं किये गये कि इनकी बद-नीयती और हठधर्मी मालूम थी कि मुतालबे पूरे करने पर भी ये ईमान लाने वाले नहीं, ये तो अल्लाह के नज़दीक इसी के मुस्तहिक़ हैं कि इन पर दुनिया में भी आफ़तें और मुसीबतें आयें जैसा कि मक्का वालों पर कभी क़हत (सूखे) की मुसीबत आई, कभी इस्लामी जंगों बदर व उहुद वग़ैरह में उन पर क़त्ल और क़ैद होने की आफ़त नाज़िल हुई, किसी पर बिजली गिर गई, कोई और किसी बला में मुब्तला हुआ।

اَوْ تَحُلُّ قَرِيْبًا مِّنْ دَارِهِمْ

यानी कभी ऐसा भी होगा कि मुसीबत डायरेक्ट उन पर नहीं आयेगी बल्कि उनके क़रीब वाली बस्तियों पर आयेगी जिससे उनको इब्रत (सबक़) हासिल हो और उनको अपना बुरा अन्जाम भी नज़र आने लगे।

حَتّٰى يَاْتِيَ وَعْدُ اللّٰهِ ۚ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ۝

यानी इन मुसीबतों व आफ़तों का सिलसिला चलता रहेगा जब तक कि अल्लाह तआ़ला का वादा पूरा न हो जाये, क्योंकि अल्लाह तआ़ला का वादा कभी टल नहीं सकता। मुराद इस वादे से मक्का के फ़तह हो जाने का वादा है। मतलब यह है कि उन लोगों पर विभिन्न प्रकार की आफ़तें आती रहेंगी यहाँ तक कि आख़िर में मक्का मुकर्रमा फ़तह होगा, और ये सब लोग पराजित व पस्त और मातहत हो जायेंगे।

उक्त आयत में:

اَوْ تَحُلُّ قَرِيْبًا مِّنْ دَارِهِمْ.

से मालूम हुआ कि जिस क़ौम और बस्ती के आस-पास कोई अ़ज़ाब या आफ़त व मुसीबत आती है तो उसमें हक़ तआ़ला शानुहू की यह हिक्मत भी छुपी होती है कि आस-पास की

बस्तियों को भी तंबीह (चेतावनी) हो जाये और वे दूसरों से इब्रत हासिल करके अपने आमाल दुरुस्त कर लें तो यह दूसरों का अ़ज़ाब उनके लिये रहमत बन जाये, वरना फिर एक दिन उनका भी वही अन्जाम होना है जो दूसरों का देखने में आया है।

आज हमारे मुल्क में हमारे आस-पास में रोज़-रोज़ किसी जमाअ़त, किसी बस्ती पर विभिन्न किस्म की आफ़तें आती रहती हैं, कहीं सैलाब की तबाहकारी, कहीं हवा के तूफ़ान, कहीं ज़लज़ले का अ़ज़ाब, कहीं कोई और आफ़त, क़ुरआने करीम के इस इरशाद के मुताबिक़ यह सिर्फ़ उन बस्तियों और क़ौमों ही की सज़ा नहीं होती बल्कि आस-पास के लोगों को चेतावनी भी होती है। पिछले ज़माने में अगरचे इल्म व फ़न की इतनी धूमधाम न थी मगर लोगों के दिलों में ख़ुदा का ख़ौफ़ था, किसी जगह इस तरह का कोई हादसा पेश आ जाता तो वे लोग भी और उसके आस-पास वाले भी सहम जाते, अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करते, अपने गुनाहों की तौबा करते, और इस्तिग़फ़ार सदक़ा व ख़ैरात को निजात का ज़रिया समझते थे, और आँखों से देखने में आता था कि उनकी मुसीबतें बड़ी आसानी से टल जाती थीं। आज हमारी ग़फ़लत का यह आ़लम है कि मुसीबत के वक़्त भी ख़ुदा ही याद नहीं आता और सब कुछ याद आता है, दुनिया के आ़म ग़ैर-मुस्लिमों की तरह हमारी नज़रें भी सिर्फ़ माद्दी असबाब पर जमकर रह जाती हैं, असबाब के बनाने वाले मुख़्तारे-कुल की तरफ़ तवज्जोह की उस वक़्त भी तौफ़ीक़ कम लोगों को होती है। इसी का नतीजा इस तरह के लगातार हादसे हैं जिनसे दुनिया हमेशा दोचार रहती है।

حَتّٰى يَاْتِيَ وَعْدُ اللّٰهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ○

यानी उन काफ़िरों व मुश्रिकों पर दुनिया में भी मुख़्तलिफ़ अ़ज़ाबों और आफ़तों का यह सिलसिला जारी रहेगा, यहाँ तक कि अल्लाह तआ़ला का वादा आ पहुँचे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला अपने वादे के कभी ख़िलाफ़ नहीं करते।

वादे से मुराद इस जगह मक्के का फ़तह होना है जिसका वादा हक़ तआ़ला ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से किया हुआ था। और आयत का मतलब यह हुआ कि आख़िर में तो मक्का फ़तह होकर इन सब मुश्रिकों को तबाह व पस्त और ताबेदार होना ही है, उससे पहले भी इनके जुर्मों की कुछ-कुछ सज़ा इनको मिलती रहेगी, और यह भी हो सकता है कि 'अल्लाह के वादे' से मुराद इस जगह क़ियामत का दिन हो, जिसका वादा सब पैग़म्बरों से किया हुआ है, और हमेशा से किया हुआ है, उस दिन तो हर काफ़िर मुजरिम अपने किये की पूरी-पूरी सज़ा भुगतेगा।

उपर्युक्त वाक़िए में मुश्रिकों के दुश्मनी व मुख़ालफ़त भरे सवालात और उनकी हठधर्मी से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को रंज व तकलीफ़ पहुँचने का अन्देशा था, इसलिये अगली आयत में आपकी तसल्ली के लिये फ़रमाया गयाः

وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَاَمْلَيْتُ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ فَكَيْفَ كَانَ عِقَابِ ○

ये हालात जो आपको पेश आ रहे हैं कुछ आप ही को पेश नहीं आये, आप से पहले नबियों

को भी इसी तरह के हालात से साबक़ा पड़ता रहा है, कि मुजरिमों और मुन्किरों को उनके जुर्म पर फ़ौरन नहीं पकड़ा गया और वे नबियों के साथ हंसी-ठट्ठा करते रहे, जब वे इन्तिहा को पहुँच गये तो फिर उनको अल्लाह के अ़ज़ाब ने पकड़ लिया और कैसा पकड़ा कि किसी को मुक़ाबले की ताक़त न रही।

اَفَمَنْ هُوَ قَآئِمٌ عَلٰى كُلِّ نَفْسٍ

इस आयत में मुश्रिक लोगों की जहालत और बेअ़क्ली को इस तरह वाज़ेह फ़रमाया है कि ये कैसे बेवक़ूफ़ हैं कि बेजान व बेशऊर बुतों को उस ज़ाते पाक के बराबर ठहराते हैं जो हर नफ़्स पर निगराँ और उनके आमाल व कामों का हिसाब लेने वाली है। फिर फ़रमाया कि असल सबब इसका यह है कि शैतान ने इनकी इस जहालत ही को इनकी नज़र में सजाया हुआ और अच्छा बना रखा है, वे इसी को बड़ा कमाल और कामयाबी समझते हैं।

لَهُمْ عَذَابٌ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَشَقُّ ۚ وَمَا لَهُمْ مِّنَ اللّٰهِ مِنْ وَّاقٍ ۝ مَثَلُ الْجَنَّةِ الَّتِىْ وُعِدَ الْمُتَّقُوْنَ ۭ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۭ اُكُلُهَا دَآئِمٌ وَّظِلُّهَا ۭ تِلْكَ عُقْبَى الَّذِيْنَ اتَّقَوْا ڰ وَّعُقْبَى الْكٰفِرِيْنَ النَّارُ ۝ وَالَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَفْرَحُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمِنَ الْاَحْزَابِ مَنْ يُّنْكِرُ بَعْضَهٗ ۭ قُلْ اِنَّمَآ اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ اللّٰهَ وَلَآ اُشْرِكَ بِهٖ ۭ اِلَيْهِ اَدْعُوْا وَاِلَيْهِ مَاٰبِ ۝ وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنٰهُ حُكْمًا عَرَبِيًّا ۭ وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَآءَهُمْ بَعْدَ مَا جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ۙ مَا لَكَ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا وَاقٍ ۝

लहुम् अ़ज़ाबुन् फ़िल्हयातिद्दुन्या व ल-अ़ज़ाबुल्-आख़िरति अशक़्क़ु व मा लहुम् मिनल्लाहि मिंव्वाक़् (34) म-सलुल्-जन्नतिल्लती वुअ़िदल्-मुत्तक़ू-न, तज्री मिन् तह़्तिहल्-अन्हारु, उकुलुहा दाइमुंव्-व ज़िल्लुहा, तिल्-क अ़ुक़्बल्लज़ीनत्तक़ौ व उक़्बल् काफ़िरीनन्नार (35) वल्लज़ी-न आतैनाहुमुल्-किता-ब यफ़्रहू-न बिमा उन्ज़ि-ल इलै-क व मिनल्-अह़्ज़ाबि	उनको मार पड़ती है दुनिया की ज़िन्दगी में और आख़िरत की मार तो बहुत ही सख़्त है, और कोई नहीं उनको अल्लाह से बचाने वाला। (34) हाल जन्नत का जिसका वादा है परहेज़गारों से, बहती हैं उसके नीचे नहरें, मेवा उसका हमेशा है और साया भी, यह बदला है उनका जो डरते रहे, और बदला इनकारियों का आग है। (35) और वे लोग जिनको हमने दी है किताब ख़ुश होते हैं उससे जो नाज़िल हुआ तुझ पर और बाज़े फ़िर्क़े नहीं मानते

मंय्युन्किरु बअ्ज़हू, क़ुल् इन्नमा उमिर्तु अन् अअ्बुदल्ला-ह व ला उश्रि-क बिही, इलैहि अद्अू व इलैहि मआब (36) व कज़ालि-क अन्ज़ल्नाहु हुक्मन् अ़-रबिय्यन्, व ल-इनित्तबअ्-त अह्वा-अहुम् बअ्-द मा जाअ-क मिनल्-अिल्मि मा ल-क मिनल्लाहि मिंव्वलिय्यिंव्-व ला वाक़ (37) ✿	उसकी बाज़ी बात, कह मुझको यही हुक्म हुआ है कि बन्दगी करूँ अल्लाह की और शरीक न करूँ उसका, उसी की तरफ़ बुलाता हूँ और उसी की तरफ़ है मेरा ठिकाना। (36) और इसी तरह उतारा हमने यह कलाम हुक्म अ़रबी भाषा में, और अगर तू चले उनकी इच्छा के मुवाफ़िक़ बाद उस इल्म के जो तुझको पहुँच चुका (तो) कोई नहीं तेरा अल्लाह से हिमायती और न बचाने वाला। (37) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

उन काफ़िरों के लिये दुनियावी ज़िन्दगी में (भी) अ़ज़ाब है (वह क़त्ल व क़ैद, ज़िल्लत व बीमारियाँ और मुसीबतें है), और आख़िरत का अ़ज़ाब इससे कई दर्जे ज़्यादा सख़्त है (क्योंकि सख़्त भी है और हमेशा रहने वाला भी है) और अल्लाह (के अ़ज़ाब) से उनको कोई बचाने वाला नहीं होगा। (और) जिस जन्नत का मुत्तक़ियों से (यानी शिर्क व कुफ़्र से बचने वालों से) वायदा किया गया है उसकी कैफ़ियत यह है कि उस (की इमारतों व पेड़ों) के नीचे से नहरें जारी होंगी, उसका फल और उसका साया हमेशा रहने वाला रहेगा। यह तो अन्जाम होगा मुत्तक़ियों का, और काफ़िरों का अन्जाम दोज़ख़ होगा। और जिन लोगों को हमने (आसमानी) किताब (यानी तौरात व इन्जील) दी है (और वे उसको पूरे तौर से मानते थे) वे इस (किताब) से ख़ुश होते हैं जो आप पर नाज़िल की गई है (क्योंकि इसकी ख़बर अपनी किताबों में पाते हैं और ख़ुश होकर मान लेते हैं और ईमान ले आते हैं, जैसे यहूदियों में अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके साथी और ईसाईयों में नजाशी रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके भेजे हुए हज़रात, जिनका ज़िक्र दूसरी आयतों में भी है) और उन्हीं के गिरोह में बाज़े ऐसे हैं कि इस (किताब) के कुछ हिस्से का (जिसमें उनकी किताब के ख़िलाफ़ अहकाम हैं) इनकार करते हैं (और कुफ़्र करते हैं)। आप (उनसे) फ़रमाईये कि (अहकाम दो किस्म के हैं- बुनियादी और ऊपर के, अगर तुम उसूली और बुनियादी चीज़ों में मुख़ालिफ़ हो सो वो सब शरीअ़तों में साझा हैं, चुनाँचे) मुझको (तौहीद के मुताल्लिक़) सिर्फ़ यह हुक्म हुआ है कि मैं अल्लाह तआ़ला की इबादत करूँ और किसी को उसका शरीक न ठहराऊँ (और नुबुव्वत के मुताल्लिक़ यह बात है कि) मैं (लोगों को) अल्लाह ही की तरफ़ बुलाता हूँ (यानी नुबुव्वत का हासिल यह है कि मैं अल्लाह की तरफ़ दावत देने वाला हूँ) और (आख़िरत के मुताल्लिक़ मेरा यह अ़क़ीदा है कि) उसी की तरफ़ मुझको (दुनिया से

लौटकर) जाना है (यानी उसूल ये तीन हैं सो इनमें से एक बात भी क़ाबिले इनकार नहीं, चुनाँचे तौहीद सब के नज़दीक मानी हुई है, जैसा कि यही मज़मून एक दूसरी आयत में है:

تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍ بَيْنَنَا............ الخ

(यानी सूरः आले इमरान की आयत 64) और नुबुव्वत में अपने लिये माल व रुतबा नहीं चाहता जिस पर इनकार की गुन्जाईश हो, महज़ अल्लाह की तरफ़ दावत देता हूँ, सो ऐसे लोग पहले भी हुए हैं जिसको तुम भी मानते हो। जैसा यही मज़मून एक दूसरी जगह भी है:

مَاكَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُّؤْتِيَهُ اللّٰهُ الْكِتٰبَ.......... الخ

(यानी सूरः आले इमरान की आयत 79) इसी तरह आख़िरत का अ़क़ीदा साझा, माना हुआ और नाक़ाबिले इनकार है। और अगर ऊपर के अहकाम में मुख़ालिफ़ हो तो इसका जवाब अल्लाह तआ़ला यूँ देते हैं कि हमने जिस तरह और रसूलों को ख़ास-ख़ास भाषाओं में ख़ास अहकाम दिये) और इसी तरह हमने इस (क़ुरआन) को इस तौर पर नाज़िल किया कि वह एक ख़ास हुक्म है अ़रबी भाषा में (अ़रबी की वज़ाहत से इशारा हो गया दूसरे नबियों की दूसरी भाषाओं की तरफ़, और भाषाओं की भिन्नता और विविधता से इशारा हो गया उम्मतों के भिन्न और अलग-अलग होने की तरफ़, तो हासिल जवाब का यह हुआ कि ऊपर के अहकाम में इख़्तिलाफ़ उम्मतों के भिन्न और अलग-अलग होने से हुआ, क्योंकि उम्मतों की मस्लेहतें हर ज़माने में अलग-अलग हैं, पस शरीअ़तों का यह इख़्तिलाफ़ (भिन्न और कुछ अलग होना) मुख़ालफ़त को नहीं चाहता, चुनाँचे ख़ुद तुम्हारी मानी हुई शरीअ़त में भी ऊपर के अहकाम में ऐसा इख़्तिलाफ़ हुआ है, फिर तुम्हारी मुख़ालफ़त व इनकार की क्या गुंजाईश है)।

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) अगर आप (मान लो, अगरचे ऐसा होना नामुम्किन है) उनके नफ़्सानी ख़्यालात की (यानी निरस्त व रद्द हुए या परिवर्तित अहकाम की) पैरवी करने लगें इसके बाद कि आपके पास (ज़रूरी और मतलूब अहकाम का सही) इल्म पहुँच चुका है, तो अल्लाह के मुक़ाबले में न कोई आपका मददगार होगा और न कोई बचाने वाला (और जब नबी को ऐसा ख़िताब किया जा रहा है तो और लोग इनकार करके कहाँ रहेंगे, सो इसमें इशारा और कटांक्ष है अहले किताब पर। पस दोनों सूरतों पर इनकार करने वाले और मुख़ालिफ़ लोगों का जवाब हो गया)।

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا رُسُلًا مِّنْ قَبْلِكَ وَجَعَلْنَا

لَهُمْ اَزْوَاجًا وَّذُرِّيَّةً ۭ وَمَا كَانَ لِرَسُوْلٍ اَنْ يَّاْتِيَ بِاٰيَةٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ ۭ لِكُلِّ اَجَلٍ كِتَابٌ ۝ يَمْحُوا اللّٰهُ مَا يَشَاۗءُ وَيُثْبِتُ ښ وَعِنْدَهٗٓ اُمُّ الْكِتٰبِ ۝ وَاِنْ مَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذِيْ نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ وَعَلَيْنَا الْحِسَابُ ۝ اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا نَاْتِي الْاَرْضَ نَنْقُصُهَا مِنْ اَطْرَافِهَا ۭ وَاللّٰهُ يَحْكُمُ لَا مُعَقِّبَ لِحُكْمِهٖ ۭ وَهُوَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝ وَقَدْ مَكَرَ الَّذِيْنَ مِنْ

قَبْلِهِمْ فَلِلّٰهِ الْمَكْرُ جَمِيْعًا ۖ يَعْلَمُ مَا تَكْسِبُ كُلُّ نَفْسٍ ۗ وَسَيَعْلَمُ الْكُفّٰرُ لِمَنْ عُقْبَى الدَّارِ ﴿٤٢﴾ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَسْتَ مُرْسَلًا ۚ قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ۢ بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ۙ وَمَنْ عِنْدَهٗ عِلْمُ الْكِتٰبِ ﴿٤٣﴾

व ल-क़द् अर्सल्ना रुसुलम् मिन् क़ब्लि-क व जअ़ल्ना लहुम् अज़्वाजंव्-व ज़ुर्रिय्य-तन्, व मा का-न लि-रसूलिन् अंय्यअ्ति-य बिआयतिन् इल्ला बि-इज़्निल्लाहि, लिकुल्लि अ-जलिन् किताब (38) यम्हुल्लाहु मा यशा-उ व युस्बितु व अ़िन्दहू उम्मुल्-किताब (39) व इम्मा नुरियन्न-क बअ्ज़ल्लज़ी नअ़िदुहुम् औ न-तवफ़्फ़यन्न-क फ़-इन्नमा अ़लैकल्-बलाग़ु व अ़लैनल्-हिसाब (40) अ-व लम् यरौ अन्ना नअ्तिल्-अर्-ज़ नन्क़ुसुहा मिन् अत्राफ़िहा, वल्लाहु यह्कुमु ला मुअ़क़्क़ि-ब लिहुक्मिही, व हु-व सरीअ़ुल्-हिसाब (41) व क़द् म-करल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् फ़लिल्लाहिल्-मक्रु जमीअ़न्, यअ़्लमु मा तक्सिबु कुल्लु नफ़्सिन्, व स-यअ़्लमुल्-कुफ़्फ़ारु लिमन् अ़ुक़्बद्दार (42) व यक़ूलुल्लज़ी-न क-फ़रू लस्-त मुर्सलन्, क़ुल् कफ़ा बिल्लाहि

और भेज चुके हैं हम कितने रसूल तुझसे पहले और हमने दी थीं उनको बीवियाँ और औलाद, और नहीं हुआ किसी रसूल से कि वह ले आये कोई निशानी मगर अल्लाह की इजाज़त से, हर एक वादा है लिखा हुआ। (38) मिटाता है अल्लाह जो चाहे और बाक़ी रखता है, और उसी के पास है असल किताब। (39) और अगर दिखलायें हम तुझको कोई वादा जो हमने किया उनसे, या तुझको उठा लें सो तेरे ज़िम्मे तो पहुँचा देना है और हमारे ज़िम्मे है हिसाब लेना। (40) क्या वे नहीं देखते कि हम चले आते हैं ज़मीन को घटाते उसके किनारों से, और अल्लाह हुक्म करता है, कोई नहीं कि पीछे डाले उसका हुक्म, और वह जल्द लेता है हिसाब। (41) और फ़रेब कर चुके हैं जो उनसे पहले थे, सो अल्लाह के हाथ में है सब फ़रेब, जानता है जो कुछ कमाता है हर एक जी, और अब मालूम किये लेते हैं काफ़िर कि किसका होता है पिछला घर। (42) और कहते हैं काफ़िर कि तू भेजा हुआ नहीं आया। कह दे अल्लाह काफ़ी

शहीदम्-बैनी व बैनकुम् व मन् अ़िन्दहू अ़िल्मुल्-किताब (43) ✿	है गवाह मेरे और तुम्हारे बीच में, और जिसको ख़बर है किताब की। (43) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (अहले किताब में से बाज़ों का जो नुबुव्वत पर यह ताना है कि उनके पास कई बीवियाँ हैं सो इसका जवाब यह है कि) हमने यक़ीनन आप से पहले बहुत-से रसूल भेजे, और हमने उनको बीवियाँ और बच्चे भी दिये (यह रसूल होने के विरुद्ध कौनसी बात है। ऐसा ही मज़मून दूसरी आयत यानी सूरः निसा की आयत 54 में है) और (चूँकि शरीअ़तों के मुख़्तलिफ़ और भिन्न होने का शुब्हा दूसरे शुब्हात से ज़्यादा मशहूर और ऊपर की आयतों में बहुत संक्षिप्त रूप में ज़िक्र हुआ था इसलिये इसको आगे दोबारा और विस्तार से इरशाद फ़रमाते हैं, कि जो शख़्स नबी पर शरीअ़तों के अलग-अलग और भिन्न होने का शुब्हा करता है वह दर पर्दा नबी को अहकाम का मालिक समझता है, हालाँकि) किसी पैग़म्बर के इख़्तियार में यह बात नहीं कि एक आयत (यानी एक हुक्म) भी बिना ख़ुदा तआ़ला के हुक्म के (अपनी तरफ़ से) ला सके (बल्कि अहकाम का मुक़र्रर होना अल्लाह की इजाज़त व इख़्तियार पर मौक़ूफ़ है, और ख़ुदा तआ़ला की हिक्मत व मस्लेहत के एतिबार से यह मामूल मुक़र्रर है कि) हर ज़माने के मुनासिब ख़ास-ख़ास अहकाम होते हैं (फिर दूसरे ज़माने में कुछ मामलात में दूसरे अहकाम आते हैं और पहले अहकाम ख़त्म हो जाते हैं और बाज़े अपने हाल पर बाक़ी रहते हैं। पस) ख़ुदा तआ़ला (ही) जिस हुक्म को चाहें मौक़ूफ़ कर देते हैं और जिस हुक्म को चाहें क़ायम रखते हैं, और असल किताब (यानी लौह-ए-महफ़ूज़) उन्हीं के पास (रहती) है (और ये सब अहकाम एक-दूसरे को निरस्त करने वाले, निरस्त होने वाले और क़ायम व बाक़ी रहने वाले उसमें दर्ज हैं, वह सब की जामे और गोया मीज़ानुल-कुल है, यानी जहाँ से ये अहकाम आते हैं वह अल्लाह ही के क़ब्ज़े में है, पस पहले अहकाम के मुवाफ़िक़ या उनके विपरीत अहकाम लाने की किसी को गुन्जाईश और हिम्मत ही नहीं हो सकती)।

और (ये लोग जो इस बिना पर नुबुव्वत का इनकार करते हैं कि अगर आप नबी हैं तो नुबुव्वत के इनकार पर जिस अ़ज़ाब का वादा किया जाता है वह अ़ज़ाब क्यों नाज़िल नहीं होता, इसके बारे में सुन लीजिये कि) जिस बात का (यानी अ़ज़ाब का) हम उनसे (नुबुव्वत का इनकार करने पर) वायदा कर रहे हैं उसमें का बाज़ा वाक़िआ़ अगर हम आपको दिखला दें (यानी आपकी ज़िन्दगी में कोई अ़ज़ाब उन पर नाज़िल हो जाये) चाहे (उस अ़ज़ाब के नाज़िल होने से पहले) हम आपको वफ़ात दे दें (फिर बाद में वह अ़ज़ाब आये चाहे दुनिया में या आख़िरत में दोनों हालतों में, आप फ़िक्र व एहतिमाम न करें क्योंकि) बस आपके ज़िम्मे तो सिर्फ़ (अहकाम का) पहुँचा देना है और दारोगीर "यानी पूछताछ और पकड़" करना तो हमारा काम है (आप इस

फ़िक्र में क्यों पड़ें कि अगर वाक़े हो जाये तो बेहतर है, शायद ईमान ले आयें। और उन लोगों पर भी ताज्जुब है कि कुफ़्र पर अ़ज़ाब के आने का एक दम से कैसे इनकार कर रहे हैं)। क्या (अ़ज़ाब आने की निशानियों और शुरूआ़ती चीज़ों में से) इस बात को नहीं देख रहे हैं कि हम (इस्लाम की फ़तह के ज़रिये से उनकी) ज़मीन को चारों तरफ़ से लगातार कम करते चले आते हैं (यानी इस्लामी फ़ुतूहात के सबब उनकी हुकूमत व सरदारी दिन-ब-दिन घटती जा रही है, सो यह भी तो एक क़िस्म का अ़ज़ाब है जो असली अ़ज़ाब आने से पहले का एक नमूना और निशानी है जैसा कि एक दूसरी आयत यानी सूरः सज्दा आयत 21 में है) और अल्लाह (जो चाहता है) हुक्म करता है, उसके हुक्म को कोई हटाने वाला नहीं (पस छोटा अ़ज़ाब हो या बड़ा अ़ज़ाब जो भी हो उसको कोई उसके शरीकों या ग़ैर-शरीकों में से रद्द नहीं कर सकता)। और (अगर उनको थोड़ी मोहलत भी हो गई तो क्या है) वह बड़ी जल्दी हिसाब लेने वाला है (वक़्त की देर है, फिर फ़ौरन ही वायदा की गयी सज़ा शुरू हो जायेगी)।

और (ये लोग जो रसूल को तकलीफ़ पहुँचाने या इस्लाम में कमी व ऐब निकालने में तरह तरह की तदबीरें करते हैं तो इनसे कुछ नहीं होता। चुनाँचे) इनसे पहले जो (काफ़िर) लोग हो चुके हैं उन्होंने (भी इन ही उद्देश्यों के लिये बड़ी-बड़ी) तदबीरें कीं, सो (कुछ भी न हुआ क्योंकि) असल तदबीर तो खुदा ही की है (उसके सामने किसी की नहीं चलती, सो अल्लाह ने उनकी वो तदबीरें चलने न दीं और) उसको सब ख़बर रहती है जो शख़्स जो कुछ भी करता है (फिर उसको वक़्त पर सज़ा देता है)। और (इसी तरह) इन काफ़िरों (के आमाल की भी उसको सब ख़बर है सो इन) को (भी) अभी मालूम हुआ जाता है कि उस आ़लम "यानी आख़िरत" में नेक अन्जामी किसके हिस्से में है (आया इनके या मुसलमानों के, जल्द ही इनको अपने बुरे अन्जाम और आमाल की सज़ा मालूम हो जायेगी)।

और ये काफ़िर लोग (सज़ाओं को भूले हुए) यूँ कह रहे हैं कि (नऊज़ु बिल्लाह) आप पैग़म्बर नहीं। आप फ़रमा दीजिये कि (तुम्हारे बेमायने इनकार से क्या होता है) मेरे और तुम्हारे दरमियान (मेरी नुबुव्वत पर) अल्लाह तआ़ला और वह शख़्स जिसके पास (आसमानी) किताब का इल्म है (जिसमें मेरी नुबुव्वत की तस्दीक़ है) काफ़ी गवाह हैं (इससे मुराद अहले किताब के वे इन्साफ़-पसन्द उलेमा हैं जो नुबुव्वत की भविष्यवाणी देखकर ईमान ले आये थे। मतलब यह हुआ कि मेरी नुबुव्वत की दो दलीलें हैं- अ़क़्ली और किताबी। अ़क़्ली तो यह कि हक़ तआ़ला ने मुझको मोजिज़े अ़ता फ़रमाये जो नुबुव्वत की दलील हैं, और अल्लाह तआ़ला के गवाह होने के यही मायने हैं। और किताबी यह है कि पिछली आसमानी किताबों में इसकी ख़बर मौजूद है अगर यक़ीन न आये तो इन्साफ़-पसन्द और सही उलेमा से पूछ लो वे ज़ाहिर कर देंगे। पस अ़क़्ली व नक़ली (किताबी व रिवायती) दलीलों के होते हुए नुबुव्वत का इनकार करना सिवाय बदबख़्ती के और क्या है, किसी अ़क़्ल रखने वाले को इससे शुब्हा न होना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

काफ़िरों व मुश्रिकों की रसूल व नबी के मुताल्लिक़ एक आ़म धारणा यह थी कि वह बशर और इनसान के अ़लावा कोई मख़्लूक़ जैसे फ़रिश्ते होनी चाहियें, जिसकी वजह से आ़म इनसानों से उनकी बरतरी स्पष्ट हो जाये। क़ुरआने करीम ने उनके इस ग़लत ख़्याल का जवाब कई आयतों में दिया है कि तुमने नुबुव्वत व रिसालत की हक़ीक़त और हिक्मत ही को नहीं पहचाना, इसलिये ऐसे ख़्यालों और धारणाओं के शिकार हुए। क्योंकि रसूल को हक़ तआ़ला एक नमूना बनाकर भेजते हैं कि उम्मत के सारे इनसान उनकी पैरवी करें, उन्हीं जैसे आमाल व अख़्लाक़ सीखें, और ज़ाहिर है कि कोई इनसान अपने हमजिन्स इनसान ही की पैरवी और इत्तिबा कर सकता है, जो उसकी जिन्स का न हो उसकी पैरवी इनसान से नामुम्किन है। जैसे फ़रिश्ते को न भूख लगे न प्यास न नफ़्सानी इच्छाओं से उसको कोई वास्ता, न उसको नींद आये न थकान हो, अब अगर इनसानों को उनके इत्तिबा और पैरवी का हुक्म दिया जाता तो उनके लिये उनकी क़ुदरत से ज़्यादा तकलीफ़ हो जाती। इस जगह भी मुश्रिकों का यही एतिराज़ पेश हुआ, ख़ुसूसन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के कई बीवियाँ रखने से उनका यह शुब्हा और बढ़ा, इसका जवाब पहली आयत के शुरूआ़ती जुमलों में यह दिया गया कि एक या एक से ज़्यादा निकाह करने और बीवी बच्चों वाला होने को तुमने किस दलील से नुबुव्वत व रिसालत के ख़िलाफ़ समझ लिया? अल्लाह तआ़ला की तो दुनिया की शुरूआ़त ही से यही सुन्नत (तरीक़ा) रही है कि वह अपने पैग़म्बरों को बीवी-बच्चों वाले बनाते हैं, जितने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम पहले गुज़रे हैं और उनमें से कुछ की नुबुव्वत के तुम भी क़ायल हो, वे सब अनेक बीवियाँ रखते थे, और औलाद वाले थे। इसको नुबुव्वत व रिसालत या बुज़ुर्गी और विलायत के ख़िलाफ़ समझना नादानी है।

सही बुख़ारी व मुस्लिम में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं तो रोज़ा भी रखता हूँ और इफ़्तार भी करता हूँ (यानी ऐसा नहीं कि हमेशा रोज़े ही रखा करूँ) और फ़रमाया कि मैं रात में सोता भी हूँ और नमाज़ के लिये खड़ा भी होता हूँ (यानी ऐसा नहीं कि सारी रात इबादत ही करूँ) और गोश्त भी खाता हूँ, औरतों से निकाह भी करता हूँ। जो शख़्स मेरी इस सुन्नत को क़ाबिले एतिराज़ समझे वह मुसलमान नहीं।

وَمَا كَانَ لِرَسُوْلٍ اَنْ يَّاْتِيَ بِاٰيَةٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ.

यानी किसी रसूल को इख़्तियार नहीं कि वह एक आयत भी ख़ुदा तआ़ला के हुक्म के बग़ैर ख़ुद ला सके।

काफ़िर व मुश्रिक लोग जो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के सामने मुख़ालफ़त व दुश्मनी भरे सवालात पेश करते आये हैं और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने भी उस ज़माने के मुश्रिकों ने पेश किये, उनमें दो सवाल बहुत आ़म हैं- एक यह कि अल्लाह की किताब

में हमारी इच्छा व मर्ज़ी के मुताबिक़ अहकाम नाज़िल हुआ करें, जैसे सूरः यूनुस में उनकी यह दरख़्वास्त बयान हुई है किः

اِئْتِ بِقُرْاٰنٍ غَيْرِ هٰذَآ اَوْ بَدِّلْهُ.

यानी या तो आप इस मौजूदा क़ुरआन के बजाय बिल्कुल ही कोई दूसरा क़ुरआन ले आईये जिसमें हमारे बुतों की इबादत को मना न किया गया हो, या फिर आप ख़ुद ही इसके लाये हुए अहकाम को बदल दीजिये, अ़ज़ाब की जगह रहमत और हराम की जगह हलाल कर दीजिये।

दूसरा सवाल अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के खुले मोजिज़े देखने के बावजूद नये-नये मोजिज़ों का मुतालबा करना कि फ़ुलाँ क़िस्म का मोजिज़ा दिखाईये तो हम मुसलमान हों। क़ुरआने करीम के इस जुमले में लफ़्ज़ आयत से दोनों चीज़ें मुराद हो सकती हैं, क्योंकि क़ुरआनी परिभाषा में क़ुरआनी आयतों को भी आयत कहा जाता है, और मोजिज़े को भी। इसी लिये इस आयत की तफ़सीर में मुफ़स्सिरीन हज़रात में से कुछ ने क़ुरआनी आयत मुराद लेकर यह मतलब बयान किया कि किसी पैग़म्बर को यह इख़्तियार नहीं होता कि अपनी तरफ़ से अपनी किताब में कोई आयत बना ले, और कुछ ने इस आयत से मुराद मोजिज़ा लेकर यह मायने क़रार दिये कि किसी रसूल व नबी को अल्लाह ने यह इख़्तियार नहीं दिया कि जिस वक़्त चाहे और जिस तरह का चाहे मोजिज़ा ज़ाहिर कर दे। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में फ़रमाया कि यहाँ क़ायदे के मुताबिक़ गुंजाईश होने के सबब ये दोनों मुराद हो सकते हैं और दोनों तफ़सीरें सही हो सकती हैं।

इस लिहाज़ से इस आयत के मज़मून का ख़ुलासा यह हुआ कि हमारे रसूल से क़ुरआनी आयतों के बदलने का मुतालबा बेजा और ग़लत है, हमने ऐसा इख़्तियार किसी रसूल को नहीं दिया। इसी तरह यह मुतालबा कि फ़ुलाँ क़िस्म का मोजिज़ा (करिश्मा और असाधारण काम) दिखलाईये, यह भी नुबुव्वत की हक़ीक़त से अज्ञानता की दलील है। क्योंकि किसी नबी व रसूल के इख़्तियार में नहीं होता कि लोगों की इच्छा के मुताबिक़ जो वे चाहें मोजिज़ा ज़ाहिर कर दें।

لِكُلِّ اَجَلٍ كِتَابٌ

अजल के मायने निर्धारित मुद्दत और मुक़र्ररा मियाद के आते हैं, और किताब इस जगह मस्दर के मायने में है यानी तहरीर। मायने यह हैं कि हर चीज़ की मियाद और मात्रा अल्लाह तआ़ला के पास लिखी हुई है, उसने कायनात के पहले दिन में लिख दिया है कि फ़ुलाँ शख़्स फ़ुलाँ वक़्त पैदा होगा और इतने दिन ज़िन्दा रहेगा, कहाँ-कहाँ जायेगा, क्या-क्या करेगा, किस वक़्त और कहाँ मरेगा।

इसी तरह यह भी लिखा हुआ है कि फ़ुलाँ ज़माने में फ़ुलाँ पैग़म्बर पर क्या वही और अहकाम नाज़िल होंगे, क्योंकि अहकाम हर ज़माने और हर क़ौम के हाल के मुनासिब आते रहना ही अ़क़्ल व इन्साफ़ का तक़ाज़ा है, और यह भी लिखा हुआ है कि फ़ुलाँ पैग़म्बर से फ़ुलाँ वक़्त किस-किस मोजिज़े का ज़हूर होगा।

इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह मुतालबा कि फ़ुलाँ क़िस्म के

क़ुरआनी अहकाम में तब्दीली करायें या यह मुतालबा कि फ़ुलाँ ख़ास मोजिज़ा दिखलायें एक मुख़ालफ़त भरा और ग़लत मुतालबा है जो रिसालत व नुबुव्वत की हक़ीक़त से बेख़बर होने पर आधारित है।

يَمْحُوا اللّٰهُ مَا يَشَآءُ وَيُثْبِتُ وَعِنْدَهٗٓ اُمُّ الْكِتٰبِ○

उम्मुल-किताब के लफ़्ज़ी मायने असल किताब के हैं। इससे मुराद वह लौह-ए-महफ़ूज़ है जिसमें कोई हेर-फेर और तब्दीली नहीं हो सकती।

आयत के मायने यह हैं कि हक़ तआ़ला अपनी कामिल क़ुदरत और पूर्ण हिक्मत से जिस चीज़ को चाहता है मिटा देता है, और जिस चीज़ को चाहता है साबित और बाक़ी रखता है। और इस मिटाने व बाक़ी रखने के बाद जो हुक्म वाक़े होता है वह अल्लाह तआ़ला के पास महफ़ूज़ है, जिस पर न किसी की पहुँच है न उसमें कोई कमी-बेशी हो सकती है।

तफ़सीर के इमामों में से हज़रत सईद बिन जुबैर और क़तादा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा वग़ैरह ने इस आयत को भी शरीअ़तों और अहकाम के मिटाने व साबित रखने यानी नस्ख़ (अहकाम में तब्दीली, उनके पूरी तरह समाप्त हो जाने या निरस्त व रद्द होने) के मसले के मुताल्लिक़ क़रार दिया है, और आयत का मतलब यह बयान फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला जो हर ज़माने और हर क़ौम के लिये मुख़्तलिफ़ रसूलों के ज़रिये अपनी किताबें भेजते हैं, जिनमें शरीअ़त के अहकाम और फ़राईज़ का बयान होता है, यह ज़रूरी नहीं है कि ये सब अहकाम हमेशा के लिये हों और हमेशा बाक़ी रहें, बल्कि क़ौमों के हालात और ज़माने के बदलाव के अनुकूल अपनी हिक्मत के ज़रिये जिस हुक्म को चाहते हैं मिटा देते हैं और जिसको चाहते हैं साबित और बाक़ी रखते हैं, और असल किताब बहरहाल उनके पास महफ़ूज़ है जिसमें पहले ही से यह लिखा हुआ है कि फ़ुलाँ हुक्म जो फ़ुलाँ क़ौम के लिये नाज़िल किया गया है यह एक ख़ास मियाद के लिये या ख़ास हालात की बिना पर है, जब वह मियाद गुज़र जायेगी या वो हालात बदल जायेंगे तो यह हुक्म भी बदल जायेगा। उस उम्मुल-किताब में उसकी मियाद और निर्धारित वक़्त भी पूरी निश्चितता के साथ दर्ज है, और यह भी कि इस हुक्म को बदलकर कौनसा हुक्म लाया जायेगा।

इससे यह शुब्हा भी जाता रहा कि अल्लाह के अहकाम कभी मन्सूख़ (निरस्त व रद्द) न होने चाहियें, क्योंकि कोई हुक्म जारी करने के बाद मन्सूख़ करना इसकी निशानी है कि हुक्म जारी करने वाले को हालात का अन्दाज़ा न था, इसलिये हालात देखने के बाद उसको मन्सूख़ (निरस्त व रद्द) करना पड़ा, और ज़ाहिर है कि हक़ तआ़ला की शान इससे बुलन्द व बाला है कि कोई चीज़ उसके इल्म से बाहर हो, क्योंकि ऊपर बयान हुई इबारत से मालूम हो गया कि जिस हुक्म को मन्सूख़ किया जाता है अल्लाह तआ़ला के इल्म में पहले से होता है कि यह हुक्म सिर्फ़ इतनी मुद्दत के लिये जारी किया गया है, उसके बाद बदला जायेगा। इसकी मिसाल ऐसी होती है जैसे किसी मरीज़ का हाल देखकर कोई हकीम या डॉक्टर एक दवा उस वक़्त के मुनासिबे हाल तजवीज़ करता है और वह जानता है कि इस दवा का असर यह होगा, उसके बाद

इस दवा को बदलकर फ़ुलाँ दवा दी जायेगी। ख़ुलासा यह है कि इस तफ़सीर के मुताबिक़ आयत में मिटाने और साबित व क़ायम रखने से मुराद अहकाम का मन्सूख़ होना और बाक़ी रहना है।

और तफ़सीर के इमामों की एक जमाअ़त- हज़रत सुफ़ियान सौरी इमाम वकीअ़ रह. वग़ैरह ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत की दूसरी तफ़सीर नक़ल की है जिसमें आयत के मज़मून को तक़दीर के लिखे से संबन्धित क़रार दिया है और आयत के मायने यह बयान किये गये हैं कि क़ुरआन व हदीस की वज़ाहतों के मुताबिक़ मख़्लूक़ात की तक़दीरें और हर शख़्स की उम्र और ज़िन्दगी भर में मिलने वाला रिज़्क़ और पेश आने वाली राहत व मुसीबत और इन सब चीज़ों की मिक़्दारें (मात्रायें और अन्दाज़े) अल्लाह तआ़ला ने कायनात के पहले दिन में मख़्लूक़ात की पैदाईश से भी पहले लिखी हुई हैं, फिर बच्चे की पैदाईश के वक़्त फ़रिश्तों को भी लिखवा दिया जाता है और हर साल शबे-क़द्र में उस साल के अन्दर पेश आने वाले मामलात का चिट्ठा फ़रिश्तों के सुपुर्द कर दिया जाता है।

ख़ुलासा यह है कि मख़्लूक़ के हर फ़र्द की उम्र, रिज़्क़ और उसके तमाम काम मुतैयन और लिखे हुए हैं, मगर अल्लाह तआ़ला तक़दीर के उस लिखे में से जिसको चाहते है मिटा देते हैं और जिसको चाहते हैं बाक़ी रखते हैं।

وَعِنْدَهٗٓ اُمُّ الْكِتٰبِ○

यानी असल किताब जिसके मुताबिक़ मिटाने और साबित व बाक़ी रखने के बाद अंततः अ़मल होना है वह अल्लाह के पास है, उसमें कोई तब्दीली व बदलाव नहीं हो सकता।

इसकी तफ़सील यह है कि बहुत-सी सही हदीसों से मालूम होता है कि कुछ आमाल से इनसान की उम्र और रिज़्क़ बढ़ जाते हैं, कुछ से घट जाते हैं। सही बुख़ारी में है कि सिला-रहमी उम्र में ज़्यादती का सबब बनती है, और मुस्नद अहमद की रिवायत में है कि कई बार आदमी कोई ऐसा गुनाह करता है कि उसके सबब रिज़्क़ से मेहरूम कर दिया जाता है, और माँ-बाप की ख़िदमत व इताअ़त से उम्र बढ़ जाती है, और अल्लाह की तक़दीर को कोई चीज़ सिवाय दुआ़ के टाल नहीं सकती।

इन तमाम रिवायतों से मालूम होता है कि अल्लाह तआ़ला ने जो उम्र या रिज़्क़ वग़ैरह किसी की तक़दीर में लिख दिये हैं वो बाज़े आमाल की वजह से कम या ज़्यादा हो सकते हैं और दुआ़ की वजह से भी तक़दीर बदली जा सकती है।

इस आयत में इसी मज़मून का बयान इस तरह किया गया कि तक़दीर की किताब में लिखी हुई उम्र या रिज़्क़ या मुसीबत या राहत वग़ैरह में जो तब्दीली या बदलाव किसी अ़मल या दुआ़ की वजह से होता है उससे मुराद तक़दीर की वह किताब है जो फ़रिश्तों के हाथ में या उनके इल्म में है, उसमें कई बार कोई हुक्म किसी ख़ास शर्त पर लटका होता है, जब वह शर्त न पाई जाये तो यह हुक्म भी नहीं रहता, और फिर यह शर्त कई बार तो तहरीर में लिखी हुई फ़रिश्तों के इल्म में होती है, कई बार लिखी हुई नहीं होती सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के इल्म में होती है।

जब वह हुक्म बदला जाता है तो सब हैरत में रह जाते हैं, इस तरह की तक़दीर **मुअल्लक़** कहलाती है जिसमें इस आयत की वज़ाहत के मुताबिक़ मिटाने या बाक़ी व साबित रखने का अ़मल होता रहता है, लेकिन आयत के आख़िरी जुमले 'व अिन्दहू उम्मुल-किताबि' ने बतला दिया कि इस **मुअल्लक़** तक़दीर के ऊपर एक **मुब्रम** तक़दीर है जो उम्मुल-किताब में लिखी हुई अल्लाह तआ़ला के पास है, वह सिर्फ़ अल्लाह के इल्म के लिये मख़्सूस है, उसमें वो अहकाम लिखे जाते हैं तो आमाल या दुआ़ की शर्तों के बाद आख़िरी नतीजे के तौर पर होते हैं, इसी लिये वह मिटाने व साबित रखने और कमी-बेशी से बिल्कुल बरी है। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

وَاِنْ مَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذِىْ نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ.

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली देने और मुत्मईन रखने के लिये इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने जो वायदे आप से किये हैं कि इस्लाम की मुकम्मल फ़तह होगी, और कुफ़्र व काफ़िर ज़लील व रुस्वा होंगे, तो यह होकर रहेगा, मगर आप इस फ़िक्र में न पड़ें कि यह मुकम्मल फ़तह कब होगी, मुम्किन है कि आपकी ज़िन्दगी में हो जाये और यह भी मुम्किन है कि वफ़ात के बाद हो। और आपके इत्मीनान के लिये तो यह भी काफ़ी है कि आप बराबर देख रहे हैं कि हम काफ़िरों की ज़मीनों को उनके किनारों से घटाते चले जाते हैं, यानी ज़मीन के वो किनारे (या इलाक़े व हिस्से) मुसलमानों के क़ब्ज़े में आ जाते हैं, इस तरह उनके क़ब्ज़े वाली ज़मीन घटती जा रही है और मुसलमानों के लिये कुशादगी व आसानी होती जाती है। इस तरह एक दिन उस फ़तह की तकमील भी हो जायेगी। हुक्म अल्लाह तआ़ला ही के हाथ में है, उसके हुक्म को कोई टालने वाला नहीं, वह बहुत जल्द हिसाब लेने वाला है।

(अल्लाह तआ़ला का शुक्र व एहसान है कि सूरः रअ़द की तफ़सीर पूरी हुई।)
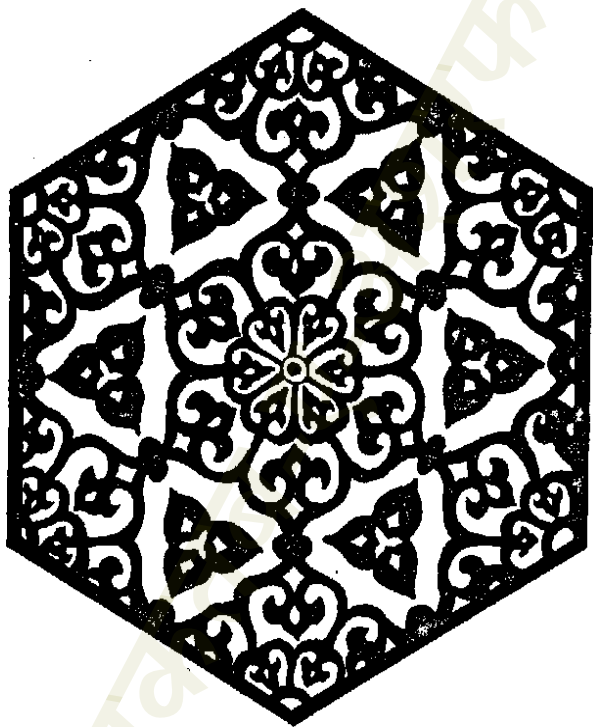
* सूरः इब्राहीम *

यह सूरत मक्की है। इसमें 52 आयतें और 7 रुकूअ़ हैं।

सूरः इब्राहीम

सूरः इब्राहीम मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 52 आयतें और 7 रुकूअ़ हैं।

اٰیَاتُہَا ۵۲ (۱۴) سُوْرَۃُ اِبْرٰهِیْمَ مَکِّیَّۃٌ (۷۲) رُکُوْعَاتُہَا ۷

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ ○

الٓرٰ كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ اِلَیْكَ لِتُخْرِجَ النَّاسَ مِنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ ۙ بِاِذْنِ رَبِّهِمْ اِلٰى صِرَاطِ الْعَزِیْزِ الْحَمِیْدِ ○ اللّٰهِ الَّذِیْ لَهٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ ؕ وَوَیْلٌ لِّلْكٰفِرِیْنَ مِنْ عَذَابٍ شَدِیْدِ ○ الَّذِیْنَ یَسْتَحِبُّوْنَ الْحَیٰوةَ الدُّنْیَا عَلَى الْاٰخِرَةِ وَیَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِیْلِ اللّٰهِ وَیَبْغُوْنَهَا عِوَجًا ؕ اُولٰٓئِكَ فِیْ ضَلٰلٍۢ بَعِیْدٍ ○

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-रा। किताबुन् अन्ज़ल्नाहु इलै-क लितुख़्रिजन्ना-स मिनज़्ज़ुलुमाति इलन्नूरि बि-इज़्नि रब्बिहिम् इला सिरातिल्-अज़ीज़िल्-हमीद (1) अल्लाहिल्लज़ी लहू मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्अर्ज़ि, व वैलुल्-लिल्-काफ़िरी-न मिन् अ़ज़ाबिन् शदीद (2) अल्लज़ी-न यस्तहिब्बूनल्-हयातद्दुन्या अ़लल्-आख़िरति व यसुद्दू-न अ़न् सबीलिल्लाहि व यब्ग़ूनहा अ़ि-वजन्, उलाइ-क फ़ी ज़लालिम्-बअ़ीद (3)	यह एक किताब है कि हमने उतारी तेरी तरफ़ कि तू निकाले लोगों को अंधेरों से उजाले की तरफ़, उनके रब के हुक्म से रस्ते पर उस ज़बरदस्त ख़ूबियों वाले (1) अल्लाह के, जिसका है जो कुछ कि मौजूद है आसमानों में और जो कुछ है ज़मीन में, और मुसीबत है काफ़िरों को एक सख़्त अ़ज़ाब से (2) जो कि पसन्द रखते हैं ज़िन्दगी दुनिया की आख़िरत से, और रोकते हैं अल्लाह की राह से, और तलाश करते हैं उसमें कजी (ऐब और कमी), वे रास्ता भूलकर जा पड़े हैं दूर। (3)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम्-रा (इसके मायने तो अल्लाह ही को मालूम हैं)। यह (क़ुरआन) एक किताब है जिसको हमने आप पर नाज़िल फ़रमाया है ताकि आप (इसके ज़रिये से) तमाम लोगों को उनके परवर्दिगार के हुक्म से (तब्लीग़ के दर्जे में कुफ़्र के) अंधकार से निकालकर (ईमान व हिदायत की) रोशनी की तरफ़ यानी ख़ुदा-ए-ग़ालिब तारीफ़ वाले की राह की तरफ़ लाएँ (रोशनी में लाने का मतलब यह है कि वह राह बतला दें)। जो ऐसा ख़ुदा है कि उसी की मिल्क है जो कुछ कि आसमानों में है और जो कुछ कि ज़मीन में है, और (जब यह किताब ख़ुदा का रास्ता बतलाती है तो) बड़ी ख़राबी यानी बड़ा सख़्त अ़ज़ाब है उन काफ़िरों को जो (इस राह को न तो ख़ुद क़ुबूल करते हैं बल्कि) दुनियावी ज़िन्दगानी को आख़िरत पर तरजीह देते हैं (इसलिये दीन की जुस्तजू व तहक़ीक़ नहीं करते) और (न दूसरों को यह राह इख़्तियार करने देते हैं बल्कि) अल्लाह की (ज़िक्र हुई) इस राह से रोकते हैं और उसमें टेढ़ (यानी शुब्हात) को ढूँढते रहते हैं (जिनके ज़रिये से दूसरों को गुमराह कर सकें) ऐसे लोग बड़ी दूर की गुमराही में हैं (यानी वह गुमराही हक़ से बड़ी दूर है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरत और इसके मज़ामीन

यह क़ुरआने करीम की चौदहवीं सूरत सूरः इब्राहीम शुरू होती है। यह सूरत मक्की है, हिजरत से पहले नाज़िल हुई, सिवाय चन्द आयतों के जिनके बारे में मतभेद है कि मदनी हैं या मक्की।

इस सूरत के शुरू में रिसालत व नुबुव्वत और उनकी कुछ विशेषताओं का बयान है, फिर तौहीद का मज़मून और उसके सुबूतों का ज़िक्र है, इसी सिलसिले में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा ज़िक्र किया गया है और इसी की मुनासबत से सूरत का नाम सूरः इब्राहीम रखा गया है।

الٓرٰ كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ اِلَيْكَ لِتُخْرِجَ النَّاسَ مِنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِ رَبِّهِمْ

'अलिफ़्-लाम्-रा' उन हुरूफ़े मुक़त्तआ़त में से हैं जिनके बारे में बार-बार ज़िक्र किया जा चुका है कि इसमें ज़्यादा बेहतर और बेग़ुबार तरीक़ा पहले बुज़ुर्गों का है कि इस पर ईमान व यक़ीन रखें कि जो कुछ इसकी मुराद है वह हक़ है, लेकिन इसके मायने की तहक़ीक़ व तफ़तीश के पीछे न पड़ें।

كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ اِلَيْكَ

में नहवी तरकीब के लिहाज़ से ज़्यादा स्पष्ट और साफ़ बात यह है कि इसको लफ़्ज़ हाज़ा जो यहाँ पोशीदा है की ख़बर क़रार दी जाये, और जुमले के मायने यह हों कि यह वह किताब है

जिसको हमने आपकी तरफ़ नाज़िल किया है। इसमें नाज़िल करने की निस्बत हक़ तआ़ला शानुहू की तरफ़ और ख़िताब की निस्बत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ करने में दो चीज़ों की तरफ़ इशारा पाया गया- एक यह कि यह किताब बहुत ही ऊँचे मक़ाम व मर्तबे वाली है, कि इसको ख़ुद ज़ाते हक़ तआ़ला ने नाज़िल फ़रमाया है। दूसरे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बुलन्द मक़ाम व मर्तबे वाला होने की तरफ़ इशारा है कि आपको इसका पहला मुख़ातब बनाया है।

لِتُخْرِجَ النَّاسَ مِنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ. بِاِذْنِ رَبِّهِمْ.

लफ़्ज़ 'नास' आ़म इनसानों के लिये बोला जाता है। इससे मुराद तमाम आ़लम के मौजूदा और आईन्दा आने वाले इनसान हैं। 'ज़ुलुमात' ज़ुल्मत की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने अंधेरे के परिचित व मशहूर हैं। यहाँ 'ज़ुलुमात' से मुराद कुफ़्र व शिर्क और बुरे आमाल की ज़ुल्मत है, और नूर से मुराद ईमान की रोशनी है। इसलिये लफ़्ज़ ज़ुलुमात को बहुवचन के लफ़्ज़ के साथ लाया गया, क्योंकि कुफ़्र व शिर्क की बहुत-सी क़िस्में हैं इसी तरह बुरे आमाल भी बेशुमार हैं, और लफ़्ज़ नूर को एक वचन के कलिमे से लाया गया क्योंकि ईमान और हक़ वाहिद (सिर्फ़ एक ही) है। आयत के मायने यह हैं कि यह किताब हमने इसलिये आपकी तरफ़ नाज़िल की है कि आप इसके ज़रिये तमाम आ़लम के इनसानों को कुफ़्र व शिर्क और बुरे कामों की अंधेरियों से निजात दिलाकर ईमान और हक़ की रोशनी में ले आयें उनके रब की इजाज़त से। यहाँ लफ़्ज़ 'रब' लाने में इस तरफ़ इशारा पाया जाता है कि अल्लाह तआ़ला का आ़म इनसानों पर यह इनाम कि अपनी किताब और पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये उनको अंधेरियों से निजात दिलायें, इसका सबब और मंशा सिवाय उस लुत्फ़ और मेहरबानी के और कुछ नहीं, जो तमाम इनसानों के ख़ालिक़ व मालिक ने अपनी शाने रबूबियत से उन पर मुतवज्जह कर रखी है, वरना अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे न किसी का कोई हक़ लाज़िम है न किसी का ज़ोर उस पर चलता है।

हिदायत सिर्फ़ ख़ुदा का फ़ेल है

इस आयत में अंधेरी से निजात देकर रोशनी में लाने को नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़ेल (काम) क़रार दिया गया है, हालाँकि हिदायत देना हक़ीक़त में हक़ तआ़ला ही का फ़ेल है, जैसा कि एक दूसरी आयत में इरशाद है:

اِنَّكَ لَا تَهْدِىْ مَنْ اَحْبَبْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَهْدِىْ مَنْ يَّشَآءُ.

"यानी आप अपने इख़्तियार से किसी को हिदायत नहीं दे सकते, बल्कि अल्लाह तआ़ला ही जिसको चाहता है हिदायत देता है।" इसी लिये इस आयत में:

بِاِذْنِ رَبِّهِمْ

का लफ़्ज़ बढ़ाकर यह शुब्हा ख़त्म कर दिया गया, क्योंकि आयत के मायने यह हो गये कि

यह कुफ़ व शिर्क की अंधेरियों से निकालकर ईमान व नेक अमल की रोशनी में लाना, अगरचे असल हक़ीक़त के एतिबार से आपके हाथ में नहीं मगर अल्लाह तआ़ला के हुक्म व इजाज़त से आप कर सकते हैं।

अहकाम व हिदायतें

इस आयत से मालूम हुआ कि आदम की तमाम औलाद और तमाम इनसानी नस्ल को बुराईयों की अंधेरियों से निकालने और रोशनी में लाने का एकमात्र ज़रिया और इनसान व इनसानियत को दुनिया व आख़िरत की बरबादी और हलाकत से निजात दिलाने का वाहिद रास्ता क़ुरआने करीम है, जितना जितना लोग इसके क़रीब आयेंगे उसी अन्दाज़ से उनको दुनिया में भी अमन व अमान और आ़फ़ियत व इत्मीनान नसीब होगा और आख़िरत में भी फ़लाह व कामयाबी हासिल होगी, और जितना इससे दूर होंगे उतना ही दोनों जहान की ख़राबियों, बरबादियों, मुसीबतों और परेशानियों के गड्ढे में गिरेंगे।

आयत के अलफ़ाज़ में यह नहीं खोला गया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम क़ुरआन के ज़रिये किस तरह लोगों को अंधेरियों से निजात देकर रोशनी में लायेंगे, लेकिन इतनी बात ज़ाहिर है कि किसी किताब के ज़रिये किसी क़ौम को दुरुस्त करने का तरीक़ा यही होता है कि उस किताब की तालीमात व हिदायात को उस क़ौम में फैलाया जाये और उनको उसका पाबन्द किया जाये।

क़ुरआने करीम की तिलावत भी मुस्तक़िल मक़सद है

मगर क़ुरआने करीम की एक अतिरिक्त ख़ुसूसियत यह भी है कि उसकी तिलावत और बग़ैर समझे हुए उसके अलफ़ाज़ का पढ़ना भी ख़ुसूसियत से इनसान के नफ़्स पर असर डालता है और उसको बुराईयों से बचने में मदद देता है। कम से कम कुफ़ व शिर्क के कैसे ही ख़ूबसूरत जाल हों क़ुरआन पढ़ने वाला अगरचे बेसमझे ही पढ़ता हो उनके फन्दे में नहीं आ सकता। हिन्दुओं के आंदोलन शुद्धि संगठन के ज़माने में इसको देखा जा चुका है कि उनके जाल में सिर्फ़ कुछ वे लोग आये जो क़ुरआन की तिलावत से भी बेगाने थे, आज ईसाई मिशनरियाँ मुसलमानों के हर ख़ित्ते में तरह-तरह के सब्ज़ बाग़ और सुनहरे जाल लिये फिरती हैं, लेकिन उनका अगर कोई असर पड़ता है तो सिर्फ़ उन घरानों पर जो क़ुरआन की तिलावत से भी ग़ाफ़िल हैं, चाहे जाहिल होने की वजह से या नई तालीम के ग़लत असर से।

शायद इसी अन्दरूनी असर की तरफ़ इशारा करने के लिये क़ुरआने करीम में जहाँ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने के मक़ासिद बतलाये गये हैं वहाँ मायनों की तालीम से पहले तिलावत का अलग से ज़िक्र किया गया है:

يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِهٖ وَيُزَكِّيْهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ.

यानी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तीन कामों के लिये भेजा गया है- पहला काम क़ुरआने मजीद की तिलावत है, और ज़ाहिर है कि तिलावत का ताल्लुक़ अलफ़ाज़ से है, मायने समझे जाते हैं उनकी तिलावत नहीं होती। दूसरा काम लोगों को बुराईयों से पाक करना, और तीसरा काम क़ुरआने करीम और हिक्मत यानी सुन्नते रसूल की तालीम देना है।

ख़ुलासा यह है कि क़ुरआने करीम एक ऐसा हिदायत नामा है जिसके मायने समझकर उस पर अ़मल करना तो असल मक़सद ही है, और इसका इनसानी ज़िन्दगी की इस्लाह (सुधार) में असरदार होना भी वाज़ेह है। इसके साथ इसके अलफ़ाज़ की तिलावत करना भी ग़ैर-शऊरी तौर पर इनसान के नफ़्स की इस्लाह में स्पष्ट असर रखता है।

इस आयत में 'अल्लाह के हुक्म से' अंधेरियों से निकालकर रोशनी में लाने की निस्बत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ करके यह भी बतला दिया गया है कि अगरचे हिदायत का पैदा करना हक़ीक़त में हक़ तआ़ला का काम है मगर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वास्ते के बग़ैर इसको हासिल नहीं किया जा सकता। क़ुरआने करीम का मफ़्हूम (मतलब और मायने) और ताबीर भी वही मोतबर है जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने क़ौल या अ़मल से बतला दी है, उसके ख़िलाफ़ कोई ताबीर मोतबर नहीं।

اِلٰی صِرَاطِ الْعَزِیْزِ الْحَمِیْدِo اللّٰہِ الَّذِیْ لَہٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ.

इस आयत के शुरू में जो ज़ुल्मत व नूर (अंधेरी व रोशनी) का ज़िक्र आया है, ज़ाहिर है कि यह वह अंधेरी और रोशनी नहीं जो आ़म आँखों से नज़र आ जाये, इसलिये इसको स्पष्ट करने के लिये इस जुमले में इरशाद फ़रमाया कि वह रोशनी अल्लाह का रास्ता है जिस पर अग्रसर होने वाला न अंधेरे में चलने वाले की तरह भटकता है न उसको ठोकर लगती है, न वह मक़सद तक पहुँचने में नाकाम होता है। अल्लाह के रास्ते से मुराद वह रास्ता है जिस पर चलकर इनसान ख़ुदा तक पहुँच सके, और उसकी रज़ा का दर्जा हासिल कर सके।

इस जगह लफ़्ज़ **अल्लाह** तो बाद में लाया गया, इससे पहले उसकी दो सिफ़तें अ़ज़ीज़ और हमीद ज़िक्र की गई हैं। अ़ज़ीज़ के मायने अ़रबी लुग़त के एतिबार से ताक़तवर और ग़ालिब के हैं, और हमीद के मायने वह ज़ात जो तारीफ़ की हक़दार हो। इन दो सिफ़तों को असल नाम (यानी अल्लाह) से पहले लाने में इस तरफ़ इशारा है कि यह रास्ता जिस पवित्र ज़ात की तरफ़ ले जाने वाला है वह ताक़तवर और ग़ालिब भी है और हर तारीफ़ की पात्र भी, इसलिये इस पर चलने वाला न कहीं ठोकर खायेगा न उसकी कोशिश बेकार होगी, बल्कि उसका मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचना यक़ीनी है, शर्त यह है कि इस रास्ते को न छोड़े।

अल्लाह तआ़ला की ये दो सिफ़तें पहले बयान करने के बाद फ़रमायाः

اَللّٰہِ الَّذِیْ لَہٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ.

यानी यह वह ज़ात है कि जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है वह सब उसी का पैदा किया हुआ और उसी की ख़ास मिल्क है, जिसमें कोई उसका शरीक नहीं।

وَوَيْلٌ لِّلْكٰفِرِيْنَ مِنْ عَذَابٍ شَدِيْدِ ۝

लफ़्ज़ 'वैल' सख़्त अ़ज़ाब और हलाकत के मायने में आता है। मायने यह हैं कि जो लोग क़ुरआन की इस नेमत के इनकारी हैं और कुफ़्र व शिर्क के अंधेरे ही में रहने को पसन्द करते हैं, उनके लिये बड़ी बरबादी और हलाकत है उस सख़्त अ़ज़ाब से जो उन पर आने वाला है।

मज़मून का ख़ुलासा

आयत का ख़ुलासा यह है कि क़ुरआने करीम इसलिये नाज़िल किया गया है कि सब इनसानों को अंधेरे से निकालकर अल्लाह के रास्ते की रोशनी में ले आये, मगर जो बदनसीब क़ुरआन ही के मुन्किर हो जायें तो वे अपने हाथों अपने आपको अ़ज़ाब में डाल रहे हैं। जो लोग क़ुरआन के अल्लाह का कलाम होने ही के मुन्किर (इनकारी) हैं वे तो इस अ़ज़ाब के पात्र बनने के मुराद हैं ही, मगर जो एतिक़ाद व यक़ीन के तौर पर मुन्किर नहीं मगर अ़मली तौर पर क़ुरआन को छोड़े हुए हैं, न तिलावत से कोई वास्ता है न इसके समझने और अ़मल करने की तरफ़ कोई तवज्जोह है वे बदनसीब भी मुसलमान होने के बावजूद इस सख़्त धमकी से बिल्कुल बरी नहीं।

الَّذِيْنَ يَسْتَحِبُّوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا عَلَى الْاٰخِرَةِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَيَبْغُوْنَهَا عِوَجًا ۗ اُولٰۤئِكَ فِيْ ضَلٰلٍۢ بَعِيْدٍ ۝

इस आयत में क़ुरआन के मुन्किरों काफ़िरों के तीन जाल (फन्दे) बतलाये गये हैं- एक यह कि वे दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत के मुक़ाबले में ज़्यादा पसन्द करते और वरीयता देते हैं, इसी लिये दुनिया के नफ़े या आराम की ख़ातिर आख़िरत का नुक़सान करना गवारा कर लेते हैं। इसमें उनके रोग की पहचान की तरफ़ इशारा है, कि ये लोग क़ुरआने करीम के स्पष्ट मोजिज़ों (निशानियों और करिश्मों) को देखने के बावजूद उससे मुन्किर (इनकार करने वाले) क्यों हैं। वजह यह है कि उनको दुनिया की मौजूदा ज़िन्दगी की मुहब्बत ने आख़िरत के मामलात से अंधा कर रखा है, इसलिये उनको अपनी अंधेरी ही पसन्द है, रोशनी की तरफ़ आने से कोई रग़बत (दिलचस्पी) नहीं।

दूसरी ख़स्लत उनकी यह बयान फ़रमाई है कि वे ख़ुद तो अंधेरियों में रहने को पसन्द करते ही हैं, ऊपर से ज़ुल्म यह है कि वे अपनी ग़लती पर पर्दा डालने के लिये दूसरों को भी रोशनी के रास्ते यानी अल्लाह के रास्ते से रोकते हैं।

क़ुरआन समझने में कुछ ग़लतियों की निशानदेही

तीसरी ख़स्लत 'यब्ग़ूनहा अ़ि-वजन्' में बयान की गई है। इसके दो मायने हो सकते हैं- एक यह कि ये लोग अपनी बुरी फ़ितरत और बद-अ़मली के सबब इस फ़िक्र में लगे रहते हैं कि अल्लाह तआ़ला के रोशन और सीधे रास्ते में कोई टेढ़ और ख़राबी नज़र आये तो उनको एतिराज़ और ताना देने का मौक़ा मिले। इमाम इब्ने कसीर ने यही मायने बयान फ़रमाये हैं।

और इस जुमले के यह मायने भी हो सकते हैं कि ये लोग इस फ़िक्र में लगे रहते हैं कि

अल्लाह के रास्ते यानी क़ुरआन व सुन्नत में कोई चीज़ उनके ख़्यालात और इच्छाओं के मुवाफ़िक़ मिल जाये तो उसको अपने सही और हक़ राह पर होने की दलील में पेश करें, तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में इसी मायने को इख़्तियार किया गया है। जैसे आजकल बेशुमार इल्म रखने वाले इसमें मुब्तला हैं कि अपने दिल में एक ख़्याल कभी ग़लती से कभी दूसरी क़ौम से प्रभावित होकर गढ़ लेते हैं, फिर क़ुरआन व हदीस में उसकी ताईद करने वाले मज़मून तलाश करते हैं और कहीं कोई लफ़्ज़ उस ख़्याल की मुवाफ़क़त में नज़र पड़ गया तो उसको अपने हक़ में क़ुरआनी दलील समझते हैं, हालाँकि यह तरीक़ा और चलन उसूली तौर पर ही ग़लत है, क्योंकि मोमिन का काम यह है कि अपने ख़्यालात व इच्छाओं से ख़ाली ज़ेहन होकर किताब व सुन्नत को देखे, जो कुछ उनसे स्पष्ट तौर पर साबित हो जाये उसी को अपना मस्लक (तरीक़ा और ज़िन्दगी गुज़ारने का रास्ता) क़रार दे।

أُولَٰئِكَ فِي ضَلَالٍ بَعِيدٍ

इस जुमले में उन काफ़िरों के बुरे अन्जाम का ज़िक्र है जिनकी तीन सिफ़तें ऊपर बयान हुई हैं, और हासिल इसका यह है कि ये लोग अपनी गुमराही में बड़ी दूर जा पहुँचे हैं, कि अब इनका सही राह पर आना मुश्किल है।

अहकाम व मसाईल

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में है कि अगरचे इस आयत में स्पष्ट तौर पर ये तीन ख़स्लतें काफ़िरों की बयान की गई हैं और इन्हीं का यह अन्जाम ज़िक्र किया गया है कि वे गुमराही में दूर चले गये हैं, लेकिन उसूल के एतिबार से जिस मुसलमान में भी ये तीन ख़स्लतें मौजूद हों वह भी इस वईद (सज़ा के वायदे) का हक़दार है। इन तीन ख़स्लतों का खुलासा यह है:

1. दुनिया की मुहब्बत को आख़िरत पर ग़ालिब रखें, यहाँ तक कि दीन की रोशनी में न आयें।

2. दूसरों को भी अपने साथ शरीक रखने के लिये अल्लाह तआला के रास्ते से रोकें।

3. क़ुरआन व सुन्नत को हेरफेर करके अपने ख़्यालात पर फ़िट करने की कोशिश करें। अल्लाह तआला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

وَمَا أَرْسَلْنَا مِن رَّسُولٍ إِلَّا بِلِسَانِ قَوْمِهِ لِيُبَيِّنَ لَهُمْ ۖ فَيُضِلُّ اللَّهُ مَن يَشَاءُ
وَيَهْدِي مَن يَشَاءُ ۚ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ

व मा अर्सल्ना मिर्रसूलिन् इल्ला बिलिसानि-क़ौमिही लियुबय्यि-न लहुम्, फ़युज़िल्लुल्लाहु मंय्यशा-उ व	और कोई रसूल नहीं भेजा हमने मगर बोली बोलने वाला अपनी क़ौम की, ताकि उनको समझाये, फिर रास्ता भुलाता है

यह्दी मंय्यशा-उ, व हुवल् अज़ीज़ुल्-हकीम (4)	अल्लाह जिसको चाहे और रास्ता दिखला देता है जिसको चाहे, और वह है ज़बरदस्त हिक्मतों वाला। (4)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (इस किताब के अल्लाह की तरफ़ से उतरी हुई होने में कुछ काफ़िरों को जो यह शुब्हा है कि यह अ़रबी क्यों है, जिससे शुब्हा व गुमान होता है कि ख़ुद पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी तरफ़ से तैयार कर लिया होगा, ग़ैर-अ़रबी भाषा में क्यों नहीं ताकि यह शुब्हा ही न होता, और क़ुरआन दूसरी आसमानी किताबों से ग़ैर-अ़रबी होने में समान भी होता, तो यह शुब्हा बिल्कुल बेहूदा है, क्योंकि) हमने (पहले) तमाम पैग़म्बरों को (भी) उन्हीं की क़ौम की भाषा में पैग़म्बर बनाकर भेजा है ताकि (उनकी भाषा में) उनसे (अल्लाह के अहकाम को) बयान करें (क्योंकि असल मक़सद बात का स्पष्ट तौर पर बयान करना है, तो सब किताबों का एक भाषा में होना कोई मक़सद नहीं)। फिर (बयान करने के बाद) जिसको अल्लाह तआ़ला चाहें गुमराह करते हैं (कि वह उन अहकाम को क़ुबूल नहीं करता) और जिसको चाहें हिदायत करते हैं (कि वह उन अहकाम को क़ुबूल कर लेता है), और वही (सब मामलात पर) ग़ालिब है (और) हिक्मत वाला है (पस ग़ालिब होने के सबब सब को हिदायत कर सकता था मगर बहुत-सी हिक्मतों के सबब ऐसा न हुआ)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में अल्लाह तआ़ला की इस नेमत और सहूलत का ज़िक्र किया गया है कि अल्लाह तआ़ला ने जब भी कोई रसूल किसी क़ौम की तरफ़ भेजा है तो उस क़ौम की भाषा वाला ही भेजा है, ताकि वह अल्लाह के अहकाम उन्हीं की भाषा और उन्हीं के मुहावरों में बतलाये और उनको उसका समझना आसान हो। अगर रसूल की भाषा उम्मत की भाषा से अलग और भिन्न होती तो ज़ाहिर है कि उसके अहकाम समझने में उम्मत को अनुवाद करने कराने की मशक़्क़त भी उठानी पड़ती, और फिर भी अहकाम को सही समझना संदिग्ध रहता, इसलिये अगर इबरानी भाषा बोलने वालों की तरफ़ कोई रसूल भेजा तो रसूल की भाषा भी इबरानी ही थी, फ़ारसियों के रसूल की भाषा भी फ़ारसी, बरबरियों के रसूल की भाषा बरबरी रखी गई, चाहे इस सूरत से कि जिस शख़्स को रसूल बनाया गया वह ख़ुद उसी क़ौम का फ़र्द (सदस्य) हो और मातृभाषा उसी क़ौम की भाषा हो, या यह कि उसकी पैदाईशी और मादरी भाषा अगरचे कुछ और हो मगर अल्लाह तआ़ला ने ऐसे असबाब पैदा फ़रमाये कि उसने उस क़ौम की भाषा सीख ली, जैसे हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम अगरचे असल बाशिन्दे इराक़ के थे, जहाँ की भाषा फ़ारसी थी लेकिन मुल्के शाम की तरफ़ हिजरत करने के बाद उन्हीं लोगों में

शादी की और शामियों की भाषा ही उनकी भाषा बन गई, तब अल्लाह तआ़ला ने उनको शाम के एक इलाक़े का नबी बनाया।

और हमारे रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जिनकी नुबुव्वत जगह और स्थान के एतिबार से पूरी दुनिया के लिये और ज़माने के एतिबार से क़ियामत तक के लिये आ़म है, दुनिया की कोई क़ौम किसी मुल्क की रहने वाली, किसी भाषा की बोलने वाली आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दायरा-ए-रिसालत व नुबुव्वत से बाहर नहीं, और क़ियामत तक जितनी क़ौमें और भाषायें नई पैदा होंगी वो भी सब की सब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्मते दावत में दाख़िल होंगी, जैसा कि क़ुरआने करीम में इरशाद है:

يَاَيُّهَا النَّاسُ اِنِّيْ رَسُوْلُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ جَمِيْعًا.

"यानी ऐ लोगो! मैं अल्लाह का रसूल हूँ तुम सब की तरफ़।"

और सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तमाम अम्बिया के दरमियान अपनी पाँच विशेष ख़ुसूसियत का ज़िक्र करते हुए फ़रमाया कि मुझसे पहले हर रसूल व नबी ख़ास अपनी क़ौम व बिरादरी की तरफ़ भेजा जाता था, अल्लाह तआ़ला ने मुझे आदम की औलाद की तमाम क़ौमों की तरफ़ नबी व रसूल बनाकर भेजा।

हक़ तआ़ला ने इस आ़लम में इनसानी आबादी को हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से शुरू फ़रमाया और उन्हीं को इनसानों का सबसे पहला नबी और पैग़म्बर बनाया। फिर इनसानी आबादी जिस तरह अपने बसने और आर्थिक हैसियत से फैलती और तरक़्क़ी करती रही, उसी की मुनासबत से हिदायत व रहनुमाई के इन्तिज़ामात भी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मुख़्तलिफ़ रसूलों पैग़म्बरों के ज़रिये होते रहे। ज़माने के हर दौर और हर क़ौम के हाल के मुनासिब अहकाम और शरीअ़तें नाज़िल होती रहीं, यहाँ तक कि इनसानी दुनिया की तरक़्क़ी व बढ़ोतरी अपने कमाल (शिखर) को पहुँची तो अल्लाह तआ़ला ने तमाम अगले-पिछलों के सरदार, नबियों और रसूलों के इमाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस पूरी दुनिया का रसूल बनाकर भेजा, और जो किताब व शरीअ़त आपको दी वह पूरे आ़लम और क़ियामत तक के पूरे ज़माने के लिये कामिल व मुकम्मल कर दी, और इरशाद फ़रमाया:

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ.

"यानी मैंने आज तुम्हारे लिये दीन को मुकम्मल कर दिया, और अपनी नेमत तुम्हारे लिये पूरी कर दी।"

पिछले नबियों की शरीअ़तें भी अपने वक़्त और अपने इलाक़े के एतिबार से कामिल व मुकम्मल थीं, उनको भी नाक़िस नहीं कहा जा सकता, लेकिन शरीअ़त-ए-मुहम्मदिया का कमाल किसी ख़ास वक़्त और ख़ास ख़ित्ते (इलाक़े व क्षेत्र) के साथ मख़्सूस नहीं, यह उमूमी और सार्वजनिक रूप से कामिल है, इसी हैसियत से दीन को कामिल करना इस शरीअ़त के साथ

मख़्सूस है, और इसी वजह से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नुबुव्वत का सिलसिला ख़त्म कर दिया गया।

क़ुरआने करीम अ़रबी भाषा में क्यों है?

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि जिस तरह पिछली उम्मतों के रसूल उनके हम-ज़ुबान (उन्हीं की भाषा वाले) भेजे गये, उनको अनुवाद करने की मेहनत की ज़रूरत न रही, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सिर्फ़ अ़रब में अ़रबी भाषा के साथ क्यों भेजे गये? और आपकी किताब क़ुरआन भी अ़रबी भाषा ही में क्यों नाज़िल हुई? लेकिन ग़ौर व फ़िक्र से काम लिया जाये तो जवाब साफ़ है, हर शख़्स समझ सकता है कि जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत और दावत दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये आ़म हुई जिनमें सैंकड़ों भाषायें प्रचलित हैं तो उन सब की हिदायत के लिये दो ही सूरतें मुम्किन थीं- एक यह कि क़ुरआन हर क़ौम की भाषा में अलग-अलग नाज़िल होता और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात व हिदायात भी हर क़ौम की भाषा में अलग-अलग होतीं, अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत के सामने इसका इन्तिज़ाम कोई दुश्वार न था, लेकिन दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये एक रसूल एक किताब एक शरीअ़त भेजने का जो एक अ़ज़ीम मक़सद दुनिया की इन तमाम क़ौमों में हज़ारों तरह के मतभेदों के बावजूद दीनी, अख़्लाक़ी, सामाजिक एकता और एकजुटता पैदा करना है, वह इस सूरत से हासिल न होता।

इसके अ़लावा जब हर क़ौम और हर मुल्क का क़ुरआन व हदीस अलग भाषा में होते तो इसमें क़ुरआन के अलफ़ाज़ या मायनों में रद्दोबदल और कमी-बेशी के बेशुमार रास्ते खुल जाते और क़ुरआने करीम के कलाम का महफ़ूज़ होना जो इसकी ऐसी ख़ुसूसियत है कि ग़ैर और क़ुरआन का इनकार करने वाले भी इसको मानने से गुरेज़ नहीं कर सकते, यह मोजिज़ाना ख़ुसूसियत (चमत्कारी और बेमिसाल विशेषता) क़ायम न रहती, और एक ही दीन एक ही किताब के होते हुए इसके मानने वालों की इतनी अलग-अलग और भिन्न राहें हो जातीं कि कोई एकता का बिन्दू ही बाक़ी न रहता। इसका अन्दाज़ा इससे हो सकता है कि क़ुरआने करीम के एक अ़रबी भाषा में नाज़िल होने के बावजूद इसकी ताबीर व तफ़सीर (मतलब व मायने बयान करने) में किस क़द्र मतभेद और विविधतायें जायज़ हदों में पेश आईं और नाजायज़ व बातिल तरीक़ों से इख़्तिलाफ़ (मतभेद) की तो कोई हद नहीं, लेकिन इन सब के बावजूद मुसलमानों की क़ौमी एकता और अलग पहचान व विशेषता उन सब लोगों में मौजूद है जो क़ुरआन पर किसी दर्जे में भी अ़मल करने वाले हों।

ख़ुलासा यह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत व नुबुव्वत का दुनिया की पूरी क़ौमों के लिये आ़म होने की सूरत में उन सब की तालीम व हिदायत की यह सूरत कि क़ुरआन हर क़ौम की भाषा में अलग-अलग होता, इसको तो कोई मामूली समझ का आदमी भी दुरुस्त नहीं समझ सकता, इसलिये ज़रूरी हुआ कि क़ुरआन किसी एक ही भाषा में

आये और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की भाषा भी वही क़ुरआन की भाषा हो। फिर दूसरी मुल्की और क्षेत्रीय भाषाओं में उसके तर्जुमे पहुँचाये और फैलाये जायें। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नायब उलेमा हर क़ौम हर मुल्क में आपकी दी हुई हिदायतों को अपनी-अपनी क़ौम व मुल्क की भाषा में समझायें और फैलायें। इसके लिये हक़ तआ़ला ने तमाम दुनिया की भाषाओं में से अ़रबी भाषा का चयन फ़रमाया जिसकी बहुत-सी वुजूहात हैं।

अ़रबी भाषा की विशेषता और ख़ूबी

अव्वल यह कि अ़रबी भाषा आसमान की दफ़्तरी भाषा है, फ़रिश्तों की भाषा अ़रबी है, लौहे महफ़ूज़ की भाषा अ़रबी है जैसा कि क़ुरआन की आयतः

بَلْ هُوَ قُرْاٰنٌ مَّجِيْدٌ○ فِيْ لَوْحٍ مَّحْفُوْظٍ○

(यानी सूरः बरूज की आख़िरी दो आयतों) से मालूम होता है। और जन्नत, जो इनसान का असली वतन है और जहाँ इसको लौटकर जाना है उसकी भाषा भी अ़रबी है। तबरानी, मुस्तद्रक हाकिम, शुअ़बुल-ईमान और बैहक़ी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اَحِبُّوا الْعَرَبَ لِثَلَاثٍ: لِاَنِّيْ عَرَبِيٌّ وَالْقُرْاٰنُ عَرَبِيٌّ وَكَلَامُ اَهْلِ الْجَنَّةِ عَرَبِيٌّ.

(इस रिवायत को हाकिम ने मुस्तद्रक में सही कहा है। जामे सग़ीर में भी सही की निशानी बताई है। कुछ मुहद्दिसीन ने इसको कमज़ोर व मजरूह कहा है) हाफ़िज़े हदीस इब्ने तैमिया रह. ने कहा है कि इस हदीस का मज़मून साबित है, हसन के दर्जे से कम नहीं।

(फ़ैज़ुल-क़दीर शरह जामे सग़ीर पेज 179 जिल्द 1)

हदीस के मायने यह हैं कि "तुम लोग तीन वजह से अ़रब से मुहब्बत करो, एक यह कि मैं अ़रबी हूँ, दूसरे यह कि क़ुरआन अ़रबी है, तीसरे यह कि जन्नत वालों की भाषा अ़रबी है।"

तफ़सीरे क़ुर्तुबी वग़ैरह में यह रिवायत भी नक़ल की गयी है कि हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की भाषा जन्नत में अ़रबी थी, ज़मीन पर नाज़िल होने और तौबा क़ुबूल होने के बाद अ़रबी भाषा ही में कुछ बदलाव होकर सुरयानी भाषा पैदा हो गई।

इससे उन रिवायतों की भी पुष्टि होती और उनको मज़बूती मिलती है जो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह से मन्क़ूल हैं कि अल्लाह तआ़ला ने जितनी किताबें नबियों पर नाज़िल फ़रमाई हैं उनकी असली भाषा अ़रबी ही थी, जिब्रीले अमीन ने क़ौमी भाषा में तर्जुमा करके पैग़म्बरों को बतलाया, और उन्होंने अपनी क़ौमी भाषा में उम्मतों को पहुँचाया। ये रिवायतें अ़ल्लामा सुयूती रह. ने इतक़ान में और उक्त आयत के तहत में अक्सर मुफ़स्सिरीन ने नक़ल की हैं। उसका ख़ुलासा यह है कि सब आसमानी किताबों की असल भाषा अ़रबी है मगर क़ुरआने करीम के सिवा दूसरी किताबें मुल्की और क़ौमी भाषाओं में तर्जुमा करके दी गई हैं इसलिये उनके मायने तो सब अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हैं मगर अलफ़ाज़ बदले हुए हैं। यह सिर्फ़ क़ुरआन की ख़ुसूसियत है कि इसके मायने की तरह अलफ़ाज़ भी हक़ तआ़ला ही की तरफ़

से आये हैं, और शायद यही वजह है कि क़ुरआने करीम ने यह दावा किया कि इनसानों और जिन्नात का सारा जहान जमा होकर भी क़ुरआन की एक छोटी सूरत बल्कि एक आयत की मिसाल नहीं बना सकता। क्योंकि वह मानवी और लफ़्ज़ी हैसियत से अल्लाह का कलाम और अल्लाह की एक सिफ़त है, जिसकी कोई नक़ल नहीं उतार सकता। मानवी हैसियत से तो दूसरी आसमानी किताबें भी अल्लाह का कलाम हैं, मगर उनमें शायद असल अ़रबी अलफ़ाज़ के बजाय तर्जुमा होने ही की वजह से यह दावा किसी दूसरी आसमानी किताब ने नहीं किया, वरना क़ुरआन की तरह अल्लाह का कलाम होने की हैसियत से हर किताब का बेमिसाल व बेनज़ीर होना यक़ीनी था।

अ़रबी भाषा के चयन की एक वजह ख़ुद इस भाषा की ज़ाती सलाहियतें भी हैं कि एक मफ़्हूम (मतलब व मायने) की अदायेगी के लिये इसमें बेशुमार अन्दाज़ और तरीक़े हैं।

और एक वजह यह भी है कि मुसलमान को अल्लाह तआ़ला ने फ़ितरी तौर पर अ़रबी भाषा से एक ताल्लुक़ व मुनासबत अ़ता फ़रमाई है, जिसकी वजह से हर शख़्स आसानी से अ़रबी भाषा ज़रूरत के मुताबिक़ सीख लेता है। यही वजह है कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम जिस मुल्क में पहुँचे थोड़े ही अ़रसे में बग़ैर किसी ज़ोर-ज़बरदस्ती के पूरे मुल्क की भाषा अ़रबी हो गई। मिस्र, शाम, इराक़ सब में किसी की भाषा अ़रबी न थी जो आज अ़रब देश कहलाते हैं।

एक वजह यह भी है कि अ़रब लोग अगरचे इस्लाम से पहले सख़्त बुरे आमाल के शिकार थे मगर इस क़ौम की सलाहियतें, ख़ूबियाँ और जज़्बात उन हालतों में भी बेनज़ीर थे, यही वजह थी कि हक़ तआ़ला ने अपने सबसे बड़े और आख़िरी रसूल को उनमें पैदा फ़रमाया और उनकी भाषा को क़ुरआन के लिये इख़्तियार फ़रमाया, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सबसे पहले उन्हीं की हिदायत व तालीम का हुक्म दियाः

وَاَنْذِرْ عَشِيْرَتَكَ الْاَقْرَبِيْنَ٥

और सबसे पहले इसी क़ौम के ऐसे अफ़राद अपने रसूल के आस-पास जमा फ़रमा दिये जिन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर अपनी जान, माल, औलाद सब कुछ क़ुरबान किया और आपकी तालीमात को जानों से ज़्यादा प्यारा समझा, और इस तरह उन पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत व तालीम का वह गहरा रंग चढ़ा कि पूरी दुनिया में एक ऐसा मिसाली समाज पैदा हो गया जिसकी नज़ीर उससे पहले आसमान व ज़मीन में नहीं देखी गई थी। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस बेमिसाल जमाअ़त को क़ुरआनी तालीमात के फैलाने के लिये खड़ा कर दिया और फ़रमायाः

بَلِّغُوْا عَنِّیْ وَلَوْ اٰيَةً

"यानी मुझसे सुनी हुई हर बात को उम्मत तक पहुँचा दो।" जान क़ुरबान करने वाले सहाबा ने इस हिदायत को पल्ले बाँधा और दुनिया के चप्पे-चप्पे में पहुँचकर क़ुरआन और इसकी

तालीमात को जहान में फैला दिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात पर पच्चीस साल गुज़रने न पाये थे कि क़ुरआन की आवाज़ पूरब व पश्चिम में गूँजने लगी।

दूसरी तरफ़ हक़ तआ़ला ने अपने हुक्म से तक़दीरी तौर पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्मते दावत जिसमें दुनिया के मुश्रिक और अहले किताब यहूदी व ईसाई सब दाख़िल हैं, उनमें एक ख़ास महारत व ख़ूबी और सीखने-सिखाने और किताबें लिखने व मुरत्तब करने, तब्लीग़ व प्रसार का ऐसा जज़्बा पैदा फ़रमा दिया कि उसकी नज़ीर दुनिया की पिछली तारीख़ में नहीं मिलती। इसके नतीजे में अ़जमी (ग़ैर-अ़रबी) क़ौमों में न सिर्फ़ क़ुरआन व सुन्नत के उलूम हासिल करने का मज़बूत जज़्बा पैदा हुआ बल्कि अ़रबी भाषा को हासिल करने और उसको रिवाज देने व फैलाने में अ़जमियों का क़दम अ़रब वालों से पीछे नहीं रहा।

यह एक हैरत-अंगेज़ हक़ीक़त है कि इस वक़्त अ़रबी लुग़त, मुहावरों और उसके क़वाइद नह्व-सर्फ़ (ग्रामर) पर जितनी किताबें दुनिया में मौजूद हैं वो ज़्यादातर अ़जमियों (ग़ैर-अ़रबियों) की लिखी हुई हैं। क़ुरआन व हदीस के जमा करने, तरतीब देने, फिर तफ़सीर व व्याख्या में भी उनका हिस्सा अ़रब वालों से कम नहीं रहा।

इस तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की भाषा और आपकी किताब अ़रबी होने के बावजूद पूरी दुनिया पर छा गयी और दावत व तब्लीग़ की हद तक अ़रब व अ़जम का फ़र्क़ मिट गया। हर मुल्क व क़ौम और हर अ़जमी भाषा के लोगों में ऐसे उलेमा पैदा हो गये जिन्होंने क़ुरआन व हदीस की तालीमात को अपनी क़ौमी भाषाओं में निहायत आसानी के साथ पहुँचा दिया और रसूल को क़ौम की भाषा में भेजने की जो हिक्मत थी वह हासिल हो गई।

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि हमने लोगों की आसानी के लिये अपने रसूलों को उनकी भाषा में इसलिये भेजा कि वे हमारे अहकाम उनको अच्छी तरह समझा दें, लेकिन हिदायत और गुमराही फिर भी किसी इनसान के बस में नहीं, अल्लाह तआ़ला ही की क़ुदरत में है, वह जिसको चाहते हैं गुमराही में रखते हैं और जिसको चाहते हैं हिदायत देते हैं, वही बड़ी क़ुव्वत व हिक्मत वाले हैं।

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوْسٰى بِاٰيٰتِنَآ اَنْ اَخْرِجْ قَوْمَكَ مِنَ الظُّلُمٰتِ

اِلَى النُّوْرِ ۙ وَذَكِّرْهُمْ بِاَيّٰىمِ اللّٰهِ ؕ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّكُلِّ صَبَّارٍ شَكُوْرٍ ۝ وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهِ اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ اَنْجٰىكُمْ مِّنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُوْمُوْنَكُمْ سُوْٓءَ الْعَذَابِ وَيُذَبِّحُوْنَ اَبْنَآءَكُمْ وَيَسْتَحْيُوْنَ نِسَآءَكُمْ ؕ وَفِىْ ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ عَظِيْمٌ ۝ وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِنْ شَكَرْتُمْ لَاَزِيْدَنَّكُمْ وَلَئِنْ كَفَرْتُمْ اِنَّ عَذَابِىْ لَشَدِيْدٌ ۝ وَقَالَ مُوْسٰٓى اِنْ تَكْفُرُوْٓا اَنْتُمْ وَمَنْ فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا ۙ فَاِنَّ اللّٰهَ لَغَنِىٌّ حَمِيْدٌ ۝

व ल-क़द् अर्सल्ना मूसा बिआयातिना अन् अख़्रिज् क़ौम-क मिनज़्ज़ुलुमाति इलन्नूरि व ज़क्किर्हुम् बिअय्यामिल्लाहि, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल् लिकुल्लि सब्बारिन् शकूर (5) व इज़् का-ल मूसा लिक़ौमिहिज़्कुरू निअ्मतल्लाहि अ़लैकुम् इज़् अन्जाकुम् मिन् आलि फ़िर्औ-न यसूमूनकुम् सूअल्-अ़ज़ाबि व युज़ब्बिहू-न अब्ना-अकुम् व यस्तह्यू-न निसा-अकुम्, व फ़ी ज़ालिकुम् बलाउम्-मिर्रब्बिकुम् अ़ज़ीम (6) ✿	और भेजा था हमने मूसा को अपनी निशानियाँ देकर कि निकाल अपनी क़ौम को अंधेरों से उजाले की तरफ़ और याद दिला उनको दिन अल्लाह के, अलबत्ता इसमें निशानियाँ हैं उसके लिये जो सब्र करने वाला है, शुक्रगुज़ार। (5) और जब कहा मूसा ने अपनी क़ौम को याद करो अल्लाह का एहसान अपने ऊपर जब छुड़ा दिया तुमको फ़िरऔन की क़ौम से, वे पहुँचाते थे तुमको बुरा अ़ज़ाब, और ज़िबह करते तुम्हारे बेटों को और ज़िन्दा रखते तुम्हारी औरतों को, और इसमें मदद हुई तुम्हारे रब की तरफ़ से बड़ी। (6) ✿
व इज़् तअज़्ज़-न रब्बुकुम् ल-इन् श-कर्तुम् ल-अज़ीदन्नकुम् व ल-इन् क-फ़र्तुम् इन्-न अ़ज़ाबी ल-शदीद (7) व का-ल मूसा इन् तक्फ़ुरू अन्तुम् व मन् फ़िल्अर्ज़ि जमीअ़न् फ़-इन्नल्ला-ह ल-ग़निय्युन् हमीद (8)	और जब सुना दिया तुम्हारे रब ने अगर एहसान मानोगे तो और भी दूँगा तुमको और अगर नाशुक्री करोगे तो मेरा अ़ज़ाब यक़ीनन सख़्त है। (7) और कहा मूसा ने अगर कुफ़्र करोगे तुम और जो लोग ज़मीन में हैं सारे, तो अल्लाह बेपरवाह है सब ख़ूबियों वाला। (8)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को अपनी निशानियाँ देकर भेजा कि अपनी क़ौम को (कुफ़्र व नाफ़रमानी की) अंधेरियों से (निकाल कर ईमान व फ़रमाँबरदारी की) रोशनी की तरफ़ लाओ, और उनको अल्लाह तआ़ला की (नेमत और सज़ा के) मामलात याद दिलाओ, बेशक उन मामलात में इब्रतें हैं हर सब्र करने वाले और शुक्र करने वाले के लिये (क्योंकि नेमत को याद करके शुक्र करेगा और अ़ज़ाब व नाराज़गी को फिर उसके ज़वाल को याद करके आईन्दा हादसों

में सब्र करेगा)। और उस वक़्त को याद कीजिये कि जब (हमारे इस ऊपर वाले इरशाद के मुवाफ़िक़) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि तुम अल्लाह तआ़ला का इनाम अपने ऊपर याद करो, जबकि तुमको फ़िरऔ़न वालों से निजात दी, जो तुमको सख़्त तकलीफ़ें पहुँचाते थे और तुम्हारे बेटों को ज़िबह करते थे और तुम्हारी औ़रतों को (यानी लड़कियों को जो कि बड़ी होकर औ़रतें हो जाती थीं) ज़िन्दा छोड़ देते थे (ताकि उनसे काम और ख़िदमत लें, सो यह भी ज़िबह करने ही की तरह एक सज़ा थी), और इस (मुसीबत और निजात दोनों) में तुम्हारे रब की तरफ़ से एक बड़ा इम्तिहान है (यानी मुसीबत में बला थी और निजात में नेमत थी, और बला और नेमत दोनों बन्दे के लिये इम्तिहान हैं, पस इसमें मूसा अ़लैहिस्सलाम ने 'अल्लाह के दिनों' यानी नेमत व अ़ज़ाब दोनों की याददेहानी फ़रमा दी)।

और मूसा (अ़लैहिस्सलाम ने यह भी फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम!) वह वक़्त याद करो जबकि तुम्हारे रब ने (मेरे ज़रिये से) तुमको इत्तिला फ़रमा दी कि अगर (मेरी नेमतों को सुनकर) तुम शुक्र करोगे तो तुमको (चाहे दुनिया में भी या आख़िरत में तो ज़रूर) ज़्यादा नेमत दूँगा और अगर तुम (इन नेमतों को सुनकर) नाशुक्री करोगे तो (यह अच्छी तरह समझ लो कि) मेरा अ़ज़ाब बड़ा सख़्त है (नाशुक्री में उसका अन्देशा है)। और मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (यह भी) फ़रमाया कि अगर तुम और दुनिया भर के आदमी सब-के-सब मिलकर भी नाशुक्री करने लगो तो अल्लाह तआ़ला (का कोई नुक़सान नहीं, क्योंकि वह) बिल्कुल बेज़रूरत (और अपनी ज़ात में) तारीफ़ वाले हैं (दूसरों के ज़रिये कामिल होने का वहाँ शुब्हा व गुमान ही नहीं, इसलिये अल्लाह तआ़ला का नुक़सान होने के बारे में सोचने वाली चीज़ ही नहीं, और तुम अपना नुक़सान सुन चुके हो कि 'बेशक मेरा अ़ज़ाब बड़ा सख़्त है' इसलिये शुक्र करना, नाशुक्री मत करना)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में यह ज़िक्र हुआ है कि हमने मूसा अ़लैहिस्सलाम को अपनी आयतें देकर भेजा कि वह अपनी क़ौम को कुफ़्र व नाफ़रमानी की अंधेरियों से ईमान व फ़रमाँबरदारी की रोशनी में ले आयें।

लफ़्ज़ आयात से तौरात की आयतें भी मुराद हो सकती हैं कि उनके नाज़िल करने का मक़सद ही हक़ की रोशनी फैलाना था, और आयात के दूसरे मायने मोजिज़ों के भी आते हैं, वो भी इस जगह मुराद हो सकते हैं कि मूसा अ़लैहिस्सलाम को अल्लाह तआ़ला ने नौ मोजिज़े ख़ास तौर से अ़ता फ़रमाये थे जिनमें लाठी का साँप बन जाना और हाथ का रोशन हो जाना कई जगह क़ुरआन में बयान हुआ है। आयात को मोजिज़ों के मायने में लिया जाये तो मतलब यह होगा कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को ऐसे खुले हुए मोजिज़े देकर भेजा गया जिनको देखने के बाद कोई शरीफ़ समझदार इनसान अपने इनकार और नाफ़रमानी पर क़ायम नहीं रह सकता।

एक नुक्ता

इस आयत में लफ़्ज़ **क़ौम** आया है कि अपनी क़ौम को अंधेरी से रोशनी में लायें, लेकिन यही मज़मून इसी सूरत की पहली आयत में जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके बयान किया गया तो वहाँ क़ौम के बजाय लफ़्ज़ **नास** इस्तेमाल किया गयाः

لِتُخْرِجَ النَّاسَ مِنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ

इसमें इशारा है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत व रिसालत सिर्फ़ अपनी क़ौम बनी इस्राईल और मिस्री क़ौमों की तरफ़ थी और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत और भेजा जाना तमाम जहान के इनसानों के लिये है।

फिर इरशाद फ़रमायाः

وَذَكِّرْهُمْ بِاَيّٰمِ اللّٰهِ

यानी हक़ तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि अपनी क़ौम को **अय्यामुल्लाह** याद दिलाओ।

अय्यामुल्लाह

अय्याम 'यौम' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने **दिन** के मशहूर हैं। लफ़्ज़ अय्यामुल्लाहि दो मायने के लिये बोला जाता है और वे दोनों यहाँ मुराद हो सकते हैं- अव्वल वो ख़ास दिन जिनमें कोई जंग या इन्क़िलाब आया है, जैसे ग़ज़वा-ए-बदर व उहुद और अहज़ाब व हुनैन वग़ैरह के वाक़िआ़त, या पिछली उम्मतों पर अ़ज़ाब नाज़िल होने के वाक़िआ़त हैं जिनमें बड़ी-बड़ी क़ौमें अस्त-व्यस्त या नेस्त व नाबूद हो गईं। इस सूरत में **अय्यामुल्लाह** याद दिलाने से उन क़ौमों को कुफ़्र के बुरे अन्जाम से डराना और सचेत करना मक़सूद होगा।

दूसरे मायने अय्यामुल्लाह के अल्लाह तआ़ला की नेमतों और एहसानात के भी आते हैं, तो उनको याद दिलाने का मक़सद यह होगा कि शरीफ़ इनसान को जब किसी मोहसिन का एहसान याद दिलाया जाये तो वह उसकी मुख़ालफ़त और नाफ़रमानी से शर्मा जाता है।

क़ुरआन मजीद का अन्दाज़ और इस्लाह का तरीक़ा उमूमन यह है कि जब कोई हुक्म दिया जाता है तो साथ ही उस हुक्म पर अ़मल आसान करने की तदबीरें भी बतलाई जाती हैं, यहाँ पहले जुमले में मूसा अ़लैहिस्सलाम को यह हुक्म दिया गया है कि अल्लाह की आयतें सुनाकर या मोजिज़े दिखाकर अपनी क़ौम को कुफ़्र की अंधेरी से निकालो, और ईमान की रोशनी में लाओ। इसकी तदबीर इस जुमले में यह इरशाद फ़रमाई कि नाफ़रमानों को सही रास्ते पर लाने की दो तदबीरें हैं- एक सज़ा से डराना, दूसरे नेमतों और एहसानात को याद दिलाकर फ़रमाँबरदारी की तरफ़ बुलाना। 'ज़क्किरहुम् बिअय्यामिल्लाहि' में ये दोनों चीज़ें मुराद हो सकती हैं कि पिछली उम्मतों के नाफ़रमानों का बुरा अन्जाम, उन पर आने वाले अ़ज़ाब और जिहाद में उनका मक़्तूल या ज़लील व रुस्वा होना उनको याद दिलायें ताकि वे इब्रत हासिल करके उससे

बच जायें। इसी तरह उस क़ौम पर जो अल्लाह तआ़ला की आ़म नेमतें दिन रात बरसती हैं और जो ख़ास नेमतें हर मौक़े पर उनके लिये नाज़िल हुई हैं, जैसे तीह की घाटी में उनके सरों पर बादल का साया, ख़ुराक के लिये मन्न व सलवा का उतरना, पानी की ज़रूरत हुई तो पत्थर से चश्मों का बह निकलना वग़ैरह, उनको याद दिलाकर ख़ुदा तआ़ला की फ़रमाँबरदारी और तौहीद की तरफ़ बुलाया जाये।

اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیٰتٍ لِّكُلِّ صَبَّارٍ شَكُوْرٍ٥

इसमें आयात से मुराद निशानियाँ और दलीलें हैं, और सब्बार सब्र से मुबालग़े का कलिमा है जिसके मायने हैं बहुत सब्र करने वाला और शकूर शुक्र से मुबालग़े का सीग़ा है, जिसके मायने हैं बहुत शुक्रगुज़ार। जुमले के मायने यह हैं कि अय्यामुल्लाह यानी पिछले वाक़िआ़त चाहे वो जो इनकार करने वालों की सज़ा और अ़ज़ाब से संबन्धित हों या अल्लाह तआ़ला के इनामात व एहसानात से संबन्धित बहरहाल अतीत के वाक़िआ़त में अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत और आला हिक्मत की बड़ी निशानियाँ और दलीलें मौजूद हैं उस शख़्स के लिये जो बहुत सब्र करने वाला और बहुत शुक्र करने वाला हो।

मतलब यह है कि ये खुली हुई निशानियाँ और दलीलें अगरचे हर ग़ौर करने वाले की हिदायतों के लिये हैं मगर बदनसीब काफ़िर लोग इनमें ग़ौर व फ़िक्र ही नहीं करते, इनसे कोई फ़ायदा नहीं उठाते, फ़ायदा सिर्फ़ वे लोग उठाते हैं जो सब्र व शुक्र करने वाले हैं। मुराद इससे मोमिन हैं क्योंकि इमाम बैहक़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ईमान के दो हिस्से हैं- आधा सब्र और आधा शुक्र। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि सब्र आधा ईमान है और सही मुस्लिम और मुस्नद अहमद में हज़रत सुहैब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मोमिन का हर हाल ख़ैर ही ख़ैर और भला ही भला है, और यह बात सिवाय मोमिन के और किसी को नसीब नहीं। क्योंकि मोमिन को अगर कोई राहत, नेमत या इ़ज़्ज़त मिलती है तो वह उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्रगुज़ार होता है जो उसके लिये दीन व दुनिया में ख़ैर और भलाई का सामान हो जाता है (दुनिया में तो अल्लाह के वायदे के अनुसार नेमत और ज़्यादा बढ़ जाती और क़ायम रहती है, और आख़िरत में उसके शुक्र का बड़ा बदला उसको मिलता है) और अगर मोमिन को कोई तकलीफ़ या मुसीबत पेश आ जाये तो वह उस पर सब्र करता है, उसके सब्र की वजह से वह मुसीबत भी उसके लिये नेमत व राहत का सामान हो जाती है (दुनिया में इस तरह कि सब्र करने वालों को अल्लाह तआ़ला का साथ नसीब होता है, क़ुरआन का इरशाद है 'इन्नल्ला-ह मअ़स्साबिरीन' और अल्लाह जिसके साथ हो अन्जामकार उसकी मुसीबत राहत से बदल जाती है और आख़िरत में इस तरह कि सब्र का बड़ा अज्र और बदला अल्लाह तआ़ला के नज़दीक बेहिसाब है जैसा कि क़ुरआने

करीम का इरशाद हैः

اِنَّمَا یُوَفَّی الصّٰبِرُوْنَ اَجْرَھُمْ بِغَیْرِ حِسَابٍ۝

ख़ुलासा यह है कि मोमिन का कोई हाल बुरा नहीं होता, अच्छा ही अच्छा है, वह गिरने में भी उभरता है और बिगड़ने में भी बनता है।

न शोख़ी चल सकी बादे सबा की
बिगड़ने में भी ज़ुल्फ़ उसकी बना की

ईमान वह दौलत है जो मुसीबत व तकलीफ़ को भी राहत व नेमत में तब्दील कर देती है। हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रमाया कि मैं आपके बाद एक ऐसी उम्मत पैदा करने वाला हूँ कि अगर उनकी दिली मुराद पूरी हो और काम उनकी मंशा के मुताबिक़ हो जाये तो वे शुक्र अदा करेंगे, और अगर उनकी इच्छा और मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नागवार और नापसन्दीदा सूरतेहाल पेश आ जाये तो वे उसको सवाब का ज़रिया समझकर सब्र करेंगे और यह अक़्लमन्दी और बुर्दबारी उनकी अपनी ज़ाती अक़्ल व बरदाश्त का नतीजा नहीं बल्कि हम उनको अपने इल्म व बरदाश्त का एक हिस्सा अ़ता फ़रमायेंगे। (तफ़सीरे मज़हरी)

शुक्र की हक़ीक़त का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआ़ला की दी हुई नेमतों को उसकी नाफ़रमानी और हराम व नाजायज़ कामों में ख़र्च न करे, और ज़बान से भी अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करे और अपने कामों व आमाल को भी उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ बनाये।

और **सब्र** का ख़ुलासा यह है कि ख़िलाफ़े तबीयत कामों पर परेशान न हो, अपने क़ौल व फ़ेल में नाशुक्री से बचे और अल्लाह तआ़ला की रहमत का दुनिया में भी उम्मीदवार रहे और आख़िरत में सब्र के बड़े अज्र का यक़ीन रखे।

दूसरी आयत में पहले गुज़रे मज़मून की और अधिक तफ़सील है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया गया कि वह अपनी क़ौम बनी इस्राईल को अल्लाह तआ़ला की यह ख़ास नेमत याद दिलायें कि मूसा अ़लैहिस्सलाम से पहले फ़िरऔन ने उनको नाजायज़ तौर पर ग़ुलाम बनाया हुआ था, और फिर उन ग़ुलामों के साथ भी इनसानियत का सुलूक न था, उनके लड़कों को पैदा होते ही क़त्ल कर दिया जाता था, और सिर्फ़ लड़कियों को अपनी ख़िदमत के लिये पाला जाता था। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के नबी बनने के बाद उनकी बरकत से अल्लाह तआ़ला ने उनको इस फ़िरऔ़नी अ़ज़ाब से निजात दे दी।

शुक्र और नाशुक्री के नतीजे

وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّکُمْ لَئِنْ شَکَرْتُمْ لَاَزِیْدَنَّکُمْ وَلَئِنْ کَفَرْتُمْ اِنَّ عَذَابِیْ لَشَدِیْدٌ۝

लफ़्ज़ तअज़्ज़-न इत्तिला देने और ऐलान करने के मायने में है। मतलब आयत का यह है

कि यह बात याद रखने की है कि अल्लाह तआ़ला ने यह ऐलान फ़रमा दिया कि अगर तुमने मेरी नेमतों का शुक्र अदा किया कि उनको मेरी नाफ़रमानियों और नाजायज़ कामों में ख़र्च न किया और अपने आमाल व कामों को मेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ बनाने की कोशिश की तो मैं उन नेमतों को और ज़्यादा कर दूँगा। यह ज़्यादती नेमतों की मात्रा में भी हो सकती है और उनके बाक़ी और हमेशा के लिये रहने में भी। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स को शुक्र अदा करने की तौफ़ीक़ हो गई वह कभी नेमतों में बरकत और ज़्यादती से मेहरूम न होगा। (इब्ने मरदूया, इब्ने अ़ब्बास की रिवायत से, मज़हरी)

और फ़रमाया कि अगर तुमने मेरी नेमतों की नाशुक्री की तो मेरा अ़ज़ाब भी सख़्त है। नाशुक्री का हासिल यही है कि अल्लाह तआ़ला की नेमतों को उसकी नाफ़रमानी और नाजायज़ कामों में ख़र्च करे, या उसके फ़राईज़ व वाजिबात की अदायेगी में सुस्ती करे, और नेमत की नाशुक्री का सख़्त अ़ज़ाब दुनिया में भी यह हो सकता है कि वह नेमत छीन ली जाये, या ऐसी मुसीबत में गिरफ़्तार हो जाये कि नेमत का फ़ायदा न उठा सके, और आख़िरत में भी अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हो।

यहाँ यह बात याद रखने के क़ाबिल है कि इस आयत में हक़ तआ़ला ने शुक्रगुज़ारों के लिये तो अज्र व सवाब और नेमत की ज़्यादती का वादा और वह भी ताकीद के लफ़्ज़ के साथ वादा फ़रमाया है 'ल-अज़ीदन्नकुम' (यानी मैं ज़रूर और भी दूँगा) लेकिन इसके मुक़ाबिल नाशुक्री करने वालों के लिये यह नहीं फ़रमाया कि 'ल-उअ़ज़्ज़िबन्नकुम' यानी मैं तुम्हें ज़रूर अ़ज़ाब दूँगा, बल्कि सिर्फ़ इतना फ़रमाकर डराया है कि मेरा अ़ज़ाब भी जिसको पहुँचे वह बड़ा सख़्त होता है। इस ख़ास अन्दाज़ में इशारा है कि हर नाशुक्रे का अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होना कुछ ज़रूरी नहीं, माफ़ी की भी संभावना है।

قَالَ مُوْسٰٓى اِنْ تَكْفُرُوْٓا اَنْتُمْ وَمَنْ فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا، فَاِنَّ اللّٰهَ لَغَنِىٌّ حَمِيْدٌ○

यानी मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि अगर तुम सब और जितने आदमी ज़मीन पर आबाद हैं वे सब के सब अल्लाह तआ़ला की नेमतों की नाशुक्री करने लगो तो याद रखो कि इसमें अल्लाह तआ़ला का कोई नुक़सान नहीं, वह तो सब की तारीफ़ व सना और शुक्री व नाशुक्री से बेनियाज़ (बेपरवाह) और ऊपर है, और वह अपनी ज़ात में हमीद यानी तारीफ़ का हक़दार है, और उसकी तारीफ़ तुम न करो तो अल्लाह के सारे फ़रिश्ते और कायनात का ज़र्रा-ज़र्रा कर रहा है।

शुक्र का फ़ायदा जो कुछ है वह तुम्हारे ही लिये है, इसलिये शुक्रगुज़ारी की ताकीद अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कुछ अपने फ़ायदे के लिये नहीं, बल्कि रहमत के सबब से तुम्हें ही फ़ायदा पहुँचाने के लिये है।

أَلَمْ يَأْتِكُمْ نَبَؤُا الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ ۛ
وَالَّذِينَ مِنْ بَعْدِهِمْ ۛ لَا يَعْلَمُهُمْ إِلَّا اللَّهُ ۚ جَاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَرَدُّوا أَيْدِيَهُمْ فِي أَفْوَاهِهِمْ وَقَالُوا إِنَّا كَفَرْنَا بِمَا أُرْسِلْتُمْ بِهِ وَإِنَّا لَفِي شَكٍّ مِمَّا تَدْعُونَنَا إِلَيْهِ مُرِيبٍ ۝ قَالَتْ رُسُلُهُمْ أَفِي اللَّهِ شَكٌّ فَاطِرِ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ ۖ يَدْعُوكُمْ لِيَغْفِرَ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ وَيُؤَخِّرَكُمْ إِلَىٰ أَجَلٍ مُسَمًّى ۚ قَالُوا إِنْ أَنْتُمْ إِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا تُرِيدُونَ أَنْ تَصُدُّونَا عَمَّا كَانَ يَعْبُدُ آبَاؤُنَا فَأْتُونَا بِسُلْطَانٍ مُبِينٍ ۝ قَالَتْ لَهُمْ رُسُلُهُمْ إِنْ نَحْنُ إِلَّا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَمُنُّ عَلَىٰ مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ ۖ وَمَا كَانَ لَنَا أَنْ نَأْتِيَكُمْ بِسُلْطَانٍ إِلَّا بِإِذْنِ اللَّهِ ۚ وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ۝ وَمَا لَنَا أَلَّا نَتَوَكَّلَ عَلَى اللَّهِ وَقَدْ هَدَانَا سُبُلَنَا ۚ وَلَنَصْبِرَنَّ عَلَىٰ مَا آذَيْتُمُونَا ۚ وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُونَ ۝ وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لِرُسُلِهِمْ لَنُخْرِجَنَّكُمْ مِنْ أَرْضِنَا أَوْ لَتَعُودُنَّ فِي مِلَّتِنَا ۖ فَأَوْحَىٰ إِلَيْهِمْ رَبُّهُمْ لَنُهْلِكَنَّ الظَّالِمِينَ ۝ وَلَنُسْكِنَنَّكُمُ الْأَرْضَ مِنْ بَعْدِهِمْ ۚ ذَٰلِكَ لِمَنْ خَافَ مَقَامِي وَخَافَ وَعِيدِ ۝ وَاسْتَفْتَحُوا وَخَابَ كُلُّ جَبَّارٍ عَنِيدٍ ۝

अलम् यअ्तिकुम् न-बउल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिकुम् क़ौमि नूहिंव्-व आदिंव्-व समू-द, वल्लज़ी-न मिम्-बअ्दिहिम्, ला यअ्लमुहुम् इल्लल्लाहु, जाअत्हुम् रुसुलुहुम् बिल्बय्यिनाति फ़-रद्दू ऐदि-यहुम् फ़ी अफ़्वाहिहिम् व क़ालू इन्ना क-फ़र्ना बिमा उर्सिल्तुम् बिही व इन्ना लफ़ी शक्किम् मिम्मा तद्अूनना इलैहि मुरीब (9) ▲ क़ालत् रुसुलुहुम् अफ़िल्लाहि शक्कुन् फ़ातिरिस्समावाति वल्अर्ज़ि, यद्अूकुम् लियग्फ़ि-र

क्या नहीं पहुँची तुमको ख़बर उन लोगों की जो पहले थे तुमसे क़ौम नूह की और आद और समूद और जो उनके बाद हुए, किसी को उनकी ख़बर नहीं मगर अल्लाह को, आये उनके पास उनके रसूल निशानियाँ लेकर फिर लौटाये उन्होंने अपने हाथ अपने मुँह में और बोले हम नहीं मानते जो तुमको देकर भेजा गया, और हमको तो शुब्हा है उस राह में जिस की तरफ़ तुम हमको बुलाते हो शक व दुविधा में डालने वाला। (9) ▲ बोले उनके रसूल क्या अल्लाह में शुब्हा है जिसने बनाये आसमान और ज़मीन, वह तुमको बुलाता है ताकि बख़्शे तुमको कुछ

लकुम् मिन् जुनूबिकुम् व युअख़्ख़ि-रकुम् इला अ-जलिम्-मुसम्मन्, कालू इन् अन्तुम् इल्ला ब-शरुम्-मिस्लुना, तुरीदू-न अन् तसुद्दूना अ़म्मा का-न यअ़्बुदु आबाउना फ़अ्तूना बिसुल्तानिम्-मुबीन (10) कालत् लहुम् रुसुलुहुम् इन् नह्नु इल्ला ब-शरुम्-मिस्लुकुम् व लाकिन्नल्ला-ह यमुन्नु अ़ला मंय्यशा-उ मिन् अ़िबादिही, व मा का-न लना अन् नअ्तियकुम् बिसुल्तानिन् इल्ला बिइज़्निल्लाहि, व अ़लल्लाहि फ़ल्य-तवक्कलिल्- मुअ्मिनून (11) व मा लना अल्ला न-तवक्क-ल अ़लल्लाहि व क़द् हदाना सुबु-लना, व लनस्बिरन्-न अ़ला मा आज़ैतुमूना, व अ़लल्लाहि फ़ल्य-तवक्कलिल् मु-तवक्किलून (12) ✿

व क़ालल्लज़ी-न क-फ़रू लिरुसुलिहिम् लनुख़्रिजन्नकुम् मिन् अर्ज़िना औ ल-तअ़ूदुन्-न फ़ी मिल्लतिना, फ़-औहा इलैहिम् रब्बुहुम् लनुह्लिकन्नज़्-ज़ालिमीन (13) व लनुस्किनन्न-कुमुल्-अर्-ज़

गुनाह तुम्हारे और ढील दे तुमको एक वायदे तक जो ठहर चुका है, कहने लगे तुम तो यही आदमी हो हम जैसे, तुम चाहते हो कि रोक दो हमको उन चीज़ों से जिनको पूजते रहे हमारे बाप-दादा, सो लाओ कोई सनद खुली हुई। (10) उनको कहा उनके रसूलों ने कि हम तो यही आदमी हैं जैसे तुम लेकिन अल्लाह एहसान करता है अपने बन्दों में जिस पर चाहे, और हमारा काम नहीं कि ले आयें तुम्हारे पास सनद मगर अल्लाह के हुक्म से, और अल्लाह पर भरोसा करना चाहिए ईमान वालों को। (11) और हमको क्या हुआ कि भरोसा न करें अल्लाह पर और वह सुझा चुका हमको हमारी राहें, और हम सब्र करेंगे तकलीफ़ पर जो तुम हमको देते हो और अल्लाह पर भरोसा चाहिए भरोसा करने वालों को। (12) ✿

और कहा काफ़िरों ने अपने रसूलों को कि हम निकाल देंगे तुमको अपनी ज़मीन से या लौट आओ हमारे दीन में, तब हुक्म भेजा उनको उनके रब ने- हम ग़ारत करेंगे उन ज़ालिमों को। (13) और आबाद करेंगे तुमको उस ज़मीन में उनके

मिम्-बअ्दिहिम्, ज़ालि-क लिमन् ख़ा-फ़ मक़ामी व ख़ा-फ़ वअ़ीद (14) वस्तफ़तहू व ख़ा-ब कुल्लु जब्बारिन् अ़नीद (15)	बाद, यह मिलता है उसको जो डरता है खड़े होने से मेरे सामने, और डरता है मेरे अज़ाब के वायदे से। (14) और फ़ैसला लगे माँगने पैग़म्बर और नामुराद हुआ हर एक सरकश ज़िद्दी। (15)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ऐ मक्का के काफ़िरो!) क्या तुमको उन लोगों (के वाक़िआत की) ख़बर (अगरचे संक्षिप्त ही में सही) नहीं पहुँची जो तुमसे पहले गुज़र चुके हैं, यानी नूह की क़ौम, और (हूद की क़ौम) आ़द, और (सालेह की क़ौम) समूद, और जो लोग उनके बाद हुए हैं जिन (की तफ़सीली हालत) को सिवाय अल्लाह तआ़ला के कोई नहीं जानता (क्योंकि उनके हालात और तफ़सीलात लिखे नहीं गये और न मन्क़ूल हुए, और वो वाक़िआ़त ये हैं कि) उनके पैग़म्बर उनके पास दलीलें लेकर आये, सो उन क़ौमों (में जो क़ाफ़िर लोग थे उन्हों) ने अपने हाथ उन पैग़म्बरों के मुँह में दे दिये (यानी मानते तो क्या यह कोशिश करते थे कि उनको बात तक न करने दें), और कहने लगे कि जो हुक्म तुमको (तुम्हारे गुमान के मुताबिक़) देकर भेजा गया है (यानी तौहीद व ईमान) हम उसके इनकारी हैं, और जिस चीज़ की तरफ़ तुम हमको बुलाते हो (यानी वही तौहीद व ईमान) हम उसकी तरफ़ से बहुत बड़े शुब्हे में हैं जो (हमको) शक व दुविधा में डाले हुए है (मक़सद इससे तौहीद व रिसालत दोनों का इनकार है। तौहीद का तो ज़ाहिर है और रिसालत का 'जिसकी तरफ़ तुम हमें बुलाते हो.....' में। जिसका हासिल यह है कि तुम ख़ुद अपनी राय से तौहीद यानी एक ख़ुदा को मानने की दावत दे रहे हो, अल्लाह की तरफ़ से भेजे हुए और उसके पाबन्द नहीं हो)।

उनके पैग़म्बरों ने (इस बात के जवाब में) कहा, क्या तुमको अल्लाह तआ़ला के बारे में (यानी उसकी तौहीद में) शक (व इनकार) है जो कि आसमानों और ज़मीन का पैदा करने वाला है (यानी उसका इन चीज़ों को पैदा करना ख़ुद दलील उसकी हस्ती और अकेला माबूद होने की है फिर इस दलील के होते हुए शक करना बड़े ताज्जुब की बात है। और तुम जो तौहीद की दावत को मुस्तक़िल तौर पर हमारी तरफ़ मन्सूब करते हो यह भी बिल्कुल ग़लत है, अगरचे तौहीद हक़ होने की वजह से इस क़ाबिल है कि अगर कोई अपनी राय से भी उसकी दावत दे तो भी मुनासिब है, लेकिन इस विवादित मौक़े में तो हमारी दावत अल्लाह तआ़ला के हुक्म से है पस) वह (ही) तुमको (तौहीद की तरफ़) बुला रहा है ताकि (उसके क़ुबूल करने की बरकत से) तुम्हारे (पिछले) गुनाह माफ़ कर दे, और (तुम्हारी उम्र की) मुक़र्ररा मुद्दत तक तुमको (ख़ैर व

ख़ूबी के साथ) ज़िन्दगी दे (मतलब यह है कि तौहीद अ़लावा इसके कि अपने आप में हक़ है तुम्हारे लिये दोनों जहान में फ़ायदेमन्द भी है। और इस जवाब में दोनों मामलों के मुताल्लिक़ जवाब हो गया है, तौहीद के मुताल्लिक़ भी 'क्या अल्लाह के बारे में शुब्हा है.......' और रिसालत के बारे में भी 'वह तुमको बुलाता है ताकि तुमको बख़्शे........' में जैसा कि तर्जुमे की इबारत से ज़ाहिर है)। फिर उन्होंने (फिर दोनों मामलों के बारे में गुफ़्तगू शुरू की और) कहा कि तुम (पैग़म्बर नहीं हो बल्कि) सिर्फ़ एक आदमी हो जैसे हम हैं (और इनसान होना रसूल बनने के विरुद्ध है, तुम जो कहते हो वह अल्लाह की तरफ़ से नहीं है बल्कि) तुम (अपनी राय ही से) यूँ चाहते हो कि हमारे बाप और दादा जिस चीज़ की इबादत करते थे (यानी बुत) उससे हमको रोक दो, सो (अगर रसूल होने के दावेदार हो तो इन दलीलों व निशानियों के अ़लावा और) कोई साफ़ मोजिज़ा दिखलाओ (जो इन सबसे ज़्यादा स्पष्ट हो। इसमें नुबुव्वत पर तो कलाम "यानी शुब्हा व एतिराज़" ज़ाहिर है और 'यअ़्बुदु आबाउना' में तौहीद पर कलाम की तरफ़ इशारा है जिसका हासिल यह है कि शिर्क के हक़ होने की दलील यह है कि हमारे बुज़ुर्ग इसको करते थे)। उनके रसूलों ने (इसके जवाब में) कहा कि (तुम्हारी तक़रीर के कई भाग हैं, तौहीद का इनकार इस दलील से कि हमारे बाप-दादा इसको करते थे, नुबुव्वत का इनकार इस तरह कि उस पर मौजूदा और पहले से मौजूद खुली निशानियों व मोजिज़ों के अ़लावा किसी और ज़्यादा स्पष्ट मोजिज़े व निशानी का मुतालबा करके, सो पहले मामले के मुताल्लिक़ 'फ़ातिरिस्समावाति वल्-अर्ज़ि' में जवाब हो गया, क्योंकि अ़क़्ली दलील के सामने रस्म व रिवाज और उर्फ़ कोई चीज़ नहीं। दूसरे मामले के मुताल्लिक़ यह कि हम अपने बशर और इनसान होने को मानते हैं कि वाक़ई) हम भी तुम्हारे जैसे आदमी ही हैं, लेकिन (बशर होने और नुबुव्वत में कोई ज़िद और टकराव नहीं, क्योंकि नुबुव्वत अल्लाह तआ़ला का एक आला दर्जे का एहसान है और) अल्लाह (को इख़्तियार है कि) अपने बन्दों में से जिस पर चाहे (वह) एहसान फ़रमा दे (और एहसान के ग़ैर-बशर के साथ ख़ास होने की कोई दलील नहीं), और (तीसरे मामले के मुताल्लिक़ यह है कि दावे के लिये जिसमें नुबुव्वत का दावा भी दाख़िल है सिर्फ़ दलील और बिना किसी शर्त के कोई भी निशानी जो नुबुव्वत के दावे की सूरत में मोजिज़ा होगा लाज़िमी है, जो कि पेश की जा चुकी है, रहा कोई ख़ास और विशेष दलील व मोजिज़ा पेश करना जिसको साफ़ दलील से ताबीर कर रहे हो, सो अव्वल तो मुनाज़रे के उसूल के एतिबार से यह ज़रूरी नहीं, दूसरे) यह बात हमारे क़ब्ज़े की नहीं कि हम तुमको बिना ख़ुदा के हुक्म के कोई मोजिज़ा दिखला सकें (पस तुम्हारे सारे के सारे शुब्हात का जवाब हो गया। फिर अगर इस पर भी तुम न मानो और मुख़ालफ़त किये जाओ तो ख़ैर हम तुम्हारी मुख़ालफ़त से नहीं डरते बल्कि अल्लाह पर भरोसा करते हैं), और अल्लाह ही पर सब ईमान वालों को भरोसा करना चाहिए (चूँकि हम भी ईमान वाले हैं और ईमान का तक़ाज़ा है भरोसा करना इसलिये हम भी इसको इख़्तियार करते हैं)।

और हमको अल्लाह पर भरोसा न करने का कौनसी चीज़ सबब हो सकती है, हालाँकि उसने (हमारे हाल पर बड़ा फ़ज़्ल किया कि) हमको हमारे (दोनों जहान के फ़ायदों के) रास्ते बतला दिये (जिसका इतना बड़ा फ़ज़्ल हो उस पर तो ज़रूर भरोसा करना चाहिये), और (बाहरी नुक़सान से तो यूँ बेफ़िक्र हो गये, रहा अन्दरूनी नुक़सान कि तुम्हारी मुख़ालफ़त का रंज व ग़म होता हो) तुमने (इनकार व मुख़ालफ़त करके) जो कुछ हमको तकलीफ़ पहुँचाई है हम उस पर सब्र करेंगे (पस इससे भी हमको नुक़सान न रहा, और हासिल इस सब्र का भी वही अल्लाह पर भरोसा है) और भरोसा करने वालों को अल्लाह ही पर (हमेशा) भरोसा रखना चाहिए।

और (इस मुकम्मल तौर पर हुज्जत पूरी करने के बाद भी काफ़िर नर्म न हुए बल्कि) काफ़िरों ने अपने रसूलों से कहा कि हम तुमको अपनी सरज़मीन से निकाल देंगे, या यह हो कि तुम हमारे मज़हब में फिर लौट आओ (फिर आना इसलिये कहा कि नबी बनाये जाने से पहले उनकी हालत पर ख़ामोश रहने से वे भी यही समझते थे कि इनका एतिक़ाद भी हम ही जैसा होगा)। पस उन रसूलों पर उनके रब ने (तसल्ली के लिये) वही नाज़िल फ़रमाई कि (ये बेचारे तुमको क्या निकालेंगे) हम (ही) इन ज़ालिमों को ज़रूर हलाक कर देंगे। और इनके (हलाक करने के) बाद तुमको इस सरज़मीन में आबाद रखेंगे। (और) यह (आबाद रखने का वायदा कुछ तुम्हारे साथ ख़ास नहीं बल्कि) हर उस शख़्स के लिये (आ़म) है जो मेरे सामने खड़ा होने से डरे और मेरी वईद "यानी सज़ा के वायदे और धमकी" से डरे (मुराद यह कि जो मुसलमान हो, जिसकी निशानी क़ियामत और सज़ा की धमकी का ख़ौफ़ है, सब के लिये अ़ज़ाब से निजात देने का यह वायदा आ़म है)।

और (पैग़म्बरों ने जो यह मज़मून काफ़िरों को सुनाया कि तुमने दलीलों के फ़ैसले को न माना, अब अ़ज़ाब से फ़ैसला होने वाला है, यानी अ़ज़ाब आने वाला है तो) काफ़िर लोग (चूँकि अपनी हद दर्जा जहालत और दुश्मनी में डूबे हुए थे, इससे भी न डरे बल्कि बिल्कुल निडर होकर वह) फ़ैसला चाहने लगे (जैसा कि उनके इस क़ौल से मालूम होता है कि ले आओ जिसका तुम हमसे वायदा करते हो..........) और (जब वह फ़ैसला आया तो) जितने नाफ़रमान (और) ज़िद्दी लोग थे वे सब (उस फ़ैसले में) नाकाम हुए (यानी हलाक हो गये और जो उनकी मुराद थी कि अपने को हक़ वाला समझकर फ़तह व कामयाबी चाहते थे वह हासिल न हुई)।

مِّنْ وَّرَآئِهٖ جَهَنَّمُ وَيُسْقٰى مِنْ مَّآءٍ صَدِيْدٍ ۙ يَّتَجَرَّعُهٗ وَلَا يَكَادُ يُسِيْغُهٗ وَيَاْتِيْهِ
الْمَوْتُ مِنْ كُلِّ مَكَانٍ وَّمَا هُوَ بِمَيِّتٍ ۭ وَمِنْ وَّرَآئِهٖ عَذَابٌ غَلِيْظٌ ۝

मिंव्वराइही जहन्नमु व युस्क़ा	पीछे उसके दोज़ख़ है, और पिलायेंगे
मिम्-माइन् सदीद (16) य-तजर्रअुहू	उसको पानी पीप का। (16) घूँट घूँट

व ला यकादु युसीग़ुहू व यअ्तीहिल्-मौतु मिन् कुल्लि मकानिंव्-व मा हु-व बि-मय्यितिन्, व मिंव्वराइही अ़ज़ाबुन् ग़लीज़ (17)	पीता है उसको और गले से नहीं उतार सकता, और चली आती है उस पर मौत हर तरफ़ से और वह नहीं मरता, और उसके पीछे अ़ज़ाब है सख़्त। (17)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(जिस सरकश व ज़िद्दी का ऊपर आयत नम्बर 15 में ज़िक्र हुआ है दुनियावी अ़ज़ाब के अ़लावा) उसके आगे दोज़ख़ (का अ़ज़ाब आने वाला) है और उसको (दोज़ख़ में) ऐसा पानी पीने को दिया जायेगा जो कि पीप-लहू (के जैसा) होगा। जिसको (हद से ज़्यादा प्यास की वजह से) घूँट-घूँट करके पियेगा और (उसके हद से ज़्यादा गर्म व नापसन्दीदा होने की वजह से) गले से आसानी के साथ उतारने की कोई सूरत न होगी, और हर (चारों) तरफ़ से उस पर मौत (के सामान) की आमद होगी और वह किसी तरह से मरेगा नहीं (बल्कि यूँ ही सिसकता रहेगा), और (फिर यह भी नहीं कि यही उक्त अ़ज़ाब एक हालत पर रहे बल्कि) उस (शख़्स) को और (ज़्यादा) सख़्त अ़ज़ाब का सामना (बराबर) हुआ करेगा (जिससे आ़दत पड़ने का शुब्हा व गुमान ही नहीं हो सकता, जैसा कि अल्लाह तआ़ला का क़ौल है (आयत नम्बर 56 सूरः निसा):

كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُوْدُهُمْ بَدَّلْنٰهُمْ جُلُوْدًا غَيْرَهَا.

कि 'जिस वक़्त जल जायेगी खाल उनकी तो हम बदल देंगे उनको और (दूसरी) खाल।

مَثَلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ اَعْمَالُهُمْ كَرَمَادِ ِۨاشْتَدَّتْ بِهِ الرِّيْحُ فِيْ
يَوْمٍ عَاصِفٍ ۖ لَا يَقْدِرُوْنَ مِمَّا كَسَبُوْا عَلٰى شَيْءٍ ۚ ذٰلِكَ هُوَ الضَّلٰلُ الْبَعِيْدُ ﴿١٨﴾ اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ خَلَقَ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ۚ اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَاْتِ بِخَلْقٍ جَدِيْدٍ ﴿١٩﴾ وَّمَا ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ
بِعَزِيْزٍ ﴿٢٠﴾ وَبَرَزُوْا لِلّٰهِ جَمِيْعًا فَقَالَ الضُّعَفٰٓؤُا لِلَّذِيْنَ اسْتَكْبَرُوْٓا اِنَّا كُنَّا لَكُمْ تَبَعًا فَهَلْ اَنْتُمْ مُّغْنُوْنَ
عَنَّا مِنْ عَذَابِ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ ۚ قَالُوْا لَوْ هَدٰىنَا اللّٰهُ لَهَدَيْنٰكُمْ ۚ سَوَآءٌ عَلَيْنَآ اَجَزِعْنَآ اَمْ صَبَرْنَا مَا
لَنَا مِنْ مَّحِيْصٍ ﴿٢١﴾ وَقَالَ الشَّيْطٰنُ لَمَّا قُضِيَ الْاَمْرُ اِنَّ اللّٰهَ وَعَدَكُمْ وَعْدَ الْحَقِّ وَوَعَدْتُّكُمْ
فَاَخْلَفْتُكُمْ ۚ وَمَا كَانَ لِيَ عَلَيْكُمْ مِّنْ سُلْطٰنٍ اِلَّآ اَنْ دَعَوْتُكُمْ فَاسْتَجَبْتُمْ لِيْ ۚ فَلَا تَلُوْمُوْنِيْ وَلُوْمُوْٓا
اَنْفُسَكُمْ ۚ مَآ اَنَا بِمُصْرِخِكُمْ وَمَآ اَنْتُمْ بِمُصْرِخِيَّ ۚ اِنِّيْ كَفَرْتُ بِمَآ اَشْرَكْتُمُوْنِ مِنْ قَبْلُ ۗ اِنَّ الظّٰلِمِيْنَ
لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٢٢﴾

ع ٣ ٩ ١٥

म-सलुल्लज़ी-न क-फ़रू बिरब्बिहिम् अअ्मालुहुम् क-रमादि-निश्तद्दत् बिहिर्रीहु फ़ी यौमिन् आसिफ़िन्, ला यक़्दिरू-न मिम्मा क-सबू अ़ला शैइन्, ज़ालि-क हुवज़्ज़लालुल्-बअ़ीद (18) अलम् त-र अन्नल्ला-ह ख़-लक़स्-समावाति वल्-अर्-ज़ बिल्-हक़्क़ि, इंय्यशअ् युज़्हिब्कुम् व यअ्ति बिख़ल्क़िन् जदीद (19) व मा ज़ालि-क अ़लल्लाहि बि-अ़ज़ीज़ (20) व ब-रज़ू लिल्लाहि जमीअ़न् फ़क़ालज़्ज़ु-अ़फ़ा-उ लिल्लज़ीनस्-तक्बरू इन्ना कुन्ना लकुम् त-बअ़न् फ़-हल् अन्तुम् मुग़्नू-न अ़न्ना मिन् अ़ज़ाबिल्लाहि मिन् शैइन्, क़ालू लौ हदानल्लाहु ल-हदैनाकुम्, सवाउन् अ़लैना अ-जज़िअ़्ना अम् सबर्ना मा लना मिम्-महीस (21) ✿

व क़ालश्शैतानु लम्मा क़ुज़ियल्-अम्रु इन्नल्ला-ह व-अ़-दकुम् वअ़्दल्-हक़्क़ि व व-अ़त्तुकुम् फ़-अख़्लफ़्तुकुम्, व मा का-न लि-य अ़लैकुम् मिन् सुल्तानिन् इल्ला अन् दअ़ौतुकुम् फ़स्त-जब्तुम् ली फ़ला तलूमूनी

हाल उन लोगों का जो मुन्किर हुए अपने रब से, उनके अ़मल हैं जैसे वह राख कि ज़ोर की चले उस पर हवा आँधी के दिन, कुछ उनके हाथ में न होगा अपनी कमाई में से, यही है बहक कर दूर जा पड़ना। (18) क्या तूने नहीं देखा कि अल्लाह ने बनाये आसमान और ज़मीन जैसी चाहिए, अगर चाहे तुमको ले जाये और लाये कोई नई पैदाईश। (19) और यह अल्लाह को कुछ मुश्किल नहीं। (20) और सामने खड़े होंगे अल्लाह के सारे फिर कहेंगे कमज़ोर बड़ाई वालों को- हम तो तुम्हारे ताबे थे, सो क्या बचाओगे हमको अल्लाह के किसी अ़ज़ाब से कुछ, वे कहेंगे अगर हिदायत करता हमको अल्लाह तो अलबत्ता हम तुमको हिदायत करते, अब बराबर है हमारे हक़ में कि हम बेक़रारी करें या सब्र करें, हमको नहीं छुटकारा। (21) ✿

और बोला शैतान जब फ़ैसल हो चुका सब काम बेशक अल्लाह ने तुमको दिया था सच्चा वायदा और मैंने तुमसे वायदा किया फिर झूठा किया, मेरी तुम पर कुछ हुकूमत न थी मगर यह कि मैंने बुलाया तुमको फिर तुमने मान लिया मेरी बात को, सो इल्ज़ाम न दो मुझको और

व लूमू अन्फ़ु-सकुम्, मा अ-न बिमुस्रिख़िकुम् व मा अन्तुम् बिमुस्रिख़िय्-य, इन्नी क-फ़र्तु बिमा अश्रक्तुमूनी मिन् क़ब्लु, इन्नज़्ज़ालिमी-न लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (22)	इल्ज़ाम दो अपने आपको, न मैं तुम्हारी फ़रियाद को पहुँचूँ और न तुम मेरी फ़रियाद को पहुँचो, मैं इनकारी हूँ जो तुमने मुझको शरीक बनाया था इससे पहले, अलबत्ता जो ज़ालिम हैं उनके लिये है दर्दनाक अ़ज़ाब। (22)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इन काफ़िरों को अगर अपनी निजात के बारे में यह ख़्याल व गुमान हो कि हमारे आमाल हमको फ़ायदेमन्द होंगे तो इसका मुस्तकिल उसूल तो यह सुन लो कि) जो लोग अपने परवर्दिगार के साथ कुफ़ करते हैं उनकी हालत अ़मल के एतिबार से यह है (यानी उनके आमाल की ऐसी मिसाल है) कि जैसे कुछ राख हो (जो उड़ने में बहुत हल्की होती है) जिसको तेज़ आँधी के दिन में तेज़ी के साथ हवा उड़ा ले जाये (कि इस सूरत में उस राख का नाम व निशान भी न रहेगा, इसी तरह) इन लोगों ने जो कुछ अ़मल किये थे उनका कोई हिस्सा (यानी असर व फ़ायदा) इनको हासिल न होगा (उस राख की तरह ज़ाया व बरबाद हो जायेगा), यह भी बड़ी दूर-दराज़ की गुमराही है (कि गुमान तो हो कि हमारे अ़मल नेक और नाफ़ा देने वाले हैं और फिर ज़ाहिर हों बुरे और नुक़सान देने वाले, जैसे बुतों की पूजा या नाफ़ा न देने वाले आमाल जैसे किसी को आज़ाद करना या सिला-रहमी करना, और चूँकि हक़ से इसको बहुत दूरी है इसलिये कहा गया पस इस तरीक़े से तो निजात का गुमान व संभावना न रही, और अगर उनका यह गुमान हो कि क़ियामत ही का वजूद मुहाल है और इस सूरत में अ़ज़ाब की संभावना व संदेह नहीं, तो इसका जवाब यह है कि) क्या (ऐ मुख़ातब!) तुझको यह बात मालूम नहीं कि अल्लाह तआ़ला ने आसमानों को और ज़मीन को बिल्कुल ठीक-ठीक (यानी फ़ायदों और मस्लेहतों पर आधारित) पैदा किया है (और इससे उसका क़ादिर होना भी मालूम हो गया। पस जब वह मुकम्मल क़ुदरत वाला है तो) अगर वह चाहे तो तुम सब को फ़ना कर दे और एक दूसरी नई मख़्लूक़ को पैदा कर दे। और यह ख़ुदा को कुछ भी मुश्किल नहीं (पस जब नई मख़्लूक़ पैदा करना आसान है तो तुमको दोबारा पैदा कर देना क्या मुश्किल है)।

और (अगर यह ख़्याल व गुमान हो कि हमारे बड़े हमको बचा लेंगे तो इसकी हक़ीक़त सुन लो कि क़ियामत के दिन) ख़ुदा के सामने सब पेश होंगे, फिर छोटे दर्जे के लोग (यानी अ़वाम और पैरवी करने वाले) बड़े दर्जे के लोगों से (यानी ख़ास लोगों और मुक़्तदाओं से मलामत व

नाराज़गी के तौर पर) कहेंगे कि हम (दुनिया में) तुम्हारे ताबे थे (यहाँ तक कि दीन की जो राह तुमने हमको बतलाई हम उसी पर हो लिये, और आज हम पर मुसीबत है) तो क्या तुम ख़ुदा के अ़ज़ाब का कुछ हिस्सा हम से हटा सकते हो (यानी अगर बिल्कुल न बचा सको तो क्या थोड़ा-बहुत भी बचा सकते हो)। वे (जवाब में) कहेंगे कि (हम तुमको क्या बचाते ख़ुद ही नहीं बच सकते हैं, अलबत्ता) अगर अल्लाह हमको (कोई) राह (बचने की) बतलाता तो हम तुमको भी (वह) राह बतला देते, (और अब तो) हम सब के हक़ में दोनों सूरतें बराबर हैं, चाहे हम परेशान हों (जैसा कि तुम्हारी परेशानी 'तो क्या तुम हमको अल्लाह के किसी अ़ज़ाब से बचा सकते हो' से ज़ाहिर है और हमारी परेशानी तो 'अगर अल्लाह हमको बचने की कोई राह बतलाता तो हम तुमको भी वह राह बतला देते' से ज़ाहिर ही है) चाहे संयम से काम लें (दोनों हालतों में) हमारे बचने की कोई सूरत नहीं (पस इस सवाल व जवाब से यह मालूम हो गया कि कुफ़्र के रास्ते के बड़े भी अपने पैरोकारों के कुछ काम न आयेंगे, निजात व छुटकारे के इस रास्ते की भी उम्मीद व गुंजाईश न रही)।

और (अगर इसका भरोसा हो कि अल्लाह के अ़लावा जिनकी इबादत की है वे काम आयेंगे तो इसका हाल इस गुफ़्तगू से मालूम हो जायेगा कि) जब (क़ियामत में) तमाम मुक़द्दमों का फ़ैसला हो चुकेगा (यानी ईमान वाले जन्नत और काफ़िर दोज़ख़ में भेज दिये जायेंगे) तो (तमाम दोज़ख़ वाले शैतान के पास कि वह भी वहाँ होगा जाकर मलामत करेंगे कि कमबख़्त तू तो डूबा ही था हमको भी अपने साथ डुबो दिया। उस वक़्त) शैतान (जवाब में) कहेगा कि (मुझ पर तुम्हारी मलामत अनुचित है, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला ने तुमसे (जितने वायदे किये थे सब) सच्चे वायदे किए थे (कि क़ियामत होगी और कुफ़्र से हलाकत होगी और ईमान से निजात होगी) और मैंने भी तुमसे कुछ वायदे किए थे (कि क़ियामत न होगी और तुम्हारा तरीक़ा कुफ़्र का भी निजात का तरीक़ा है) सो मैंने वे वायदे तुमसे ख़िलाफ़ किये थे (और अल्लाह तआ़ला के वायदों के हक़ होने पर और मेरे वायदों के बातिल व झूठा होने पर मज़बूत और न कटने वाली दलीलें क़ायम थीं, सो बावजूद इसके तुमने मेरे वायदों को सही और ख़ुदा तआ़ला के वायदों को ग़लत समझा, तो अपने हाथों तुम डूबे) और (अगर तुम यूँ कहो कि आख़िर सच्चे वायदों को झूठा समझने और झूठे वायदों को सच्चा समझने का सबब भी तो मैं ही हूँ तो यह बात है कि वाक़ई मैं बहकाने के दर्जे में सबब ज़रूर हुआ लेकिन यह देखो कि मेरे बहकाने के बाद तुम इख़्तियार रखते थे या मजबूर व बेइख़्तियार थे, सो ज़ाहिर है कि) मेरा तुम पर और तो कुछ ज़ोर चलता न था, सिवाय इसके कि मैंने तुमको (गुमराही की तरफ़) बुलाया था। सो तुमने (अपने इख़्तियार से) मेरा कहना मान लिया (अगर न मानते तो मैं ज़बरदस्ती तुमको गुमराह न कर सकता था। जब यह बात साबित है) तो मुझ पर (सारी) मलामत मत करो (इस तरह से कि अपने को बिल्कुल बरी समझने लगो) और (ज़्यादा) मलामत अपने आपको करो (क्योंकि अ़ज़ाब का असल सबब

और कारण तुम्हारा ही अ़मल है, और मेरा फ़ेल तो केवल सबब है जो दूर की चीज़ और उससे हटकर एक चीज़ है, पस मलामत का तो यह जवाब है।)

(और अगर तुम्हारे इस कहने से मक़सद मदद तलब करना और फ़रियाद करना है तो मैं किसी की क्या मदद करूँगा, ख़ुद ही मुसीबत में मुब्तला और इमदाद का मोहताज हो रहा हूँ, लेकिन जानता हूँ कि कोई मेरी मदद न करेगा, वरना मैं भी तुमसे अपने लिये मदद चाहता, क्योंकि ज़्यादा मुनासबत तुम से है, बस अब तो) न मैं तुम्हारा मददगार (हो सकता) हूँ और न तुम मेरे मददगार (हो सकते) हो, (अलबत्ता अगर मैं तुम्हारे शिर्क वाले तरीक़े को हक़ समझता तो भी इस ताल्लुक़ की वजह से मदद का मुतालबा करने की गुंजाईश थी, लेकिन) मैं ख़ुद तुम्हारे इस काम से बेज़ार हूँ (और इसको बातिल समझता हूँ) कि तुम इससे पहले (दुनिया में) मुझको (ख़ुदा का) शरीक क़रार देते थे (यानी बुतों की इबादत वग़ैरह के मामले में मेरी ऐसी इताअ़त करते थे जो इताअ़त कि हक़ तआ़ला के लिये ख़ास है, पस बुतों और मूर्तियों को शरीक ठहराना इस मायने में शैतान को शरीक ठहराना है, पस मुझसे तुम्हारा कोई ताल्लुक़ नहीं, न तुमको मुझसे मदद तलब करने का कोई हक़ है। पस) यक़ीनन ज़ालिमों के लिये दर्दनाक अ़ज़ाब (मुक़र्रर) है (पस अ़ज़ाब में पड़े रहो न मुझ पर मलामत करने से फ़ायदे की उम्मीद रखो और न मदद चाहने से, जो तुमने ज़ुल्म किया था तुम भुगतो जो मैंने किया था मैं भुगतूँगा। पस बातचीत ख़त्म करो। यह हासिल हुआ शैतान के जवाब का। पस इससे अल्लाह के अ़लावा जिनकी इबादत की थी उनसे भी भरोसा और उम्मीद ख़त्म हुई क्योंकि जो इन माबूदों की इबादत का असल संस्थापक और प्रेरक है और दर हक़ीक़त ग़ैरुल्लाह की इबादत से ज़्यादा राज़ी वही होता है, चुनाँचे इसी वजह से क़ियामत के दिन दोज़ख़ में दोज़ख़ वाले उसी से कहें-सुनेंगे और अल्लाह के अ़लावा जिनकी इबादत की थी उनमें से किसी से कुछ भी न कहेंगे, जब उसने साफ़ जवाब दे दिया तो औरों से क्या उम्मीद हो सकती है, पस काफ़िरों की निजात और अ़ज़ाब से छुटकारे के सब रास्ते बन्द हो गये और यही मज़मून उद्देश्य था)।

وَاُدْخِلَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ
فِيْهَا بِاِذْنِ رَبِّهِمْ ۭ تَحِيَّتُهُمْ فِيْهَا سَلٰمٌ ۝

व उद्ख़िलल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति जन्नातिन् तज्री मिन् तह्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा बि-इज़्नि रब्बिहिम्, तहिय्यतुहुम् फ़ीहा सलाम (23)	और दाख़िल किये गये जो लोग ईमान लाये थे और काम किये थे नेक, बाग़ों में जिनके नीचे बहती हैं नहरें, हमेशा रहें उनमें अपने रब के हुक्म से, उनकी मुलाक़ात है वहाँ सलाम। (23)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये वे ऐसे बाग़ों में दाख़िल किये जाएँगे जिनके नीचे नहरें जारी होंगी, (और) वे उनमें अपने परवर्दिगार के हुक्म से हमेशा-हमेशा रहेंगे, (और) वहाँ उनको सलाम इस लफ़्ज़ से किया जायेगा- अस्सलामु अ़लैकुम (यानी आपस में भी और फ़रिश्तों की तरफ़ से भी। जैसा कि क़ुरआन पाक की कई आयतों में इसका बयान है कि आपस में वहाँ वे सलाम करेंगे, फ़रिश्ते जिस दरवाज़े से भी उन पर दाख़िल होंगे तो सलाम करेंगे, अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से भी उन पर सलाम पेश किया जायेगा और कहा जायेगा कि यह तुम्हारे सब्र के नतीजे में है)।

أَلَمْ تَرَ كَيْفَ ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا كَلِمَةً طَيِّبَةً كَشَجَرَةٍ
طَيِّبَةٍ أَصْلُهَا ثَابِتٌ وَّفَرْعُهَا فِي السَّمَآءِ ۝ تُؤْتِيْٓ أُكُلَهَا كُلَّ حِيْنٍۭ بِإِذْنِ رَبِّهَا ۗ وَيَضْرِبُ اللّٰهُ
الْأَمْثَالَ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُوْنَ ۝

अलम् त-र कै-फ़ ज़-रबल्लाहु म-सलन् कलि-मतन् तय्यि-बतन् क-श-ज-रतिन् तय्यि-बतिन् अस्लुहा साबितुंव्-व फ़र्अुहा फ़िस्समा-इ (24) तुअ्ती उकु-लहा कुल्-ल हीनिम्-बि-इज़्नि रब्बिहा, व यज़्रिबुल्लाहुल्-अम्सा-ल लिन्नासि लअ़ल्लहुम् य-तज़क्करून (25)	तूने न देखा कैसी बयान की अल्लाह ने एक मिसाल बात सुथरी जैसे एक दरख़्त सुथरा उसकी जड़ मज़बूत है और टहनी है आसमान में। (24) लाता है फल अपना हर वक़्त पर अपने रब के हुक्म से, और बयान करता है अल्लाह मिसालें लोगों के वास्ते ताकि वे फ़िक्र करें। (25)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या आपको मालूम नहीं (यानी अब मालूम हो गया) कि अल्लाह तआ़ला ने कैसी (अच्छी और मौक़े की) मिसाल बयान फ़रमाई है, कलिमा-ए-तय्यिबा (यानी कलिमा-ए-तौहीद व ईमान की) कि वह एक पाकीज़ा दरख़्त के जैसा है (मुराद खजूर का दरख़्त है), जिसकी जड़ (ज़मीन के अन्दर) ख़ूब गड़ी हुई हो और उसकी शाख़ें "यानी टहनियाँ" ऊँचाई में जा रही हों। (और) वह (दरख़्त) ख़ुदा के हुक्म से हर फ़स्ल में (यानी जब उसकी फ़स्ल आ जाये) अपना फल देता हो (यानी ख़ूब फलता हो, कोई फ़स्ल मारी न जाती हो। इसी तरह कलिमा-ए-तौहीद यानी ला

इला-ह इल्लल्लाहु की एक जड़ है यानी एतिक़ाद जो मोमिन के दिल में मज़बूती के साथ जगह पकड़े हुए है, और उसकी कुछ शाख़ें हैं यानी नेक आमाल जो ईमान पर मुरत्तब होते हैं जो क़ुबूलियत की बारगाह में आसमान की तरफ़ ले जाये जाते हैं, फिर उन पर हमेशा की रज़ा का फल मुरत्तब होता है), और अल्लाह तआ़ला (इस क़िस्म की) मिसालें लोगों (को बतलाने) के वास्ते इसलिये बयान फ़रमाते हैं ताकि वे (लोग मायने-मक़सद को) ख़ूब समझ लें (क्योंकि मिसाल से मक़सद की ख़ूब वज़ाहत हो जाती है)।

وَمَثَلُ كَلِمَةٍ خَبِيثَةٍ كَشَجَرَةٍ خَبِيثَةِ ۨاجْتُثَّتْ مِنْ فَوْقِ الْأَرْضِ مَا لَهَا مِنْ قَرَارٍ ۝ يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِ ۚ وَيُضِلُّ اللّٰهُ الظّٰلِمِيْنَ ۙ وَيَفْعَلُ اللّٰهُ مَا يَشَاءُ ۝ اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ بَدَّلُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ كُفْرًا وَّاَحَلُّوْا قَوْمَهُمْ دَارَ الْبَوَارِ ۝ جَهَنَّمَ ۚ يَصْلَوْنَهَا ۗ وَبِئْسَ الْقَرَارُ ۝

व म-सलु कलि-मतिन् ख़बीसतिन् क-श-ज-रतिन् ख़बीसति-निज्तुस्सत् मिन् फ़ौक़िल्-अर्ज़ि मा लहा मिन् क़रार (26) युसब्बितुल्लाहुल्लज़ी-न आमनू बिल्क़ौलिस्-साबिति फ़िल्हयातिद्दुन्या व फ़िल्-आख़िरति व युज़िल्लुल्लाहुज़्ज़ालिमी-न व यफ़अ़लुल्लाहु मा यशा-उ (27) ✿ अलम् त-र इलल्लज़ी-न बद्दलू निअ़्मतल्लाहि कुफ़्रंव्-व अ-हल्लू क़ौमहुम् दारल्-बवार (28) जहन्न-म यस्लौनहा, व बिअ्सल्-क़रार (29)	और मिसाल गन्दी बात की जैसे दरख़्त गन्दा उखाड़ लिया उसको ज़मीन के ऊपर से, कुछ नहीं उसको ठहराव। (26) मज़बूत करता है अल्लाह ईमान वालों को मज़बूत बात से दुनिया की ज़िन्दगी में और आख़िरत में, और बिचला देता है अल्लाह बेइन्साफ़ों को, और करता है अल्लाह जो चाहे। (27) ✿ तूने न देखा उनको जिन्होंने बदला किया अल्लाह के एहसान का नाशुक्री, और उतारा अपनी क़ौम को तबाही के घर में। (28) जो दोज़ख़ है, दाख़िल होंगे उसमें, और वह बुरा ठिकाना है। (29)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और गन्दे कलिमे की (यानी कुफ़्र व शिर्क के कलिमे की) मिसाल ऐसी है जैसे एक ख़राब दरख़्त हो (मुराद इन्द्राणी का पेड़ है) कि वह ज़मीन के ऊपर ही ऊपर से उखाड़ लिया जाये और उसको (ज़मीन में) कुछ जमाव "और मज़बूती" न हो (ख़राब फ़रमाया उसकी गंध, मज़े और रंग

के एतिबार से, या उसके फल की बू और मज़े और रंग के एतिबार से, यह सिफ़त पहले बयान हुए अच्छे और पाक कलिमे की तय्यिबा के मुक़ाबिल हुई, और ऊपर से उखाड़ने का मतलब यह है कि उसकी जड़ दूर तक नहीं होती, ऊपर ही रखी होती है, यह 'जड़ जमी हुई और गहरी' के मुक़ाबिल फ़रमाया, और 'उसको कुछ ठहराव और मज़बूती नहीं' इसी की ताकीद के लिये फ़रमाया। और उसकी शाख़ों का ऊँचा न जाना और उसके फल का 'फल के तौर पर' मतलूब न होना ज़ाहिर है, यही हाल कलिमा-ए-कुफ़्र का है कि अगरचे काफ़िर के दिल में उसकी जड़ है मगर हक़ के सामने उसका कमज़ोर व पस्त हो जाना ऐसा ही है जैसे उसकी जड़ ही नहीं। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने एक दूसरी जगह पर काफ़िरों की दलील को बेजान व बातिल क़रार दिया है। और शायद 'मा लहा मिन् क़रार' की स्पष्टता से कुफ़्र का यही कमज़ोर व पस्त होना बतलाना मक़सद हो। और चूँकि उसके आमाल मक़बूल नहीं होते, इसलिये गोया उस दरख़्त की शाख़ें भी फ़िज़ा में नहीं फैलतीं, और चूँकि उसके आमाल पर अल्लाह की रज़ा मुरत्तब नहीं होती इसलिये फल की नफ़ी भी ज़ाहिर है, और चूँकि आमाल के क़ुबूल और अल्लाह की रज़ा हासिल होने का काफ़िर में बिल्कुल शुब्हा व गुंजाईश ही नहीं, इसी लिये जिस चीज़ से उसको तशबीह व मिसाल दी गयी है उस चीज़ की शाख़ों और फल का ज़िक्र बिल्कुल ही छोड़ दिया है। बख़िलाफ़ कुफ़्र की ज़ात के कि इसका ज़िक्र इसलिये किया गया कि इसका वजूद महसूस भी है और जिहाद वग़ैरह के अहकाम में मोतबर भी है, यह तो दोनों की मिसाल हो गई आगे असर का बयान है कि) अल्लाह तआ़ला ईमान वालों को इस पक्की बात (यानी कलिमा-ए-तय्यिबा की बरकत) से दुनिया और आख़िरत (दोनों जगहों) में (दीन में और इम्तिहान में) मज़बूत रखता है, और (इस बुरे कलिमे की नहूसत से) ज़ालिमों (यानी काफ़िरों) को (दोनों जगह दीन में और इम्तिहान में) बिचला देता है, और (किसी को जमाव वाला रखने और किसी को बिचला देने में हज़ारों हिक्मतें हैं पस) अल्लाह तआ़ला (अपनी हिक्मत से) जो चाहता है करता है।

क्या आपने उन लोगों (मक्का वालों) को नहीं देखा (यानी उनका अ़जीब हाल है) जिन्होंने अल्लाह की नेमत पर बजाय (शुक्र करने के) कुफ़्र किया (मुराद इससे मक्का के काफ़िर हैं, जैसा कि दुर्रे-मन्सूर में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया गया है) और जिन्होंने अपनी क़ौम को तबाही के घर यानी जहन्नम में पहुँचा दिया (यानी उनको भी कुफ़्र की तालीम की जिससे) वे उस (जहन्नम) में दाख़िल होंगे, और वह रहने की बुरी जगह है (इसमें इशारा हो गया कि उनका दाख़िल होना वहाँ ठहरने और हमेशा रहने के लिये होगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन ऊपर बयान हुई आयतों से पहले एक आयत में हक़ तआ़ला ने काफ़िरों के आमाल की यह मिसाल बयान फ़रमाई है कि वो राख की मानिंद हैं, जिस पर तेज़ और सख़्त हवा चल जाये तो उसका ज़र्रा-ज़र्रा हवा में बिखरकर बेनिशान हो जाये। फिर कोई उसको जमा करके उससे

कोई काम लेना चाहे तो नामुम्किन है:

مَثَلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ اَعْمَالُهُمْ كَرَمَادِ نِ اشْتَدَّتْ بِهِ الرِّيْحُ فِيْ يَوْمٍ عَاصِفٍ.

मतलब यह है कि काफ़िर के आमाल जो बज़ाहिर अच्छे भी हों वो भी अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल नहीं, इसलिये सब ज़ाया और बेकार हैं।

इसके बाद यहाँ बयान हुई आयतों में पहले मोमिन और उसके आमाल की एक मिसाल दी गई है फिर काफ़िरों व मुनाफ़िक़ों के आमाल की। पहली आयत में मोमिन और उसके आमाल की मिसाल एक ऐसे दरख़्त (पेड़) से दी गई है जिसका तना मज़बूत और ऊँचा हो और उसकी जड़ें ज़मीन में गहरी गई हुई हों, और ज़मीन के नीचे पानी के चश्मों से सैराब होती हों। गहरी जड़ों की वजह से उस पेड़ को मज़बूती व स्थिरता भी हासिल हो कि हवा के झोंके से गिर न जाये, और ज़मीन की सतह से दूर होने की वजह से उसका फल गन्दगी से पाक-साफ़ रहे। दूसरी सिफ़त उस पेड़ की यह है कि उसकी शाख़ें ऊँचाई पर आसमान की तरफ़ हों। तीसरी सिफ़त उस पेड़ की यह है कि उसका फल हर वक़्त हर हाल में खाया जाता हो।

यह पेड़ कौनसा और कहाँ है? इसके बारे में मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) के अक़वाल मुख़्तलिफ़ हैं, मगर ज़्यादा क़रीब यह है कि वह खजूर का पेड़ है। इसकी ताईद तजुर्बे और देखने से भी होती है और हदीस की रिवायतों से भी। खजूर के पेड़ के तने का बुलन्द और मज़बूत होना तो देखने की चीज़ है, सब ही जानते हैं कि उसकी जड़ों का ज़मीन की दूर गहराई तक पहुँचना भी परिचित व मालूम है, और उसका फल भी हर वक़्त और हर हाल में खाया जाता है, जिस वक़्त से उसका फल पेड़ पर ज़ाहिर होता है उस वक़्त से पकने के ज़माने तक हर हाल और हर सूरत में उसका फल विभिन्न तरीक़ों से चटनी व अचार के तरीक़े से या दूसरे तरीक़े से खाया जाता है, फिर फल पक जाने के बाद उसका ज़ख़ीरा भी पूरे साल बाक़ी रहता है सुबह व शाम, रात और दिन, गर्मी और सर्दी, ग़र्ज़ कि हर मौसम और हर वक़्त में काम देता है। इस पेड़ का गूदा भी खाया जाता है, उससे मीठा रस निकाला जाता है, उसके पत्तों से बहुत-सी मुफ़ीद चीज़ें चटाईयाँ वग़ैरह बनती हैं, उसकी गुठली जानवरों का चारा है, बख़िलाफ़ दूसरे पेड़ों के फलों कि वे ख़ास मौसम में आते हैं और ख़त्म हो जाते हैं, उनको ज़ख़ीरा करके नहीं रखा जाता है और न उनकी हर चीज़ से फ़ायदा उठाया जाता है।

और तिर्मिज़ी, नसाई, इब्ने हिब्बान और हाकिम ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि शजरा-ए-तय्यिबा (जिसका ज़िक्र क़ुरआने करीम में है) खजूर का पेड़ है और शजरा-ए-ख़बीसा हन्ज़ल (इन्द्राणी) का पेड़ है। (तफ़सीरे मज़हरी)

और मुस्नद अहमद में हज़रत मुजाहिद रह. की रिवायत से बयान हुआ है कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि एक दिन हम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर थे, कोई सज्जन आपके पास खजूर के पेड़ का गूदा लाये

उस वक़्त आपने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से एक सवाल किया कि पेड़ों में से एक ऐसा पेड़ भी है जो मोमिन आदमी की मिसाल है। (और बुख़ारी की रिवायत में इस जगह यह भी ज़िक्र है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उस पेड़ के पत्ते किसी मौसम में झड़ते नहीं) बतलाओ वह पेड़ कौनसा है? हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मेरे दिल में आया कि कह दूँ वह खजूर का पेड़ है, मगर मज्लिस में अबू बक्र व उमर और दूसरे बड़े सहाबा मौजूद थे उनको ख़ामोश देखकर मुझे बोलने की हिम्मत न हुई, फिर ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह खजूर का पेड़ है।

मोमिन की मिसाल इस पेड़ से देने की एक वजह यह है कि क़लिमा-ए-तय्यिबा में ईमान उसकी जड़ है जो बहुत स्थिर और मज़बूत है। दुनिया के हादसे उसको हिला नहीं सकते। कामिल मोमिनों, सहाबा व ताबिईन बल्कि हर ज़माने के पक्के मुसलमानों की ऐसी मिसालें कुछ कम नहीं कि ईमान के मुक़ाबले में न जान की परवाह की, न माल की और न किसी दूसरी चीज़ की। दूसरी वजह उनकी पाकीज़गी और सफ़ाई है कि दुनिया की गन्दगियों से मुतास्सिर नहीं होते, जैसे ऊँचे पेड़ पर ज़मीन की सतह से गन्दगी का कोई असर नहीं होता, ये दो वस्फ़ (ख़ूबी और गुण) तो 'अस्लुहा साबितुन' की मिसाल हैं। तीसरी वजह यह है कि जिस तरह खजूर के पेड़ की शाख़ें (टहनियाँ) ऊँची आसमान की तरफ़ होती हैं, मोमिन के ईमान के फल यानी आमाल भी आसमान की तरफ़ उठाये जाते हैं। क़ुरआने करीम में है:

إِلَيْهِ يَصْعَدُ الْكَلِمُ الطَّيِّبُ

यानी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ उठाये जाते हैं पाकीज़ा कलिमे। मतलब यह है कि मोमिन जो अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र तस्बीह, तहलील, क़ुरआन की किराअत वग़ैरह करता है ये सुबह व शाम अल्लाह तआ़ला के पास पहुँचते रहते हैं।

चौथी वजह यह है कि जिस तरह खजूर का फल हर वक़्त, हर हाल, हर मौसम में रात-दिन खाया जाता है, मोमिन के नेक आमाल भी हर वक़्त, हर मौसम और हर हाल में सुबह व शाम जारी हैं। और जिस तरह खजूर के पेड़ की हर चीज़ कारामद है, मोमिन का हर क़ौल व फ़ेल और हरकत व सुकून और उससे पैदा होने वाले आसार पूरी दुनिया के लिये नफ़ा देने वाले और मुफ़ीद होते हैं, बशर्तेकि वह मोमिन कामिल और ख़ुदा व रसूल की तालीमात का पाबन्द हो।

ऊपर बयान हुई तक़रीर से मालूम हुआ कि उपर्युक्त आयत नम्बर 25 में उकुल से मुराद फल और खाने के लायक़ चीज़ें हैं और ही-न से मुराद हर वक़्त हर हाल है, अक्सर मुफ़स्सिरीन ने इसी को तरजीह दी है, कुछ हज़रात के दूसरे अक़वाल भी हैं।

काफ़िरों की मिसाल

इसके मुक़ाबले में दूसरी मिसाल काफ़िरों की 'गन्दे और ख़राब पेड़' से दी गई। जिस तरह 'कलिमा-ए-तय्यिबा से मुराद 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' का क़ौल यानी ईमान है, इसी तरह 'बुरे और

गन्दे कलिमे' से मुराद कुफ़्र के कलिमात और कुफ़्र के आमाल हैं। शजरा-ए-ख़बीसा (गन्दे और ख़राब पेड़) से मुराद मज़कूरा हदीस में हन्ज़ल (इन्द्राणी) को क़रार दिया गया है, और कुछ हज़रात ने लहसुन वग़ैरह कहा है।

इस ख़बीस पेड़ का हाल क़ुरआन ने यह बयान किया है कि उसकी जड़ें ज़मीन के अन्दर ज़्यादा नहीं होतीं इसलिये जब कोई चाहे उस दरख़्त के पूरे वजूद को ज़मीन से उखाड़ सकता है।

اُجْتُثَّتْ مِنْ فَوْقِ الْاَرْضِ.

के यही मायने हैं। क्योंकि "उज्तुस्सत" के असल मायने यह हैं कि किसी चीज़ के वजूद को पूरा-पूरा उठा लिया जाये।

काफ़िर के आमाल को इस पेड़ से तशबीह (मिसाल) देने की वजह ज़ाहिर है कि अव्वल तो उसके अ़कीदों की कोई जड़ बुनियाद नहीं, ज़रा देर में लड़खड़ा जाता है, दूसरे दुनिया की गन्दगी से प्रभावित होते हैं, तीसरे उनके पेड़ के फल-फूल यानी आमाल और काम अल्लाह के नज़दीक कारामद नहीं।

ईमान का ख़ास असर

इसके बाद मोमिन के ईमान और कलिमा-ए-तय्यिबा का एक ख़ास असर दूसरी आयत में बयान फ़रमाया है:

يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَ فِي الْاٰخِرَةِ.

यानी मोमिन का कलिमा-ए-तय्यिबा मज़बूत व स्थिर पेड़ की तरह एक जमाव वाला क़ौल है जिसको अल्लाह तआ़ला हमेशा क़ायम व बरक़रार रखते हैं, दुनिया में भी और आख़िरत में भी, बशर्तेकि यह कलिमा इख़्लास के साथ कहा जाये, और ला इला-ह इल्लल्लाहु के मफ़्हूम (मायने व मतलब) को पूरी तरह समझकर इख़्तियार किया जाये।

मतलब यह है कि इस कलिमा-ए-तय्यिबा पर ईमान रखने वाले की दुनिया में भी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ताईद होती है जिसकी वजह से वह मरते दम तक इस कलिमे पर क़ायम रहता है, चाहे उसके ख़िलाफ़ कितने ही हादसों से मुक़ाबला करना पड़े, और आख़िरत में इस कलिमे को क़ायम व बरक़रार रखकर उसकी मदद की जाती है। सही बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि आख़िरत से मुराद इस आयत में बर्ज़ख़ यानी क़ब्र का जहान है।

क़ब्र का अ़ज़ाब व सवाब क़ुरआन व हदीस से साबित है

हदीस यह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब क़ब्र में मोमिन से सवाल किया जायेगा तो ऐसे हौलनाक मक़ाम और सख़्त हाल में भी वह अल्लाह की मदद व ताईद से इस कलिमे पर क़ायम रहेगा, और ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाहि की गवाही देगा। और फिर फ़रमाया कि क़ुरआन के इरशादः

يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِى الْاٰخِرَةِ.

(यानी यही ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 27) का यही मतलब है (यह रिवायत हज़रत बरा बिन आ़ज़िब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने नक़ल फ़रमाई)। इसी तरह तक़रीबन चालीस सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से मोतबर सनदों के साथ इसी मज़मून की हदीसें नक़ल की गयी हैं जिनको इमाम इब्ने कसीर ने इस जगह अपनी तफ़सीर में जमा किया है। और शैख़ जलालुद्दीन सुयूती रह. ने अपने रिसाले 'अत्तसबीत इन्दत्-तबयीत' में और 'शरहुस्सुदूर' में सत्तर हदीसों का हवाला नक़ल करके उन रिवायतों को मुतवातिर (यानी एक जमाअ़त से लगातार नक़ल होने वाली) फ़रमाया है। इन सब हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने इसी आयत में आख़िरत से मुराद क़ब्र और इस आयत को क़ब्र के अ़ज़ाब व सवाब से संबन्धित क़रार दिया है।

मरने और दफ़न होने के बाद क़ब्र में इनसान का दोबारा ज़िन्दा होकर फ़रिश्तों के सवालात का जवाब देना, फिर उस इम्तिहान में कामयाबी और नाकामी पर सवाब या अ़ज़ाब होना क़ुरआन मजीद की तक़रीबन दस आयतों में इशारे के तौर पर और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सत्तर मुतवातिर हदीसों में बड़ी स्पष्टता और वज़ाहत के साथ बयान हुआ है, जिसमें मुसलमान को शक व शुब्हे की गुन्जाईश नहीं। रहे वो आ़म दर्जे के शुब्हात कि दुनिया में देखने वालों को ये सवाब व अ़ज़ाब नज़र नहीं आते, सो इसके तफ़सीली जवाबात की तो यहाँ गुन्जाईश नहीं, मुख़्तसर तौर पर इतना समझ लेना काफ़ी है कि किसी चीज़ का नज़र न आना उसके मौजूद न होने की दलील नहीं, जिन्नात और फ़रिश्ते भी किसी को नज़र नहीं आते मगर मौजूद हैं, हवा नज़र नहीं आती मगर मौजूद है, जिस कायनाती फ़िज़ा को इस ज़माने में रॉकेटों के ज़रिये देखा जा रहा है वह अब से पहले किसी को नज़र न आती थी, मगर मौजूद थी। सपना देखने वाला सपने में किसी मुसीबत में गिरफ़्तार होकर सख़्त अ़ज़ाब में बेचैन होता है मगर पास बैठने वालों को उसकी कुछ ख़बर नहीं होती।

उसूल की बात यह है कि एक आ़लम (जहान) को दूसरे आ़लम के हालात पर अन्दाज़ा करना ख़ुद ग़लत है। जब कायनात के पैदा करने वाले ने अपने रसूल के ज़रिये दूसरे आ़लम में पहुँचने के बाद इस अ़ज़ाब व सवाब की ख़बर दे दी तो इस पर ईमान व यक़ीन रखना लाज़िम है। आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَيُضِلُّ اللّٰهُ الظّٰلِمِيْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला मोमिनों को तो कलिमा-ए-तय्यिबा और मज़बूत क़ौल पर साबित-क़दम (जमे रहने वाला) रखते हैं और इसके नतीजे में क़ब्र ही से उनके लिये राहत के सामान जमा हो जाते हैं, मगर ज़ालिमों यानी काफ़िरों व मुश्रिकों को यह ख़ुदाई मदद नहीं मिलती, मुन्कर-नकीर के सवालों का सही जवाब नहीं दे सकते और अन्जामकार अभी से एक क़िस्म के अ़ज़ाब में मुब्तला हो जाते हैं।

وَيَفْعَلُ اللّٰهُ مَا يَشَآءُ ۝

"यानी अल्लाह तआ़ला करता है जो चाहता है।" कोई ताक़त नहीं जो उसके इरादे और मर्ज़ी को रोक सके। हज़रत उबई इब्ने कअ़ब, हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद और हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हुम वग़ैरह सहाबा हज़रात ने फ़रमाया है कि मोमिन को इसका एतिक़ाद (यानी इस पर यक़ीन व ईमान लाना) लाज़िम है कि उसको जो-जो चीज़ हासिल हुई वह अल्लाह की मर्ज़ी और इरादे से हासिल हुई, उसका टलना नामुम्किन था। इसी तरह जो चीज़ हासिल नहीं हुई उसका हासिल होना भी नामुम्किन था। और फ़रमाया कि अगर तुम्हें इस पर यक़ीन व भरोसा न हो तो तुम्हारा ठिकाना जहन्नम है।

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ بَدَّلُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ كُفْرًا وَّاَحَلُّوْا قَوْمَهُمْ دَارَ الْبَوَارِ ۝ جَهَنَّمَ يَصْلَوْنَهَا وَبِئْسَ الْقَرَارُ ۝

"यानी क्या आप उन लोगों को नहीं देखते जिन्होंने अल्लाह तआ़ला की नेमतों के बदले में कुफ़्र इख़्तियार कर लिया, और अपनी क़ौम को जो उनके कहने पर चलती थी तबाही व बरबादी के मक़ाम में उतार दिया, वे जहन्नम में जलेंगे और जहन्नम बहुत बुरा ठिकाना है।"

यहाँ 'निअ़्मतल्लाहि' से अल्लाह तआ़ला की आ़म नेमतें भी मुराद हो सकती हैं, जो देखी और महसूस की जाती हैं, और जिनका ताल्लुक़ इनसान के ज़ाहिरी फ़ायदों से है जैसे खाने-पीने पहनने की चीज़ें, ज़मीन और मकान वग़ैरह, और वो ख़ास मानवी नेमतें भी हो सकती हैं जो इनसान की रहनुमाई व हिदायत के लिये हक़ तआ़ला की तरफ़ से आई हैं, जैसे नबी व रसूल और आसमानी किताबें, और जो निशानियाँ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत व हिक्मत की अपने वजूद के हर जोड़ में फिर ज़मीन और उसकी बेशुमार मख़्लूक़ात में, आसमान और उसकी रसाई न होने वाली कायनात में इनसान की हिदायत का सामान हैं।

इन दोनों क़िस्म की नेमतों का तक़ाज़ा यह था कि इनसान अल्लाह तआ़ला की बड़ाई व क़ुदरत को पहचानता, उसकी नेमतों का शुक्रगुज़ार होकर उसकी फ़रमाँबरदारी में लग जाता, मगर काफ़िरों व मुश्रिकों ने नेमतों का मुक़ाबला शुक्र के बजाय नेमत की नाशुक्री व इनकार और सरकशी व नाफ़रमानी से किया, जिसका नतीजा यह हुआ कि उन्होंने अपनी क़ौम को तबाही व बरबादी के मक़ाम में डाल दिया और ख़ुद भी हलाक हुए।

अहकाम व हिदायतें

इन तीनों आयतों में तौहीद (अल्लाह के अकेला और तन्हा माबूद होने को मानने) और कलिमा-ए-तय्यिबा ला इला-ह इल्लल्लाहु की अ़ज़मत व फ़ज़ीलत और इसकी बरकतें व फल और इससे इनकार की नहूसत और बुरे अन्जाम का बयान हुआ है, कि तौहीद ऐसी हमेशा क़ायम रहने वाली दौलत है जिसकी बरकत से दुनिया में अल्लाह की मदद व ताईद साथ होती है, और आख़िरत और क़ब्र में भी, और इससे इनकार अल्लाह तआ़ला की नेमतों को अ़ज़ाब से बदल डालने के बराबर है।

وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ اَنْدَادًا لِّيُضِلُّوْا عَنْ سَبِيْلِهٖ ۭ قُلْ تَمَتَّعُوْا فَاِنَّ مَصِيْرَكُمْ اِلَى النَّارِ ۝ قُلْ لِّعِبَادِيَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَيُنْفِقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً مِّنْ قَبْلِ اَنْ يَّاْتِيَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيْهِ وَلَا خِلٰلٌ ۝ اَللّٰهُ الَّذِيْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ مِنَ السَّمَاۗءِ مَاۗءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْفُلْكَ لِتَجْرِيَ فِي الْبَحْرِ بِاَمْرِهٖ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْاَنْهٰرَ ۝ وَسَخَّرَ لَكُمُ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ دَاۗىِٕبَيْنِ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۝ وَاٰتٰىكُمْ مِّنْ كُلِّ مَا سَاَلْتُمُوْهُ ۭ وَاِنْ تَعُدُّوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوْهَا ۭ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُوْمٌ كَفَّارٌ ۝

ع 5 / 17

व ज-अ़लू लिल्लाहि अन्दादल्-लियुज़िल्लू अ़न् सबीलिही, क़ुल् त-मत्तअ़ू फ़-इन्-न मसीरकुम् इलन्नार (30) क़ुल् लिअ़िबादियल्लज़ी-न आमनू युक़ीमुस्सला-त व युन्फ़िक़ू मिम्मा रज़क़्नाहुम् सिर्रंव्-व अ़लानि-यतम् मिन् क़ब्लि अंय्यअ्ति-य यौमुल्-ला बैअ़ुन् फ़ीहि व ला ख़िलाल (31) अल्लाहुल्लज़ी ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ व अन्ज़-ल मिनस्समा-इ माअन् फ़-अख़्र-ज बिही मिनस्स-मराति रिज़्क़ल्-लकुम् व सख़्ख़-र लकुमुल्फ़ुल्-क लितज्रि-य फ़िल्-बह्रि बि-अम्रिही व सख़्ख़-र लकुमुल्-अन्हार (32) व सख़्ख़-र लकुमुश्-शम्-स वल्क़-म-र दाइबैनि व

और ठहराये अल्लाह के लिये मुक़ाबिल कि बहकायें लोगों को उसकी राह से, तू कह- मज़ा उड़ा लो फिर तुमको लौटना है आग की तरफ़। (30) कह दे मेरे बन्दों को कि जो ईमान लाये हैं क़ायम रखें नमाज़ और ख़र्च करें हमारी दी हुई रोज़ी में से छुपे और ज़ाहिर करके इससे पहले कि आये वह दिन जिसमें न सौदा है न दोस्ती। (31) अल्लाह वह है जिसने बनाये आसमान और ज़मीन और उतारा आसमान से पानी, फिर उससे निकाली रोज़ी तुम्हारे मेवे, और तुम्हारे कहने में किया कश्ती को कि चले दरिया में उसके हुक्म से, और तुम्हारे काम में लगा दिया नदियों को। (32) और तुम्हारे काम में लगा दिया सूरज और चाँद को एक दस्तूर पर बराबर, और तुम्हारे काम में लगा दिया

सख़्ख़-र लकुमुल्लै-ल वन्नहार (33) व आताकुम् मिन् कुल्लि मा स-अल्तुमूहु, व इन् तअुद्दू निअ्मतल्लाहि ला तुह्सूहा, इन्नल्-इन्सा-न ल-ज़लूमुन् कफ़्फ़ार (34) ❁	रात और दिन को। (33) और दिया तुमको हर चीज़ में से जो तुमने माँगी, और अगर गिनो एहसान अल्लाह के (तो) न पूरे कर सको, बेशक आदमी बड़ा बेइन्साफ़ है, नाशुक्रा। (34) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऊपर जो कहा गया है कि उन लोगों ने नेमत के शुक्र की जगह कुफ़्र किया और अपनी क़ौम को जहन्नम में पहुँचाया, इस कुफ़्र और पहुँचाने का बयान यह है कि) उन लोगों ने अल्लाह के साझी क़रार दिये ताकि (दूसरों को भी) उसके दीन से गुमराह करें (पस साझी क़रार देना कुफ़्र है और दूसरों को गुमराह करना जहन्नम में पहुँचाना है)। आप (इन सबसे) कह दीजिये कि थोड़ी और ऐश कर लो, क्योंकि तुम्हारा अख़ीर अन्जाम दोज़ख़ में जाना है (ऐश से मुराद कुफ़्र की हालत में रहना है, क्योंकि हर शख़्स को अपने मज़हब में लज़्ज़त होती है, यानी और चन्द दिन कुफ़्र कर लो यह धमकी है, और मतलब "क्योंकि" का यह है कि चूँकि जहन्नम में जाना तो तुम्हारा ज़रूरी है इस वास्ते कुफ़्र से बाज़ आना तुम्हारा मुश्किल है, ख़ैर और थोड़ा वक़्त गुज़ार लो, फिर तो उस मुसीबत का सामना ही होगा। और) जो मेरे ख़ास ईमान वाले बन्दे हैं (उनको इस नेमत की नाशुक्री के वबाल पर सचेत करके उससे महफ़ूज़ रखने के लिये) उनसे कह दीजिये कि वे (अल्लाह की नेमत के इस तरह शुक्रगुज़ार रहें कि) नमाज़ की पाबन्दी रखें और हमने जो कुछ उनको दिया है उसमें से (शरीअ़त के क़ानून के मुताबिक़) छुपे और खुले तौर पर (जैसा मौक़ा हो) ख़र्च किया करें, ऐसे दिन के आने से पहले-पहले कि जिसमें न ख़रीद व बेच होगी और न दोस्ती (मतलब यह कि बदनी और माली इबादतों को अदा करते रहें कि यही शुक्र है नेमत का)।

अल्लाह ऐसा है जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और आसमान से पानी (यानी बारिश को) बरसाया, फिर उस पानी से फलों की क़िस्म से तुम्हारे लिये रिज़्क़ पैदा किया और तुम्हारे फ़ायदे के वास्ते कश्ती (और जहाज़) को (अपनी क़ुदरत व हुक्म के) ताबे बनाया ताकि वह ख़ुदा के हुक्म (व क़ुदरत) से दरिया में चले (और तुम्हारी तिजारत और सफ़र की ग़र्ज़ हासिल हो), और तुम्हारे फ़ायदे के वास्ते नहरों को (अपनी क़ुदरत व हुक्म के) ताबे बनाया (ताकि उसी से पानी पियो और सिंचाई करो, और उसमें कश्ती चलाओ)। और तुम्हारे फ़ायदे के वास्ते सूरज और चाँद को (अपनी क़ुदरत व हुक्म के) ताबे बनाया जो हमेशा चलने ही में रहते हैं (ताकि तुमको रोशनी और गर्मी वग़ैरह का फ़ायदा हो) और तुम्हारे फ़ायदे के वास्ते रात और दिन को (अपनी क़ुदरत व हुक्म के) ताबे बनाया (ताकि तुमको रोज़ी और राहत व आराम का

नफ़ा हासिल हो)। और जो-जो चीज़ तुमने माँगी (और वह तुम्हारे हाल के मुनासिब हुई) तुमको हर चीज़ दी और (ज़िक्र हुई चीज़ों ही तक यह सिलसिला ख़त्म नहीं होता) अल्लाह तआ़ला की नेमतें (तो इस क़द्र बेशुमार हैं कि) अगर (उनको) शुमार करने लगो तो शुमार में नहीं ला सकते, (मगर) सच यह है कि आदमी बहुत ही बेइन्साफ़, बड़ा ही नाशुक्रा है (अल्लाह तआ़ला की नेमतों की क़द्र और शुक्र नहीं करता, बल्कि और इसके उलट कुफ़्र व नाफ़रमानी करने लगता है, जैसा कि ऊपर आयत नम्बर 28 में आया है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः इब्राहीम के शुरू में रिसालत व नुबुव्वत और अन्जाम व आख़िरत के बारे में मज़ामीन थे, इसके बाद तौहीद (अल्लाह को एक और अकेला लायक़े इबादत मानने) की फ़ज़ीलत और कलिमा-ए-कुफ़्र व शिर्क की बुराई का बयान मिसालों के ज़रिये किया गया। फिर मुश्रिकों की बुराई और निंदा इस बात पर की गई कि उन्होंने अल्लाह तआ़ला की नेमतों का शुक्र अदा करने के बजाय नाशुक्री और कुफ़्र का रास्ता इख़्तियार किया।

ऊपर बयान हुई आयतों में से पहली आयत में काफ़िरों व मुश्रिकों की बुराई और उनके बुरे अन्जाम का ज़िक्र है। दूसरी आयत में मोमिनों की फ़ज़ीलत और उनको शुक्र अदा करने के लिये अल्लाह के कुछ अहकाम की ताकीद की गई है। तीसरी, चौथी और पाँचवीं आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की अ़ज़ीम नेमतों का ज़िक्र फ़रमाकर इस पर आमादा किया गया कि वे इन नेमतों को अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी में ख़र्च न करें।

तफ़सीर व ख़ुलासा

अन्दाद निद्द की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने मिस्ल और बराबर के हैं। बुतों को अन्दाद इसलिये कहा जाता है कि मुश्रिकों ने उनको अपने अ़मल में ख़ुदा की मिस्ल (जैसा) या बराबर क़रार दे रखा था। तमत्तो के मायने किसी चीज़ से चन्द दिन का वक़्ती फ़ायदा हासिल करने के हैं। इस आयत में मुश्रिकों के इस ग़लत नज़रिये पर नकीर है कि उन्होंने बुतों को ख़ुदा के मिस्ल (जैसा) और उसका शरीक ठहरा दिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया कि उन लोगों को जतला दें कि उनका अन्जाम क्या होने वाला है। फ़रमाया कि दुनिया की चन्द दिन की नेमतों से फ़ायदा उठा लो, मगर तुम्हारा ठिकाना जहन्नम की आग है।

दूसरी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इरशाद है कि (मक्का के काफ़िरों ने तो अल्लाह की नेमत को कुफ़्र से बदल डाला अब) "आप मेरे मोमिन बन्दों से फ़रमा दें कि नमाज़ की पाबन्दी रखें और हमने जो रिज़्क़ उनको दिया है उसमें से अल्लाह की राह में ख़र्च किया करें, छुपे और खुले तौर पर।" इस आयत में मोमिन बन्दों के लिये बड़ी ख़ुशख़बरी और सम्मान है, अव्वल तो अल्लाह तआ़ला ने उनको अपना बन्दा कहकर पुकारा, फिर ईमान की सिफ़त के साथ जोड़ा, फिर उनको हमेशा की राहत और सम्मान देने की तरकीब बतलाई कि

नमाज़ की पाबन्दी करें, न उसके वक़्तों में सुस्ती करें, न आदाब में कोताही, और अल्लाह ही के दिये हुए रिज़्क़ में से कुछ उसकी राह में भी ख़र्च किया करें। ख़र्च करने की दोनों सूरतों को जायज़ क़रार दिया कि छुपे तौर पर सदक़ा ख़ैरात करें या ऐलान व इज़हार के साथ करें।

कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि फ़र्ज़ ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र वग़ैरह ऐलानिया होने चाहियें ताकि दूसरों को भी शौक़ व दिलचस्पी और तवज्जोह हो और नफ़्ली सदक़े ख़ैरात को छुपाकर देना बेहतर है ताकि नाम व नमूद का ख़तरा न रहे। और असल मदार नीयत और हालात पर है, अगर ऐलान व इज़हार में नाम व नमूद का शुब्हा आ जाये तो सदक़े की फ़ज़ीलत ख़त्म हो जाती है चाहे फ़र्ज़ हो या नफ़िल, और अगर नीयत यह हो कि दूसरों को भी तवज्जोह व दिलचस्पी हो तो फ़र्ज़ और नफ़िल दोनों में ऐलान व इज़हार जायज़ है।

مِنْ قَبْلِ اَنْ يَّاْتِيَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيْهِ وَلَا خِلٰلٌ

लफ़्ज़ ख़िलाल ख़ुल्लतुन की जमा (बहुवचन) भी हो सकती है जिसके मायने बेग़र्ज़ दोस्ती के हैं, और इस लफ़्ज़ को बाब-ए-मुफ़ाअलत का मस्दर भी कह सकते हैं जैसे क़िताल, दिफ़ाअ़ वग़ैरह, इस सूरत में इसके मायने दो शख़्सों के आपस मे दोनों तरफ़ से सच्चे दिल से बिना किसी ग़र्ज़ के दोस्ती करने के होंगे। इस जुमले का ताल्लुक़ ऊपर बयान किये हुए दोनों हुक्म यानी नमाज़ और सदक़े के साथ है।

मतलब यह है कि आज तो अल्लाह तआ़ला ने फ़ुर्सत व ताक़त अ़ता फ़रमा रखी है कि नमाज़ अदा करें, और पिछली उम्र में ग़फ़लत से कोई नमाज़ रह गई हो तो उसकी क़ज़ा करें। इसी तरह आज माल तुम्हारी मिल्क और क़ब्ज़े में है उसको अल्लाह के लिये ख़र्च करके हमेशा की ज़िन्दगी का काम बना सकते हो, लेकिन वह दिन क़रीब आने वाला है जबकि ये दोनों ताक़तें और क़ुदरतें तुम से ले ली जायेंगी, न तुम्हारे बदन नमाज़ पढ़ने के क़ाबिल रहेंगे, न तुम्हारी मिल्क और क़ब्ज़े में कोई माल रहेगा, जिससे ज़ाया हुए हुक़ूक़ की अदायेगी कर सको, और उस दिन में ख़रीद व बेच (यानी किसी तरह की सौदेबाज़ी) भी न हो सकेगी कि आप कोई ऐसी चीज़ ख़रीद लें जिसके ज़रिये अपनी कोताहियों और गुनाहों का कफ़्फ़ारा (बदला) कर सकें, और उस दिन में आपस की दोस्तियाँ और ताल्लुक़ात भी काम न आ सकेंगे, कोई अ़ज़ीज़ दोस्त किसी के गुनाहों का बोझ न उठा सकेगा, और न उसके अ़ज़ाब को किसी तरह हटा सकेगा।

"उस दिन" से मुराद बज़ाहिर हश्र व क़ियामत का दिन है, और यह भी कहा जा सकता है कि मौत का दिन हो, क्योंकि ये सब आसार मौत ही के वक़्त से ज़ाहिर हो जाते हैं, न बदन में किसी अ़मल की सलाहियत रहती है न माल ही उसकी मिल्क में रहता है।

अहकाम व हिदायतें

इस आयत में जो यह इरशाद है कि क़ियामत के दिन किसी की दोस्ती किसी के काम न आयेगी, इसका मतलब यह है कि महज़ दुनियावी दोस्तियाँ उस दिन काम न आयेंगी, लेकिन

जिन लोगों की दोस्ती और ताल्लुक़ात अल्लाह के लिये और उसके दीन के कामों के लिये हों उनकी दोस्ती उस वक़्त भी काम आयेगी, कि अल्लाह के नेक और मक़बूल बन्दे दूसरों की शफ़ाअ़त करेंगे जैसा कि बहुत-सी हदीसों में इसका बयान है, और क़ुरआने पाक में इरशाद है:

اَلْاَخِلَّآءُ يَوْمَئِذٍۭ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ اِلَّا الْمُتَّقِيْنَ٥

"यानी वे लोग जो दुनिया में आपस में दोस्त थे, उस दिन एक दूसरे के दुश्मन हो जायेंगे कि यह चाहेंगे कि दोस्त पर अपना गुनाह डालकर ख़ुद बरी हो जायें, मगर वे लोग जो तक़्वे वाले हैं।" क्योंकि तक़्वे वाले वहाँ भी एक दूसरे की मदद सिफ़ारिश के रास्ते से कर सकेंगे।

तीसरी, चौथी और पाँचवीं आयतों में अल्लाह तआ़ला की बड़ी-बड़ी नेमतों की याददेहानी कराकर इनसान को उसकी इबादत व इताअ़त की तरफ़ दावत दी गई है। इरशाद है कि अल्लाह तआ़ला ही की ज़ात है जिसने आसमान और ज़मीन पैदा किये जिस पर इनसानी वजूद की शुरूआ़त और बाक़ी रहना मौक़ूफ़ है। फिर आसमान से पानी उतारा जिसके ज़रिये तरह-तरह के फल पैदा किये ताकि वो तुम्हारा रिज़्क़ बन सकें। लफ़्ज़ **समरात** समर की जमा (बहुवचन) है, हर चीज़ से हासिल होने वाले नतीजे को उसका **समरा** कहा जाता है, इसलिये लफ़्ज़ समरात में वो तमाम चीज़ें भी शामिल हैं जो इनसान की ग़िज़ा बनती हैं, और वो चीज़ें भी जो उसका लिबास बनती हैं, और वो चीज़ें भी जो उसके रहने-सहने का मकान बनती हैं, क्योंकि लफ़्ज़ रिज़्क़ जो इस आयत में बयान हुआ है वह इन तमाम इनसानी ज़रूरतों पर छाया हुआ और शामिल है। (तफ़सीरे मज़हरी)

फिर फ़रमाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने ही कश्तियों और जहाज़ों को तुम्हारे काम में लगा दिया कि वो अल्लाह के हुक्म से दरियाओं में चलते फिरते हैं। लफ़्ज़ **सख़्ख़-र** जो इस आयत में आया है इससे मुराद यही है कि अल्लाह तआ़ला ने इन चीज़ों का इस्तेमाल तुम्हारे लिये आसान कर दिया है। लकड़ी लोहा और उनसे कश्ती जहाज़ बनाने के औज़ार व उपकरण और उनसे सही काम लेने की अ़क्ल व समझ ये सब चीज़ें उसी की दी हुई हैं, इसलिये इन चीज़ों के आविष्कारक इस पर नाज़ न करें कि यह हमने ईजाद की या बनाई है, क्योंकि जिन चीज़ों से इनमें काम लिया गया है उनमें से कोई चीज़ भी न तुमने पैदा की है न कर सकते हो, कायनात के पैदा करने वाले की बनाई हुई लकड़ी लोहे, ताँबे और पीतल ही में उलट-पुलट करके यह ईजाद (किसी नई चीज़ के बनाने) का सेहरा आपने अपने सर ले लिया है वरना हक़ीक़त देखो तो ख़ुद आपका अपना वजूद अपने हाथ पाँव, अपना दिमाग़ और अ़क्ल भी तो आपकी बनाई हुई नहीं।

इसके बाद फ़रमाया कि हमने तुम्हारे लिये सूरज और चाँद को ताबे कर दिया कि ये दोनों हमेशा एक हालत पर चलते ही रहते हैं। यानी हर वक़्त और हर हाल में चलना इन दोनों सय्यारों (ग्रहों) की आ़दत बना दी गई कि कभी इसके ख़िलाफ़ नहीं होता। ताबे करने के यह

मायने नहीं कि वो तुम्हारे हुक्म और इशारों पर चला करें, क्योंकि अगर सूरज व चाँद को इस तरह इनसान के इख़्तियार में और हुक्म के ताबे कर दिया जाता कि वो इनसानी हुक्म के ताबे चला करते तो इनसानों के आपसी झगड़ों और विवादों का यह नतीजा होता कि एक इनसान कहता कि आज सूरज दो घन्टे बाद निकले, क्योंकि रात में काम ज़्यादा है, दूसरा चाहता कि दो घन्टे पहले निकले कि दिन के काम ज़्यादा हैं। इसलिये रब्बुल-इज़्ज़त ने आसमान और सितारों को इनसान का ताबेदार तो बनाया मगर इस मायने में ताबेदार बनाया कि वो हर वक़्त हर हाल में अल्लाह की हिक्मत के मातहत इनसान के काम में लगे हुए हैं, यह नहीं कि उनका निकलना और छुपना और रफ़्तार इनसान की मर्ज़ी के ताबे हो जाये।

इसी तरह यह इरशाद कि हमने रात और दिन को तुम्हारे लिये ताबेदार कर दिया। इसका मतलब भी यही है कि इन दोनों को इनसान की ख़िदमत और राहत के काम में लगा दिया।

وَاٰتٰىكُمْ مِّنْ كُلِّ مَا سَاَلْتُمُوْهُ.

"यानी अल्लाह तआ़ला ने दिया तुमको हर उस चीज़ में से जो तुमने माँगी।" अगरचे अल्लाह तआ़ला की अ़ता और बख़्शिश किसी के माँगने पर निर्भर नहीं, हमने तो अपना वजूद भी नहीं माँगा था, उसी ने अपने फ़ज़्ल से बिना माँगे अ़ता फ़रमायाः

मा नबूदेम व तक़ाज़ा-ए-मा न बूद
लुत्फ़े तू नागुफ़्ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तक़ाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तक़ाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे क़ुबूल फ़रमाता है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

इसी तरह आसमान, ज़मीन, चाँद, सूरज वग़ैरह पैदा करने की दुआ़ किसने माँगी थी? यह सब कुछ मालिक ने बिना माँगे ही दिया है। इसी लिये क़ाज़ी बैज़ावी रह. ने इस लफ़्ज़ के यह मायने बयान किये हैं कि अगर अलफ़ाज़ के ज़ाहिरी मायने ही मुराद हों तो इनमें भी कुछ शुब्हे वाली बात नहीं क्योंकि उमूमन इनसान जो कुछ माँगता और तलब करता है अक्सर तो उसको दे ही दिया जाता है, और जहाँ कहीं उसका सवाल अपनी ज़ाहिरी सूरत में पूरा नहीं किया जाता उसमें उस शख़्स के लिये या पूरे आ़लम के लिये कोई मस्लेहत होती है जिसका उसको इल्म नहीं होता मगर अ़लीम व ख़बीर (यानी अल्लाह तआ़ला) जानते हैं कि अगर इसका यह सवाल पूरा कर दिया गया तो ख़ुद इसके लिये या इसके ख़ानदान के लिये या पूरे आ़लम के लिये वबाले जान बन जायेगा। ऐसी सूरत में सवाल का पूरा न करना ही बड़ी नेमत होती है, मगर इनसान अपनी कम-इल्मी (अधूरे ज्ञान) की वजह से इसको नहीं जानता इसलिये ग़मगीन होता है।

وَاِنْ تَعُدُّوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوْهَا.

"यानी अल्लाह तआ़ला की नेमतें इनसान पर इस क़द्र हैं कि सब इनसान मिलकर उनको

शुमार करना (गिनना) चाहें तो शुमार में भी नहीं आ सकतीं। इनसान का अपना वजूद ख़ुद एक छोटी-सी दुनिया है। इसकी आँख, नाक, कान और हाथ-पाँव और बदन के हर जोड़ बल्कि हर रग व रेशे में अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त की बेशुमार नेमतें छुपी हैं, जिनसे यह चलती फिरती सैंकड़ों नाज़ुक मशीनों की अ़जीब व ग़रीब फ़ैक्ट्री हर वक़्त अपने काम में मशग़ूल है। फिर आसमान व ज़मीन और दोनों की मख़्लूक़ात, समन्दरों पहाड़ों की मख़्लूक़ात कि आजकी नई तहक़ीक़ात (तलाश व खोज और शोध) और इसमें उम्रें खपाने वाले हज़ारों विशेषज्ञ भी उनको नहीं घेर सके। फिर नेमतें सिर्फ़ वही नहीं जो सकारात्मक सूरत में आ़म तौर पर नेमत समझी जाती हैं, बल्कि हर बीमारी, हर तकलीफ़, हर मुसीबत हर रंज व ग़म से महफ़ूज़ रहना अलग-अलग मुस्तक़िल नेमत है। एक इनसान को कितनी क़िस्म की बीमारियाँ और कितने प्रकार की बदनी और मानसिक तकलीफ़ें दुनिया में पेश आ सकती हैं, उन्हीं की गिनती एक इनसान से नहीं हो सकती, इससे अन्दाज़ा हो सकता है कि अल्लाह तआ़ला की दी हुई पूरी चीज़ों और नेमतों का शुमार (गिनती) किस तरह हो सकता है।

इन्साफ़ का तक़ाज़ा यह था कि बेशुमार नेमतों के बदले में बेशुमार इबादत और बेशुमार शुक्र लाज़िम होता, मगर अल्लाह तआ़ला ने कमज़ोर व ज़ईफ़ बुनियाद और वजूद वाले इनसान की रियायत फ़रमाई। जब वह हक़ीक़त पर नज़र करके यह स्वीकार कर ले कि वाजिब शुक्र से भारमुक्त होना उसकी क़ुदरत में नहीं तो इसी स्वीकार करने को शुक्र अदा करने के क़ायम-मक़ाम (बराबर) क़रार दिया है, जैसा कि हक़ तआ़ला ने हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम के ऐसे ही इक़रार पर इरशाद फ़रमाया किः

اَلْاٰنَ قَدْ شَكَرْتَ يَادَاوٗدُ.

यानी ऐ दाऊद! यह इक़रार और मान लेना ही शुक्र अदा करने के लिये काफ़ी है।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُوْمٌ كَفَّارٌ٥

"यानी इनसान बहुत बेइन्साफ़ और बड़ा नाशुक्रा है।" यानी इन्साफ़ का तक़ाज़ा तो यह था कि कोई तकलीफ़ व मुसीबत पेश आये तो सब्र व सुकून से काम ले, ज़बान और दिल को शिकायत से पाक रखे, और समझे कि यह जो कुछ पेश आया है एक हाकिम व हकीम की तरफ़ से आया है, वह भी हिक्मत के तक़ाज़े के तहत होने की बिना पर एक नेमत ही है, और जब कोई राहत व नेमत मिले तो दिल और ज़बान हर अ़मल से उसका शुक्रगुज़ार हो, मगर आ़म इनसानों की आ़दत इससे अलग और भिन्न है कि ज़रा-सी मुसीबत व तकलीफ़ पेश आ जाये तो बेसब्री में मुब्तला हो जायें, और कहते फिरें, और ज़रा-सी नेमत व दौलत मिल जाये तो उसमें मस्त होकर ख़ुदा तआ़ला को भुला दें। इसी लिये सच्चे और मुख़्लिस मोमिनों की सिफ़त पिछली आयत (यानी इसी सूरत की आयत नम्बर 5) में 'सब्बार' और 'शकूर' (बहुत ज़्यादा सब्र करने वाला और बहुत ज़्यादा शुक्र करने वाला) बतलाई गई है।

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهِيْمُ رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا الْبَلَدَ اٰمِنًا وَّاجْنُبْنِيْ وَبَنِيَّ اَنْ نَّعْبُدَ الْاَصْنَامَ ۝ رَبِّ
اِنَّهُنَّ اَضْلَلْنَ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ ۚ فَمَنْ تَبِعَنِيْ فَاِنَّهٗ مِنِّيْ ۚ وَمَنْ عَصَانِيْ فَاِنَّكَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝
رَبَّنَآ اِنِّيْٓ اَسْكَنْتُ مِنْ ذُرِّيَّتِيْ بِوَادٍ غَيْرِ ذِيْ زَرْعٍ عِنْدَ بَيْتِكَ الْمُحَرَّمِ ۙ رَبَّنَا لِيُقِيْمُوا الصَّلٰوةَ
فَاجْعَلْ اَفْـِٕدَةً مِّنَ النَّاسِ تَهْوِيْٓ اِلَيْهِمْ وَارْزُقْهُمْ مِّنَ الثَّمَرٰتِ لَعَلَّهُمْ يَشْكُرُوْنَ ۝ رَبَّنَآ اِنَّكَ تَعْلَمُ مَا
نُخْفِيْ وَمَا نُعْلِنُ ۗ وَمَا يَخْفٰى عَلَى اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَآءِ ۝ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ
وَهَبَ لِيْ عَلَى الْكِبَرِ اِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ ۭ اِنَّ رَبِّيْ لَسَمِيْعُ الدُّعَآءِ ۝ رَبِّ اجْعَلْنِيْ مُقِيْمَ الصَّلٰوةِ وَمِنْ
ذُرِّيَّتِيْ ڰ رَبَّنَا وَتَقَبَّلْ دُعَآءِ ۝ رَبَّنَا اغْفِرْ لِيْ وَلِوَالِدَيَّ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ يَوْمَ يَقُوْمُ الْحِسَابُ ۝

व इज़् क़ा-ल इब्राहीमु रब्बिज्अल् हाज़ल्-ब-ल-द आमिनंव्-वज्नुब्नी व बनिय्-य अन् नअ्बुदल्-अस्नाम (35) रब्बि इन्नहुन्-न अज़्लल्-न कसीरम्-मिनन्नासि फ़-मन् तबि-अ़नी फ़-इन्नहू मिन्नी व मन् अ़सानी फ़इन्न-क ग़फ़ूरुर्-रहीम (36) रब्बना इन्नी अस्कन्तु मिन् ज़ुर्रिय्यती बिवादिन् ग़ैरि ज़ी ज़र्अिन् अिन्-द बैतिकल्-मुहर्रमि रब्बना लियुक़ीमुस्-सला-त फ़ज्अ़ल् अफ़्इ-दतम् मिनन्नासि तह्वी इलैहिम् वर्ज़ुक़्हुम् मिनस्स-मराति लअ़ल्लहुम् यश्कुरून (37) रब्बना इन्न-क तअ्लमु मा नुख़्फ़ी व मा नुअ्लिनु, व मा यख़्फ़ा अ़लल्लाहि मिन् शैइन् फ़िल्अर्ज़ि व ला फ़िस्समा-इ (38) अल्हम्दु

और जिस वक़्त कहा इब्राहीम ने ऐ रब! कर दे इस शहर को अमन वाला और दूर रख मुझको और मेरी औलाद को इस बात से कि हम पूजें मूरतों को। (35) ऐ रब! उन्होंने गुमराह किया बहुत लोगों को सो जिसने पैरवी की मेरी सो वह तो मेरा है और जिसने मेरा कहना न माना सो तू बख़्शने वाला मेहरबान है। (36) ऐ रब! मैंने बसाया है अपनी एक औलाद को मैदान में जहाँ खेती नहीं, तेरे इज़्ज़त वाले (सम्मानित) घर के पास, ऐ हमारे रब! ताकि क़ायम रखें नमाज़ को, सो रख बाज़े लोगों के दिल कि माईल हों इनकी तरफ़ और रोज़ी दे इनको मेवों से, शायद वे शुक्र करें। (37) ऐ हमारे रब! तू तो जानता है जो कुछ हम करते हैं छुपाकर और जो कुछ करते हैं दिखाकर, और छुपी नहीं अल्लाह पर कोई चीज़ ज़मीन में और न आसमान में। (38) शुक्र

लिल्लाहिल्लज़ी व-ह-ब ली अ़लल्-कि-बरि इस्माअ़ी-ल व इस्हा-क़, इन्-न रब्बी ल-समीअ़ुद्-दुआ़-इ (39) रब्बिज्अ़ल्नी मुक़ीमस्सलाति व मिन् ज़ुर्रिय्यती रब्बना व तक़ब्बल् दुआ़-इ (40) रब्बनग़्फ़िर् ली व लिवालिदय्-य व लिल्-मुअ्मिनी-न यौ-म यक़ूमुल्-हिसाब (41) ✿	है अल्लाह का जिसने बख़्शा मुझको इतनी बड़ी उम्र में इस्माईल और इस्हाक़, बेशक मेरा रब सुनता है दुआ़ को। (39) ऐ मेरे रब! कर मुझको कि क़ायम रखूँ नमाज़ और मेरी औलाद में से भी, ऐ मेरे रब! और क़ुबूल कर मेरी दुआ़। (40) ऐ हमारे रब! बख़्श मुझको और मेरे माँ-बाप को और सब ईमान वालों को जिस दिन क़ायम हो हिसाब। (41) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त भी याद करने के क़ाबिल है) जबकि इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) ने (हज़रत इस्माईल और हज़रत हाजरा को अल्लाह के हुक्म से मक्का के मैदान में लाकर रखने के वक़्त दुआ़ के तौर पर) कहा कि ऐ मेरे रब! इस शहर (यानी मक्का) को अमन वाला बना दीजिये (कि इसके रहने वाले अमन के हक़दार रहें, यानी हरम बना दीजिये) और मुझको और मेरे ख़ास फ़रज़न्दों को बुतों की इबादत से (जो कि इस वक़्त जाहिल लोगों में प्रचलित है) बचाये रखिये (जैसा कि अब तक बचाये रखा)। ऐ मेरे परवर्दिगार! (मैं बुतों की इबादत से बचने की दुआ़ इसलिये करता हूँ कि) उन बुतों ने बहुत-से आदमियों को गुमराह कर दिया (यानी उनकी गुमराही का सबब हो गये, इसलिये डरकर आपकी पनाह चाहता हूँ और मैं जिस तरह औलाद के बचने की दुआ़ करता हूँ इसी तरह उनको भी कहता सुनता रहूँगा), फिर (मेरे कहने सुनने के बाद) जो शख़्स मेरी राह पर चलेगा वह तो मेरा है (और उसके लिये मग़फ़िरत का वायदा है ही) और जो शख़्स (इस बारे में) मेरा कहना न माने (सो उसको आप हिदायत फ़रमाईये क्योंकि) आप तो बहुत ज़्यादा मग़फ़िरत करने वाले (और) बहुत ज़्यादा रहमत फ़रमाने वाले हैं (उनकी मग़फ़िरत और रहमत का सामान भी कर सकते हैं कि उनको हिदायत दें। इस दुआ़ से मक़सद मोमिनों के लिये शफ़ाअ़त और ग़ैर-मोमिनों के लिये हिदायत को तलब करना है)।

ऐ हमारे रब! मैं अपनी औलाद को (यानी इस्माईल अ़लैहिस्सलाम को और उनके वास्ते से उनकी नस्ल को) आपके अ़ज़मत वाले "यानी सम्मानित" घर (यानी ख़ाना काबा) के क़रीब (जो कि पहले से यहाँ बना हुआ था और हमेशा से लोग उसका अदब करते थे) एक (छोटे से) मैदान में जो (पथरीला होने की वजह से) क़ाश्तकारी के क़ाबिल (भी) नहीं, आबाद करता हूँ। ऐ हमारे रब (बैतुल-हराम के पास इसलिये आबाद करता हूँ) ताकि वे लोग नमाज़ का (ख़ास) एहतिमाम "यानी पाबन्दी" रखें (और चूँकि यह इस वक़्त छोटा सा मैदान है) तो आप कुछ लोगों के दिल

इनकी तरफ़ माईल कर दीजिये (कि यहाँ आकर रहें-सहें, ताकि रौनक़ वाली आबादी हो जाये), और (चूँकि यहाँ काश्तकारी वग़ैरह नहीं है इसलिये) इनको (महज़ अपनी क़ुदरत से) फल खाने को दीजिये ताकि ये लोग (इन नेमतों का) शुक्र करें।

ऐ हमारे रब! (ये दुआयें महज़ अपनी बन्दगी और आवश्यकता के इज़हार के लिये हैं आपको अपनी ज़रूरत की इत्तिला के लिये नहीं, क्योंकि) आपको तो सब कुछ मालूम है जो हम अपने दिल में रखें और जो ज़ाहिर कर दें। और (हमारे ज़ाहिर व बातिन ही का क्या ज़िक्र है) अल्लाह तआला से (तो) कोई चीज़ भी छुपी नहीं, न ज़मीन में और न आसमान में (कुछ दुआयें आगे आयेंगी और बीच में कुछ पहले से हासिल नेमतों पर तारीफ़ व शुक्र किया ताकि शुक्र की बरकत से ये दुआयें क़ुबूल होने के ज़्यादा निकट हो जायें। चुनाँचे फ़रमाया) तमाम तारीफ़ (और प्रशंसा) ख़ुदा के लिये (लायक़) है जिसने मुझको बुढ़ापे में इस्माईल और इस्हाक़ (दो बेटे) अ़ता फ़रमाये। हक़ीक़त में मेरा रब दुआ का बड़ा सुनने वाला (यानी क़ुबूल करने वाला) है (कि औलाद अ़ता करने के बारे में मेरी यह दुआ 'रब्बि हब् ली मिनस्सालिहीन' क़ुबूल कर ली। फिर इस नेमत का शुक्र अदा करके आगे बाक़ी की दुआयें पेश करते हैं कि) ऐ मेरे रब! (जो मेरी नीयत है अपनी औलाद को सम्मानित घर "काबा शरीफ़" के पास बसाने से कि वे नमाज़ों की पाबन्दी रखें इसको पूरा कर दीजिये, और जैसे उनके लिये नमाज़ की पाबन्दी मेरा मक़सद व चाहत है इसी तरह अपने लिये भी मैं यही चाहता हूँ, इसलिये अपने और उनके दोनों के लिये दुआ करता हूँ। और चूँकि मुझको वही से मालूम हो गया है कि उनमें बाज़े ग़ैर-मोमिन भी हो जायेंगे इसलिये दुआ सब के लिये नहीं कर सकता हूँ। पस इन मज़ामीन पर नज़र करके यह दुआ करता हूँ कि) मुझको भी नमाज़ का (ख़ास) एहतिमाम करने वाला रखिये और मेरी औलाद में भी बाज़ों को (नमाज़ का एहतिमाम करने वाला कीजिये)। ऐ हमारे रब! और मेरी (यह) दुआ क़ुबूल कीजिये। (और) ऐ हमारे रब! मेरी मग़फ़िरत कर दीजिये और मेरे माँ-बाप की भी और तमाम मोमिनों की भी हिसाब के क़ायम होने के दिन (यानी क़ियामत के दिन इन सब ज़िक्र हुए लोगों की मग़फ़िरत कर दीजिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में तौहीद के अ़क़ीदे की मक़बूलियत व अहमियत का और शिर्क की जहालत और बुराई का बयान था। तौहीद के मामले में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की जमाअ़त में सबसे ज़्यादा कामयाब जिहाद हज़रत ख़लीलुल्लाह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का जिहाद था, इसी लिये दीन-ए-इब्राहीमी को ख़ास तौर पर दीन-ए-हनीफ़ का नाम दिया जाता है।

इसी मुनासबत से यहाँ हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से का ज़िक्र उक्त आयतों में किया गया है। एक वजह यह भी है कि पिछली एक आयत यानी आयत नम्बर 28 में मक्का के क़ुरैश के उन लोगों की बुराई बयान की गई थी जिन्होंने बाप-दादा की पैरवी की बिना पर ईमान को कुफ़्र से और तौहीद को शिर्क से बदल डाला था। इन आयतों में उनको बतलाया गया कि

तुम्हारे पूर्वज इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का अ़क़ीदा और अ़मल क्या था, ताकि बाप-दादा की पैरवी के आ़दी इसी पर नज़र करके अपने कुफ़ से बाज़ आ जायें। (तफ़सीर बहर-ए-मुहीत)

और यह ज़ाहिर है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के क़िस्सों और हालात के बयान करने से क़ुरआने करीम का मक़सद सिर्फ़ उनका इतिहास बयान करना नहीं होता, बल्कि उनमें इनसानी ज़िन्दगी के हर क्षेत्र के मुताल्लिक़ हिदायती उसूल होते हैं, उन्हीं को जारी रखने के लिये ये वाक़िआ़त क़ुरआन में बार-बार दोहराये जाते हैं।

इस जगह पहली आयत में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की दो दुआ़यें बयान हुई हैं। पहलीः

رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا الْبَلَدَ اٰمِنًا

"यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! इस (मक्का) शहर को अमन की जगह बना दीजिये।"

सूरः ब-क़रह् में भी यही दुआ़ ज़िक्र हुई है, मगर उसमें लफ़्ज़ बलद् बग़ैर अलिफ़-लाम के 'ब-लदन्' फ़रमाया है जिसके मायने ग़ैर-निर्धारित शहर के हैं। वजह यह है कि वह दुआ़ उस वक़्त की थी जबकि मक्का शहर की बस्ती आबाद न थी, इसलिये आ़म अलफ़ाज़ में यह दुआ़ की कि इस जगह को एक अमन वाला शहर बना दीजिये।

और दूसरी दुआ़ उस वक़्त की है जबकि मक्का की बस्ती बस चुकी थी तो मक्का शहर को मुतैयन करके दुआ़ फ़रमाई कि इसको अमन की जगह बना दीजिये। दूसरी दुआ़ यह फ़रमाई कि मुझको और मेरी औलाद को बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) से बचाईये।

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम अगरचे मासूम (गुनाहों से सुरक्षित) होते हैं, उनसे शिर्क व बुत-परस्ती बल्कि कोई गुनाह नहीं हो सकता, मगर यहाँ हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने इस दुआ़ में अपने आपको भी शामिल फ़रमाया है। इसकी वजह या तो यह है कि तबई ख़ौफ़ के असर से नबी व रसूल भी हर वक़्त अपने को ख़तरे में महसूस करते रहते हैं, या यह कि असल मक़सद अपनी औलाद को शिर्क व बुत-परस्ती से बचाने की दुआ़ करना था, औलाद को इसकी अहमियत समझाने के लिये अपने आपको भी दुआ़ में शामिल फ़रमा लिया।

अल्लाह जल्ल शानुहू ने अपने ख़लील (दोस्त) की दुआ़ क़ुबूल फ़रमाई, उनकी औलाद शिर्क व बुत-परस्ती से महफ़ूज़ रही। इस पर यह सवाल हो सकता है कि मक्का वाले तो उमूमन हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की औलाद हैं, उनमें तो बुत-परस्ती मौजूद थी। तफ़सीर बहर-ए-मुहीत में इसका जवाब हज़रत सुफ़ियान बिन उयैना के हवाले से यह दिया है कि इस्माईल अ़लैहिस्सलाम की औलाद में किसी ने दर हक़ीक़त बुत-परस्ती नहीं की, बल्कि जिस वक़्त मक्का पर जुरहुम क़ौम के लोगों ने क़ब्ज़ा करके इस्माईल अ़लैहिस्सलाम की औलाद को हरम से निकाल दिया तो ये लोग हरम से बेइन्तिहा मुहब्बत और उसकी अ़ज़मत की बिना पर यहाँ के कुछ पत्थर अपने साथ उठा ले गये थे, उनको सम्मानित हरम और बैतुल्लाह की यादगार के तौर पर सामने रखकर इबादत और उसके गिर्द तवाफ़ किया करते थे, जिसमें किसी ग़ैरुल्लाह की तरफ़ कोई रुख़ न था, बल्कि जिस तरह बैतुल्लाह की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ना या

बैतुल्लाह के गिर्द तवाफ़ करना अल्लाह तआ़ला ही की इबादत है, इसी तरह वे उन पत्थरों की तरफ़ रुख़ और उनके गिर्द तवाफ़ को अल्लाह तआ़ला की इबादत के ख़िलाफ़ न समझते थे, इसके बाद यही तरीक़ा-ए-कार बुत-परस्ती का सबब बन गया।

दूसरी आयत में अपनी इस दुआ़ की यह वजह बयान फ़रमाई कि बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) से हम इसलिये पनाह माँगते हैं कि इन बुतों ने बहुत से लोगों को गुमराही में डाल दिया है, यह इसलिये फ़रमाया कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम अपने वालिद और क़ौम का तजुर्बा कर चुके थे कि बुत-परस्ती की रस्म ने उनको हर ख़ैर व बेहतरी से मेहरूम कर दिया।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

فَمَنْ تَبِعَنِىْ فَاِنَّهٗ مِنِّىْ وَمَنْ عَصَانِىْ فَاِنَّكَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ۝

"यानी उनमें से जो शख़्स मेरी पैरवी करे यानी ईमान और नेक अ़मल का पाबन्द हो जाये वह तो मेरा ही है। मतलब यह है कि उस पर फ़ज़्ल व करम की उम्मीद तो ज़ाहिर है, और जो शख़्स मेरी नाफ़रमानी करे तो आप बहुत मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं।"

इसमें नाफ़रमानी से अगर सिर्फ़ अ़मली नाफ़रमानी यानी बुरे आमाल में मुब्तला होना मुराद ली जाये तो मायने ज़ाहिर हैं कि आप के फ़ज़्ल से उनकी भी मग़फ़िरत की उम्मीद है, और अगर नाफ़रमानी से मुराद कुफ़्र व इनकार लिया जाये तो यह ज़ाहिर है कि काफ़िर व मुश्रिक की मग़फ़िरत न होने और उनकी शफ़ाअ़त न करने का हुक्म हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को पहले हो चुका था, फिर उनकी मग़फ़िरत की उम्मीद का इज़हार करना दुरुस्त नहीं हो सकता। इसलिये तफ़सीर बहर-ए-मुहीत में फ़रमाया कि इस जगह हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने उनकी सिफ़ारिश या दुआ़ के अलफ़ाज़ नहीं इख़्तियार किये, यह नहीं फ़रमाया कि आप उनकी मग़फ़िरत कर दें, अलबत्ता पैग़म्बराना शफ़क़त जिसके दामन में काफ़िर भी रहते हैं और हर पैग़म्बर की दिली इच्छा यही होती है कि कोई काफ़िर भी अ़ज़ाब में मुब्तला न हो, अपनी इसी तबई इच्छा का इज़हार इस उनवान से कर दिया कि "आप तो बड़े ग़फ़ूर व रहीम हैं।" यूँ नहीं फ़रमाया कि उनके साथ मग़फ़िरत व रहमत का मामला फ़रमायें, जैसे हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी उम्मत के काफ़िरों के बारे में फ़रमायाः

وَاِنْ تَغْفِرْ لَهُمْ فَاِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ۝

"यानी अगर आप उनकी मग़फ़िरत फ़रमायें तो आप ग़ालिब और हिक्मत वाले हैं, सब कुछ कर सकते हैं, कोई रोकने वाला नहीं।"

इन दोनों बुज़ुर्गों ने काफ़िरों के मामले में सिफ़ारिश के लिये क़दम तो इसलिये नहीं बढ़ाया कि वह हक़ के अदब के ख़िलाफ़ था, मगर यह भी नहीं फ़रमाया कि उन काफ़िरों पर आप अ़ज़ाब नाज़िल कर दें, बल्कि अदब के साथ एक ख़ास उनवान से उनके भी बख़्शे जाने की तबई इच्छा का इज़हार कर दिया।

अहकाम व हिदायतें

दुआ तो हर इनसान माँगता है मगर माँगने का सलीक़ा हर एक को नहीं आता। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की दुआयें सबक़ लेने वाली होती हैं, उनसे अन्दाज़ा होता है कि क्या चीज़ माँगने की है। इस दुआ-ए-इब्राहीमी के दो भाग हैं- एक मक्का शहर को ख़ौफ़ व ख़तरे से आज़ाद अमन की जगह बना देना, दूसरे अपनी औलाद को बुत-परस्ती से हमेशा के लिये निजात दिलाना।

ग़ौर से काम लिया जाये तो इनसान की बेहतरी व कामयाबी के यही दो बुनियादी उसूल हैं, क्योंकि इनसानों को अगर अपने रहने-सहने की जगह में ख़ौफ़ व ख़तरा और दुश्मनों के हमलों से अमन व इत्मीनान न हो तो न दुनियावी और माद्दी एतिबार से उनकी ज़िन्दगी ख़ुशगवार हो सकती है और न दीनी और रूहानी एतिबार से। दुनिया के सारे कामों और राहतों का मदार तो अमन व इत्मीनान पर होना ज़रूरी ही है। जो शख़्स दुश्मनों के घेरे, हमलों और विभिन्न प्रकार के ख़तरों में घिरा हुआ हो उसके सामने दुनिया की बड़ी से बड़ी नेमत, खाने पीने, सोने जागने की बेहतरीन आसानियाँ, आला क़िस्म के महल और बंगले, माल व दौलत की अधिकता सब बेमज़ा हो जाती हैं।

दीनी एतिबार से भी हर नेकी व इबादत और अल्लाह के अहकाम की तामील इनसान उसी वक़्त कर सकता है जब उसको कुछ सुकून व इत्मीनान नसीब हो।

इसलिये हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम की पहली दुआ में इनसानी कामयाबी की तमाम ज़रूरतें आर्थिक व माली और दीनी व आख़िरत की सब दाख़िल हो गईं। इस एक जुमले से हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी औलाद के लिये दुनिया की तमाम अहम चीज़ें माँग ली हैं।

इस दुआ से यह भी मालूम हुआ कि औलाद की हमदर्दी और उनकी आर्थिक व माली राहत का इन्तिज़ाम भी अपनी ताक़त व हिम्मत के मुताबिक़ बाप की ज़िम्मेदारियों में से है, इसकी कोशिश बुज़ुर्गी और दुनिया से ताल्लुक़ तोड़ने के विरुद्ध नहीं।

दूसरी दुआ भी बड़ी कामिल व जामे है, क्योंकि वह गुनाह जिसकी मग़फ़िरत (माफ़ी होने) की संभावना नहीं वह शिर्क व बुत-परस्ती है, उससे महफ़ूज़ रहने की दुआ फ़रमा दी। इसके बाद अगर कोई गुनाह हो भी जाये तो उसका कफ़्फ़ारा दूसरे आमाल से भी हो सकता है, और किसी की शफ़ाअ़त से भी माफ़ किये जा सकते हैं, और बुतों की पूजा व इबादत का लफ़्ज़ सूफ़िया किराम (बुज़ुर्गों) के अक़वाल के मुताबिक़ अपने विस्तृत मफ़्हूम में लिया जाये कि हर वह चीज़ जो इनसान को अल्लाह से ग़ाफ़िल करे वह उसका बुत है, और उसकी मुहब्बत से मग़लूब होकर ख़ुदा तआ़ला की नाफ़रमानी की तरफ़ क़दम बढ़ा लेना एक तरह से उसकी इबादत है, तो इस दुआ यानी बुतों की इबादत व पूजा से महफ़ूज़ रहने में तमाम गुनाहों से हिफ़ाज़त का मज़मून आ जाता है। कुछ बुज़ुर्गों ने इसी मायने में अपने नफ़्स को ख़िताब करके ग़फ़लत व नाफ़रमानी

पर मलामत की है।

(उन्होंने अश्आर में अपने इस मफ़्हूम को अदा किया है। जिनका हासिल यही है जो ऊपर के मज़मून में बयान हुआ कि जो चीज़ इनसान को अल्लाह से ग़ाफ़िल कर दे और उसकी वजह से वह गुनाह में मुब्तला हो जाये, या नेकी और अल्लाह की फ़रमाँबरदारी में कोताही करे तो वह चीज़ एक तरह से उसका बुत है जिसका वह कहना मान रहा है, और यह कहना मानना एक तरह से उसकी इबादत करना है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

तीसरी आयत में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की एक और हकीमाना दुआ़ इस तरह बयान हुई है किः

رَبَّنَآ اِنِّیْٓ اَسْکَنْتُ مِنْ ذُرِّیَّتِیْ بِوَادٍ غَیْرِ ذِیْ زَرْعٍ .... الاٰیۃ

ऐ मेरे परवर्दिगार! मैंने अपनी कुछ नस्ल यानी अहल व अ़याल को पहाड़ के दामन में एक ऐसे मक़ाम में ठहरा दिया है जिसमें कोई खेती वग़ैरह नहीं हो सकती (और बज़ाहिर वहाँ ज़िन्दगी का कोई सामान नहीं) यह पहाड़ी मक़ाम आपके सम्मानित घर के पास है, ताकि ये लोग नमाज़ क़ायम करें, इसलिये आप कुछ लोगों के दिलों को उनकी तरफ़ माईल कर दें, कि उनके दिल लगने और आबाद होने का सामान हो जाये, और उनको फल अ़ता फ़रमाईये ताकि ये लोग शुक्रगुज़ार हों।

हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम की इस दुआ़ का वाक़िआ़ यह है कि बैतुल्लाह शरीफ़ की तामीर जो तूफ़ाने नूह में बेनिशान हो गई थी, जब अल्लाह तआ़ला ने उसकी दोबारा तामीर का इरादा फ़रमाया तो अपने ख़लील हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को इसके लिये चुनकर उनको मुल्क शाम से हिजरत करके हज़रत हाजरा अ़लैहस्सलाम और बेटे इस्माईल अ़लैहिस्सलाम के साथ इस बिना पानी वाले ग़ैर-आबाद मक़ाम को ठिकाना बनाने के लिये मामूर फ़रमाया।

सही बुख़ारी में है कि इस्माईल अ़लैहिस्सलाम उस वक़्त दूध पीते बच्चे थे, हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ उनको और उनकी वालिदा हाजरा को मौजूदा बैतुल्लाह और ज़मज़म के कुएँ के क़रीब ठहरा दिया। उस वक़्त यह जगह पहाड़ों से घिरी हुई एक चटियल मैदान थी, दूर-दूर तक न पानी न आबादी। इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने उनके लिये एक तोशेदान में कुछ खाना और एक मश्कीज़े में पानी रख दिया था।

इसके बाद हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को मुल्क शाम की तरफ़ वापस होने का हुक्म मिला। जिस जगह हुक्म मिला था वहीं से हुक्म के पालन के लिये रवाना हो गये। बीवी और दूध पीते बच्चे को उस सुनसान जगह और जंगल में छोड़ने का जो तबई और फ़ितरी असर था उसका इज़हार तो उस दुआ़ से होगा जो बाद में की गई, मगर अल्लाह के हुक्म की तामील में इतनी देर भी गवारा नहीं फ़रमाई कि हज़रत हाजरा को ख़बर दे दें और कुछ तसल्ली के अलफ़ाज़ कह दें।

नतीजा यह हुआ कि जब हज़रत हाजरा ने उनको जाते हुए देखा तो बार-बार आवाज़ें दीं

कि इस जंगल में आप हमें किस पर छोड़कर जा रहे हैं? जहाँ न कोई इनसान है न ज़िन्दगी का सामान, मगर ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम ने मुड़कर नहीं देखा। तब हज़रत हाजरा को ख़्याल आया कि अल्लाह का ख़लील ऐसी बेवफ़ाई नहीं कर सकता, शायद अल्लाह तआ़ला ही का हुक्म मिला है, तो आवाज़ देकर पूछा कि क्या आपको अल्लाह तआ़ला ने यहाँ से चले जाने का हुक्म दिया है? तब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने मुड़कर जवाब दिया कि हाँ। हज़रत हाजरा ने यह सुनकर फ़रमायाः

إِذًا لَا يُضَيِّعُنَا

"यानी अब कोई परवाह नहीं, जिस मालिक ने आपको यहाँ से चले जाने का हुक्म दिया है वह हमें भी ज़ाया न करेगा।"

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम आगे बढ़ते रहे, यहाँ तक कि एक पहाड़ी के पीछे पहुँच गये जहाँ हाजरा व इस्माईल अलैहिमस्सलाम आँखों से ओझल हो गये तो उस वक़्त बैतुल्लाह की तरफ़ मुतवज्जह होकर यह दुआ़ माँगी जो इस आयत में ज़िक्र हुई है। हज़रत इब्राहीम की उक्त दुआ़ के तहत में बहुत-सी हिदायतें और मसाईल हैं, उनका बयान यह हैः

दुआ़-ए-इब्राहीमी के भेद और हिक्मत

1. हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने एक तरफ़ तो अपने बुलन्द मक़ाम का हक़ अदा किया कि जिस वक़्त और जिस जगह उनको यह हुक्म मिला कि आप मुल्के शाम वापस चले जायें, उस ग़ैर-आबाद मक़ाम, सुनसान जंगल और चटियल मैदान में बीवी और दूध पीते बच्चे को छोड़कर चले जाने और अल्लाह के हुक्म के पालन में ज़रा भी हिचकिचाहट महसूस नहीं फ़रमाई, उसकी तामील में इतनी देर लगाना भी गवारा नहीं फ़रमाया कि बीवी मोहतरमा के पास जाकर तसल्ली कर दें, और कह दें कि मुझे यह हुक्म मिला है, आप घबरायें नहीं, बल्कि जिस वक़्त जिस जगह हुक्म मिला फ़ौरन हुक्मे रब्बानी की तामील के लिये चल खड़े हुए।

दूसरी तरफ़ बीवी-बच्चों के हुक़ूक़ और उनकी मुहब्बत का यह हक़ अदा किया कि पहाड़ी के पीछे उनसे ओझल होते ही हक़ तआ़ला की बारगाह में उनकी हिफ़ाज़त और अमन व इत्मीनान के साथ रहने की दुआ़ फ़रमाई। उनकी राहत का सामान कर दिया क्योंकि वह अपनी जगह मुत्मईन थे कि अल्लाह के हुक्म की तामील के साथ जो दुआ़ की जायेगी वह उसकी बारगाह से हरगिज़ रद्द न होगी, और ऐसा ही हुआ कि यह बेसहारा व बेबस औ़रत और बच्चा न सिर्फ़ ख़ुद आबाद हुए बल्कि इनके तुफ़ैल में एक शहर आबाद हो गया, और न सिर्फ़ यह कि इनको ज़िन्दगी की ज़रूरतें इत्मीनान के साथ नसीब हुईं बल्कि इनके तुफ़ैल में आज तक मक्का वालों पर हर तरह की नेमतों के दरवाज़े खुले हुए हैं।

यह है पैग़म्बराना साबित-क़दमी और बेहतरीन इन्तिज़ाम कि एक पहलू की रियायत के वक़्त दूसरा पहलू कभी नज़र-अन्दाज़ नहीं होता। वे आ़म सूफ़िया-ए-किराम की तरह अपनी हालत से मग़लूब नहीं होते, और यही वह तालीम है जिसके ज़रिये एक इनसान कामिल इनसान

बनता है।

2. 'ग़ैरि ज़ी ज़रअिन्' (बिना खेती वाले मक़ाम)। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को जब हक़ तआला की तरफ़ से यह हुक्म मिला कि दूध पीते बच्चे और उसकी वालिदा को इस सूखे मैदान में छोड़कर मुल्के शाम चले जायें तो इस हुक्म से इतना तो यक़ीन हो चुका था कि अल्लाह तआला इनको ज़ाया न फ़रमायेंगे, बल्कि इनके लिये पानी ज़रूर मुहैया किया जायेगा, इसलिये 'बिवादिन् ग़ैरि ज़ी माइन्' (बिना पानी वाली वादी में) नहीं कहा, बल्कि 'ग़ैरि ज़ी ज़रअिन्' फ़रमाकर दरख़्वास्त यह की कि इनको फल और मेवे अ़ता हों, चाहे किसी दूसरी जगह ही से लाये जायें। यही वजह यह है कि मक्का मुकर्रमा में आज तक भी काश्त का कोई ख़ास इन्तिज़ाम नहीं, मगर दुनिया भर के फल और हर चीज़ के मेवे वहाँ इतने पहुँचते हैं कि दूसरे बहुत से शहरों में उनका मिलना मुश्किल है। (तफ़सीर बहर-ए-मुहीत)

3. 'अिन्-द बैतिकल्-मुहर्रमि' (तेरे सम्मानित घर के पास) से साबित हुआ कि बैतुल्लाह शरीफ़ की तामीर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से पहले हो चुकी थी, जैसा कि इमाम क़ुर्तुबी रह. ने तफ़सीर सूरः ब-क़रह में कई रिवायतों से साबित किया है कि सबसे पहले बैतुल्लाह की तामीर आदम अलैहिस्सलाम ने की है, जब उनको ज़मीन पर उतारा गया तो मोजिज़े के तौर पर सरान्दीप पहाड़ से इस जगह तक उनको पहुँचाया गया, और जिब्रीले अमीन ने बैतुल्लाह की जगह की निशानदेही भी की, उसके मुताबिक़ हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने इसकी तामीर की, वह ख़ुद और उनकी औलाद इसके गिर्द तवाफ़ करते थे, यहाँ तक कि तूफ़ाने नूह में बैतुल्लाह को उठा लिया गया और उसकी बुनियादें ज़मीन में मौजूद रहीं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को उन्हीं बुनियादों पर बैतुल्लाह की नई तामीर का हुक्म मिला। हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम ने पुरानी बुनियादों की निशानदेही की, फिर यह इब्राहीमी बुनियाद अरब के जाहिली दौर में गिर गई तो क़ुरैश ने नये सिरे से तामीर की, जिसकी तामीर में अबू तालिब के साथ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी नुबुव्वत से पहले हिस्सा लिया।

इसमें बैतुल्लाह की सिफ़त **मुहर्रम** ज़िक्र की गई है। मुहर्रम के मायने इज़्ज़त व सम्मान वाले के भी हो सकते हैं और सुरक्षित के भी। बैतुल्लाह शरीफ़ में ये दोनों सिफ़तें मौजूद हैं कि हमेशा सम्मानित व एहतिराम वाला रहा है, और हमेशा दुश्मनों से महफ़ूज़ भी रहा है।

4. 'लियुक़ीमुस्सला-त'। हज़रत ख़लील अलैहिस्सलाम ने दुआ के शुरू में अपने बच्चे और उसकी वालिदा की बेबसी और ख़स्ता हालत का ज़िक्र करने के बाद सबसे पहले जो दुआ की वह यह कि उनको नमाज़ का पाबन्द बना दे, क्योंकि नमाज़ दुनिया व आख़िरत की तमाम भलाईयों और बरकतों के लिये जामे है। इससे मालूम हुआ कि औलाद के हक़ में इससे बड़ी कोई हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही नहीं कि उनको नमाज़ का पाबन्द बना दिया जाये, और अगरचे वहाँ उस वक़्त सिर्फ़ एक औरत और बच्चे को छोड़ा था मगर दुआ में बहुवचन का कलिमा इस्तेमाल फ़रमाया, जिससे मालूम हुआ कि हज़रत ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम को यह मालूम हो चुका था कि यहाँ शहर आबाद होगा और इस बच्चे की नस्ल चलेगी, इसलिये दुआ में उन सब को शरीक

कर लिया।

5. 'अफ़्इ-दतिम् मिनन्नासि'। 'अफ़इदा' फ़ुवाद की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने दिल के हैं। मायने यह हैं कि कुछ लोगों के दिल इनकी तरफ़ माईल कर दीजिये। इमामे तफ़सीर हज़रत मुजाहिद रह. फ़रमाते हैं कि अगर इस दुआ में 'कुछ' के मायने वाला हर्फ़ न होता बल्कि यह कह दिया जाता कि लोगों के दिल इनकी तरफ़ माईल कर दीजिये तो सारी दुनिया के मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम, यहूदी व ईसाई और पूरब व पश्चिम के सब आदमी मक्का पर टूट पड़ते, जो मक्का वालों के लिये परेशानी और मुसीबतों का सबब हो जाता। इस हक़ीक़त को सामने रखते हुए हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने दुआ में ये अलफ़ाज़ फ़रमाये कि कुछ लोगों के दिलों को उनकी तरफ़ माईल कर दीजिये।

6. 'वरज़ुक़्हुम मिनस्स-मराति'। 'समरात' समरतुन की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं फल। और आ़दतन यह उन फलों को कहा जाता है जो खाये जाते हैं। इस एतिबार से दुआ का हासिल यह होगा कि इन लोगों को खाने के लिये हर तरह के फल अ़ता फ़रमाईये।

और कभी लफ़्ज़ समरा नतीजे और पैदावार के मायने में भी आता है जो खाने की चीज़ों से ज़्यादा आ़म है। हर नफ़ा पहुँचाने वाली चीज़ के नतीजे और निचोड़ को उसका समरा कहा जा सकता है। मशीनों और उद्योगिक कारख़ानों के फल उनकी बनाई हुई चीज़ें कहलायेंगे, नौकरी और मज़दूरी का समरा वह उजरत और तन्ख़्वाह कहलायेगी जो उसके नतीजे में हासिल हुई। क़ुरआने करीम की एक आयत में इस दुआ में 'स-मरातु कुल्लि शैइन्' का लफ़्ज़ भी आया है, इसमें लफ़्ज़ 'शजर' (पेड़) के बजाय लफ़्ज़ 'शैइन्' (चीज़) लाया गया है, जिससे इस तरफ़ इशारा हो सकता है कि हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने उन लोगों के लिये सिर्फ़ खाने के फलों ही की दुआ नहीं फ़रमाई बल्कि हर चीज़ के समरात और हासिल होने वाले नतीजों की दुआ माँगी है, जिसमें दुनिया भर की बनी हुई चीज़ें और हर तरह की फ़ायदा उठाने के क़ाबिल चीज़ें सब दाख़िल हैं। शायद इस दुआ का यह असर है कि मक्का मुकर्रमा इसके बावजूद कि न कोई खेती-बाड़ी वाला मुल्क है न तिजारती न औद्योगिक, लेकिन दुनिया भर की सारी चीज़ें पूरब व पश्चिम से पहुँचकर मक्का मुकर्रमा में आती हैं, जो ग़ालिबन दुनिया के किसी बड़े से बड़े शहर को भी नसीब नहीं।

7. हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी औलाद के लिये यह दुआ नहीं फ़रमाई कि मक्का की ज़मीन को खेती-बाड़ी के क़ाबिल बना दें, वरना कुछ मुश्किल न था कि मक्का की वादी और सारे पहाड़ सरसब्ज़ (हरेभरे) कर दिये जाते, जिनमें बाग़ात और खेत होते। मगर ख़लीलुल्लाह ने अपनी औलाद के लिये यह खेती-बाड़ी का काम पसन्द न किया, इसलिये दुआ फ़रमाई कि कुछ लोगों के दिलों को इनकी तरफ़ माईल कर दिये जायें जो पूरब व पश्चिम और दुनिया के कोने-कोने से यहाँ आया करें। उनका यह जमा होना पूरी दुनिया के लिये हिदायत व रहनुमाई का और मक्का वालों की ख़ुशहाली का ज़रिया बने। दुनिया के हर इलाक़े की चीज़ें भी यहाँ पहुँच जायें और मक्का वालों को माल कमाने के साधन भी हाथ आ जायें। अल्लाह तआ़ला

ने यह दुआ क़ुबूल फ़रमाई और आज तक मक्का वाले खेती-बाड़ी और काश्त से बेनियाज़ होकर ज़िन्दगी की तमाम ज़रूरतों से मालामाल हैं।

8. 'लअ़ल्लहुम् यश्कुरून' में इशारा कर दिया कि औलाद के लिये आर्थिक राहत व सुकून की दुआ भी इसलिये की गई कि ये शुक्रगुज़ार बनकर उस पर भी अज्र हासिल करें। इस तरह दुआ की शुरूआत नमाज़ की पाबन्दी से हुई और अंत शुक्रगुज़ारी पर। बीच में आर्थिक राहत व सुकून का ज़िक्र आया। इसमें यह तालीम है कि मुसलमान को ऐसा ही होना चाहिये कि उसके आमाल व हालात, ख़्यालात व विचार पर आख़िरत की फ़लाह व कामयाबी का ग़लबा हो, और दुनिया का काम ज़रूरत के अनुसार हो।

رَبَّنَآ اِنَّكَ تَعْلَمُ مَا نُخْفِىْ وَمَا نُعْلِنُ، وَمَا يَخْفٰى عَلَى اللّٰهِ مِنْ شَىْءٍ فِى الْاَرْضِ وَلَا فِى السَّمَآءِ۝

इस आयत में अल्लाह जल्ल शानुहू के कामिल और हर चीज़ पर हावी इल्म का हवाला देकर दुआ को पूरी की गयी है और अपने आ़जिज़ी बरतने और गिड़गिड़ाने को ज़ाहिर करने के लिये लफ़्ज़ रब्बना को दोबारा लाया गया है। मायने यह हैं कि आप हमारे हर हाल से वाक़िफ़ और हमारी दिली व अन्दरूनी हालतों और ज़ाहिरी फ़रियाद व अ़र्ज़ सबसे बाख़बर हैं।

अन्दरूनी हालतों से मुराद वह रंज व ग़म और फ़िक्र है जो दूध पीते बच्चे और उसकी वालिदा को एक खुले मैदान में बे-सर व सामान फ़रियाद करते हुए छोड़ने और उनकी जुदाई से फ़ितरी तौर पर लगा हुआ था, और ज़ाहिरी अ़र्ज़ व फ़रियाद से हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की दुआ और हज़रत हाजरा के वो कलिमात मुराद हैं जो उन्होंने अल्लाह के हुक्म की ख़बर सुनकर कहे कि जब अल्लाह तआ़ला ने आपको हुक्म किया है तो वह हमारे लिये भी काफ़ी है, वह हमें भी ज़ाया नहीं करेगा। आयत के आख़िर में अल्लाह के इल्म की इसी वुस्अ़त (बेपनाह होने) का मज़ीद बयान है कि हमारा ज़ाहिर व बातिन ही क्या, तमाम ज़मीन व आसमान में कोई चीज़ अल्लाह तआ़ला पर छुपी नहीं।

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِىْ وَهَبَ لِىْ عَلَى الْكِبَرِ اِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ، اِنَّ رَبِّىْ لَسَمِيْعُ الدُّعَآءِ۝

इस आयत का मज़मून भी इस दुआ का पूरक है, क्योंकि यह दुआ के आदाब में से है कि उसके साथ अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व सना की जाये। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने विशेष तौर पर इस जगह अल्लाह तआ़ला की इस नेमत का शुक्र अदा किया कि बहुत ज़्यादा बुढ़ापे की उम्र में अल्लाह तआ़ला ने उनकी दुआ क़ुबूल फ़रमाकर नेक औलाद हज़रत इस्माईल व इस्हाक़ अ़लैहिमस्सलाम अ़ता फ़रमाये।

इस तारीफ़ व सना में इस तरफ़ भी इशारा है कि यह बच्चा जो बेसहारा व बेमददगार चटियल मैदान में छोड़ा है, आप ही का दिया हुआ है, आप ही इसकी हिफ़ाज़त फ़रमायेंगे। आख़िर में तारीफ़ व सना को 'इन्-न रब्बी ल-समीउद्दुआ-इ' से किया गया। यानी बेशक मेरा परवर्दिगार दुआओं का सुनने वाला और क़ुबूल करने वाला है।

इस तारीफ़ व सना के बाद फिर दुआ में मशग़ूल हो गये और फ़रमायाः

رَبِّ اجْعَلْنِىْ مُقِيْمَ الصَّلٰوةِ وَمِنْ ذُرِّيَّتِىْ رَبَّنَا وَتَقَبَّلْ دُعَآءِ۝

जिसमें अपने लिये और अपनी औलाद के लिये नमाज़ की पाबन्दी पर क़ायम रहने की दुआ की और आख़िर में फिर गिड़गिड़ाये और फ़रियाद की कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मेरी यह दुआ क़ुबूल फ़रमाईये।

आख़िर में एक जामे दुआ (यानी मुकम्मल जिसमें कई बातों को शामिल किया) फ़रमाई:

رَبَّنَا اغْفِرْلِيْ وَلِوَالِدَيَّ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ يَوْمَ يَقُوْمُ الْحِسَابُ۝

"यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! मेरी और मेरे माँ-बाप की और तमाम मोमिनों की मग़फ़िरत फ़रमा, उस दिन जबकि मेहशर में तमाम ज़िन्दगी के आमाल का हिसाब लिया जायेगा।"

इसमें माँ-बाप के लिये भी मग़फ़िरत की दुआ फ़रमाई, हालाँकि वालिद यानी आज़र का काफ़िर होना क़ुरआन में बयान हुआ है, हो सकता है कि यह दुआ उस वक़्त की हो जबकि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को काफ़िरों की सिफ़ारिश और दुआ-ए-मग़फ़िरत से मना नहीं किया गया था। जैसे एक दूसरी जगह क़ुरआने करीम में है:

وَاغْفِرْ لِاَبِيْٓ اِنَّهٗ كَانَ مِنَ الضَّآلِّيْنَ۝

(कि माफ़ कर दीजिये मेरे बाप को बेशक वह गुमराहों में था।)

ज़रूरी बात

ऊपर बयान हुई आयतों से दुआ के आदाब यह मालूम हुए कि बार-बार रोने-गिड़गिड़ाने आह व फ़रियाद करने के साथ दुआ की जाये और उसके साथ अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व सना भी की जाये, इस तरह दुआ के क़ुबूल होने की बड़ी उम्मीद हो जाती है।

وَلَا تَحْسَبَنَّ اللّٰهَ غَافِلًا عَمَّا يَعْمَلُ الظّٰلِمُوْنَ ؕ اِنَّمَا يُؤَخِّرُهُمْ لِيَوْمٍ تَشْخَصُ فِيْهِ الْاَبْصَارُ۝ مُهْطِعِيْنَ مُقْنِعِيْ رُءُوْسِهِمْ لَا يَرْتَدُّ اِلَيْهِمْ طَرْفُهُمْ ۚ وَ اَفْـِٕدَتُهُمْ هَوَآءٌ۝ وَاَنْذِرِ النَّاسَ يَوْمَ يَاْتِيْهِمُ الْعَذَابُ فَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا رَبَّنَآ اَخِّرْنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيْبٍ ۙ نُّجِبْ دَعْوَتَكَ وَنَتَّبِعِ الرُّسُلَ ؕ اَوَلَمْ تَكُوْنُوْٓا اَقْسَمْتُمْ مِّنْ قَبْلُ مَا لَكُمْ مِّنْ زَوَالٍ۝ وَّسَكَنْتُمْ فِيْ مَسٰكِنِ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ وَتَبَيَّنَ لَكُمْ كَيْفَ فَعَلْنَا بِهِمْ وَضَرَبْنَا لَكُمُ الْاَمْثَالَ۝ وَقَدْ مَكَرُوْا مَكْرَهُمْ وَعِنْدَ اللّٰهِ مَكْرُهُمْ ؕ وَاِنْ كَانَ مَكْرُهُمْ لِتَزُوْلَ مِنْهُ الْجِبَالُ۝ فَلَا تَحْسَبَنَّ اللّٰهَ مُخْلِفَ وَعْدِهٖ رُسُلَهٗ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ ذُو انْتِقَامٍ۝ يَوْمَ تُبَدَّلُ الْاَرْضُ غَيْرَ الْاَرْضِ وَالسَّمٰوٰتُ وَبَرَزُوْا لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ۝ وَتَرَى الْمُجْرِمِيْنَ يَوْمَئِذٍ مُّقَرَّنِيْنَ فِي الْاَصْفَادِ۝ سَرَابِيْلُهُمْ مِّنْ قَطِرَانٍ وَّتَغْشٰى وُجُوْهَهُمُ النَّارُ۝ لِيَجْزِيَ اللّٰهُ كُلَّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ۝ هٰذَا بَلٰغٌ لِّلنَّاسِ وَلِيُنْذَرُوْا بِهٖ وَلِيَعْلَمُوْٓا اَنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ وَّلِيَذَّكَّرَ اُولُوا الْاَلْبَابِ۝

ع 11 19

व ला तह्स-बन्नल्ला-ह ग़ाफ़िलन् अम्मा यअ्मलुज़्ज़ालिमू-न, इन्नमा युअख़्ख़िरुहुम् लियौमिन् तश्ख़सु फ़ीहिल्-अब्सार (42) मुह्तिई-न मुक़्निई रुऊसिहिम् ला यर्तद्दु इलैहिम् तर्फ़ुहुम् व अफ़्इ-दतुहुम् हवा-अ् (43) व अन्ज़िरिन्ना-स यौ-म यअ्तीहिमुल्-अ़ज़ाबु फ़-यक़ूलुल्लज़ी-न ज़-लमू रब्बना अख़्ख़िर्ना इला अ-जलिन् क़रीबिन् नुजिब् दअ्व-त-क व नत्तबिअ़िर्रुसु-ल, अ-व लम् तकूनू अक़्सम्तुम् मिन् क़ब्लु मा लकुम् मिन् ज़वाल (44) व सकन्तुम् फ़ी मसाकिनिल्लज़ी-न ज़-लमू अन्फ़ु-सहुम् व तबय्य-न लकुम् कै-फ़ फ़अ़ल्ना बिहिम् व ज़रब्ना लकुमुल्-अम्साल (45) व क़द् म-करू मक्रहुम् व अ़िन्दल्लाहि मक्रुहुम्, व इन् का-न मक्रुहुम् लि-तज़ू-ल मिन्हुल्-जिबाल (46) फ़ला तह्स-बन्नल्ला-ह मुख़्लि-फ़ वअ्दिही रुसु-लहू, इन्नल्ला-ह अ़ज़ीज़ुन् ज़ुन्तिक़ाम (47) यौ-म तुबद्दलुल्-अर्ज़ु ग़ैरल्-अर्ज़ि वस्समावातु व ब-रज़ू लिल्लाहिल्

और हरगिज़ मत ख़्याल कर कि अल्लाह बेख़बर है उन कामों से जो करते हैं बेइन्साफ़, उनको तो ढील दे रखी है उस दिन के लिये कि पथरा जायेंगी आँखें। (42) दौड़ते होंगे ऊपर उठाये अपने सर, फिरकर नहीं आयेंगी उनकी तरफ़ उनकी आँखें, और दिल उनके उड़ गये होंगे। (43) और डरा दे लोगों को उस दिन से कि आयेगा उन पर अ़ज़ाब, तब कहेंगे ज़ालिम ऐ हमारे रब! मोहलत दे हमको थोड़ी मुद्दत तक, कि हम क़ुबूल कर लें तेरे बुलाने को और पैरवी कर लें रसूलों की, क्या तुम पहले क़सम न खाते थे कि तुमको नहीं दुनिया से टलना। (44) और आबाद थे तुम बस्तियों में उन्हीं लोगों की जिन्होंने ज़ुल्म किया अपनी जान पर और खुल चुका था तुमको कि कैसा किया हमने उनसे और बतलाये हमने तुमको सब क़िस्से। (45) और ये बना चुके हैं अपने दाव और अल्लाह के आगे है उनका दाव, और न होगा उनका दाव कि टल जायें उससे पहाड़। (46) सो ख़्याल मत कर कि अल्लाह ख़िलाफ़ कर लेगा अपना वादा अपने रसूलों से, बेशक अल्लाह ज़बरदस्त है बदला लेने वाला। (47) जिस दिन बदली जाये इस ज़मीन से और ज़मीन और बदले जायें आसमान और लोग निकल खड़े हों अल्लाह अकेले

वाहिदिल्-क़ह्हार (48) व तरल्-मुज्रिमी-न यौ-मइज़िम् मुक़र्रनी-न फ़िल्-अस्फ़ाद (49) सराबीलुहुम् मिन् क़तिरानिंव्-व तग़्शा वुजू-हहुमुन्नार (50) लियज्ज़ियल्लाहु कुल्-ल नफ़्सिम् मा क-सबत्, इन्नल्ला-ह सरीअ़ुल्-हिसाब (51) हाज़ा बलाग़ुल्-लिन्नासि व लियुन्ज़रू बिही व लि-यअ़्लमू अन्नमा हु-व इलाहुंव्-वाहिदुंव्-व लि-यज़्ज़क्क-र उलुल्-अल्बाब (52) ❁	ज़बरदस्त के सामने। (48) और देखे तू गुनाहगारों को उस दिन आपस में जकड़े हुए ज़न्जीरों में। (49) कुर्ते उनके हैं गंधक के और ढाँके लेती है आग उनके मुँह को। (50) ताकि बदला दे अल्लाह हर एक जी को उसकी कमाई का, बेशक अल्लाह जल्द करने वाला है हिसाब। (51) यह ख़बर पहुँचा देनी है लोगों को और ताकि चौंक जायें इससे, और ताकि जान लें कि माबूद वही एक है, और ताकि सोच लें अ़क़्ल वाले। (52) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुख़ातब!) जो कुछ ये ज़ालिम (काफ़िर) लोग कर रहे हैं उससे ख़ुदा तआ़ला को (जल्दी अ़ज़ाब न देने की बिना पर) बेख़बर मत समझ (क्योंकि) इनको सिर्फ़ उस दिन तक मोहलत दे रखी है जिसमें उन लोगों की निगाहें (हैरत व दहशत के मारे) फटी रह जाएँगी (और वे बुलाये जाने के मुताबिक़ हिसाब की जगह की तरफ़) दौड़ते होंगे (और बहुत ज़्यादा हैरानी व परेशानी से) अपने सर ऊपर उठा रखे होंगे, (और) उनकी नज़र उनकी तरफ़ हटकर न आएगी (यानी ऐसी टिकटिकी बंधेगी कि आँख न झपकेंगे) और उनके दिल (बहुत ज़्यादा घबराहट के सबब) बिल्कुल बदहवास होंगे। और (जब वह दिन आ जायेगा फिर मोहलत न होगी। पस) आप इन लोगों को उस दिन (के आने) से डराईये जिस दिन इन पर अ़ज़ाब आ पड़ेगा। फिर ये ज़ालिम लोग कहेंगे कि ऐ हमारे रब! एक थोड़ी-सी मुद्दत तक हमको (और) मोहलत दे दीजिये (और दुनिया में फिर भेज दीजिये) हम (उस वक़्त में) आपका सब कहना मान लेंगे और पैग़म्बरों की इत्तिबा "यानी पैरवी" करेंगे। (जवाब में इरशाद होगा कि क्या हमने दुनिया में तुमको एक लम्बी मोहलत न दी थी और) क्या तुमने (उस मोहलत के लम्बा होने ही के सबब) इससे पहले (दुनिया में) क़समें न खाई थीं कि तुमको (दुनिया से) कहीं जाना ही नहीं है (यानी क़ियामत के इनकारी थे, और इस पर क़सम खाते थे। जैसा कि क़ुरआन में ख़ुद उनके इस क़ौल का ज़िक्र आया है, देखिये सूरः नहल की आयत नम्बर 38) हालाँकि (इनकार से बाज़ आ जाने के असबाब सब जमा थे, चुनाँचे) तुम उन (पहले) लोगों के रहने की जगहों में रहते थे जिन्होंने (कुफ़्र और

क़ियामत का इनकार करके) अपनी ज़ात का नुक़सान किया था, और तुमको (निरंतर ख़बरों से) यह भी मालूम हो गया था कि हमने उनके साथ किस तरह का मामला किया था (कि उनके कुफ़्र व इनकार पर उनको सज़ायें दीं। इससे तुमको मालूम हो सकता था कि इनकार करना ग़ज़ब का सबब है, पस तस्दीक़ "व ईमान" वाजिब है। और उनके रहने की जगहों में रहना हर वक़्त उनके हालात की याद दिलाने का सबब हो सकता था, पस इनकार की किसी वक़्त गुंजाईश न थी)।

और (उन वाक़िआत के सुनने के अ़लावा जो कि इब्रत के लिये काफ़ी थे) हमने (भी) तुमसे मिसालें बयान कीं (यानी आसमानी किताबों में हमने भी उन वाक़िआत को मिसाल के तौर पर बयान किया कि अगर तुम ऐसा करोगे तो तुम भी ऐसे ही ग़ज़ब व अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ होगे, पस वाक़िआत का पहले ख़बरों से सुनना फिर हमारा उनको बयान करना, फिर उनके जैसी हालत पेश आना फिर चेतावनी देना, इन सब असबाब का तक़ाज़ा तो यह था कि क़ियामत का इनकार न करते)।

और (हमने जिन पहले लोगों को उनके कुफ़्र व इनकार पर सज़ायें दीं) उन लोगों ने (सच्चे दीन के मिटाने में) अपनी-सी बहुत ही बड़ी-बड़ी तदबीरें की थीं, और उनकी (ये सब) तदबीरें अल्लाह के सामने थीं (उसके इल्म से छुपी न रह सकती थीं)। और वाक़ई उनकी तदबीरें ऐसी थीं कि (अ़जब नहीं) उनसे पहाड़ भी (अपनी जगह से) टल जाएँ (मगर फिर भी हक़ ही ग़ालिब रहा और उनकी सारी तदबीरें बेकार हो गईं और वे हलाक किये गये। इससे भी मालूम हो गया कि हक़ वही है जो पैग़म्बर फ़रमाते थे और उसका इनकार ग़ज़ब व अ़ज़ाब का सबब है। जब क़ियामत में उनका मग़लूब होना मालूम हो गया) पस (ऐ मुख़ातब!) अल्लाह तआ़ला को अपने रसूलों से वायदा-ख़िलाफ़ी करने वाला न समझना (चुनाँचे क़ियामत के दिन उनके इनकार करने वालों के अ़ज़ाब का वादा था सो वह पूरा होगा, जैसा कि ऊपर बयान हुआ), बेशक अल्लाह तआ़ला बड़ा ज़बरदस्त (और) पूरा बदला लेने वाला है (कि उसको कोई बदला लेने से नहीं रोक सकता। पस क़ुदरत भी कामिल फिर मर्ज़ी का ताल्लुक़ ऊपर मालूम हुआ, फिर वादे के ख़िलाफ़ होने का क्या शुब्हा रहा)।

(और यह बदला उस दिन होगा) जिस दिन दूसरी ज़मीन बदल दी जायेगी इस ज़मीन के अ़लावा, और आसमान भी (दूसरे बदल दिये जायेंगे इन आसमानों के अ़लावा, क्योंकि पहली बार के सूर फूँकने से सब ज़मीन व आसमान टूट-फूट जायेंगे, फिर दूसरी बार में नये सिरे से ज़मीन व आसमान बनेंगे), और सब-के-सब एक (और) ज़बरदस्त अल्लाह के सामने पेश होंगे (मुराद इससे क़ियामत का दिन है। यानी क़ियामत में बदला लिया जायेगा)। और (उस रोज़ ऐ मुख़ातब!) तू मुजरिमों को (यानी काफ़िरों को) ज़न्जीरों में जकड़े हुए देखेगा। (और) उनके कुर्ते क़तिरान के होंगे (यानी सारे बदन को क़तिरान लिपटी होगी कि उसमें आग जल्दी और तेज़ी के साथ लगे, और क़तिरान चीड़ के पेड़ का रोग़न होता है जैसा कि लुग़ात व तिब की किताबों में इसकी वज़ाहत है) और आग उनके चेहरों पर (भी) लिपटी होगी (यह सब कुछ इसलिये होगा)

ताकि अल्लाह तआ़ला हर (मुजरिम) शख़्स को उसके किये की सज़ा दे (और अगरचे ऐसे मुजरिम बेइन्तिहा होंगे मगर) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला (को उनका हिसाब व किताब कुछ दुश्वार नहीं, क्योंकि वह) बड़ी जल्दी हिसाब लेने वाला है (सब का फ़ैसला शुरू करके फ़ौरन ही ख़त्म कर देगा)। यह (क़ुरआन) लोगों के लिये अहकाम का पहुँचाना है (ताकि पहुँचाने वाले यानी रसूल की तस्दीक़ करें) और ताकि इसके ज़रिये से (अ़ज़ाब से) डराये जाएँ, और ताकि इस बात का यक़ीन कर लें कि वही एक सच्चा माबूद है, और ताकि समझदार लोग नसीहत हासिल करें।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः इब्राहीम में नबियों व रसूलों और उनकी क़ौमों के कुछ हालात व मामलात की तफ़सील और अल्लाह के अहकाम की मुख़ालफ़त करने वालों के बुरे अन्जाम और आख़िर में हज़रत ख़लीलुल्लाह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का तज़किरा था जिन्होंने बैतुल्लाह की तामीर की, और जिनकी औलाद के लिये अल्लाह तआ़ला ने मक्का मुकर्रमा की बस्ती बसाई, और उसमें बसने वालों को हर तरह का अमन व अमान और ग़ैर-मामूली (असाधारण) तौर पर आर्थिक सहूलतें अ़ता फ़रमाईं, उन्हीं की औलाद 'बनी इस्माईल' क़ुरआने अ़ज़ीम और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पहले मुख़ातब हैं।

सूरः इब्राहीम के इस आख़िरी रुकूअ़ में ख़ुलासे के तौर पर उन्हीं मक्का वालों को पिछली क़ौमों के हालात से इब्रत हासिल करने की हिदायत और अब भी होश में न आने की सूरत में क़ियामत के हौलनाक अ़ज़ाबों से डराया गया है।

पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और हर मज़लूम की तसल्ली और ज़ालिम के लिये सख़्त अ़ज़ाब की धमकी है कि ज़ालिम और मुजरिम लोग अल्लाह तआ़ला की ढील देने से बेफ़िक्र न हो जायें और यह न समझ लें कि अल्लाह तआ़ला को उनके जुर्मों की ख़बर नहीं, इसलिये बावजूद जुर्मों के वे फल-फूल रहे हैं, कोई अ़ज़ाब व मुसीबत उन पर नहीं आती, बल्कि वे जो कुछ कर रहे हैं सब अल्लाह तआ़ला की नज़र में है मगर वह अपनी रहमत और हिक्मत के तक़ाज़े से ढील दे रहे हैं।

لَا تَحْسَبَنَّ اللّٰهَ غَافِلًا

यानी न समझो अल्लाह तआ़ला को ग़ाफ़िल। यह ख़िताब बज़ाहिर हर उस शख़्स के लिये है जिसको उसकी ग़फ़लत और शैतान ने इस धोखे में डाला हुआ है। और अगर इसके मुख़ातब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हों तो भी मक़सद इससे उम्मत के ग़ाफ़िलों को सुनाना और चेताना है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इसकी संभावना ही नहीं कि वह मआ़ज़ल्लाह अल्लाह तआ़ला को हालात से बेख़बर या ग़ाफ़िल समझें।

दूसरी आयत में बतलाया कि उन ज़ालिमों पर फ़ौरी तौर पर अ़ज़ाब न आना उनके लिये कुछ अच्छा नहीं, क्योंकि इसका अन्जाम यह है कि ये लोग अचानक क़ियामत और आख़िरत के

अ़ज़ाब में पकड़ लिये जायेंगे। आगे सूरः के ख़त्म तक आख़िरत के उस अ़ज़ाब की तफ़सीलात और हौलनाक वाक़िआ़त का बयान है।

لِيَوْمٍ تَشْخَصُ فِيهِ الْأَبْصَارُ ۝

"यानी उस दिन जबकि फटी रह जायेंगी आँखें।"

مُهْطِعِينَ مُقْنِعِي رُءُوسِهِمْ

"यानी ख़ौफ़ व हैरत के सबब सर ऊपर उठाये हुए तेज़ी से बदहवासी की हालत में दौड़ रहे होंगे।"

لَا يَرْتَدُّ إِلَيْهِمْ طَرْفُهُمْ

"उनकी पलकें न झपकेंगी।"

وَأَفْئِدَتُهُمْ هَوَاءٌ ۝

"उनके दिल ख़ाली बदहवास होंगे।"

ये हालात बयान करने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है कि आप अपनी क़ौम को उस दिन के अ़ज़ाब से डराईये जिसमें ज़ालिम और मुजरिम लोग मजबूर होकर पुकारेंगे कि ऐ हमारे परवर्दिगार! हमें कुछ और मोहलत दे दीजिये। यानी फिर दुनिया में चन्द दिन के लिये भेज दीजिये ताकि हम आपकी दावत क़ुबूल कर लें और आपके रसूलों की पैरवी करके इस अ़ज़ाब से निजात हासिल कर सकें। अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उनकी दरख़्वास्त का यह जवाब होगा कि अब तुम यह कह रहे हो, क्या तुमने इससे पहले क़समें नहीं खाई थीं कि हमारी दौलत और शान व शौकत को ज़वाल (ख़ात्मा और पतन) न होगा, हम हमेशा दुनिया में यूँ ही ऐश व मस्ती में रहेंगे और दोबारा ज़िन्दा होने और आख़िरत के जहान का इनकार किया था।

وَسَكَنْتُمْ فِي مَسَاكِنِ الَّذِينَ ظَلَمُوا أَنْفُسَهُمْ وَتَبَيَّنَ لَكُمْ كَيْفَ فَعَلْنَا بِهِمْ وَضَرَبْنَا لَكُمُ الْأَمْثَالَ ۝

ज़ाहिर यह है कि यह ख़िताब अ़रब के मुश्रिकों को है जिनके लिये नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म हुआ है:

أَنْذِرِ النَّاسَ

"यानी डराओ उन लोगों को।"

इस ख़िताब में उनको चेताया गया है कि पहली क़ौमों के हालात व इन्क़िलाबात तुम्हारे लिये बेहतरीन नसीहत हैं, ताज्जुब है कि तुम उनसे इब्रत हासिल नहीं करते, हालाँकि तुम उन्हीं हलाक होने वाली क़ौमों के घरों में बसते और चलते फिरते हो, और तुम्हें कुछ हालात के देखने, अनुभव से और कुछ लगातार ख़बरों से यह भी मालूम हो चुका है कि अल्लाह तआ़ला ने उनकी नाफ़रमानियों की वजह से उन पर कैसा सख़्त अ़ज़ाब नाज़िल किया, और हमने भी तुम्हारे राह पर लाने के लिये बहुत-सी मिसालें बयान कीं, फिर भी तुम होश में नहीं आते।

रिवायतों में है कि पूरी ज़मीन एक बराबर सतह की बना दी जायेगी, जिसमें न किसी मकान की आड़ होगी न पेड़ वग़ैरह की, न कोई पहाड़ और टीला रहेगा न गड्ढा और गहराई। क़ुरआने करीम में इसी हाल का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया है:

لَا تَرٰى فِيْهَا عِوَجًا وَّلَآ اَمْتًا ۝

यानी इमारतों और पहाड़ों की वजह से जो आजकल रास्ते और सड़कें मुड़कर गुज़रती हैं और कहीं ऊँचाई है कहीं गहराई, यह सूरत न रहेगी, बल्कि सब साफ़ मैदान हो जायेगा।

और ज़मीन व आसमान की तब्दीली के यह मायने भी हो सकते हैं कि बिल्कुल ही इस ज़मीन के बदले में दूसरी ज़मीन और इस आसमान की जगह दूसरे आसमान बना दिये जायें। हदीस की रिवायतें जो इसके बारे में बयान हुई हैं उनमें भी कुछ से सिर्फ़ सिफ़ात की तब्दीली मालूम होती है, कुछ से ज़ात की तब्दीली।

इमाम-ए-हदीस बैहक़ी ने सही सनद से हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत के बारे में यह नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेहशर की ज़मीन बिल्कुल नई ज़मीन चाँदी की तरह सफ़ेद होगी, और यह ज़मीन ऐसी होगी जिस पर किसी ने कोई गुनाह नहीं किया होगा, जिस पर किसी का नाहक़ ख़ून नहीं गिराया गया होगा। इसी तरह मुस्नद अहमद और तफ़सीर इब्ने जरीर की हदीस में यही मज़मून हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है। (तफ़सीरे मज़हरी)

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत सहल बिन सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन लोग एक ऐसी ज़मीन पर उठाये जायेंगे जो ऐसी साफ़ व सफ़ेद होगी जैसे मैदे की रोटी, उसमें किसी की कोई अ़लामत (मकान, बाग़, पेड़, पहाड़, टीला वग़ैरह की) कुछ न होगी। यही मज़मून इमाम बैहक़ी ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत की तफ़सीर में नक़ल किया है।

और हाकिम ने मज़बूत सनद के साथ हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन यह ज़मीन इस तरह खींची जायेगी जैसे चमड़े को खींचा जाये, जिससे इसकी सलवटें और शिकन निकल जायें (इसकी वजह से ज़मीन के ग़ार (खोह और गड्ढे) और पहाड़ सब बराबर होकर एक बराबर की सतह बन जायेगी और उस वक़्त आदम की तमाम औलाद उस ज़मीन पर जमा होगी। इस हुजूम की वजह से एक इनसान के हिस्से में सिर्फ़ उतनी ही ज़मीन होगी जिस पर वह खड़ा हो सके। फिर मेहशर में सबसे पहले मुझे बुलाया जायेगा, मैं रब्बुल-इज़्ज़त के सामने सज्दे में गिर पड़ूँगा, फिर मुझे शफ़ाअ़त की इजाज़त दी जायेगी तो मैं तमाम मख़्लूक़ के लिये शफ़ाअ़त करूँगा कि उनका हिसाब-किताब जल्द हो जाये।

इस आख़िरी रिवायत से तो बज़ाहिर यह मालूम होता है कि ज़मीन में तब्दीली सिर्फ़ सिफ़त की होगी कि ग़ार और पहाड़ और इमारत और पेड़ न रहेंगे, मगर ज़मीन की ज़ात (वजूद) यही

रिवायतों में है कि पूरी ज़मीन एक बराबर सतह की बना दी जायेगी, जिसमें न किसी मकान की आड़ होगी न पेड़ वग़ैरह की, न कोई पहाड़ और टीला रहेगा न गड्ढ़ा और गहराई। क़ुरआने करीम में इसी हाल का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया है:

لَا تَرٰى فِيْهَا عِوَجًا وَّلَآ اَمْتًا○

यानी इमारतों और पहाड़ों की वजह से जो आजकल रास्ते और सड़कें मुड़कर गुज़रती हैं और कहीं ऊँचाई है कहीं गहराई, यह सूरत न रहेगी, बल्कि सब साफ़ मैदान हो जायेगा।

और ज़मीन व आसमान की तब्दीली के यह मायने भी हो सकते हैं कि बिल्कुल ही इस ज़मीन के बदले में दूसरी ज़मीन और इस आसमान की जगह दूसरे आसमान बना दिये जायें। हदीस की रिवायतें जो इसके बारे में बयान हुई हैं उनमें भी कुछ से सिर्फ़ सिफ़ात की तब्दीली मालूम होती है, कुछ से ज़ात की तब्दीली।

इमाम-ए-हदीस बैहक़ी ने सही सनद से हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत के बारे में यह नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेहशर की ज़मीन बिल्कुल नई ज़मीन चाँदी की तरह सफ़ेद होगी, और यह ज़मीन ऐसी होगी जिस पर किसी ने कोई गुनाह नहीं किया होगा, जिस पर किसी का नाहक़ ख़ून नहीं गिराया गया होगा। इसी तरह मुस्नद अहमद और तफ़सीर इब्ने जरीर की हदीस में यही मज़मून हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है। (तफ़सीरे मज़हरी)

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत सहल बिन सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन लोग एक ऐसी ज़मीन पर उठाये जायेंगे जो ऐसी साफ़ व सफ़ेद होगी जैसे मेदे की रोटी, उसमें किसी की कोई अ़लामत (मकान, बाग़, पेड़, पहाड़, टीला वग़ैरह की) कुछ न होगी। यही मज़मून इमाम बैहक़ी ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत की तफ़सीर में नक़ल किया है।

और हाकिम ने मज़बूत सनद के साथ हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन यह ज़मीन इस तरह खींची जायेगी जैसे चमड़े को खींचा जाये, जिससे इसकी सलवटें और शिकन निकल जायें (इसकी वजह से ज़मीन के ग़ार (खोह और गड्ढ़े) और पहाड़ सब बराबर होकर एक बराबर की सतह बन जायेगी और उस वक़्त आदम की तमाम औलाद उस ज़मीन पर जमा होगी। इस हुजूम की वजह से एक इनसान के हिस्से में सिर्फ़ उतनी ही ज़मीन होगी जिस पर वह खड़ा हो सके। फिर मेहशर में सबसे पहले मुझे बुलाया जायेगा, मैं रब्बुल-इज़्ज़त के सामने सज्दे में गिर पड़ूँगा, फिर मुझे शफ़ाअ़त की इजाज़त दी जायेगी तो मैं तमाम मख़्लूक़ के लिये शफ़ाअ़त करूँगा कि उनका हिसाब-किताब जल्द हो जाये।

इस आख़िरी रिवायत से तो बज़ाहिर यह मालूम होता है कि ज़मीन में तब्दीली सिर्फ़ सिफ़त की होगी कि ग़ार और पहाड़ और इमारत और पेड़ न रहेंगे, मगर ज़मीन की ज़ात (वजूद) यही

बाक़ी रहेगी, और पहली सब रिवायतों से मालूम होता है कि मेहशर की ज़मीन इस मौजूदा ज़मीन के अ़लावा कोई और होगी, और जिस तब्दीली का ज़िक्र इस आयत में है उससे ज़ात (वजूद) की तब्दीली मुराद है।

तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में हज़रत हकीमुल-उम्मत (मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी) रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इन दोनों बातों में कोई टकराव और विरोधाभास नहीं, हो सकता है कि पहले सूर फूँकने के वक़्त इसी मौजूदा ज़मीन की सिफ़ात तब्दील की जायें और फिर हिसाब-किताब के लिये उनको किसी दूसरी ज़मीन की तरफ़ मुन्तक़िल किया जाये।

तफ़सीरे मज़हरी में मुस्नद अ़ब्द इब्ने हुमैद से हज़रत इक्रिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का एक क़ौल नक़ल किया है जिससे इसकी ताईद होती है। उसके अलफ़ाज़ का तर्जुमा यह है कि यह ज़मीन सिमट जायेगी और इसके पहलू (बराबर) में एक दूसरी ज़मीन होगी जिस पर लोगों को हिसाब किताब के लिये खड़ा किया जायेगा।

सही मुस्लिम में हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया गया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास एक यहूदी आ़लिम आया और यह सवाल किया कि जिस दिन यह ज़मीन बदली जायेगी तो आदमी कहाँ होंगे? आपने इरशाद फ़रमाया कि पुलसिरात के पास एक अंधेरे में होंगे।

इससे यह भी मालूम होता है कि मौजूदा ज़मीन से पुल-सिरात के ज़रिये दूसरी तरफ़ मुन्तक़िल किये जायेंगे। और इब्ने जरीर ने अपनी तफ़सीर में अनेक सहाबा व ताबिईन के ये अक़वाल नक़ल किये हैं कि उस वक़्त मौजूदा ज़मीन और इसके सब दरिया आग हो जायेंगे, गोया यह सारा इलाक़ा जिसमें अब दुनिया आबाद है उस वक़्त जहन्नम का इलाक़ा हो जायेगा, और असल हक़ीक़त अल्लाह तआ़ला ही को मालूम है, बन्दे के लिये इसके सिवा चारा नहीं:

ज़ुबाँ ताज़ा कर्दन् ब-इक़रारे तू ☆ न-यंगख़्तन इल्लत अज़ कारे तू

यानी जिस चीज़ का हुक्म हो उसका इक़रार करे और सर झुकाकर दिल व जान से मान ले, उसके सबब और इल्लत की खोज में न पड़े। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

आख़िरी आयतों में जन्नत वालों का यह हाल बतलाया गया है कि मुजरिम लोगों को एक ज़न्जीर में बाँध दिया जायेगा। यानी हर जुर्म के मुजरिम अलग-अलग जमा करके एक साथ बाँध दिये जायेंगे और उनको जो लिबास पहनाया जायेगा वह क़तिरान का होगा जिसको तारकूल कहा जाता है, और वह एक आग पकड़ने वाला माद्दा है कि आग फ़ौरन पकड़ लेता है।

आख़िरी आयत में इरशाद फ़रमाया कि क़ियामत के हालात का यह सब बयान करना लोगों को तंबीह करने के लिये है ताकि वे अब भी समझ लें कि इबादत व फ़रमाँबरदारी के क़ाबिल सिर्फ़ एक ज़ात अल्लाह तआ़ला की है, और ताकि जिनमें कुछ भी अ़क़्ल व होश है वे शिर्क से बाज़ आ जायें।

(अल्लाह तआ़ला का शुक्र व एहसान है कि सूरः इब्राहीम की तफ़सीर पूरी हुई।)

एक याद्दाश्त और इत्तिला

अहक़र नाकारा न इसका अहल था कि क़ुरआन की तफ़सीर लिखने की जुर्रत करे, न कभी इस ख़्याल की हिम्मत करता था, अलबत्ता अपने मुर्शिद हज़रत हकीमुल-उम्मत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन को जो इस ज़माने की बेनज़ीर दरमियानी तफ़सीर है, न बहुत मुख़्तसर कि क़ुरआन के मज़मून को समझना मुश्किल हो, न बहुत विस्तृत कि पढ़ना मुश्किल हो। फिर अल्लाह तआ़ला के अ़ता किये हुए इल्म व ज़हानत और तक़्वा व तहारत की बरकत से विभिन्न अक़्वाल में से एक को तरजीह देकर लिख देने का जो ख़ास ज़ौक़ हक़ तआ़ला ने आपको अ़ता फ़रमाया था वह बड़ी तफ़सीरों से भी हासिल होना मुश्किल था, मगर यह तफ़सीर हज़रत-ए-वाला रह. ने अहले इल्म के लिये उन्हीं की ज़बान और इल्मी परिभाषाओं में लिखी है, अ़वाम और ख़ुसूसन इस ज़माने के अ़वाम जो अ़रबी भाषा और उसकी इस्तिलाहों (परिभाषाओं) से बहुत दूर हो चुके हैं उनको इस तफ़सीर से लाभ उठाना मुश्किल था।

इसलिये यह ख़्याल अक्सर रहा करता था कि इसके उम्दा मज़ामीन को आजकल की आसान ज़बान में लिखा जाये, मगर यह भी कोई आसान काम न था।

अल्लाह का हुक्म और तक़दीर का फ़ैसला कि इसकी शुरूआ़त इस तरह हो गई कि रेडियो पाकिस्तान के डायरेक्टर साहिब ने मुझ पर ज़ोर डाला कि रेडियो पर एक सिलसिला क़ुरआन की ख़ास-ख़ास आयतों का "मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन" के उनवान से जारी किया जाये। उनका तक़ाज़ा व इसरार इस काम के आग़ाज़ का सबब बन गया और रेडियो पाकिस्तान पर हर जुमे के दिन, जुमा 3 शव्वाल सन् 1373 हिजरी मुताबिक़ 2 जौलाई सन् 1954 ई. से शुरू होकर 15 सफ़र सन् 1384 हिजरी मुताबिक़ 25 जून सन् 1964 ई. तक जारी रहा, जो सूरः इब्राहीम के समापन पर रेडियो पाकिस्तान के महकमे की तरफ़ से ख़त्म कर दिया गया।

हक़ तआ़ला ने इसको मेरे वहम व गुमान से ज़्यादा मक़बूलियत अ़ता फ़रमाई, और दुनिया के कोने-कोने से इसको किताबी सूरत में छापने का तक़ाज़ा हुआ। इसका इरादा किया तो जितना काम उस वक़्त हो चुका था वह भी इस लिहाज़ से नामुकम्मल था कि यह सिलसिला ख़ास-ख़ास और चुनिन्दा आयतों का था, बीच की आयतों को जो ख़ालिस इल्मी थीं रेडियो पर अ़वाम को उनकी तफ़सीर समझाना आसान न था, वो रह गई थीं। किताबी शक्ल में छापने के लिये उनका सिलसिला भी पूरा करना था जो वक़्ती कामों की वजह से पूरा करना मुश्किल था।

क़ुदरत की अ़जीब कार्रवाई और निशानियों में से है कि रमज़ान सन् 1388 हिजरी में अहक़र सख़्त बीमार होकर चलने-फिरने से माज़ूर होकर बिस्तर का हो रहा, और मौत सामने महसूस होने लगी, तो इसका अफ़सोस सताने लगा कि ये मुसौदे यूँ ही ज़ाया हो जायेंगे। हक़ तआ़ला ने दिल में यह जज़्बा व तक़ाज़ा पैदा फ़रमा दिया कि लेटे-बैठे "मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन" के मसौदों पर नज़र-ए-सानी और बीच की जो आयतें रह गई हैं उनकी तकमील किसी तरह इसी हालत में कर दी जाये।

उधर बीमारी का सिलसिला लम्बा होता चला गया, बीमारी ने तमाम दूसरे काम तो पहले ही छुड़ा दिये थे अब सिर्फ़ यही मश्ग़ला रह गया, इसलिये क़ुदरत के अजीब व ग़रीब इन्तिज़ाम ने इसी बीमारी में अल्लाह के फ़ज़्ल से यह काम 29 रजब सन् 1390 हिजरी तक पूरा करा दिया। यहाँ तक कि सूरः इब्राहीम का समापन और क़ुरआन पाक के तेरह पारे उसी रेडियो से प्रसारित सबक़ों के ज़रिये पूरे हो गये।

अब अल्लाह तआ़ला ने अगले हिस्से के लिखने की तौफ़ीक़ व हिम्मत भी अ़ता फ़रमा दी। चलने-फिरने से माज़ूरी की तकलीफ़ भी दूर फ़रमा दी, अगरचे विभिन्न और अनेक बीमारियों का सिलसिला तक़रीबन लगातार रहा और कमज़ोरी भी बढ़ती रही मगर अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम और उसी की इमदाद से 30 शाबान सन् 1390 हिजरी से क़ुरआन के अगले पारों की तफ़सीर का लिखना शुरू होकर इस वक़्त जबकि "मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन" की तीन जिल्दें छपकर प्रकाशित हो चुकी हैं, यानी 25 सफ़र सन् 1391 हिजरी में इस तफ़सीर का मुसौदा क़ुरआने करीम की चौथी मन्ज़िल सूरः फ़ुरक़ान उन्नवीसवें पारे तक अल्लाह तआ़ला की मदद से मुकम्मल हो चुका है।

इस वक़्त भी अनेक बीमारियों और कमज़ोरी का सिलसिला है और अल्लाह का शुक्र है कि यह काम भी जारी है, कुछ बईद नहीं कि अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से इसकी तकमील (पूरा करने) की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दें। सब कुछ अल्लाह ही के हाथ में है उसके लिये कोई काम मुश्किल नहीं।

बन्दा मुहम्मद शफ़ी
25 सफ़र सन् 1391 हिजरी

بسم الله الرحمن الرحيم
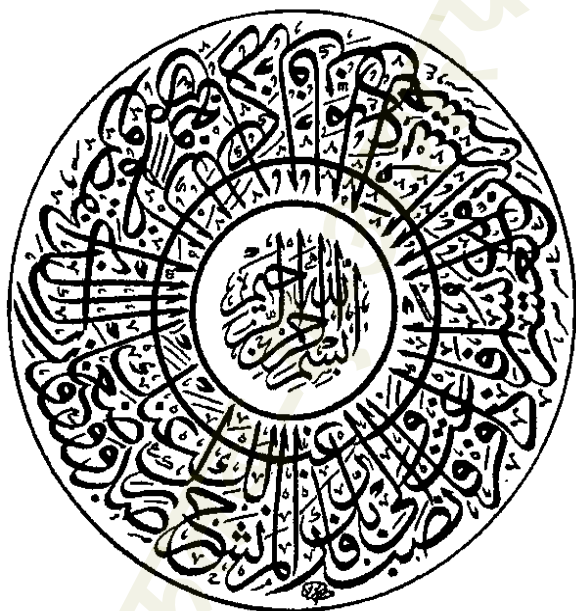
* सूरः हिज्र *

यह सूरत मक्की है। इसमें 99 आयतें
और 6 रुकूअ़ हैं।

सूरः हिज्र

सूरः हिज्र मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 99 आयतें और 6 रुकूअ़ हैं।

آیاتُہَا ۹۹ (۱۵) سُوْرَۃُ الْحِجْرِ مَکِّیَّۃٌ (۵۴) رُکُوْعَاتُہَا ۶

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

الٓرٰ تِلْكَ اٰیٰتُ الْكِتٰبِ وَقُرْاٰنٍ مُّبِیْنٍ ۝۱

رُبَمَا یَوَدُّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا لَوْ كَانُوْا مُسْلِمِیْنَ ۝۲ ذَرْهُمْ یَاْكُلُوْا وَیَتَمَتَّعُوْا وَیُلْهِهِمُ الْاَمَلُ فَسَوْفَ یَعْلَمُوْنَ ۝۳ وَمَاۤ اَهْلَكْنَا مِنْ قَرْیَةٍ اِلَّا وَلَهَا كِتَابٌ مَّعْلُوْمٌ ۝۴ مَا تَسْبِقُ مِنْ اُمَّةٍ اَجَلَهَا وَمَا یَسْتَاْخِرُوْنَ ۝۵

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-रा। तिल्-क आयातुल्-किताबि व क़ुरआनिम्-मुबीन। (1)	ये आयतें हैं किताब की और स्पष्ट क़ुरआन की। (1)

पारा (14) रु-बमा

रु-बमा यवद्दुल्लज़ी-न क-फ़रू लौ कानू मुस्लिमीन (2) ज़र्हुम् यअ्कुलू व य-तमत्तअ़ू व युल्हिहिमुल्-अ-मलु फ़सौ-फ़ यअ़्लमून (3) व मा अह्लक्ना मिन् क़र्यतिन् इल्ला व लहा किताबुम्-मअ़्लूम (4) मा तस्बिक़ु मिन् उम्मतिन् अ-ज-लहा व मा यस्तअ्ख़िरून (5)	किसी वक़्त आरज़ू करेंगे ये लोग जो मुन्किर हैं- क्या अच्छा होता जो होते मुसलमान। (2) छोड़ दे इनको खा लें और बरत लें और उम्मीद में लगे रहें, सो आईन्दा मालूम कर लेंगे। (3) और कोई बस्ती हमने ग़ारत नहीं की मगर उसका वक़्त लिखा हुआ था मुक़र्रर। (4) न आगे बढ़ता है कोई फ़िर्क़ा अपने निर्धारित वक़्त से और न पीछे रहता है। (5)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम्-रा (इसके मायने तो अल्लाह ही को मालूम हैं)। ये आयतें हैं एक कामिल किताब और स्पष्ट क़ुरआन की (यानी इसकी दोनों सिफ़तें हैं- कामिल किताब होना भी और स्पष्ट क़ुरआन होना भी। इन कलिमात से क़ुरआने करीम का सच्चा कलाम होना वाज़ेह करने के बाद उन लोगों की मायूसी व हसरत और अ़ज़ाब का बयान है जो क़ुरआन पर ईमान नहीं लाते, या इसके अहकाम की तामील नहीं करते। फ़रमायाः

رُبَمَا يَوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ كَانُوْا مُسْلِمِيْنَ٥

(यानी जब क़ियामत के हश्र व नश्र के मैदान में काफ़िरों पर तरह-तरह का अ़ज़ाब होगा तो) काफ़िर लोग बार-बार तमन्ना करेंगे कि क्या अच्छा होता अगर वे (यानी हम दुनिया में) मुसलमान होते। (बार-बार इसलिये कि जब कोई नई सख़्ती और मुसीबत देखेंगे तो हर मर्तबा अपने इस्लाम न लाने पर अफ़सोस व हसरत ताज़ा होती रहेगी)। आप (दुनिया में उनके कुफ़्र पर ग़म न कीजिये और) उनको उनके हाल पर रहने दीजिये कि वे (ख़ूब) खा लें और चैन उड़ा लें और ख़्याली मन्सूबे उनको ग़फ़लत में डाले रखें, उनको अभी (मरने के साथ ही) हक़ीक़त मालूम हुई जाती है (और दुनिया में जो उनको उनके कुफ़्र और बुरे आमाल की फ़ौरन सज़ा नहीं मिलती इसकी वजह यह है कि अल्लाह तआ़ला ने सज़ा का वक़्त मुक़र्रर कर रखा है, अभी वह वक़्त नहीं आया)। और हमने जितनी बस्तियाँ (कुफ़्र की वजह से) हलाक की हैं उन सब के लिये एक निर्धारित वक़्त लिखा हुआ होता रहा है। और (हमारा उसूल है कि) कोई उम्मत अपनी तयशुदा मियाद से न पहले हलाक हुई है और न पीछे रही है (बल्कि तयशुदा वक़्त पर हलाक हुई है। इसी तरह जब इनका वक़्त आ जायेगा उनको भी सज़ा दी जायेगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ذَرْهُمْ يَأْكُلُوْا............... الخ

(यानी इस सूरत की आयत नम्बर 3) से मालूम हुआ कि खाने-पीने को मक़सद और असली धंधा बना लेना और दुनियावी ऐश व आराम के सामान में मौत से बेफ़िक्र होकर लम्बी-लम्बी योजनाओं में लगे रहना काफ़िरों ही से हो सकता है, जिनका आख़िरत और उसके हिसाब व किताब और जज़ा व सज़ा पर ईमान नहीं। मोमिन भी खाता-पीता है, और ज़रूरत के मुताबिक़ रोज़ी कमाने का सामान करता है, और आईन्दा के कारोबार की योजनायें भी बनाता है, मगर मौत और आख़िरत की फ़िक्र से ग़ाफ़िल होकर यह काम नहीं करता। इसी लिये हर काम में हलाल व हराम की फ़िक्र रहती है और बेकार की योजनायें बनाने को अपना मश्ग़ला (धंधा और व्यस्तता) नहीं बनाता। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि चार चीज़ें बदबख़्ती और बदनसीबी की निशानियाँ हैं- आँखों से आँसू जारी न होना (यानी अपने गुनाहों

और ग़फ़लतों पर शर्मिन्दा होकर न रोना), दिल का सख़्त होना, उम्मीदों का लम्बा होना और दुनिया की हिर्स। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, मुस्नदे बज़्ज़ार के हवाले और हज़रत अनस रज़ि. की रिवायत से)

और उम्मीदों के लम्बा होने का मतलब यह है कि दुनिया की मुहब्बत और हिर्स में खोकर और मौत व आख़िरत से बेफ़िक्री के साथ दूर-दराज़ की योजनायें बनाई जायें। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

जो योजनायें दीनी मक़ासिद के लिये या किसी क़ौम व मुल्क के आईन्दा के फ़ायदे के लिये बनाई जाती हैं वे इसमें दाख़िल नहीं, क्योंकि वो आख़िरत की फ़िक्र ही की एक सूरत है।

और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस उम्मत के पहले तब्क़े की निजात कामिल ईमान और दुनिया से मुँह मोड़ लेने की वजह से होगी, और इस उम्मत के आख़िरी तब्क़े के लोग कन्जूसी और लम्बी उम्मीद की वजह से हलाक होंगे।

और हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि वह जामा मस्जिद दमिश्क़ के मिम्बर पर खड़े हुए और फ़रमाया- ऐ दमिश्क़ वालो! क्या तुम अपने एक हमदर्द भला चाहने वाले भाई की बात सुनोगे? सुन लो! कि तुम से पहले बहुत बड़े-बड़े लोग गुज़रे हैं जिन्होंने माल व मता बहुत जमा किया और बड़े-बड़े शानदार महल तामीर किये और दूर-दराज़ के लम्बे मन्सूबे बनाये, आज वे सब हलाक हो चुके हैं, उनके मकानात उनकी क़ब्रें हैं, और उनकी लम्बी उम्मीदें सब धोखा और फ़रेब साबित हुईं। आ़द क़ौम तुम्हारे क़रीब थी जिसने अपने आदमियों से और हर तरह के माल व असबाब और हथियारों व घोड़ों से मुल्क को भर दिया था, आज कोई है जो उनकी विरासत मुझसे दो दिरहम में ख़रीदने को तैयार हो जाये।

हज़रत हसन बसरी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जो शख़्स अपनी ज़िन्दगी में लम्बी उम्मीदें बाँधता है उसका अ़मल ज़रूर ख़राब हो जाता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَقَالُوْا يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْ نُزِّلَ عَلَيْهِ الذِّكْرُ اِنَّكَ لَمَجْنُوْنٌ ۝ لَوْمَا تَاْتِيْنَا بِالْمَلٰٓئِكَةِ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ مَا نُنَزِّلُ الْمَلٰٓئِكَةَ اِلَّا بِالْحَقِّ وَمَا كَانُوْٓا اِذًا مُّنْظَرِيْنَ ۝

व क़ालू या अय्युहल्लज़ी नुज़्ज़ि-ल अ़लैहिज़्ज़िक्रु इन्न-क ल-मज्नून (6) लौ मा तअ्तीना बिल्मलाइ-कति इन् कुन्-त मिनस्सादिक़ीन (7) मा नुनज़्ज़िलुल्-मलाइ-क-त इल्ला बिल्-हक़्क़ि व मा कानू इज़म्-मुन्ज़रीन (8)	और लोग कहते हैं- ऐ वह शख़्स कि तुझ पर उतरा है क़ुरआन, तू बेशक दीवाना है। (6) क्यों नहीं ले आता हमारे पास फ़रिश्तों को अगर तू सच्चा है। (7) हम नहीं उतारते फ़रिश्तों को मगर काम पूरा करके, और उस वक़्त न मिलेगी उनको मोहलत। (8)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

('इल्ला बिल्हक़्क़ि' में लफ़्ज़ हक़ से मुराद अ़ज़ाब का फ़ैसला है और कुछ मुफ़स्सिरीन ने

क़ुरआन या रिसालत को इससे मुराद लिया है। तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में पहले मायने को तरजीह दी है, यह मायने हज़रत हसन बसरी रह. से मन्क़ूल हैं। आयतों की तफ़सीर यह है:)

और उन (मक्का के) काफ़िरों ने (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से) यूँ कहा कि ऐ वह शख़्स! जिस पर (उसके दावे के मुताबिक़) क़ुरआन नाज़िल किया गया है, तुम (नऊज़ु बिल्लाह) मजनूँ हो (और नुबुव्वत का ग़लत दावा करते हो, वरना) अगर तुम (इस दावे में) सच्चे हो तो हमारे पास फ़रिश्तों को क्यों नहीं लाते (जो हमारे सामने तुम्हारे सच्चा होने की गवाही दें जैसा कि उनकी इस बात को सूरः फ़ुरक़ान की आयत नम्बर 7 में भी बयान किया है। अल्लाह तआ़ला जवाब देते हैं कि) हम फ़रिश्तों को (जिस अन्दाज़ से वे दरख़्वास्त करते हैं) सिर्फ़ फ़ैसले ही के लिये नाज़िल किया करते हैं, और (अगर ऐसा होता तो) उस वक़्त उनको मोहलत भी न दी जाती (बल्कि जब उनके आने पर भी ईमान न लाते जैसा कि उनके हालात से यही यक़ीनी है तो फ़ौरन हलाक कर दिये जाते, जैसा कि सूरः अन्आ़म के पहले रुकूअ़ की आख़िर की आयतों में इसकी वजह बयान हो चुकी है)।

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ۝

इन्ना नह्नु नज़्ज़ल्नज़्ज़िक्-र व इन्ना लहू लहाफ़िज़ून (9)	हमने आप उतारी है यह नसीहत और हम आप इसके निगहबान हैं। (9)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हमने क़ुरआन को नाज़िल किया है और (यह दावा बिना दलील के नहीं बल्कि इसका मोजिज़ा होना इस पर दलील है। और क़ुरआन के एक कमाल व करिश्मे का बयान तो दूसरी सूरतों में बयान हुआ है कि कोई इनसान इसकी एक सूरत के जैसी नहीं बना सकता, दूसरा बेमिसाल कमाल यह है कि) हम इस (क़ुरआन) के मुहाफ़िज़ (और निगहबान) हैं (इसमें कोई कमी-बेशी नहीं कर सकता, जैसा कि और किताबों में होता है। यह ऐसा खुला मोजिज़ा है जिसको हर आ़म व ख़ास समझ सकता है। पहला मोजिज़ा कि क़ुरआन की भाषा और अन्दाज़े बयान की ख़ूबी और जामे होने का कोई मुक़ाबला नहीं कर सकता, इसको तो इल्म वाले ही समझ सकते हैं मगर कमी-बेशी न होने को एक अनपढ़ जाहिल भी देख सकता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मामून के दरबार का एक वाक़िआ

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने इस जगह निरंतर सनद के साथ एक वाक़िआ अमीरुल-मोमिनीन मामून के दरबार का नक़ल किया है, कि मामून की आ़दत थी कि कभी-कभी उसके दरबार में इल्मी विषयों पर बहस व मुबाहसे और मुज़ाकरे हुआ करते थे, जिसमें हर आ़लिम को आने की

इजाज़त थी। ऐसे ही एक मुज़ाकरे में एक यहूदी भी आ गया जो सूरत शक्ल और लिबास वग़ैरह के एतिबार से भी एक नुमायाँ आदमी मालूम होता था। फिर बातचीत की तो वह भी आला दर्जे की और अक़्ल व बुद्धि वाली बातचीत थी। जब मज्लिस ख़त्म हो गई तो मामून ने उसको बुलाकर पूछा कि तुम इस्राईली हो? उसने इक़रार किया। मामून ने (इम्तिहान लेने के लिये) कहा कि अगर तुम मुसलमान हो जाओ तो हम तुम्हारे साथ बहुत अच्छा सुलूक करेंगे।

उसने जवाब दिया कि मैं तो अपने और अपने बाप-दादा के दीन को नहीं छोड़ता। बात ख़त्म हो गई, यह शख़्स चला गया। फिर एक साल के बाद यही शख़्स मुसलमान होकर आया और मुज़ाकरे की मज्लिस में इस्लामी फ़िक़्हे (इस्लामी क़ानून) के विषय पर बेहतरीन तक़रीर और उम्दा तहक़ीक़ात पेश कीं। मज्लिस ख़त्म होने के बाद मामून ने उसको बुलाकर कहा कि तुम वही शख़्स हो जो पिछले साल आये थे? उसने जवाब दिया हाँ मैं वही हूँ। मामून ने पूछा कि उस वक़्त तो तुमने इस्लाम क़ुबूल करने से इनकार कर दिया था, फिर अब मुसलमान होने का क्या सबब हुआ?

उसने कहा मैं यहाँ से लौटा तो मैंने मौजूदा धर्मों की तहक़ीक़ करने का इरादा किया। मैं एक कातिब और लिखने के फ़न में आर्टिस्ट आदमी हूँ, किताबें लिखकर फ़रोख़्त करता हूँ तो अच्छी क़ीमत से बिक जाती हैं। मैंने आज़माने के लिये तौरात के तीन नुस्ख़े (प्रतियाँ) लिखे जिनमें बहुत जगह अपनी तरफ़ से कमी-बेशी कर दी और वो नुस्ख़े (प्रतियाँ) लेकर मैं कनीसा में पहुँचा, यहूदियों ने बड़ी दिलचस्पी से उनको ख़रीद लिया। फिर इसी तरह इन्जील के तीन नुस्ख़े कमी-बेशी के साथ लिख करके ईसाईयों के इबादत ख़ाने में ले गया वहाँ भी ईसाईयों ने बड़ी क़द्र व सम्मान के साथ वो नुस्ख़े मुझसे ख़रीद लिये। फिर यही काम मैंने क़ुरआन के साथ किया, उसके भी तीन नुस्ख़े उम्दा लिखाई के तैयार किये जिनमें अपनी तरफ़ से कमी-बेशी की थी, उनको लेकर जब मैं फ़रोख़्त करने के लिये निकला तो जिसके पास ले गया उसने देखा कि सही भी है या नहीं, जब कमी-बेशी नज़र आई तो उसने मुझे वापस कर दिया।

इस वाक़िए से मैंने यह सबक़ लिया कि यह किताब महफ़ूज़ (सुरक्षित) है और अल्लाह तआ़ला ही ने इसकी हिफ़ाज़त की हुई है, इसलिये मैं मुसलमान हो गया। क़ाज़ी यहया बिन अक्सम इस वाक़िए के रिवायत करने वाले कहते हैं कि इत्तिफ़ाक़ से उसी साल मुझे हज की तौफ़ीक़ हुई, वहाँ सुफ़ियान बिन उयैना से मुलाक़ात हुई तो मैंने यह क़िस्सा उनको सुनाया, उन्होंने फ़रमाया कि बेशक ऐसा ही होना चाहिये, क्योंकि इसकी तस्दीक़ क़ुरआन में मौजूद है।

यहया बिन अक्सम ने पूछा कि क़ुरआन की कौनसी आयत में? तो फ़रमाया कि क़ुरआने अज़ीम ने जहाँ तौरात व इन्जील का ज़िक्र किया है उसमें तो फ़रमायाः

بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ

यानी यहूदियों व ईसाईयों को अल्लाह की किताब तौरात व इन्जील की हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी सौंपी गई है, यही वजह हुई कि जब यहूदियों व ईसाईयों ने हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी को अदा न किया तो ये किताबें अपनी असली हालत से बदल कर ज़ाया हो गईं, बख़िलाफ़ क़ुरआने करीम के कि इसके बारे में हक़ तआ़ला ने फ़रमायाः

إِنَّا لَهُ لَحٰفِظُونَ ○

यानी हम ही इसके मुहाफ़िज़ हैं। इसलिये इसकी हिफ़ाज़त हक़ तआ़ला ने ख़ुद फ़रमाई तो दुश्मनों की हज़ारों कोशिशों के बावजूद इसके एक नुक़्ते (बिन्दू) और एक ज़ेर व ज़बर (मात्रा) में फ़र्क़ न आ सका। आज हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर को भी तक़रीबन चौदह सौ बरस हो चुके हैं, तमाम दीनी और इस्लामी मामलात में मुसलमानों की कोताही और ग़फ़लत के बावजूद क़ुरआने करीम के हिफ़्ज़ करने का सिलसिला तमाम दुनिया के पूरब व पश्चिम में इसी तरह क़ायम है। हर ज़माने में लाखों बल्कि करोड़ों मुसलमान जवान, बूढ़े, लड़के और लड़कियाँ ऐसे मौजूद रहते हैं जिनके सीनों में पूरा क़ुरआन महफ़ूज़ है, किसी बड़े से बड़े आ़लिम की भी मजाल नहीं कि एक हर्फ़ ग़लत पढ़ दे, उसी वक़्त बहुत से बड़े और बच्चे उसकी ग़लती पकड़ लेंगे।

क़ुरआन की हिफ़ाज़त के वायदे में हदीस शरीफ़ की हिफ़ाज़त भी दाख़िल है

तमाम उलेमा इस पर एक-राय हैं कि क़ुरआन न सिर्फ़ क़ुरआनी अलफ़ाज़ का नाम है न सिर्फ़ क़ुरआन मायनों का, बल्कि दोनों के मजमूए को क़ुरआन कहा जाता है। वजह यह है कि क़ुरआन के मायने और मज़ामीन तो दूसरी किताबों में भी मौजूद हैं और इस्लामी किताबों में तो उमूमन क़ुरआनी मज़ामीन ही होते हैं, मगर उनको क़ुरआन नहीं कहा जाता, क्योंकि अलफ़ाज़ क़ुरआन के नहीं हैं। इसी तरह अगर कोई शख़्स क़ुरआने करीम के अलग-अलग जगह के अलफ़ाज़ और जुमले लेकर एक मज़मून या किताब लिख दे तो उसको भी कोई क़ुरआन नहीं कहेगा अगरचे उसमें एक लफ़्ज़ भी क़ुरआन से बाहर का न हो। इससे मालूम हुआ कि क़ुरआन सिर्फ़ उस मुस्हफ़े रब्बानी का नाम है जिसके अलफ़ाज़ और मायने साथ-साथ महफ़ूज़ हैं।

इसी से यह मसला भी मालूम हो गया कि किसी भाषा उर्दू या अंग्रेज़ी वग़ैरह में जो सिर्फ़ क़ुरआन का तर्जुमा प्रकाशित करके लोग उसको उर्दू या अंग्रेज़ी क़ुरआन का नाम देते हैं यह हरगिज़ जायज़ नहीं, क्योंकि वह क़ुरआन नहीं। और जब यह मालूम हुआ कि क़ुरआन सिर्फ़ क़ुरआन के अलफ़ाज़ का नाम नहीं बल्कि मायने भी उसका एक हिस्सा हैं तो क़ुरआन की हिफ़ाज़त की जो ज़िम्मेदारी इस आयत में हक़ तआ़ला ने ख़ुद अपने ज़िम्मे क़रार दी है उसमें जिस तरह क़ुरआनी अलफ़ाज़ की हिफ़ाज़त का वायदा और ज़िम्मेदारी है इसी तरह क़ुरआन के मायनों और मज़ामीन की हिफ़ाज़त और मानवी रद्दोबदल से इसके महफ़ूज़ रहने की भी ज़िम्मेदारी अल्लाह तआ़ला ही ने ले ली है।

और यह ज़ाहिर है कि क़ुरआन के मायने वही हैं जिनके तालीम देने के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भेजा गया जैसा कि क़ुरआने करीम में फ़रमाया है:

لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ اِلَيْهِمْ

"यानी आपको इसलिये भेजा गया है कि आप बतला दें लोगों को मतलब उस कलाम का जो उनके लिये नाज़िल किया गया है।" और यही मायने इस आयत के हैं:

يُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ

और इसी लिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اِنَّمَا بُعِثْتُ مُعَلِّمًا

यानी मैं तो मुअ़ल्लिम (सिखाने वाला अर्थात शिक्षक) बनाकर भेजा गया हूँ। और जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़ुरआन के मायनों को बयान करने और उनकी तालीम के लिये भेजा गया तो आपने उम्मत को जिन बातों और कामों के ज़रिये तालीम दी उन्हीं बातों और कामों का नाम हदीस है।

रसूले पाक की हदीसों को उमूमी तौर पर ग़ैर-महफ़ूज़ कहने वाला दर हक़ीक़त क़ुरआन को ग़ैर-महफ़ूज़ कहता है

जो लोग आजकल दुनिया को इस मुग़ालते (धोखे) में डालना चाहते हैं कि हदीसों का ज़ख़ीरा जो क़ाबिले एतिमाद किताबों में मौजूद है वह इसलिये क़ाबिले एतिबार नहीं कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने से बहुत बाद में जमा किया गया और तरतीब दिया गया है।

अव्वल तो उनका यह कहना भी सही नहीं, क्योंकि हदीस की हिफ़ाज़त व लिखाई ख़ुद रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर में शुरू हो चुकी थी, बाद में उसकी तकमील हुई। इसके अ़लावा हदीसे रसूल दर हक़ीक़त क़ुरआन की तफ़सीर और उसके मायने हैं। उनकी हिफ़ाज़त अल्लाह तआ़ला ने अपने ज़िम्मे ली है। फिर यह कैसे हो सकता है कि क़ुरआन के सिर्फ़ अलफ़ाज़ महफ़ूज़ रह जायें मायने (यानी रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसें) ज़ाया हो जायें?

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ فِيْ شِيَعِ الْاَوَّلِيْنَ ۝ وَمَا يَاْتِيْهِمْ مِّنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ ۝ كَذٰلِكَ نَسْلُكُهٗ فِيْ قُلُوْبِ الْمُجْرِمِيْنَ ۝ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ وَقَدْ خَلَتْ سُنَّةُ الْاَوَّلِيْنَ ۝ وَلَوْ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَابًا مِّنَ السَّمَآءِ فَظَلُّوْا فِيْهِ يَعْرُجُوْنَ ۝ لَقَالُوْٓا اِنَّمَا سُكِّرَتْ اَبْصَارُنَا بَلْ نَحْنُ قَوْمٌ مَّسْحُوْرُوْنَ ۝

व ल-क़द् अर्सल्ना मिन् क़ब्लि-क फ़ी शि-यअ़िल्-अव्वलीन (10) व मा	और हम भेज चुके हैं रसूल तुझसे पहले अगले फ़िर्क़ों में। (10) और नहीं आता

यअ्तीहिम् मिर्रसूलिन् इल्ला कानू बिही यस्तह्ज़िऊन (11) कज़ालि-क नस्लुकुहू फ़ी क़ुलूबिल्-मुज्रिमीन (12) ला युअ्मिनू-न बिही व क़द् ख़लत् सुन्नतुल्-अव्वलीन (13) व लौ फ़तह्ना अ़लैहिम् बाबम्-मिनस्समा-इ फ़ज़ल्लू फ़ीहि यअ्रुजून (14) लक़ालू इन्नमा सुक्किरत् अब्सारुना बल् नह्नु क़ौमुम्-मस्हूरून (15) ❁	उनके पास कोई रसूल मगर करते रहे हैं उससे हंसी। (11) इसी तरह बिठा देते हैं हम उसको दिल में गुनाहगारों के। (12) यक़ीन न लायेंगे इस पर और होती आई है रस्म पहलों की। (13) और अगर हम खोल दें उन पर दरवाज़ा आसमान से और सारे दिन उसमें चढ़ते रहें (14) तो भी यही कहेंगे कि बाँध दिया है हमारी निगाह को, नहीं! बल्कि हम लोगों पर जादू हुआ है। (15) ❁

लुग़ात

'शियअ्' जमा (बहुवचन) है शीआ़ की, जिसके मायने किसी शख़्स के पैरोकार व मददगार के भी आते हैं और ऐसे फ़िर्क़े को भी शीआ़ (शिया) कहा जाता है जो विशेष अ़क़ीदों व नज़रियात पर इत्तिफ़ाक़ रखते हों। मुराद यह है कि हमने हर फ़िर्क़े और हर गिरोह के अन्दर रसूल भेजे हैं, इसमें लफ़्ज़ इला (तरफ़) के बजाय 'फ़ी शि-यअ़िल् अव्वलीन' फ़रमाकर इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि हर गिरोह का रसूल उसी गिरोह के लोगों में से भेजा गया ताकि लोगों को उस पर एतिमाद (भरोसा व यक़ीन) करना आसान हो, और वह भी उनकी तबीयतों और मिज़ाज से वाक़िफ़ होकर उनकी इस्लाह (सुधार) के लिये मुनासिब प्रोग्राम बना सके।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! आप उनके झुठलाने से ग़म न कीजिये, क्योंकि यह मामला नबियों के साथ हमेशा से होता चला आया है। चुनाँचे) हमने आप से पहले भी पैग़म्बरों को पहले लोगों के गिरोहों में भेजा था (और उनकी हालत यह थी कि) कोई रसूल उनके पास ऐसा नहीं आया जिसके साथ उन्होंने हंसी-ठट्ठा न किया हो (जो कि झुठलाने ही की बहुत बुरी क़िस्म है। पस जिस तरह उन लोगों के दिलों में यह हंसी-मज़ाक़ पैदा हुआ था) इसी तरह हम यह हंसी और मज़ाक़ उड़ाना इन मुजरिमों (यानी मक्का के काफ़िरों) के दिलों में डाल देते हैं (जिसकी वजह से) ये लोग इस क़ुरआन पर ईमान नहीं लाते, और यह दस्तूर पहलों ही से होता आया है (कि नबियों को झुठलाते रहे हैं, पस आप ग़मगीन न हों) और (इनकी दुश्मनी व मुख़ालफ़त की यह कैफ़ियत है कि फ़रिश्तों का आसमान से आना तो दरकिनार इससे बढ़कर)

अगर (ख़ुद इनको आसमान पर भेज दिया जाये इस तरह से कि) हम इनके लिये आसमान में कोई दरवाज़ा खोल दें फिर ये दिन के वक़्त (जिसमें नींद और ऊँघ वग़ैरह का भी शुब्हा न हो) उस (दरवाज़े) में (से आसमान को) चढ़ जाएँ। तब भी यूँ कह दें कि हमारी नज़रबन्दी कर दी गई थी (जिससे हम अपने को आसमान पर चढ़ता हुआ देख रहे हैं और वास्तव में चढ़ नहीं रहे हैं, और नज़रबन्दी कुछ इसी वाक़िए की विशेषता नहीं) बल्कि हम लोगों पर तो बिल्कुल जादू कर रखा है (अगर हमको इससे बढ़कर भी कोई मोजिज़ा दिखलाया जायेगा वह भी हक़ीक़त में मोजिज़ा न होगा)।

وَلَقَدْ جَعَلْنَا فِي السَّمَآءِ بُرُوْجًا وَّزَيَّنّٰهَا لِلنّٰظِرِيْنَ ﴿١٦﴾

व ल-क़द् जअ़ल्ना फ़िस्समा-इ बुरूजंव्-व ज़य्यन्नाहा लिन्नाज़िरीन (16)	और हमने बनाये हैं आसमानों में बुर्ज और रौनक़ दी उसको देखने वालों की नज़र में। (16)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(पिछली आयतों में इनकार करने वालों की हठधर्मी और दुश्मनी का ज़िक्र था, इन आयतों में जो आगे आ रही हैं अल्लाह जल्ल शानुहू के वजूद, तौहीद, इल्म और क़ुदरत की स्पष्ट दलीलें, आसमान और ज़मीन और इनके बीच की मख़्लूक़ात के हालात और दिखाई देने वाली चीज़ों का बयान किया गया है, जिनमें ज़रा भी ग़ौर किया जाये तो किसी अ़क़्लमन्द को इनकार की मजाल नहीं रहती। इरशाद फ़रमायाः)

और बेशक हमने आसमान में बड़े-बड़े सितारे पैदा किये, और देखने वालों के लिये आसमान को (सितारों से) सजाया।

मआ़रिफ़ व मसाईल

'बुरूजन' बुर्ज की जमा (बहुवचन) है, जो बड़े महल और क़िले वग़ैरह के लिये बोला जाता है। तफ़सीर के इमामों मुजाहिद, क़तादा और अबू सालेह रह. वग़ैरह ने इस जगह बुरूज की तफ़सीर बड़े सितारों से की है। और इस आयत में जो उन बड़े सितारों का आसमान में पैदा करना इरशाद है, यहाँ आसमान से मुराद आसमानी फ़िज़ा है, जिसको आजकल की परिभाषा में ख़ला (SPACE) कहा जाता है। और लफ़्ज़ समा (आसमान) को दोनों मायने में बोला और इस्तेमाल किया जाना आ़म और परिचित है। आसमान के जिर्म (जिस्म व पदार्थ) को भी समा कहा जाता है और आसमान से बहुत नीचे जो आसमानी फ़िज़ा है उसको भी क़ुरआने करीम में जगह-जगह लफ़्ज़ समा से ताबीर किया गया है। और सय्यारों और सितारों का आसमानों के अन्दर नहीं बल्कि आसमानी फ़िज़ा (आसमान व ज़मीन के बीच के ख़ाली हिस्से) में होना इसकी

मुकम्मल तहक़ीक़ क़ुरआने करीम की आयतों से तथा पुराने व नये आसमान व फ़िज़ा के इल्म की तहक़ीक़ से इन्शा-अल्लाह सूरः फ़ुरक़ान की आयत 61:

تَبٰرَكَ الَّذِیْ جَعَلَ فِی السَّمَآءِ بُرُوْجًا وَّجَعَلَ فِیْهَا سِرٰجًا وَّقَمَرًا مُّنِیْرًا○

की तफ़सीर में आयेगी।

وَحَفِظْنٰهَا مِنْ كُلِّ شَیْطٰنٍ رَّجِیْمٍ ۝ اِلَّا مَنِ اسْتَرَقَ السَّمْعَ فَاَتْبَعَهٗ شِهَابٌ مُّبِیْنٌ ۝

व हफ़िज़्नाहा मिन् कुल्लि शैतानिर्-रजीम (17) इल्ला मनिस्त-रक़स्सम्-अ़ फ़अत्ब-अ़हू शिहाबुम्-मुबीन (18)	और महफ़ूज़ रखा हमने उसको हर शैतान मरदूद से। (17) मगर जो चोरी से सुन भागा उसके पीछे पड़ा अंगारा चमकता हुआ। (18)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आसमान को (सितारों के ज़रिये) हर शैतान मरदूद से महफ़ूज़ फ़रमा दिया (कि वहाँ तक उनकी पहुँच नहीं होने पाती) हाँ मगर कोई बात (फ़रिश्तों की) चोरी-छुपे सुन भागे तो उसके पीछे एक चमकता हुआ शोला होता है (और उसके असर से वह शैतान हलाक या बदहवास हो जाता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

शिहाब-ए-साक़िब

इन आयतों से एक तो यह साबित हुआ कि शैतानों की पहुँच आसमानों तक नहीं हो सकती। इब्लीस मरदूद का आदम अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश के वक़्त आसमानों में होना और आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम को धोखे में मुब्तला करना वग़ैरह यह सब आदम अ़लैहिस्सलाम के ज़मीन पर उतरने से पहले के वाक़िआत हैं, उस वक़्त जिन्नात व शैतानों का दाख़िला आसमान में वर्जित और प्रतिबन्धित नहीं था, आदम अ़लैहिस्सलाम के दुनिया में उतरने और शैतान के निकाले जाने के बाद से यह दाख़िला वर्जित हुआ। सूरः जिन्न की आयतों में जो यह बयान हुआ है:

اِنَّا كُنَّا نَقْعُدُ مِنْهَا مَقَاعِدَ لِلسَّمْعِ فَمَنْ يَّسْتَمِعِ الْاٰنَ يَجِدْ لَهٗ شِهَابًا رَّصَدًا○

इससे यह मालूम होता है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनाकर भेजे जाने से पहले तक शैतान आसमानों की ख़बरें फ़रिश्तों की आपसी बातचीत से सुन लिया करते थे, इससे यह लाज़िम नहीं आता कि शैतान आसमानों में दाख़िल होकर सुनते थे।

نَقْعُدُ مِنْهَا مَقَاعِدَ

के अलफ़ाज़ से भी यह मालूम होता है कि चोरों की तरह आसमानी फ़िज़ा में जहाँ-जहाँ बादल होते हैं छुपकर बैठ जाते और सुन लिया करते थे। इन अलफ़ाज़ से ख़ुद भी यही अन्दाज़ा होता है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत से पहले भी जिन्नात व शयातीन का दाख़िला आसमानों में वर्जित ही था मगर आसमानी फ़िज़ा तक पहुँचकर चोरी से कुछ सुन लिया करते थे, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनने के बाद वही (अल्लाह के तरफ़ से आने वाले पैग़ाम) की हिफ़ाज़त का यह अतिरिक्त सामान हुआ कि शैतानों को इस चोरी से भी शिहाब-साक़िब के ज़रिये से रोक दिया गया।

रहा यह सवाल कि आसमानों के अन्दर फ़रिश्तों की बातचीत को आसमानों से बाहर शैतान किस तरह सुन सकते थे? सो यह कोई नामुम्किन चीज़ नहीं, बहुत मुम्किन है कि आसमानी अजराम (आकाशीय जिस्म व पदार्थ) आवाज़ों के सुनने से रुकावट न हों, और यह भी कोई दूर की बात नहीं कि फ़रिश्ते किसी वक़्त आसमानों से नीचे उतरकर आपस में ऐसी गुफ़्तगू करते हों जिसको शैतान सुन भागते थे। सही बुख़ारी में हज़रत सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की हदीस से इसी की ताईद होती है कि फ़रिश्ते आसमान से नीचे जहाँ बादल होते हैं, कभी किसी वक़्त यहाँ उतरते हैं, और आसमानी ख़बरों का आपस में तज़किरा करते हैं, शैतान उसी आसमानी फ़िज़ा में छुपकर ये ख़बरें सुनते थे जिनको शिहाबे-साक़िब के ज़रिये बन्द किया गया। इसकी पूरी तफ़सील इन्शा-अल्लाह सूरः जिन्न में:

اِنَّا كُنَّا نَقْعُدُ مِنْهَا مَقَاعِدَ لِلسَّمْعِ

(सूरः जिन्न आयत 9) की तफ़सीर में आयेगी।

दूसरा मसला इन आयतों में शिहाबे-साक़िब का है। क़ुरआने करीम के इरशादात से मालूम होता है कि ये शिहाबे-साक़िब वही की हिफ़ाज़त के लिये शैतानों को मारने के वास्ते पैदा होते हैं, इनके ज़रिये शैतानों को दफ़ा किया जाता है ताकि वे फ़रिश्तों की बातें न सुन सकें।

इसमें एक मज़बूत इश्काल यह है कि आसमानी फ़िज़ा में शिहाबों का वजूद कोई नई चीज़ नहीं, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के भेजे जाने से पहले भी सितारे टूटने को देखा जाता था, और बाद में भी यह सिलसिला जारी है, तो यह कैसे हो सकता है कि शिहाबे साक़िब शैतानों को दफ़ा करने के लिये पैदा होते हैं, जो कि हुज़ूरे पाक के दौर की ख़ुसूसियत है। इससे तो बज़ाहिर उसी बात को मज़बूती मिलती है जो फ़ल्सफ़ी लोगों का ख़्याल है कि शिहाबे-साक़िब की हक़ीक़त इतनी है कि सूरज की गर्मी से जो बुख़ारात (भाप) ज़मीन से उठते हैं उनमें कुछ आग पकड़ने वाले माद्दे भी होते हैं, ऊपर जाकर जब उनको सूरज या किसी दूसरी वजह से और अधिक गर्मी पहुँचती है तो वो सुलग उठते हैं और देखने वालों को यह महसूस होता है कि कोई सितारा टूटा है। इसी लिये मुहावरों में इसको सितारा टूटने ही से ताबीर किया जाता है। अ़रबी भाषा में भी इसके लिये 'इन्क़िज़ाज़-ए-कौकब' (सितारा टूटने) का लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है जो इसी के जैसे मायनों वाला है।

जवाब यह है कि इन दोनों बातों में कोई टकराव व इख़्तिलाफ़ नहीं, ज़मीन से उठने वाले बुख़ारात सुलग जायें यह भी मुम्किन है और यह भी कोई दूर की बात नहीं कि किसी सितारे या सय्यारे से कोई शोला निकल कर गिरे, और ऐसा होना आम आदात के मुताबिक़ हमेशा से जारी हो, मगर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के भेजे जाने से पहले उन शोलों से कोई ख़ास काम नहीं लिया जाता था, आपकी नुबुव्वत के बाद इन शिहाबी शोलों से यह काम लिया गया कि शैतान जो फ़रिश्तों की बातें चोरी से सुनना चाहें उनको उस शोले से मारा जाये।

अ़ल्लामा आलूसी रह. ने तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में यही वज़ाहत बयान फ़रमाई है और नक़ल किया है कि इमामे हदीस ज़ोहरी रह. से किसी ने पूछा कि क्या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रसूल बनाकर भेजे जाने से पहले भी सितारे टूटते थे? फ़रमाया कि हाँ। इस पर उसने सूरः जिन्न की ऊपर ज़िक्र हुई आयत इसकी काट के लिये पेश की तो फ़रमाया कि शिहाबे साक़िब तो पहले भी थे मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने के बाद जब शैतानों पर सख़्ती की गयी तो उनसे शैतानों के दफ़ा करने का काम लिया गया।

सही मुस्लिम की एक हदीस में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद मौजूद है कि आप सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के एक मजमे में तशरीफ़ रखते थे कि सितारा टूटा, आपने लोगों से पूछा कि तुम जाहिलीयत के ज़माने में यानी इस्लाम से पहले इस सितारा टूटने को क्या समझा करते थे? लोगों ने कहा कि हम यह समझा करते थे कि दुनिया में कोई बड़ा हादसा पैदा होना वाला है या कोई बड़ा आदमी मरेगा, या पैदा होगा। आपने फ़रमाया कि यह ग़लत ख़्याल है, इसका किसी के मरने जीने से कोई ताल्लुक़ नहीं, ये शोले तो शैतानों को दफ़ा करने के लिये फेंके जाते हैं।

कलाम का ख़ुलासा यह है कि शिहाबे साक़िब के बारे में जो कुछ फ़ल्सफ़ी हज़रात ने कहा है वह भी क़ुरआन के ख़िलाफ़ नहीं, और यह भी कुछ बईद नहीं कि ये शोले डायरेक्ट कुछ सितारों से टूटकर गिराये जाते हैं। क़ुरआन का मक़सद दोनों सूरतों में साबित और स्पष्ट है।

وَالْأَرْضَ مَدَدْنٰهَا وَأَلْقَيْنَا فِيهَا رَوَاسِيَ وَأَنْۢبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَّوْزُوْنٍ ﴿١٩﴾ وَجَعَلْنَا لَكُمْ فِيهَا مَعَايِشَ وَمَنْ لَّسْتُمْ لَهٗ بِرٰزِقِيْنَ ﴿٢٠﴾ وَإِنْ مِّنْ شَيْءٍ إِلَّا عِنْدَنَا خَزَآئِنُهٗ وَمَا نُنَزِّلُهٗٓ إِلَّا بِقَدَرٍ مَّعْلُوْمٍ ﴿٢١﴾ وَأَرْسَلْنَا الرِّيٰحَ لَوَاقِحَ فَأَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَأَسْقَيْنٰكُمُوْهُ وَمَآ أَنْتُمْ لَهٗ بِخٰزِنِيْنَ ﴿٢٢﴾ وَإِنَّا لَنَحْنُ نُحْيٖ وَنُمِيْتُ وَنَحْنُ الْوٰرِثُوْنَ ﴿٢٣﴾ وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَقْدِمِيْنَ مِنْكُمْ وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَأْخِرِيْنَ ﴿٢٤﴾ وَإِنَّ رَبَّكَ هُوَ يَحْشُرُهُمْ إِنَّهٗ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٥﴾

वल्अर्-ज़ मदद्नाहा व अल्कैना फ़ीहा रवासि-य व अम्बत्ना फ़ीहा	और ज़मीन को हमने फैलाया और रख दिये उस पर बोझ और उगाई उसमें हर

मिन् कुल्लि शैइम्-मौज़ून (19) व जअ़ल्ना लकुम् फ़ीहा मआ़यि-श व मल्लस्तुम् लहू बिराज़िक़ीन (20) व इम्मिन् शैइन् इल्ला अ़िन्दना ख़ज़ाइनुहू व मा नुनज़्ज़िलुहू इल्ला बि-क़-दरिम्-मअ़्लूम (21) व अर्सल्नर्रिया-ह लवाक़ि-ह फ़-अन्ज़ल्ना मिनस्समा-इ माअन् फ़-अस्क़ैनाकुमूहु व मा अन्तुम् लहू बिख़ाज़िनीन (22) व इन्ना ल-नह्नु नुह्यी व नुमीतु व नह्नुल्-वारिसून (23) व ल-क़द् अ़लिम्नल्-मुस्तक़्दिमी-न मिन्कुम् व ल-क़द् अ़लिम्नल्-मुस्तअ्ख़िरीन (24) व इन्-न रब्ब-क हु-व यह्शुरुहुम्, इन्नहू हकीमुन् अ़लीम (25) ❁	चीज़ अन्दाज़े से। (19) और बना दिये तुम्हारे वास्ते उसमें गुज़ारे के असबाब और वो चीज़ें जिनको तुम रोज़ी नहीं देते। (20) और हर चीज़ के हमारे पास ख़ज़ाने हैं, और उतारते हैं हम निर्धारित अन्दाज़े पर। (21) और चलाईं हमने हवायें रस भरी, फिर उतारा हमने आसमान से पानी फिर तुमको वह पिलाया और तुम्हारे पास नहीं उसका ख़ज़ाना। (22) और हम ही हैं जिलाने वाले और मारने वाले और हम ही हैं पीछे रहने वाले। (23) और हमने जान रखा है आगे बढ़ने वालों को तुम में से और जान रखा है पीछे रहने वालों को। (24) और तेरा रब वही इकट्ठा कर लायेगा उनको, बेशक वही है हिक्मतों वाला ख़बरदार। (25) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने ज़मीन को फैलाया और उस (ज़मीन) में भारी-भारी पहाड़ डाल दिये और उसमें हर किस्म की (ज़रूरत की पैदावार) एक निर्धारित मिक़दार "मात्रा" से उगाई है। और हमने तुम्हारे वास्ते उस (ज़मीन) में रोज़ी के सामान बनाये (जिसमें ज़िन्दगी की ज़रूरतों की तमाम चीज़ें दाख़िल हैं जो खाने-पीने, पहनने और रहने-सहने से संबन्धित हैं) और (यह रोज़ी हासिल करने और गुज़ारे का सामान और ज़िन्दगी की ज़रूरतें सिर्फ़ तुमको ही नहीं दी बल्कि) उनको भी दिया जिनको तुम रोज़ी नहीं देते (यानी वो तमाम मख़्लूक़ात जो ज़ाहिर में भी तुम्हारे हाथ से खाने-पीने और ज़िन्दगी गुज़ारने का सामान नहीं पाते। ज़ाहिर इसलिये कहा गया कि घर के पालतू जानवर बकरी, गाय, बैल, घोड़ा, गधा वग़ैरह भी अगरचे हक़ीक़त के एतिबार से अपनी रोज़ी और गुज़ारे की ज़रूरतें हक़ीक़त में अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से पाते हैं मगर ज़ाहिरी तौर पर उनके खाने-पीने और रिहाईश का इन्तिज़ाम इनसानों के हाथों होता है। इनके अ़लावा तमाम दुनिया के ख़ुश्की और पानी के जानवर, परिन्दे और दरिन्दे ऐसे हैं जिनके गुज़ारे और

रोज़ी के सामान में किसी इनसानी इरादे और अ़मल का कोई दख़ल और शुब्हा भी नहीं पाया जाता, और ये जानवर इतने बेहद व बेशुमार हैं कि इनसान न उन सब को पहचान सकता है न गिन सकता है)।

और जितनी चीज़ें (ज़िन्दगी की ज़रूरतों से संबन्धित) हैं हमारे पास सब ख़ज़ाने के ख़ज़ाने (भरे पड़े) हैं। और हम (अपनी ख़ास हिक्मत के मुताबिक़) उस (चीज़) को एक निर्धारित मिक़्दार "यानी मात्रा" से उतारते रहते हैं। और हम ही हवाओं को भेजते रहते हैं जो कि बादलों को पानी से भर देती हैं, फिर हम ही आसमान से पानी बरसाते हैं, फिर वह पानी तुमको पीने को देते हैं, और तुम उसको ज़ख़ीरा करके रखने वाले न थे (कि अगली बारिश तक उस ज़ख़ीरे को इस्तेमाल करते रहते)। और हम ही हैं कि ज़िन्दा करते हैं और मारते हैं, और (सब के मरने के बाद) हम ही बाक़ी रह जाएँगे। और हम ही जानते हैं तुम में से आगे बढ़ जाने वालों को और हम जानते हैं पीछे रह जाने वालों को, और बेशक आपका रब ही उन सब को (क़ियामत में) जमा फ़रमायेगा (यह इसलिये फ़रमाया कि ऊपर तौहीद साबित हुई है, इसमें तौहीद के इनकार की सज़ा की तरफ़ इशारा कर दिया) बेशक वह हिक्मत वाला है (हर शख़्स को उसके मुनासिब बदला देगा और) इल्म वाला है (सब के आमाल की उसको पूरी ख़बर है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अल्लाह की हिक्मत, गुज़ारे की ज़रूरतों में संतुलन व उचितता

مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَّوْزُوْنٍ○

(हर चीज़ उसके निर्धारित अन्दाज़े से) का एक मतलब तो वही है जो तर्जुमे में लिया गया है, कि हिक्मत के तक़ाज़े के तहत हर उगने वाली चीज़ की एक निर्धारित मात्रा उगाई, जिससे कम हो जाती तो ज़िन्दगी में दुश्वारियाँ पैदा हो जातीं और ज़्यादा हो जाती तो भी मुश्किलें पैदा करती। इनसानी ज़रूरत के गेहूँ और चावल वग़ैरह और बेहतर से बेहतर उम्दा फल अगर इतने ज़्यादा पैदा हो जायें जो इनसानों और जानवरों से खाने-पीने के बाद भी बहुत बचे रहें तो ज़ाहिर है कि वो सड़ेंगे, उनका रखना भी मुश्किल होगा और फेंकने के लिये जगह भी न रहेगी।

इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत में तो यह भी था कि जिन दानों और फलों पर इनसान की ज़िन्दगी मौक़ूफ़ (टिकी हुई) है उनको इतना ज़्यादा पैदा कर देते कि हर शख़्स को हर जगह मुफ़्त मिल जाया करते, और बेफ़िक्री से इस्तेमाल करने के बाद भी उनके बड़े ज़ख़ीरे पड़े रहते, लेकिन यह इनसान के लिये अ़ज़ाब हो जाता, इसलिये एक ख़ास मात्रा में नाज़िल किये गये कि उनकी क़द्र व क़ीमत भी बाक़ी रहे और बेकार भी न बचें।

और 'मिन् कुल्लि शैइम् मौज़ून' का एक मतलब यह भी हो सकता है कि तमाम उगने वाली चीज़ों को अल्लाह तआ़ला ने एक ख़ास मात्रा और संतुलन के साथ पैदा किया है जिससे उसमें हुस्न और दिलकशी पैदा होती है। विभिन्न पेड़ों के तने, शाख़ें, पत्ते, फूल और फल, विभिन्न

साईज़ और विभिन्न शक्ल, विभिन्न रंग और ज़ायक़े के पैदा किये गये जिसके संतुलन और हसीन मन्ज़र से तो इनसान फ़ायदा उठाता है मगर उनकी तफ़सीली हिक्मतों को जानना किसी इनसान के बस की बात नहीं।

तमाम मख़्लूक़ के लिये पानी पहुँचाने और सिंचाई का अल्लाह का अजीब व ग़रीब निज़ाम

وَاَرْسَلْنَا الرِّيٰحَ .... مَآ اَنْتُمْ لَهٗ بِخٰزِنِيْنَ ○

(यानी आयत नम्बर 22 में) अल्लाह की क़ुदरत के उस हकीमाना निज़ाम की तरफ़ इशारा है जिसके ज़रिये रू-ए-ज़मीन पर बसने वाले तमाम इनसान और जानवर, चरिन्दों, परिन्दों, दरिन्दों के लिये ज़रूरत के मुताबिक़ पानी पहुँचाने का ऐसा स्थिर निज़ाम किया गया है कि हर शख़्स को हर जगह हर हाल में अपनी ज़रूरत के मुताबिक़ पीने, नहाने, धोने और खेतियों, दरख़्तों को सींचने के लिये पानी बिना किसी क़ीमत के मिल जाता है, और जो कुछ किसी को कुआँ बनाने या पाईप लगाने पर ख़र्च करना पड़ता है वह अपनी सहूलतें हासिल करने की क़ीमत है, पानी के एक क़तरे की क़ीमत भी कोई अदा नहीं कर सकता, न किसी से माँगी जाती है।

इस आयत में पहले तो इसका ज़िक्र किया गया कि किस तरह अल्लाह की क़ुदरत ने समन्दर के पानी को पूरी ज़मीन पर पहुँचाने का अजीब व ग़रीब निज़ाम बनाया है कि समन्दर में बुख़ारात (भाप व बादल) पैदा फ़रमाये जिनसे बारिश का मवाद (मानसून) पैदा हुआ, ऊपर से हवायें चलाईं, फिर पानी से भरे हुए उन हवाई जहाज़ों (यानी बादलों) को दुनिया के हर गोशे में जहाँ-जहाँ पहुँचाना है पहुँचा दें। फिर अल्लाह के फ़रमान के ताबे जिस ज़मीन पर जितना पानी डालने का हुक्म है उसके मुताबिक़ यह अपने आप काम करने वाले हवाई जहाज़ (बादल) वहाँ पानी बरसा दें।

इस तरह यह समन्दर का पानी ज़मीन के हर गोशे (कोने और इलाक़े) में बसने वाले इनसानों और जानवरों को घर बैठे मिल जाये। इसी निज़ाम (व्यवस्था) में एक अजीब व ग़रीब तब्दीली पानी के ज़ायक़े और दूसरी कैफ़ियतों में पैदा कर दी जाती है, क्योंकि समन्दर के पानी को अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल हिक्मत से इन्तिहाई खारा और ऐसा नमकीन बनाया है कि हज़ारों टन नमक उससे निकाला और इस्तेमाल किया जाता है। हिक्मत इसमें यह है कि यह अज़ीमुश्शान पानी का कुर्रा जिसमें करोड़ों क़िस्म के जानवर रहते हैं और उसी में मरते और सड़ते हैं और सारी ज़मीन का गन्दा पानी आख़िरकार उसी में जाकर पड़ता है, अगर यह पानी मीठा होता तो एक दिन में सड़ जाता, और इसकी बदबू इतनी ज़्यादा होती कि ख़ुश्की में रहने वालों की तन्दुरुस्ती और ज़िन्दगी भी मुश्किल हो जाती। इसलिये क़ुदरत ने इसको ऐसा तेज़ाबी खारा बना दिया कि दुनिया भर की ग़िलाज़तें (गंदगियाँ और कूड़ा-करकट) उसमें पहुँचकर भस्म हो जाती हैं। ग़र्ज़ कि इस हिक्मत की बिना पर समन्दर का पानी खारा बल्कि कड़वा बनाया

गया जो न पिया जा सकता है और न उससे प्यास बुझ सकती है। क़ुदरत के निज़ाम ने जो पानी के हवाई जहाज़ बादलों की शक्ल में तैयार किये उनको सिर्फ़ समन्दरी पानी का ख़ज़ाना ही नहीं बनाया बल्कि मानूसन उठने से लेकर ज़मीन पर बरसने तक उसमें ऐसे बदलाव बग़ैर किसी ज़ाहिरी मशीन के पैदा कर दिये कि उस पानी का नमक अलग होकर मीठा पानी बन गया। सूरः मुर्सलात में इसकी तरफ़ इशारा फ़रमाया है:

وَاَسْقَيْنٰكُمْ مَّآءً فُرَاتًا ○

इसमें लफ़्ज़ फ़ुरात के मायने हैं ऐसा मीठा पानी जिससे प्यास बुझे। मायने यह हैं कि हम ने बादलों को क़ुदरती मशीनों से गुज़ार कर समन्दर के खारे और कड़वे पानी को तुम्हारे पीने के लिये शीरीं (मीठा) बना दिया।

सूरः वाक़िआ में इसी मज़मून को इरशाद फ़रमाया है:

اَفَرَءَيْتُمُ الْمَآءَ الَّذِيْ تَشْرَبُوْنَ ○ ءَاَنْتُمْ اَنْزَلْتُمُوْهُ مِنَ الْمُزْنِ اَمْ نَحْنُ الْمُنْزِلُوْنَ ○ لَوْ نَشَآءُ جَعَلْنٰهُ اُجَاجًا فَلَوْلَا تَشْكُرُوْنَ ○

"भला देखो तो पानी को जो तुम पीते हो। क्या तुमने उतारा उसको बादल से या हम हैं उतारने वाले। अगर हम चाहें कर दें उसको खारा फिर क्यों नहीं एहसान मानते।"

यहाँ तक तो अल्लाह की क़ुदरत की यह करिश्मा साज़ी देखी कि समन्दर के पानी को मीठे पानी में तब्दील करके पूरे रू-ए-ज़मीन पर बादलों के ज़रिये किस बेहतरीन व्यवस्था के साथ पहुँचाया कि हर ख़ित्ते के न सिर्फ़ इनसानों को बल्कि उन जानवरों को भी जो इनसानों की मालूमात व खोज से बाहर हैं घर बैठे पानी पहुँचा दिया, और बिल्कुल मुफ़्त बल्कि मजबूर करके ज़बरदस्ती के साथ पहुँचा।

लेकिन इनसान और जानवरों का मसला सिर्फ़ इतनी बात से हल नहीं हो जाता, क्योंकि पानी उनकी ऐसी ज़रूरत है जिसकी आवश्यकता हर दिन बल्कि हर वक़्त है, इसलिये उनकी रोज़मर्रा की ज़रूरत को पूरा करने का एक तरीक़ा तो यह था कि हर जगह साल के बारह महीने हर दिन बारिश हुआ करती, लेकिन इस सूरत में उनकी पानी की ज़रूरत तो दूर हो जाती मगर दूसरी आर्थिक ज़रूरतों में कितना ख़लल आता, इसका अन्दाज़ा किसी तजुर्बेकार के लिये मुश्किल नहीं। साल भर के हर दिन की बारिश तन्दुरुस्ती पर क्या असर डालती और कारोबार और चलने-फिरने व सफ़र करने में क्या बाधा पैदा करती।

दूसरा तरीक़ा यह था कि साल भर के ख़ास-ख़ास महीनों में इतनी बारिश हो जाये कि उसका पानी बाक़ी महीनों के लिये काफ़ी हो जाये, मगर इसके लिये ज़रूरत होती कि हर शख़्स का एक कोटा मुक़र्रर करके उसके सुपुर्द किया जाये कि वह अपने कोटे और हिस्से का पानी ख़ुद अपनी हिफ़ाज़त में रखे।

अन्दाज़ा लगाईये कि अगर ऐसा किया जाता तो हर इनसान इतनी टंकियाँ या बरतन वग़ैरह कहाँ से लाता जिनमें तीन या छह महीने की ज़रूरत का पानी जमा करके रख ले। और अगर

वह किसी तरह ऐसा कर भी लेता तो ज़ाहिर है कि चन्द दिन के बाद यह पानी सड़ जाता और पीने बल्कि इस्तेमाल करने के भी क़ाबिल न रहता, इसलिये अल्लाह की क़ुदरत ने इसके बाक़ी रखने और ज़रूरत के वक़्त हर जगह मिल जाने का एक दूसरा अ़जीब व ग़रीब निज़ाम बनाया कि जो पानी बरसाया जाता है उसका कुछ हिस्सा तो फ़ौरी तौर पर पेड़-पौधों, खेतियों और इनसानों व जानवरों को सैराब करने में काम आ ही जाता है, कुछ खुले तालाबों, झीलों में महफ़ूज़ हो जाता है, और उसके बहुत बड़े हिस्से को बर्फ़ की शक्ल में जमा हुआ समन्दर बनाकर पहाड़ों की चोटियों पर लाद दिया जाता है, जहाँ तक न गर्द व ग़ुबार की पहुँच है न किसी गन्दगी की। फिर अगर वह पानी बहने वाला होने की सूरत में रहता तो हवा के ज़रिये कुछ गर्द व ग़ुबार या दूसरी ख़राब चीज़ें उसमें पहुँच जाने का ख़तरा रहता, मगर क़ुदरत ने उस पानी के बड़े और विशाल भण्डार को एक जमा हुआ समन्दर (बर्फ़) बनाकर पहाड़ों पर लाद दिया जहाँ से थोड़ा-थोड़ा रिस कर वह पहाड़ों की रगों में जम जाता है, और फिर चश्मों की सूरत में हर जगह पहुँच जाता है और जहाँ ये चश्मे भी नहीं हैं तो वहाँ ज़मीन की तह में यह पानी इनसानी रगों की तरह ज़मीन के हर ख़ित्ते पर बहता है और कुआँ खोदने से बरामद होने लगता है।

खुलासा यह है कि पानी पहुँचाने का यह क़ुदरती निज़ाम हज़ारों नेमतें अपने अन्दर लिये हुए है। अव्वल तो पानी को पैदा करना एक बड़ी नेमत है, फिर बादलों के ज़रिये उसको ज़मीन के हर ख़ित्ते पर पहुँचाना दूसरी नेमत है, फिर उसको इनसान के पीने के क़ाबिल बना देना तीसरी नेमत है, फिर इनसान को उसके पीने का मौक़ा देना चौथी नेमत है, फिर उस पानी को ज़रूरत के मुताबिक़ जमा और महफ़ूज़ रखने की स्थिर व्यवस्था पाँचवीं नेमत है, फिर इनसान को उससे पीने और सैराब होने का मौक़ा देना छठी नेमत है, क्योंकि पानी के मौजूद होते हुए भी ऐसी आफ़तें हो सकती हैं कि उनकी वजह से आदमी पीने पर क़ादिर न हो। क़ुरआने करीम की आयतः

فَاَسْقَيْنٰكُمُوْهُ وَمَآ اَنْتُمْ لَهٗ بِخٰزِنِيْنَ٥

में अल्लाह की इन्हीं नेमतों की तरफ़ इशारा और तंबीह की गई है। वाक़ई अल्लाह तआ़ला क्या ही उम्दा पैदा करने और बनाने वाला है।

नेक कामों में आगे बढ़ने और पीछे रहने में दर्जों का फ़र्क़

وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَقْدِمِيْنَ مِنْكُمْ وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَاْخِرِيْنَ٥

(यानी आयत नम्बर 24) के बारे में मुस्तक़्दिमीन (आगे बढ़ने वालों) और मुस्तअ्ख़िरीन (पीछे रहने वालों) की चन्द तफ़सीरें सहाबा व ताबिईन और तफ़सीर के इमामों से अलग-अलग मन्क़ूल हैं:

1. मुस्तक़्दिमीन (आगे बढ़ने वाले) वे लोग हैं जो अब तक पैदा हो चुके हैं और

मुस्तअ्ख़िरीन (पीछे रहने वाले) वे जो अभी पैदा नहीं हुए। (क़तादा व इक्रिमा)

2. मुस्तक़्दिमीन से मुराद मौत पा जाने वाले हैं और मुस्तअ्ख़िरीन से वे लोग जो अब ज़िन्दा हैं। (इब्ने अ़ब्बास, ज़ह्हाक)

3. मुस्तक़्दिमीन से मुराद उम्मते मुहम्मदिया से पहले हज़रात हैं और मुस्तअ्ख़िरीन से उम्मते मुहम्मदिया। (मुजाहिद)

4. मुस्तक़्दिमीन से मुराद नेकी व भलाई करने वाले हैं और मुस्तअ्ख़िरीन से नाफ़रमान व ग़ाफ़िल लोग। (हसन व क़तादा)

5. मुस्तक़्दिमीन वे लोग हैं जो नमाज़ की सफ़ों या जिहाद की सफ़ों और दूसरे नेक कामों में आगे रहने वाले हैं, और मुस्तअ्ख़िरीन वे जो इन चीज़ों में पिछली सफ़ों में रहने वाले और देर करने वाले हैं। हसन बसरी, सईद बिन मुसैयब, क़ुर्तुबी, शअ़बी वग़ैरह तफ़सीर के इमामों की यही तफ़सीर है। और यह ज़ाहिर है कि दर हक़ीक़त इन अक़वाल में कोई ख़ास भिन्नता और टकराव नहीं, सब जमा हो सकते हैं, क्योंकि अल्लाह जल्ल शानुहू का कामिल और हर चीज़ को घेरने वाला इल्म इन तमाम क़िस्मों के 'मुस्तक़्दिमीन' व 'मुस्तअ्ख़िरीन' पर हावी है।

इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में फ़रमाया कि इसी आयत से नमाज़ में पहली सफ़ और शुरू वक़्त में नमाज़ अदा करने की फ़ज़ीलत साबित होती है, जैसा कि हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर लोगों को मालूम हो जाता कि अज़ान कहने और नमाज़ की पहली सफ़ में खड़े होने की कितनी बड़ी फ़ज़ीलत है तो तमाम आदमी इसकी कोशिश में लग जाते कि पहली ही सफ़ में खड़े हों और सब के लिये जगह न होती तो क़ुरा-अन्दाज़ी करना (यानी पर्ची निकालनी) पड़ती।

इमाम क़ुर्तुबी ने इसके साथ हज़रत कअ़ब का यह क़ौल भी नक़ल किया है कि इस उम्मत में कुछ ऐसे लोग भी हैं कि जब वे सज्दे में जाते हैं तो जितने आदमी उनके पीछे हैं सब की मग़फ़िरत हो जाती है। इसी लिये हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु आख़िरी सफ़ में रहना पसन्द करते थे कि शायद अगली सफ़ों में अल्लाह का कोई बन्दा इस शान का हो तो उसकी बरकत से मेरी मग़फ़िरत भी हो जाये।

और ज़ाहिर यह है कि असल फ़ज़ीलत तो पहली सफ़ ही में है, जैसा कि क़ुरआन की आयत और हदीस की वज़ाहतों से साबित हुआ, लेकिन जिस शख़्स को किसी वजह से पहली सफ़ में जगह न मिली तो उसको भी एक दर्जे में फ़ज़ीलत यह हासिल रहेगी कि शायद अगली सफ़ों के किसी नेक बन्दे की बदौलत उसकी भी मग़फ़िरत हो जाये, और इस ज़िक्र हुई आयत में जैसे नमाज़ की पहली सफ़ की फ़ज़ीलत साबित हुई इसी तरह जिहाद की पहली सफ़ की अफ़ज़लियत भी साबित हो गई।

وَلَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنْ صَلْصَالٍ مِّنْ حَمَاٍ مَّسْنُوْنٍ ۝
وَالْجَآنَّ خَلَقْنٰهُ مِنْ قَبْلُ مِنْ نَّارِ السَّمُوْمِ ۝ وَاِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنِّیْ خَالِقٌۢ بَشَرًا مِّنْ
صَلْصَالٍ مِّنْ حَمَاٍ مَّسْنُوْنٍ ۝ فَاِذَا سَوَّيْتُهٗ وَنَفَخْتُ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِیْ فَقَعُوْا لَهٗ سٰجِدِيْنَ ۝ فَسَجَدَ الْمَلٰٓئِكَةُ
كُلُّهُمْ اَجْمَعُوْنَ ۝ اِلَّآ اِبْلِيْسَ ؕ اَبٰٓى اَنْ يَّكُوْنَ مَعَ السّٰجِدِيْنَ ۝ قَالَ يٰٓاِبْلِيْسُ مَا لَكَ اَلَّا تَكُوْنَ مَعَ
السّٰجِدِيْنَ ۝ قَالَ لَمْ اَكُنْ لِّاَسْجُدَ لِبَشَرٍ خَلَقْتَهٗ مِنْ صَلْصَالٍ مِّنْ حَمَاٍ مَّسْنُوْنٍ ۝ قَالَ فَاخْرُجْ مِنْهَا
فَاِنَّكَ رَجِيْمٌ ۝ وَّاِنَّ عَلَيْكَ اللَّعْنَةَ اِلٰى يَوْمِ الدِّيْنِ ۝ قَالَ رَبِّ فَاَنْظِرْنِیْٓ اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُوْنَ ۝
قَالَ فَاِنَّكَ مِنَ الْمُنْظَرِيْنَ ۝ اِلٰى يَوْمِ الْوَقْتِ الْمَعْلُوْمِ ۝ قَالَ رَبِّ بِمَآ اَغْوَيْتَنِیْ لَاُزَيِّنَنَّ لَهُمْ
فِی الْاَرْضِ وَلَاُغْوِيَنَّهُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝ اِلَّا عِبَادَكَ مِنْهُمُ الْمُخْلَصِيْنَ ۝ قَالَ هٰذَا صِرَاطٌ عَلَیَّ مُسْتَقِيْمٌ ۝
اِنَّ عِبَادِیْ لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنٌ اِلَّا مَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْغٰوِيْنَ ۝ وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمَوْعِدُهُمْ
اَجْمَعِيْنَ ۝ لَهَا سَبْعَةُ اَبْوَابٍ ؕ لِكُلِّ بَابٍ مِّنْهُمْ جُزْءٌ مَّقْسُوْمٌ ۝

व ल-क़द् ख़लक़्नल्-इन्सा-न मिन् सल्सालिम् मिन् ह-मइम्-मस्नून (26) वल्जान्-न ख़लक़्नाहु मिन् क़ब्लु मिन्-नारिस्समूम (27) व इज़् क़ा-ल रब्बु-क लिल्मलाइ-कति इन्नी ख़ालिक़ुम् ब-शरम्-मिन् सल्सालिम् मिन् ह-मइम्-मस्नून (28) फ़-इज़ा सव्वैतुहू व नफ़ख़्तु फ़ीहि मिर्रूही फ़-क़अ़ू लहू साजिदीन (29) फ़-स-जदल्-मलाइ-कतु कुल्लुहुम् अज्मअ़ून (30) इल्ला इब्ली-स, अबा अंय्यकू-न मअ़स्साजिदीन (31) क़ा-ल या इब्लीसु मा ल-क अल्ला तकू-न

और बनाया हमने आदमी को खनखनाते सने हुए गारे से। (26) और जिन्न को बनाया हमने उससे पहले लू की आग से। (27) और जब कहा तेरे रब ने फ़रिश्तों को मैं बनाऊँगा एक बशर खनखनाते सने हुए गारे से। (28) फिर जब ठीक करूँ उसको और फूँक दूँ उसमें अपनी जान से तो गिर पड़ो उसके आगे सज्दा करते हुए। (29) तब सज्दा किया उन फ़रिश्तों ने सब ने मिलकर (30) मगर इब्लीस ने न माना कि साथ हो सज्दा करने वालों के। (31) फ़रमाया- ऐ इब्लीस! क्या हुआ तुझको कि साथ न हुआ सज्दा करने

मअ़स्साजिदीन (32) क़ा-ल लम् अकुल्-लिअस्जु-द लि-ब-शरिन् ख़ालक्तहू मिन् सल्सालिम्-मिन् ह-मइम्-मस्नून (33) क़ा-ल फ़ख़्रुज् मिन्हा फ़-इन्न-क रजीम (34) व इन्-न अ़लैकल्लअ़्न-त इला यौमिद्दीन (35) क़ा-ल रब्बि फ़-अन्ज़िर्नी इला यौमि युब्अ़सून (36) क़ा-ल फ़-इन्न-क मिनल्-मुन्ज़रीन (37) इला यौमिल् वक़्तिल्-मअ़्लूम (38) क़ा-ल रब्बि बिमा अग़्वैतनी ल-उज़य्यिनन्-न लहुम् फ़िल्अर्ज़ि व ल-उग़्वियन्नहुम् अज्मअ़ीन (39) इल्ला अ़िबाद-क मिन्हुमुल्-मुख़्लसीन (40) क़ा-ल हाज़ा सिरातुन् अ़लय्-य मुस्तक़ीम (41) इन्-न अ़िबादी लै-स ल-क अ़लैहिम् सुल्तानुन् इल्ला मनित्त-ब-अ़-क मिनल्-ग़ावीन (42) व इन्-न जहन्न-म लमौअिदुहुम् अज्मअ़ीन (43) लहा सब्-अ़तु अब्वाबिन्, लिकुल्लि बाबिम् मिन्हुम् जुज़्उम्-मक़्सूम (44) ❁

वालों के? (32) बोला मैं वह नहीं कि सज्दा करूँ एक बशर को जिसको तूने बनाया खनखनाते सने हुए गारे से। (33) फ़रमाया तो तू निकल यहाँ से तुझ पर मार है। (34) और तुझ पर फटकार है उस दिन तक कि इन्साफ़ हो। (35) बोला ऐ रब! तू मुझको ढील दे उस दिन तक कि मुर्दे ज़िन्द हों। (36) फ़रमाया तो तुझको ढील दी (37) उसी मुक़र्ररा वक़्त के दिन तक। (38) बोला ऐ रब! जैसा कि तूने मुझको राह से खो दिया मैं भी उन सब को बहारें दिखलाऊँगा ज़मीन में, और राह से खो दूँगा उन सब को (39) मगर जो तेरे चुने हुए बन्दे हैं। (40) फ़रमाया यह राह है मुझ तक सीधी। (41) जो मेरे बन्दे हैं तेरा उन पर कुछ ज़ोर नहीं, मगर जो तेरी राह चला बहके हुओं में। (42) और दोज़ख़ पर वादा है उन सब का। (43) उसके सात दरवाज़े हैं, हर दरवाज़े के वास्ते उनमें से एक फ़िर्क़ा है बाँटा हुआ। (44) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने इनसान को (यानी इस नस्ल की जड़ आदम अ़लैहिस्सलाम को) बजती हुई मिट्टी

से जो कि सड़े हुए गारे की बनी हुई थी, पैदा किया (यानी पहले गारे को ख़ूब ख़मीर किया कि उसमें बू आने लगी, फिर वह ख़ुश्क हो गया कि वह ख़ुश्क होने से खन-खन बोलने लगा जैसा कि मिट्टी के बरतन चुटकी मारने से बजा करते हैं, फिर उस ख़ुश्क गारे से आदम का पुतला बनाया जो बड़ी क़ुदरत की निशानी है)। और जिन्न को (यानी इस नस्ल की असल जिन्नों के बाप को) उससे पहले (यानी आदम अ़लैहिस्सलाम से पहले) आग से कि वह (अपनी बहुत ज़्यादा नर्मी व बारीकी की वजह से) एक गर्म हवा थी, पैदा कर चुके थे (मतलब यह कि चूँकि उस आग में धुएँ के अंश और हिस्से न थे इसलिये वह हवा की तरह नज़र न आती थी, क्योंकि आग का नज़र आना गाढ़े और भारी अंगों के उसमें मिलने से होता है, इसको दूसरी आयत में इस तरह फ़रमाया है 'व ख़-लक़ल् जान्-न मिम्-मारिजिम् मिन्-नार')।

और वह वक़्त याद करने के क़ाबिल है जब आपके रब ने फ़रिश्तों से (इरशाद) फ़रमाया कि मैं एक बशर को (यानी उसके पुतले को) बजती हुई मिट्टी से जो कि सड़े हुए गारे से बनी होगी, पैदा करने वाला हूँ। सो जब मैं उसको (यानी उसके बदनी हिस्सों को) पूरा बना चुकूँ और उसमें अपनी (तरफ़ से) जान डाल दूँ तो तुम सब उसके सामने सज्दे में गिर पड़ना। सो (जब अल्लाह तआ़ला ने उसको बना लिया तो) सारे के सारे फ़रिश्तों ने (आदम अ़लैहिस्सलाम को) सज्दा किया, मगर इब्लीस ने, कि उसने इस बात को क़ुबूल नहीं किया कि सज्दा करने वालों में शामिल हो (यानी सज्दा न किया)। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि ऐ इब्लीस! तुझको कौनसी बात इसका कारण बनी कि तू सज्दा करने वालों में शामिल न हुआ? कहने लगा कि मैं ऐसा नहीं कि बशर "आदमी" को सज्दा करूँ जिसको आपने बजती हुई मिट्टी से जो कि सड़े हुए गारे की बनी है, पैदा किया है (यानी ऐसे हक़ीर व ज़लील माद्दे से बनाया गया है क्योंकि मैं आग के नूरानी माद्दे से पैदा हुआ हूँ तो नूरानी होकर अंधेरे वाली चीज़ को कैसे सज्दा करूँ)। इरशाद हुआ कि तो (अच्छा फिर) आसमान से निकल, क्योंकि बेशक तू (इस हरकत से) मरदूद हो गया। और बेशक तुझ पर (मेरी) लानत क़ियामत तक रहेगी (जैसा कि एक दूसरी आयत में है 'अ़लै-क लअ़्नती' यानी क़ियामत तक तू मेरी रहमत से दूर रहेगा, तौबा की तौफ़ीक़ न होगी और मक़बूल व मरहूम न होगा। और ज़ाहिर है कि क़ियामत तक जो रहमत का हक़दार न हो तो फिर क़ियामत में तो रहम व करम को पाने वाला होने का गुमान व संभावना ही नहीं। पस जिस वक़्त तक गुंजाईश व संभावना थी उसकी नफ़ी कर दी, और इसमें यह शुब्हा न किया जाये कि इसमें तो मोहलत माँगने से पहले ही मोहलत देने का वायदा हो गया, बात यह है कि मक़सद क़ियामत तक उम्र देना नहीं है कि यह शुब्हा हो, बल्कि मतलब यह है कि दुनिया की ज़िन्दगी में तो मलऊन है अगरचे वह क़ियामत तक न खिंचे)।

कहने लगा (कि अगर मुझको आदम की वजह से मरदूद किया है) तो फिर मुझको (मरने से) मोहलत दीजिये क़ियामत के दिन तक (ताकि उनसे और उनकी औलाद से ख़ूब बदला लूँ)। इरशाद हुआ (जब तू मोहलत माँगता है) तो (जा) तुझको निर्धारित वक़्त की तारीख़ तक मोहलत दी गई। कहने लगा कि ऐ मेरे रब! इस सबब से कि आपने मुझको (एक तक़दीरी हुक्म

के तहत) गुमराह किया है मैं क़सम खाता हूँ कि मैं दुनिया में उनकी (यानी आदम और औलादे आदम की) नज़र में गुनाहों को पसन्दीदा और अच्छा करके दिखलाऊँगा, और उन सब को गुमराह करूँगा, सिवाय आपके उन बन्दों के जो उनमें से चुन लिये गये हैं (यानी आपने उनको मेरे असर से महफ़ूज़ कर रखा है)। इरशाद हुआ कि (हाँ) यह (चुना जाना जिसका तरीक़ा नेक आमाल और अल्लाह की कामिल फ़रमाँबरदारी है) एक सीधा रास्ता है जो मुझ तक पहुँचता है (यानी इस पर चलकर हमारा ख़ास और नज़दीकी हो जाता है)। वाक़ई मेरे इन (ज़िक्र हुए) बन्दों पर तेरा ज़रा भी बस न चलेगा, हाँ मगर जो गुमराह लोगों में से तेरी राह पर चलने लगे (तो चले)। और (जो लोग तेरी राह पर चलेंगे) उन सब का ठिकाना जहन्नम है। जिसके सात दरवाज़े हैं, हर दरवाज़े (में से जाने) के लिये उन लोगों के अलग-अलग हिस्से हैं (कि कोई किसी दरवाज़े से जायेगा कोई किसी दरवाज़े से)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसानी बदन में रूह का फूँकना और उसको फ़रिश्तों के लिये क़ाबिले सज्दा बनाने की मुख़्तसर तहक़ीक़

रूह कोई जिस्म है या जौहर-ए-मुजर्रद (सिर्फ़ माद्दा) इसमें उलेमा व फ़ल्सफ़ी हज़रात का मतभेद पुराने ज़माने से चला आता है। शैख़ अ़ब्दुर्रऊफ़ मुनावी ने फ़रमाया कि इसमें विद्वानों, विज्ञानियों और फ़ल्सफ़ी हज़रात के अक़वाल एक हज़ार तक पहुँचते हैं, मगर सब अन्दाज़े और क़ियास ही हैं, किसी को यक़ीनी नहीं कहा जा सकता। इमाम ग़ज़ाली, इमाम राज़ी और उमूमन सूफ़िया और फ़ल्सफ़ी हज़रात का क़ौल यह है कि वह जिस्म नहीं बल्कि जौहर-ए-मुजर्रद है। इमाम राज़ी ने इसकी बारह दलीलें पेश की हैं।

मगर उम्मत के उलेमा की अक्सरियत और बड़ी जमाअ़त रूह को एक लतीफ़ जिस्म क़रार देती है। **नफ़्ख़** के मायने फूँक मारने के हैं अगर अक्सर उलेमा के क़ौल को लिया जाये और रूह को एक लतीफ़ जिस्म क़रार दिया जाये तो उसको फूँकना ज़ाहिर है, और जौहर-ए-मुजर्रद मान लिया जाये तो फूँकने के मायने उसका बदन से ताल्लुक़ पैदा कर देना होगा।

(तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

रूह और नफ़्स के मुताल्लिक़ हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह रह. की तहक़ीक़

यहाँ इस लम्बी-चौड़ी बहस को छोड़कर एक ख़ास तहक़ीक़ को काफ़ी समझा जाता है जो तफ़सीर-ए-मज़हरी में क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तहरीर फ़रमाई है।

हज़रत क़ाज़ी साहिब फ़रमाते हैं कि रूह की दो क़िस्म हैं- उलवी और सिफ़ली। उलवी रूह

माद्दे से मुजर्रद (ख़ाली) अल्लाह तआ़ला की एक मख़्लूक़ है क्योंकि वह अ़र्श से ज़्यादा लतीफ़ है और उलवी रूह कश्फ़ी नज़र से ऊपर नीचे पाँच दर्जों में महसूस की जाती है, वो पाँच ये हैं: दिल, रूह, सिर्र, ख़फ़ी, अख़्फ़ा और ये सब आ़लम-ए-अम्र के लताईफ़ में से हैं, जिसकी तरफ़ क़ुरआने करीम ने इशारा फ़रमाया है:

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّیْ

(कि रूह मेरे रब के हुक्म से है। सूरः बनी इस्राईल आयत 85)

और सिफ़ली रूह वह लतीफ़ बुख़ार है जो इनसानी बदन के चारों तत्व आग, पानी, मिट्टी, हवा से पैदा होता है, और इसी सिफ़ली रूह को नफ़्स कहा जाता है।

अल्लाह तआ़ला ने इस सिफ़ली रूह को जिसे नफ़्स कहा जाता है ऊपर ज़िक्र हुई उलवी रूहों का आईना बना दिया है। जिस तरह आईना जब सूरज के सामने किया जाये तो सूरज के बहुत दूर होने के बावजूद उसमें सूरज का अ़क्स आ जाता है और रोशनी की वजह से वह भी सूरज की तरह चमक उठता है और सूरज की हरारत भी उसमें आ जाती है जो कपड़े को जला सकती है। इसी तरह उलवी रूहें अगरचे अपने तजर्रुद (माद्दे से ख़ाली होने) की वजह से बहुत बुलन्द व बाला और बहुत दूरी पर हैं मगर उनका अ़क्स इस सिफ़ली रूह के आईने में आकर उलवी रूहों की कैफ़ियतें व आसार इसमें मुन्तकिल कर देता है और यही आसार जो नफ़्सों में पैदा हो जाते हैं हर-हर फ़र्द के लिये रूहों के अंश और हिस्से कहलाते हैं।

फिर यह सिफ़ली रूह जिसको नफ़्स कहते हैं अपनी उन कैफ़ियतों व आसार के साथ जिनको उलवी रूहों से हासिल किया है, इसका ताल्लुक़ इनसानी बदन में सबसे पहले गोश्त के लोथड़े दिल से होता है और इस ताल्लुक़ ही का नाम हयात और ज़िन्दगी है। सिफ़ली रूह के ताल्लुक़ से सबसे पहले इनसान के दिल में ज़िन्दगी और वे उलूम व एहसासात पैदा होते हैं जिनको नफ़्स ने उलवी रूहों से हासिल किया है। यह सिफ़ली रूह पूरे बदन में फैली हुई बारीक रगों में घुस जाती है, जिनको शराईन कहा जाता है, और इस तरह वह पूरे इनसानी बदन के हर हिस्से में पहुँच जाती है।

सिफ़ली रूह के इनसानी बदन में समा जाने ही को रूह फूँकने से ताबीर किया गया है क्योंकि यह किसी चीज़ में फूँक भरने से बहुत मुशाबा (मिलती-जुलती) है।

और ऊपर बयान हुई इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने रूह को अपनी तरफ़ मन्सूब करके 'मिर्रूही' इसलिये फ़रमाया है कि तमाम मख़्लूक़ात में इनसानी रूह का सम्मानित व आला रुतबे वाला होना वाज़ेह हो जाये। क्योंकि वह बग़ैर माद्दे के सिर्फ़ अल्लाह के हुक्म से पैदा हुई है, तथा इसमें अल्लाह की तजल्लियात (नूरानी किरनों) को क़ुबूल करने की ऐसी क़ाबलियत है जो इनसान के अ़लावा किसी दूसरे जानदार की रूह में नहीं है।

और इनसान की पैदाईश में अगरचे ग़ालिब तत्व मिट्टी का है और इसी लिये क़ुरआने करीम में इनसान की पैदाईश को मिट्टी की तरफ़ मन्सूब किया गया है, लेकिन हक़ीक़त में वह दस चीज़ों का जामे है, जिनमें पाँच आ़लम-ए-ख़ल्क़ की हैं और पाँच आ़लम-ए-अम्र की। आ़लम-ए-

ख़ल्क़ के चार तत्व आग, पानी, मिट्टी, हवा और पाँचवाँ इन चारों से पैदा होने वाला लतीफ़ बुख़ार जिसको सिफ़ली रूह या नफ़्स कहा जाता है, और आलम-ए-अम्र की पाँच चीज़ें वो हैं जिनका ज़िक्र ऊपर किया गया है यानी दिल, रूह, सिर्र, ख़फ़ी, अख़्फ़ा।

इसी पूर्णता के सबब इनसान अल्लाह की ख़िलाफ़त का पात्र बना, और मारिफ़त के नूर और इश्क़ व मुहब्बत की आग का बरदाश्त करने वाला हुआ, जिसका नतीजा बिना कैफ़ियत के अल्लाह के साथ (यानी ताईद व मदद) का हासिल होना है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اَلْمَرْءُ مَعَ مَنْ اَحَبَّ

"यानी हर इनसान उस फ़र्द के साथ होगा जिससे उसको मुहब्बत है।"

और इनसान में अल्लाह की तजल्लियों (मारिफ़त व नूर) की क़ाबलियत और अल्लाह का साथ (यानी उसकी मदद व ताईद) नसीब होने का जो दर्जा इसको हासिल है उसी की वजह से अल्लाह की हिक्मत का तक़ाज़ा यह हुआ कि इसको फ़रिश्तों से सज्दा कराया जाये। चुनाँचे इरशाद हुआ:

فَقَعُوْا لَهٗ سٰجِدِيْنَ○

सज्दे का हुक्म फ़रिश्तों को हुआ था इब्लीस उनके साथ होने की वजह से उसमें शामिल क़रार दिया गया

सूरः आराफ़ में इब्लीस को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया है:

مَا مَنَعَكَ اَلَّا تَسْجُدَ اِذْ اَمَرْتُكَ.

इससे मालूम होता है कि सज्दे का हुक्म फ़रिश्तों के साथ इब्लीस को भी दिया गया था, इसी लिये इस सूरत की जो आयतें अभी आपने पढ़ी हैं जिनसे बज़ाहिर इस हुक्म का फ़रिश्तों के लिये ख़ास होना मालूम होता है, इसका मतलब यह हो सकता है कि डायरेक्ट तौर पर यह हुक्म फ़रिश्तों को दिया गया है मगर इब्लीस भी चूँकि फ़रिश्तों के अन्दर मौजूद था इसलिये उन्हीं के ताबे क़रार देकर वह भी इस हुक्म में शामिल था। क्योंकि आदम अ़लैहिस्सलाम के सम्मान व इकराम के लिये जब अल्लाह तआ़ला की इतनी बड़ी बुज़ुर्ग मख़्लूक़ फ़रिश्तों को हुक्म दिया गया तो दूसरी मख़्लूक़ का उनके ताबे होकर उस हुक्म में दाख़िल होना बिल्कुल ज़ाहिर था, इसी लिये इब्लीस ने जवाब में यह नहीं कहा कि मुझे सज्दे का हुक्म दिया ही नहीं गया तो तामील न करने का जुर्म मुझ पर आ़यद नहीं होता। और शायद क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़:

اَبٰٓى اَنْ يَّكُوْنَ مَعَ السّٰجِدِيْنَ○

(कि सज्दा करने वालों के साथ सज्दा करने से मना कर दिया) में भी इसकी तरफ़ इशारा हो कि यह नहीं फ़रमाया कि उसने सज्दा नहीं किया, बल्कि यह फ़रमाया कि सज्दा करने वालों

के साथ रहने और हुक्म की तामील करने से उसने इनकार कर दिया।

जिससे इसकी तरफ़ इशारा पाया जाता है कि असल सज्दा करने वाले तो फ़रिश्ते ही थे, मगर अ़क़्ली तौर पर लाज़िम था कि इब्लीस भी जब उनमें मौजूद था तो वह भी सज्दा करने वाले फ़रिश्तों के साथ शामिल हो जाता, उसके शामिल न होने पर नाराज़गी व ग़ुस्से का इज़हार फ़रमाया गया।

अल्लाह तआ़ला के ख़ास बन्दों पर शैतान का बस न चलने के मायने

اِنَّ عِبَادِیْ لَیْسَ لَکَ عَلَیْهِمْ سُلْطٰنٌ

(यानी ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 42) से मालूम होता है कि अल्लाह तआ़ला के मख़्सूस और चुनिन्दा बन्दों पर शैतानी फ़रेब का असर नहीं होता, मगर आदम अ़लैहिस्सलाम के इसी वाक़िए में यह भी बयान हुआ है कि आदम व हव्वा पर उसका फ़रेब चल गया। इसी तरह सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के बारे में क़ुरआने करीम का इरशाद है:

اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّیْطٰنُ بِبَعْضِ مَا کَسَبُوْا. (آلِ عمران)

जिससे मालूम होता है कि सहाबा पर भी शैतान का फ़रेब उस मौक़े पर चल गया।

इसलिये उक्त आयत में अल्लाह के मख़्सूस बन्दों पर शैतान का क़ब्ज़ा व इख़्तियार न होने का मतलब यह है कि उनके दिलों व अ़क़्लों पर शैतान का ऐसा क़ब्ज़ा नहीं होता कि वे अपनी ग़लती पर किसी वक़्त सचेत व आगाह ही न हों, जिसकी वजह से उनको तौबा नसीब न हो, या कोई ऐसा गुनाह कर बैठें जिसकी मग़फ़िरत न हो सके।

और ऊपर बयान हुए वाक़िआत इसके विरुद्ध नहीं, क्योंकि आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम ने तौबा की और यह तौबा क़ुबूल हुई। इसी तरह सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने भी तौबा कर ली थी और शैतान के फ़रेब से जिस गुनाह में मुब्तला हुए वह माफ़ कर दिया गया।

जहन्नम के सात दरवाज़े

لَهَا سَبْعَةُ اَبْوَابٍ.

इमाम अहमद, इब्ने जरीर तबरी और इमाम बैहक़ी ने हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू की रिवायत से लिखा है कि जहन्नम के सात दरवाज़े ऊपर नीचे सात तब्क़ों (दर्जों) के एतिबार से हैं, और कुछ हज़रात ने उनको आ़म दरवाज़ों की तरह क़रार दिया है, हर दरवाज़ा ख़ास क़िस्म के मुजरिमों के लिये रिज़र्व होगा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

إِنَّ الْمُتَّقِينَ فِي جَنَّٰتٍ وَعُيُونٍ ۝ ادْخُلُوهَا بِسَلَٰمٍ ءَامِنِينَ ۝ وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِم مِّنْ غِلٍّ إِخْوَٰنًا عَلَىٰ سُرُرٍ مُّتَقَٰبِلِينَ ۝ لَا يَمَسُّهُمْ فِيهَا نَصَبٌ وَمَا هُم مِّنْهَا بِمُخْرَجِينَ ۝ نَبِّئْ عِبَادِيٓ أَنِّيٓ أَنَا الْغَفُورُ الرَّحِيمُ ۝ وَأَنَّ عَذَابِي هُوَ الْعَذَابُ الْأَلِيمُ ۝

इन्नल्-मुत्तक़ी-न फ़ी जन्नातिंव्-व अुयून (45) उद्ख़ुलूहा बि-सलामिन् आमिनीन (46) व नज़अ्ना मा फ़ी सुदूरिहिम् मिन् ग़िल्लिन् इख़्वानन् अ़ला सुरुरिम् मु-तक़ाबिलीन (47) ला यमस्सुहुम् फ़ीहा न-सबुंव्-व मा हुम् मिन्हा बिमुख़्रजीन (48) नब्बिअ् अ़िबादी अन्नी अनल्-ग़फ़ूरुर्-रहीम (49) व अन्-न अ़ज़ाबी हुवल्-अ़ज़ाबुल् अलीम (50)	परहेज़गार हैं बाग़ों में और चश्मों में। (45) कहेंगे उनको जाओ उनमें सलामती से दिल के इत्मीनान के साथ। (46) और निकाल डाली हमने जो उनके जियों में थी नाराज़गी, भाई हो गये तख़्तों पर बैठे आमने सामने। (47) न पहुँचेगी उनको वहाँ कुछ तकलीफ़ और न उनको वहाँ से कोई निकाले। (48) ख़बर सुना दे मेरे बन्दों को कि मैं हूँ असल बख़्शने वाला मेहरबान। (49) और यह भी कि मेरा अ़ज़ाब वही अ़ज़ाब है दर्दनाक। (50)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक ख़ुदा से डरने वाले (यानी ईमान वाले) बाग़ों और चश्मों में (बसते) होंगे (चाहे शुरू ही से अगर नाफ़रमानी न हो, या माफ़ हो गई हो, और चाहे नाफ़रमानी की सज़ा भुगतने के बाद। उनसे कहा जायेगा कि) तुम इन (बाग़ों और चश्मों) में सलामती और अमन के साथ दाख़िल हो (यानी इस वक़्त भी हर नापसन्द चीज़ से सलामती है और आईन्दा भी कभी किसी शर का अन्देशा नहीं)। और (दुनिया में तबई तक़ाज़े से) उनके दिलों में जो कीना था हम वह सब (उनके दिलों से जन्नत में दाख़िल होने के पहले ही) दूर कर देंगे कि सब भाई-भाई की तरह (उलफ़त व मुहब्बत से) रहेंगे, तख़्तों पर आमने-सामने बैठा करेंगे। वहाँ उनको ज़रा भी तकलीफ़ न पहुँचेगी और न वे वहाँ से निकाले जाएँगे। (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप मेरे बन्दों को इत्तिला दे दीजिये कि मैं बड़ा मग़फ़िरत और रहमत वाला भी हूँ और (साथ ही) यह कि मेरी सज़ा (भी) दर्दनाक सज़ा है (ताकि इससे अवगत होकर ईमान और तक़वे की तरफ़ रुचि लें और कुफ़्र व नाफ़रमानी से ख़ौफ़ पैदा हो)।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जन्नत वाले जब जन्नत में दाख़िल होंगे तो सबसे पहले उनके सामने पानी के दो चश्मे पेश किये जायेंगे। पहले चश्मे से वे पानी पियेंगे तो उन सब के दिलों से आपसी रंजिश जो कभी दुनिया में पेश आई थी और तबई तौर पर उसका असर आख़िर तक मौजूद रहा, वह सब धुल जायेगा और सब के दिलों में आपसी मुहब्बत व उलफ़त पैदा हो जायेगी, क्योंकि आपसी रंजिश भी एक तकलीफ़ व अ़ज़ाब है और जन्नत हर तकलीफ़ से पाक है।

और सही हदीस में जो यह आया है कि जिस शख़्स के दिल में ज़र्रा बराबर भी कीना किसी मुसलमान से होगा वह जन्नत में न जायेगा, इससे मुराद वह कीना और बुग़ज़ है जो दुनियावी ग़र्ज़ से और अपने इरादे व इख़्तियार से हो, और इसकी वजह से वह शख़्स उसके पीछे लगा रहे कि जब मौक़ा पाये अपने दुश्मन को तकलीफ़ और नुक़सान पहुँचाये, तबई नागवारी जो इनसानी ख़ासियत में से और ग़ैर-इख़्तियारी है वह इसमें दाख़िल नहीं। इसी तरह जो किसी शरई बुनियाद पर आधारित हो ऐसे ही बुग़ज़ व दिली नागवारी का ज़िक्र इस आयत में है कि जन्नत वालों के दिलों से हर तरह का आपसी मनमुटाव और रंजिश दूर कर दी जायेगी।

इसी के बारे में हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि "मुझे उम्मीद है कि मैं और तल्हा और ज़ुबैर उन्हीं लोगों में से होंगे जिनके दिलों का ग़ुबार जन्नत में दाख़िले के वक़्त दूर कर दिया जायेगा।"

इशारा उन मतभेदों और आपसी विवादों की तरफ़ है जो इन हज़रात और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बीच पेश आये थे।

لَا يَمَسُّهُمْ فِيهَا نَصَبٌ وَّمَا هُمْ مِّنْهَا بِمُخْرَجِينَ٥

इस आयत से जन्नत की दो विशेषतायें मालूम हुई- अव्वल यह कि किसी को कभी थकान और कमज़ोरी महसूस न होगी, बख़िलाफ़ दुनिया के कि यहाँ मेहनत व मशक़्क़त के कामों से तो कमज़ोरी व थकान होती ही है ख़ालिस आराम और तफ़रीह से भी किसी न किसी वक़्त आदमी थक जाता है और कमज़ोरी महसूस करने लगता है, चाहे वह कितना ही लज़ीज़ (मज़ेदार) काम और मश्ग़ला हो।

दूसरी बात यह मालूम हुई कि जो आराम व राहत और नेमतें वहाँ किसी को मिल जायेंगी फिर वो हमेशा के लिये होंगी, न वे नेमतें कभी कम होंगी और न उनमें से उस शख़्स को निकाला जायेगा। सूरः सॉद में इरशाद है:

اِنَّ هٰذَا لَرِزْقُنَا مَا لَهٗ مِنْ نَّفَادٍ٥

यानी यह हमारा रिज़्क़ है जो कभी ख़त्म नहीं होगा। और इस आयत में फ़रमायाः

وَمَا هُمْ مِّنْهَا بِمُخْرَجِينَ٥

यानी उनको कभी उन नेमतों व राहतों से निकाला नहीं जायेगा। बख़िलाफ़ दुनियावी मामलात के कि यहाँ अगर कोई किसी को बड़े से बड़ा इनाम व राहत दे भी दे तो यह ख़तरा हर वक़्त लगा रहता है कि जिसने ये इनामात दिये हैं वह किसी वक़्त नाराज़ होकर यहाँ से निकाल देगा।

एक तीसरा शुब्हा व गुमान जो यह था कि न जन्नत की नेमतें ख़त्म हों और न उसको वहाँ से निकाला जाये मगर वह ख़ुद ही वहाँ रहते-रहते उकता जाये और बाहर जाना चाहे, क़ुरआने करीम ने इस शुब्हे व संभावना को भी एक जुमले में इन अलफ़ाज़ से ख़त्म कर दिया है कि:

لَا يَبْغُوْنَ عَنْهَا حِوَلًا○

यानी ये लोग भी वहाँ से पलट कर आने की कभी इच्छा न करेंगे।

وَنَبِّئْهُمْ عَنْ ضَيْفِ إِبْرٰهِيْمَ ﴿٥١﴾ إِذْ دَخَلُوْا عَلَيْهِ فَقَالُوْا سَلٰمًا قَالَ إِنَّا مِنْكُمْ وَجِلُوْنَ ﴿٥٢﴾ قَالُوْا لَا تَوْجَلْ إِنَّا نُبَشِّرُكَ بِغُلٰمٍ عَلِيْمٍ ﴿٥٣﴾ قَالَ أَبَشَّرْتُمُوْنِيْ عَلٰٓى أَنْ مَّسَّنِيَ الْكِبَرُ فَبِمَ تُبَشِّرُوْنَ ﴿٥٤﴾ قَالُوْا بَشَّرْنٰكَ بِالْحَقِّ فَلَا تَكُنْ مِّنَ الْقٰنِطِيْنَ ﴿٥٥﴾ قَالَ وَمَنْ يَّقْنَطُ مِنْ رَّحْمَةِ رَبِّهٖٓ إِلَّا الضَّآلُّوْنَ ﴿٥٦﴾ قَالَ فَمَا خَطْبُكُمْ أَيُّهَا الْمُرْسَلُوْنَ ﴿٥٧﴾ قَالُوْٓا إِنَّآ أُرْسِلْنَآ إِلٰى قَوْمٍ مُّجْرِمِيْنَ ﴿٥٨﴾ إِلَّآ اٰلَ لُوْطٍ إِنَّا لَمُنَجُّوْهُمْ أَجْمَعِيْنَ ﴿٥٩﴾ إِلَّا امْرَأَتَهٗ قَدَّرْنَآ إِنَّهَا لَمِنَ الْغٰبِرِيْنَ ﴿٦٠﴾ فَلَمَّا جَآءَ اٰلَ لُوْطِ ِالْمُرْسَلُوْنَ ﴿٦١﴾ قَالَ إِنَّكُمْ قَوْمٌ مُّنْكَرُوْنَ ﴿٦٢﴾ قَالُوْا بَلْ جِئْنٰكَ بِمَا كَانُوْا فِيْهِ يَمْتَرُوْنَ ﴿٦٣﴾ وَأَتَيْنٰكَ بِالْحَقِّ وَإِنَّا لَصٰدِقُوْنَ ﴿٦٤﴾ فَأَسْرِ بِأَهْلِكَ بِقِطْعٍ مِّنَ الَّيْلِ وَاتَّبِعْ أَدْبَارَهُمْ وَلَا يَلْتَفِتْ مِنْكُمْ أَحَدٌ وَّامْضُوْا حَيْثُ تُؤْمَرُوْنَ ﴿٦٥﴾ وَقَضَيْنَآ إِلَيْهِ ذٰلِكَ الْأَمْرَ أَنَّ دَابِرَ هٰٓؤُلَآءِ مَقْطُوْعٌ مُّصْبِحِيْنَ ﴿٦٦﴾ وَجَآءَ أَهْلُ الْمَدِيْنَةِ يَسْتَبْشِرُوْنَ ﴿٦٧﴾ قَالَ إِنَّ هٰٓؤُلَآءِ ضَيْفِيْ فَلَا تَفْضَحُوْنِ ﴿٦٨﴾ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَلَا تُخْزُوْنِ ﴿٦٩﴾ قَالُوْٓا أَوَلَمْ نَنْهَكَ عَنِ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٧٠﴾ قَالَ هٰٓؤُلَآءِ بَنٰتِيْٓ إِنْ كُنْتُمْ فٰعِلِيْنَ ﴿٧١﴾ لَعَمْرُكَ إِنَّهُمْ لَفِيْ سَكْرَتِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ﴿٧٢﴾ فَأَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ مُشْرِقِيْنَ ﴿٧٣﴾ فَجَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا وَأَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ حِجَارَةً مِّنْ سِجِّيْلٍ ﴿٧٤﴾ إِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّلْمُتَوَسِّمِيْنَ ﴿٧٥﴾ وَإِنَّهَا لَبِسَبِيْلٍ مُّقِيْمٍ ﴿٧٦﴾ إِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّلْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٧٧﴾

व नब्बिअ्हुम् अ़न् ज़ैफ़ि इब्राहीम। (51) इज़् द-ख़लू अ़लैहि फ़क़ालू सलामन्, क़ा-ल इन्ना मिन्कुम् वजिलून (52) क़ालू ला तौजल् इन्ना	और हाल सुना दे उनको इब्राहीम के मेहमानों का। (51) जब चले आये उसके घर में और बोले सलाम, वह बोला हमको तुमसे डर मालूम होता है। (52) बोले डर

नबुश्शिरु-क बिग़ुलामिन् अ़लीम (53) क़ा-ल अ-बश्शर्तुमूनी अ़ला अम्मस्सनियल्-कि-बरु फ़बि-म तुबश्शिरून (54) क़ालू बश्शर्ना-क बिल्हक़्क़ि फ़ला तकुम् मिनल्-क़ानितीन (55) क़ा-ल व मंय्यक़्नतु मिर्रह्मति रब्बिही इल्लज़्ज़ाल्लून (56) क़ा-ल फ़मा ख़त्बुकुम् अय्युहल्-मुर्सलून (57) क़ालू इन्ना उर्सिल्ना इला क़ौमिम्-मुज्रिमीन (58) इल्ला आ-ल लूतिन्, इन्ना लमुनज्जूहुम् अज्मअ़ीन (59) इल्लम्-र-अ-तहू क़द्दर्ना इन्नहा लमिनल्-ग़ाबिरीन (60) ✽

फ़-लम्मा जा-अ आ-ल लूति-निल्--मुर्सलून (61) क़ा-ल इन्नकुम् क़ौमुम्-मुन्करून (62) क़ालू बल् जिअ्ना-क बिमा कानू फ़ीहि यम्तरून (63) व अतैना-क बिल्हक़्क़ि व इन्ना लसादिक़ून (64) फ़-अस्रि बिअह्लि-क बिक़ित्अिम् मिनल्लैलि वत्तबिअ् अद्बारहुम् व ला यल्तफ़ित् मिन्कुम् अ-हदुंव्वम्ज़ू हैसु तुअ्मरून (65) व क़ज़ैना इलैहि ज़ालिकल्-अम्-र

मत हम तुझको ख़ुशख़बरी सुनाते हैं एक होशियार लड़के की। (53) बोला क्या ख़ुशख़बरी सुनाते हो मुझको जब पहुँच चुका मुझको बुढ़ापा, अब किस चीज़ पर ख़ुशख़बरी सुनाते हो? (54) बोले हमने तुझको ख़ुशख़बरी सुनाई सच्ची, सो मत हो तू नाउम्मीदों में। (55) बोला और कौन आस तोड़े अपने रब की रहमत से मगर जो गुमराह हैं। (56) बोला फिर क्या मुहिम है तुम्हारी ऐ अल्लाह के भेजे हुओ। (57) बोले हम भेजे हुए आये हैं एक गुनाहगार कौम पर। (58) मगर लूत के घर वाले, हम उनको बचा लेंगे सब को (59) मगर एक उसकी औरत, हमने ठहरा लिया, वह है रह जाने वालों में। (60) ✽

फिर जब पहुँचे लूत के घर वे भेजे हुए। (61) बोला तुम लोग हो ओपरे (अजनबी)। (62) बोले नहीं! पर हम लेकर आये हैं तेरे पास वह चीज़ जिसमें वे झगड़ते थे। (63) और हम लाये हैं तेरे पास पक्की बात और हम सच कहते हैं। (64) सो ले निकल अपने घर वालों को कुछ रात रहे से, और तू चल उनके पीछे और मुड़कर न देखे तुममें से कोई, और चले जाओ जहाँ तुमको हुक्म है। (65) और मुक़र्रर कर दी हमने उसको यह बात

अन्-न दाबि-र हाउला-इ मक़्तूअुम्-मुस्बिहीन (66) व जा-अ अह्लुल्-मदीनति यस्तब्शिरून (67) क़ा-ल इन्-न हाउला-इ ज़ैफ़ी फ़ला तफ़्ज़हून (68) वत्तक़ुल्ला-ह व ला तुख़्ज़ून (69) क़ालू अ-व लम् नन्ह-क अ़निल्-आ़लमीन (70) क़ा-ल हाउला-इ बनाती इन् कुन्तुम् फ़ाअ़िलीन (71) ल-अ़म्रु-क इन्नहुम् लफ़ी सक्रतिहिम् यअ़्महून (72) फ़-अ-ख़ज़त्हुमुस्सैहतु मुश्रिक़ीन (73) फ़-जअ़ल्ना आ़लि-यहा साफ़ि-लहा व अम्तर्ना अ़लैहिम् हिजा-रतम् मिन् सिज्जील (74) इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल् लिल्-मु-तवस्सिमीन (75) व इन्नहा लबि-सबीलिम् मुक़ीम (76) इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल् लिल्--मुअ्मिनीन (77)	कि उनकी जड़ कटेगी सुबह होते। (66) और आये शहर के लोग ख़ुशियाँ करते। (67) लूत ने कहा ये लोग मेरे मेहमान हैं सो मुझको रुस्वा मत करो। (68) और डरो अल्लाह से और मेरी आबरू मत खोओ। (69) बोले क्या हमने तुझको मना नहीं किया जहान की हिमायत से। (70) बोला ये हाज़िर हैं मेरी बेटियाँ अगर तुमको करना है। (71) क़सम है तेरी जान की वे अपनी मस्ती में मदहोश हैं। (72) फिर आ पकड़ा उनको चिंघाड़ ने सूरज निकलते वक़्त। (73) फिर कर डाली हमने वह बस्ती ऊपर तले और बरसाये उन पर पत्थर खिंगर के। (74) बेशक इसमें निशानियाँ हैं ध्यान करने वालों को। (75) और वह बस्ती स्थित है सीधी राह पर। (76) यक़ीनन उसमें निशानी है ईमान वालों के लिये। (77)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप उन (लोगों) को इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) के मेहमानों (के क़िस्से) की भी इत्तिला दीजिये (वह क़िस्सा उस वक़्त पेश आया था) जबकि वे (मेहमान जो कि हक़ीक़त में फ़रिश्ते थे और इनसानी शक्ल में होने की वजह से हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने उनको मेहमान समझा) उनके (यानी इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के) पास आये। फिर (आकर) उन्होंने अस्सलामु अ़लैकुम कहा, (इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम उनको मेहमान समझकर फ़ौरन उनके लिये खाना तैयार कर लाये, मगर चूँकि वे फ़रिश्ते थे, उन्होंने खाया नहीं, तब)

इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम दिल में डरे कि ये लोग खाना क्यों नहीं खाते। क्योंकि वे फ़रिश्ते इनसानी शक्ल में थे, उनको इनसान ही समझा और खाना न खाने से शुब्हा हुआ कि ये लोग कहीं मुख़ालिफ़ न हों, और) कहने लगे कि हम तो तुम से डर रहे हैं। उन्होंने कहा कि आप डरें नहीं, हम (फ़रिश्ते हैं, अल्लाह की तरफ़ से एक ख़ुशख़बरी लेकर आये हैं और) आपको एक फ़रज़न्द "यानी लड़के" की ख़ुशख़बरी देते हैं जो बड़ा आ़लिम होगा (मतलब यह कि नबी होगा, क्योंकि आदमियों में सबसे ज़्यादा इल्म अम्बिया को होता है। मुराद उस बेटे से इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम हैं और दूसरी आयतों में हज़रत इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम के साथ याक़ूब अ़लैहिस्सलाम की ख़ुशख़बरी भी ज़िक्र हुई है)।

इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) कहने लगे कि क्या तुम मुझको इस हालत में (बेटे) की ख़ुशख़बरी देते हो कि मुझ पर बुढ़ापा आ गया। सो (ऐसी हालत में मुझको) किस चीज़ की ख़ुशख़बरी देते हो (मतलब यह कि यह बात अपने आप में अ़जीब है, न यह कि क़ुदरत से दूर है)। वे (फ़रिश्ते) बोले कि हम आपको हक़ चीज़ की ख़ुशख़बरी देते हैं (यानी बेटे का पैदा होना यक़ीनन होने वाला है) सो आप नाउम्मीद न हों (यानी अपने बुढ़ापे पर नज़र न कीजिये कि ऐसे आ़दी असबाब पर नज़र करने से नाउम्मीदी के वस्वसे ग़ालिब होते हैं)। इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि भला अपने रब की रहमत से कौन नाउम्मीद होता है सिवाय गुमराह लोगों के (यानी मैं नबी होकर गुमराहों की सिफ़त अपने अन्दर कैसे रख सकता हूँ। मक़सद सिर्फ़ इस मामले के अ़जीब होने को बयान करना है, बाक़ी अल्लाह का वायदा सच्चा और मुझको उम्मीद से बढ़कर उसका कामिल यक़ीन है। उसके बाद नुबुव्वत की समझ से आपको मालूम हुआ कि इन फ़रिश्तों के आने से ख़ुशख़बरी के अ़लावा और भी कोई बड़ी मुहिम मक़सूद है, इसलिये) फ़रमाने लगे कि (जब हालात व अन्दाज़े और इशारात से मुझको यह मालूम हो गया कि तुम्हारे आने का कुछ और भी मक़सद है) तो (यह बतलाओ कि) अब तुमको क्या मुहिम पेश आई है ऐ फ़रिश्तो! फ़रिश्तों ने कहा कि हम एक मुजरिम क़ौम की तरफ़ (उनको सज़ा देने के लिये) भेजे गये हैं (इससे मुराद क़ौम-ए-लूत है)। मगर लूत (अ़लैहिस्सलाम) का ख़ानदान, कि हम उन सब को (अ़ज़ाब से) बचा लेंगे (यानी उनको बचने का तरीक़ा बतला देंगे कि उन मुजरिमों से अलग हो जायें) सिवाय उनकी (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम की) बीवी के कि हमने उसके बारे में तय कर रखा है कि वह ज़रूर उसी मुजरिम क़ौम में रह जायेगी (और उनके साथ अ़ज़ाब में गिरफ़्तार और मुब्तला होगी)।

फिर जब वे फ़रिश्ते लूत (अ़लैहिस्सलाम) के ख़ानदान के पास आये (तो चूँकि इनसानी शक्ल में थे इसलिये) कहने लगे, तुम तो अजनबी आदमी (मालूम होते) हो (देखिये शहर वाले तुम्हारे साथ क्या सुलूक करते हैं, क्योंकि ये अजनबी लोगों को परेशान किया करते हैं)। उन्होंने कहा, नहीं! (हम आदमी नहीं) बल्कि हम (फ़रिश्ते हैं) आपके पास वह चीज़ (यानी वह अ़ज़ाब) लेकर आये हैं जिसमें ये लोग शक किया करते थे। और हम आपके पास यक़ीनी होने वाली

चीज़ (यानी अ़ज़ाब) लेकर आये हैं और हम (इस ख़बर देने में) बिल्कुल सच्चे हैं। सो आप रात के किसी हिस्से में अपने घर वालों को लेकर (यहाँ से) चले जाईये, और आप सब के पीछे हो लीजिये (ताकि कोई रह न जाये, या लौट न जाये। और आपके रौब और डर की वजह से कोई पीछे मुड़कर न देखे जिसकी मनाही कर दी गई है), और तुम में से कोई पीछे फिरकर भी न देखे (यानी सब जल्दी चले जायें) और जिस जगह (जाने का) तुमको हुक्म हुआ है उस तरफ़ सब चले जाओ। (तफ़सीर दुर्रे-मन्सूर में सुद्दी के हवाले से नक़ल किया है कि वह जगह मुल्के शाम है, जिसकी तरफ़ हिजरत करने का उन हज़रात को हुक्म दिया गया था)।

और हमने (उन फ़रिश्तों के वास्ते से) लूत (अ़लैहिस्सलाम) के पास यह हुक्म भेजा कि सुबह होते ही उनकी बिल्कुल जड़ ही कट जाएगी (यानी बिल्कुल हलाक व बरबाद हो जायेंगे। फ़रिश्तों की यह बातचीत तरतीब के एतिबार से उस क़िस्से के बाद हुई है जिसका ज़िक्र आगे आ रहा है, लेकिन इसको ज़िक्र करने में इसलिये पहले लाया गया कि क़िस्सा बयान करने से जो बात मक़सद है यानी नाफ़रमानों पर अ़ज़ाब और फ़रमाँबरदारों की निजात व कामयाबी, वह पहले ही एहतिमाम के साथ मालूम हो जाये। अगला क़िस्सा यह है)।

और शहर के लोग (यह ख़बर सुनकर कि लूत अ़लैहिस्सलाम के यहाँ हसीन लड़के आये हैं) ख़ूब खुशियाँ करते हुए (अपनी बुरी नीयत और बुरे इरादे के साथ लूत अ़लैहिस्सलाम के घर पहुँचे)। लूत (अ़लैहिस्सलाम) ने (जो अब तक उनको आदमी और अपना मेहमान ही समझ रहे थे उनके बुरे इरादों का एहसास करके) फ़रमाया कि ये लोग मेरे मेहमान हैं (इनको परेशान करके) मुझको (आम लोगों में) रुस्वा न करो (क्योंकि मेहमान की तौहीन मेज़बान की तौहीन होती है, अगर तुम्हें इन परदेसियों पर रहम नहीं आता तो कम से कम मेरा ख़्याल करो कि मैं तुम्हारी बस्ती का रहने वाला हूँ। इसके अ़लावा जो इरादा तुम कर रहे हो वह अल्लाह तआ़ला के क़हर व ग़ज़ब का सबब है)। तुम अल्लाह तआ़ला से डरो और मुझको (इन मेहमानों की नज़र में) रुस्वा मत करो (कि मेहमान यह समझेंगे कि अपनी बस्ती के लोगों में भी इनकी कोई वक़्अ़त नहीं)। वे कहने लगे (कि यह रुस्वाई हमारी तरफ़ से नहीं आपने ख़ुद अपने हाथों ख़रीदी है कि इनको मेहमान बनाया) क्या हम आपको दुनिया भर के लोगों (को अपना मेहमान बनाने) से (कई बार) मना नहीं कर चुके (न आप इनको मेहमान बनाते न इस रुस्वाई की नौबत आती)। लूत (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (यह बतलाओ कि इस बेहूदा हरकत की क्या ज़रूरत है जिसकी वजह से हमें किसी को मेहमान बनाने की भी इजाज़त नहीं दी जाती, जिन्सी इच्छा को पूरी करने के तबई तक़ाज़े के लिये) ये मेरी (बहू-) बेटियाँ (जो तुम्हारे घरों में) मौजूद हैं, अगर तुम मेरा कहना करो (तो शरीफ़ाना तौर पर अपनी औ़रतों से अपना मतलब पूरा करो मगर वे किसकी सुनते थे)। आपकी जान की क़सम! वे अपनी मस्ती में मदहोश थे। पस सूरज निकलते-निकलते उनको सख़्त आवाज़ ने आ दबाया (यह तर्जुमा **मुश्रिक़ीन** का है, इससे पहले जो **मुस्बिहीन** का लफ़्ज़ आया है जिसके मायने सुबह होते-होते के हैं, इन दोनों को इस तरह जमा किया जाना मुम्किन है कि सुबह से शुरूआ़त हुई और इश्राक़ तक ख़ात्मा हुआ)।

फिर (उस सख़्त आवाज़ के बाद) हमने उन बस्तियों (की ज़मीन को उलट कर उन) का ऊपर का तख़्ता (तो) नीचे कर दिया (और नीचे का तख़्ता ऊपर कर दिया) और उन लोगों पर कंकर के पत्थर बरसाने शुरू किये। इस वाक़िए में कई निशानियाँ हैं अ़क़्ल रखने वालों के लिये (जैसे एक तो यह कि बुरे फ़ेल का नतीजा आख़िरकार बुरा होता है, अगर कुछ दिन मोहलत और ढील मिल जाये तो उससे धोखा न खाना चाहिये। दूसरे यह कि हमेशा की और बाक़ी रहने वाली राहत व इज़्ज़त सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला पर ईमान और उसकी फ़रमाँबरदारी पर मौक़ूफ़ है। तीसरे यह कि अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत को इनसानी क़ुदरत पर अन्दाज़ा व गुमान करके धोखे में मुब्तला न हों, अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में सब कुछ है, वह ज़ाहिरी असबाब के ख़िलाफ़ भी जो चाहे कर सकता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का विशेष सम्मान व इकराम

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया- 'ल-अ़मरु-क'। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत का क़ौल यह नक़ल किया है कि 'ल-अ़मरु-क' के मुख़ातब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं। अल्लाह तआ़ला ने आपकी ज़िन्दगी की क़सम खाई है। इमाम बैहक़ी ने 'दलाईलुन्नुबुव्वत' में और अबू नुऐम व इब्ने मरदूया वग़ैरह ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि अल्लाह तआ़ला ने तमाम मख़्लूक़ात व कायनात में किसी को मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा इज़्ज़त व मर्तबा अ़ता नहीं फ़रमाया, यही वजह है कि अल्लाह तआ़ला ने किसी पैग़म्बर या किसी फ़रिश्ते की ज़िन्दगी पर कभी क़सम नहीं खाई और इस आयत में रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्र व ज़िन्दगी की क़सम खाई है जो आप सल्ल. का इन्तिहाई सम्मान व इकराम है।

ग़ैरुल्लाह की क़सम खाना

किसी इनसान के लिये जायज़ नहीं कि अल्लाह तआ़ला के नामों और सिफ़ात के अ़लावा किसी और चीज़ की क़सम खाये। क्योंकि क़सम उसकी खाई जाती है जिसको सबसे ज़्यादा बड़ा समझा जाये, और ज़ाहिर है कि सब से ज़्यादा बड़ा सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही हो सकता है।

हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपनी माँओं और बापों की और बुतों की क़सम न खाओ, और अल्लाह के सिवा किसी की क़सम न खाओ, और अल्लाह की क़सम भी सिर्फ़ उस वक़्त खाओ जब तुम अपने क़ौल में सच्चे हो।

(अबू दाऊद व नसाई, हज़रत अबू हुरैरह की रिवायत से)

और बुख़ारी व मुस्लिम में है कि एक मर्तबा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु को देखा कि अपने बाप की क़सम खा रहे हैं तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पुकारकर फ़रमाया कि "ख़बरदार रहो अल्लाह तआ़ला बापों की क़सम खाने से मना फ़रमाता है, जिसको हलफ़ करना हो अल्लाह के नाम का हलफ़ करे वरना ख़ामोश रहे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, मायदा)

लेकिन यह हुक्म आ़म मख़्लूक़ात के लिये है, अल्लाह जल्ल शानुहू ख़ुद अपनी मख़्लूक़ात में से विभिन्न चीज़ों की क़सम खाते हैं, यह उनके लिये मख़्सूस है, जिसका मक़सद किसी ख़ास एतिबार से उस चीज़ का सम्मानित और ज़्यादा लाभदायक होना बयान करना है। और आ़म मख़्लूक़ को ग़ैरुल्लाह की क़सम खाने से रोकने का जो सबब है वह यहाँ मौजूद नहीं, क्योंकि अल्लाह तआ़ला के कलाम में इसकी कोई संभावना नहीं कि वह अपनी किसी मख़्लूक़ को सबसे बड़ा और अफ़ज़ल समझें, क्योंकि बड़ाई तो मुकम्मल तौर पर सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की ज़ात के साथ ख़ास है।

जिन बस्तियों पर अ़ज़ाब नाज़िल हुआ उनसे इब्रत हासिल करनी चाहिये

اِنَّ فِیْ ذٰلِکَ لَاٰیٰتٍ لِّلْمُتَوَسِّمِیْنَo وَاِنَّھَا لَبِسَبِیْلٍ مُّقِیْمٍo

इसमें हक़ तआ़ला ने उन बस्तियों का स्थान बयान फ़रमाया जो अ़रब से शाम तक जाने वाले रास्ते पर हैं, और साथ ही इरशाद फ़रमाया कि उनमें अ़क़्ल व समझ रखने वालों के लिये अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत की बड़ी निशानियाँ हैं।

एक दूसरी आयत में उनके बारे में यह भी इरशाद हुआ है:

لَمْ تُسْکَنْ مِّنْ ۢ بَعْدِھِمْ اِلَّا قَلِیْلًاo

"यानी ये बस्तियाँ अल्लाह के अ़ज़ाब के ज़रिये वीरान होने के बाद फिर दोबारा आबाद नहीं हुई सिवाय चन्द बस्तियों के।"

इस मजमूए से मालूम होता है कि हक़ तआ़ला ने उन बस्तियों और उनके मकानात को आने वाली नस्लों के लिये इब्रत (सीख) का सामान बनाया है।

यही वजह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब उन मक़ामात से गुज़रे हैं तो आप पर अल्लाह के डर और हैबत का एक ख़ास हाल होता था जिससे सर मुबारक झुक जाता था और आप अपनी सवारी को उन मक़ामात में तेज़ करके जल्द पार करने की कोशिश फ़रमाते। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस अ़मल ने यह सुन्नत क़ायम कर दी कि जिन मक़ामात पर अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब आया है उनको तमाशे की जगह बनाना बड़ी सख़्त-दिली है बल्कि उनसे इब्रत हासिल करने का तरीक़ा यही है कि वहाँ पहुँचकर अल्लाह

तआ़ला की कामिल क़ुदरत को ध्यान में रखें और उसके अ़ज़ाब का ख़ौफ़ तारी हो।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की बस्तियाँ जिनका तख़्ता उलटा गया है, क़ुरआने करीम के इरशाद के मुताबिक़ अ़रब से शाम को जाने वाले रास्ते पर उर्दुन के इलाक़े में आज भी यह स्थान समन्दर की सतह से काफ़ी गहराई में एक विशाल जंगल और वीराने की सूरत में मौजूद है। इसके एक बहुत बड़े रक़बे पर एक ख़ास किस्म का पानी दरिया की सूरत इख़्तियार किये हुए है, उस पानी में कोई मछली मेंढक वग़ैरह जानवर ज़िन्दा नहीं रह सकता, इसी लिये उस दरिया को 'बहर-ए-मय्यित' और 'बहर-ए-लूत' के नाम से जाना जाता है, और तहक़ीक़ से मालूम हुआ कि दर हक़ीक़त उसमें पानी के अजज़ा (हिस्से व अंश) बहुत कम और तेल की क़िस्म के अजज़ा ज़्यादा हैं, इसलिये उसमें कोई दरियाई जानवर ज़िन्दा नहीं रह सकता।

आजकल आसार-ए-क़दीमा के महकमे (पुरातत्व विभाग) ने कुछ रिहाईशी इमारतें होटल वग़ैरह भी बना दिये हैं और आख़िरत से ग़ाफ़िल माद्दापरस्त तबीयतों ने आजकल उसको एक सैरगाह बनाया हुआ है, लोग तमाशे के तौर पर उसे देखने जाते हैं। क़ुरआने करीम ने इसी ग़फ़लत बरतने के चलन पर तंबीह के लिये आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیَةً لِّلْمُؤْمِنِیْنَ ۝

यानी हक़ीक़त में तो ये वाक़िआ़त व मक़ामात हर अ़क़्ल व समझ रखने वाले के लिये इब्रत लेने और सीख लेने के लिये हैं लेकिन इस इब्रत से फ़ायदा उठाने वाले मोमिन ही होते हैं, दूसरे लोग उन मक़ामात को एक तमाशाई की हैसियत से देखकर रवाना हो जाते हैं।

وَاِنْ كَانَ اَصْحٰبُ الْاَیْكَةِ لَظٰلِمِیْنَ ۝ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ ۘ وَاِنَّهُمَا لَبِاِمَامٍ مُّبِیْنٍ ۝ وَلَقَدْ كَذَّبَ اَصْحٰبُ الْحِجْرِ الْمُرْسَلِیْنَ ۝ وَاٰتَیْنٰهُمْ اٰیٰتِنَا فَكَانُوْا عَنْهَا مُعْرِضِیْنَ ۝ وَكَانُوْا یَنْحِتُوْنَ مِنَ الْجِبَالِ بُیُوْتًا اٰمِنِیْنَ ۝ فَاَخَذَتْهُمُ الصَّیْحَةُ مُصْبِحِیْنَ ۝ فَمَاۤ اَغْنٰى عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا یَكْسِبُوْنَ ۝ وَمَا خَلَقْنَا السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَیْنَهُمَاۤ اِلَّا بِالْحَقِّ ؕ وَاِنَّ السَّاعَةَ لَاٰتِیَةٌ فَاصْفَحِ الصَّفْحَ الْجَمِیْلَ ۝

व इन् का-न अस्हाबुल्-ऐ-कति लज़ालिमीन (78) फ़न्त-क़म्ना मिन्हुम। व इन्नहुमा लबि-इमामिम्-मुबीन (79) ✿	और तहक़ीक़ कि थे बन के रहने वाले गुनाहगार। (78) सो हमने बदला लिया उनसे और ये दोनों बस्तियाँ स्थित हैं खुले रास्ते पर। (79) ✿
व ल-क़द् कज़्ज़-ब अस्हाबुल्-हिज्रिल्-मुर्सलीन (80) व आतैनाहुम्	और बेशक झुठलाया हिज्र वालों ने रसूलों को। (80) और दीं हमने उनको अपनी

आयातिना फ़कानू अ़न्हा मुअ़्रिज़ीन (81) व कानू यन्हितू-न मिनल्-जिबालि बुयूतन् आमिनीन (82) फ़-अ-ख़ज़त्हुमुस्सैहतु मुस्बिहीन (83) फ़मा अ़ग्ना अ़न्हुम् मा कानू यक्सिबून (84) व मा ख़लक़्नस्समावाति वल्अर्-ज़ व मा बैनहुमा इल्ला बिल्हक़्क़ि, व इन्नस्सा-अ़-त लआति-यतुन् फ़स्फ़हिस्सफ़्हल्-जमील (85) इन्-न रब्ब-क हुवल्-ख़ल्लाक़ुल्-अ़लीम (86)	निशानियाँ, सो रहे उनसे मुँह फेरते। (81) और थे कि तराशते थे पहाड़ों के घर इत्मीनान के साथ। (82) फिर पकड़ा उनको चिंघाड़ ने सुबह होने के वक़्त। (83) फिर काम न आया उनके जो कुछ कमाया था। (84) और हमने बनाये नहीं आसमान और ज़मीन और जो उनके बीच में है बग़ैर हिक्मत, और क़ियामत बेशक आने वाली है सो किनारा कर अच्छी तरह किनारा। (85) तेरा रब जो है वही है पैदा करने वाला ख़बर रखने वाला। (86)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐका वालों और हिज्र वालों का क़िस्सा

और वन वाले (यानी शुऐब अ़लैहिस्सलाम की उम्मत भी) बड़े ज़ालिम थे। हमने उनसे (भी) बदला लिया (और उनको अ़ज़ाब से हलाक किया), और दोनों (क़ौम की) बस्तियाँ साफ़ सड़क पर (स्थित) हैं (और मुल्क शाम को जाते हुए राह में नज़र आती हैं)।

और हिज्र वालों ने (भी) पैग़म्बरों को झूठा बतलाया (क्योंकि जब सालेह अ़लैहिस्सलाम को झूठा कहा और सब पैग़म्बरों का असल दीन एक ही है तो गोया सब को झूठा बतलाया)। और हमने उनको अपनी (तरफ़ से) निशानियाँ दीं (जिससे अल्लाह तआ़ला की तौहीद और हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत साबित होती थी जैसे तौहीद की दलीलें और ऊँटनी जो कि सालेह अ़लैहिस्सलाम का मोजिज़ा था) सो वे लोग उन (निशानियों) से मुँह (ही) मोड़ते रहे। और वे लोग पहाड़ों को तराश-तराशकर उनमें घर बनाते थे कि (उनमें सब आफ़तों से) अमन में रहें। सो उनको सुबह के वक़्त (चाहे सुबह ही सुबह या दिन चढ़े, दोनों सूरतें हो सकती हैं) सख़्त आवाज़ ने आन पकड़ा। सो उनके (दुनियावी) हुनर उनके कुछ भी काम न आये (उन्हीं मज़बूत घरों में अ़ज़ाब से काम तमाम हो गया। इस आफ़त से उनके घरों ने न बचाया बल्कि इस आफ़त का गुमान व ख़्याल भी न था, और अगर होता भी तो क्या करते)।

मआरिफ़ व मसाईल

ऐका वन यानी घने जंगल को कहते हैं। कुछ हज़रात कहते हैं कि मद्यन के पास एक वन था इसलिये ऐका मद्यन वालों ही का लक़ब है। कुछ ने कहा है कि ऐका वाले और मद्यन वाले दो अलग-अलग क़ौमें थीं, एक क़ौम की हलाकत के बाद शुऐब अ़लैहिस्सलाम दूसरी क़ौम की तरफ़ भेजे गये।

तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में इब्ने अ़साकिर के हवाले से यह मरफ़ूअ़ हदीस नक़ल की गई है:

اِنَّ مَدْيَنَ وَاَصْحَابَ الْاَيْكَةِ اُمَّتَانِ بَعَثَ اللّٰهُ تَعَالٰى اِلَيْهِمَا شُعَيْبًا.

(कि मद्यन वाले और ऐका वाले दो अलग-अलग उम्मतें हैं, इन दोनों की तरफ़ अल्लाह तआ़ला ने हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम को नबी बनाकर भेजा। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**)

और असल व सही इल्म अल्लाह ही को है।

और हिज्र एक वादी (घाटी) है जो हिजाज़ व शाम के बीच स्थित है, उसमें समूद क़ौम आबाद थी।

सूरत के शुरू में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मक्का के काफ़िरों को जो सख़्त दुश्मनी व मुख़ालफ़त थी उसका बयान था, उसके साथ संक्षिप्त तौर पर आपकी तसल्ली का मज़मून भी ज़िक्र किया था, अब सूरत के ख़त्म पर उसी दुश्मनी व मुख़ालफ़त के बारे में आपकी तसल्ली के लिये तफ़सीली मज़मून बयान किया जा रहा है। चुनाँचे इरशाद होता है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर का बाक़ी हिस्सा

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! आप उन लोगों की दुश्मनी व मुख़ालफ़त से ग़म न कीजिये क्योंकि उसका एक दिन फ़ैसला होने वाला है, और वह क़ियामत का दिन है, जिसके आने के बारे में हम आप से तज़किरा करते हैं कि) हमने आसमानों को और ज़मीन को और इनके बीच की चीज़ों को बग़ैर मस्लेहत के पैदा नहीं किया (बल्कि इस मस्लेहत से पैदा किया कि इनको देखकर इनके बनाने और पैदा करने वाले के वजूद और उसके अकेला व अ़ज़ीम होने पर दलील क़ायम करके उसके अहकाम की फ़रमाँबरदारी करें, और इस हुज्जत को क़ायम करने के बाद जो ऐसा न करे वह अ़ज़ाब का शिकार हो), और (दुनिया में पूरा अ़ज़ाब होता नहीं तो और कहीं होना चाहिये, इसके लिये क़ियामत मुक़र्रर है। पस) ज़रूर क़ियामत आने वाली है (वहाँ सब को भुगताया जायेगा)। सो आप (कुछ ग़म न कीजिये बल्कि) ख़ूबी के साथ (उनकी शरारतों से) दरगुज़र कीजिये (दरगुज़र का मतलब यह है कि इस ग़म में न पड़िये इसका ख़्याल न कीजिये, और ख़ूबी यह कि शिकवा-शिकायत भी न कीजिये, क्योंकि) बेशक आपका रब (चूँकि) बड़ा ख़ालिक़ (यानी पैदा करने वाला है, इससे साबित हुआ कि) बड़ा आ़लिम (भी) है (सब का हाल उसको मालूम है, आपके सब्र का भी, उनकी शरारत का भी, इसलिये उनसे पूरा-पूरा बदला ले लेगा)।

وَلَقَدْ اٰتَيْنٰكَ سَبْعًا مِّنَ الْمَثَانِيْ وَالْقُرْاٰنَ الْعَظِيْمَ ۝ لَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ اِلٰى مَا مَتَّعْنَا بِهٖٓ اَزْوَاجًا مِّنْهُمْ
وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ وَاخْفِضْ جَنَاحَكَ لِلْمُؤْمِنِيْنَ ۝ وَقُلْ اِنِّيْٓ اَنَا النَّذِيْرُ الْمُبِيْنُ ۝ كَمَآ اَنْزَلْنَا
عَلَى الْمُقْتَسِمِيْنَ ۝ الَّذِيْنَ جَعَلُوا الْقُرْاٰنَ عِضِيْنَ ۝ فَوَرَبِّكَ لَنَسْـَٔلَنَّهُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝ عَمَّا كَانُوْا
يَعْمَلُوْنَ ۝ فَاصْدَعْ بِمَا تُؤْمَرُ وَاَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ اِنَّا كَفَيْنٰكَ الْمُسْتَهْزِءِيْنَ ۝
الَّذِيْنَ يَجْعَلُوْنَ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَسَوْفَ يَعْلَمُوْنَ ۝ وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيْقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُوْلُوْنَ ۝
فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ وَكُنْ مِّنَ السّٰجِدِيْنَ ۝ وَاعْبُدْ رَبَّكَ حَتّٰى يَاْتِيَكَ الْيَقِيْنُ ۝

व ल-क़द् आतैना-क सब्अ़म् मिनल्-मसानी वल्क़ुर्आनल्-अ़ज़ीम (87) ला तमुद्दन्-न अ़ैनै-क इला मा मत्तअ़्ना बिही अज़्वाजम् मिन्हुम् व ला तह्ज़न् अ़लैहिम् वख़्फ़िज़् जनाह-क लिल्मुअ्मिनीन (88) व क़ुल् इन्नी अनन्-नज़ीरुल्-मुबीन (89) कमा अन्ज़ल्ना अ़लल्-मुक़्तसिमीन (90) अल्लज़ी-न ज-अ़लुल्-क़ुर्आ-न अ़िज़ीन (91) फ़-वरब्बि-क लनस्-अलन्नहुम् अज्मअ़ीन (92) अ़म्मा कानू यअ़्मलून (93) ❖ फ़स्दअ़् बिमा तुअ्मरु व अअ़्रिज़् अ़निल्-मुश्रिकीन (94) इन्ना कफ़ैनाकल्-मुस्तह्ज़िईन (95) अल्लज़ी-न यज्अ़लू-न मअ़ल्लाहि इलाहन् आ-ख़-र फ़सौ-फ़ यअ़्लमून (96) व

और हमने दी हैं तुझको सात आयतें वज़ीफ़ा और क़ुरआन बड़े दर्जे का। (87) मत डाल अपनी आँखें उन चीज़ों पर जो बरतने को दीं हमने उनमें से कई तरह के लोगों को, और न ग़म खा उन पर, और झुका अपने बाज़ू ईमान वालों के वास्ते। (88) और कह कि मैं वही हूँ डराने वाला खोलकर। (89) जैसा कि हमने भेजा है उन बाँटने वालों पर (90) जिन्होंने किया है क़ुरआन को बोटियाँ। (91) सो क़सम है तेरे रब की हमको पूछना है उन सब से (92) जो कुछ वे करते थे। (93) ❖ सो सुना दे खोलकर जो तुझको हुक्म हुआ और परवाह न कर मुश्रिकों की। (94) हम बस (काफ़ी) हैं तेरी तरफ़ से ठट्ठे करने वालों को। (95) जो कि ठहराते हैं अल्लाह के साथ दूसरे की बन्दगी, सो जल्द ही मालूम कर लेंगे। (96) और हम

ल-क़द् नअ्लमु अन्न-क यज़ीक़ु सद्रु-क बिमा यक़ूलून (97) फ़-सब्बिह् बिहम्दि रब्बि-क व कुम् मिनस्साजिदीन (98) वअ्बुद् रब्ब-क हत्ता यअ्ति-यकल्-यक़ीन (99) ✿	जानते हैं कि तेरा जी रुकता है उनकी बातों से। (97) सो तू याद कर ख़ूबियाँ अपने रब की और हो सज्दा करने वालों में से। (98) और बन्दगी किये जा अपने रब की जब तक आये तेरे पास यक़ीनी बात। (99) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (आप उनके मामले को न देखिये कि ग़म का सबब होता है, हमारा मामला अपने साथ देखिये कि हमारी तरफ़ से आपके साथ किस क़द्र लुत्फ़ व इनायत है चुनाँचे) हमने आपको (एक बड़ी भारी नेमत यानी) सात आयतें दीं जो (नमाज़ में) बार-बार पढ़ी जाती हैं और वह (अ़ज़ीम मज़ामीन की जामे होने के वजह से इस क़ाबिल है कि उसके देने को यूँ कहा जाये कि) क़ुरआन-ए-अ़ज़ीम दिया (मुराद इससे सूरः फ़ातिहा है, जिसकी बड़ाई की वजह से उसका नाम उम्मुल-क़ुरआन भी है। पस इस नेमत और नेमत देने वाले की तरफ़ निगाह रखिये ताकि आपका दिल ख़ुश और मुत्मईन हो। उन लोगों की दुश्मनी व मुख़ालफ़त की तरफ़ तवज्जोह न कीजिये और) आप अपनी आँख उठाकर उस चीज़ को न देखिए (न अफ़सोस करने के लिहाज़ से न नाराज़गी के लिहाज़ से) जो कि हमने उन विभिन्न क़िस्म के काफ़िरों को (जैसे यहूदियों व ईसाईयों, आग के पुजारियों और मुश्रिकों को) बरतने के लिये दे रखी है (और बहुत जल्द उनसे अलग हो जायेगी), और उन (की कुफ़्र की हालत) पर (कुछ) ग़म न कीजिये (नाराज़गी के लिहाज़ से नज़र करने से यह मुराद है कि चूँकि वे अल्लाह के दुश्मन हैं इसलिये अल्लाह के लिये गुस्सा आये कि ऐसी नेमतें उनके पास न होतीं, इसके जवाब की तरफ़ **मत्तअ्ना** में इशारा है कि यह कोई बड़ी भारी दौलत नहीं कि उन नाराज़गी का शिकार और नापसन्दीदा लोगों के पास न होतीं, यह तो फ़ना होने वाली दौलत है, बहुत जल्द जाती रहेगी। और अफ़सोस के लिहाज़ से नज़र करने का मतलब यह होगा कि अफ़सोस ये चीज़ें उनको ईमान से रुकावट और बाधा हो रही हैं, अगर ये न हों तो ग़ालिबन ईमान ले आयें। इसका जवाब **ला तह्ज़न्** में है, जिसकी तफ़सील यह है कि उनकी फ़ितरत में हद दर्जे का बैर व दुश्मनी है, उनसे किसी तरह अपेक्षा नहीं, और रंज व ग़म होता है अपेक्षा और उम्मीद के ख़िलाफ़ होने पर, जब उम्मीद नहीं तो फिर रंज व ग़म बे-वजह है। और हिर्स के लिहाज़ से नज़र करने का तो आपकी तरफ़ से गुमान व शुब्हा ही नहीं।

(ग़र्ज़ यह कि आप किसी भी तरह उन काफ़िरों के फ़िक्र व ग़म में न पड़िये) और मुसलमानों पर शफ़क़त रखिये (यानी मस्लेहत व शफ़क़त की फ़िक्र के लिये मुसलमान काफ़ी हैं कि उनको इससे नफ़ा भी है)। और (काफ़िरों के लिये चूँकि मस्लेहत की फ़िक्र का कोई नतीजा

नहीं इसलिये उनकी तरफ़ तवज्जोह भी न कीजिये। अलबत्ता तब्लीग़ जो आपका फ़र्ज़ और ज़िम्मेदारी है उसको अदा करते रहिये, और इतना) कह दीजिये कि मैं खुल्लम-खुल्ला (तुमको ख़ुदा के अ़ज़ाब से) डराने वाला हूँ (और ख़ुदा की तरफ़ से तुमको यह मज़मून पहुँचाता हूँ कि वह अ़ज़ाब जिससे हमारा नबी डराता है हम तुम पर किसी वक़्त ज़रूर नाज़िल करेंगे) जैसा कि हमने (वह अ़ज़ाब) उन लोगों पर (गुज़रे हुए मुख़्तलिफ़ वक़्तों में) नाज़िल किया है जिन्होंने (अल्लाह के अहकाम के) हिस्से कर रखे थे, यानी आसमानी किताब के मुख़्तलिफ़ हिस्से क़रार दिये थे (उनमें जो मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ हुआ मान लिया जो मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हुआ उससे इनकार कर दिया। इससे मुराद पहले के यहूदी व ईसाई हैं जिन पर नबियों की मुख़ालफ़त की वजह से अ़ज़ाबों का होना जैसे शक्ल बदलकर बन्दर व ख़िन्ज़ीर बन जाना, क़ैद, क़त्ल और ज़िल्लत मशहूर व परिचित था। मतलब यह कि अ़ज़ाब का नाज़िल होना कोई दूर की बात नहीं, पहले हो चुका है, अगर तुम पर भी हो जाये तो ताज्जुब की कौनसी बात है, चाहे वह अ़ज़ाब दुनिया में हो या आख़िरत में। और जब ऊपर की तक़रीर से यह बात स्पष्ट हो गई कि जिस तरह पिछले लोग नबियों की मुख़ालफ़त की वजह से अ़ज़ाब के हक़दार थे इसी तरह मौजूदा लोग भी अ़ज़ाब के हक़दार हो गये हैं)।

सो (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! हमको) आपके परवर्दिगार की (यानी अपनी) क़सम! हम उन सब (अगलों और पिछलों) से उनके आमाल की (क़ियामत के दिन) ज़रूर पूछताछ करेंगे (फिर हर एक को उसके मुनासिब सज़ा देंगे)। ग़र्ज़ (कलाम का हासिल यह है कि) आपको जिस बात (के पहुँचाने) का हुक्म किया गया है उसको (तो) साफ़-साफ़ सुना दीजिये और (अगर ये न मानें तो) इन मुश्रिकों (के न मानने) की (बिल्कुल भी) परवाह न कीजिए (यानी ग़म न कीजिये जैसा कि ऊपर आया है 'ला तह्ज़न्' और न तबई तौर पर ख़ौफ़ कीजिये कि ये मुख़ालिफ़ बहुत सारे हैं क्योंकि) ये लोग जो (आपके और ख़ुदा के मुख़ालिफ़ हैं, चुनाँचे आप पर तो) हंसते हैं (और) अल्लाह के साथ दूसरा माबूद क़रार देते हैं, उन (की बुराई और तकलीफ़ पहुँचाने) से आप (को महफ़ूज़ रखने) के लिये (और उनसे बदला लेने के लिये) हम काफ़ी हैं, सो उनको अभी मालूम हुआ जाता है (कि उनके मज़ाक़ उड़ाने और शिर्क का क्या अन्जाम होता है। ग़र्ज़ कि जब हम काफ़ी हैं फिर किस चीज़ का डर है)।

और वाक़ई हमको मालूम है कि ये लोग जो (कुफ़्र व मज़ाक़ उड़ाने की) बातें करते हैं इनसे आप तंगदिल होते हैं (कि यह तबई बात है)। सो (इसका इलाज यह है कि) आप अपने परवर्दिगार की तस्बीह व तारीफ़ करते रहिये, और नमाज़ें पढ़ने वालों में रहिये। और अपने रब की इबादत करते रहिये यहाँ तक कि (उसी हालत में) आपको मौत आ जाये (यानी मरते दम तक ज़िक्र व इबादत में मशग़ूल रहिये, क्योंकि अल्लाह के ज़िक्र और इबादत में आख़िरत के अज्र व सवाब के अ़लावा यह ख़ासियत भी है कि दुनिया में जब इनसान इस तरफ़ लग जाता है तो दुनिया के रंज व ग़म और तकलीफ़ व मुसीबत हल्की हो जाती है)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः फ़ातिहा पूरे क़ुरआन का मतन और ख़ुलासा है

इन आयतों में सूरः फ़ातिहा को क़ुरआने करीम कहने में इस तरफ़ इशारा है कि सूरः फ़ातिहा एक हैसियत से पूरा क़ुरआन है, क्योंकि इस्लाम के सब उसूल उसमें समोये हुए हैं।

मेहशर में सवाल किस चीज़ का होगा?

ऊपर ज़िक्र हुई आयत में हक़ तआ़ला ने अपनी पाक ज़ात की क़सम खाकर फ़रमाया है कि इन सब अगलों-पिछलों से ज़रूर सवाल और पूछगछ होगी।

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया कि यह सवाल किस मामले के मुताल्लिक़ होगा? तो आपने फ़रमाया कौल ला इला-ह इल्लल्लाहु के मुताल्लिक़। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इस रिवायत को नक़ल करके फ़रमाया है कि हमारे नज़दीक इससे मुराद उस अ़हद को अ़मली तौर पर पूरा करना है जिसकी अ़लामत कलिमा तय्यिबा ला इला-ह इल्लल्लाहु है, महज़ ज़बानी कौल मक़सूद नहीं। क्योंकि ज़बान से इक़रार तो मुनाफ़िक़ लोग भी करते थे। हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि ईमान किसी ख़ास शक्ल व सूरत बनाने से और दीन महज़ तमन्नायें करने से नहीं बनता, बल्कि ईमान उस यक़ीन का नाम है जो दिल में डाल दिया गया हो, और आमाल ने उसकी तस्दीक़ की हो जैसा कि एक हदीस में हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स इख़्लास के साथ ला इला-ह इल्लल्लाहु कहेगा वह ज़रूर जन्नत में जायेगा। लोगों ने पूछा या रसूलल्लाह! इस कलिमे में इख़्लास का क्या मतलब है? आपने फ़रमाया कि जब यह कलिमा इनसान को अल्लाह के हराम किये हुए और नाजायज़ कामों से रोक दे तो वह इख़्लास के साथ है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

तब्लीग़ व दावत में गुंजाईश के मुताबिक़ चरणबद्धता हो

فَاصْدَعْ بِمَا تُؤْمَرُ

इस आयत के नाज़िल होने से पहले रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम छुप-छुपकर इबादत और तिलावत करते थे और तब्लीग़ व रहनुमाई का सिलसिला भी ख़ुफ़िया ही एक-एक दो-दो फ़र्द के साथ जारी था, क्योंकि इज़हार व ऐलान में काफ़िरों की तरफ़ से तकलीफ़ पहुँचाने का ख़तरा था। इस आयत में हक़ तआ़ला ने मज़ाक़ करने वालों और तकलीफ़ देने वाले काफ़िरों की तकलीफ़ से महफ़ूज़ रखने की ख़ुद ज़िम्मेदारी ले ली, इसलिये उस वक़्त बेफ़िक्री के साथ ऐलान व इज़हार के ज़रिये तिलावत व इबादत और तब्लीग़ व दावत का सिलसिला शुरू हुआ।

إِنَّا كَفَيْنَٰكَ ٱلْمُسْتَهْزِءِينَ۝

(यानी आयत नम्बर 95) में जिन लोगों का ज़िक्र है उनके लीडर पाँच आदमी थे, आ़स बिन वाईल, अस्वद बिन अल्-मुत्तलिब, अस्वद बिन अ़ब्दे यग़ूस, वलीद बिन मुग़ीरा, हारिस बिन अत्तुलातिला। ये पाँचों चमत्कारी तौर पर एक ही वक़्त में हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम के इशारे से हलाक कर दिये गये। इस वाक़िए से तब्लीग़ व दावत के मामले में यह हासिल हुआ कि अगर इनसान किसी ऐसे मक़ाम या ऐसे हाल में मुब्तला हो जाये कि वहाँ हक़ बात को खुल्लम खुल्ला कहने से उन लोगों को तो कोई फ़ायदा पहुँचने की उम्मीद न हो और अपने आपको नुक़सान व तकलीफ़ पहुँचने का अन्देशा हो तो ऐसी हालत में यह काम ख़ुफ़िया तौर पर करना भी दुरुस्त और जायज़ है, अलबत्ता जब इज़हार व ऐलान की क़ुदरत हो जाये तो फिर ऐलान में कोताही न की जाये।

दुश्मनों के सताने से तंगदिली का इलाज

وَلَقَدْ نَعْلَمُ .... حَتَّىٰ يَأْتِيَكَ ٱلْيَقِينُ۝

(यानी आयत नम्बर 97-99) से मालूम होता है कि जब इनसान को दुश्मनों की बातों से रंज पहुँचे और तंगदिली पेश आये तो उसका रूहानी इलाज यह है कि अल्लाह तआ़ला की तस्बीह व इबादत में मशग़ूल हो जाये, अल्लाह तआ़ला ख़ुद उसकी तकलीफ़ को दूर फ़रमा देंगे।

(अल्लाह तआ़ला का शुक्र व एहसान है कि सूरः हिज्र की तफ़सीर पूरी हुई।)

* सूरः नहल *

यह सूरत मक्की है। इसमें 128 आयतें
और 16 रुकूअ़ हैं।

सूरः नहल

सूरः नहल मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 128 आयतें और 16 रुकूअ़ हैं।

اٰيَاتُهَا ١٢٨ (١٦) سُوْرَةُ النَّحْلِ مَكِّيَّةٌ (٧٠) رُكُوْعَاتُهَا ١٦

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَتٰىٓ اَمْرُ اللّٰهِ فَلَا تَسْتَعْجِلُوْهُ ؕ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝ يُنَزِّلُ الْمَلٰٓئِكَةَ بِالرُّوْحِ مِنْ اَمْرِهٖ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖٓ اَنْ اَنْذِرُوْٓا اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنَا فَاتَّقُوْنِ ۝

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अता अम्रुल्लाहि फला तस्तअ्जिलूहु, सुब्हानहू व तआ़ला अ़म्मा युश्रिकून (1) युनज़्ज़िलुल्-मलाइ-क-त बिर्रूहि मिन् अम्रिही अ़ला मंय्यशा-उ मिन् अ़िबादिही अन् अन्ज़िरू अन्नहू ला इला-ह इल्ला अ-न फत्तक़ून (2)	आ पहुँचा हुक्म अल्लाह का सो उसकी जल्दी मत करो, वह पाक है और बरतर है उनके शरीक बतलाने से। (1) उतारता है फ़रिश्तों को भेद देकर अपने हुक्म से जिस पर चाहे अपने बन्दों में कि ख़बरदार कर दो कि किसी की बन्दगी नहीं सिवाय मेरे, सो मुझसे डरो। (2)

इस सूरत का नाम 'नहल' होने की वजह

इस सूरत का नाम सूरः नहल इस मुनासबत से रखा गया है कि इसमें नहल यानी शहद की मक्खियों का ज़िक्र क़ुदरत की अ़जीब व ग़रीब कारीगरी के बयान के सिलसिले में हुआ है। इस का दूसरा नाम सूरः निअ़म् भी है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

निअ़म् नेमत की जमा (बहुवचन) है। इसलिये कि इस सूरत में ख़ास तौर पर अल्लाह जल्ल शानुहू की बड़ी नेमतों का ज़िक्र है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ख़ुदा तआ़ला का हुक्म (यानी कुफ़्र की सज़ा का वक़्त) आ पहुँचा, सो तुम उसमें (इनकार

करने वाली) जल्दी मत मचाओ (बल्कि तौहीद इख़्तियार करो और उसकी हक़ीक़त सुनो कि) वह लोगों के शिर्क से पाक और बरतर है। वह अल्लाह तआला फ़रिश्तों (की जिन्स यानी जिब्रील) को वही यानी अपना हुक्म देकर अपने बन्दों में से जिस पर चाहें (यानी नबियों पर) नाज़िल फ़रमाते हैं (और वह हुक्म) यह (है) कि लोगों को ख़बरदार कर दो कि मेरे सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, सो मुझसे डरते रहो (यानी मेरे साथ किसी को शरीक न ठहराओ वरना सज़ा होगी)।

मआरिफ़ व मसाईल

इस सूरत को बग़ैर किसी ख़ास प्रारंभिका के एक सख़्त सज़ा की धमकी और डरावने उनवान से शुरू किया गया, जिसकी वजह से मुश्रिकों का कहना यह था कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) हमें क़ियामत से और अल्लाह के अ़ज़ाब से डराते रहते हैं और बतलाते हैं कि अल्लाह तआला ने उनको ग़ालिब करने और मुख़ालिफ़ों को सज़ा देने का वायदा किया है, हमें तो यह कुछ भी होता नज़र नहीं आता। इसके जवाब में इरशाद फ़रमाया कि "आ पहुँचा हुक्म अल्लाह का, तुम जल्दबाज़ी न करो।"

अल्लाह के हुक्म से इस जगह मुराद वह वायदा है जो अल्लाह ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किया है कि उनके दुश्मनों को पस्त व पराजित किया जायेगा और मुसलमानों को फ़तह व मदद और इज़्ज़त व दबदबा हासिल होगा। इस आयत में हक़ तआला ने डरावने और ख़ौफ़ दिलाने के लहजे में इरशाद फ़रमाया कि हुक्म अल्लाह का आ पहुँचा, यानी पहुँचने ही वाला है, जिसको तुम बहुत जल्द देख लोगे।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इसमें अल्लाह के हुक्म से मुराद क़ियामत है, उसके आ पहुँचने का मतलब भी यही है कि वह जल्द ही क़ायम होगी और पूरी दुनिया की उम्र के एतिबार से देखा जाये तो क़ियामत का क़रीब होना या आ पहुँचना भी कुछ दूर नहीं रहता। (बहरे-मुहीत)

इसके बाद एक जुमले में जो यह इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआला शिर्क से पाक है, इससे मुराद यह है कि ये लोग जो हक़ तआला के वायदे को ग़लत क़रार दे रहे हैं यह कुफ़्र व शिर्क है, अल्लाह तआला उससे पाक हैं। (बहरे-मुहीत)

इस आयत का ख़ुलासा एक सख़्त वईद (सज़ा के वायदे और धमकी) के ज़रिये तौहीद की दावत देना है। दूसरी आयत में रिवायती व नक़ली दलील से तौहीद को साबित करना है कि आदम अलैहिस्सलाम से लेकर ख़ातिमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक दुनिया के विभिन्न ख़ित्तों, विभिन्न ज़मानों में जो भी रसूल आया है उसने यही तौहीद का अक़ीदा पेश किया है, हालाँकि एक को दूसरे के हाल और तालीम की ज़ाहिरी असबाब के दर्जे में कोई इत्तिला भी न थी। ग़ौर करो कि कम से कम एक लाख चौबीस हज़ार अक़्लमन्द हज़रात (यानी अम्बिया अलैहिमुस्सलाम) जो विभिन्न वक़्तों, विभिन्न मुल्कों, विभिन्न ख़ित्तों में पैदा हों और वे सब एक ही बात के क़ायल हों तो फ़ितरी तौर पर इनसान यह समझने पर मजबूर हो जाता है

कि यह बात ग़लत नहीं हो सकती, ईमान लाने के लिये अकेली यह दलील भी काफ़ी है।

लफ़्ज़ रूह से मुराद इस आयत में बक़ौल इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वही और बक़ौल कुछ दूसरे मुफ़स्सिरीन हिदायत है। (बहरे-मुहीत) इस आयत में तौहीद का रिवायती और नक़ली सुबूत पेश करने के बाद अगली आयतों में इसी तौहीद के अ़क़ीदे को अ़क़्ली तौर से हक़ तआ़ला की नेमतें सामने पेश करके साबित किया जाता है। इरशाद है:

خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ۭ تَعٰلٰى عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝ خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ نُّطْفَةٍ فَاِذَا هُوَ خَصِيْمٌ مُّبِيْنٌ ۝ وَالْاَنْعَامَ خَلَقَهَا ۚ لَكُمْ فِيْهَا دِفْءٌ وَّمَنَافِعُ وَمِنْهَا تَاْكُلُوْنَ ۝ وَلَكُمْ فِيْهَا جَمَالٌ حِيْنَ تُرِيْحُوْنَ وَحِيْنَ تَسْرَحُوْنَ ۝ وَتَحْمِلُ اَثْقَالَكُمْ اِلٰى بَلَدٍ لَّمْ تَكُوْنُوْا بٰلِغِيْهِ اِلَّا بِشِقِّ الْاَنْفُسِ ۭ اِنَّ رَبَّكُمْ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَّالْخَيْلَ وَالْبِغَالَ وَالْحَمِيْرَ لِتَرْكَبُوْهَا وَزِيْنَةً ۭ وَيَخْلُقُ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝

ख़ा-लक़स्समावाति वल्अर्-ज बिल्हक़्क़ि, तआ़ला अ़म्मा युश्रिकून (3) ख़-लक़ल्-इन्सा-न मिन् नुत्फ़तिन् फ़-इज़ा हु-व ख़सीमुम्-मुबीन (4) वल्-अन्आ़-म ख़ा-ल-क़हा लकुम् फ़ीहा दिफ़्उंव्-व मनाफ़िअ़ु व मिन्हा तअ्कुलून (5) व लकुम् फ़ीहा जमालुन् ही-न तुरीहू-न व ही-न तस्रहून (6) व तह्मिलु अस्क़ा-लकुम् इला ब-लदिल्-लम् तकूनू बालिग़ीहि इल्ला बिशिक़्क़िल्-अन्फ़ुसि, इन्-न रब्बकुम् ल-रऊफ़ुर्-रहीम (7) वल्ख़ै-ल वल्बिग़ा-ल वल्हमी-र लितर्कबूहा व ज़ी-नतन्, व यख़्लुक़ु मा ला तअ़्लमून (8)	बनाये आसमान और ज़मीन ठीक-ठीक, वह बरतर है उनके शरीक बतलाने से। (3) बनाया आदमी को एक बूँद से फिर जब ही हो गया झगड़ा करने वाला बोलने वाला। (4) और चौपाये बना दिये तुम्हारे वास्ते उनमें जड़ावल है और कितने फ़ायदे, और बाज़ों को खाते हो। (5) और तुमको उनसे इज़्ज़त है जब शाम को चराकर लाते हो और जब चराने ले जाते हो। (6) और उठा ले चलते हैं तुम्हारे बोझ उन शहरों तक कि तुम न पहुँचते वहाँ मगर जान मारकर। बेशक तुम्हारा रब बड़ा शफ़क़त करने वाला मेहरबान है। (7) और घोड़े पैदा किये और ख़च्चर और गधे कि उन पर सवार हो और ज़ीनत के लिये, और पैदा करता है जो तुम नहीं जानते। (8)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(अल्लाह तआला ने) आसमानों को और ज़मीन को हिक्मत से बनाया, वह उनके शिर्क से पाक है। (और) इनसान को नुत्फ़े से बनाया फिर वह अचानक खुल्लम-खुल्ला (ख़ुदा ही की ज़ात व सिफ़ात में) झगड़ने लगा (यानी बाज़े ऐसे भी हुए। मतलब यह है कि हमारी ये नेमतें और इनसान की तरफ़ से नाशुक्री)। और उसी ने चौपायों को बनाया, उनमें तुम्हारे जाड़े का भी सामान है (जानवरों के बाल और खाल से इनसान के पोस्तीन और कपड़े बनते हैं) और भी बहुत-से फ़ायदे हैं (दूध, सवारी, बोझ लेजाना वग़ैरह) और उनमें (जो खाने के क़ाबिल हैं उनको) खाते भी हो। और उनकी वजह से तुम्हारी रौनक़ भी है, जबकि शाम के वक़्त (जंगल से घर) लाते हो और जबकि सुबह के वक़्त (घर से जंगल को) छोड़ देते हो। और वे तुम्हारे बोझ भी (लादकर) ऐसे शहर को लेजाते हैं जहाँ तुम जान को मेहनत में डाले बिना नहीं पहुँच सकते थे, वाक़ई तुम्हारा रब बड़ी शफ़कत वाला, बड़ी रहमत वाला है (कि तुम्हारे आराम के लिये क्या-क्या सामान पैदा किये)। और घोड़े और ख़च्चर और गधे भी पैदा किये ताकि तुम उन पर सवार हो और यह कि ज़ीनत (रौनक़ व सजावट) के लिये भी, और वह ऐसी-ऐसी चीज़ें (तुम्हारी सवारी वग़ैरह के लिये) बनाता है जिनकी तुमको ख़बर भी नहीं।

मआरिफ़ व मसाईल

इन आयतों में कायनात की पैदाईश की अज़ीम निशानियों से हक़ तआला की तौहीद (एक और तन्हा लायक़े इबादत होने) को साबित करना है। अव्वल तो आसमान व ज़मीन की सबसे पहली मख़्लूक़ का ज़िक्र फ़रमाया, उसके बाद इनसान की पैदाईश का ज़िक्र फ़रमाया, जिसको अल्लाह तआला ने कायनात का मख़दूम (सेव्य) बनाया है। इनसान की शुरूआत एक हक़ीर नुत्फ़े से होना बयान करके फ़रमायाः

فَإِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُّبِينٌ ○

यानी जब इस पैदाईशी कमज़ोर इनसान को ताक़त और बोलने की क़ुव्वत अ़ता हुई तो ख़ुदा ही की ज़ात व सिफ़ात में झगड़े निकालने लगा।

इनसान के बाद उन चीज़ों की पैदाईश और बनाने का ज़िक्र फ़रमाया जो इनसान के फ़ायदे के लिये ख़ुसूसी तौर पर बनाई गई हैं, और क़ुरआन के सबसे पहले मुख़ातब चूँकि अ़रब वाले थे और अ़रब वालों की रोज़ी-रोटी और गुज़ारे का बड़ा मदार पालतू चौपायों ऊँट, गाय, बकरी पर था इसलिये पहले उनका ज़िक्र फ़रमायाः

وَالْأَنْعَامَ خَلَقَهَا

फिर मवेशी जानवरों से जो फ़ायदे इनसान को हासिल होते हैं उनमें से दो फ़ायदे ख़ास तौर से बयान कर दिये, एक—

لَكُمْ فِيهَا دِفْءٌ

यानी उन जानवरों की ऊन से इनसान अपने कपड़े और खाल से पोस्तीन और टोपियाँ वग़ैरह तैयार करके जाड़े के मौसम में गरमाई हासिल करता है।

दूसरा फ़ायदा–

وَمِنْهَا تَأْكُلُوْنَ٥

यानी इनसान उन जानवरों को ज़िबह करके अपनी ख़ुराक भी बना सकता है, और जब तक ज़िन्दा है उनके दूध से अपनी बेहतरीन ग़िज़ा पैदा करता है। दूध, दही, मक्खन, घी और इनसे बनने वाली तमाम चीज़ें इसमें शामिल हैं।

और बाक़ी आ़म फ़ायदों के लिये फ़रमा दिया 'व मनाफ़िअ़' यानी बेशुमार नफ़े व फ़ायदे इनसान के जानवरों के गोश्त, चमड़े, हड्डी और बालों से जुड़े हुए हैं, इस संक्षिप्तता और अस्पष्ट बयान में उन सब नई से नई ईजादात (आविषकारों) की तरफ़ भी इशारा है जो जानवरों के अंगों से इनसान की ग़िज़ा, लिबास, दवा और इस्तेमाली चीज़ों के लिये अब तक ईजाद हो चुकी हैं, या आगे क़ियामत तक होंगी।

इसके बाद उन चौपाये जानवरों का एक और फ़ायदा अ़रब वालों के मिज़ाज व पसन्द के मुताबिक़ यह बयान किया गया कि वे तुम्हारे लिये ख़ूबसूरती और रौनक़ का ज़रिया हैं। ख़ुसूसन जब वे शाम को चरागाहों से तुम्हारे मवेशी ख़ानों (बाड़ों) की तरफ़ आते हैं या सुबह को घरों से चरागाहों की तरफ़ जाते हैं, क्योंकि उस वक़्त मवेशी से उनके मालिकों की ख़ास शान व शौकत का इज़हार व प्रदर्शन होता है।

आख़िर में इन जानवरों का एक और अहम फ़ायदा यह बयान किया कि ये जानवर तुम्हारे बोझल सामान दूर-दराज़ शहरों तक पहुँचा देते हैं, जहाँ तुम्हारी और तुम्हारे सामान की रसाई जान जोखिम में डाले बग़ैर मुम्किन न थी। ऊँट और बैल ख़ास तौर से इनसान की यह ख़िदमत बड़े पैमाने पर अन्जाम देते हैं। आज रेल गाड़ियों, ट्रकों, हवाई जहाज़ों के ज़माने में भी इनसान जानवरों से बेपरवाह नहीं, कितने मक़ामात दुनिया में ऐसे हैं जहाँ ये तमाम नई ईजाद होने वाली सवारियाँ बोझ ढोने का काम नहीं दे सकतीं, वहाँ फिर इन्हीं की सेवायें हासिल करने पर इनसान मजबूर होता है।

चौपाये जानवरों यानी ऊँट और बैल वग़ैरह के बोझ उठाने का ज़िक्र आया तो इसके बाद उन चौपाये जानवरों का ज़िक्र भी मुनासिब मालूम हुआ जिनकी पैदाईश ही सवारी और बोझ ढोने के लिये है, उनके दूध या गोश्त से इनसान का फ़ायदा जुड़ा हुआ नहीं, क्योंकि शरीअ़त के के हुक्म के मुताबिक़ वे अख़्लाक़ी बीमारियों का सबब होने की वजह से वर्जित और मना हैं। फ़रमाया–

وَالْخَيْلَ وَالْبِغَالَ وَالْحَمِيْرَ لِتَرْكَبُوْهَا وَزِيْنَةً

"यानी हमने घोड़े, ख़च्चर, गधे पैदा किये ताकि तुम उन पर सवार हो सको, इसमें बोझ

उठाना भी ज़िमनी तौर पर आ गया और उनको इसलिये भी पैदा किया कि ये तुम्हारे लिये ज़ीनत बनें।'' ज़ीनत से वही शान व शौकत मुराद है जो उर्फ़ में इन जानवरों के मालिकों को दुनिया में हासिल होती है।

क़ुरआन में रेल, मोटर, हवाई जहाज़ का ज़िक्र

आख़िर में सवारी के तीन जानवर घोड़े, ख़च्चर, गधे का ख़ास तौर से बयान करने के बाद दूसरी क़िस्म की सवारियों के बारे में भविष्यकाल का कलिमा फ़रमायाः

وَيَخْلُقُ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ٥

''यानी अल्लाह तआला पैदा करेगा वो चीज़ें जिनको तुम नहीं जानते।''

इसमें वो तमाम नई ईजाद होने वाली सवारी गाड़ियाँ भी दाख़िल हैं जिनका पुराने ज़माने में न वजूद था न कोई कल्पना, जैसे रेल, मोटर, हवाई जहाज़ वग़ैरह जो अब तक ईजाद हो चुके हैं, और वो तमाम चीज़ें भी इसमें दाख़िल हैं जो आने वाले ज़माने में ईजाद होंगी, क्योंकि उन सब चीज़ों की पैदाईश और ईजाद दर हक़ीक़त अल्लाह तआला ही का फ़ेल है, नये व पुराने विज्ञान का इसमें सिर्फ़ इतना ही काम है कि क़ुदरत की पैदा की हुई धातुओं में क़ुदरत ही की दी हुई अक़्ल व समझ के ज़रिये जोड़-तोड़ करके उनके विभिन्न कल-पुर्ज़े बना ले, और फिर उसमें अल्लाह की क़ुदरत की बख़्शी हुई हवा, पानी, आग वग़ैरह से ऊर्जा पैदा कर ले, या क़ुदरत ही के दिये हुए ख़ज़ानों में से पेट्रोल निकालकर उन सवारियों में इस्तेमाल कर ले। पुराना और नया विज्ञान मिलकर भी न कोई लोहा पैदा कर सकता है न एल्यूमिनियम क़िस्म की हल्की धातें बना सकता है, न लकड़ी पैदा कर सकता है, न हवा और पानी पैदा करना उसके बस में है, उसका काम इससे ज़्यादा नहीं कि अल्लाह की क़ुदरत की पैदा की हुई क़ुव्वतों का इस्तेमाल सीख ले, दुनिया की सारी ईजादात सिर्फ़ इसी इस्तेमाल की तफ़सील हैं, इसलिये जब ज़रा भी कोई ग़ौर व फ़िक्र से काम ले तो इन सब नई ईजादों को अल्लाह पैदा करने वाले की कारीगरी कहने और तस्लीम करने के सिवा चारा नहीं।

यहाँ यह बात ख़ास तौर से ध्यान देने के क़ाबिल है कि पिछली तमाम चीज़ों की तख़्लीक़ (बनाने) में भूतकाल का लफ़्ज़ **ख़-ल-क़** इस्तेमाल फ़रमाया गया है, और परिचित सवारियों का ज़िक्र करने के बाद भविष्यकाल का लफ़्ज़ **यख़्लुक़ु** इरशाद हुआ है। उनवान की इस तब्दीली से वाज़ेह हो गया कि यह लफ़्ज़ उन सवारियों और चीज़ों के बारे में है जो अभी वजूद में नहीं आईं, और अल्लाह तआला के इल्म में है कि आने वाले ज़माने में क्या-क्या सवारियाँ और दूसरी चीज़ें पैदा करनी हैं, उनका इज़हार इस मुख़्तसर जुमले में फ़रमा दिया।

हक़ तआला शानुहू यह भी कर सकते थे कि आगे चलकर वजूद में आने वाली तमाम नई ईजादों का नाम लेकर ज़िक्र फ़रमा देते, मगर उस ज़माने में अगर रेल, मोटर, जहाज़ वग़ैरह के अलफ़ाज़ ज़िक्र भी कर दिये जाते तो इससे सिवाय ज़ेहनी परेशानी के कोई फ़ायदा न होता क्योंकि इन चीज़ों का उस वक़्त तसव्वुर (कल्पना) करना भी लोगों के लिये आसान न था और

न ये अलफ़ाज़ इन चीज़ों के लिये किसी वक़्त कहीं इस्तेमाल में आते थे कि इससे कुछ मतलब समझा जा सके।

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुहम्मद यासीन साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि हमारे उस्ताद हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि क़ुरआने करीम में रेल का ज़िक्र मौजूद है और इसी आयत से दलील दिया करते थे। उस वक़्त तक मोटरें आ़म न हुई थीं और हवाई जहाज़ ईजाद न हुए थे, इसलिये रेल के ज़िक्र पर बस फ़रमाया।

मसलाः क़ुरआने करीम ने पहले अन्आ़म यानी ऊँट, गाय, बकरी का ज़िक्र फ़रमाया और उनके फ़ायदों में से एक अहम फ़ायदा उनका गोश्त खाना भी क़रार दिया, फिर इससे अलग करके फ़रमायाः

وَالْخَيْلَ وَالْبِغَالَ وَالْحَمِيْرَ

उनके फ़ायदों में सवारी लेने और उनसे अपनी ज़ीनत हासिल करने का तो ज़िक्र किया मगर गोश्त खाने का यहाँ ज़िक्र नहीं किया। इसमें यह दलालत पाई जाती है कि घोड़े, ख़च्चर, गधे का गोश्त हलाल नहीं, ख़च्चर और गधे का गोश्त हराम होने पर तो फ़ुक़हा की अक्सरियत का इत्तिफ़ाक़ है और एक मुस्तक़िल हदीस में इनके हराम होने का खुलकर भी ज़िक्र आया है, मगर घोड़े के मामले में हदीस की दो रिवायतें एक दूसरे से टकराने वाली आई हैं, एक से हलाल और दूसरी से हराम होना मालूम होता है, इसी लिये उम्मत के फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) के अक़वाल इस मसले में भिन्न और अलग-अलग हो गये, कुछ ने हलाल क़रार दिया कुछ ने हराम। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने दलीलों के इसी टकराने की वजह से घोड़े के गोश्त को गधे और ख़च्चर की तरह हराम तो नहीं कहा मगर मक्रूह क़रार दिया।

(अहकामुल-क़ुरआन जस्सास)

मसलाः इस आयत से जमाल और ज़ीनत (बनाव-सिंघार) का जायज़ होना मालूम होता है अगरचे इतराना और तकब्बुर हराम हैं, फ़र्क़ यह है कि जमाल और ज़ीनत का हासिल अपने दिल की ख़ुशी या अल्लाह तआ़ला की नेमत का इज़्हार होता है, न दिल में अपने को उस नेमत का मुस्तहिक़ समझता है और न दूसरों को हक़ीर जानता है, बल्कि हक़ तआ़ला का अ़तीया और इनाम होना उसके सामने होता है। और तकब्बुर व बड़ाई में अपने आपको उस नेमत का मुस्तहिक़ समझना, दूसरों को हक़ीर समझना पाया जाता है, वह हराम है। (बयानुल-क़ुरआन)

وَعَلَى اللّٰهِ قَصْدُ السَّبِيْلِ وَمِنْهَا جَآئِرٌ ۗ وَلَوْ شَآءَ لَهَدٰىكُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝

व अ़लल्लाहि क़स्दुस्सबीलि व मिन्हा जा-इरुन्, व लौ शा-अ ल-हदाकुम् अज्मअ़ीन (9) ✽	और अल्लाह तक पहुँचती है सीधी राह और बाज़ी राह टेढ़ी भी है, और अगर वह चाहे तो सीधी राह दे तुम सब को। (9) ✽

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (पीछे बयान हुए और आगे आने वाले दलाईल से जो) सीधा रास्ता (दीन का साबित होता है वह ख़ास) अल्लाह तआ़ला तक पहुँचता है, और बाज़े रास्ते (जो कि दीन के ख़िलाफ़ हैं) टेढ़े भी हैं (कि उनसे अल्लाह तक रसाई मुम्किन नहीं। पस बाज़े तो सीधे रास्ते पर चलते हैं और बाज़े टेढ़े पर) और अगर ख़ुदा तआ़ला चाहता तो तुम सब को (मन्ज़िले) मक़सूद तक पहुँचा देता (मगर वह उसी को पहुँचाते हैं जो सही राह का तालिब भी हो जैसा कि क़ुरआन पाक में एक जगह फ़रमाया है– 'वल्लज़ी-न जाहदू फ़ीना ल-नह्दियन्नहुम् सुबु-लना' इसलिये तुमको चाहिये कि दलीलों में ग़ौर करो और उनसे हक़ को तलब करो, ताकि तुमको मन्ज़िले मक़सूद तक रसाई और पहुँच अ़ता हो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में अल्लाह तआ़ला शानुहू की अ़ज़ीमुश्शान नेमतों का ज़िक्र फ़रमाकर तौहीद की अ़क़्ली दलीलें जमा की गयी हैं, आगे भी उन्हीं नेमतों का ज़िक्र है, बीच में यह आयत बयान हो रहे मज़मून से हटकर एक दूसरा मज़मून बयान करने के लिये इस बात पर तंबीह के लिये लाई गई है कि अल्लाह तआ़ला ने अपने पुराने वायदे की बिना पर अपने ज़िम्मे ले लिया है कि लोगों के लिये वह सिरात-ए-मुस्तक़ीम (सीधा रास्ता) स्पष्ट कर दे जो अल्लाह तआ़ला तक पहुँचाने वाला है, इसी लिये अल्लाह की नेमतों को पेश करके अल्लाह तआ़ला के वजूद और तौहीद की दलीलें जमा की जा रही हैं।

लेकिन इसके विपरीत कुछ लोगों ने दूसरे टेढ़े रास्ते भी इख़्तियार कर रखे हैं, वे इन तमाम स्पष्ट आयतों और दलीलों से कुछ फ़ायदा नहीं उठाते, बल्कि गुमराही में भटकते रहते हैं।

फिर इरशाद फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआ़ला चाहते कि सब को सीधे रास्ते पर मजबूर करके डाल दें तो उनके इख़्तियार में था, मगर हिक्मत व मस्लेहत का तक़ाज़ा यह था कि ज़बरदस्ती न की जाये, दोनों रास्ते सामने कर दिये जायें, चलने वाला जिस रास्ते पर चलना चाहे चला जाये, सिरात-ए-मुस्तक़ीम अल्लाह तआ़ला और जन्नत तक पहुँचायेगा और टेढ़े रास्ते जहन्नम पर पहुँचायेंगे। इनसान को इख़्तियार दे दिया कि जिसको चाहे चुन ले।

هُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَاۗءِ

مَاۗءً لَّكُمْ مِّنْهُ شَرَابٌ وَّمِنْهُ شَجَرٌ فِيْهِ تُسِيْمُوْنَ ۝ يُنْۢبِتُ لَكُمْ بِهِ الزَّرْعَ وَالزَّيْتُوْنَ وَالنَّخِيْلَ وَ الْاَعْنَابَ وَمِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝ وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۙ وَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ ۭ وَالنُّجُوْمُ مُسَخَّرٰتٌۢ بِاَمْرِهٖ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ۝ وَمَا ذَرَاَ لَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُخْتَلِفًا اَلْوَانُهٗ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّذَّكَّرُوْنَ ۝ وَهُوَ الَّذِيْ سَخَّرَ الْبَحْرَ

لِتَأْكُلُوْا مِنْهُ لَحْمًا طَرِيًّا وَّتَسْتَخْرِجُوْا مِنْهُ حِلْيَةً تَلْبَسُوْنَهَا ۚ وَتَرَى الْفُلْكَ مَوَاخِرَ فِيْهِ وَلِتَبْتَغُوْا مِنْ فَضْلِهٖ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ وَاَلْقٰى فِي الْاَرْضِ رَوَاسِيَ اَنْ تَمِيْدَ بِكُمْ وَاَنْهٰرًا وَّسُبُلًا لَّعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝ وَعَلٰمٰتٍ ۚ وَبِالنَّجْمِ هُمْ يَهْتَدُوْنَ ۝

हुवल्लज़ी अन्ज़-ल मिनस्समा-इ माअल्लकुम् मिन्हु शराबुंव्-व मिन्हु श-जरुन् फ़ीहि तुसीमून (10) युम्बितु लकुम् बिहिज़्ज़र्-अ वज़्ज़ैतू-न वन्नख़ी-ल वल्-अअ्ना-ब व मिन् कुल्लिस्स-मराति, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल्-लिक़ौमिंय्य-तफ़क्करून (11) व सख़्ख़-र लकुमुल्लै-ल वन्नहा-र वश्शम्-स वल्क़-म-र, वन्नुजूमु मुसख़्ख़रातुम्-बिअम्रिही, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल् -लिक़ौमिंय्यअ्क़िलून (12) व मा ज़-र-अ लकुम् फ़िल्अर्ज़ि मुख़्तलिफ़न् अल्वानुहू, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल् लिक़ौमिंय्-यज़्ज़क्करून (13) व हुवल्लज़ी सख़्ख़रल्-बह्-र लितअ्कुलू मिन्हु लह्मन् तरिय्यंव्-व तस्तख़्रिजू मिन्हु हिल्य-तन् तल्बसूनहा व तरल्फ़ुल्-क मवाख़ि-र फ़ीहि व लितब्तग़ू मिन् फ़ज़्लिही व लअ़ल्लकुम् तश्कुरून (14) व अल्क़ा फ़िल्अर्ज़ि

वही है जिसने उतारा आसमान से तुम्हारे लिये पानी, उससे पीते हो और उसी से पेड़ होते हैं जिसमें चराते हो। (10) उगाता है तुम्हारे वास्ते उससे खेती और ज़ैतून और खजूरें और अंगूर और हर किस्म के मेवे, इसमें यक़ीनन निशानी है उन लोगों के लिये जो ग़ौर करते हैं। (11) और तुम्हारे काम में लगा दिया रात और दिन और सूरज और चाँद को, और सितारे काम में लगे हैं उसके हुक्म से, इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो समझ रखते हैं। (12) और जो चीज़ें फैलाईं तुम्हारे वास्ते ज़मीन में रंग-बिरंग की, इसमें निशानी है उन लोगों के लिये जो सोचते हैं। (13) और वही है जिसने काम में लगा दिया दरिया को कि खाओ उसमें से गोश्त ताज़ा और निकालो उसमें से गहना जो पहनते हो, और देखता है तू कश्तियों को चलती हैं पानी फाड़कर उसमें और इस वास्ते कि तलाश करो उसके फ़ज़्ल से और ताकि एहसान मानो। (14)

रवासि-य अन् तमी-द बिकुम् व अन्हारंव्-व सुबुलल्-लअ़ल्लकुम् तस्तदून (15) व अ़लामातिन्, व बिन्नज्मि हुम् यस्तदून (16)	और रख दिये ज़मीन पर बोझ कि कभी झुक पड़े तुमको लेकर और बनाईं नदियाँ और रास्ते ताकि तुम राह पाओ। (15) और बनाईं निशानियाँ, और सितारों से लोग राह पाते हैं। (16)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम्हारे (फ़ायदे के) वास्ते आसमान से पानी बरसाया, जिससे तुमको पीने को मिलता है और जिस (के सबब) से पेड़ (पैदा होते) हैं जिनमें तुम (अपने मवेशियों को) चरने छोड़ देते हो। (और) उस (पानी) से तुम्हारे (फ़ायदे के) लिये खेती और ज़ैतून और खजूर और अंगूर और हर क़िस्म के फल (ज़मीन से) उगाता है, बेशक इस (ज़िक्र हुई बात) में सोचने वालों के लिये (तौहीद की) दलील (मौजूद) है। और उस (अल्लाह) ने तुम्हारे (फ़ायदे के) लिये रात और दिन और सूरज और चाँद को (अपनी क़ुदरत के) ताबे बनाया, और (इसी तरह और) सितारे (भी) उसके हुक्म से (उसकी क़ुदरत के) ताबे हैं। बेशक इस (ज़िक्र हुई बात) में (भी) अ़क़्ल रखने वाले लोगों के लिये (तौहीद की) चन्द दलीलें (मौजूद) हैं।

और (इसी तरह) उन चीज़ों को भी (अपनी क़ुदरत के) ताबे बनाया जिनको तुम्हारे (फ़ायदे के लिये) इस तौर पर पैदा किया कि उनकी क़िस्में (यानी जिन्सें, प्रजातियाँ और वर्ग) मुख़्तलिफ़ "यानी अलग-अलग और विविध" हैं (इसमें तमाम जानवर, पेड़-पौधे, बेजान चीज़ें, मुफ़रदात व मुरक्कबात दाख़िल हो गये) बेशक इस (ज़िक्र हुए) में (भी) समझदार लोगों के लिये (तौहीद की) दलील (मौजूद) है। और वह (अल्लाह) ऐसा है कि उसने दरिया को (भी अपनी क़ुदरत के) ताबे बनाया ताकि उसमें से ताज़ा-ताज़ा गोश्त (यानी मछली निकाल-निकालकर) खाओ, और (ताकि) उसमें से (मोतियों का) गहना निकालो जिसको तुम (मर्द व औरत सब) पहनते हो। और (ऐ मुख़ातब! इस दरिया का एक यह भी फ़ायदा है कि) तू कश्तियों को (चाहे छोटी हों या बड़ी जैसे बड़े जहाज़, तू उनको) देखता है कि उस (दरिया) में (उसका) पानी चीरती हुई चली जा रही हैं। और (इसलिये भी दरिया को अपनी क़ुदरत के ताबे बनाया) ताकि तुम (उसमें व्यापार का माल लेकर सफ़र करो और उसके ज़रिये से) ख़ुदा की रोज़ी तलाश करो और ताकि (इन सब फ़ायदों को देखकर उसका) शुक्र (अदा) करो।

और उसने ज़मीन में पहाड़ रख दिये ताकि वह (ज़मीन) तुमको लेकर डगमगाने (और हिलने) न लगे, और उसने (छोटी-छोटी) नहरें और रास्ते बनाये ताकि (उन रास्तों के ज़रिये से अपनी) मन्ज़िले-मक़सूद तक पहुँच सको। और (उन रास्तों की पहचान के लिये) बहुत-सी निशानियाँ बनाईं (जैसे पहाड़, पेड़, इमारतें वग़ैरह जिनसे रास्ता पहचाना जाता है, वरना अगर तमाम ज़मीन की सतह एक जैसी और बराबर हालत पर होती तो रास्ता हरगिज़ न पहचाना

जाता), और सितारों से भी लोग रास्ता मालूम करते हैं (चुनाँचे यह बात ज़ाहिर और मालूम है)।

मआरिफ़ व मसाईल

مِنْهُ شَجَرٌ فِيهِ تُسِيمُوْنَ○

लफ़्ज़ शजर अक्सर उस दरख़्त के लिये बोला जाता है जो तने पर खड़ा होता है और कभी बिना ख़ास किये ज़मीन से उगने वाली हर चीज़ को भी शजर कहते हैं। घास और बेल वग़ैरह भी इसमें दाख़िल होती हैं। इस आयत में यही मायने मुराद हैं, क्योंकि आगे जानवरों के चराने का ज़िक्र है, इसका ताल्लुक़ ज़्यादातर घास ही से है।

तुसीमून के मायने हैं जानवर को चरागाह में चरने के लिये छोड़ना।

اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ○

इन तमाम आयतों में अल्लाह तआ़ला की नेमतों और अ़जीब व ग़रीब हिक्मत के साथ कायनात के पैदा करने और बनाने का ज़िक्र है, जिसमें ग़ौर व फ़िक्र करने वालों को ऐसी दलीलें और सुबूत मिलते हैं कि उनसे हक़ तआ़ला की तौहीद (एक और तन्हा लायक़े इबादत होने) का गोया मुशाहदा होने लगता है। इसी लिये इन नेमतों का ज़िक्र करते-करते बार-बार इस पर सचेत किया गया है। इस आयत के आख़िर में फ़रमाया कि इसमें सोचने वालों के लिये दलील है क्योंकि खेती और दरख़्त और उनके फल-फूल वग़ैरह का ताल्लुक़ अल्लाह जल्ल शानुहू की कारीगरी व हिक्मत के साथ किसी क़द्र ग़ौर व फ़िक्र चाहता है, कि आदमी यह सोचे कि दाना या गुठली ज़मीन के अन्दर डालने से और पानी देने से तो ख़ुद-ब-ख़ुद यह नहीं हो सकता कि उसमें एक विशाल दरख़्त (पेड़) निकल आये और उस पर रंग-बिरंगे फूल लगने लगें, इसमें किसी काश्तकार ज़मीनदार के अ़मल का कोई दख़ल नहीं, यह सब मुकम्मल इख़्तियार रखने वाले यानी अल्लाह तआ़ला की कारीगरी व हिक्मत से वाबस्ता है, और इसके बाद रात, दिन और सितारों का अल्लाह तआ़ला के हुक्म के ताबे चलने का ज़िक्र आया तो आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ○

यानी "इन चीज़ों में चन्द दलीलें हैं अ़क़्ल वालों के लिये।"

इसमें इशारा इसकी तरफ़ है कि इन चीज़ों का अल्लाह के हुक्म के ताबे होना ऐसा ज़ाहिर है कि इसमें बहुत कुछ ग़ौर व फ़िक्र की ज़रूरत नहीं, जिसको ज़रा भी अ़क़्ल होगी वह समझ लेगा। क्योंकि पेड़-पौधों और दरख़्तों से उगाने में तो बज़ाहिर कुछ न कुछ इनसानी अ़मल का दख़ल था भी, यहाँ वह भी नहीं।

इसके बाद ज़मीन की दूसरी विभिन्न प्रकार की पैदावार की क़िस्मों का ज़िक्र फ़रमाकर फ़रमायाः

اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّذَّكَّرُوْنَ○

"कि इसमें दलील है उन लोगों के लिये जो नसीहत पकड़ते हैं।"

मुराद यह है कि यहाँ भी बहुत गहरे फ़िक्र व नज़र (अध्ययन और गहन विचार) की ज़रूरत नहीं, क्योंकि इसकी दलालत बिल्कुल खुली हुई है, मगर शर्त यह है कि कोई उसकी तरफ़ तवज्जोह से देखे और नसीहत हासिल करे, वरना बेवक़ूफ़ बेफ़िक्र आदमी जो इधर ध्यान ही न दे उसको इससे क्या फ़ायदा हो सकता है।

سَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ.

रात और दिन को ताबे बनाने का मतलब यह है कि उनको इनसान के काम में लगाने के लिये अपनी क़ुदरत का ताबे बना दिया कि रात इनसान को आराम के सामान मुहैया करती है और दिन उसके काम के रास्ते हमवार करता है। इनके ताबे करने के यह मायने नहीं कि रात और दिन इनसान के हुक्म के ताबे चलें।

هُوَ الَّذِىْ سَخَّرَ الْبَحْرَ لِتَأْكُلُوْا

आसमान व ज़मीन की मख़्लूक़ात और उनमें इनसान के मुनाफ़े और फ़ायदे बयान करने के बाद बहरे-मुहीत (यानी समन्दर) के अन्दर हक़ तआ़ला की आला हिक्मत से इनसान के लिये क्या-क्या फ़ायदे हैं उनका बयान है कि दरिया में इनसान की ख़ुराक का कैसा अच्छा इन्तिज़ाम किया गया है कि मछली का ताज़ा गोश्त उसको मिलता है।

لِتَأْكُلُوْا مِنْهُ لَحْمًا طَرِيًّا

के अलफ़ाज़ में मछली को ताज़ा गोश्त क़रार देने से इस तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि दूसरे जानवरों की तरह उसमें ज़िबह करने की शर्त नहीं, वह गोया बना बनाया गोश्त है।

وَتَسْتَخْرِجُوْا مِنْهُ حِلْيَةً تَلْبَسُوْنَهَا.

यह दरिया का दूसरा फ़ायदा बतलाया गया है कि उसमें ग़ोता लगाकर इनसान अपने लिये हिल्या निकाल लेता है। हिल्या के लफ़्ज़ी मायने ज़ीनत के हैं, मुराद वो मोती, मूँगा और जवाहिरात हैं जो समन्दर से निकलते हैं, और औरतें उनके हार बनाकर गले में या दूसरे तरीक़ों से कानों में पहनती हैं। ये ज़ेवर अगरचे औरतें पहनती हैं लेकिन क़ुरआन ने मुज़क्कर (पुल्लिंग) का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है 'तल्बसूनहा' यानी तुम लोग पहनते हो। इशारा इस बात की तरफ़ है कि औरतों का ज़ेवर पहनना दर हक़ीक़त मर्दों ही के फ़ायदे के लिये है, औरत की ज़ीनत (बनाव-सिंघार) दर हक़ीक़त मर्द का हक़ है, वह अपनी बीवी को ज़ीनत का लिबास और ज़ेवर पहनने पर मजबूर भी कर सकता है, इसके अ़लावा जवाहिरात का इस्तेमाल मर्द भी अंगूठी वग़ैरह में कर सकते हैं।

وَتَرَى الْفُلْكَ مَوَاخِرَ فِيْهِ وَلِتَبْتَغُوْا مِنْ فَضْلِهٖ

यह तीसरा फ़ायदा दरिया का बतलाया गया है। 'फ़ुल्क' के मायने कश्ती और मवाख़िर, माख़िरा की जमा (बहुवचन) है, मख़्र के मायने पानी को चीरने के हैं, मुराद वो कश्तियाँ और

समुद्री जहाज़ हैं जो पानी की मौजों को चीरते हुए रास्ता तय करते हैं।

आयत का मतलब यह है कि दरिया को अल्लाह तआ़ला ने दूर-दराज़ के शहरों के सफ़र का रास्ता बनाया है। दूर-दराज़ के मुल्कों में दरिया ही के ज़रिये सफ़र करना और तिजारती माल का मंगाना व भेजना आसान फ़रमा दिया है, और इसको रोज़ी के हासिल करने का उम्दा माध्यम क़रार दिया, क्योंकि दरिया के रास्ते से तिजारत सबसे ज़्यादा नफ़ा देने वाली होती है।

وَاَلْقٰى فِى الْاَرْضِ رَوَاسِىَ اَنْ تَمِيْدَ بِكُمْ

रवासिया, रासिया की जमा (बहुवचन) है, भारी पहाड़ को कहा जाता है। तमीद मेद मस्दर से निकला है जिसके मायने डगमगाना या बेचैनी के अन्दाज़ की हरकत करना है।

आयत के मायने यह हैं कि ज़मीन के कुर्रे को हक़ तआ़ला ने बहुत-सी हिक्मतों के सबब ठोस और संतुलित हिस्सों से नहीं बनाया इसलिये वह किसी तरफ़ से भारी किसी तरफ़ से हल्की वाक़े हुई है, इसका लाज़िमी नतीजा यह था कि ज़मीन को आ़म फ़लॉस्फ़रों की तरह साकिन (अपनी जगह ठहरी हुई) माना जाये या कुछ पुराने व नये फ़लॉस्फ़रों (वैज्ञानिकों) की तरह गोल घूमने वाली क़रार दिया जाये, दोनों हाल में ज़मीन के अन्दर एक इज़्तिराबी हरकत होती जिसको उर्दू हिन्दी में काँपने या डगमगाने से ताबीर किया जाता है। इस इज़्तिराबी हरकत को रोकने और ज़मीनी हिस्सों (भागों) को संतुलन में रखने के लिये हक़ तआ़ला ने ज़मीन पर पहाड़ों का वज़न रख दिया ताकि वह इज़्तिराबी (डगमगाने वाली) हरकत न कर सके, बाक़ी रहा मसला इसके गोल घूमने का जैसे कि तमाम सय्यारे (ग्रह) करते हैं और पुराने फ़लॉस्फ़रों में से फ़ीसा ग़ौरस की यही तहक़ीक़ थी, और नये फ़लॉस्फ़र सब इस पर एकमत हैं और नये अनुभवों व तहक़ीक़ात ने इसको और भी ज़्यादा स्पष्ट कर दिया है, क़ुरआने करीम में न कहीं इसको साबित किया गया है न इसकी नफ़ी की गयी है, बल्कि यह काँपने और डोलने की हरकत जिसको पहाड़ों के ज़रिये बन्द किया गया है उस गोल घूमने वाली हरकत के लिये और ज़्यादा सहयोगी होगी जो सय्यारों (ग्रहों) की तरह ज़मीन के लिये साबित की जाती है। वल्लाहु आलम

وَعَلٰمٰتٍ. وَبِالنَّجْمِ هُمْ يَهْتَدُوْنَ٥

ऊपर चूँकि व्यापारिक सफ़र का ज़िक्र आया है तो मुनासिब हुआ कि उन आसानियों का भी ज़िक्र किया जाये जो हक़ तआ़ला ने मुसाफ़िरों के लिये रास्ता तय करने और मन्ज़िले मक़सूद तक पहुँचाने के लिये ज़मीन व आसमान में पैदा फ़रमाई हैं। इसलिये फ़रमाया 'व अ़लामातिन्' यानी हमने ज़मीन में रास्ते पहचानने के लिये बहुत सी निशानियाँ पहाड़ों, दरियाओं, दरख़्तों, मकानों वग़ैरह के ज़रिये क़ायम कर दी हैं। ज़ाहिर है कि अगर ज़मीन एक सपाट कुर्रा होती तो इनसान किसी मन्ज़िल तक पहुँचने के लिये किस तरह रास्ते में भटकता।

وَبِالنَّجْمِ هُمْ يَهْتَدُوْنَ٥

यानी सफ़र करने वाले जैसे ज़मीनी निशानियों से रास्ता पहचानते हैं इसी तरह सितारों के ज़रिये भी दिशा व रुख़ मालूम करके रास्ता पहचान लेते हैं। इस उनवान में इस तरफ़ भी इशारा

मालूम होता है कि सितारों की तख़्लीक़ (बनाने) का असल मकसद तो कुछ और है, उसके साथ एक यह भी फ़ायदा है कि इनसे रास्ते भी पहचाने जाते हैं।

أَفَمَنْ يَخْلُقُ كَمَنْ لَّا يَخْلُقُ ۚ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿١٧﴾ وَإِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللَّهِ لَا تُحْصُوهَا ۗ
إِنَّ اللَّهَ لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٨﴾ وَاللَّهُ يَعْلَمُ مَا تُسِرُّونَ وَمَا تُعْلِنُونَ ﴿١٩﴾ وَالَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ
لَا يَخْلُقُونَ شَيْئًا وَّهُمْ يُخْلَقُونَ ﴿٢٠﴾ أَمْوَاتٌ غَيْرُ أَحْيَاءٍ ۖ وَمَا يَشْعُرُونَ أَيَّانَ يُبْعَثُونَ ﴿٢١﴾
إِلَٰهُكُمْ إِلَٰهٌ وَّاحِدٌ ۚ فَالَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ قُلُوبُهُمْ مُّنْكِرَةٌ وَّهُمْ مُّسْتَكْبِرُونَ ﴿٢٢﴾ لَا جَرَمَ
أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ۚ إِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْتَكْبِرِينَ ﴿٢٣﴾

अ-फ़मंय्यख़्लुक़ु कमल्-ला यख़्लुक़ु, अ-फ़ला तज़क्करून (17) व इन् तअुद्दू निअ़्मतल्लाहि ला तुह्सूहा, इन्नल्ला-ह ल-ग़फ़ूरुर्-रहीम (18) वल्लाहु यअ़्लमु मा तुसिर्रू-न व मा तुअ़्लिनून (19) वल्लज़ी-न यद्अू-न मिन् दूनिल्लाहि ला यख़्लुक़ू-न शैअंव्-व हुम् युख़्लक़ून (20) अम्वातुन् ग़ैरु अह्याइन्, वमा यश्अुरू-न अय्या-न युब्असून (21) ❁ इलाहुकुम् इलाहुंव्वाहिदुन् फ़ल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्आख़िरति क़ुलूबुहुम् मुन्कि-रतुंव्-व हुम् मुस्तक्बिरून (22) ला ज-र-म अन्नल्ला-ह यअ़्लमु मा युसिर्रू-न व मा युअ़्लिनू-न, इन्नहू ला युहिब्बुल्-मुस्तक्बिरीन (23)

भला जो पैदा करे बराबर है उसके जो कुछ न पैदा करे? क्या तुम सोचते नहीं। (17) और अगर शुमार करो अल्लाह की नेमतों को न पूरा कर सकोगे उनको। (18) बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (19) और अल्लाह तआ़ला जानता है जो तुम छुपाते हो और जो ज़ाहिर करते हो, और जिनको पुकारते हैं अल्लाह के सिवाय कुछ पैदा नहीं करते, और वे ख़ुद पैदा किए हुए हैं। (20) मुर्दे हैं जिनमें जान नहीं, और नहीं जानते कि कब उठाये जायेंगे। (21) ❁

माबूद तुम्हारा माबूद है अकेला, सो जिनको यकीन नहीं आख़िरत की ज़िन्दगी का उनके दिल नहीं मानते और वे घमण्डी हैं। (22) ठीक बात है कि अल्लाह जानता है जो कुछ छुपाते हैं और जो कुछ जाहिर करते हैं, बेशक वह नहीं पसन्द करता ग़ुरूर करने वालों को। (23)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

सो (जब अल्लाह तआ़ला का उक्त चीज़ों का बनाने वाला और पैदा करने वाला होना और इसमें उसका अकेला व तन्हा होना साबित हो चुका तो) क्या जो शख़्स पैदा करता हो (यानी अल्लाह तआ़ला) वह उस जैसा हो जायेगा जो पैदा नहीं कर सकता (कि तुम दोनों को माबूद समझने लगे, तो इसमें अल्लाह तआ़ला का अपमान है कि उसको बुतों के बराबर कर दिया) फिर क्या तुम (इतना भी) नहीं समझते। और (अल्लाह तआ़ला ने जो ऊपर तौहीद की दलीलों में अपनी नेमतें बतलाई हैं उन्हीं में क्या सीमित है वे तो इस कसरत से हैं कि) अगर तुम अल्लाह तआ़ला की (उन) नेमतों को गिनने लगो तो (कभी) न गिन सको (मगर मुश्रिक लोग शुक्र और क़द्र नहीं करते, और यह जुर्म इतना बड़ा था कि न माफ़ कराने से माफ़ होता और न इस पर अड़े और जमे रहने से आगे को ये नेमतें मिलतीं, लेकिन) वाक़ई अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (कि कोई शिर्क से तौबा करे तो मग़फ़िरत हो जाती है, और न करे तब भी तमाम नेमतें ज़िन्दगी रहने तक ख़त्म नहीं होतीं) और (हाँ नेमतों के मिलने और जारी रहने से कोई यह न समझे कि कभी सज़ा न होगी, बल्कि आख़िरत में सज़ा होगी क्योंकि) अल्लाह तआ़ला तुम्हारे छुपे और ज़ाहिरी हालात सब जानते हैं (पस उनके मुवाफ़िक़ सज़ा देंगे। यह तो हक़ तआ़ला के ख़ालिक़ और नेमत देने वाला होने का बयान था)। और जिनकी ये लोग ख़ुदा को छोड़कर इबादत करते हैं वे किसी चीज़ को पैदा नहीं कर सकते और वे ख़ुद ही मख़्लूक़ "यानी पैदा किये हुए" हैं (और ऊपर क़ायदा-ए-कुल्लिया साबित हो चुका है कि ग़ैर-ख़ालिक़ और ख़ालिक़ "यानी पैदा न करने वाला और पैदा करने वाला" बराबर नहीं, पस ये जिनकी इबादत की जा रही है कैसे इबादत के हक़दार हो सकते हैं, और) वे (जिनकी इबादत की जा रही है) मुर्दे (बेजान) हैं (चाहे मुस्तक़िल तौर पर जैसे बुत, या फ़िलहाल जैसे वे लोग जो मर चुके हैं, या नतीजे और आईन्दा के एतिबार से जो मरेंगे जैसे जिन्नात और ईसा अ़लैहिस्सलाम वग़ैरह) ज़िन्दा (रहने वाले) नहीं (पस ख़ालिक़ तो क्या होते) और उन (माबूदों) को (इतनी भी) ख़बर नहीं कि (क़ियामत में) मुर्दे कब उठाये जाएँगे (यानी कुछ को तो इल्म ही नहीं और कुछ को उसका निर्धारित वक़्त मालूम नहीं, और माबूद के लिये इल्म तो हर चीज़ का पूरा चाहिये, ख़ास तौर से क़ियामत का कि उस पर बदला मिलेगा इबादत करने और न करने का तो उसका इल्म तो माबूद के लिये बहुत ही मुनासिब है। पस ख़ुदा के बराबर तो इल्म में क्या होंगे इस तक़रीर से साबित हुआ कि) तुम्हारा सच्चा माबूद एक ही माबूद है, तो (इस हक़ के स्पष्ट होने पर भी) जो लोग आख़िरत पर ईमान नहीं लाते (और इसी लिये उनको डर नहीं कि तौहीद को क़ुबूल करें मालूम हुआ कि) उनके दिल (ही ऐसे नाक़ाबिल हैं कि माक़ूल बात के) मुन्किर हो रहे हैं और (मालूम हुआ कि) वे हक़ के क़ुबूल करने से तकब्बुर करते हैं। (और) ज़रूरी बात है कि अल्लाह तआ़ला उनके छुपे व ज़ाहिरी सब हालात जानते हैं (और यह भी) यक़ीनी बात है कि अल्लाह तआ़ला तकब्बुर करने वालों को पसंन्द नहीं करते (पस जब उनका तकब्बुर मालूम है तो उनको

भी नापसन्द करेंगे और सज़ा देंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की नेमतों का और कायनात की पैदाईश का ज़िक्र करने के बाद उस बात पर तंबीह फ़रमाई जिसके लिये इन सब नेमतों की तफ़सील बयान की गई है, और वह है हक़ तआ़ला की तौहीद, कि उसके सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं। इसलिये फ़रमाया कि जब यह साबित हो गया कि अकेले और तन्हा अल्लाह तआ़ला ने ही ज़मीन व आसमान बनाये, पहाड़ व दरिया बनाये, पेड़-पौधे और हैवानात बनाये, दरख़्त और उनके फूल-फल बनाये, तो क्या वह पाक ज़ात जो इन सब चीज़ों की ख़ालिक़ (बनाने और पैदा करने वाली) है उन बुतों के जैसी और उनके बराबर हो जायेगी जो कुछ पैदा नहीं कर सकते? तो क्या तुम इतना भी नहीं समझते?

وَإِذَا قِيلَ لَهُم مَّاذَآ أَنزَلَ رَبُّكُمْ قَالُوٓا أَسَاطِيرُ الْأَوَّلِينَ ﴿٢٤﴾ لِيَحْمِلُوٓا أَوْزَارَهُمْ كَامِلَةً يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَمِنْ أَوْزَارِ الَّذِينَ يُضِلُّونَهُم بِغَيْرِ عِلْمٍ أَلَا سَآءَ مَا يَزِرُونَ ﴿٢٥﴾ قَدْ مَكَرَ الَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ فَأَتَى اللَّهُ بُنْيَانَهُم مِّنَ الْقَوَاعِدِ فَخَرَّ عَلَيْهِمُ السَّقْفُ مِن فَوْقِهِمْ وَأَتَاهُمُ الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٢٦﴾ ثُمَّ يَوْمَ الْقِيَامَةِ يُخْزِيهِمْ وَيَقُولُ أَيْنَ شُرَكَآءِيَ الَّذِينَ كُنتُمْ تُشَآقُّونَ فِيهِمْ قَالَ الَّذِينَ أُوتُوا الْعِلْمَ إِنَّ الْخِزْيَ الْيَوْمَ وَالسُّوٓءَ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٢٧﴾ الَّذِينَ تَتَوَفَّاهُمُ الْمَلَآئِكَةُ ظَالِمِيٓ أَنفُسِهِمْ فَأَلْقَوُا السَّلَمَ مَا كُنَّا نَعْمَلُ مِن سُوٓءٍ بَلَىٰٓ إِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ بِمَا كُنتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٨﴾ فَادْخُلُوٓا أَبْوَابَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ فِيهَا فَلَبِئْسَ مَثْوَى الْمُتَكَبِّرِينَ ﴿٢٩﴾

व इज़ा की-ल लहुम् माज़ा अन्ज़-ल रब्बुकुम् क़ालू असातीरुल्-अव्वलीन (24) लियह्मिलू औज़ारहुम् कामि-लतंय्-यौमल्-क़ियामति व मिन् औज़ारिल्लज़ी-न युज़िल्लूनहुम् बिग़ैरि ज़िल्मिन्, अला सा-अ मा यज़िरून (25) ✿	और जब कहे उनसे कि क्या उतारा है तुम्हारे रब ने तो कहें कहानियाँ हैं पहलों की। (24) ताकि उठायें बोझ अपने पूरे दिन क़ियामत के, और कुछ बोझ उनके जिनको बहकाते हैं बिना तहक़ीक़। सुनता है! बुरा बोझ है जो उठाते हैं। (25) ✿

क़द् म-करल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् फ़-अतल्लाहु बुन्यानहुम् मिनल्-क़वाअि़दि फ़-ख़र्-र अ़लैहिमुस्सक़्फ़ु मिन् फ़ौक़िहिम् व अताहुमुल्-अ़ज़ाबु मिन् हैसु ला यश्अुरून (26) सुम्-म यौमल्-क़ियामति युख़्ज़ीहिम् व यक़ूलु ऐ-न शु-रकाइ-यल्लज़ी-न कुन्तुम् तुशाक़्क़ू-न फ़ीहिम्, क़ालल्लज़ी-न ऊतुल्-अ़िल्-म इन्नल् ख़िज़्यल्-यौ-म वस्सू-अ अ़लल्-काफ़िरीन (27) अल्लज़ी-न त-तवफ़्फ़ाहुमुल्-मलाइ-कतु ज़ालिमी अन्फ़ुसिहिम् फ़-अल्क़वुस्-स-ल-म मा कुन्ना नअ़्-मलु मिन् सूइन्, बला इन्नल्ला-ह अ़लीमुम्-बिमा कुन्तुम् तअ़्मलून (28) फ़द्ख़ुलू अब्वा-ब जहन्न-म ख़ालिदी-न फ़ीहा, फ़-लबिअ्-स मस्वल्-मु-तकब्बिरीन (29)	अलबत्ता दग़ाबाज़ी कर चुके हैं जो थे इनसे पहले, फिर पहुँचा हुक्म अल्लाह का उनकी इमारत पर बुनियादों से, फिर गिर पड़ी उन पर छत ऊपर से और आया उन पर अज़ाब जहाँ से उनको ख़बर न थी। (26) फिर क़ियामत के दिन रुस्वा करेगा उनको और कहेगा कहाँ हैं मेरे शरीक जिन पर तुमको बड़ी ज़िद थी, बोलेंगे जिनको दी गई थी ख़बर, बेशक रुस्वाई आज के दिन और बुराई मुन्किरों पर है। (27) जिनकी जान निकालते हैं फ़रिश्ते और वे बुरा कर रहे हैं अपने हक़ में, तब ज़ाहिर करेंगे फ़रमाँबरदारी कि हम तो करते न थे कुछ बुराई, क्यों नहीं! अल्लाह ख़ूब जानता है जो तुम करते थे। (28) सो दाख़िल हो दरवाज़ों में दोज़ख़ के, रहा करो सदा उसी में, सो क्या बुरा ठिकाना है घमण्ड करने वालों का। (29)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब उनसे कहा जाता है (यानी कोई नावाक़िफ़ शख़्स तहक़ीक़ के लिये या कोई वाक़िफ़ शख़्स इम्तिहान के लिये उनसे पूछता है) कि तुम्हारे रब ने क्या चीज़ नाज़िल फ़रमाई है (यानी क़ुरआन जिसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह तआ़ला का नाज़िल किया हुआ फ़रमाते हैं, आया यह सही है) तो कहते हैं कि (साहिब वह रब का नाज़िल किया हुआ कहाँ है) वो तो बिल्कुल बेसनद बातें हैं जो पहलों से (मन्क़ूल) चली आ रही हैं (यानी दूसरी मिल्लतों वाले पहले से तौहीद व नुबुव्वत और आख़िरत के मुद्दई होते चले आये हैं उन्हीं से यह भी नक़ल करने लगे, बाक़ी ये दावे ख़ुदा के तालीम दिये हुए नहीं)। नतीजा इस (कहने) का

यह होगा कि उन लोगों को क़ियामत के दिन अपने गुनाहों का पूरा बोझ और जिनको ये लोग बेइल्मी से गुमराह कर रहे थे उनके गुनाहों का भी कुछ बोझ अपने ऊपर उठाना पड़ेगा (गुमराह करने से मुराद यही कहना है कि ये तो पहले लोगों की बेसनद बातें हैं, क्योंकि इससे दूसरे आदमी का एतिक़ाद ख़राब होता है, और जो शख़्स किसी को गुमराह किया करता है उस गुमराह को तो गुमराही का गुनाह होता है और उस गुमराह करने वाले को उसकी गुमराही का सबब बन जाने का, इस सबब बनने में जो हिस्सा उसको मिलेगा उसको 'कुछ बोझ' फ़रमाया गया, और अपने गुनाह का पूरा बोझ उठाना ज़ाहिर है)। ख़ूब याद रखो कि जिस गुनाह को ये अपने ऊपर लाद रहे हैं वह बुरा बोझ है।

(और इन्होंने जो गुमराह करने की यह तदबीर निकाली है कि दूसरों को ऐसी बातें करके बहकाते हैं, सो ये तदबीरें हक़ के मुक़ाबले में न चलेंगी, बल्कि ख़ुद इन्हीं पर उनका वबाल व मुसीबत पड़ेगी, चुनाँचे) जो लोग इनसे पहले हो गुज़रे हैं उन्होंने (अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के मुक़ाबले और मुख़ालफ़त में) बड़ी-बड़ी तदबीरें कीं, सो अल्लाह तआ़ला ने उन (की तदबीरों) का बना-बनाया घर जड़-बुनियाद से ढहा दिया, फिर (वे ऐसे नाकाम हुए जैसे गोया) ऊपर से उन पर (उस घर की) छत आ पड़ी (हो, यानी जिस तरह छत आ पड़ने से सब दबकर रह जाते हैं इसी तरह वे लोग बिल्कुल नाकाम व घाटा उठाने वाले हुए) और (नाकामी के अ़लावा) उन पर (ख़ुदा का) अ़ज़ाब ऐसी तरह आया कि उनको ख़्याल भी न था (क्योंकि उम्मीद तो उस तदबीर में कामयाबी की थी, ख़िलाफ़े उम्मीद उन पर नाकामी से बढ़कर अ़ज़ाब आ गया जो कोसों भी उनके ज़ेहन में न था। पिछले काफ़िरों पर अ़ज़ाबों का आना मालूम व जाना-पहचाना है, यह हालत तो उनकी दुनिया में हुई)। फिर क़ियामत के दिन (उनके वास्ते यह होगा कि) अल्लाह तआ़ला उनको रुस्वा करेगा और (उसमें से एक रुस्वाई यह होगी कि उनसे) यह कहेगा कि (तुमने जो) मेरे शरीक (बना रखे थे) जिनके बारे में तुम (नबियों और ईमान वालों से) लड़ाई झगड़ा करते थे (वे अब) कहाँ हैं (उस हालत को देखकर हक़ के) जानने वाले कहेंगे कि आज काफ़िरों पर पूरी रुस्वाई और अ़ज़ाब है। जिनकी जान फ़रिश्तों ने कुफ़्र की हालत में निकाली थी (यानी आख़िर वक़्त तक काफ़िर रहे। शायद उन इल्म रखने वालों का क़ौल बीच में इसलिये बयान हो कि काफ़िरों की रुस्वाई का आ़म और ऐलानिया होना मालूम हो जाये) फिर वे काफ़िर लोग (अपने शरीकों के जवाब में) सुलह का पैग़ाम डालेंगे (और कहेंगे) कि (शिर्क जो आला दर्जे की बुराई और हक़ तआ़ला की मुख़ालफ़त है हमारी क्या मजाल थी कि हम उसके करने वाले होते) हम तो कोई बुरा काम (जिसमें हक़ तआ़ला की मामूली सी मुख़ालफ़त भी हो) न करते थे (इसको सुलह का मज़मून इसलिये कहा गया कि दुनिया में शिर्क का जो कि यक़ीनी मुख़ालफ़त है बड़े जोश व ख़रोश से इक़रार था जैसा कि अल्लाह तआ़ला के क़ौल में इसका ज़िक्र है 'लौ शाअल्लाहु मा अश्रक्ना' और शिर्क का इक़रार मुख़ालफ़त का इक़रार था, ख़ुसूसन अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के साथ, तो ख़ुद खुली मुख़ालफ़त के दावेदार थे वहाँ उस शिर्क के इनकार से मुख़ालफ़त का इनकार करेंगे, इसलिये इसको सुलह फ़रमाया और यह इनकार ऐसा है जैसा कि

एक दूसरी आयत में है:

وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِيْنَ ۝

हक् तआ़ला उनके इस क़ौल को रद्द न फ़रमायेंगे कि) क्यों नहीं? (बल्कि वाक़ई तुमने बड़े काम मुख़ालफ़त के किये) बेशक अल्लाह को तुम्हारे सब आमाल की पूरी ख़बर है। सो (अच्छा) जहन्नम के दरवाज़ों में (से जहन्नम में) दाख़िल हो जाओ, (और) उसमें हमेशा-हमेशा को रहो। ग़र्ज़ (हक् से) तकब्बुर (और मुख़ालफ़त व मुक़ाबला) करने वालों का वह बुरा ठिकाना है (यह आख़िरत के अ़ज़ाब का ज़िक्र हो गया। पस आयतों का ख़ुलासा यह हुआ कि तुमने अपने से पहले काफ़िरों का हाल घाटे में रहने और दुनिया व आख़िरत के अ़ज़ाब का सुन लिया, इसी तरह जो तदबीर व फ़रेब दीन-ए-हक् के मुक़ाबले में तुम कर रहे हो और मख़्लूक़ को गुमराह करना चाहते हो, यही अन्जाम तुम्हारा होगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह तआ़ला की नेमतें और कायनात के बनाने में तन्हा व अकेला होने का ज़िक्र करके मुश्रिकों की अपनी गुमराही का बयान था, इन आयतों में दूसरों को गुमराह करने और उसके अ़ज़ाब का बयान है। और इससे पहले एक सवाल क़ुरआने करीम के बारे में है, और उस सवाल के मुख़ातब यहाँ तो मुश्रिक लोग हैं और उन्हीं का जाहिलाना जवाब यहाँ ज़िक्र करके उन पर वईद (डाँट और सज़ा का वायदा) बयान की गई है, और पाँच आयतों के बाद यही सवाल नेक व परहेज़गार मोमिनों को ख़िताब करके किया गया और उनका जवाब और उस पर इनामात के वायदे का ज़िक्र है।

क़ुरआने करीम ने यह नहीं खोला कि सवाल करने वाला कौन था, इसलिये मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) के इसमें विभिन्न अक़वाल हैं, किसी ने काफ़िरों को सवाल करने वाला क़रार दिया, किसी ने मुसलमानों को, किसी ने एक सवाल मुश्रिकों का और दूसरा मोमिनों का क़रार दिया, लेकिन क़ुरआने करीम ने इसको अस्पष्ट और गुप्त रखकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है कि इस बहस में जाने की ज़रूरत ही क्या है कि सवाल किसकी तरफ़ से था, देखना तो जवाब और उसके नतीजे का है जिनका क़ुरआन ने ख़ुद बयान कर दिया है।

मुश्रिकों की तरफ़ से जवाब का ख़ुलासा यह है कि उन्होंने इसी को तस्लीम नहीं किया कि कोई कलाम अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल हुआ भी है, बल्कि क़ुरआन को पिछले लोगों की कहानियाँ क़रार दिया। क़ुरआने करीम ने इस पर यह वईद (सज़ा की धमकी) सुनाई कि ये ज़ालिम क़ुरआन को कहानियाँ बतलाकर दूसरों को भी गुमराह करते हैं, इसका यह नतीजा उनको भुगतना पड़ेगा कि क़ियामत के दिन अपने गुनाहों का पूरा वबाल तो उन पर पड़ना ही है, जिनको ये गुमराह कर रहे हैं उनका भी कुछ वबाल इन पर पड़ेगा। और फिर फ़रमाया कि गुनाहों के जिस बोझ को ये लोग अपने ऊपर लाद रहे हैं वह बहुत बुरा बोझ है।

وَقِيْلَ لِلَّذِيْنَ اتَّقَوْا مَاذَآ اَنْزَلَ رَبُّكُمْ ۚ قَالُوْا خَيْرًا ۗ لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا فِيْ هٰذِهِ الدُّنْيَا
حَسَنَةٌ ۗ وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ ۚ وَلَنِعْمَ دَارُ الْمُتَّقِيْنَ ۝ جَنّٰتُ عَدْنٍ يَّدْخُلُوْنَهَا تَجْرِيْ مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ لَهُمْ فِيْهَا مَا يَشَآءُوْنَ ۗ كَذٰلِكَ يَجْزِي اللّٰهُ الْمُتَّقِيْنَ ۝ الَّذِيْنَ تَتَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ
طَيِّبِيْنَ ۙ يَقُوْلُوْنَ سَلٰمٌ عَلَيْكُمُ ۙ ادْخُلُوا الْجَنَّةَ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ هَلْ يَنْظُرُوْنَ اِلَّآ اَنْ تَاْتِيَهُمُ
الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْ يَاْتِيَ اَمْرُ رَبِّكَ ۗ كَذٰلِكَ فَعَلَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۗ وَمَا ظَلَمَهُمُ اللّٰهُ وَلٰكِنْ
كَانُوْٓا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ ۝ فَاَصَابَهُمْ سَيِّاٰتُ مَا عَمِلُوْا وَحَاقَ بِهِمْ مَّا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ ۝

व क़ी-ल लिल्लज़ीनत्तक़ौ माज़ा अन्ज़-ल रब्बुकुम्, क़ालू ख़ैरन्, लिल्लज़ी-न अह्सनू फ़ी हाज़िहिद्दुन्या ह-स-नतुन्, व लदारुल्-आख़िरति ख़ैरुन्, व लनिअ्-म दारुल्-मुत्तक़ीन (30) जन्नातु अ़द्निंय्-यद्ख़ुलूनहा तज्री मिन् तह्तिहल्-अन्हारु लहुम् फ़ीहा मा यशाऊ-न, कज़ालि-क यज्ज़िल्लाहुल्-मुत्तक़ीन (31) अल्लज़ी-न त-तवफ़्फ़ाहुमुल्-मलाइ-कतु तय्यिबी-न यक़ूलू-न सलामुन् अ़लैकुमुद्ख़ुलुल्-जन्न-त बिमा कुन्तुम् तअ़्मलून (32) हल् यन्ज़ुरू-न इल्ला अन् तअ्ति-यहुमुल्-मलाइ-कतु औ यअ्ति-य अम्रु रब्बि-क, कज़ालि-क फ़-अ़लल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम्, व मा ज़-ल-महुमुल्लाहु

और कहा परहेज़गारों को— क्या उतारा तुम्हारे रब ने, बोले नेक बात, जिन्होंने भलाई की इस दुनिया में उनको भलाई है और आख़िरत का घर बेहतर है, और क्या ख़ूब घर है परहेज़गारों का। (30) बाग़ हैं हमेशा रहने के जिनमें वे जायेंगे, बहती हैं उनके नीचे से नहरें, उनके वास्ते वहाँ है जो चाहें, ऐसा बदला देगा अल्लाह परहेज़गारों को। (31) जिनकी जान क़ब्ज़ करते हैं फ़रिश्ते और वे सुथरी हैं, कहते हैं फ़रिश्ते सलामती तुम पर, जाओ जन्नत में, बदला है उसका जो तुम करते थे। (32) क्या काफ़िर अब इसके मुन्तज़िर हैं कि आयें उन पर फ़रिश्ते या पहुँचे हुक्म तेरे रब का, इसी तरह किया था इनसे अगलों ने, और अल्लाह ने ज़ुल्म न किया

व लाकिन् कानू अन्फ़ु-सहुम् यज़्लिमून (33) फ़-असाबहुम् सय्यिआतु मा अ़मिलू व हा-क़ बिहिम् मा कानू बिही यस्तह्ज़िऊन (34) ❁	उन पर लेकिन वे ख़ुद अपना बुरा करते रहे। (33) फिर पड़े उनके सर उनके बुरे काम और उलट पड़ा उन पर जो ठट्ठा करते थे। (34) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जो लोग शिर्क से बचते हैं उनसे (जो क़ुरआन के बारे में) कहा जाता है कि तुम्हारे रब ने क्या चीज़ नाज़िल फ़रमाई है, वे कहते हैं कि बड़ी ख़ैर (और बरकत की चीज़) नाज़िल फ़रमाई है। जिन लोगों ने नेक काम किये हैं (जिसमें यह ऊपर कही हुई बात और तमाम नेक आमाल आ गये) उनके लिये इस दुनिया में भी भलाई है (वह भलाई सवाब का वायदा व ख़ुशख़बरी है) और आख़िरत की दुनिया तो (इस वजह से कि वहाँ इस वायदे का ज़हूर हो जायेगा) और ज़्यादा बेहतर (और ख़ुशी का सबब) है, और वाक़ई वह शिर्क से बचने वालों का अच्छा घर है। वह घर (क्या है) हमेशा रहने के बाग़ हैं जिनमें ये दाख़िल होंगे, उन बाग़ों के (पेड़ और इमारतों के) नीचे से नहरें जारी होंगी। जिस चीज़ को उनका जी चाहेगा वहाँ उनको मिलेगी (और ख़ास उन्हीं की क्या विशेषता है जिनका क़ौल इस मक़ाम पर बयान हुआ है बल्कि) इसी तरह का बदला अल्लाह सब शिर्क से बचने वालों को देगा। जिनकी रूह फ़रिश्ते इस हालत में निकालते हैं कि वे (शिर्क से) पाक (साफ़) होते हैं (मतलब यह कि मरते दम तक तौहीद पर क़ायम रहते हैं और) वह (फ़रिश्ते) कहते जाते हैं– अस्सलामु अ़लैकुम, तुम (रूह क़ब्ज़ होने के बाद) जन्नत में चले जाना अपने आमाल के सबब।

ये लोग (जो अपने कुफ़्र व दुश्मनी और जहालत पर अड़े हुए हैं और बावजूद हक़ की दलीलें और निशानियाँ वाज़ेह होने के बावजूद ईमान नहीं लाते, तो मालूम होता है कि ये सिर्फ़) इसी बात के मुन्तज़िर हैं कि इनके पास (मौत के) फ़रिश्ते आ जाएँ या आपके परवर्दिगार का हुक्म (यानी क़ियामत) आ जाये (यानी क्या मौत के वक़्त या क़ियामत में ईमान लायेंगे जबकि ईमान क़ुबूल न होगा, अगरचे उस वक़्त तमाम काफ़िर लोग हक़ीक़त का पर्दा उठने की वजह से तौबा करेंगे, जैसी हठधर्मी और अड़ना कुफ़्र पर ये लोग कर रहे हैं) ऐसा ही इनसे पहले जो लोग थे उन्होंने भी (कुफ़्र पर अड़े रहना) किया था, और (अड़ने व हठधर्मी की बदौलत सज़ा पाने वाले हुए। सो) उन पर अल्लाह ने ज़रा भी ज़ुल्म न किया लेकिन वे आप ही अपने ऊपर ज़ुल्म कर रहे थे (कि सज़ा के काम जान-जानकर करते थे)। आख़िर उनको उनके बुरे आमाल की सज़ाएँ मिलीं, और जिस अ़ज़ाब (की ख़बर पाने) पर वे हंसते थे उनको उसी (अ़ज़ाब) ने आन घेरा (पस ऐसा ही तुम्हारा हाल होगा)।

وَقَالَ الَّذِينَ أَشْرَكُوا لَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا عَبَدْنَا مِنْ دُونِهِ مِنْ شَيْءٍ نَحْنُ وَلَا آبَاؤُنَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ دُونِهِ مِنْ شَيْءٍ ۚ كَذَٰلِكَ فَعَلَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۚ فَهَلْ عَلَى الرُّسُلِ إِلَّا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿٣٥﴾ وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِي كُلِّ أُمَّةٍ رَسُولًا أَنِ اعْبُدُوا اللَّهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوتَ ۖ فَمِنْهُمْ مَنْ هَدَى اللَّهُ وَمِنْهُمْ مَنْ حَقَّتْ عَلَيْهِ الضَّلَالَةُ ۚ فَسِيرُوا فِي الْأَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِينَ ﴿٣٦﴾ إِنْ تَحْرِصْ عَلَىٰ هُدَاهُمْ فَإِنَّ اللَّهَ لَا يَهْدِي مَنْ يُضِلُّ ۖ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٣٧﴾ وَأَقْسَمُوا بِاللَّهِ جَهْدَ أَيْمَانِهِمْ ۙ لَا يَبْعَثُ اللَّهُ مَنْ يَمُوتُ ۚ بَلَىٰ وَعْدًا عَلَيْهِ حَقًّا وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٨﴾ لِيُبَيِّنَ لَهُمُ الَّذِي يَخْتَلِفُونَ فِيهِ وَلِيَعْلَمَ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنَّهُمْ كَانُوا كَاذِبِينَ ﴿٣٩﴾ إِنَّمَا قَوْلُنَا لِشَيْءٍ إِذَا أَرَدْنَاهُ أَنْ نَقُولَ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٤٠﴾

व क़ालल्लज़ी-न अश्रकू लौ शाअल्लाहु मा अ़बद्ना मिन् दूनिही मिन् शैइन्-नह्नु व ला आबाउना व ला हर्रम्ना मिन् दूनिही मिन् शैइन्, कज़ालि-क फ़-अ़लल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् फ़-हल् अ़लर्रुसुलि इल्लल् बलाग़ुल्-मुबीन (35) व ल-क़द् बअ़स्ना फ़ी कुल्लि उम्मतिर्रसूलन् अनिअ़्बुदुल्ला-ह वज्तनिबुत्ताग़ू-त फ़मिन्हुम् मन् हदल्लाहु व मिन्हुम् मन् हक़्क़त् अ़लैहिज़्ज़लालतु, फ़सीरू फ़िल्अर्ज़ि फ़न्ज़ुरू कै-फ़ का-न आक़ि-बतुल्-मुकज़्ज़िबीन (36) इन् तह्रिस् अ़ला हुदाहुम् फ़-इन्नल्ला-ह ला यह्दी मंय्युज़िल्लु व मा लहुम् मिन्-नासिरीन (37) व अक़्समू	और बोले शिर्क करने वाले, अगर चाहता अल्लाह न पूजते हम उसके सिवा किसी चीज़ को और न हमारे बाप, और न हराम ठहरा लेते हम बिना उसके हुक्म के किसी चीज़ को, इसी तरह किया इनसे अगलों ने, रसूलों के ज़िम्मे नहीं मगर पहुँचा देना साफ़-साफ़। (35) और हमने उठाये हैं हर उम्मत में रसूल कि बन्दगी करो अल्लाह की और बचो हुड़दंगे से, फिर किसी को उनमें से हिदायत की अल्लाह ने और किसी पर साबित हुई गुमराही, सो सफ़र करो मुल्कों में फिर देखो कैसा हुआ अन्जाम झुठलाने वालों का। (36) अगर तू लालच (तमन्ना) करे उनको राह पर लाने की तो अल्लाह राह नहीं देता जिसको बिचलाता है और कोई नहीं उनका मददगार। (37) और क़समें

बिल्लाहि जह्-द ऐमानिहिम् ला यब्अ़सुल्लाहु मंय्यमूतु, बला वअ्दन् अ़लैहि हक़्क़ंव्-व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यअ्लमून (38) लियुबय्यि-न लहुमुल्लज़ी यख़्तलिफ़ू-न फ़ीहि व लियअ्-लमल्लज़ी-न क-फ़रू अन्नहुम् कानू काज़िबीन (39) इन्नमा क़ौलुना लिशैइन् इज़ा अरद्नाहु अन्-नक़ू-ल लहू कुन् फ़-यकून (40) ✿	खाते हैं अल्लाह की सख़्त क़समें कि न उठायेगा अल्लाह जो कोई मर जाये, क्यों नहीं! वादा हो चुका है इस पर पक्का लेकिन अक्सर लोग नहीं जानते। (38) उठायेगा ताकि ज़ाहिर कर दे उन पर जिस बात में झगड़ते हैं और ताकि मालूम कर लें काफ़िर कि वे झूठे थे। (39) हमारा कहना किसी चीज़ को जब हम उसको करना चाहें यही है कि कहें उसको हो जा तो वह हो जाये। (40) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और मुश्रिक लोग यूँ कहते हैं कि अगर अल्लाह तआ़ला को (बतौर रज़ा के यह मामला) मन्ज़ूर होता (कि हम ग़ैरुल्लाह की इबादत न करें जो हमारे तरीक़े के उसूल यानी बुनियादी बातों में से है, और बाज़ी चीज़ों को हराम क़रार न दें जो हमारे तरीक़ों के ऊपर की चीज़ों में से है। मतलब यह कि अगर अल्लाह तआ़ला हमारे मौजूदा अ़क़ीदों व आमाल को नापसन्द करते) तो ख़ुदा के सिवा किसी चीज़ की न हम इबादत करते और न हमारे बाप-दादा, और न हम उसके (हुक्म के) बग़ैर किसी चीज़ को हराम कह सकते (इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला को हमारा तरीक़ा पसन्द है वरना हमको क्यों करने देते। ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! आप उनसे ग़मगीन न हों, क्योंकि यह बेहूदा बहस व झगड़ा कोई नई बात नहीं, बल्कि) जो (काफ़िर) लोग इनसे पहले हुए हैं ऐसी ही हरकत उन्होंने भी की थी (यानी बेहूदा झगड़े और बहसें अपने पैग़म्बरों से की थीं) सो पैग़म्बरों (का उससे क्या बिगड़ा और वे जिस तरीक़े की तरफ़ बुलाते हैं उसको क्या नुक़सान पहुँचा, उन) के ज़िम्मे तो (अहकाम का) सिर्फ़ साफ़-साफ़ पहुँचा देना है (साफ़-साफ़ यह कि दावा स्पष्ट हो और सही दलील उस पर क़ायम हो, इसी तरह आपके ज़िम्मे भी यही काम था जो आप कर रहे हैं, फिर अगर दुश्मनी व मुख़ालफ़त के तौर पर दावे और दलील में ग़ौर न करें तो आपकी बला से)। और (जिस तरह उनका मामला आपके साथ यानी यह झगड़ना और बहस करना कोई नई बात नहीं इसी तरह आपका मामला उनके साथ यानी तौहीद व दीने हक़ की तरफ़ बुलाना कोई नई बात नहीं, बल्कि इसकी तालीम भी पहले से चली आई है, चुनाँचे पहली उम्मतों में से) हम हर उम्मत में कोई न कोई पैग़म्बर (इस बात की तालीम के लिये) भेजते रहे हैं कि तुम (ख़ास) अल्लाह तआ़ला की इबादत करो और

शैतान (के रास्ते) से (कि वह शिर्क व कुफ़्र है) बचते रहो (इसमें चीज़ों का वह हराम ठहरा लेना भी आ गया जो मुश्रिक लोग अपनी राय से किया करते थे, क्योंकि वह शिर्क व कुफ़्र का एक हिस्सा था)। सो उनमें बाज़े वे हुए हैं कि जिनको अल्लाह तआ़ला ने हिदायत दी (कि उन्होंने हक़ को क़ुबूल कर लिया) और बाज़े उनमें वे हुए जिन पर गुमराही साबित हो गई।

(मतलब यह कि काफ़िरों और अम्बिया में यह मामला इसी तरह चला आ रहा है और हिदायत देने व गुमराह करने के बारे में अल्लाह तआ़ला का मामला भी हमेशा से यूँ ही जारी है कि झगड़ना व बहस करना काफ़िरों का भी पुराने ज़माने से और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का तालीम करना भी पुराने ज़माने से, और सब का हिदायत न पाना भी पुराने ज़माने से, फिर आपको क्यों ग़म हो? यहाँ तक तसल्ली फ़रमाई गई जिसमें आख़िर के मज़मून में उनके शुब्हे का मुख़्तसर जवाब भी हो गया कि ऐसी बातें करना गुमराही है जिसके गुमराही होने की आगे ताईद और जवाब की ज़्यादा स्पष्टता है, यानी अगर रसूल के साथ झगड़ने और बेकार की बहस करने का गुमराही होना तुमको मालूम न हो) तो (अच्छा) ज़मीन में चलो-फिरो (निशानात से) देखो कि (पैग़म्बरों के) झुठलाने वालों का कैसा (बुरा) अन्जाम हुआ (पस अगर वे गुमराह न थे तो उन पर अ़ज़ाब क्यों नाज़िल हुआ और इत्तिफ़ाक़ी वाक़िआत उनको इसलिये कह सकते कि ख़िलाफ़े आ़दत हुए और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की भविष्यवाणी के बाद हुए और मोमिन हज़रात उससे बचे रहे, फिर उसके अ़ज़ाब होने में क्या शक है)।

(और चूँकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उम्मत के किसी फ़र्द की गुमराही से भी सख़्त सदमा पहुँचता था इसलिये आगे फिर आपको ख़िताब है कि जैसे पहले बाज़े लोग हुए हैं जिन पर गुमराही क़ायम हो चुकी थी इसी तरह ये लोग भी हैं सो) इनके सही रास्ते पर आने की अगर आपको तमन्ना हो तो (कुछ नतीजा नहीं, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला ऐसे शख़्स को हिदायत नहीं किया करता जिसको (उस शख़्स के मुँह फेरने और दुश्मनी के सबब) गुमराह करता है (अलबत्ता अगर वह दुश्मनी व मुख़ालफ़त को छोड़ दे तो हिदायत कर देता है, लेकिन ये दुश्मनी व मुख़ालफ़त को छोड़ेंगे नहीं इसलिये इनको हिदायत भी न होगी)।

और (गुमराही व अ़ज़ाब के बारे में अगर इनका यह गुमान हो कि हमारे माबूद इस हालत में भी अ़ज़ाब से बचा लेंगे तो वे समझ लें कि ख़ुदा तआ़ला के मुक़ाबले में) उनका कोई हिमायती न होगा (यहाँ तक उनके पहले शुब्हे के जवाब की तक़रीर थी, आगे दूसरे शुब्हे के बारे में कलाम है)। और ये लोग बड़े ज़ोर लगा-लगाकर अल्लाह की क़समें खाते हैं कि जो मर जाता है अल्लाह उसे दोबारा ज़िन्दा न करेगा (और क़ियामत न आयेगी, आगे जवाब है) क्यों नहीं ज़िन्दा करेगा! (ज़रूर ज़िन्दा करेगा) इस वायदे को तो अल्लाह तआ़ला ने अपने ज़िम्मे लाज़िम कर रखा है, लेकिन अक्सर लोग (बावजूद सही दलील क़ायम होने के इस पर) यक़ीन नहीं लाते (और यह दोबारा ज़िन्दा करना इसलिये होगा) ताकि (दीन के बारे में) जिस चीज़ में ये लोग (दुनिया में) झगड़ा किया करते थे (और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के फ़ैसले से रास्ते पर न आते थे) उनके सामने उस (की हक़ीक़त) का (आँखों से दिखाकर) इज़हार कर दे, और ताकि (इस

हक़ीक़त के इज़हार के वक़्त) काफ़िर लोग (पूरा) यक़ीन कर लें कि वाक़ई वही झूठे थे (और नबी व मोमिन हज़रात सच्चे थे। पस क़ियामत का आना यक़ीनी और अ़ज़ाब से फ़ैसला होना ज़रूरी है, यह जवाब हो गया उनकी इस बात का कि अल्लाह तआ़ला मरने के बाद ज़िन्दा न करेगा, चूँकि वे लोग क़ियामत का इसलिये इनकार करते थे कि मरकर ज़िन्दा होना उनके ख़्याल में किसी के बस में न था, इसलिये आगे अपनी कामिल क़ुदरत को साबित करके उनके इस शुब्हे को दूर फ़रमाते हैं कि हमारी क़ुदरत ऐसी अ़ज़ीम है कि) हम जिस चीज़ को (पैदा करना) चाहते हैं (हमें उसमें कुछ मेहनत मशक़्क़त करनी नहीं पड़ती) बस हमारा उससे इतना ही कहना (काफ़ी) होता है कि तू (पैदा) हो जा, पस वह (मौजूद) हो जाती है (तो इतनी बड़ी कामिल क़ुदरत के सामने बेजान चीज़ों में दोबारा जान का पड़ जाना कौनसा दुश्वार है, जैसे पहली बार उनमें जान डाल चुके हैं। अब दोनों शुब्हों का पूरा जवाब हो चुका। अल्हम्दु लिल्लाह)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उन काफ़िरों का पहला शुब्हा (या एतिराज़) तो यह था कि अल्लाह तआ़ला को अगर हमारा कुफ़्र व शिर्क और नाजायज़ काम करना पसन्द नहीं तो वह हमें ज़बरदस्ती इससे रोक क्यों नहीं देते।

इस शुब्हे का बेहूदा होना तो स्पष्ट था इसलिये इसका जवाब देने के बजाय सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तसल्ली पर बस किया गया कि ऐसे बेहूदा सवालात से आप ग़मगीन न हों, और शुब्हे के बेहूदा होने की वजह ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला ने दुनिया के इस आ़लम का निज़ाम ही इस बुनियाद पर क़ायम फ़रमाया है कि इनसान को बिल्कुल मजबूर नहीं रखा गया, एक किस्म का इख़्तियार इसको दिया गया है, उसी इख़्तियार को वह अल्लाह की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) में इस्तेमाल करे तो सवाब और नाफ़रमानी में इस्तेमाल करे तो अ़ज़ाब के वायदे और वईद फ़रमाई, इसी के नतीजे में क़ियामत और हश्र व नश्र के सारे हंगामे हैं। अगर अल्लाह तआ़ला चाहते कि सब को मजबूर करके अपनी इताअ़त करायें तो किसकी मजाल थी कि इताअ़त से बाहर जाता, मगर हिक्मत के तक़ाज़े के तहत मजबूर कर देना दुरुस्त न था इसलिये इनसान को इख़्तियार दिया गया। तो अब काफ़िरों का यह कहना कि अगर अल्लाह को हमारा तरीक़ा पसन्द न होता तो हमें मजबूर क्यों न कर देते, एक अहमक़ाना और दुश्मनी भरा सवाल है।

क्या हिन्दुस्तान व पाकिस्तान में भी अल्लाह का कोई रसूल आया है?

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِىْ كُلِّ اُمَّةٍ رَّسُوْلًا

इस आयत (यानी आयत 36) से तथा दूसरी आयतः

وَاِنْ مِّنْ اُمَّةٍ اِلَّا خَلَا فِيْهَا نَذِيْرٌ○

(सूरः फ़ातिर आयत 24) से ज़ाहिर में यही मालूम होता है कि हिन्दुस्तान व पाकिस्तान के इलाक़ों में भी अल्लाह के पैग़म्बर ज़रूर आये होंगे, चाहे वे यहीं के बाशिन्दे हों या किसी दूसरे मुल्क में हों, और उनके नायब और प्रचारक यहाँ पहुँचें हों, और आयतः

لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَّآ اَتٰهُمْ مِّنْ نَّذِيْرٍ

से जो यह समझ में आता है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जिस उम्मत की तरफ़ भेजे गये हैं उनकी तरफ़ आप से पहले कोई रसूल नहीं आया, इसका जवाब यह हो सकता है कि इससे मुराद बज़ाहिर अ़रब की वह क़ौम है जो आपकी बेसत व नुबुव्वत की सबसे पहले मुख़ातब हुई कि उनमें हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम के बाद से कोई रसूल नहीं आया था, इसी लिये उन लोगों का लक़ब क़ुरआने करीम में 'उम्मिय्यीन' रखा गया है। इससे यह लाज़िम नहीं आता कि बाक़ी दुनिया में भी आप से पहले कोई रसूल न आया हो। वल्लाहु आलम

وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا فِى اللّٰهِ مِنْۢ بَعْدِ مَا ظُلِمُوْا لَنُبَوِّئَنَّهُمْ

فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً ۖ وَلَاَجْرُ الْاٰخِرَةِ اَكْبَرُ ۘ لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ۙ﴿٤١﴾ الَّذِيْنَ صَبَرُوْا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُوْنَ ﴿٤٢﴾

वल्लज़ी-न हाजरू फ़िल्लाहि मिम्-बअ़्दि मा ज़ुलिमू लनुबव्विअन्नहुम् फ़िद्दुन्या ह-स-नतन्, व लअज्रुल्-आख़िरति अक्बरु। लौ कानू यअ़्लमून (41) अल्लज़ी-न स-बरू व अ़ला रब्बिहिम् य-तवक्कलून (42)	और जिन्होंने घर छोड़ा अल्लाह के वास्ते बाद इसके कि ज़ुल्म उठाया ज़रूर उनको हम ठिकाना देंगे दुनिया में अच्छा और आख़िरत का सवाब तो बहुत बड़ा है अगर उनको मालूम होता (41) जो साबित-क़दम रहे और अपने रब पर भरोसा किया। (42)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जिन लोगों ने अल्लाह के वास्ते अपना वतन (मक्का) छोड़ दिया (और हब्शा चले गये) उसके बाद कि उन पर (काफ़िरों की तरफ़ से) ज़ुल्म किया गया (क्योंकि ऐसी मजबूरी में वतन छोड़ना बड़ा भारी गुज़रता है), हम उनको दुनिया में ज़रूर अच्छा ठिकाना देंगे (यानी उनको मदीना पहुँचाकर ख़ूब अमन व राहत देंगे, चुनाँचे कुछ ही समय के बाद मदीना में अल्लाह तआ़ला ने पहुँचा दिया और उसको असली वतन क़रार दिया गया, इसलिये उसको ठिकाना कहा और हर तरह की वहाँ तरक़्क़ी हुई, इसलिये हसना "अच्छा" कहा गया और हब्शा का क़ियाम

वक़्ती और अस्थायी था इसलिये उसको ठिकाना नहीं फ़रमाया), और आख़िरत का सवाब (इससे) तो कई दर्जे बड़ा है (कि ख़ैर भी है और हमेशा बाक़ी रहने वाला भी) काश (उस आख़िरत के अज्र की) इन (बेख़बर काफ़िरों) को (भी) ख़बर होती (और उसके हासिल करने की दिलचस्पी व चाहत से मुसलमान हो जाते)। वे ऐसे हैं जो (नागवार वाक़िआत पर) सब्र करते हैं (चुनाँचे वतन का छोड़ना अगरचे उनको नागवार है लेकिन बग़ैर इसके दीन पर अ़मल नहीं कर सकते थे, दीन के लिये वतन छोड़ा और सब्र किया) और (वह हर हाल में) अपने रब पर भरोसा रखते हैं (वतन छोड़ने के वक़्त यह ख़्याल नहीं करते कि खायें पियेंगे कहाँ से)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا

हिजरत से बना है, हिजरत के लुग़वी मायने वतन को छोड़ने के हैं। वतन का छोड़ना जो अल्लाह के लिये किया जाता है वह इस्लाम में बड़ी नेकी व इबादत है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اَلْهِجْرَةُ تَهْدِمُ مَا كَانَ قَبْلَهَا

यानी हिजरत उन तमाम गुनाहों को ख़त्म कर देती है जो इनसान ने हिजरत से पहले किये हों।

यह हिजरत कुछ सूरतों में फ़र्ज़ व वाजिब और कुछ सूरतों में मुस्तहब व अफ़ज़ल (पसन्दीदा और बेहतर) होती है, इसके तफ़सीली अहकाम तो सूरः निसा की आयत नम्बर 97:

اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوْا فِيْهَا

के तहत में बयान हो चुके हैं, इस जगह सिर्फ़ उन वायदों का बयान है जो अल्लाह तआ़ला ने मुहाजिरों (अल्लाह के रास्ते में हिजरत करने वालों) से किये हैं।

क्या हिजरत दुनिया में भी आसानी व ऐश का सबब होती है?

उक्त आयतों में चन्द शर्तों के साथ मुहाजिरों के लिये दो अ़ज़ीमुश्शान वायदे किये गये हैं- अव्वल तो दुनिया ही में अच्छा ठिकाना देने का, दूसरे आख़िरत के बेहिसाब बड़े सवाब का। "दुनिया में अच्छा ठिकाना" एक निहायत जामे लफ़्ज़ है, इसमें यह भी दाख़िल है कि मुहाजिर को रहने के लिये मकान और पड़ोसी अच्छे मिलें, यह भी दाख़िल है कि उसको रिज़्क़ अच्छा मिले, दुश्मनों पर फ़तह व ग़लबा नसीब हो, आ़म लोगों की ज़बान पर उनकी तारीफ़ और भलाई हो, इज़्ज़त व सम्मान मिले, जो उनके ख़ानदान और औलाद तक चले। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

आयत का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) असल में वह पहली हिजरत है जो सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने हब्शा की तरफ़ की, और यह भी हो सकता है कि हब्शा

वाली हिजरत और उसके बाद की मदीने वाली हिजरत दोनों इसमें दाख़िल हों। आयत में यहाँ हब्शा के उन्हीं मुहाजिरों या मदीना के मुहाजिरों का ज़िक्र है, इसलिये कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि यह वायदा उन्हीं हज़राते सहाबा के लिये था, जिन्होंने हब्शा की तरफ़ या फिर मदीना की तरफ़ हिजरत की थी, और अल्लाह तआला का यह वायदा दुनिया में पूरा हो चुका जिसको सब ने अपनी आँखों से देखा और उसका उनुभव कर लिया कि अल्लाह तआला ने मदीना मुनव्वरा को उनका कैसा अच्छा ठिकाना बना दिया, तकलीफ़ देने वाले पड़ोसियों के बजाय ग़मख़्वार, हमदर्द व जान क़ुरबान कर देने वाले पड़ोसी मिले, दुश्मनों पर फ़तह व ग़लबा नसीब हुआ, हिजरत के थोड़े ही अ़रसा गुज़रने के बाद उन पर रिज़्क़ के दरवाज़े खोल दिये गये, फ़क़ीर व मिस्कीन मालदार हो गये, दुनिया के मुल्क फ़तह हुए, उनके अच्छे अख़्लाक़, अच्छे अ़मल के कारनामे रहती दुनिया तक हर मुवाफ़िक़ व मुख़ालिफ़ की ज़ुबान पर हैं, उनको और उनकी नस्लों को अल्लाह तआला ने बड़ी इज़्ज़त व सम्मान बख़्शा। ये तो दुनिया में होने वाली चीज़ें थीं जो हो चुकीं, और आख़िरत का वायदा पूरा होना भी यक़ीनी है, लेकिन तफ़सीर बहरे मुहीत में अबू हय्यान कहते हैं:

وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا عَامٌّ فِي الْمُهَاجِرِيْنَ كَائِنًا مَّا كَانُوْا فَيَشْمَلُ اَوَّلَهُمْ وَاٰخِرَهُمْ. (ص٣٩٢، ج٥)

"अल्लज़ी-न हाजरू का लफ़्ज़ दुनिया के तमाम मुहाजिरीन के लिये आ़म और सब को शामिल है, किसी भी इलाक़े और ज़माने के मुहाजिर हों, इसलिये यह लफ़्ज़ शुरू के मुहाजिरीन को भी शामिल है और क़ियामत तक अल्लाह के लिये हिजरत करने वाला इसमें दाख़िल है।"

आ़म तफ़सीरी क़ानून का तक़ाज़ा भी यही है कि आयत का उतरने का मौक़ा और सबब अगरचे कोई ख़ास वाक़िआ और ख़ास जमाअ़त हो मगर एतिबार लफ़्ज़ों के आ़म होने का होता है, इसलिये इस वायदे में तमाम दुनिया के और हर ज़माने के मुहाजिरीन भी शामिल हैं, और ये दोनों वायदे तमाम मुहाजिरों के लिये पूरा होना यक़ीनी बात है।

इसी तरह का एक वायदा मुहाजिरों के लिये सूरः निसा की इस आयत में किया गया है:

وَمَنْ يُّهَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً.

जिसमें ठिकाने की आसानी व सहूलत और चैन सुकून की ज़िन्दगी ख़ास तौर से वायदा की गयी हैं, मगर क़ुरआने करीम ने इन वायदों के साथ मुहाजिरों के कुछ औसाफ़ (ख़ूबी व गुण) और हिजरत की कुछ शर्तें भी बयान फ़रमाई हैं, इसलिये उन वायदों के मुस्तहिक़ वही मुहाजिर लोग हो सकते हैं जो उन गुणों व सिफ़तों वाले हों और जिन्होंने मतलूबा शर्तें पूरी कर दी हों।

उनमें सबसे पहली शर्त तो फ़िल्लाहि की है, यानी हिजरत करने का मक़सद सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला को राज़ी करना हो, उसमें दुनियावी फ़ायदे तिजारत, नौकरी वग़ैरह और नफ़्सानी फ़ायदे पेशे नज़र (उद्देश्य) न हों।

दूसरी शर्त उन मुहाजिरों का मज़लूम होना है जैसा कि फ़रमाया 'मिम्बअ़्दि मा ज़ुलिमू'।

तीसरा गुण व सिफ़त शुरू की तकलीफ़ों व मुसीबतों पर सब्र और साबित-क़दम रहना है

जैसा कि फ़रमाया 'अल्लज़ी-न स-बरू'।

चौथा गुण व ख़ूबी तमाम माद्दी तदबीरों का एहतिमाम करते हुए भी भरोसा सिर्फ़ अल्लाह पर रखना है, कि फ़तह व मदद और हर कामयाबी सिर्फ़ उसी के हाथ में है जैसा कि फ़रमाया 'व अ़ला रब्बिहिम् य-तवक्कलून'।

इससे मालूम हुआ कि शुरू की मुश्किलें व तकलीफ़ें तो हर काम में हुआ ही करती हैं उनको सहन करने के बाद भी अगर किसी मुहाजिर को अच्छा ठिकाना और अच्छे हालात नहीं मिलते तो क़ुरआन के वायदे में शुब्हा करने के बजाय अपनी नीयत व इख़्लास और अ़मल की अच्छाई का जायज़ा ले, जिस पर ये वायदे किये गये हैं, तो उसको मालूम होगा कि क़सूर अपना ही था, कहीं नीयत में खोट होता है कहीं सब्र व जमाव और तवक्कुल (अल्लाह पर भरोसे) की कमी होती है।

वतन छोड़ने और हिजरत की विभिन्न क़िस्में और उनके अहकाम

इमाम क़ुर्तुबी ने इस जगह हिजरत और वतन छोड़ने की क़िस्में और उनके कुछ अहकाम पर एक मुफ़ीद मज़मून तहरीर फ़रमाया है, फ़ायदे को पूर्ण करने के लिये उसको नक़ल करता हूँ।

इमाम क़ुर्तुबी ने इब्ने अ़रबी के हवाले से लिखा है कि वतन से निकलना और ज़मीन में सफ़र करना कभी तो किसी चीज़ से भागने और बचने के लिये होता है, और कभी किसी चीज़ की तलब व जुस्तजू के लिये, पहली क़िस्म का सफ़र जो किसी चीज़ से भागने और बचने के लिये हो उसको हिजरत कहते हैं, और उसकी छह क़िस्में हैं:

अव्वलः यानी दारुल-कुफ़्र (कुफ़्र के मक़ाम) से दारुल-इस्लाम (इस्लामी हुकूमत) की तरफ़ जाना। सफ़र की यह क़िस्म रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में भी फ़र्ज़ थी और क़ियामत तक अपनी हिम्मत व ताक़त के अनुसार फ़र्ज़ है (जबकि दारुल-कुफ़्र में अपने जान व माल और आबरू का अमन न हो, या दीनी फ़राईज़ की अदायेगी मुम्किन न हो), इसके बावजूद दारुल-हरब (मुसलमानों से लड़ने वालों और दुश्मनों) में मुक़ीम रहा तो गुनाहगार होगा।

दूसराः दारुल-बिदअ़त (दीन के नाम पर ग़लत रस्मों और ख़ुराफ़ात के मक़ाम) से निकल जाना। इब्ने क़ासिम कहते हैं कि मैंने इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि से सुना है कि किसी मुसलमान के लिये उस जगह में रहना और ठहरना हलाल नहीं जिसमें पहले बुज़ुर्गों और नेक लोगों पर लान-तान और बुरा-भला कहने का अ़मल किया जाता हो। इब्ने अ़रबी यह क़ौल नक़ल करके लिखते हैं कि यह बिल्कुल सही है क्योंकि अगर तुम किसी मुन्कर (बुराई) को दूर नहीं कर सकते तो तुम पर लाज़िम है कि ख़ुद वहाँ से अलग हो जाओ, जैसा कि अल्लाह का इरशाद है:

وَاِذَا رَاَيْتَ الَّذِيْنَ يَخُوْضُوْنَ فِيْٓ اٰيٰتِنَا فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ.

तीसरा सफ़र वह है कि जिस जगह पर हराम का ग़लबा हो, वहाँ से निकल जाना। क्योंकि हलाल का तलब करना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है।

चौथा सफ़र जिस्मानी तकलीफ़ों से बचने के लिये। यह सफ़र जायज़ और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से इनाम है कि इनसान जिस जगह दुश्मनों से जिस्मानी तकलीफ़ व सताने का ख़तरा महसूस करे वहाँ से निकल जाये, ताकि उस ख़तरे से निजात हो। यह चौथी क़िस्म का सफ़र सबसे पहले हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने किया, जबकि क़ौम की तकलीफ़ों से निजात हासिल करने के लिये इराक़ से मुल्के शाम की तरफ़ रवाना हुए और फ़रमाया 'इन्नी मुहाजिरुन् इला रब्बी'। उनके बाद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने ऐसा ही एक सफ़र मिस्र से मद्यन की तरफ़ किया जैसा कि क़ुरआन पाक में है:

فَخَرَجَ مِنْهَا خَآئِفًا يَّتَرَقَّبُ.

पाँचवाँ सफ़र हवा पानी की ख़राबी और रोगों के ख़तरे से बचने के लिये है। इस्लामी शरीअ़त ने इसकी भी इजाज़त दी है जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुछ चरवाहों को मदीने से बाहर जंगल में ठहरने के लिये इरशाद फ़रमाया, क्योंकि शहरी हवा पानी उनको मुवाफ़िक़ न था। इसी तरह हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अबू उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हुक्म भेजा था कि दारुल-ख़िलाफ़ा (राजधानी) उर्दुन से मुन्तक़िल करके किसी ऊँचे मक़ाम पर ले जायें जहाँ हवा पानी ख़राब न हो।

लेकिन यह उस वक़्त में है जब किसी मक़ाम पर ताऊन या वबाई बीमारियाँ फैली हुई न हों, और जिस जगह कोई वबा (महामारी) फैल जाये उसके लिये हुक्म यह है कि जो लोग उस जगह पहले से मौजूद हैं वे तो वहाँ से भागें नहीं, और जो बाहर हैं वे उसके अन्दर न जायें, जैसा कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को मुल्क शाम के सफ़र के वक़्त पेश आया कि शाम की सरहद पर पहुँचकर मालूम हुआ कि मुल्के शाम में ताऊन फैला हुआ है, तो आपको उस मुल्क में दाख़िल होने में पसोपेश हुआ, सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से निरंतर मश्विरों के बाद आख़िर में जब हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने उनको यह हदीस सुनाई कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है:

إِذَا وَقَعَ بِاَرْضٍ وَّاَنْتُمْ بِهَا فَلَا تَخْرُجُوْا مِنْهَا وَإِذَا وَقَعَ بِاَرْضٍ وَّلَسْتُمْ بِهَا فَلَا تَهْبِطُوْا عَلَيْهَا.

(رواه الترمذی وقال حدیث حسن صحیح)

"जब किसी ख़ित्ते में ताऊन फैल जाये और तुम वहाँ मौजूद हो तो अब वहाँ से न निकलो और जहाँ तुम पहले से मौजूद नहीं वहाँ ताऊन फैलने की ख़बर सुनो तो उसमें दाख़िल न हो।"

उस वक़्त फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हदीस के हुक्म पर अ़मल करते हुए पूरे क़ाफ़िले को लेकर वापसी का ऐलान कर दिया।

कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि हदीस शरीफ़ के इस हुक्म में एक ख़ास हिक्मत यह भी है कि जो लोग उस जगह मुक़ीम हैं जहाँ कोई वबा फैल चुकी है वहाँ के लोगों में वबा के जरासीम का

मौजूद होने का ग़ालिब गुमान है, वे अगर यहाँ से भागेंगे तो जिसमें यह वबा का माद्दा दाख़िल हो चुका है वह तो बचेगा नहीं, और जहाँ यह जायेगा वहाँ के लोग उससे ग्रस्त व प्रभावित होंगे, इसलिये यह हकीमाना (समझदारी का) फ़ैसला फ़रमाया।

छठा सफ़र अपने माल की हिफ़ाज़त के लिये है। जब कोई शख़्स किसी मक़ाम में चोरों, डाकुओं का ख़तरा महसूस करे तो वहाँ से मुन्तक़िल हो जाये। इस्लामी शरीअ़त ने इसकी भी इजाज़त दी है, क्योंकि मुसलमान के माल का भी ऐसा ही एहतिराम है जैसा उसकी जान का है।

ये छह क़िस्में तो वतन को छोड़ने और उससे सफ़र करने की वो हैं जो किसी चीज़ से भागने और बचने के लिये किया गया हो, और जो सफ़र किसी चीज़ की तलब व जुस्तजू के लिये किया जाये उसकी नौ क़िस्में हैं:

1. **इब्रत लेने के लिये सफ़रः** यानी दुनिया की सैर व सफ़र इस काम के लिये करना कि अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ात और कामिल क़ुदरत और पहली क़ौमों को देख करके इब्रत (सबक़ व नसीहत) हासिल करे। क़ुरआने करीम ने ऐसे सफ़र की तरफ़ तवज्जोह दिलाई है:

اَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِى الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ.

हज़रत ज़ुल्क़रनैन के सफ़र को भी कुछ उलेमा ने इसी क़िस्म का सफ़र क़रार दिया है और कुछ ने फ़रमाया कि उनका सफ़र ज़मीन पर अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ करने के लिये था।

2. **हज का सफ़रः** इसका चन्द शर्तों के साथ इस्लामी फ़रीज़ा होना सब को मालूम है।

3. **जिहाद का सफ़रः** इसका फ़र्ज़ या वाजिब या मुस्तहब होना भी सब मुसलमानों को मालूम है।

4. **रोज़गार के लिये सफ़रः** जब किसी शख़्स को अपने वतन में ज़रूरत के मुताबिक़ रोज़ी कमाने का मौक़ा हासिल न हो सके तो उस पर लाज़िम है कि वहाँ से सफ़र करके दूसरी जगह रोज़गार की तलाश करे।

5. **व्यापारिक सफ़रः** यानी ज़रूरत की मात्रा से ज़्यादा माल हासिल करने के लिये सफ़र करना यह भी शरई तौर पर जायज़ है। हक़ तआ़ला का इरशाद है:

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ

अल्लाह का फ़ज़्ल तलाश करने से मुराद इस आयत में तिजारत है, अल्लाह तआ़ला ने हज के सफ़र में भी तिजारत की इजाज़त दे दी है, तो तिजारत के लिये ही सफ़र करना कहीं बढ़कर जायज़ हुआ।

6. **इल्म हासिल करने के लिये सफ़रः** इसका दीन के ज़रूरत के मुताबिक़ फ़र्ज़-ए-ऐन (हर एक के लिये लाज़िमी फ़र्ज़) होना, और ज़रूरत से ज़्यादा का फ़र्ज़-ए-किफ़ाया होना मालूम व परिचित है।

7. **किसी मक़ाम को पवित्र और बरकत वाला समझकर उसकी तरफ़ सफ़र करनाः** यह सिवाय तीन मस्जिदों के दुरुस्त नहीं—

(1) मस्जिद-ए-हराम (मक्का मुकर्रमा)।

(2) मस्जिद-ए-नबवी (मदीना तय्यिबा)।

(3) मस्जिद-ए-अक़्सा (बैतुल-मुक़द्दस)।

(यह अ़ल्लामा क़ुर्तुबी और इब्ने अ़रबी की राय है, दूसरे पहले और बाद के महान उलेमा ने आ़म पवित्र और बरकत वाले मक़ामात की तरफ़ सफ़र करने को भी जायज़ क़रार दिया है। **मुहम्मद शफ़ी)**

8. **इस्लामी सरहदों की हिफ़ाज़त के लिये सफ़रः** जिसको रबात कहा जाता है, बहुत हदीसों में इसकी बड़ी फ़ज़ीलत बयान हुई है।

9. **रिश्तेदारों, प्यारों और दोस्तों से मुलाक़ात के लिये सफ़रः** हदीस में इसको भी अज्र व सवाब का ज़रिया क़रार दिया गया है, जैसा कि सही मुस्लिम की हदीस में क़रीबी लोगों और दोस्तों की मुलाक़ात के लिये सफ़र करने वाले के लिये फ़रिश्तों की दुआ़ का ज़िक्र फ़रमाया गया है (यह जब है कि उनकी मुलाक़ात से अल्लाह तआ़ला की रज़ा मक़सूद हो, कोई माद्दी ग़र्ज़ न हो) वल्लाहु आलम। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, पेज 349 से 351 जिल्द 5, सूरः निसा)

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِىْٓ اِلَيْهِمْ فَسْـَٔلُوْٓا اَهْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿٤٣﴾ بِالْبَيِّنٰتِ وَالزُّبُرِ ۗ وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ اِلَيْهِمْ وَلَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُوْنَ ﴿٤٤﴾

व मा अर्सल्ना मिन् क़ब्लि-क इल्ला रिजालन्-नूही इलैहिम् फ़स्अलू अह्लज़्ज़िक्रि इन् कुन्तुम् ला तअ़्लमून (43) बिल्-बय्यिनाति वज़्ज़ुबुरि, व अन्ज़ल्ना इलैकज़्ज़िक्-र लितुबय्यि-न लिन्नासि मा नुज़्ज़ि-ल इलैहिम् व लअ़ल्लहुम् य-तफ़क्करून (44) ●

और तुझसे पहले भी हमने यही मर्द भेजे थे कि हुक्म भेजते थे हम उनकी तरफ़ सो पूछो याद रखने वालों से अगर तुमको मालूम नहीं। (43) भेजा था उनको निशानियाँ देकर और पन्ने, और उतारी हमने तुझ पर यह याददाश्त कि तू खोल दे लोगों के सामने वह चीज़ जो उतरी उनके वास्ते ताकि वे ग़ौर करें। (44) ●

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ये मुन्किर लोग आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत व नुबुव्वत का इस बुनियाद पर इनकार कर रहे हैं कि आप बशर और इनसान हैं, और नबी व रसूल उनके नज़दीक कोई इनसान व बशर न होना चाहिये, यह उनका जाहिलाना ख़्याल है क्योंकि) हमने आप से पहले सिर्फ़ आदमी ही रसूल बनाकर मोजिज़े और किताबें देकर भेजे हैं, कि हम उन पर वही भेजा करते थे (तो ऐ मक्का वालो इनकारियो!) अगर तुमको इल्म नहीं तो दूसरे जानने वालों से पूछ लो (जिनको पिछले नबियों के हालात का इल्म हो और वे तुम्हारे ख़्याल में भी मुसलमानों

की तरफ़दारी न करें, और इसी तरह आपको भी रसूल बनाकर) आप पर भी यह क़ुरआन उतारा है, ताकि जो हिदायतें (आपके माध्यम से) लोगों के पास भेजी गई हैं वो हिदायतें आप उनको स्पष्ट करके समझा दें, और ताकि वे ग़ौर व फ़िक्र (सोच-विचार) किया करें।

मआरिफ़ व मसाईल

तफ़सीर रूहुल-मआनी में है कि इस आयत के नाज़िल होने के बाद मक्का के मुश्रिकों ने अपने क़ासिद (प्रतिनिधि) मदीना तय्यिबा के यहूदियों के पास असल बात मालूम करने के लिये भेजे कि क्या वाक़ई यह बात है कि पहले भी तमाम नबी इनसानी नस्ल से ही होते आये हैं।

अगरचे लफ़्ज़ **अह्लज़्ज़िक्रि** में अहले किताब (यहूदी व ईसाई) और मोमिन हज़रात सब दाख़िल थे मगर यह ज़ाहिर है कि मुश्रिकों का इत्मीनान ग़ैर-मुस्लिमों ही के बयान से हो सकता था क्योंकि वे ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बात पर मुत्मइन नहीं थे तो दूसरे मुसलमानों की बात कैसे मान सकते थे।

अह्लुज़्ज़िक्र: लफ़्ज़ ज़िक्र चन्द मायनों के लिये इस्तेमाल होता है, उनमें से एक मायने इल्म के भी हैं, इसी मुनासबत से क़ुरआने करीम में तौरात को भी ज़िक्र फ़रमाया है:

وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُوْرِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ

और क़ुरआने करीम को भी ज़िक्र के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है जैसा कि इसके बाद वाली आयत 'अन्ज़ल्ना इलैकज़्ज़िक्-र' में क़ुरआन मुराद है। इसलिये अहले ज़िक्र के लफ़्ज़ी मायने इल्म वालों के हुए, और यहाँ इल्म वालों से कौन लोग मुराद हैं इसमें ज़ाहिर यह है कि अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) के उलेमा मुराद हैं। यह क़ौल हज़रत इब्ने अ़ब्बास, हसन बसरी, सुद्दी वग़ैरह का है, और कुछ हज़रात ने इस जगह भी ज़िक्र से क़ुरआन मुराद लेकर अहले ज़िक्र की तफ़सीर अहले क़ुरआन (क़ुरआन वालों) से की है। इसमें ज़्यादा स्पष्ट बात रुमानी, ज़ुजाज, अज़हरी की है, वे कहते हैं:

المراد باهل الذكر علماء اخبار الامم السالفة كائنا من كان فالذكر بمعنى الحفظ كانه قيل اسألوا المطّلعين على اخبار الامم يعلموكم بذلك.

तर्जुमाः अहले-ज़िक्र से मुराद पहले गुज़री उम्मतों और क़ौमों के हालात से वाक़िफ़ लोग हैं, वह कोई भी हो, तो यहाँ ज़िक्र याददाश्त और जानकारी के मायने में है और गोया यह कहा गया है कि पहली उम्मतों के हालात के जानकारों से मालूम कर लो वे तुमको इसके बारे में बतला देंगे। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

इस तहक़ीक़ की बिना पर इसमें अहले किताब भी दाख़िल हैं और क़ुरआन वाले भी।

बय्यिनात के मायने मारूफ़ व परिचित के हैं और यहाँ इससे मुराद मोजिज़े हैं, ज़ुबुर दर असल ज़-बरह् की जमा (बहुवचन) है जो लोहे के बड़े टुकड़ों के लिये बोला जाता है जैसा कि क़ुरआन पाक में फ़रमायाः

اٰتُوْنِیْ زُبَرَ الْحَدِیْدِ

टुकड़ों को जोड़ने की मुनासबत से लिखने को ज़बर कहा जाता है और लिखी हुई किताब को ज़िब्र और ज़बूर बोलते हैं। यहाँ इससे मुराद अल्लाह तआ़ला की किताब है, जिसमें तौरात, इन्जील, ज़बूर, क़ुरआन सब दाख़िल हैं।

ग़ैर-मुज्तहिद पर मुज्तहिद इमामों की पैरवी वाजिब है

उक्त आयत का यह जुमलाः

فَسْئَلُوْٓا اَهْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ○

(जानने वालों से मालूम कर लो अगर तुमको इल्म न हो) इस जगह अगरचे एक ख़ास मज़मून के बारे में आया है मगर अलफ़ाज़ आ़म हैं जो तमाम मामलात को शामिल हैं। इसलिये क़ुरआनी अन्दाज़ के एतिबार से दर हक़ीक़त यह एक अहम उसूल व नियम है जो अ़क़्ली भी है और रिवायती व किताबी भी, कि जो लोग अहकाम को नहीं जानते वे जानने वालों से पूछकर अ़मल करें, और न जानने वालों पर फ़र्ज़ है कि जानने वालों के बतलाने पर अ़मल करें, इसी का नाम तक़लीद (पैरवी और अनुसरण) है, यह क़ुरआन का स्पष्ट हुक्म भी है और अ़क़्ली तौर पर भी इसके सिवा अ़मल को आ़म करने की कोई सूरत नहीं हो सकती।

उम्मत में सहाबा के दौर से लेकर आज तक बिना मतभेद इसी उसूल व नियम पर अ़मल होता आया है, जो तक़लीद (पैरवी) के इनकारी हैं वे भी इस तक़लीद का इनकार नहीं करते कि जो लोग आ़लिम नहीं वे उलेमा से फ़तवा लेकर अ़मल करें, और यह ज़ाहिर है कि नावाक़िफ़ अ़वाम को उलेमा अगर क़ुरआन व हदीस की दलीलें बतला भी दें तो वे उन दलीलों को भी उन्हीं उलेमा के भरोसे और विश्वास पर क़ुबूल करेंगे, उनमें ख़ुद दलीलों को समझने और परखने की क़ाबलियत तो है नहीं, और तक़लीद इसी का नाम है कि न जानने वाला किसी जानने वाले के एतिमाद (भरोसे) पर किसी हुक्म को शरीअ़त का हुक्म क़रार देकर अ़मल करे, यह तक़लीद वह है जिसके जायज़ होने बल्कि वाजिब होने में किसी मतभेद की गुन्जाईश नहीं, अलबत्ता वे उलेमा जो ख़ुद क़ुरआन व हदीस को और इजमा के मौक़ों को समझने की क़ाबलियत रखते हैं उनको ऐसे अहकाम में जो क़ुरआन व हदीस में स्पष्ट और खुले तौर पर बयान हुए हैं और सहाबा व ताबिईन में के उलेमा के बीच उन मसाईल में कोई मतभेद भी नहीं, उन अहकाम में वे उलेमा डायरेक्ट क़ुरआन व हदीस और इजमा पर अ़मल करें, उनमें उलेमा को किसी मुज्तहिद की पैरवी की ज़रूरत नहीं। लेकिन वे अहकाम व मसाईल जो क़ुरआन व सुन्नत में स्पष्ट तौर पर बयान नहीं या जिनमें क़ुरआनी आयतों और हदीस की रिवायतों में बज़ाहिर कोई टकराव नज़र आता है, या जिनमें सहाबा व ताबिईन के बीच क़ुरआन व सुन्नत के मायने मुतैयन करने में मतभेद पेश आया है, ये मसाईल व अहकाम इज्तिहाद और गहरे ग़ौर व फ़िक्र के मोहताज होते हैं, उनको इस्तिलाह (परिभाषा) में **मुज्तहद् फ़ीह मसाईल** कहा जाता है। उनका हुक्म यह

है कि जिस आ़लिम को दर्जा-ए-इज्तिहाद (क़ुरआन व हदीस से मसाईल व अहकाम निकालने की महारत व सलाहियत) हासिल नहीं उसको भी उन मसाईल में किसी मुज्तहिद इमाम की पैरवी करना ज़रूरी है, सिर्फ़ अपनी ज़ाती राय के भरोसे पर एक आयत या रिवायत को तरजीह देकर अपना लेना और दूसरी आयत या रिवायत को ग़ैर-वरीयता प्राप्त क़रार देकर छोड़ देना उसके लिये जायज़ नहीं।

इसी तरह जो अहकाम क़ुरआन व सुन्नत में स्पष्ट रूप से ज़िक्र नहीं किये गये उनको क़ुरआन व सुन्नत के बयान किये हुए उसूल के मुताबिक़ निकालना और उनका शरई हुक्म मुतैयन करना यह भी उन्हीं उम्मत के मुज्तहिदों का काम है जिनको अ़रबी भाषा, अ़रबी लुग़त और मुहावरों और इस्तेमाल के तरीक़ों का तथा क़ुरआन व सुन्नत से संबन्धित तमाम उलूम का मेयारी इल्म और तक़वा व परहेज़गारी का ऊँचा मक़ाम हासिल हो, जैसे इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, इमाम शाफ़ई रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, इमाम मालिक, रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, इमाम अहमद बिन हंबल रह्मतुल्लाहि अ़लैहि या इमाम औज़ाई रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, फ़क़ीह अबुल्लैस रह्मतुल्लाहि अ़लैहि वग़ैरह, जिनमें हक़ तआ़ला ने नुबुव्वत के ज़माने की निकटता और सहाबा व ताबिईन की सोहबत की बरकत से शरीअ़त के उसूल व मक़ासिद समझने का ख़ास ज़ौक़ (तबई सलाहियत और महारत) और स्पष्ट तौर पर बयान हुए अहकाम से ग़ैर-स्पष्ट अहकाम को क़ियास करके हुक्म निकालने का ख़ास सलीक़ा अ़ता फ़रमाया था, ऐसे इज्तिहादी मसाईल में आ़म उलेमा को भी मुज्तहिद इमामों में से किसी की पैरवी करना लाज़िम है, मुज्तहिद इमामों के ख़िलाफ़ कोई नई राय इख़्तियार करना ख़ता (ग़लती और चूक) है।

यही वजह है कि उम्मत के बड़े उलेमा, मुहद्दिसीन और फ़ुक़हा इमाम ग़ज़ाली, इमाम तिर्मिज़ी, इमाम तहावी, इमाम मुज़नी, इमाम इब्ने हम्माम, इमाम इब्ने क़ुदामा और इसी मेयार के लाखों पहले और बाद के उलेमा बावजूद अ़रबी और शरई उलूम की आ़ला महारत हासिल होने के ऐसे इज्तिहादी मसाईल पर हमेशा मुज्तहिद इमामों की पैरवी ही के पाबन्द रहे हैं, सब मुज्तहदीन के ख़िलाफ़ अपनी राय से कोई फ़तवा देना जायज़ नहीं समझा।

अलबत्ता इन हज़रात को इल्म व तक़वे का वह मेयारी दर्जा हासिल था कि मुज्तहदीन के अक़वाल और रायों को क़ुरआन व सुन्नत की दलीलों से जाँचते और परखते थे, फिर मुज्तहिद इमामों में से जिस इमाम के क़ौल को वे किताब व सुन्नत के क़रीब पाते उसको इख़्तियार कर लेते थे, मगर मुज्तहिद इमामों के मस्लक से बाहर निकलना और उन सब के ख़िलाफ़ कोई राय क़ायम करना हरगिज़ जायज़ न जानते थे, तक़लीद (पैरवी) की असल हक़ीक़त इतनी ही है।

उसके बाद दिन-ब-दिन इल्म का मेयार घटता गया और तक़वा व ख़ुदातर्सी के बजाय नफ़्सानी स्वार्थ ग़ालिब आने लगे, ऐसी हालत में अगर यह आज़ादी दी जाये कि जिस मसले में चाहें किसी दूसरे का क़ौल ले लें तो इसका लाज़िमी असर यह होना था कि लोग शरीअ़त की पैरवी का नाम लेकर अपनी इच्छा की पैरवी में मुब्तला हो जायें, कि जिस इमाम के क़ौल में अपनी नफ़्सानी ग़र्ज़ पूरी होती नज़र आये उसको इख़्तियार कर लें, और यह ज़ाहिर है कि ऐसा

करना कोई दीन व शरीअ़त की पैरवी नहीं होगी बल्कि अपनी इच्छा और ग़र्ज़ों की पैरवी होगी जो उम्मत की सर्वसम्मति से हराम है। अ़ल्लामा शातबी ने मुवाफ़क़ात में इस पर बड़ी तफ़सील से कलाम किया है, और इमाम इब्ने तैमिया ने भी आ़म तक़लीद की मुख़ालफ़त के बावजूद इस तरह के इत्तिबा (पैरवी) को अपने फ़तावा में तमाम उम्मत की सर्वसम्मति से हराम कहा है, इसलिये बाद के फ़ुक़हा (मसाईल और क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) ने यह ज़रूरी समझा कि अ़मल करने वालों को किसी एक ही मुज्तहिद इमाम की पैरवी का पाबन्द करना चाहिये, यहीं से व्यक्तिगत पैरवी का आग़ाज़ हुआ जो दर हक़ीक़त एक इन्तिज़ामी हुक्म है, जिससे दीन का इन्तिज़ाम क़ायम रहे और लोग दीन की आड़ में नफ़्स व इच्छा की पैरवी के शिकार न हो जायें। इसकी मिसाल बिल्कुल वही है जो हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने तमाम सहाबा की सर्वसम्मति से क़ुरआन के सात लुग़ात में से सिर्फ़ एक लुग़त को ख़ास कर देने में किया, कि अगरचे सातों लुग़ात क़ुरआन ही के लुग़ात थे, जिब्रीले अमीन के ज़रिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इच्छा के अनुसार नाज़िल हुए मगर जब क़ुरआने करीम अ़जम (अ़रब से बाहर के इलाक़ों) में फैला और विभिन्न लुग़ात में पढ़ने से क़ुरआन में रद्दोबदल का ख़तरा महसूस किया गया तो तमाम सहाबा की राय से मुसलमानों पर लाज़िम कर दिया गया कि सिर्फ़ एक ही लुग़त में क़ुरआन लिखा और पढ़ा जाये। हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इसी एक लुग़त के मुताबिक़ तमाम मुसाहिफ़ (क़ुरआन की प्रतियाँ) लिखवाकर दुनिया के कोने-कोने में भिजवा दिये, और आज तक पूरी उम्मत उसी की पाबन्द है। इसके यह मायने नहीं कि दूसरे लुग़ात हक़ नहीं थे, बल्कि दीन के इन्तिज़ाम और क़ुरआन की रद्दोबदल से हिफ़ाज़त की बिना पर सिर्फ़ एक लुग़त इख़्तियार कर लिया गया। इसी तरह मुज्तहिद इमाम सब हक़ पर हैं उनमें से किसी एक को तक़लीद (पैरवी) के लिये मुक़र्रर करने का यह मतलब हरगिज़ नहीं कि जिस मुक़र्ररा इमाम की पैरवी किसी ने इख़्तियार की है उसके नज़दीक दूसरे इमाम पैरवी के क़ाबिल नहीं, बल्कि अपनी बेहतरी व आसानी जिस इमाम की पैरवी में देखी उसी को इख़्तियार कर लिया और दूसरे इमामों को भी इसी तरह वाजिबुल-एहतिराम (सम्मानीय) समझा।

और यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे बीमार आदमी को शहर के हकीम और डॉक्टरों में से किसी एक ही को अपने इलाज के लिये मुतैयन करना ज़रूरी समझा जाता है, क्योंकि बीमार अपनी राय से कभी किसी डॉक्टर से पूछकर दवा इस्तेमाल करे कभी किसी दूसरे से पूछकर यह उसकी हलाकत का सबब होता है। वह जब किसी डॉक्टर का चयन अपने इलाज के लिये करता है तो उसका यह मतलब हरगिज़ नहीं होता कि दूसरे डॉक्टर माहिर नहीं, या उनमें इलाज की सलाहियत नहीं।

हनफ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली की जो तक़सीम उम्मत में क़ायम हुई इसकी हक़ीक़त इससे ज़्यादा कुछ न थी। इसमें फ़िर्क़ा बन्दी और गिरोह बन्दी का रंग और आपसी झगड़े व बिखराव की गर्म बाज़ारी न कोई दीन का काम है न कभी दीनी समझ रखने वाले और हक़ परस्त उलेमा ने इसे अच्छा समझा है। कुछ उलेमा के कलाम में इल्मी बहस व तहक़ीक़ ने मुनाज़रे का रंग

इख़्तियार कर लिया, और बाद में ताने व कटाक्ष तक की नौबत आ गई, फिर जाहिलाना लड़ाई व झगड़े ने वह नौबत पहुँचा दी जो आज उमूमन दीनदारी और मज़हब पसन्दी का निशान बन गया। अब किस से शिकायत की जाये बस अल्लाह ही की तरफ़ फ़रियाद के हाथ उठाये जा सकते हैं और तमाम ताक़त व क़ुव्वत उसी बुलन्द व अ़ज़ीम ज़ात के हाथ में है।

तंबीहः तक़लीद व इज्तिहाद (किसी दूसरे इमाम व आ़लिम की पैरवी या खुद क़ुरआन व हदीस में गहरे ग़ौर व फ़िक्र करके मसाईल व अहकाम निकालने) के बारे में जो कुछ यहाँ लिखा गया वह इस मसले का बहुत मुख़्तसर खुलासा है जो आ़म मुसलमानों के समझने के लिये काफ़ी है, आ़लिमाना तहक़ीक़ात व तफ़सीलात उसूले फ़िक़्ा (मसाईल) की किताबों में विस्तृत मौजूद हैं, ख़ुसूसन 'किताबुल-मुवाफ़क़ात' अ़ल्लामा शातबी जिल्द चार बाबुल-इज्तिहाद, और अ़ल्लामा सैफ़ुद्दीन आमदी की किताब 'अहकामुल-अहकाम' जिल्द तीन, मुज्तहिदीन के बारे में तीसरा क़ायदा, हज़रत शाह वलीयुल्लाह देहलवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि की किताबें 'हुज्जतुल्लाहिल-बालिग़ा' और 'रिसाला अ़क़्दुल-जीद' और आख़िर में हज़रत हकीमुल-उम्मत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि की 'किताबुल-इक़्तिसाद फ़ित्तक़लीद वल-इज्तिहाद' इस मसले में ख़ास तौर से पढ़ने के क़ाबिल हैं, उलेमा इनकी तरफ़ रुजू फ़रमायें।

क़ुरआन समझने के लिये हदीसे रसूल ज़रूरी है, हदीस का इनकार दर हक़ीक़त क़ुरआन का इनकार है

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ.

इस आयत में ज़िक्र से मुराद सबके नज़दीक क़ुरआने करीम है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस आयत में पाबन्द फ़रमाया है कि आप क़ुरआन की नाज़िल हुई आयतों का बयान और वज़ाहत (व्याख्या) लोगों के सामने कर दें। इसमें इस बात का ख़ुला सुबूत है कि क़ुरआने करीम के मायनों, मतलब, तथ्यों और अहकाम का सही समझना रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बयान पर मौक़ूफ़ है, अगर हर इनसान सिर्फ़ अ़रबी भाषा और अ़रबी साहित्य से वाक़िफ़ होकर क़ुरआन के अहकाम को अल्लाह की मंशा के मुताबिक़ समझने पर क़ादिर होता तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बयान व खुलासे की ख़िदमत सुपुर्द करने के कोई मायने नहीं रहते।

अ़ल्लामा शातबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने मुवाफ़क़ात में पूरी तफ़सील से साबित किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत पूरी की पूरी अल्लाह की किताब का बयान (तफ़सीर व व्याख्या) है, क्योंकि क़ुरआने करीम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में फ़रमाया हैः

وَاِنَّكَ لَعَلٰى خُلُقٍ عَظِيْمٍ○

और हज़रत सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने इस ख़ुलुक़-ए-अज़ीम की तफ़सीर यह फ़रमाई 'का-न ख़ुलुक़ुहुल-क़ुरआनु'। इसका हासिल यह हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जो भी कोई क़ौल व फ़ेल साबित है वो सब क़ुरआन ही के इरशादात हैं। कुछ तो ज़ाहिरी तौर पर किसी आयत की तफ़सीर व वज़ाहत होते हैं, जिनको आम इल्म वाले जानते हैं और कुछ जगह बज़ाहिर क़ुरआन में उसका कोई ज़िक्र नहीं होता मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दिल मुबारक में वही (अल्लाह के पैग़ाम) के तौर पर उसको डाला जाता है, वह भी एक हैसियत से क़ुरआन ही के हुक्म में होता है, क्योंकि क़ुरआन के बयान के अनुसार आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की कोई बात अपनी इच्छा से नहीं होती बल्कि हक़ तआ़ला की तरफ़ से वही होती है, जैसा कि क़ुरआने पाक में फ़रमायाः

وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى ۝ اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْیٌ يُّوْحٰى ۝

इससे मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तमाम इबादतें, मामलात, अख़्लाक़, आ़दतें सब की सब अल्लाह की वही और क़ुरआन के हुक्म में हैं, और जहाँ कहीं आपने अपने इज्तिहाद (ग़ौर व फ़िक्र, ज़ेहनी कोशिश) से कोई काम किया है तो आख़िरकार अल्लाह की वही (पैग़ाम) से या तो उस पर कोई नकीर न करने से उसको सही क़रार दिया और उसकी ताईद कर दी जाती है, इसलिये वह भी अल्लाह की वही के हुक्म में हो जाता है।

ख़ुलासा यह है कि इस आयत ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने का मक़सद क़ुरआन की तफ़सीर व बयान को क़रार दिया है, जैसा कि सूरः जुमुआ़ वग़ैरह की अनेक आयतों में किताब की तालीम के अलफ़ाज़ से नुबुव्वत के इस मक़सद को ज़िक्र किया गया है। अब हदीस का वह ज़ख़ीरा जिसको सहाबा व ताबिईन से लेकर बाद के उलेमा व बुज़ुर्गों और मुहद्दिसीन तक उम्मत के बा-कमाल अफ़राद ने अपनी जानों से ज़्यादा हिफ़ाज़त करके उम्मत तक पहुँचाया है, और उसकी छान-बीन में उम्रें ख़र्च करके हदीस की रिवायतों के दर्जे क़ायम कर दिये हैं, और जिस रिवायत को सनद की हैसियत से इस दर्जे का नहीं पाया कि उस पर शरीअ़त के अहकाम की बुनियाद रखी जाये उसको हदीस के ज़ख़ीरे से अलग करके सिर्फ़ उन रिवायतों पर मुस्तक़िल किताबें लिख दी हैं जो उम्र भर की तन्क़ीदों (छान-बीन, आलोचनाओं) और तहक़ीक़ात के बाद सही और क़ाबिले एतिमाद साबित हुई हैं।

अगर आज कोई शख़्स हदीस के इस ज़ख़ीरे को किसी हीले-बहाने से नाक़ाबिले विश्वास कहता है तो इसका साफ़ मतलब यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ुरआन के इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) की कि क़ुरआन के मज़ामीन को बयान नहीं किया, या यह कि आपने तो बयान किया था मगर वह क़ायम व महफ़ूज़ नहीं रहा, दोनों सूरतों में क़ुरआन बहैसियत मायने के महफ़ूज़ न रहा, जिसकी हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी ख़ुद हक़ तआ़ला ने अपने ज़िम्मे रखी है, जैसा कि फ़रमायाः

وَاِنَّا لَهٗ لَحٰفِظُوْنَ ۝

उसका यह दावा इस क़ुरआनी बयान व वज़ाहत के ख़िलाफ़ है। इससे साबित हुआ कि जो शख़्स सुन्नते रसूल (यानी हदीसे पाक) को इस्लाम की हुज्जत मानने से इनकार करता है वह दर हक़ीक़त क़ुरआन ही का इनकारी है। नऊज़ु बिल्लाह।

اَفَاَمِنَ الَّذِيْنَ مَكَرُوا السَّيِّاٰتِ اَنْ يَّخْسِفَ اللّٰهُ بِهِمُ الْاَرْضَ اَوْ يَاْتِيَهُمُ الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُوْنَ ﴿٤٥﴾ اَوْ يَاْخُذَهُمْ فِيْ تَقَلُّبِهِمْ فَمَا هُمْ بِمُعْجِزِيْنَ ﴿٤٦﴾ اَوْ يَاْخُذَهُمْ عَلٰى تَخَوُّفٍ ۚ فَاِنَّ رَبَّكُمْ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ﴿٤٧﴾

अ-फ़-अमिनल्लज़ी-न म-करुस्-सय्यिआति अंय्यख़्सिफ़ल्लाहु बिहिमुल्-अर्-ज़ औ यअ्ति-यहुमुल्-अ़ज़ाबु मिन् हैसु ला यश्अुरून (45) औ यअ्ख़ु-ज़हुम् फ़ी तक़ल्लुबिहिम् फ़मा हुम् बिमुअ्जिज़ीन (46) औ यअ्ख़ु-ज़हुम् अ़ला तख़व्वुफ़िन् फ़इन्-न रब्बकुम् ल-रऊफ़ुर्रहीम (47)	सो क्या निडर हो गये वे लोग जो बुरे फ़रेब करते हैं इससे कि धंसा देवे अल्लाह उनको ज़मीन में या आ पहुँचे उनपर अ़ज़ाब जहाँ से ख़बर न रखते हों। (45) या पकड़ ले उनको चलते फिरते सो वे नहीं हैं आ़जिज़ करने वाले। (46) या पकड़ ले उनको डराने के बाद, सो तुम्हारा रब बड़ा नर्म है, मेहरबान। (47)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो लोग (दीने हक़ के बातिल करने को) बुरी-बुरी तदबीरें करते हैं (कि कहीं इसमें शुब्हे व एतिराज़ निकालते हैं और हक़ का इनकार करते हैं जो कि गुमराह होना है, कहीं दूसरों को रोकते हैं जो कि गुमराह करना है) क्या ऐसे लोग (ये कार्रवाईयाँ करके) फिर भी इस बात से बेफ़िक्र (बैठे हुए) हैं कि अल्लाह तआ़ला उनको (उनके कुफ़्र के वबाल में) ज़मीन में धंसा दे, या उन पर ऐसी जगह से अ़ज़ाब आ पड़े जहाँ से उनको गुमान भी न हो (जैसे जंगे-बदर में ऐसे बिना हथियार व सामान वाले मुसलमानों के हाथ से उनको सज़ा मिली कि कभी उनके दिमाग़ व अ़क़्ल में भी इसका गुमान न होता कि ये हम पर ग़ालिब आ सकेंगे)। या उनको चलते-फिरते (किसी आफ़त में) पकड़ ले (जैसे कोई बीमारी ही अचानक आ खड़ी हो) सो (अगर इन बातों में से कोई बात हो जाये तो) ये लोग ख़ुदा को हरा (भी) नहीं सकते। या उनको घटाते-घटाते पकड़ ले (जैसे सूखा और महामारी का शिकार होकर धीरे-धीरे ख़ात्मा हो जाये। यानी निडर होना नहीं चाहिये, ख़ुदा को सब क़ुदरत है, मगर मोहलत जो दे रखी है) सो (इसकी वजह यह है कि) तुम्हारा रब बड़ा शफ़ीक़ व मेहरबान है (इसलिये मोहलत दी है कि अब भी समझ जाओ और

कामयाबी और निजात का तरीक़ा इख़्तियार कर लो)।

मआरिफ़ व मसाईल

इससे पहली आयतों में काफ़िरों को आख़िरत के अ़ज़ाब से डराया गया थाः

ثُمَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ يُخْزِيْهِمْ

इन आयतों में उनको इससे डराया गया है कि यह भी हो सकता है कि आख़िरत के अ़ज़ाब से पहले दुनिया में भी अल्लाह के अ़ज़ाब में पकड़े जाओ, जिस ज़मीन पर बैठे हो उसी के अन्दर धंसा दिये जाओ, या और किसी बेगुमान रास्ते से अल्लाह के अ़ज़ाब में पकड़े जाओ, जैसे जंगे बदर में एक हज़ार हथियार बन्द बहादुर नौजवानों को चन्द बिना सामान व हथियार के मुसलमानों के हाथ से ऐसी सज़ा मिली जिसका उनको कभी वहम व गुमान भी न हो सकता था, या यह भी हो सकता है कि चलते-फिरते अल्लाह के किसी अ़ज़ाब में पकड़े जाओ कि कोई जानलेवा बीमारी आ खड़ी हो या किसी ऊँची जगह से गिरकर या किसी सख़्त चीज़ से टकराकर हलाक हो जाओ, और अ़ज़ाब की यह सूरत भी हो सकती है कि अचानक अ़ज़ाब न आये मगर माल व सेहत, तन्दुरुस्ती और राहत व सुकून के सामान घटते चले जायें, इसी तरह घटाते-घटाते उस क़ौम का ख़ात्मा हो जाये।

लफ़्ज़ **तख़व्वुफ़** जो इस आयत में आया है बज़ाहिर **ख़ौफ़** से निकला है, और कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने इसी मायने के एतिबार से यह तफ़सीर की है कि एक जमाअ़त को अ़ज़ाब में पकड़ा जाये ताकि दूसरी जमाअ़त डर जाये, इसी तरह दूसरी जमाअ़त को अ़ज़ाब में पकड़ा जाये जिससे तीसरी जमाअ़त डर जाये, यूँ ही डराते-डराते सब का ख़ात्मा हो जाये।

मगर मुफ़स्सिर-ए-क़ुरआन हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने यहाँ लफ़्ज़ तख़व्वुफ़ को तनक़्क़ुस के मायने में लिया है और इसी मायने के एतिबार से तर्जुमा घटाते-घटाते किया गया है।

हज़रत सईद बिन मुसैयब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को भी इस लफ़्ज़ के मायने में दुविधा पेश आई तो आपने मिम्बर पर खड़े होकर सहाबा को ख़िताब करके फ़रमाया कि लफ़्ज़ तख़व्वुफ़ के आप क्या मायने समझते हैं? आ़म मजमा ख़ामोश रहा मगर क़बीला हुज़ैल के एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि अमीरुल् मोमिनीन! यह हमारे क़बीले का ख़ास लुग़त है, हमारे यहाँ यह लफ़्ज़ तनक़्क़ुस (घटाने और कमी करने) के मायने में इस्तेमाल होता है, यानी धीरे-धीरे घटाना। फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने सवाल किया कि क्या अ़रब के लोग अपनी कविताओं में यह लफ़्ज़ तनक़्क़ुस के मायने में इस्तेमाल करते हैं, उसने अ़र्ज़ किया कि हाँ, और अपने क़बीले के शायर अबू कबीर हज़ली का एक शे'र पेश किया, जिसमें यह लफ़्ज़ आहिस्ता-आहिस्ता घटाने के मायने में लिया गया है। इस पर हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि लोगो! तुम जाहिलीयत के दौर का

इल्म हासिल करो क्योंकि उसमें तुम्हारी किताब की तफ़सीर और तुम्हारे कलाम के मायने का फ़ैसला होता है।

क़ुरआन समझने के लिये मामूली अ़रबी जानना काफ़ी नहीं

इससे एक बात तो यह साबित हुई कि मामूली तौर पर अ़रबी भाषा बोलने लिखने की क़ाबलियत क़ुरआन समझने के लिये काफ़ी नहीं, बल्कि उसमें इतनी महारत और वाक़फ़ियत ज़रूरी है जिससे पुराने अ़रब जाहिलीयत के कलाम को पूरा समझा जा सके, क्योंकि क़ुरआने करीम उसी भाषा और उन्हीं के मुहावरों में नाज़िल हुआ है। इस दर्जे का अ़रबी अदब (साहित्य) सीखना मुसलमानों पर लाज़िम है।

अ़रबी अदब सीखने के लिये जाहिलीयत के शायरों का कलाम पढ़ना जायज़ है अगरचे वह ख़ुराफ़ात पर आधारित हो

इससे यह भी मालूम हुआ कि क़ुरआने करीम को समझने के लिये ज़माना-ए-जाहिलीयत (इस्लाम से पहले दौर) की अ़रबी भाषा और उसका लुग़त व मुहावरे समझने के लिये जाहिलीयत के शायरों का कलाम पढ़ना जायज़ है, अगरचे यह ज़ाहिर है कि जाहिलीयत के शायरों का कलाम जाहिलाना रस्मों और ख़िलाफ़े इस्लाम जाहिलाना कामों व आमाल को शामिल होगा मगर क़ुरआन समझने की ज़रूरत से उसको पढ़ना-पढ़ाना जायज़ क़रार दिया गया।

दुनिया का अ़ज़ाब भी एक तरह की रहमत है

उक्त आयतों में दुनिया के विभिन्न प्रकार के अ़ज़ाबों का ज़िक्र करने के बाद आयत के समापन पर फ़रमायाः

فَاِنَّ رَبَّكُمْ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ٥

इसमें अव्वल तो लफ़्ज़ रब से इस तरफ़ इशारा किया गया है कि दुनिया के अ़ज़ाब इनसान को सचेत करने के लिये रब होने की शान के तक़ाज़े से हैं, फिर लामे ताकीद के साथ हक़ तआ़ला का मेहरबान होना बतलाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि दुनिया की चेतावनियाँ दर हक़ीक़त शफ़क़त ही के तक़ाज़े से हैं ताकि ग़ाफ़िल इनसान सचेत होकर अपने आमाल की इस्लाह (सुधार) कर ले।

اَوَلَمْ يَرَوْا اِلٰى مَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَیْءٍ يَّتَفَيَّؤُا ظِلٰلُهٗ عَنِ الْيَمِيْنِ وَالشَّمَآئِلِ سُجَّدًا لِّلّٰهِ وَهُمْ دٰخِرُوْنَ ۝ وَلِلّٰهِ يَسْجُدُ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ مِنْ دَآبَّةٍ وَّالْمَلٰٓئِكَةُ وَهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ ۝ يَخَافُوْنَ رَبَّهُمْ مِّنْ فَوْقِهِمْ وَيَفْعَلُوْنَ مَا يُؤْمَرُوْنَ ۝ وَقَالَ اللّٰهُ لَا تَتَّخِذُوْٓا اِلٰهَيْنِ اثْنَيْنِ ۚ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ

وَّاحِدٌ ۚ فَاِيَّايَ فَارْهَبُوْنِ ۝ وَلَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَلَهُ الدِّيْنُ وَاصِبًا ۭ اَفَغَيْرَ اللّٰهِ تَتَّقُوْنَ ۝ وَمَا بِكُمْ مِّنْ نِّعْمَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ثُمَّ اِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فَاِلَيْهِ تَجْـــَٔـرُوْنَ ۝ ثُمَّ اِذَا كَشَفَ الضُّرَّ عَنْكُمْ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْكُمْ بِرَبِّهِمْ يُشْرِكُوْنَ ۝ لِيَكْفُرُوْا بِمَآ اٰتَيْنٰهُمْ ۭ فَتَمَتَّعُوْا ۣ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۝ وَيَجْعَلُوْنَ لِمَا لَا يَعْلَمُوْنَ نَصِيْبًا مِّمَّا رَزَقْنٰهُمْ ۭ تَاللّٰهِ لَتُسْـَٔــلُنَّ عَمَّا كُنْتُمْ تَفْتَرُوْنَ ۝ وَيَجْعَلُوْنَ لِلّٰهِ الْبَنٰتِ سُبْحٰنَهٗ ۙ وَلَهُمْ مَّا يَشْتَهُوْنَ ۝

अ-व लम् यरौ इला मा ख़-लक़ल्लाहु मिन् शैइंय्य-तफ़य्यउ ज़िलालुहू अ़निल्-यमीनि वश्शमाइलि सुज्जदल्-लिल्लाहि व हुम् दाख़िरून (48) व लिल्लाहि यस्जुदु मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्अर्ज़ि मिन् दाब्बतिंव्-वल्-मलाइ-कतु व हुम् ला यस्तक्बिरून (49) यख़ाफ़ू-न रब्बहुम् मिन् फ़ौक़िहिम् व यफ़्अ़लू-न मा युअ्मरून (50) ✿ ○

व क़ालल्लाहु ला तत्तख़िज़ू इलाहैनिस्-नैनि इन्नमा हु-व इलाहुंव्-वाहिदुन् फ़-इय्या-य फ़र्हबून (51) व लहू मा फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि व लहुद्दीनु वासिबन् अ-फ़ग़ैरल्लाहि तत्तक़ून (52) व मा बिकुम् मिन् निअ्मतिन् फ़मिनल्लाहि सुम्-म इज़ा मस्सकुमुज़्-ज़ुर्रु फ़-इलैहि तज्अरून (53) सुम्-म इज़ा क-शफ़ज़्ज़ुर्-र

क्या नहीं देखते वे जो कि अल्लाह ने पैदा की है कोई चीज़ कि ढलते हैं साये उसके दाहिनी तरफ़ से और बाईं तरफ़ से-सज्दा करते हुए अल्लाह को और वे आजिज़ी में हैं। (48) और अल्लाह को सज्दा करता है जो आसमान में है और जो ज़मीन में है जानदारों में से और फ़रिश्ते और वे तकब्बुर नहीं करते। (49) डर रखते हैं अपने रब का अपने ऊपर से और करते हैं जो हुक्म पाते हैं। (50) ✿ ○

और कहा है अल्लाह ने मत पकड़ो दो माबूद, वह माबूद एक ही है, सो मुझसे डरो। (51) और उसी का है जो कुछ है आसमानों में और ज़मीन में और उसी की इबादत है हमेशा, सो क्या सिवाय अल्लाह के किसी से डरते हो? (52) और जो कुछ तुम्हारे पास है नेमत सो अल्लाह की तरफ़ से, फिर जब पहुँचती है तुमको सख़्ती तो उसी की तरफ़ चिल्लाते हो। (53) फिर जब खोल देता है सख़्ती तुमसे

अ़न्कुम् इज़ा फ़रीक़ुम्-मिन्कुम् बिरब्बिहिम् युश्रिकून (54) लियक्फ़ुरू बिमा आतैनाहुम्, फ़-तमत्तअ़ू, फ़सौ-फ़ तअ़्लमून् (55) व यज्अ़लू-न लिमा ला यअ़्लमू-न नसीबम् मिम्मा रज़क़्नाहुम्, तल्लाहि लतुस्अलुन्-न अ़म्मा कुन्तुम् तफ़्तरून (56) व यज्अ़लू-न लिल्लाहिल्-बनाति सुब्हानहू व लहुम् मा यश्तहून (57)	उसी वक़्त एक फ़िर्क़ा तुम में से अपने रब के साथ लगता है शरीक बतलाने। (54) ताकि इनकारी हो जायें उस चीज़ से जो कि उनको दी है, सो मज़े उड़ा लो आख़िर मालूम कर लोगे। (55) और ठहराते हैं उनके लिये जिनकी ख़बर नहीं रखते एक हिस्सा हमारी दी हुई रोज़ी में से, क़सम अल्लाह की तुमसे पूछना है जो तुम बोहतान बाँधते हो। (56) और ठहराते हैं अल्लाह के लिये बेटियाँ वह इससे पाक है, और अपने लिये जो दिल चाहता है। (57)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या (उन) लोगों ने अल्लाह की उन पैदा की हुई चीज़ों को नहीं देखा (और देखकर तौहीद पर दलील नहीं पकड़ी) जिनके साये कभी एक तरफ़ को कभी दूसरी तरफ़ को इस अन्दाज़ से झुक जाते हैं कि (बिल्कुल) ख़ुदा के (हुक्म के) ताबे "अधीन" हैं (यानी साये के असबाब जो कि सूरज का नूरानी होना और सायेदार जिस्म का कसीफ़ होना है और साये की हरकत का सबब जो कि सूरज की हरकत है, फिर साये की विशेषतायें, यह सब अल्लाह के हुक्म से है), और वो (सायेदार) चीज़ें भी (अल्लाह के रू-ब-रू) आ़जिज़ (और हुक्म के ताबे) हैं। और (जिस तरह ये ज़िक्र हुई चीज़ें जिनमें इरादी हरकत नहीं जैसा कि 'ढलने' की निस्बत साये की तरफ़ इसका इशारा है, क्योंकि इरादी हरकत में साये की हरकत ख़ुद उस इरादे से हरकत करने वाले की हरकत से होती है, अल्लाह के हुक्म के ताबे हैं, इसी तरह) अल्लाह तआ़ला ही के (हुक्म के) ताबे हैं जितनी चीज़ें (अपने इरादे से) चलने वाली आसमानों में (जैसे फ़रिश्ते) और ज़मीन में (जैसे जानदार) मौजूद हैं, और (ख़ास तौर पर) फ़रिश्ते (भी), और वे (फ़रिश्ते बावजूद अपने रुतबे और मक़ाम की बुलन्दी के अल्लाह की फ़रमाँबरदारी से) तकब्बुर नहीं करते (और इसी लिये ख़ास तौर पर उनका ज़िक्र किया गया जबकि वे 'मा फ़िस्समावाति' "यानी जो कुछ आसमानों में है" में दाख़िल थे)। वे अपने रब से डरते हैं जो कि उन पर हाकिम है, और उनको जो कुछ (ख़ुदा की तरफ़ से) हुक्म किया जाता है वे उसको करते हैं।

और अल्लाह ने (शरई क़ानून के पाबन्द तमाम लोगों को रसूलों के वास्ते से) फ़रमाया है कि दो (या ज़्यादा) माबूद मत बनाओ, पस एक माबूद ही है (और जब यह बात है) तो तुम लोग ख़ास मुझ ही से डरा करो (क्योंकि जब माबूद होना मेरे साथ ख़ास है तो जो-जो उससे जुड़ी चीज़ें हैं जैसे कामिल क़ुदरत वाला होना वग़ैरह वो भी मेरे ही साथ ख़ास होंगी, तो इन्तिक़ाम वग़ैरह का ख़ौफ़ मुझ ही से होना चाहिये, और शिर्क इन्तिक़ाम को दावत देने वाली चीज़ है, पस शिर्क न करना चाहिये)। और उसी की (मिल्क) हैं सब चीज़ें जो कुछ कि आसमानों और ज़मीन में हैं, और लाज़िमी तौर पर इताअ़त बजा लाना उसी का हक़ है (यानी वही इस बात का मुस्तहिक़ है कि सब उसकी इताअ़त बजा लायें, जब यह बात साबित है) तो क्या फिर भी अल्लाह के सिवा औरों से डरते हो (और उनसे डरकर उनको पूजते हो)?

और (जैसे कि डरने के क़ाबिल सिवाय ख़ुदा के कोई नहीं ऐसे ही नेमत देने वाला और उम्मीद के क़ाबिल सिवाय ख़ुदा के कोई नहीं, चुनाँचे) तुम्हारे पास जो कुछ (किसी क़िस्म की) भी नेमत है वह सब अल्लाह ही की तरफ़ से है, फिर जब तुमको (ज़रा भी) तकलीफ़ पहुँचती है तो (उसके दूर होने के लिये) उसी (अल्लाह) से फ़रियाद करते हो (और कोई बुत वग़ैरह उस वक़्त याद नहीं रहता जिससे तौहीद (अल्लाह के एक और तन्हा हाकिम व माबूद होने) का हक़ होना उस वक़्त तुम्हारी हालत के इक़रार से भी मालूम हो जाता है लेकिन) फिर जब (अल्लाह तआ़ला) तुमसे उस तकलीफ़ को हटा देता है तो तुम में की एक जमाअ़त (और वही बड़ी जमाअ़त है) अपने रब के साथ (पहले की तरह) शिर्क करने लगती है। जिसका हासिल यह है कि हमारी दी हुई नेमत की (कि वह तकलीफ़ को दूर करना है) नाशुक्री करते हैं (जो कि अ़क़्ली तौर पर भी बुरा है)। ख़ैर कुछ दिन ऐश उड़ा लो (देखो) अब जल्दी (मरते ही) तुमको ख़बर हुई जाती है (और एक जमाअ़त इसलिये कहा गया कि बाज़े उस हालत को याद रखकर तौहीद व ईमान पर क़ायम हो जाते हैं जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

فَلَمَّا نَجّٰهُمْ اِلَى الْبَرِّ فَمِنْهُمْ مُّقْتَصِدٌ.

और (उनके जो अनेक शिर्क हैं उनमें से एक यह है कि) ये लोग हमारी दी हुई चीज़ों में से उन (माबूदों) का हिस्सा लगाते हैं जिनके (माबूद होने के) मुताल्लिक़ उनको कुछ इल्म (और उनके माबूद होने की कोई दलील व सनद) नहीं (जैसा कि इसकी तफ़सील आठवें पारे के रुकूअ़ नम्बर तीन की आयत 137 में गुज़री है)।

क़सम है ख़ुदा की! तुमसे तुम्हारी इन बोहतान-बाज़ियों की (क़ियामत में) ज़रूर बाज़पुर्स "यानी पूछताछ" होगी। (और एक शिर्क उनका यह है कि) अल्लाह तआ़ला के लिये बेटियाँ तजवीज़ करते हैं, सुब्हानल्लाह! (कैसी बेकार की बात है) और (इससे बढ़कर यह कि) अपने लिये पसन्दीदा चीज़ (यानी बेटे पसन्द करते हैं)।

وَاِذَا بُشِّرَ اَحَدُهُمْ بِالْاُنْثٰى ظَلَّ وَجْهُهٗ مُسْوَدًّا وَّهُوَ كَظِيْمٌ ۞ يَتَوَارٰى مِنَ الْقَوْمِ مِنْ سُوْۤءِ مَا بُشِّرَ بِهٖ ؕ اَيُمْسِكُهٗ عَلٰى هُوْنٍ اَمْ يَدُسُّهٗ فِى التُّرَابِ ؕ اَلَا سَآءَ مَا يَحْكُمُوْنَ ۞ لِلَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ مَثَلُ السَّوْءِ ۚ وَلِلّٰهِ الْمَثَلُ الْاَعْلٰى ؕ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۞

व इज़ा बुश्शि-र अ-हदुहुम् बिल्उन्सा ज़ल्-ल वज्हुहू मुस्वद्दंव्-व हु-व कज़ीम (58) य-तवारा मिनल्-क़ौमि मिन् सू-इ मा बुश्शि-र बिही, अयुम्सिकुहू अ़ला हूनिन् अम् यदुस्सुहू फ़ित्तुराबि, अला सा-अ मा यह्कुमून (59) लिल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्आख़िरति म-सलुस्सौइ व लिल्लाहिल् म-सलुल्-अअ्ला व हुवल् अ़ज़ीज़ुल् हकीम (60) ✿

और जब ख़ुशख़बरी मिले उनमें किसी को बेटी की, सारे दिन रहे मुँह उसका सियाह और जी में घुटता रहे। (58) छुपता फिरे लोगों से मारे बुराई उस ख़ुशख़बरी के जो सुनी, उसको रहने दे ज़िल्लत क़ुबूल करके या उसको दाब दे मिट्टी में। सुनता है! बुरा फ़ैसला करते हैं। (59) जो नहीं मानते आख़िरत को उनकी बुरी मिसाल है, और अल्लाह की मिसाल है सब से ऊपर, और वही है ज़बरदस्त हिक्मत वाला। (60) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब उनमें से किसी को (बेटी पैदा होने की) ख़बर दी जाये (जिसको अल्लाह के लिये तजवीज़ करते हैं) तो (इस क़द्र नाराज़ हो कि) सारे दिन उसका चेहरा बेरौनक़ रहे, और वह दिल ही दिल में घुटता रहे। (और) जिस चीज़ की उसको ख़बर दी गई है (यानी बेटी पैदा होने की) उसकी शर्म से लोगों से छुपा-छुपा फिरे (और दिल में उतार-चढ़ाव करे) कि आया उस (नवजात) को ज़िल्लत (की हालत) पर लिये रहे या उसको (ज़िन्दा या मारकर) मिट्टी में गाड़ दे। ख़ूब सुन लो! उनकी यह तजवीज़ बहुत ही बुरी है (कि अव्वल तो ख़ुदा के लिये औलाद साबित करना यही किस क़द्र बुरी बात है, फिर औलाद भी वह जिसको ख़ुदा इस क़द्र ज़लील व शर्मिन्दगी का सबब समझें, पस) जो लोग आख़िरत पर यक़ीन नहीं रखते उनकी बुरी हालत है (दुनिया में भी कि ऐसी जहालत में मुब्तला हैं, और आख़िरत में भी कि सज़ा व ज़िल्लत में मुब्तला होंगे), और अल्लाह तआ़ला के लिये तो बड़े आला दर्जे की सिफ़तें साबित हैं (न कि वो जो ये मुश्रिक लोग बकते हैं) और वह बड़े ज़बरदस्त हैं (अगर इनको दुनिया में शिर्क की सज़ा देना चाहें तो कुछ

मुश्किल नहीं, लेकिन साथ ही) बड़ी हिक्मत वाले (भी हैं, हिक्मत के तक़ाज़े के तहत मौत के बाद तक सज़ा को टाल दिया है)।

मआरिफ़ व मसाईल

इन आयतों में अ़रब के काफ़िरों की दो ख़स्लतों की निंदा की गई है कि अव्वल तो वे अपने घर में लड़की पैदा होने को इतना बुरा समझते हैं कि शर्मिन्दगी के सबब लोगों से छुपते फिरें और इस सोच में पड़ जायें कि लड़की पैदा होने से जो मेरी ज़िल्लत हो चुकी है उस पर सब्र करूँ या उसको ज़िन्दा दफ़न करके पीछा छुड़ाऊँ, और इस से आगे बढ़कर जहालत यह है कि जिस औलाद को अपने लिये पसन्द न करें अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ उसी को मन्सूब करें, कि फ़रिश्तों को अल्लाह तआ़ला की बेटियाँ क़रार दें।

दूसरी आयत के आख़िर में 'अला सा-अ मा यहकुमून' का मफ़्हूम तफ़सीर बहरे-मुहीत में इब्ने अ़तीया के हवाले से यही दोनों ख़स्लतें क़रार दी हैं कि अव्वल तो उनका यह फ़ैसला ही बुरा फ़ैसला है कि लड़कियों को एक अ़ज़ाब और ज़िल्लत समझें, दूसरे फिर जिस चीज़ को अपने लिये ज़िल्लत समझें उसी को अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मन्सूब करें।

तीसरी आयत के आख़िर में 'व हुवल्-अ़ज़ीज़ुल-हकीम' में भी इसकी तरफ़ इशारा है कि लड़की पैदा होने को मुसीबत व ज़िल्लत समझना और छुपते फिरना अल्लाह की हिक्मत का मुक़ाबला करना है, क्योंकि मख़्लूक़ में नर व मादा की पैदाईश हिक्मत के क़ानून के पूरी तरह मुताबिक़ है। (तफ़सीर रूहुल-बयान)

मसलाः इन आयतों में स्पष्ट इशारा पाया गया कि घर में लड़की पैदा होने को मुसीबत व ज़िल्लत समझना जायज़ नहीं, यह काफ़िरों का काम है। तफ़सीर रूहुल-बयान में शिरआ़ के हवाले से लिखा है कि मुसलमान को चाहिये कि लड़की पैदा होने से ज़्यादा ख़ुशी का इज़हार करे ताकि जाहिलीयत के लोगों के फ़ेल पर रद्द हो जाये। और एक हदीस में है कि वह औ़रत मुबारक होती है जिसके पहले पेट से लड़की पैदा हो। क़ुरआने करीम की आयतः

يَهَبُ لِمَنْ يَّشَآءُ اِنَاثًا وَّيَهَبُ لِمَنْ يَّشَآءُ الذُّكُوْرَO

में भी इनास (औ़रत) को पहले बयान करने से इसकी तरफ़ इशारा पाया जाता है कि पहले पेट से लड़की पैदा होना अफ़ज़ल है।

और एक हदीस में इरशाद है कि जिसको इन लड़कियों में से किसी के सथ साबक़ा पड़े और फिर वह इनके साथ एहसान का बर्ताव करे तो ये लड़कियाँ उसके लिये जहन्नम के बीच पर्दा (आड़) बनकर रोक हो जायेंगी। (रूहुल-बयान)

ख़ुलासा यह है कि लड़की के पैदा होने को बुरा समझना जाहिलीयत की बुरी रस्म है मुसलमानों को इससे परहेज़ करना चाहिये और इसके मुक़ाबले में जो अल्लाह का वायदा है उस पर संतुष्ट और ख़ुश होना चाहिये। वल्लाहु आलम

وَلَوْ يُؤَاخِذُ اللّٰهُ النَّاسَ بِظُلْمِهِمْ مَّا تَرَكَ عَلَيْهَا مِنْ دَآبَّةٍ وَّلٰكِنْ يُّؤَخِّرُهُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى ۚ فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ ۞ وَيَجْعَلُوْنَ لِلّٰهِ مَا يَكْرَهُوْنَ وَتَصِفُ اَلْسِنَتُهُمُ الْكَذِبَ اَنَّ لَهُمُ الْحُسْنٰى ۗ لَا جَرَمَ اَنَّ لَهُمُ النَّارَ وَاَنَّهُمْ مُّفْرَطُوْنَ ۞ تَاللّٰهِ لَقَدْ اَرْسَلْنَآ اِلٰٓى اُمَمٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ اَعْمَالَهُمْ فَهُوَ وَلِيُّهُمُ الْيَوْمَ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۞ وَمَآ اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ اِلَّا لِتُبَيِّنَ لَهُمُ الَّذِى اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ۙ وَهُدًى وَّرَحْمَةً لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۞ وَاللّٰهُ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا ۗ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّسْمَعُوْنَ ۞

व लौ युआख़िज़ुल्लाहुन्ना-स बिज़ुल्मिहिम् मा त-र-क अ़लैहा मिन् दाब्बतिंव्-व लाकिंय्युअख़्ख़िरुहुम् इला अ-जलिम्-मुसम्मन् फ़-इज़ा जा-अ अ-जलुहुम् ला यस्तअ्ख़िरू-न सा-अ़तंव्-व ला यस्तक़्दिमून (61) व यजअ़लू-न लिल्लाहि मा यक्रहू-न व तसिफ़ु अल्सिनतुहुमुल्-कज़ि-ब अन्-न लहुमुल्-हुस्ना, ला ज-र-म अन्-न लहुमुन्ना-र व अन्नहुम् मुफ़्रतून (62) तल्लाहि ल-क़द् अर्सल्ना इला उ-ममिम् मिन् क़ब्लि-क फ़-ज़य्य-न लहुमुश्शैतानु अअ्मालहुम् फ़हु-व वलिय्युहुमुल्-यौ-म व लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (63) व मा अन्ज़ल्ना अ़लैकल्-किता-ब इल्ला लितुबय्यि-न

और अगर पकड़े अल्लाह लोगों को उनकी बेइन्साफ़ी पर न छोड़े ज़मीन पर एक चलने वाला, लेकिन ढील देता है उनको एक निर्धारित वक़्त तक, फिर जब आ पहुँचेगा उनका वायदा न पीछे सरक सकेंगे एक घड़ी और न आगे सरक सकेंगे। (61) और करते हैं अल्लाह के वास्ते जिसको अपना जी न चाहे, और बयान करती हैं ज़ुबानें उनकी झूठ कि उनके वास्ते ख़ूबी है, ख़ुद साबित है कि उनके वास्ते आग है और वे बढ़ाये जा रहे हैं। (62) क़सम अल्लाह की हमने रसूल भेजे विभिन्न फ़िर्क़ों में तुझसे पहले, फिर अच्छे करके दिखलाये उनको शैतान ने उनके काम, सो वही है उनका साथी आज, और उनके वास्ते दर्दनाक अ़ज़ाब है। (63) और हमने उतारी तुझ पर किताब इसी वास्ते कि खोलकर सुना दे

लहुमुल्लज़िख़्त-लफ़ू फ़ीहि व हुदंव्-व रह्म-तल् लिक़ौमिंय्युअ्मिनून (64) वल्लाहु अन्ज़-ल मिनस्समा-इ मा-अन् फ़-अह्या बिहिल्अर्-ज़ बअ्-द मौतिहा, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल् लिक़ौमिंय्-यस्मअ़ून (65) ✿	तू उनको वह चीज़ कि जिसमें झगड़ रहे हैं, और सीधी राह सुझाने को और वास्ते बख़्शिश ईमान लाने वालों को। (64) और अल्लाह ने उतारा आसमान से पानी फिर उससे ज़िन्दा किया ज़मीन को उसके मरने के बाद, इसमें निशानी है उन लोगों के लिये जो सुनते हैं। (65) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर अल्लाह तआ़ला (ज़ालिम) लोगों पर उनके ज़ुल्म (यानी शिर्क व कुफ़्र) के सबब (फ़ौरी तौर पर दुनिया में पूरी) दारोगीर "यानी पकड़" फ़रमाते तो ज़मीन के ऊपर कोई (हिस व) हरकत करने वाला न छोड़ते (बल्कि सब को हलाक कर देते), लेकिन (फ़ौरी तौर पर पकड़ नहीं फ़रमाते बल्कि) एक मुक़र्ररा वक़्त तक मोहलत दे रहे हैं (ताकि अगर कोई तौबा करना चाहे तो गुंजाईश हो)। फिर जब उनका (वह) मुक़र्ररा वक़्त (नज़दीक) आ पहुँचेगा उस वक़्त एक घड़ी न (उससे) पीछे हट सकेंगे और न आगे बढ़ सकेंगे (बल्कि फ़ौरन सज़ा हो जायेगी)। और अल्लाह तआ़ला के लिये वे चीज़ें तजवीज़ करते हैं जिनको ख़ुद (अपने लिये) नापसन्द करते हैं (जैसा कि ऊपर आया है कि अल्लाह के लिये बेटियाँ होना तजवीज़ करते हैं) और (फिर) उस पर अपनी ज़ुबान से झूठे दावे करते जाते हैं कि उनके (यानी हमारे) लिये (अगर मान लो क़ियामत क़ायम भी हुई तो) हर तरह की भलाई है (अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि भलाई कहाँ से आई थी, बल्कि) लाज़िमी बात है कि उनके लिये (क़ियामत के दिन) दोज़ख़ है, और बेशक वे लोग (दोज़ख़ में) सबसे पहले भेजे जाएँगे।

(ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! आप उनके कुफ़्र व जहालत पर कुछ ग़म न कीजिये क्योंकि) ख़ुदा तआ़ला की क़सम! आप (के ज़माने) से पहले जो उम्मतें हो गुज़री हैं उनके पास भी हमने रसूलों को भेजा था (जैसा कि आपको इनके पास भेजा है) सो (जिस तरह ये लोग अपनी कुफ़्रिया बातें और आमाल को पसन्द करते हैं और उस पर क़ायम हैं, इसी तरह) उनको भी शैतान ने उनके (कुफ़्रिया) आमाल को अच्छे बना करके दिखलाये, पस वह (शैतान) आज (यानी दुनिया में) उनका रफ़ीक़ है (यानी साथी था कि उनको बहकाता सिखाता था, पस दुनिया में तो उनको यह ख़सारा हुआ) और (फिर क़ियामत में) उनके वास्ते दर्दनाक सज़ा (मुक़र्रर) है (ग़र्ज़ कि यह बाद वाले भी उन पहलों की तरह कुफ़्र कर रहे हैं और उन्हीं की तरह इनको सज़ा भी होगी। आप क्यों ग़म में पड़े)।

और हमने आप पर यह किताब (जिसका नाम क़ुरआन है इस वास्ते नाज़िल नहीं की कि

सब को हिदायत पर लाना आपके ज़िम्मे होता कि कुछ के हिदायत पर न आने से आप दुखी व रंजीदा हों, बल्कि) सिर्फ़ इसलिये नाज़िल की है कि (दीन की) जिन बातों में लोग इख़्तिलाफ़ (झगड़ा व मतभेद) कर रहे हैं (जैसे तौहीद व आख़िरत और हलाल व हराम के अहकाम) आप (आम) लोगों पर उसको ज़ाहिर फ़रमा दें (यह फ़ायदा तो क़ुरआन का आम है) और ईमान वालों की (विशेष व ख़ुसूसी) हिदायत और रहमत की ग़र्ज़ से (नाज़िल फ़रमाया है, सो ये बातें अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल से हासिल हैं)। और अल्लाह तआ़ला ने आसमान से पानी बरसाया, फिर उससे ज़मीन को उसके मुर्दा होने के बाद ज़िन्दा किया (यानी उसकी उपज व बढ़ोतरी की क़ुव्वत को इसके बाद कि ख़ुश्क हो जाने से कमज़ोर हो गई थी मज़बूती व ताक़त दी), इस (उक्त मामले) में ऐसे लोगों के लिये (अल्लाह के एक होने और असल नेमतें देने वाला होने की) बड़ी दलील है जो (दिल से इन बातों को) सुनते हैं।

وَاِنَّ لَكُمْ فِى الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً ۗ
نُسْقِيْكُمْ مِّمَّا فِىْ بُطُوْنِهٖ مِنْۢ بَيْنِ فَرْثٍ وَّدَمٍ لَّبَنًا خَالِصًا سَآئِغًا لِّلشّٰرِبِيْنَ ۝

व इन्-न लकुम् फ़िल्-अन्आ़मि लअ़िब्र-तन् नुस्क़ीकुम् मिम्मा फ़ी बुतूनिही मिम्-बैनि फ़र्सिंव्-व दमिल्-ल-बनन् ख़ालिसन् साइग़ल्-लिश्शारिबीन (66)	**और तुम्हारे वास्ते चौपायों में सोचने की जगह है, पिलाते हैं हम तुमको उसके पेट की चीज़ों में से गोबर और ख़ून के बीच में से सुथरा ख़ुशगवार दूध, पीने वालों के लिये। (66)**

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (साथ ही) तुम्हारे लिये मवेशियों में ग़ौर करने का मक़ाम है (देखो) उनके पेट में जो गोबर और ख़ून (का माद्दा) है उसके बीच में से (दूध का माद्दा जो कि ख़ून का एक हिस्सा है, हज़्म के बाद अलग करके थन के मिज़ाज से उनका रंग बदलकर उसको) साफ़ और गले में आसानी से उतरने वाला दूध (बनाकर) हम तुमको पीने को देते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

गोबर और ख़ून के बीच से साफ़ दूध निकालने के बारे में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जानवर जो घास खाता है जब वह उसके मेदे में जमा हो जाती है तो मेदा उसको पकाता है, मेदे के इस अ़मल से ग़िज़ा का फ़ुज़ला (बेकार हिस्सा) नीचे बैठ जाता है, ऊपर दूध हो जाता है, और उसके ऊपर ख़ून। फिर क़ुदरत ने यह काम जिगर के सुपुर्द

किया कि इन तीनों क़िस्मों को अलग-अलग उनके स्थानों में तक़सीम कर देता है, ख़ून को अलग करके रगों में मुन्तक़िल कर देता है, दूध को अलग करके जानवर के थनों में पहुँचा देता है और अब मेदे में सिर्फ़ फ़ुज़ला (मल और विष्ठा) बाक़ी रह जाता है जो गोबर की सूरत में निकलता है।

मसलाः इस आयत से मालूम हुआ कि मज़ेदार, उम्दा और मीठे खाने का इस्तेमाल ज़ुहद (बुज़ुर्गी और दुनिया से ताल्लुक़ तोड़ने) के ख़िलाफ़ नहीं है जबकि उसको हलाल तरीक़े से हासिल किया गया हो और उसमें फ़ुज़ूलख़र्ची न की गई हो। हज़रत हसन बसरी ने ऐसा ही फ़रमाया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मसलाः रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम कोई खाना खाओ तो यह कहोः

اَللّٰهُمَّ بَارِكْ لَنَا فِيْهِ وَاَطْعِمْنَا خَيْرًا مِّنْهُ

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ीहि व अत्इम्ना ख़ैरम् मिन्हु

(यानी या अल्लाह! इसमें हमारे लिये बरकत अ़ता फ़रमा और आईन्दा इससे अच्छा खाना नसीब फ़रमा) और फ़रमाया कि जब दूध पियो तो यह कहोः

اَللّٰهُمَّ بَارِكْ لَنَا فِيْهِ وَزِدْنَا مِنْهُ.

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ीहि व ज़िद्ना मिन्हु

(यानी या अल्लाह! हमारे लिये इसमें बरकत दीजिये और ज़्यादा अ़ता फ़रमाईये।)

इससे बेहतर का सवाल इसलिये नहीं किया कि इनसानी ग़िज़ा में दूध से बेहतर कोई दूसरी ग़िज़ा नहीं है, इसीलिये क़ुदरत ने हर इनसान व हैवान की पहली ग़िज़ा दूध ही बनाई है जो माँ की छातियों से उसे मिलती है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَمِنْ ثَمَرٰتِ النَّخِيْلِ وَالْاَعْنَابِ تَتَّخِذُوْنَ مِنْهُ سَكَرًا وَّ
رِزْقًا حَسَنًا ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ۝

व मिन् स-मरातिन्नख़ीलि वल्अअ्नाबि तत्तख़िज़ू-न मिन्हु स-करंव्-व रिज़्क़न् ह-सनन्, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल्-लिक़ौमिंय्यअ्क़िलून (67)	और मेवों से खजूर के और अंगूर के बनाते हो उससे नशा और रोज़ी ख़ासी, इसमें निशानी है उन लोगों के वास्ते जो समझते हैं। (67)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (साथ ही) खजूर और अंगूरों (की हालत में ग़ौर करना चाहिये कि) के फलों से तुम

लोग नशे की चीज़ और उम्दा खाने की चीज़ें (जैसे छुहारा, किशमिश, शर्बत और सिरका) बनाते हो। बेशक इसमें (भी अल्लाह की तौहीद और उसके नेमतें देने वाला होने की) उन लोगों के लिये बड़ी दलील है जो (सही) अक़्ल रखते हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में हक् तआ़ला की उन नेमतों का ज़िक्र था जो इनसानी गिज़ायें पैदा करने में अ़जीब व ग़रीब कारीगरी व क़ुदरत का प्रतीक हैं। इसमें पहले दूध का ज़िक्र किया जिसको क़ुदरत ने हैवान के पेट में ख़ून और गोबर की गंदगियों से अलग करके साफ़-सुथरी इनसान की गिज़ा के लिये अ़ता कर दी जिसमें इनसान को किसी और हुनर मन्दी और काम करने की ज़रूरत नहीं, इसी लिये यहाँ लफ़्ज़ 'नुस्क़ीकुम' इस्तेमाल फ़रमाया कि हमने पिलाया तुमको दूध।

इसके बाद फ़रमाया कि खजूर और अंगूर के कुछ फलों में से भी इनसान अपनी गिज़ा और नफ़े की चीज़ें बनाता है। इसमें इशारा इस तरफ़ है कि खजूर और अंगूर के फलों से अपनी गिज़ा और फ़ायदे की चीज़ें बनाने में इनसानी हुनर व कारीगरी का भी कुछ दख़ल है और उसी दख़ल के नतीजे में दो तरह की चीज़ें बनाई गईं— एक नशा लाने वाली चीज़ जिसको ख़म्र या शराब कहा जाता है, दूसरी उम्दा रिज़्क़ कि खजूर और अंगूर को तरोताज़ा खाने में इस्तेमाल करें या ख़ुश्क करके भण्डार कर लें। मक़सद यह है कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल क़ुदरत से खजूर और अंगूर के फल इनसान को दे दिये, और इससे अपनी गिज़ा वग़ैरह बनाने का इख़्तियार भी दे दिया, अब यह उसका चयन है कि उससे क्या बनाये, नशे वाली चीज़ बनाकर अ़क्ल को ख़राब करे या गिज़ा बनाकर क़ुव्वत हासिल करे।

इस तफ़सीर के मुताबिक़ इस आयत से नशा लाने वाली चीज़ यानी शराब के हलाल होने पर कोई दलील नहीं हो सकती, क्योंकि यहाँ मक़सद क़ुदरत की दी हुई चीज़ें और उनके इस्तेमाल की विभिन्न सूरतों का बयान है, जो हर हाल में अल्लाह की नेमत है, जैसे तमाम गिज़ायें और इनसानी फ़ायदे की चीज़ें कि उनको बहुत से लोग नाजायज़ तरीक़ों पर भी इस्तेमाल करते हैं मगर किसी के ग़लत इस्तेमाल से असल नेमत तो नेमत होने से नहीं निकल जाती, इसलिये यहाँ यह तफ़सील बतलाने की ज़रूरत नहीं कि उनमें कौनसा इस्तेमाल हलाल है कौनसा हराम, लेकिन एक बारीक इशारा इसमें भी इस तरफ़ कर दिया गया कि "सकर" के मुक़ाबिल "रिज़्क़े हसन" रखा, जिससे मालूम हुआ कि "सकर" अच्छा रिज़्क़ नहीं है, "सकर" के मायने मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक नशा लाने वाली चीज़ के हैं। (1)

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी, क़ुर्तुबी, जस्सास)

उम्मत की इत्तिफ़ाक़ी राय यह है कि ये आयतें मक्की हैं और शराब की हुर्मत (हराम होने का हुक्म) इसके बाद मदीना तय्यिबा में नाज़िल हुई, आयत के नाज़िल होने के वक़्त अगरचे

(1) कुछ उलेमा ने इसके मायने सिरका या बग़ैर नशे वाली नबीज़ के भी लिये हैं (तफ़सीरे जस्सास व क़ुर्तुबी) मगर इस जगह इस इख़्तिलाफ़ (मतभेद) के नक़ल करने की ज़रूरत नहीं। मुहम्मद शफ़ी

शराब हलाल थी और मुसलमान आ़म तौर पर पीते थे, मगर उस वक़्त भी इस आयत में इशारा इस तरफ़ कर दिया गया कि इसका पीना अच्छा नहीं, बाद में खुलकर शराब को सख़्ती के साथ हराम करने के लिये क़ुरआनी अहकाम नाज़िल हो गये (यह मज़मून तफ़सील से तफ़सीरे जस्सास और तफ़सीरे क़ुर्तुबी में बयान किया गया है)।

وَاَوْحٰى رَبُّكَ اِلَى النَّحْلِ اَنِ اتَّخِذِىْ مِنَ الْجِبَالِ بُيُوْتًا وَّمِنَ الشَّجَرِ وَمِمَّا يَعْرِشُوْنَ ۝ ثُمَّ كُلِىْ مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ فَاسْلُكِىْ سُبُلَ رَبِّكِ ذُلُلًا ۚ يَخْرُجُ مِنْۢ بُطُوْنِهَا شَرَابٌ مُّخْتَلِفٌ اَلْوَانُهٗ فِيْهِ شِفَآءٌ لِّلنَّاسِ ۗ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝

व औहा रब्बु-क इलन्नहिल अनित्तख़िज़ी मिनल्-जिबालि बुयूतंव्-व मिनश्श-जरि व मिम्मा यअ़्रिशून (68) सुम्-म कुली मिन् कुल्लिस्स-मराति फ़स्लुकी सुबु-ल रब्बिकि ज़ुलुलन्, यख़्रुजु मिम्-बुतूनिहा शराबुम्-मुख़्तलिफ़ुन् अल्वानुहू फ़ीहि शिफ़ाउल्-लिन्नासि, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआ-यतल् लिक़ौमिंय्-तफ़क्करून (69)	और हुक्म दिया तेरे रब ने शहद की मक्खी को कि बनाये पहाड़ों में घर और दरख़्तों में और जहाँ टटियाँ बाँधते हैं। (68) फिर खा हर तरह के मेवों से, फिर चल रास्तों में अपने रब के साफ़ पड़े हैं, निकलती है उनके पेट में से पीने की चीज़ जिसके मुख़्तलिफ़ रंग हैं उसमें रोग अच्छे होते हैं लोगों के, इसमें निशानी है उन लोगों के लिये जो ध्यान करते हैं। (69)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (यह बात भी ग़ौर करने के क़ाबिल है कि) आपके रब ने शहद की मक्खी के दिल में यह बात डाली की तू पहाड़ों में घर (यानी छत्ता) बना ले और दरख़्तों में (भी) और जो लोग इमारतें बनाते हैं उनमें (भी छत्ता लगा ले, चुनाँचे इन सब जगहों पर वह छत्ता लगाती है)। फिर हर क़िस्म के (विभिन्न और अनेक) फूलों से (जो तुझको पसन्द हों) चूसती फिर, फिर (चूसकर छत्ते की तरफ़ वापस आने के लिये) अपने रब के रास्तों में चल जो (तेरे लिये चलने के और याद रहने के एतिबार से) आसान हैं (चुनाँचे बड़ी-बड़ी दूर से बिना रास्ता भूले हुए अपने छत्ते में लौट आती है। फिर जब चूसकर अपने छत्ते की तरफ़ लौटती है तो) उसके पेट में से पीने की एक चीज़ निकलती है (यानी शहद) जिसकी रंगतें विभिन्न होती हैं, कि उसमें लोगों (की बहुत -सी बीमारियों) के लिये शिफ़ा है, इसमें (भी) उन लोगों के लिये (अल्लाह के एक होने और उसी

के नेमतें देने वाला होने की) बड़ी दलील है जो सोचते हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

औहा। वही यहाँ अपने इस्तिलाही मायने में नहीं, बल्कि लुग़वी मायने में है। वह यह कि कलाम करने वाला मुख़ातब को कोई ख़ास बात छुपे तौर पर और धीरे से इस तरह समझा दे कि दूसरा शख़्स उस बात को न समझ सके।

अन्नह्लः शहद की मक्खी अपनी अक़्ल व होशियारी और उम्दा तदबीर के लिहाज़ से तमाम जानवरों में नुमायाँ और अलग जानवर है, इसी लिये अल्लाह तआ़ला ने उसको ख़िताब भी विशेष और अलग अन्दाज़ का किया है। बाक़ी हैवानों के बारे में तो कुल्ली क़ानून के तरीक़े परः

اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى

(हमारा रब वह है जिसने) "हर चीज़ को वह बनावट (शक्ल व सूरत और हालत) अ़ता की जो उसके मुनासिब थी, फिर (उसकी) रहनुमाई भी फ़रमाई।" फ़रमाया लेकिन इस नन्ही-सी मख़्लूक़ के बारे में ख़ास करकेः

اَوْحٰى رَبُّكَ

फ़रमाया, जिससे इशारा इस बात की तरफ़ कर दिया कि यह दूसरे हैवानों से अ़क्ल व शऊर और सूझ-बूझ के मामले में एक अलग और नुमायाँ हैसियत रखती है।

शहद की मक्खियों की समझ व शऊर का अन्दाज़ा उनकी व्यवस्था और निज़ामे हुकूमत से बख़ूबी होता है। इस कमज़ोर जानवर का ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा इनसानी सियासत व हुक्मरानी के उसूल पर चलता है, तमाम व्यवस्था एक बड़ी मक्खी के हाथ में होती है, जो तमाम मक्खियों की हाकिम होती है। उसके प्रबंधन और कामों की तक़सीम की वजह से पूरा निज़ाम सही सालिम चलता रहता है। उसके अ़जीब व ग़रीब सिस्टम और स्थिर क़ानून व नियमों को देखकर इनसानी अ़क्ल दंग रह जाती है। ख़ुद यह "मलिका" तीन हफ़्तों के समय में छह हज़ार से बारह हज़ार तक अण्डे देती है, यह अपने वजूद, रंग-ढंग और ज़ाहिरी रख-रखाव के लिहाज़ से दूसरी मक्खियों से अलग और नुमायाँ होती है। यह मलिका (रानी) कामों के बंटवारे के उसूल पर अपनी रियाया (प्रजा) को विभिन्न कामों पर लगाती है, उनमें से कुछ दरबानी के फ़राईज़ अन्जाम देती हैं और किसी नामालूम और बाहरी फ़र्द को अन्दर दाख़िल होने नहीं देतीं, कुछ अण्डों की हिफ़ाज़त करती हैं, कुछ नाबालिग़ बच्चों का पालन-पोषण करती हैं, कुछ छत्ते के निमार्ण और इन्जीनियरिंग के फ़राईज़ अदा करती हैं, उनके तैयार किये हुए अक्सर छत्तों के ख़ाने बीस हज़ार से तीस हज़ार तक होते हैं, कुछ मोम जमा करके निमार्ण का कार्य करने वालों के पास पहुँचाती रहती हैं जिससे वे अपने मकानात तामीर करते हैं। यह मोम पेड़-पौधों पर जमे हुए सफ़ेद क़िस्म के सफ़ूफ़ (पावडर) से हासिल करती हैं। गन्ने पर यह मादा बहुत नज़र आता

है। उनमें से कुछ विभिन्न प्रकार के फूलों और फलों पर बैठकर उसको चूसती हैं जो उनके पेट में शहद में तब्दील हो जाता है, यह शहद उनकी और उनके बच्चों की गिज़ा है और यही हम सब के लिये भी लज़्ज़त व गिज़ा का जौहर (सत) और दवा व शिफ़ा का नुस्ख़ा है, यह विभिन्न और अनेक टुकड़ियाँ निहायत सक्रियता से अपने-अपने फ़राईज़ (ड्यूटियाँ) अच्छी तरह अन्जाम देती हैं और अपनी "मलिका" (रानी) के हुक्म को दिल व जान से क़ुबूल करती हैं। उनमें से अगर कोई गन्दगी पर बैठ जाये तो छत्ते के दरबान उसको बाहर रोक लेते हैं और रानी उसको क़त्ल कर देती है, उनके इस हैरत-अंगेज़ सिस्टम और काम की उम्दगी को देखकर इनसान हैरत में पड़ जाता है। (अज़ जवाहिर)

बुयूतन्ः रब्बे करीम की तरफ़ से जो हिदायतें दी गई हैं उनमें से यह पहली हिदायत है जिसमें घर बनाने का ज़िक्र है। यहाँ यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि हर जानवर अपने रहने सहने के लिये घर तो बनाता ही है फिर इस विशेषता से "घरों" के निमार्ण का हुक्म मक्खियों को देने में क्या ख़ास बात है। फिर यहाँ लफ़्ज़ भी "बुयूत" का इस्तेमाल फ़रमाया जो उमूमन इनसानी रहने की जगहों के लिये बोला जाता है। इसमें एक इशारा तो इस तरफ़ कर दिया कि मक्खियों को चूँकि शहद तैयार करना है, उसके लिये पहले से एक सुरक्षित घर बना लें, दूसरा इस तरफ़ इशारा कर दिया कि जो घर ये बनायेंगीं वो आ़म जानवरों के घरों की तरह नहीं होंगे, बल्कि उनकी साख़्त व बनावट असाधारण क़िस्म की होगी, चुनाँचे उनके घर आ़म जानवरों के घरों से अलग और नुमायाँ होते हैं, जिनको देखकर इनसानी अ़क्ल भी हैरान रह जाती है। उनके घर छह ख़ानों वाले होते हैं, परकार और मिस्तर से भी अगर उनकी पैमाईश की जाये तो बाल बराबर भी फ़र्क़ नहीं रहता। छह ख़ानों वाली शक्ल के अ़लावा वो दूसरी किसी शक्ल जैसे चार ख़ानों और पाँच ख़ानों वग़ैरह की शक्ल को इसलिये नहीं अपनातीं कि उनके कुछ कोने बेकार रह जाते हैं।

अल्लाह तआ़ला ने मक्खियों को केवल घर बनाने का हुक्म नहीं दिया बल्कि उसका स्थान भी बतला दिया कि वह किसी बुलन्दी पर होना चाहिये, क्योंकि ऐसे मक़ामात पर शहद को ताज़ा और साफ़ छनी हुई हवा पहुँचती रहती है, वह गंदी हवा से बचा रहता है, और तोड़-फोड़ से भी सुरक्षित रहता है। चुनाँचे फ़रमायाः

مِنَ الْجِبَالِ بُيُوْتًا وَّمِنَ الشَّجَرِ وَمِمَّا يَعْرِشُوْنَ○

यानी उन घरों की तामीर पहाड़ों, दरख़्तों और बुलन्द इमारतों पर होनी चाहिये ताकि शहद बिल्कुल सुरक्षित तरीक़े से तैयार हो सके।

ثُمَّ كُلِىْ مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ

यह दूसरी हिदायत है जिसमें मक्खी को हुक्म दिया जा रहा है कि अपनी रुचि और पसन्द के मुताबिक़ फल-फूल से रस चूसे, यहाँ 'मिन् कुल्लिस्स-मराति' फ़रमाया, लेकिन बज़ाहिर यहाँ लफ़्ज़ 'कुल' से दुनिया भर के फल-फूल मुराद नहीं हैं बल्कि जिन तक आसानी से उसकी पहुँच

हो सके और मतलब हासिल हो सके। "कुल" का यह लफ़्ज़ मुल्क सबा की रानी के वाक़िए में भी आया है, जैसा कि फ़रमायाः

وَاُوْتِيَتْ مِنْ كُلِّ شَىْءٍ

और ज़ाहिर है कि वहाँ भी हर चीज़ मुराद नहीं है कि सबा की रानी के पास हवाई जहाज़ और रेल मोटर होना भी लाज़िम आये, बल्कि उस वक़्त की तमाम ज़रूरी और मुनासिब चीज़ें मुराद हैं। यहाँ भी "मिन् कुल्लिस्स-मराति" से यही मुराद है। यह मक्खी ऐसे-ऐसे लतीफ़ और क़ीमती हिस्से चूसती है कि आज के वैज्ञानिक दौर में मशीनों से भी वह जौहर नहीं निकाला जा सकता।

فَاسْلُكِىْ سُبُلَ رَبِّكِ ذُلُلًا

यह मक्खी को तीसरी हिदायत दी जा रही है कि अपने रब के हमवार किये हुए रास्तों पर चल पड़। यह जब घर से दूर-दराज़ मक़ामात पर फल-फूल का रस चूसने के लिये कहीं जाती है तो बज़ाहिर इसका अपने घर में वापस आना मुश्किल होना चाहिये था लेकिन अल्लाह तआ़ला ने इसके लिये राहों को आसान बना दिया है, चुनाँचे वह मीलों दूर जाती है और बग़ैर भूले-भटके अपने घर वापस पहुँच जाती है, अल्लाह तआ़ला ने फ़िज़ा में उसके लिये रास्ते बना दिये हैं क्योंकि ज़मीन के पैचदार रास्तों में भटकने का ख़तरा होता है, अल्लाह तआ़ला ने फ़िज़ा को उस हक़ीर व नातवाँ मक्खी के लिये ताबेदार कर दिया ताकि वह किसी रोक-टोक के बग़ैर अपने घर आसानी से आ-जा सके।

इसके बाद वही के इस हुक्म का जो असली फल और नतीजा था उसको बयान फ़रमायाः

يَخْرُجُ مِنْ م بُطُوْنِهَا شَرَابٌ مُّخْتَلِفٌ اَلْوَانُهٗ فِيْهِ شِفَآءٌ لِّلنَّاسِ.

"कि उसके पेट में से विभिन्न रंग का मशरूब (पय पदार्थ) निकलता है, जिसमें तुम्हारे लिये शिफ़ा है।"

रंग का भिन्न होना और विविधता ग़िज़ा और मौसम की भिन्नता की बिना पर होता है, यही वजह है कि अगर किसी ख़ास इलाक़े में किसी ख़ास फल-फूल की अधिकता हो तो उस इलाक़े के शहद में उसका असर व ज़ायक़ा ज़रूर होता है, शहद उमूमन चूँकि बहने वाले माद्दे की शक्ल में होता है इसलिये उसको शराब (पीने की चीज़) फ़रमाया। इस जुमले में भी अल्लाह तआ़ला की वह्दानियत (एक और तन्हा माबूद होने) और कामिल क़ुदरत की न कटने वाली दलील मौजूद है कि एक छोटे से जानवर के पेट से कैसा लाभदायक और मज़ेदार मशरूब (पीने की चीज़) निकलता है, हालाँकि वह जानवर ख़ुद ज़हरीला है, ज़हर में से यह तिरयाक़ वाक़ई अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत की अ़जीब मिसाल है, फिर क़ुदरत की यह भी अ़जीब कारीगरी है कि दूध देने वाले हैवानों का दूध मौसम और ग़िज़ा के इख़्तिलाफ़ (भिन्नता) से सुर्ख़ व ज़र्द (लाल और पीला) नहीं होता और मक्खी का शहद विभिन्न रंगों का होता है।

فِيْهِ شِفَآءٌ لِّلنَّاسِ

शहद जहाँ क़ुव्वत देने वाला, ग़िज़ा व लज़्ज़त और खाने का ज़रिया है वहाँ रोगों के लिये नुस्ख़ा-ए-शिफ़ा भी है, और क्यों न हो ख़ालिके कायनात की यह लतीफ़ घूमती-फिरती मशीन जो हर क़िस्म के फल-फूल से ताक़त देने वाला अ़र्क़ और पाकीज़ा जौहर (सत) खींच करके अपने महफ़ूज़ घरों में ज़ख़ीरा करती है, अगर जड़ी-बूटियों में शिफ़ा व दवा का सामान है तो उनके जौहर में क्यों न होगा, बलग़मी रोगों में डायरेक्ट और दूसरे रोगों में दूसरे अजज़ा के साथ मिलकर बतौर दवा शहद का इस्तेमाल होता है। माजूनों में ख़ास तौर पर इसको शामिल करते हैं, इसकी एक ख़ासियत यह भी है कि ख़ुद भी ख़राब नहीं होता और दूसरी चीज़ों की भी लम्बे समय तक हिफ़ाज़त करता है। यही वजह है कि हज़ारों साल से तबीब व हकीम हज़रात इसको अल्कोहल की जगह इस्तेमाल करते आये हैं, शहद दस्त लाने वाला है और पेट से फ़ासिद व ख़राब माद्दा निकालने में बहुत मुफ़ीद है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास एक सहाबी ने अपने भाई की बीमारी का हाल बयान किया तो आपने उसको शहद पिलाने का मश्चिरा दिया, दूसरे दिन फिर आकर बतलाया कि यह बीमारी बदस्तूर है, आपने फिर वही मश्चिरा दिया, तीसरे दिन जब उसने कहा कि अब भी कोई फ़र्क़ नहीं है तो आपने फ़रमायाः

صَدَقَ اللّٰهُ وَكَذَبَ بَطْنُ اَخِيْكَ

"यानी अल्लाह का क़ौल बेशक सच्चा है और तेरे भाई का पेट झूठा है।"

मुराद यह है कि दवा का क़सूर नहीं मरीज़ के ख़ास मिज़ाज की वजह से जल्दी असर ज़ाहिर नहीं हुआ, उसके बाद फिर पिलाया तो बीमार तन्दुरुस्त हो गया।

यहाँ क़ुरआने करीम में लफ़्ज़ 'शिफ़ाउन" जिस अन्दाज़ से आया है अ़रबी भाषा के ग्रामर के मुताबिक़ इसका हर मर्ज़ के लिये तो शिफ़ा होना मालूम नहीं होता लेकिन इस बात का इशारा ज़रूर मिलता है कि शहद की शिफ़ा अ़ज़ीम और विशेष क़िस्म की है, और अल्लाह तआ़ला के कुछ अहले दिल बन्दे वे भी हैं जिनको शहद के किसी भी मर्ज़ के लिये शिफ़ा होने में कोई शुब्हा नहीं, उनको अपने रब के क़ौल के इस ज़ाहिर ही पर इस क़द्र मज़बूत यक़ीन और पक्का एतिक़ाद है कि वे फोड़े और आँख का इलाज भी शहद से करते हैं और जिस्म के दूसरे रोगों का भी। हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मुताल्लिक़ रिवायतों में है कि उनके बदन पर अगर फोड़ा भी निकल आता तो उस पर शहद का लेप करके इलाज करते, कुछ लोगों ने उनसे इसकी वजह पूछी तो जवाब में फ़रमाया कि क्या अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआने करीम में इसके बारे में यह नहीं फ़रमाया किः

فِيْهِ شِفَآءٌ لِّلنَّاسِ. (قرطبى)

अल्लाह तआ़ला अपने बन्दों के साथ वैसा ही मामला करते हैं जैसा उन बन्दों का अपने रब के मुताल्लिक़ एतिक़ाद होता है। हदीस-ए-क़ुदसी में फ़रमायाः

اَنَا عِنْدَ ظَنِّ عَبْدِىْ بِىْ

यानी हक़ तआ़ला ने फ़रमाया कि बन्दा जो कुछ मुझसे गुमान रखता है मैं उसके पास होता

हूँ (यानी उसी के मुताबिक़ कर देता हूँ)।

اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیَةً لِّقَوْمٍ یَّتَفَكَّرُوْنَ○

अल्लाह तआला ने अपनी कामिल क़ुदरत की उक्त मिसालें बयान फ़रमाने के बाद इनसान को फिर ग़ौर व फ़िक्र की दावत दी है कि क़ुदरत की इन मिसालों में ग़ौर व फ़िक्र करके तो देख लो, अल्लाह तआला मुर्दा ज़मीन को पानी बरसाकर ज़िन्दा कर देता है, वह गन्दगी व नापाकी के दरमियान तुम्हारे लिये साफ़ व सुथरी और ख़ुशगवार दूध की नालियाँ बहाता है, वह अंगूर के दरख़्तों पर मीठे फल पैदा करता है, जिनसे तुम मज़ेदार शरबतें और मज़ेदार मुरब्बे बनाते हो। वह एक छोटे से ज़हरीले जानदार के ज़रिये तुम्हारे लिये लज़्ज़त व खाने और ग़िज़ा व शिफ़ा का बेहतरीन सामान मुहैया करता है, क्या अब भी तुम देवी-देवताओं को पुकारोगे? क्या अब भी तुम्हारी इबादत व वफ़ा अपने ख़ालिक़ व मालिक के बजाय पत्थर और लकड़ी की बेजान मूर्तियों के लिये होगी? और ख़ूब समझ लो! क्या यह भी तुम्हारी अक़्ल में आ सकता है कि यह सब कुछ अंधे, बहरे और बेशऊर माद्दे की करिश्मा साज़ी हो? कारीगरी व कमाल के ये बेशुमार नमूने, हिक्मत व तदबीर के ये हैरतअंगेज़ कारनामे और अक़्ल व समझ के ये बेहतरीन फ़ैसले अपनी ज़ुबाने हाल से पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि हमारा एक ख़ालिक़ है, बेमिसाल व हिक्मत वाला ख़ालिक़, वही इबादत व वफ़ा का हक़दार है, वही मुश्किलों को दूर करने वाला है और शुक्र व तारीफ़ का पात्र वही है।

फ़ायदे

1. आयत से मालूम हुआ कि अक़्ल व शऊर इनसानों के अलावा दूसरे जानदारों में भी है, जैसा कि क़ुरआन पाक में फ़रमाया है:

وَاِنْ مِّنْ شَیْءٍ اِلَّا یُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ

अलबत्ता अक़्ल के दर्जे अलग-अलग हैं, इनसानों की अक़्ल तमाम जानदार चीज़ों की अक़्लों से ज़्यादा कामिल है, इसी वजह से वह शरीअ़त के अहकाम का पाबन्द है। यही वजह है कि अगर जुनून (पागलपन) की वजह से इनसान की अक़्ल में फ़तूर आ जाये तो दूसरी मख़्लूक़ात की तरह वह भी शरई अहकाम का पाबन्द नहीं रहता।

2. शहद की मक्खी की एक ख़ुसूसियत यह भी है कि उसकी फ़ज़ीलत में हदीस बयान हुई है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

اَلذُّبَابُ كُلُّهَا فِی النَّارِ يَجْعَلُهَا عَذَابًا لِّاَهْلِ النَّارِ اِلَّا النَّحْلَ. (نوادر الاصول بحواله قرطبی)

"यानी दूसरे तकलीफ़ देने वाले जानदारों की तरह मक्खियों की भी तमाम क़िस्में जहन्नम में जायेंगी जो वहाँ जहन्नमियों पर मुसल्लत कर दी जायेंगी मगर शहद की मक्खी जहन्नम में नहीं जायेगी।" (नवादिरुल-उसूल, क़ुर्तुबी के हवाले से)

साथ ही यह कि एक दूसरी हदीस में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको मारने से

मना फ़रमाया है। (अबू दाऊद)

3. हकीमों और तबीबों का इसमें कलाम है कि शहद मक्खी का फ़ुज़ला (मल और विष्ठा) है या उसका लुआ़ब (मुखस्राव) है। अरस्ता तालीस ने शीशे का एक उम्दा छत्ता बनाकर मक्खियों को उसमें बन्द कर दिया था, वह उनके काम करने के तरीक़े को जानना चाहता था लेकिन उन मक्खियों ने सबसे पहले बर्तन के अन्दरूनी हिस्से पर मोम और कीचड़ का पर्दा चढ़ा दिया और जब तक पूरी तरह वो पर्दे में नहीं हो गईं उस वक़्त तक अपना काम शुरू नहीं किया।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने दुनिया के बेहक़ीक़त व ज़लील होने की मिसाल देते हुए फ़रमायाः

اَشْرَفُ لِبَاسِ بَنِیْ اٰدَمَ فِیْهِ لُعَابُ دُوْدَةٍ وَّاَشْرَفُ شَرَابِهٖ رَجِیْعُ نَحْلَةٍ.

"इनसान का बेहतरीन रेशमी लिबास इस कायनात के एक छोटे से कीड़े का लुआ़ब है और उसका नफ़ीस मज़ेदार मशरूब (पीने की चीज़) मक्खी का फ़ुज़ला (मल व विष्ठा) है।"

4. 'फ़ीहि शिफ़ाउल्-लिन्नासि' से यह भी मालूम हुआ कि दवा से रोग का इलाज करना जायज़ है इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने इसे इनाम के तौर पर ज़िक्र किया है।

दूसरी जगह इरशाद हैः

وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَآءٌ وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِیْنَ○

हदीस में दवा इस्तेमाल करने और इलाज करने की तरफ़ रुचि दिलाई है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कुछ हज़रात ने सवाल किया कि क्या हम दवा इस्तेमाल करें? आपने फ़रमाया क्यों नहीं! इलाज कर लिया करो, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने जो भी मर्ज़ पैदा किया है उसके लिये दवा भी पैदा फ़रमाई है, मगर एक मर्ज़ का इलाज नहीं। उन्होंने सवाल किया कि वह मर्ज़ कौनसा है? आपने फ़रमाया बुढ़ापा। (अबू दाऊद व तिर्मिज़ी, क़ुर्तुबी के हवाले से)

हज़रत ख़ुज़ैमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी एक रिवायत है, वह फ़रमाते हैं कि एक दफ़ा मैंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा कि यह जो हम झाड़-फूँक का अ़मल करते हैं या दवा से अपना इलाज करते हैं, इसी तरह बचाव और हिफ़ाज़त के जो इन्तिज़ामात करते हैं क्या ये अल्लाह तआ़ला की तक़दीर को बदल सकते हैं? आपने फ़रमाया ये भी तो अल्लाह की तक़दीर ही की सूरतें हैं।

ग़र्ज़ यह कि इलाज करने और दवा इस्तेमाल करने के जायज़ होने पर तमाम उलेमा एकमत हैं और इस सिलसिले में बेशुमार हदीसें व अक़वाल बयान हुए हैं। हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की औलाद में अगर किसी को बिच्छू काट लेता था तो उसे तिरयाक़ पिलाते थे, और झाड़ फूँक से उसका इलाज फ़रमाते। आपने लक़वे के रोगी पर दाग़ लगाकर उसका इलाज किया।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

कुछ बुज़ुर्गों के बारे में नक़ल किया गया है कि वे इलाज को पसन्द नहीं करते थे और हज़राते सहाबा में से भी कुछ के अ़मल से यह ज़ाहिर होता है जैसे रिवायत है कि हज़रत इब्ने

मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु बीमार हो गये, हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु उनकी इयादत (बीमारी का हाल पूछने) के लिये तशरीफ़ लाये और उनसे पूछा– आपको क्या शिकायत है? उन्होंने जवाब दिया कि मुझे अपने गुनाहों की फ़िक्र है। हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया फिर किस चीज़ की इच्छा है? फ़रमाया मैं अपने रब की रहमत का तलबगार हूँ। हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि आप पसन्द करें तो मैं तबीब (इलाज करने वाले) को बुलवा लेता हूँ? उन्होंने जवाब दिया तबीब ही ने तो मुझे लिटाया है (यहाँ इशारे के तौर पर तबीब से मुराद अल्लाह तआ़ला शानुहू हैं)।

लेकिन इस क़िस्म के वाक़िआ़त इस बात की दलील नहीं कि ये हज़रात इलाज को मक्रूह (बुरा और नापसन्दीदा) समझते थे, हो सकता है कि उस वक़्त उनके ज़ौक़ को गवारा नहीं था इसलिये तबीयत के क़ुबूल न करने की वजह से उन्होंने पसन्द न किया हो, यह वक़्ती तौर पर हालत के ग़लबे की एक कैफ़ियत होती है जिसको इलाज के नाजायज़ या मक्रूह होने की दलील नहीं बनाया जा सकता। हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु का हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से दरख़्वास्त करना कि मैं आपके लिये तबीब ले आता हूँ खुद इस बात की दलील है कि इलाज जायज़ है, बल्कि कुछ सूरतों में यह वाजिब भी हो जाता है।

وَاللّٰهُ خَلَقَكُمْ ثُمَّ يَتَوَفّٰىكُمْ ۙ
وَمِنْكُمْ مَّنْ يُّرَدُّ اِلٰٓى اَرْذَلِ الْعُمُرِ لِكَيْ لَا يَعْلَمَ بَعْدَ عِلْمٍ شَيْـًٔا ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌ قَدِيْرٌ ۝ ع 9 15

वल्लाहु ख़ा-ल-क़कुम् सुम्-म य-तवफ़्फ़ाकुम् व मिन्कुम् मंय्युरद्दु इला अर्ज़लिल्-अ़ुमुरि लिकै ला यअ़्ल-म बअ़्-द अ़िल्मिन् शैअन्, इन्नल्ला-ह अ़लीमुन् क़दीर (70) ✿	और अल्लाह ने तुमको पैदा किया फिर तुमको मौत देता है, और कोई तुम में से पहुँच जाता है निकम्मी उम्र को ताकि समझने के बाद अब कुछ न समझे, अल्लाह ख़बरदार है, क़ुदरत वाला। (70) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (अपनी हालत भी सोचने के क़ाबिल है कि) अल्लाह तआ़ला ने तुमको (पहले) पैदा किया, फिर (उम्र ख़त्म होने पर) तुम्हारी जान निकालता है (जिनमें कुछ तो होश व हवास में चलते हाथ-पाँव उठ जाते हैं) और बाज़े तुम में वे हैं जो नाकारा उम्र तक पहुँचाए जाते हैं (जिनमें न जिस्मानी क़ुव्वत रहे न अ़क़्ली क़ुव्वत रहे), जिसका यह असर होता है कि एक चीज़ से बाख़बर होकर फिर बेख़बर हो जाता है (जैसा कि अक्सर ऐसे बूढ़ों को देखा जाता है कि अभी उनको एक बात बतलाई और अभी भूल गये और फिर उसको पूछ रहे हैं) बेशक अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले, बड़ी क़ुदरत वाले हैं (इल्म से हर एक मस्लेहत जानते हैं, और क़ुदरत से

वैसा ही कर देते हैं, इसलिये ज़िन्दगी व वफ़ात की हालतें अलग-अलग कर दीं, पस यह भी दलील है तौहीद की)।

मआरिफ़ व मसाईल

इससे पहले अल्लाह तआ़ला ने पानी, पेड़-पौधों, चौपायों और शहद की मक्खी के विभिन्न अहवाल बयान फ़रमाकर इनसान को अपनी कामिल क़ुदरत और मख़्लूक़ के लिये अपने इनामों पर आगाह किया, अब इन आयतों से उसको अपने अन्दरूनी हालतों पर ग़ौर व फ़िक्र की दावत देते हैं कि इनसान कुछ न था अल्लाह तआ़ला ने इसको वजूद की दौलत से नवाज़ा, फिर जब चाहा मौत भेजकर वह नेमत ख़त्म कर दी, और बाज़ों को तो मौत से पहले ही बुढ़ापे के ऐसे दर्जे में पहुँचा देते हैं कि उनके होश व हवास ठिकाने नहीं रहते, उनके हाथ-पाँव की ताक़त ख़त्म हो जाती है, न वे कोई बात समझ सकते हैं और न समझी हुई बात याद रख सकते हैं। यह उमूमी और व्यक्तिगत बदलाव और उलट-फेर इस बात पर दलालत करता है कि इल्म व क़ुदरत उसी ज़ात के ख़ज़ाने में है जो ख़ालिक़ व मालिक है।

وَمِنْكُمْ مَنْ يُرَدُّ.

मंय्युरद्दु के लफ़्ज़ से इशारा इस बात की तरफ़ है कि इनसान पर पहले भी एक कमज़ोरी का वक़्त गुज़र चुका है, यह उसके बचपन का शुरूआती दौर था जिसमें यह किसी सूझ-बूझ का मालिक न था, इसकी क़ुव्वतें बिल्कुल कमज़ोर व नातवाँ थीं, यह अपनी भूख-प्यास को दूर करने और अपने उठने-बैठने में ग़ैरों का मोहताज था। फिर अल्लाह तआ़ला ने इसको जवानी अ़ता की यह इसकी तरक़्क़ी का ज़माना है, फिर धीरे-धीरे इसको बुढ़ापे के ऐसे दर्जे में पहुँचा देते हैं जिसमें यह बिल्कुल उसी तरह कमज़ोरी और मोहताजी की तरफ़ लौटा दिया जाता है जैसा कि बचपन में था।

اَرْذَلِ الْعُمُرِ

(उम्र के निकम्मे हिस्से) इससे मुराद बुढ़ापे की वह उम्र है जिसमें इनसान की तमाम जिस्मानी और दिमाग़ी क़ुव्वतों में ख़लल और बेतरतीबी आ जाती है, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस उम्र से पनाह माँगते थे। इरशाद है:

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِكَ مِنْ سُوْٓءِ الْعُمُرِ وَفِیْ رِوَایَةٍ مِّنْ اَنْ اُرَدَّ اِلٰٓی اَرْذَلِ الْعُمُرِ.

"यानी या अल्लाह! मैं आपकी पनाह माँगता हूँ बुरी उम्र से, और एक रिवायत में है कि पनाह माँगता हूँ उम्र के निकम्मे दौर से।"

उम्र के घटिया और निकम्मे हिस्से की परिभाषा में कोई निर्धारण नहीं है, अलबत्ता उक्त परिभाषा ज़्यादा बेहतर मालूम होती है जिसकी तरफ़ क़ुरआन ने भी:

لِكَيْلَا يَعْلَمَ بَعْدَ عِلْمٍ شَيْئًا

से इशारा किया है, कि वह ऐसी उम्र है जिसमें होश व हवास बाक़ी नहीं रहते, जिसका नतीजा यह होता है कि वह अपनी तमाम मालूमात भूल जाता है।

'निकम्मी उम्र' की परिभाषा में और भी क़ौल हैं, कुछ हज़रात ने अस्सी साल की उम्र को उम्र का निकम्मा हिस्सा क़रार दिया है, और कुछ ने नब्बे साल को। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी पछत्तर साल का क़ौल मन्क़ूल है। (बुख़ारी व मुस्लिम, तफ़सीरे मज़हरी)

لِكَيْلَا يَعْلَمَ بَعْدَ عِلْمٍ شَيْئًا

उम्र के ज़्यादा होने की आख़िरी हद को पहुँचने के बाद आदमी में न जिस्मानी ताक़त रहती है और न ही अ़क़्ली, जिसका असर यह होता है कि एक चीज़ से बाख़बर होकर फिर बेख़बर हो जाता है, वह तमाम मालूमात भूलकर बिल्कुल कल के बच्चे की तरह हो जाता है, जिसको न इल्म व ख़बर है और न ही समझ व शऊर। हज़रत इक्रिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि क़ुरआन पढ़ने वाले की यह हालत नहीं होगी।

إِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ قَدِيرٌ ○

बेशक अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले, बड़ी क़ुदरत वाले हैं। (इल्म से हर शख़्स की उम्र को जानते हैं और क़ुदरत से जो चाहते हैं करते हैं। अगर चाहें तो ताक़तवर नौजवान पर बुढ़ापे के आसार तारी कर देते हैं और चाहें तो सौ साल का उम्र रसीदा इनसान भी ताक़तवर जवान रहे, यह सब कुछ उसी ज़ात के हाथ और इख़्तियार में है जिसका कोई शरीक नहीं)।

وَاللَّهُ فَضَّلَ بَعْضَكُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ فِي الرِّزْقِ ۚ فَمَا الَّذِينَ فُضِّلُوا بِرَادِّي رِزْقِهِمْ عَلَىٰ مَا مَلَكَتْ أَيْمَانُهُمْ فَهُمْ فِيهِ سَوَاءٌ ۚ أَفَبِنِعْمَةِ اللَّهِ يَجْحَدُونَ ○

वल्लाहु फ़ज़्ज़-ल बअ़्ज़कुम् अ़ला बअ़्ज़िन् फ़िर्रिज़्क़ि फ़-मल्लज़ी-न फ़ुज़्ज़िलू बिराद्दी रिज़्क़िहिम् अ़ला मा म-लकत् ऐमानुहुम् फ़हुम् फ़ीहि सवाउन्, अ-फ़बिनिअ़्-मतिल्लाहि यज्हदून (71)	और अल्लाह ने बड़ाई दी तुम में एक को एक पर रोज़ी में, सो जिनको बड़ाई दी वे नहीं पहुँचा देते अपनी रोज़ी उनको जिनके मालिक उनके हाथ हैं, कि वे सब उसमें बराबर हो जायें। क्या अल्लाह की नेमत के इनकारी हैं? (71)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (तौहीद के साबित करने के साथ शिर्क की बुराई एक आपसी मामले के तहत में सुनो कि) अल्लाह तआ़ला ने तुम में बाज़ों को बाज़ों पर रिज़्क़ (के मामले) में फ़ज़ीलत दी है (जैसे किसी को मालदार और ग़ुलामों का मालिक बनाया कि उनके हाथ से उन ग़ुलामों को भी रिज़्क़

पहुँचता है, और किसी को ग़ुलाम बना दिया कि उसको मालिक ही के हाथ से रिज़्क़ पहुँचता है, और किसी को न ऐसा मालदार बनाया कि दूसरे ग़ुलामों को दे न ग़ुलाम बनाया कि उसको किसी मालिक के हाथ से पहुँचे)। सो जिन लोगों को (रिज़्क़ में ख़ास) फ़ज़ीलत दी गई है (कि उनके पास माल भी है और ग़ुलाम भी हैं) ये (लोग) अपने हिस्से का माल अपने ग़ुलामों को इस तरह कभी देने वाले नहीं कि वे (मालिक व मम्लूक) सब उसमें बराबर हो जाएँ (क्योंकि अगर ग़ुलाम होने की हालत में दिया तो माल उनकी मिल्क ही न होगा, बल्कि बदस्तूर यही मालिक रहेंगे, और अगर आज़ाद करके दिया तो बराबरी मुम्किन है मगर वे ग़ुलाम न रहेंगे। पस ग़ुलामी और बराबरी मुम्किन नहीं। इसी तरह ये बुत वग़ैरह जब मुश्रिक लोगों के इक़रार के अनुसार ख़ुदा तआ़ला के मम्लूक "बन्दे व ग़ुलाम" हैं तो बावजूद मम्लूक होने के माबूद होने में ख़ुदा के जैसे और बराबर कैसे हो जायेंगे? इसमें शिर्क की बुराई को बिल्कुल स्पष्ट अन्दाज़ में बयान करना है कि जब तुम्हारे ग़ुलाम तुम्हारी रोज़ी व माल में शरीक नहीं हो सकते तो अल्लाह तआ़ला के ग़ुलाम उसकी ख़ुदाई व इबादत में कैसे शरीक हो सकते हैं) क्या (ये मज़ामीन सुनकर) फिर भी (ख़ुदा तआ़ला के साथ शिर्क करते हैं? जिससे अ़क़्ली तौर पर यह लाज़िम आता है कि) ख़ुदा तआ़ला की नेमत का (यानी इस बात का कि ख़ुदा ने नेमत दी है) इनकार करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इससे पहली आयतों में हक़ तआ़ला ने अपने इल्म व क़ुदरत की अहम निशानियों और इनसान पर होने वाली नेमतों का तज़किरा फ़रमाकर अपनी तौहीद (एक तन्हा माबूद होने) की फ़ितरी दलीलें बयान फ़रमाई हैं, जिनको देखकर मामूली समझ-बूझ वाला आदमी भी किसी मख़्लूक़ को हक़ तआ़ला के साथ उसकी इल्म व क़ुदरत वग़ैरह की सिफ़ात में शरीक नहीं मान सकता। इस आयत में इसी तौहीद के मज़मून को एक आपसी मामले की मिसाल से वाज़ेह किया गया है कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल हिक्मत से इनसानी मस्लेहतों को देखते हुए रिज़्क़ में सब इनसानों को बराबर नहीं किया, बल्कि कुछ को कुछ पर फ़ज़ीलत (बरतरी) दी है और विभिन्न दर्जे क़ायम फ़रमाये। किसी को ऐसा मालदार बना दिया जो साज़ व सामान का मालिक है, नौकर-चाकर, ग़ुलाम व ख़िदमतगार रखता है, वह ख़ुद भी अपनी मंशा के मुताबिक़ ख़र्च करता है और ग़ुलामों, ख़िदमतगारों को भी उसके हाथ से रिज़्क़ पहुँचता है, और किसी को ग़ुलाम व ख़िदमतगार बना दिया कि वे दूसरों पर तो क्या ख़र्च करते उनका ख़र्च भी दूसरों के ज़रिये पहुँचता है, और किसी को दरमियानी हालत वाला बनाया, न इतना मालदार कि दूसरों पर ख़र्च करे न इतना फ़क़ीर व मोहताज कि अपनी ज़रूरतों में भी दूसरों का मोहताज हो।

इसी क़ुदरती तक़सीम का यह असर सब के सामने है कि जिसको रिज़्क़ में फ़ज़ीलत दी गई और मालदार बनाया गया वह कभी इसको गवारा नहीं करता कि अपने माल को अपने ग़ुलामों और ख़ादिमों में इस तरह तक़सीम कर दे कि ये भी माल में उसके बराबर हो जायें।

इस मिसाल से समझो कि जब मुश्रिक लोग भी यह तस्लीम करते हैं कि ये बुत और दूसरी मख़्लूक़ात जिनकी वे पूजा करते हैं सब अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ व मम्लूक हैं, तो यह कैसे तजवीज़ करते हैं कि ये मख़्लूक व मम्लूक अपने ख़ालिक़ व मालिक के बराबर हो जायें? क्या ये लोग ये सब निशानियाँ देखकर और ये मज़ामीन सुनकर फिर भी ख़ुदा तआ़ला के साथ किसी को शरीक और बराबर क़रार देते हैं, जिसका लाज़िमी नतीजा यह है कि वे ख़ुदा तआ़ला की नेमतों का इनकार करते हैं, क्योंकि अगर यह इक़रार होता कि ये सब नेमतें सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की दी हुई हैं, इनमें किसी ख़ुद बनाये और तैयार किये हुए बुत का या किसी इनसान और जिन्न का कोई दख़ल नहीं है तो फिर इन चीज़ों को अल्लाह तआ़ला के बराबर कैसे क़रार देते? यही मज़मून सूरः रूम की इस आयत में भी इरशाद हुआ है:

ضَرَبَ لَكُمْ مَّثَلًا مِّنْ اَنْفُسِكُمْ هَلْ لَّكُمْ مِّنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ شُرَكَآءَ فِيْ مَا رَزَقْنٰكُمْ فَاَنْتُمْ فِيْهِ سَوَآءٌ.

"तुम्हारे लिये तुम ही में से एक मिसाल दी है जो लोग तुम्हारे हाथ के नीचे (यानी तुम्हारे मातहत) हैं, क्या वे हमारे दिये हुए रिज़्क़ में तुम्हारे शरीक हैं कि तुम उसमें बराबर हो गये हो।"

(सूरः रूम आयत 28)

इसका हासिल भी यही है कि तुम अपने मम्लूक (मिल्कियत वाले) ग़ुलामों और ख़िदमतगारों को अपने बराबर करना पसन्द नहीं करते, तो अल्लाह के लिये यह कैसे पसन्द करते हो कि वह और उसकी मख़्लूक़ व मम्लूक (मिल्कियत वाली) चीज़ें उसके बराबर हो जायें।

रोज़ी व रोज़गार में दर्जों की भिन्नता इनसानों के लिये रहमत है

इस आयत में स्पष्ट तौर पर यह भी बतलाया गया है कि ग़रीबी व अमीरी और रोज़ी कमाने में इनसानों के विभिन्न दर्जे होना, कि कोई ग़रीब है कोई अमीर कोई दरमियानी दर्जे का यह कोई इत्तिफ़ाक़िया घटना नहीं, हक़ तआ़ला की कामिल हिक्मत (आला दर्जे की दानिशमन्दी) का तक़ाज़ा है और इनसानी मस्लेहतों का तक़ाज़ा और इनसानों के लिये रहमत है, अगर यह सूरत न रहे और माल व सामान में सब इनसान बराबर हो जायें तो दुनिया के सिस्टम में ख़लल और ख़राबी पैदा हो जायेगी, इसी लिये जब से दुनिया आबाद हुई किसी दौर और किसी ज़माने में सब इनसान माल व मता के एतिबार से बराबर नहीं हुए और न हो सकते हैं, अगर कहीं ज़बरदस्ती ऐसी बराबरी पैदा कर भी दी जाये तो चन्द ही दिन में तमाम इनसानी कारोबार में ख़लल और फ़साद ज़ाहिर हो जायेगा। हक़ तआ़ला ने जैसे तमाम इनसानों को अ़क़्ल व दिमाग़, क़ुव्वत व ताक़त और काम करने की सलाहियत में मुख़्तलिफ़ मिज़ाजों पर तक़सीम किया है और उनमें अदना, आला, दरमियानी की क़िस्में हैं जिसका कोई अ़क़्ल वाला इनकार नहीं कर सकता, इसी तरह यह भी लाज़िमी है कि माल व मता में भी ये मुख़्तलिफ़ दर्जे क़ायम हों कि हर शख़्स

अपनी-अपनी सलाहियत के एतिबार से उसका सिला पाये, और अगर सलाहियत वाले और ना-अहल (यानी काबिल व नाक़ाबिल) को बराबर कर दिया गया तो वह कौनसा जज़्बा है जो उसे मेहनत व काशिश और फ़िक्र व अ़मल पर मजबूर करे, इसका लाज़िमी नतीजा काम करने की सलाहियत (कार्यक्षमता) को बरबाद करना होगा।

दौलत को कुछ हाथों में समेटने और इकट्ठा करेन के ख़िलाफ़ क़ुरआनी अहकाम

अलबत्ता कायनात के पैदा करने वाले ने जहाँ अ़क़्ली और जिस्मानी ताक़तों में कुछ लोगों को कुछ पर फ़ज़ीलत दी और उसके ताबे रिज़्क़ और माल में फ़र्क़ क़ायम फ़रमाया, वहीं रोज़ी कमाने का यह स्थिर निज़ाम भी क़ायम फ़रमाया कि ऐसा न होने पाये कि दौलत के ख़ज़ानों और रोज़ी कमाने के मर्कज़ों पर चन्द अफ़राद या कोई ख़ास जमाअ़त क़ब्ज़ा कर ले, दूसरे क़ाबिल व सलाहियत वालों के काम करने का मैदान ही बाक़ी न रहे, कि वे अपनी अ़क़्ली और जिस्मानी सलाहियतों से काम लेकर रोज़गार में तरक़्क़ी कर सकें, इसके लिये क़ुरआने करीम ने सूरः हश्र में इरशाद फ़रमायाः

كَيْ لَا يَكُوْنَ دُوْلَةً ۢ بَيْنَ الْاَغْنِيَآءِ مِنْكُمْ

"यानी हमने दौलत की तक़सीम (बंटवारे) का क़ानून इसलिये बनाया कि दौलत सिर्फ़ सरमायेदारों (पूँजीपतियों) में सीमित होकर न रह जाये।"

आजकल दुनिया के आर्थिक सिस्टमों में जो अफ़रा-तफ़री फैली हुई है वह इस ख़ुदाई क़ानूने हिक्मत को नज़र-अन्दाज़ करने ही का नतीजा है। एक तरफ़ सरमायेदारी का निज़ाम है जिसमें दौलत के मर्कज़ों पर सूद व जुए के रास्ते से चन्द अफ़राद या जमाअ़तें क़ाबिज़ होकर बाक़ी सारी मख़्लूक़ को अपना आर्थिक ग़ुलाम बनाने पर मजबूर कर देती हैं, उनके लिये सिवाय ग़ुलामी और मज़दूरी के कोई रास्ता अपनी ज़रूरतें हासिल करने के लिये नहीं रह जाता। वे अपनी आला सलाहियतों के बावजूद उद्योग व तिजारत के मैदान में क़दम नहीं रख सकते।

पूँजीपतियों के इस ज़ुल्म व ज़्यादती के रद्दे-अ़मल (प्रतिक्रिया) के तौर पर एक विपरीत व्यवस्था कम्यूनिज़्म या सोशलिज़्म के नाम से वजूद में आती है, जिसका नारा अमीर व ग़रीब के फ़र्क़ को ख़त्म करना और सब में बराबरी पैदा करना है, ज़ालिमाना सरमायेदारी के अत्याचारों से तंग आये हुए अ़वाम इस नारे के पीछे लग जाते हैं, मगर चन्द ही दिन में वे देख लेते हैं कि यह नारा महज़ फ़रेब था, आर्थिक बराबरी का ख़्वाब कभी शर्मिन्दा-ए-ताबीर न हुआ, और ग़रीब अपनी ग़ुर्बत और फ़क़्र व फ़ाक़े के साथ भी जो एक इनसानी इज़्ज़त रखता था, अपनी मर्ज़ी का मालिक था, यह मानवीय सम्मान भी हाथ से जाता रहा, कम्यूनिज़्म सिस्टम में इनसान की कोई क़द्र व क़ीमत मशीन के एक पुर्ज़े से ज़्यादा नहीं, किसी जायदाद की मिल्कियत की तो वहाँ

कल्पना ही नहीं हो सकती, और जो मामला वहाँ एक मज़दूर के साथ किया जाता है उस पर ग़ौर करें तो वह किसी चीज़ का मालिक नहीं, उसकी औलाद और बीवी भी उसकी नहीं, बल्कि सब हुकूमत की मशीन के कलपुर्ज़े हैं जिनको मशीन स्टार्ट होते ही अपने काम पर लग जाने के सिवा कोई चारा नहीं। हुकूमत व रियासत के तय किये उद्देश्यों के सिवा न उसका कोई ज़मीर (अन्तरात्मा) है न आवाज़, हुकूमत व रियासत के दबाव व सख़्ती और नाक़ाबिले बरदाश्त मेहनत से कराहना एक बग़ावत शुमार होता है, जिसकी सज़ा मौत है। ख़ुदा तआ़ला और धर्म की मुख़ालफ़त और ख़ालिस माद्दा परस्ती कम्यूनिज़्म सिस्टम का बुनियादी उसूल है।

ये वो तथ्य हैं जिनसे कोई कम्यूनिस्ट इनकार नहीं कर सकता। उनके पेशवाओं (लीडरों और विचारकों) की किताबें और आमाल नामे इसके गवाह हैं कि उनके हवालों को जमा करना भी एक मुस्तक़िल किताब बनाने के बराबर है।

क़ुरआने हकीम ने ज़ालिमाना सरमायेदारी और अहमक़ाना कम्यूनिज़्म की दोनों हदों के बीच कमी-ज़्यादती से पाक एक ऐसा निज़ाम (सिस्टम) बनाया है कि रिज़्क़ और दौलत में प्राकृतिक फ़र्क़ और भेद के बावजूद कोई फ़र्द या जमाअ़त आ़म मख़्लूक़ को अपना ग़ुलाम न बना सके, और बनावटी महंगाई और सूखे व महामारी में मुब्तला न कर सके। सूद और जुए को हराम क़रार देकर नाजायज़ सरमायेदारी की बुनियादी गिरा दी, फिर हर मुसलमान के माल में ग़रीबों का हक़ मुतैयन करके शरीक कर दिया, जो ग़रीबों पर एहसान नहीं बल्कि फ़र्ज़ की अदायेगी है, क़ुरआन की आयतः

فِيْٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُوْمٌ لِّلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُوْمِ.

इस पर सुबूत व गवाह है। फिर मरने के बाद मरने वाले की तमाम मिल्कियत को ख़ानदान के अफ़राद में तक़सीम करके दौलत को जमा करने और रोक कर रखने का ख़ात्मा कर दिया। क़ुदरती चश्मों, समन्दरों और पहाड़ी जंगलों की अपने आप होने वाली पैदावार को अल्लाह की तमाम मख़्लूक़ का साझा सरमाया क़रार दे दिया, जिस पर किसी फ़र्द या जमाअ़त का मालिक बनकर क़ब्ज़ा जायज़ नहीं, जबकि सरमायेदारी के निज़ाम में ये सब चीज़ें सिर्फ़ सरमायेदारों की मिल्कियत क़रार दी गई हैं।

चूँकि इल्मी और अ़मली सलाहियतों का एक दूसरे से अलग और भिन्न होना एक फ़ितरी चीज़ है, और रोज़ी व माल कमाना भी इन्हीं सलाहियतों के ताबे है, इसलिये माल व दौलत की मिल्कियत का कम ज़्यादा होना भी ऐन तक़ाज़ा-ए-हिक्मत है, जिसको दुनिया का कुछ भी अ़क़्ल व शऊर है वह इसका इनकार नहीं कर सकता और बराबरी का नारा लगाने वाले भी चन्द क़दम चलने के बाद इस बराबरी के दावे को छोड़ने और आर्थिक हालत में भेद व फ़र्क़ और कमी-ज़्यादती पैदा करने पर मजबूर हो गये।

ख़ुर्द शैफ़ ने 5 मई सन् 1960 ई. को सुप्रीम स्वीट के सामने तक़रीर करते हुए कहाः

"हम उजरतों में फ़र्क़ मिटाने की तहरीक (आंदोलन) के सख़्ती से मुख़ालिफ़ हैं, हम उजरतों

में बराबरी क़ायम करने और उनके एक स्तर पर लाने के खुलेबन्दों मुख़ालिफ़ हैं, यह लेनन की तालीम है, उसकी तालीम यह थी कि सोशलिस्ट समाज में माद्दी तक़ाज़ों का पूरा लिहाज़ रखा जायेगा।" (स्वीट वर्ल्ड, पेज 346)

आर्थिक बराबरी के सपने की नाबराबरी वाली यह ताबीर तो शुरू ही से सामने आ गई थी, मगर देखते ही देखते यह नाबराबरी और अमीर व ग़रीब का फ़र्क़ कम्यूनिस्ट हुकूमत रूस में आम सरमायेदार मुल्कों से भी आगे बढ़ गया है।

ल्योन शेडो लिखता है:

"शायद ही कोई विकसित सरमायेदार मुल्क ऐसा हो जहाँ मज़दूरों की उजरतों में इतना फ़र्क़ और भेद हो जितना रूस में है।"

वाक़िआत की इन चन्द मिसालों ने उक्त आयतः

وَاللّٰهُ فَضَّلَ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ فِى الرِّزْقِ.

की लाज़िमी और क़ुदरती तस्दीक़ इनकारियों की ज़ुबानों से करा दी। बेशक अल्लाह तआ़ला जो चाहता है वह करता है।

यहाँ इस आयत के तहत तो सिर्फ़ इतना ही बयान करना था कि रिज़्क़ व माल में फ़र्क़ और कमी-बेशी क़ुदरती, प्राकृतिक और इनसानी मस्लेहतों के पूरी तरह मुताबिक़ है, बाक़ी दौलत की तक़सीम (बंटवारे) के इस्लामी उसूल और सरमायेदारी और कम्यूनिज़्म दोनों से इसका अलग और नुमायाँ होना, तो यह इन्शा-अल्लाह तआ़ला सूरः ज़ुख़रुफ़ पारा नम्बर 25 आयत 32 के तहत में आयेगा, और इस विषय पर मेरा का एक मुस्तक़िल रिसाला "इस्लाम का निज़ामे तक़सीमे दौलत" के नाम से छप चुका है उसका पढ़ लेना भी काफ़ी है।

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ

اَزْوَاجًا وَّجَعَلَ لَكُمْ مِّنْ اَزْوَاجِكُمْ بَنِيْنَ وَحَفَدَةً وَّرَزَقَكُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ ؕ اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُوْنَ وَبِنِعْمَتِ اللّٰهِ هُمْ يَكْفُرُوْنَ ۝ وَيَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَهُمْ رِزْقًا مِّنَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ شَيْئًا وَّلَا يَسْتَطِيْعُوْنَ ۝ فَلَا تَضْرِبُوْا لِلّٰهِ الْاَمْثَالَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ۝ ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا عَبْدًا مَّمْلُوْكًا لَّا يَقْدِرُ عَلٰى شَيْءٍ وَّمَنْ رَّزَقْنٰهُ مِنَّا رِزْقًا حَسَنًا فَهُوَ يُنْفِقُ مِنْهُ سِرًّا وَّجَهْرًا ؕ هَلْ يَسْتَوٗنَ ؕ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ ؕ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا رَّجُلَيْنِ اَحَدُهُمَآ اَبْكَمُ لَا يَقْدِرُ عَلٰى شَيْءٍ وَّهُوَ كَلٌّ عَلٰى مَوْلٰىهُ ۙ اَيْنَمَا يُوَجِّهْهُّ لَا يَاْتِ بِخَيْرٍ ؕ هَلْ يَسْتَوِيْ هُوَ ۙ وَمَنْ يَّاْمُرُ بِالْعَدْلِ ۙ وَهُوَ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝

वल्लाहु ज-अ-ल लकुम् मिन् अन्फ़ुसिकुम् अज़्वाजंव्-व ज-अ़-ल लकुम् मिन् अज़्वाजिकुम् बनी-न व ह-फ़-दतंव्-व र-ज़-क़कुम् मिनत्तय्यिबाति, अ-फ़बिल्बातिलि युअ्मिनू-न व बिनिअ़्-मतिल्लाहि हुम् यक्फ़ुरून (72) व यअ़्बुदू-न मिन् दूनिल्लाहि मा ला यम्लिकु रिज़्क़म्-मिनस्समावाति वल्अर्ज़ि शैअंव्-व ला यस्ततीअ़ून (73) फ़ला तज़्रिबू लिल्लाहिल्-अम्सा-ल, इन्नल्ला-ह यअ़्लमु व अन्तुम् ला तअ़्लमून (74) ज़-रबल्लाहु म-सलन् अ़ब्दम्-मम्लूकल्-ला यक़्दिरु अ़ला शैइंव्-व मर्रज़क़्नाहु मिन्ना रिज़्क़न् ह-सनन् फ़हु-व युन्फ़िक़ु मिन्हु सिर्रंव्-व जह्रन्, हल् यस्तवू-न, अल्हम्दु लिल्लाहि, बल् अक्सरुहुम् ला यअ़्लमून (75) व ज़-रबल्लाहु म-सलर्रजुलैनि अ-हदुहुमा अब्कमु ला यक़्दिरु अ़ला शैइंव्-व हु-व कल्लुन् अ़ला मौलाहु ऐनमा युवज्जिह्हु ला यअ्ति बिख़ैरिन्, हल् यस्तवी हु-व व मंय्यअ्मुरु बिल्-अ़द्लि व हु-व अ़ला सिरातिम्-मुस्तक़ीम (76) ✿

और अल्लाह ने पैदा कीं तुम्हारे वास्ते तुम्हारी ही किस्म से औरतें और दिये तुमको तुम्हारी औरतों से बेटे और पोते और खाने को दीं तुमको सुथरी चीजें, सो क्या झूठी बातें मानते हैं और अल्लाह के फ़ज़्ल को नहीं मानते। (72) और पूजते हैं अल्लाह के सिवाय ऐसों को जो मुख़्तार नहीं उनकी रोज़ी के आसमान और ज़मीन से कुछ भी, और न क़ुदरत रखते हैं। (73) सो मत फिट करो अल्लाह पर मिसलें, बेशक अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते। (74) अल्लाह ने बतलाई एक मिसाल एक बन्दा पराया माल नहीं क़ुदरत रखता किसी चीज़ पर, और एक जिसको हमने रोज़ी दी अपनी तरफ़ से ख़ासी रोज़ी, सो वह ख़र्च करता है उसमें से छुपाकर और सब के सामने, कहीं बराबर होते हैं? सब तारीफ़ अल्लाह को है, पर बहुत लोग नहीं जानते। (75) और बताई अल्लाह ने एक दूसरी मिसाल- दो मर्द हैं एक गूँगा कुछ काम नहीं कर सकता, और वह भारी है अपने साहिब पर, जिस तरफ़ उसको भेजे न करके लाये कुछ भलाई, कहीं बराबर है वह और एक वह शख़्स जो हुक्म करता है इन्साफ़ से और है सीधी राह पर। (76) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (अल्लाह की क़ुदरत की दलीलों और नेमतों में से एक बड़ी नेमत और दलील ख़ुद तुम्हारा वजूद और नस्ली व ज़ाती बक़ा है कि) अल्लाह तआ़ला ने तुम ही में से (यानी तुम्हारी जिन्स और नस्ल से) तुम्हारे लिये बीवियाँ बनाईं, और (फिर) तुम्हारी बीवियों से तुम्हारे बेटे और पोते पैदा किये (कि यह नस्ल की बक़ा है) और तुमको अच्छी-अच्छी चीज़ें खाने (पीने) को दीं (कि यह शख़्सी और ज़ाती बक़ा है, और चूँकि बक़ा "बाक़ी रहना" मौक़ूफ़ है वजूद पर तो इसमें उसकी तरफ़ भी इशारा हो गया), क्या (ये सब दलीलें व नेमतें सुनकर) फिर भी बेबुनियाद चीज़ पर (यानी बुतों वग़ैरह पर जिनके माबूद होने की कोई दलील नहीं, बल्कि ख़िलाफ़े दलील है) ईमान रखेंगे और अल्लाह तआ़ला की नेमत की नाशुक्री (बेक़द्री) करते रहेंगे। और (मतलब इस नाशुक्री का यह है कि) अल्लाह को छोड़कर ऐसी चीज़ों की इबादत करते रहेंगे जो उनको न आसमान में से रिज़्क़ पहुँचाने का इख़्तियार रखती हैं और न ज़मीन में से (यानी न बारिश बरसाने का उनको इख़्तियार है न ज़मीन से कुछ पैदा करने का) और न (इख़्तियार हासिल करने की) क़ुदरत रखते हैं (इसकी नफ़ी से और ज़्यादा मुबालग़ा हो गया, क्योंकि बाज़ दफ़ा देखा जाता है कि एक शख़्स मौजूदा हालत में तो इख़्तियार वाला नहीं है लेकिन जिद्दोजहद से वह इख़्तियारात हासिल कर लेता है, इसलिये इसकी भी नफ़ी फ़रमा दी)। सो (जब शिर्क का बातिल होना साबित हो गया तो) तुम अल्लाह तआ़ला के लिये मिसालें मत गढ़ो (कि अल्लाह तआ़ला की मिसाल दुनिया के बादशाहों के जैसी है कि हर शख़्स उनसे अपनी ज़रूरत व हाजत पेश नहीं कर सकता, इसलिये उसके नायब होते हैं कि अ़वाम उनसे अपनी हाजत बताते हैं, फिर वे बादशाहों से अ़र्ज़ करते हैं। जैसा कि यही वज़ाहत 'तफ़सीर-ए-कबीर' में काफ़िरों के इस क़ौल की बुनियाद पर की गयी है कि हम तो उनको सिर्फ़ इसलिये पूजते हैं ताकि वे हमें अल्लाह के यहाँ ख़ास और क़रीबी बना दें और उसके दरबार में हमारी सिफ़ारिश करें) अल्लाह तआ़ला (ख़ूब) जानते हैं (कि ऐसी मिसालें बिल्कुल बेकार और बकवास हैं) और तुम (सोच-विचार न करने के सबब) नहीं जानते (इसलिये जो चाहते हो बक डालते हो)।

(और) अल्लाह तआ़ला (शिर्क के बातिल होने को ज़ाहिर करने के लिये) एक मिसाल बयान फ़रमाते हैं कि (फ़र्ज़ करो) एक (तो) ग़ुलाम है (किसी का) जो दूसरे की मिल्क में है कि (माल और अपनी मर्ज़ी चलाने में से) किसी चीज़ का (आक़ा की इजाज़त के बग़ैर) इख़्तियार नहीं रखता। और (दूसरा) एक शख़्स है जिसको हमने अपने पास से ख़ूब रोज़ी दी है, तो वह उसमें से छुपे और खुले तौर पर (जिस तरह चाहता है जहाँ चाहता है) ख़र्च करता है (उसको कोई रोकने टोकने वाला नहीं) क्या इस क़िस्म के शख़्स आपस में बराबर हो सकते हैं? (बस जब ग़ैर-असली मालिक व मम्लूक बराबर नहीं हो सकते, तो असली और वास्तविक मालिक व मम्लूक तो कब बराबर हो सकते हैं, और इबादत का हक़दार होना मौक़ूफ़ है बराबरी पर, और वह है नहीं) सारी तारीफ़ें अल्लाह तआ़ला ही के लिये लायक़ हैं (क्योंकि ज़ात व सिफ़ात में

कामिल वही है, पस माबूद भी वही हो सकता है मगर फिर भी मुश्रिक लोग ग़ैरुल्लाह की इबादत नहीं छोड़ते), बल्कि उनमें से अक्सर तो (सोच-समझ से काम न लेने की वजह से) जानते ही नहीं (और चूँकि इल्म व जानकारी न होने का सबब ख़ुद उनका सोच-समझ और ग़ौर व फ़िक्र से काम न लेना है इसलिये माज़ूर न होंगे)।

और अल्लाह तआ़ला (इसकी वज़ाहत के लिये) एक और मिसाल बयान फ़रमाते हैं कि (फ़र्ज़ करो) दो शख़्स हैं जिनमें एक तो (ग़ुलाम होने के साथ-साथ) गूँगा (बहरा भी) है, (और अंधा, बहरा और बेअ़क़्ल होने की वजह से) कोई काम नहीं कर सकता और (इस वजह से) वह अपने मालिक पर एक वबाले जान है (कि वह मालिक ही उसके सारे काम करता है और) वह (मालिक) उसको जहाँ भेजता है कोई काम दुरुस्त करके नहीं लाता (ख़ुद तो क्या करता दूसरों की तालीम से भी उससे कोई काम दुरुस्त नहीं होता, सो) क्या यह शख़्स और ऐसा शख़्स आपस में बराबर हो सकते हैं जो अच्छी बातों की तालीम करता हो (जिससे उसका बोलने वाला, अ़क़्ल मन्द, इल्म रखने वाला होना मालूम होता है) और ख़ुद भी (हर मामले में) एक सही तरीक़े पर (चलता) हो (जिससे उसकी इन्तिज़ामी और अ़मली क़ुव्वत मालूम होती है। जब मख़्लूक़ में हक़ीक़त व सिफ़ात के साझा होने के बावजूद यह फ़र्क़ व भेद है तो कहाँ मख़्लूक़ व ख़ालिक़। और 'ला यक़्दिरु' के तर्जुमे में 'आक़ा की इजाज़त के बग़ैर' की क़ैद लगाने से जो पहले बयान हुई आयतों में फ़िक़्ही शुब्हात थे वे दूर हो गये। और कोई इस ख़्याल और ज़ेहनी दुविधा में न पड़े कि शायद अल्लाह के अ़लावा जो माबूद है उसको भी इजाज़त हो गयी हो, जवाब यह है कि रब होने के लिये किसी को इजाज़त नहीं हुई और न हो सकती है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

جَعَلَ لَكُمْ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا.

(अल्लाह ने पैदा कीं तुम्हारे लिये तुम्हारी जिन्स से बीवियाँ) इस आयत में एक अहम नेमत का ज़िक्र फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी ही जिन्स और क़ौम में तुम्हारी बीवियाँ बनाईं, ताकि आपसी ताल्लुक़ व लगाव भी पूरा हो और इनसानी नस्ल की शराफ़त व बड़ाई भी क़ायम रहे।

दूसरा इशारा इस तरफ़ भी हो सकता है कि तुम्हारी बीवियाँ तुम्हारी ही जिन्स की हैं, उनकी ज़रूरतें और जज़्बात भी तुम्हारे ही जैसे हैं, उनकी रियायत तुम पर लाज़िम है।

وَجَعَلَ لَكُمْ مِّنْ اَزْوَاجِكُمْ بَنِيْنَ وَحَفَدَةً

"यानी तुम्हारी बीवियों से हमने तुम्हारे बेटे पोते पैदा किये।"

यहाँ यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि औलाद तो माँ-बाप दोनों ही से मिलकर पैदा होती है, इस आयत में इसको सिर्फ़ माँओं से पैदा करने का ज़िक्र फ़रमाया है। इसमें इशारा है कि बच्चे की पैदाईश और बनावट में बाप की तुलना में माँ का दख़ल ज़्यादा है, बाप से तो

सिर्फ़ एक बेजान क़तरा निकलता है, उस क़तरे पर विभिन्न प्रकार के दौर गुज़रते हुए इनसानी शक्ल में तब्दील होना और उसमें जान पड़ना क़ुदरत के इन सारे तख़्लीक़ी कारनामों का स्थान तो माँ का पेट ही है, इसी लिये हदीस में माँ के हक़ को बाप के हक़ पर आगे रखा गया है।

इस जुमले में बेटों के साथ पोतों का ज़िक्र फ़रमाने में इस तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि इस जोड़े बनाने का असल मक़सद इनसानी नस्ल को बाक़ी रखना है कि औलाद फिर औलाद की औलाद होती रहे, तो यह इनसान की नस्ली बक़ा का सामान हुआ।

फिर 'र-ज़-क़कुम् मिनत्तय्यिबाति' में इसकी व्यक्तिगत और ज़ाती बक़ा के सामान का ज़िक्र फ़रमा दिया, कि इनसान पैदा हो जाये तो फिर उसकी ज़ात की बक़ा के लिये ग़िज़ा की ज़रूरत है वह भी हक़ तआ़ला ने मुहैया फ़रमा दी। आयत में लफ़्ज़ 'ह-फ़-दतन्' के असल मायने मददगार और ख़िदमतगार के हैं, औलाद के लिये यह लफ़्ज़ इस्तेमाल करने में इस तरफ़ इशारा है कि औलाद को अपने माँ-बाप का ख़ादिम होना चाहिये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

فَلَا تَضْرِبُوْا لِلّٰهِ الْاَمْثَالَ.

में एक अहम हक़ीक़त को स्पष्ट फ़रमाया है, जिससे ग़फ़लत बरतना ही तमाम काफ़िराना शुकूक व शुब्हात को जन्म देता है। वह यह है कि आ़म तौर पर लोग हक़ तआ़ला को अपनी इनसानी नस्ल पर क़ियास करके उनमें से उच्च स्तरीय इनसान जैसे बादशाह व हाकिम को अल्लाह तआ़ला की मिसाल क़रार देते हैं, और फिर इस ग़लत बुनियाद पर अल्लाह तआ़ला के क़ुदरती निज़ाम को भी इनसानी बादशाहों के निज़ाम (सिस्टम) पर क़ियास (अन्दाज़ा और तुलना) करके यह कहने लगते हैं कि जिस तरह किसी सल्तनत व हुकूमत में अकेला बादशाह सारे मुल्क का इन्तिज़ाम नहीं कर सकता, बल्कि अपने मातहत वज़ीरों और दूसरे अफ़सरों को अधिकार सुपुर्द करके उनके ज़रिये हुकूमत का निज़ाम चलाया जाता है, इसी तरह यह भी होना चाहिये कि ख़ुदा तआ़ला के मातहत कुछ और माबूद भी हों जो अल्लाह तआ़ला के कारनामों में उसका हाथ बटायें, यही तमाम बुत परस्त और मुश्रिकों का आ़म नज़रिया है। इस जुमले ने उनके शुब्हात (शंकाओं और एतिराज़ों) की जड़ काट दी कि अल्लाह तआ़ला के लिये मख़्लूक़ की मिसालें पेश करना ख़ुद बेअ़क़्ली है, उसकी ज़ात मिसाल व नज़ीर और हमारे वहम व गुमान से ऊँची व बरतर है।

आख़िरी दो आयतों में इनसान की जो दो मिसालें दी गई हैं, उनमें से पहली मिसाल में तो आक़ा और ग़ुलाम यानी मालिक और मम्लूक की मिसाल देकर बतलाया कि जब ये दोनों एक ही जिन्स, एक ही नस्ल व प्रजाति के होते हुए आपस में बराबर नहीं हो सकते तो किसी मख़्लूक़ को ख़ुदा तआ़ला के साथ कैसे बराबर ठहराते हो।

और दूसरी मिसाल में एक तरफ़ एक इनसान है जो लोगों को अ़दल व इन्साफ़ और अच्छी बातें सिखाता है, जो उसकी इल्मी क़ाबलियत व क़ुव्वत का कमाल है, और ख़ुद भी सही दरमियानी और सीधे रास्ते पर चलता है जो उसकी अ़मली क़ुव्वत का कमाल है, इस इल्मी और

अ़मली ताक़त में मुकम्मल इनसान के मुक़ाबले में वह इनसान है जो न ख़ुद अपना काम कर सकता है न किसी दूसरे का कोई काम ठीक से कर सकता है, ये दोनों क़िस्म के इनसान एक ही जिन्स, एक ही नस्ल, एक ही बिरादरी के होने के बावजूद आपस में बराबर नहीं हो सकते, तो कायनात का ख़ालिक़ व मालिक जो मुकम्मल इख़्तियार व क़ुदरत और कामिल हिक्मत वाला और हर चीज़ को कामिल व मुकम्मल जानने और ख़बर रखने वाला है उसके साथ कोई मख़्लूक़ कैसे बराबर हो सकती है।

وَلِلّٰهِ غَيْبُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ وَمَآ اَمْرُ السَّاعَةِ اِلَّا كَلَمْحِ الْبَصَرِ اَوْ هُوَ اَقْرَبُ ۚ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَیْءٍ قَدِيْرٌ ۝ وَاللّٰهُ اَخْرَجَكُمْ مِّنْۢ بُطُوْنِ اُمَّهٰتِكُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ شَيْـًٔا ۙ وَّجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٕدَةَ ۙ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ اَلَمْ يَرَوْا اِلَى الطَّيْرِ مُسَخَّرٰتٍ فِيْ جَوِّ السَّمَآءِ ۭ مَا يُمْسِكُهُنَّ اِلَّا اللّٰهُ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝ وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِّنْۢ بُيُوْتِكُمْ سَكَنًا وَّجَعَلَ لَكُمْ مِّنْ جُلُوْدِ الْاَنْعَامِ بُيُوْتًا تَسْتَخِفُّوْنَهَا يَوْمَ ظَعْنِكُمْ وَيَوْمَ اِقَامَتِكُمْ ۙ وَمِنْ اَصْوَافِهَا وَاَوْبَارِهَا وَاَشْعَارِهَآ اَثَاثًا وَّمَتَاعًا اِلٰى حِيْنٍ ۝ وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِّمَّا خَلَقَ ظِلٰلًا وَّجَعَلَ لَكُمْ مِّنَ الْجِبَالِ اَكْنَانًا وَّجَعَلَ لَكُمْ سَرَابِيْلَ تَقِيْكُمُ الْحَرَّ وَسَرَابِيْلَ تَقِيْكُمْ بَاْسَكُمْ ۭ كَذٰلِكَ يُتِمُّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تُسْلِمُوْنَ ۝ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝ يَعْرِفُوْنَ نِعْمَتَ اللّٰهِ ثُمَّ يُنْكِرُوْنَهَا وَاَكْثَرُهُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝

ع 17

व लिल्लाहि ग़ैबुस्समावाति वल्अर्ज़ि व मा अम्रुस्सा-अ़ति इल्ला क-लम्हिल्-ब-सरि औ हु-व अक़्रबु, इन्नल्ला-ह अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (77) वल्लाहु अख़्र-जकुम् मिम्-बुतूनि उम्महातिकुम् ला तअ़्लमू-न शैअंव्-व ज-अ़-ल लकुमुस्सम्-अ़ वल्अब्सा-र वल्अफ़्इ-द-त लअ़ल्लकुम् तश्कुरून (78) अलम् यरौ इलत्तौरि मुसख़्ख़रातिन् फी जव्विस्समा-इ, मा	और अल्लाह ही के पास हैं भेद आसमानों और ज़मीन के, और क़ियामत का काम तो ऐसा है जैसे लपक निगाह की या उससे भी क़रीब, अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है। (77) और अल्लाह ने तुमको निकाला तुम्हारी माँ के पेट से, न जानते थे तुम किसी चीज़ को, और दिये तुमको कान और आँखें और दिल, ताकि तुम एहसान मानो। (78) क्या नहीं देखे उड़ते जानवर हुक्म के बाँधे हुए आसमान की

युम्सिकुहुन्-न इल्लल्लाहु, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल्-लिक़ौमिंय्-युअ्मिनून (79) वल्लाहु ज-अ़-ल लकुम् मिम्-बुयूतिकुम् स-कनंव्-व ज-अ़-ल लकुम् मिन् जुलूदिल्-अन्आ़मि बुयूतन् तस्तख़िफ़्फ़ूनहा यौ-म ज़अ्निकुम् व यौ-म इक़ामतिकुम् व मिन् अस्वाफ़िहा व औबारिहा व अश्आ़रिहा असासंव्-व मताअ़न् इला हीन (80) वल्लाहु ज-अ़-ल लकुम् मिम्मा ख़ा-ल-क़ ज़िलालंव्-व ज-अ़-ल लकुम् मिनल् जिबालि अक्नानंव्-व ज-अ़-ल लकुम् सराबी-ल तक़ीकुमुल्हर्-र व सराबी-ल तक़ीकुम् बअ्सकुम्, कज़ालि-क युतिम्मु निअ़्-मतहू अ़लैकुम् लअ़ल्लकुम् तुस्लिमून (81) फ़-इन् तवल्लौ फ़-इन्नमा अ़लैकल्-बलाग़ुल्-मुबीन (82) यअ्रिफ़ू-न निअ़्-मतल्लाहि सुम्-म युन्किरूनहा व अक्सरुहुमुल्-काफ़िरून (83) ✿	हवा में, कोई नहीं थाम रहा उनको सिवाय अल्लाह के, इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो यक़ीन लाते हैं। (79) और अल्लाह ने बना दिये तुमको तुम्हारे घर बसने की जगह, और बना दिये तुमको चौपायों की खाल से डेरे, जो हल्के रहते हैं तुम पर जिस दिन सफ़र में हो और जिस दिन घर में हो, और भेड़ों की ऊन से और ऊँटों की बबरियों (रुओं, बालों) से और बकरियों के बालों से कितने असबाब और इस्तेमाल की चीज़ें एक मुक़र्ररा वक़्त तक। (80) और अल्लाह ने बना दिये तुम्हारे वास्ते अपनी बनाई हुई चीज़ों के साये, और बना दीं तुम्हारे वास्ते पहाड़ों में छुपने की जगहें, और बना दिये तुमको कुर्ते जो बचाव हैं गर्मी में और कुर्ते जो बचाव हैं लड़ाई में, इसी तरह पूरा करता है अपना एहसान तुम पर ताकि तुम हुक्म मानो। (81) फिर अगर फिर जायें तो तेरा काम तो यही है खोल कर सुना देना। (82) पहचानते हैं अल्लाह का एहसान फिर मुन्किर हो जाते हैं और बहुत उनमें नाशुक्रे हैं। (83) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आसमानों और ज़मीन की तमाम छुपी बातें (जो किसी को मालूम नहीं इल्म के एतिबार से) अल्लाह ही के साथ ख़ास हैं (तो इल्म की सिफ़त में वह कामिल हैं) और (क़ुदरत में

ऐसे कामिल हैं कि उन ग़ैबों में से जो एक बड़ा मामला है यानी) क़ियामत (उस) का मामला बस ऐसा (झटपट) होगा जैसे आँख झपकना, बल्कि इससे भी जल्दी। (क़ियामत के मामले से मुराद है मुर्दों में जान पड़ना और इसका आँख झपकने के मुक़ाबले में जल्दी होना ज़ाहिर है क्योंकि आँख झपकना हरकत है और हरकत ज़मानी "वक़्त से संबन्धित" होती है और जान पड़ना आनी "लम्हे और क्षण से संबन्धित" है, और आनी ज़ाहिर है कि ज़मानी से ज़्यादा तेज़ है, और इस पर ताज्जुब न किया जाये क्योंकि) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखते हैं (और क़ुदरत को साबित करने के लिये क़ियामत की विशेषता शायद इस वजह से की हो कि वह ग़ैब की तमाम बातों में से भी ख़ास है इसलिये वह इल्म और क़ुदरत दोनों की दलील है, वाक़े व ज़ाहिर होने से पहले तो इल्म की और ज़ाहिर होने के बाद क़ुदरत की)।

और (अल्लाह की क़ुदरत की दलीलों और नेमत की वुजूहात में से यह चीज़ है कि) अल्लाह ने तुमको तुम्हारी माँओं के पेट से इस हालत में निकाला कि तुम कुछ भी न जानते थे (इस दर्जे का नाम फ़लॉस्फ़ा की परिभाषा में अ़क़्ले हयूलानी है), और उसने तुमको कान दिये और आँख और दिल ताकि तुम शुक्र करो। (क़ुदरत पर दलील के लिये) क्या लोगों ने परिन्दों को नहीं देखा कि आसमान के (नीचे) फ़िज़ा में (क़ुदरत के) ताबे हो रहे हैं (यानी) उनको (इस जगह) सिवाय अल्लाह के कोई नहीं थामता (वरना उनके जिस्म का भारी होना और हवा के माद्दे का लतीफ़ व पतला होने का तबई तौर पर तक़ाज़ा यह है कि नीचे गिर पड़ें, इसलिये इस बात में) ईमान वाले लोगों के लिये (अल्लाह की क़ुदरत की) कई दलीलें (यानी निशानियाँ मौजूद) हैं (कई निशानियाँ इसलिये फ़रमाया कि परिन्दों को ख़ास हालत व सूरत पर पैदा करना जिससे उड़ना मुम्किन हो एक दलील है, फिर फ़िज़ा को ऐसे अन्दाज़ पर पैदा करना जिसमें उड़ना मुम्किन हो दूसरी दलील है, फिर मौजूदा हालत में इस उड़ने का वाक़े होना तीसरी दलील है, और जिन असबाब को उड़ने में दख़ल है वो सब अल्लाह ही के पैदा किये हुए हैं, फिर उन असबाब पर मुसब्बब यानी उड़ान का मुरत्तब हो जाना यह भी अल्लाह की मर्ज़ी व चाहत है वरना अक्सर ऐसा भी होता है कि किसी चीज़ के असबाब मौजूद होते हुए भी वह वजूद में नहीं आती, इसलिये 'मा युम्सिकुहुन्-न.......' फ़रमाया गया)।

(और नेमत की वुजूहात और क़ुदरत की दलीलों में से यह चीज़ है कि) अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे वास्ते (वतन में रहने की हालत में) तुम्हारे घरों में रहने की जगह बनाई (और सफ़र की हालत में) तुम्हारे लिये जानवरों की खाल के घर (यानी ख़ेमे) बनाये जिनको तुम अपने कूच के दिन और ठहरने के दिन हल्का (-फुल्का) पाते हो (और इस वजह से उसका लादना और गाड़ना सब आसान मालूम होता है) और उन (जानवरों) की ऊन और उनके रुओं और उनके बालों से (तुम्हारे) घर का सामान और फ़ायदे की चीज़ें एक मुद्दत तक के लिये बनाईं (मुद्दत तक इसलिये फ़रमाया कि आ़दतन यह सामान रूई के कपड़ों के मुक़ाबले में देर तक रहने वाला होता है)।

(और नेमत की वुजूहात और क़ुदरत की दलीलों में से यह चीज़ है कि) अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिये अपनी कुछ मख़्लूक़ात के साये बनाये (जैसे दरख़्त व मकानात वग़ैरह) और तुम्हारे

लिये पहाड़ों में पनाह की जगहीं बनाईं (यानी गुफा वग़ैरह, जिसमें गर्मी सर्दी, बारिश, तकलीफ़ देने वाले दुश्मन जानवर व आदमी से महफ़ूज़ रह सकते हो) और तुम्हारे लिये ऐसे कुर्ते बनाये जो गर्मी से तुम्हारी हिफ़ाज़त करें, और ऐसे कुर्ते (भी) बनाये जो तुम्हारी आपस की लड़ाई (में ज़ख़्म लगने) से तुम्हारी हिफ़ाज़त करें (इससे मुराद लोहे की जैकिट और लिबास हैं)। अल्लाह तुम पर इसी तरह अपनी नेमतें पूरी करता है ताकि तुम (उन नेमतों के शुक्रिये में) फ़रमाँबरदार रहो (और अगरचे इन ज़िक्र हुई नेमतों में कुछ बन्दों की बनाई हुई भी हैं मगर उनका माद्दा और उनके बनाने का सलीक़ा तो अल्लाह ही का पैदा किया हुआ है, इसलिये असल नेमत देने वाले वही हैं, फिर इन नेमतों के बाद भी) अगर ये लोग ईमान से मुँह मोड़ें (तो आप ग़म न करें आपका कोई नुक़सान नहीं, क्योंकि) आपके ज़िम्मे तो साफ़-साफ़ पहुँचा देना है (और उनके मुँह मोड़ने की वजह यह नहीं कि वे इन नेमतों को पहचानते नहीं बल्कि वे लोग) ख़ुदा की नेमत को पहचानते हैं मगर पहचान कर फिर (बर्ताव में) उसके इनकारी होते हैं (कि जो बर्ताव नेमत देने वाले के साथ होना चाहिये था यानी इबादत व फ़रमाँबरदारी वह दूसरे के साथ करते हैं) और ज़्यादा उनमें ऐसे ही नाशुक्रे हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अल्लाह तआ़ला का क़ौल है:

لَا تَعْلَمُوْنَ شَيْئًا

(कि तुम किसी चीज़ को न जानते थे) इसमें इशारा है कि इल्म इनसान का ज़ाती हुनर नहीं, पैदाईश के वक़्त वह कोई इल्म व हुनर नहीं रखता, फिर इनसानी ज़रूरत के मुताबिक़ उसको कुछ-कुछ इल्म अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से बिना वास्ते के सिखाया जाता है जिसमें न माँ-बाप का दख़ल है न किसी शिक्षक का। सबसे पहले उसको रोना सिखाया, उसकी यही सिफ़त उस वक़्त उसकी तमाम ज़रूरतें मुहैया करती है। भूख-प्यास लगे तो वह रोता है, सर्दी-गर्मी लगे तो रो देता है, कोई और तकलीफ़ पहुँचे तो रो देता है, क़ुदरत ने उसकी ज़रूरतों के लिये माँ-बाप के दिलों में ख़ास उलफ़त डाल दी कि जब बच्चे की आवाज़ सुनें तो वे उसकी तकलीफ़ के पहचानने और उसके दूर करने के लिये तैयार हो जाते हैं। अगर बच्चे को अल्लाह की तरफ़ से यह रोने की तालीम न दी जाती तो उसको कौन यह काम सिखा सकता कि जब कोई ज़रूरत पेश आये तो इस तरह चिल्लाया करे। इसके साथ ही उसको अल्लाह तआ़ला ने इल्हामी तौर पर यह भी सिखा दिया कि अपनी ग़िज़ा को माँ की छाती से हासिल करने के लिये अपने मसूढ़ों और होंठों से काम ले, अगर यह तालीम फ़ितरी और बिना वास्ते के न होती तो किस सिखाने वाले की मजाल थी जो उस नवजात को मुँह चलाना और छाती को चूसना सिखा देता। इसी तरह जैसे-जैसे उसकी ज़रूरतें बढ़ती गईं क़ुदरत ने उसको माँ-बाप के वास्ते के बग़ैर ख़ुद-ब-ख़ुद सिखा दिया, कुछ अ़रसे के बाद उसमें यह सलीक़ा पैदा होने लगता है कि माँ-बाप और दूसरे

आस-पास के आदमियों की बात सुनकर या कुछ चीज़ें देखकर कुछ सीखने लगता है और फिर उन सुनी हुई आवाज़ों और देखी हुई चीज़ों को सोचने-समझने का सलीक़ा पैदा होता है।

इसी लिये उक्त आयत में 'ला तअ़लमू-न शैअन्' के बाद फ़रमायाः

وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـئِدَةَ

यानी अगरचे पैदाईश की शुरूआ़त में इनसान को किसी चीज़ का इल्म नहीं था, मगर क़ुदरत ने उसके वजूद में इल्म हासिल करने के अ़जीब व ग़रीब क़िस्म के माध्यम और मशीनें फ़िट कर दी थीं, उन माध्यमों में सबसे पहले सुनने की ताक़त का ज़िक्र फ़रमाया जिसको पहले लाने की वजह शायद यह है कि इनसान का सबसे पहला इल्म और सबसे ज़्यादा इल्म कानों ही के रास्ते से आता है, शुरू में आँख तो बन्द होती है मगर कान सुनते हैं, और इसके बाद भी अगर ग़ौर किया जाये तो इनसान को अपनी पूरी उम्र में जिस क़द्र मालूमात हासिल होती हैं उनमें सबसे ज़्यादा कानों से सुनी हुई होती हैं, आँख से देखी हुई मालूमात उसकी तुलना में बहुत कम होती हैं।

इन दोनों के बाद नम्बर उन मालूमात का है जिनको इनसान अपनी सुनी और देखी हुई चीज़ों में ग़ौर व फ़िक्र (सोच-विचार) करके मालूम करता है और यह काम क़ुरआनी इरशादात के मुताबिक़ इनसान के दिल का है, इसलिये तीसरे नम्बर में 'अफ़्इ-द-त' फ़रमाया, जो फ़ुआद की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने दिल के हैं। फ़ल्सफ़ियों ने आ़म तौर पर समझ-बूझ और एहसास व इल्म का मर्कज़ इनसान के दिमाग़ को क़रार दिया है, मगर क़ुरआनी इरशाद से मालूम हुआ कि दिमाग़ को अगरचे इस इल्म व एहसास में दख़ल ज़रूर है मगर इल्म व समझ का असली मर्कज़ दिल है।

इस मौक़े पर हक़ तआ़ला ने सुनने, देखने और समझने की ताक़तों का ज़िक्र फ़रमाया है, बोलने की ताक़त और ज़बान का ज़िक्र नहीं फ़रमाया, क्योंकि बोलने को इल्म हासिल करने में दख़ल नहीं, बल्कि वह इल्म के इज़हार का ज़रिया है, इसके अ़लावा इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि सुनने के लफ़्ज़ के साथ बोलना भी एक तरह से इसके अन्दर ही आ गया, क्योंकि तजुर्बा गवाह है कि जो शख़्स सुनता है वह बोलता भी है, गूँगा जो बोलने पर क़ादिर नहीं वह कानों से भी बहरा होता है, शायद उसके न बोलने का सबब ही यह होता है कि वह कोई आवाज़ सुनता नहीं जिसको सुनकर बोलना सीखे। वल्लाहु आलम

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِّنْ ۢ بُيُوْتِكُمْ سَكَنًا

बुयूत बैत की जमा (बहुवचन) है, जिस मकान में रात गुज़ारी जा सके उसको बैत कहते हैं। इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर में फ़रमायाः

كُلُّ مَا عَلَاكَ فَاَظَلَّكَ فَهُوَ سَقْفٌ وَّسَمَآءٌ، وَكُلُّ مَآ اَقَلَّكَ فَهُوَ اَرْضٌ وَّكُلُّ مَا سَتَرَكَ مِنْ جِهَاتِكَ الْاَرْبَعِ فَهُوَ جِدَارٌ فَاِذَا انْتَظَمَتْ وَاتَّصَلَتْ فَهُوَ بَيْتٌ.

"जो चीज़ तुम्हारे सर से ऊँची हो और तुम पर साया करे वह छत या समा कहलाती है, और जो चीज़ तुम्हारे वजूद को अपने ऊपर उठाये वह ज़मीन है और जो चीज़ चारों तरफ़ से तुम्हारा पर्दा कर दे वो दीवारें हैं, और जब ये सब चीज़ें ज़मा हो जायें तो वह बैत है।"

घर बनाने का असल मक़सद दिल व जिस्म का सुकून है

इसमें हक़ तआ़ला ने इनसान के बैत यानी घर को सकन् फ़रमाकर घर बनाने का फ़ल्सफ़ा और वजह स्पष्ट फ़रमा दी, कि उसका असल मक़सद जिस्म और दिल का सुकून है, आ़दतन इनसान का काम-धंधा घर से बाहर होता है जो उसकी हरकत से वजूद में आता है, उसके घर का असली मंशा यह है कि जब काम-धंधे और भाग-दौड़ से थक जाये तो उसमें जाकर आराम करे और सुकून हासिल करे, अगरचे कई बार इनसान अपने घर में भी हरकत व अ़मल में मशग़ूल रहता है मगर यह आ़दतन कम है।

इसके अ़लावा सुकून असल में दिल व दिमाग़ का सुकून है, वह इनसान को अपने घर में ही हासिल होता है। इससे यह भी मालूम हो गया कि इनसान के मकान की सबसे बड़ी सिफ़त यह है कि उसमें सुकून मिले, आजकी दुनिया में तामीरों का सिलसिला अपने शिखर पर है और उनमें ज़ाहिरी टिप-टॉप पर बेहद ख़र्च भी किया जाता है लेकिन उनमें ऐसे मकानात बहुत कम हैं जिनमें दिल और जिस्म का सुकून हासिल हो। कई बार तो बनावटी और दिखावे के तकल्लुफ़ात खुद ही आराम व सुकून को बरबाद कर देते हैं, और वह भी न हो तो घर में जिन लोगों से वास्ता पड़ता है वे उस सुकून को ख़त्म कर देते हैं, ऐसे आ़लीशान मकानात से वह झुग्गी और झोंपड़ी अच्छी है जिसके रहने वाले के दिल व जिस्म को सुकून हासिल रहा हो।

क़ुरआने करीम हर चीज़ की रूह और असल को बयान करता है, इनसान के घर का असली मक़सद और सबसे बड़ी ग़र्ज़ व उद्देश्य सुकून को क़रार दिया, इसी तरह दाम्पत्य जीवन का असल मक़सद भी सुकून क़रार दिया है, फ़रमाया— 'लितस्कुनू इलैहा', जिस दाम्पत्य जीवन और घरेलू ज़िन्दगी से यह मक़सद हासिल न हो वह उसके असल फ़ायदे से मेहरूम है, आजकी दुनिया में इन चीज़ों में रस्मी और ग़ैर-रस्मी तकल्लुफ़ात और ज़ाहिरी टिप-टॉप की हद नहीं रही, और पश्चिमी संस्कृति व रहन-सहन ने इन चीज़ों में ज़ाहिरी टिप-टॉप के सारे सामान जमा कर दिये, मगर दिल व जिस्म के सुकून से बिल्कुल मेहरूम कर डाला।

अल्लाह तआ़ला के क़ौल 'मिन् जुलूदिल्-अन्आ़मि' और 'मिन् अस्वाफ़िहा व औ बारिहा' से साबित हुआ कि जानवरों की खाल और बाल और ऊन सब का इस्तेमाल इनसान के लिये हलाल है। इसमें यह भी क़ैद नहीं कि जानवर ज़िबह किया हुआ हो या मुर्दार, और न यह क़ैद है कि उसका गोश्त हलाल है या हराम, इन सब क़िस्म के जानवरों की खाल दबाग़त देकर (यानी उसको परिचित तरीक़े से तैयार करके) इस्तेमाल करना हलाल है, और बाल और ऊन पर तो जानवर की मौत का कोई असर ही नहीं होता, वह बग़ैर किसी ख़ास कारीगरी के हलाल और जायज़ है। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि का यही मज़हब है, अलबत्ता ख़िन्ज़ीर

(सुअर) की खाल और उसके तमाम बदनी हिस्से (अंग) हर हाल में नापाक हैं उनसे किसी हाल में फ़ायदा नहीं उठाया जा सकता।

سَرَابِيْلَ تَقِيْكُمُ الْحَرَّ

यहाँ इनसान को कुर्ते की ग़र्ज़ (मक़सद व उद्देश्य) गर्मी से बचाने को फ़रमाया है, हालाँकि कुर्ता इनसान को गर्मी और सर्दी दोनों से बचाता है। इसका एक जवाब तो इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि और दूसरे मुफ़स्सिरीन ने यह दिया है कि क़ुरआने हकीम अ़रबी भाषा में आया है, इसके सबसे पहले मुख़ातब अ़रब के लोग हैं, इसलिये इसमें अ़रब वालों की आ़दतों व ज़रूरतों का लिहाज़ रखकर कलाम किया गया है। अ़रब एक गर्म मुल्क है वहाँ बर्फ़बारी और सर्दी का तसव्वुर ही मुश्किल है, इसलिये गर्मी से बचाने के ज़िक्र को काफ़ी समझा गया। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि क़ुरआने करीम ने इसी सूरत के शुरू में 'लकुम् फ़ीहा दिफ़्उन्' फ़रमाकर लिबास के ज़रिये सर्दी से बचने और गर्मी हासिल करने का ज़िक्र पहले कर दिया था, इसलिये यहाँ सिर्फ़ गर्मी से बचाव का ज़िक्र किया गया है।

وَيَوْمَ نَبْعَثُ مِنْ كُلِّ أُمَّةٍ شَهِيْدًا ثُمَّ لَا يُؤْذَنُ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَلَا هُمْ يُسْتَعْتَبُوْنَ ﴿٨٤﴾ وَإِذَا رَاَ الَّذِيْنَ ظَلَمُوا الْعَذَابَ فَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمْ وَلَا هُمْ يُنْظَرُوْنَ ﴿٨٥﴾ وَإِذَا رَاَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا شُرَكَآءَهُمْ قَالُوْا رَبَّنَا هٰٓؤُلَآءِ شُرَكَآؤُنَا الَّذِيْنَ كُنَّا نَدْعُوْا مِنْ دُوْنِكَ ۚ فَاَلْقَوْا اِلَيْهِمُ الْقَوْلَ اِنَّكُمْ لَكٰذِبُوْنَ ﴿٨٦﴾ وَاَلْقَوْا اِلَى اللّٰهِ يَوْمَئِذِ ِۨ السَّلَمَ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ﴿٨٧﴾ اَلَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ زِدْنٰهُمْ عَذَابًا فَوْقَ الْعَذَابِ بِمَا كَانُوْا يُفْسِدُوْنَ ﴿٨٨﴾ وَيَوْمَ نَبْعَثُ فِيْ كُلِّ اُمَّةٍ شَهِيْدًا عَلَيْهِمْ مِّنْ اَنْفُسِهِمْ وَجِئْنَا بِكَ شَهِيْدًا عَلٰى هٰٓؤُلَآءِ ۭ وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ تِبْيَانًا لِّكُلِّ شَيْءٍ وَّهُدًى وَّرَحْمَةً وَّبُشْرٰى لِلْمُسْلِمِيْنَ ﴿٨٩﴾

१२ ع ٦ १८

व यौ-म नब्असु मिन् कुल्लि उम्मतिन् शहीदन् सुम्-म ला युअ्ज़नु लिल्लज़ी-न क-फ़रू व ला हुम् युस्तअ्तबून (84) व इज़ा रअल्लज़ी-न ज़-लमुल्-अ़ज़ा-ब फ़ला युख़फ़्फ़फ़ु अ़न्हुम् व ला हुम् युन्ज़रून (85) व इज़ा रअल्लज़ी-न अश्रकू	और जिस दिन खड़ा करेंगे हम हर फ़िर्के में एक बतलाने वाला, फिर हुक्म न मिले मुन्किरों को और न उनसे तौबा ली जाये। (84) और जब देखेंगे ज़ालिम अ़ज़ाब को फिर हल्का न होगा उनसे और न उनको ढील मिले। (85) और जब देखें मुश्रिक अपने शरीकों को बोलें– ऐ

शु-रका-अहुम् क़ालू रब्बना हाउला-इ शु-रकाउनल्लज़ी-न कुन्ना नद्अू मिन् दूनि-क फ़अल्क़ौ इलैहिमुल्-क़ौ-ल इन्नकुम् लकाज़िबून (86) ▲ व अल्क़ौ इलल्लाहि यौमइज़िनिस्स-ल-म व ज़ल्-ल अ़न्हुम् मा कानू यफ़्तरून (87) अल्लज़ी-न क-फ़रू व सद्दू अ़न् सबीलिल्लाहि ज़िद्नाहुम् अ़ज़ाबन् फ़ौक़ल्-अ़ज़ाबि बिमा कानू युफ़्सिदून (88) व यौ-म नब्असु फ़ी कुल्लि उम्मतिन् शहीदन् अ़लैहिम् मिन् अन्फ़ुसिहिम् व जिअ्ना बि-क शहीदन् अ़ला हाउला-इ, व नज़्ज़ल्ना अ़लैकल्-किता-ब तिब्यानल्-लिकुल्लि शैइंव्-व हुदंव्-व रह्मतंव्-व बुश्रा लिल्-मुस्लिमीन (89) ✿	हमारे रब! ये शरीक हैं जिनको हम पुकारते थे तेरे सिवा, तब वे उन पर डालेंगे बात कि तुम झूठे हो। (86) ▲ और आ पड़ें अल्लाह के आगे उस दिन आजिज़ होकर और भूल जायें जो झूठ बाँधते थे। (87) जो लोग मुन्किर हुए हैं और रोकते रहे हैं अल्लाह की राह से उनको हम बढ़ा देंगे अ़ज़ाब पर अ़ज़ाब, बदला उसका जो शरारत करते थे। (88) और जिस दिन खड़ा करेंगे हम हर फ़िर्क़े में एक बतलाने वाला उन पर उन्हीं में का और तुझको लायें बतलाने को उन लोगों पर, और उतारी हमने तुझ पर किताब खुला बयान हर चीज़ का, और हिदायत और रहमत और ख़ुशख़बरी हुक्म मानने वालों के लिये। (89) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह दिन याद करने के क़ाबिल है) जिस दिन हम हर-हर उम्मत में से एक-एक गवाह (जो कि उस उम्मत का पैग़म्बर होगा) खड़ा करेंगे (जो उनके बुरे आमाल की गवाही देंगे), फिर उन काफ़िरों को (उज़्र व माज़िरत करने की) इजाज़त न दी जायेगी और न उनसे हक़ तआ़ला के राज़ी करने की फ़रमाईश की जायेगी (यानी उनसे यूँ न कहा जायेगा कि तुम तौबा या कोई अ़मल करके अल्लाह को ख़ुश कर लो, वजह इसकी ज़ाहिर है कि आख़िरत बदले की जगह है अ़मल की जगह नहीं)। और जब ज़ालिम (यानी काफ़िर) लोग अ़ज़ाब को देखेंगे (यानी उसमें पड़ेंगे) तो वह अ़ज़ाब न उनसे कुछ हल्का किया जायेगा और न वे (उसमें) कुछ मोहलत दिये जाएँगे (कि चन्द दिन के बाद वह अ़ज़ाब जारी किया जाये)। और जब वे मुश्रिक लोग अपने

शरीकों को (जिनको ख़ुदा के सिवा पूजते थे) देखेंगे तो (जुर्म के इक़रार के तौर पर) कहेंगे कि ऐ हमारे परवर्दिगार! वे हमारे शरीक यही हैं कि आपको छोड़कर हम इनको पूजा करते थे। सो वे (शरीक डरेंगे कि कहीं हमारी कमबख़्ती न आ जाये इसलिये) वे उनकी तरफ़ बात को मुतवज्जह करेंगे "यानी फेर देंगे" कि तुम झूठे हो (असल मतलब उनका यह होगा कि हमारा तुम्हारा कोई ताल्लुक़ नहीं जिससे मक़सद अपना बचाव है, अब चाहे यह मतलब उनका सही हो जैसा कि अगर मक़बूल हज़रात जैसे फ़रिश्ते व अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम यह बात कहें तो सही है जैसा कि अल्लाह तआ़ला का क़ौल है:

بَلْ كَانُوْا يَعْبُدُوْنَ الْجِنَّ

"कि बल्कि वे शैतान की इबादत करते थे" और चाहे यह ग़लत हो जैसे ख़ुद शैतान कहने लगें और चाहे उनको सही ग़लत होने की ख़बर ही न हो जैसे बुत व पेड़-पौधे वग़ैरह कहने लगें)। और ये मुश्रिक और काफ़िर लोग उस दिन अल्लाह के सामने इताअ़त की बातें करने लगेंगे और जो कुछ (दुनिया में) बोहतान बाज़ियाँ करते थे (उस वक़्त) वे सब गुम हो जाएँगी (और उनमें) जो लोग (ख़ुद भी) कुफ़्र करते थे और (दूसरों को भी) अल्लाह की राह (यानी दीन) से रोकते थे उनके लिये हम एक सज़ा पर (जो कि कुफ़्र के मुक़ाबले में होगी) दूसरी सज़ा उनके फ़साद के मुक़ाबले में (कि अल्लाह की राह से रोकते थे) बढ़ा देंगे।

और (वह दिन भी याद करने और लोगों के डरने का है) जिस दिन हम हर-हर उम्मत में से एक-एक गवाह जो उन्हीं में का होगा, उनके मुक़ाबले में खड़ा करेंगे (मुराद उस उम्मत का नबी है, और उन्हीं में का होना आ़म है चाहे ख़ानदान में शरीक होने के एतिबार से हो चाहे साथ रहने में शरीक होने के एतिबार से हो), और उन लोगों के मुक़ाबले में आपको गवाह बनाकर लाएँगे (और इस गवाही की ख़बर देने से जो आपकी रिसालत का ख़बर देना समझ में आता है उसकी दलील यह है कि) हमने आप पर क़ुरआन उतारा है जो (मोजिज़ा होने के अ़लावा रिसालत के सुबूत का मदार है, इन ख़ूबियों का जामे है) कि तमाम (दीन की) बातों का (प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से आ़म लोगों के लिये) बयान करने वाला है, और (ख़ास) मुसलमानों के वास्ते बड़ी हिदायत और बड़ी रहमत और (ईमान पर) ख़ुशख़बरी सुनाने वाला है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ تِبْيَانًا لِّكُلِّ شَيْءٍ

इसमें किताब यानी क़ुरआने करीम को हर चीज़ का बयान फ़रमाया गया है, मुराद इससे दीन की सब चीज़ें और बातें हैं, क्योंकि वही और नुबुव्वत का मक़सद इन्हीं चीज़ों से संबन्धित है, इसलिये आर्थिक और रोज़गार से मुताल्लिक़ फ़ुनून और उनके मसाईल को क़ुरआने करीम में ढूँढना ही ग़लत है, अगर कहीं कोई ज़िमनी इशारा आ जाये तो वह इसके ख़िलाफ़ नहीं। रहा यह सवाल कि क़ुरआने करीम में दीन के भी तो तमाम मसाईल ज़िक्र नहीं हुए हैं तो 'तिब्यानल्

लिकुल्लि शैइन्' (यानी हर चीज़ का बयान फ़रमाना) कहना कैसे दुरुस्त होगा? इसका जवाब यह है कि क़ुरआने करीम में उसूल (बुनियादी बातें) तो तमाम मसाईल के मौजूद हैं उन्हीं की रोशनी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसें उन मसाईल का बयान करती हैं और कुछ तफ़सीलात को इजमा व शरई क़ियास के सुपुर्द कर दिया जाता है। इससे मालूम हुआ कि रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसें और इजमा व क़ियास से जो मसाईल निकले हैं वो भी एक हैसियत से क़ुरआन ही के बयान किये हुए हैं।

إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْإِحْسَانِ وَإِيتَاءِ ذِي الْقُرْبَىٰ وَيَنْهَىٰ عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنكَرِ وَالْبَغْيِ ۚ يَعِظُكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ۝

इन्नल्ला-ह यअ्मुरु बिल्-अ़द्लि वल्-इह्सानि व ईता-इ ज़िल्क़ुर्बा व यन्हा अ़निल्-फ़ह्शा-इ वल्मुन्करि वल्बग़्यि यअ़िज़ुकुम् लअ़ल्लकुम् तज़क्करून (90)	अल्लाह हुक्म करता है इन्साफ़ करने का और भलाई करने का और रिश्तेदारों को देने का, और मना करता है बेहयाई से और नामाक़ूल काम से और सरकशी से, और तुमको समझाता है ताकि तुम याद रखो। (90)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक अल्लाह तआ़ला (क़ुरआन में) एतिदाल "इन्साफ़ करने" और एहसान "भलाई करने" और क़राबत वालों "रिश्तेदारों व संबन्धियों" को देने का हुक्म फ़रमाते हैं और खुली बुराई और हर तरह की बुराई और (किसी पर) ज़ुल्म (और ज़्यादती) करने से मना फ़रमाते हैं (और इन हुक्म की गयी और मना की गयी चीज़ों में तमाम अच्छे-बुरे आमाल आ गये, इस पूर्णता व कामिल होने की वजह से क़ुरआन का खोलकर बयान करने वाला होना साफ़ ज़ाहिर है, और) अल्लाह तआ़ला तुमको (उक्त बातों की) इसलिये नसीहत फ़रमाते हैं ताकि तुम नसीहत क़ुबूल करो (और अ़मल करो, क्योंकि हिदायत, रहमत और ख़ुशख़बरी होना इसी पर मौक़ूफ़ है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यह आयत क़ुरआने करीम की बहुत जामे (यानी जो अपने अन्दर बहुत उम्दगी से कई बातों को समोने वाली है वह) आयत है, जिसमें पूरी इस्लामी तालीमात को चन्द अलफ़ाज़ में समो दिया गया है, इसी लिये पहले बुज़ुर्गों के मुबारक दौर से आज तक दस्तूर चला आ रहा है कि जुमा व ईदों के ख़ुतबे के आख़िर में यह आयत पढ़ी जाती है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि क़ुरआने करीम की बहुत ही जामे आयत सूरः नहल में यह है:

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُ بِالْعَدْلِ...... الخ. (ابن كثير)

(यानी यही आयत नम्बर 90 जिसका बयान चल रहा है)।

और हज़रत अक्सम बिन सैफ़ी रज़ियल्लाहु अन्हु तो इसी आयत की बिना पर इस्लाम में दाख़िल हुए। इमाम इब्ने कसीर ने हाफ़िज़े हदीस अबू यअ़ली की किताब 'मारिफ़तुस्सहाबा' में सनद के साथ यह वाक़िआ नक़ल किया है कि अक्सम बिन सैफ़ी अपनी क़ौम के सरदार थे, जब इनको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दावा-ए-नुबुव्वत और इस्लाम के प्रचार की ख़बर मिली तो इरादा किया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हों मगर क़ौम के लोगों ने कहा कि आप हम सब के बड़े हैं, आपका ख़ुद जाना मुनासिब नहीं। हज़रत अक्सम रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा कि अच्छा तो क़बीले के दो आदमी चुनो जो वहाँ जायें और हालात का जायज़ा लेकर मुझे बतायें। ये दोनों रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि हम अक्सम बिन सैफ़ी की तरफ़ से दो बातें पूछने के लिये आये हैं। अक्सम के दो सवाल ये हैं:

مَنْ اَنْتَ وَمَا اَنْتَ.

"आप कौन हैं और क्या हैं?"

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि पहले सवाल का जवाब तो यह है कि मैं मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह हूँ और दूसरे सवाल का जवाब यह है कि मैं अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल हूँ। इसके बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सूरः नहल की यह आयत तिलावत फ़रमाई:

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْاِحْسَانِ................ الاية

(यानी यही आयत नम्बर 90 जिसका बयान चल रहा है)।

उन दोनों क़ासिदों ने दरख़्वास्त की कि ये जुमले हमें फिर सुनाईये। आप इस आयत की तिलावत करते रहे यहाँ तक कि उन क़ासिदों को आयत याद हो गई।

क़ासिद वापस अक्सम बिन सैफ़ी के पास आये और बतलाया कि हमने पहले सवाल में यह चाहा था कि आपका नसब मालूम करें, मगर आपने इस पर ज़्यादा तवज्जोह नहीं दी सिर्फ़ बाप का नाम बयान कर देने पर बस किया, मगर जब हमने दूसरों से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नसब (ख़ानदान) की तहक़ीक़ की तो मालूम हुआ कि वह बड़े ऊँचे ख़ानदान वाले शरीफ़ हैं, और फिर बतलाया कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें कुछ कलिमात भी सुनाये थे वो हम बयान करते हैं।

उन क़ासिदों ने यह ऊपर बयान हुई आयत अक्सम बिन सैफ़ी को सुनाई। आयत सुनते ही अक्सम रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा कि इससे मालूम होता है कि वह उम्दा और ऊँचे अख़्लाक़ की हिदायत करते हैं और बुरे और घटिया अख़्लाक़ से रोकते हैं, तुम सब उनके दीन में जल्द दाख़िल

हो जाओ ताकि तुम दूसरे लोगों से मुक़द्दम और आगे रहो, पीछे ताबे बनकर न रहो।

(तफ़सीर इब्ने कसीर)

इसी तरह हज़रत उस्मान बिन मज़ऊन रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि शुरू में मैंने लोगों के कहने सुनने से शर्मा शर्मी इस्लाम क़ुबूल कर लिया था, मगर मेरे दिल में इस्लाम जमा नहीं था यहाँ तक कि एक दिन मैं आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर था अचानक आप पर वही नाज़िल होने के आसार (निशानियाँ) ज़ाहिर हुए और कुछ अजीब हालात के बाद आपने फ़रमाया कि अल्लाह तआला का क़ासिद मेरे पास आया और यह आयत मुझ पर नाज़िल हुई। हज़रत उस्मान बिन मज़ऊन रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि इस वाक़िए को देखकर और आयत सुनकर मेरे दिल में ईमान मज़बूत व पुख़्ता हुआ और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत मेरे दिल में घर कर गई (इब्ने कसीर ने यह वाक़िआ नक़ल करके फ़रमाया कि इसकी सनद उम्दा है)।

और जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह आयत वलीद बिन मुग़ीरा के सामने तिलावत फ़रमाई तो उसकी राय यह थी जो उसने अपनी क़ौम क़ुरैश के सामने बयान की:

وَاللّٰه ان له لحلاوة وانّ عليه لطُلاوة وانّ اصله لمورق واعلاه لمثمروما هوبقولْ بشر.

"ख़ुदा की क़सम! उसमें एक ख़ास मिठास है और उसके ऊपर एक ख़स रौनक़ और नूर है, उसकी जड़ से शाख़ें और पत्ते निकलने वाले हैं और शाख़ों पर फल लगने वाला है, यह किसी इनसान का कलाम हरगिज़ नहीं हो सकता।"

तीन चीज़ों का हुक्म और तीन चीज़ों से मनाही

इस आयत में हक़ तआला ने तीन चीज़ों का हुक्म दिया है- अदल, एहसान और रिश्तेदारों को बख़्शिश, और तीन चीज़ों से मना फ़रमाया है- बेहयाई और हर बुरा काम, और ज़ुल्म व ज़्यादती, इन छह अलफ़ाज़ के शरई मफ़्हूम और उसकी हदों की वज़ाहत यह है:

अदलः इस लफ़्ज़ के असली मायने और लुग़वी मायने बराबर करने के हैं, इसी की मुनासबत से हाकिमों का लोगों के विवादित मुक़द्दमों में इन्साफ़ के साथ फ़ैसला अदल कहलाता है। क़ुरआने करीम में 'अन् तह्कुमू बिल्अद्लि' इसी मायने के लिये आया है। और इसी लिहाज़ से लफ़्ज़ अदल कमी व ज़्यादती के बीच एतिदाल को भी कहा जाता है, और इसी की मुनासबत से तफ़सीर के कुछ इमामों ने इस जगह लफ़्ज़ अदल की तफ़सीर ज़ाहिर व बातिन की बराबरी से की है, यानी जो क़ौल या फ़ेल इनसान के ज़ाहिरी बदनी अंगों से सर्ज़द हो और बातिन में भी उसका वही एतिक़ाद और हाल हो। और असल हक़ीक़त यही है कि यहाँ लफ़्ज़ अदल अपने आम मायने में है जो उन सब सूरतों को शामिल है जो तफ़सीर के मुख़्तलिफ़ इमामों से मन्क़ूल हैं, उनमें कोई टकराव या इख़्तिलाफ़ नहीं।

और अल्लामा इब्ने अरबी ने फ़रमाया कि लफ़्ज़ अदल के असली मायने बराबरी करने के

हैं, फिर विभिन्न निस्बतों से इसका मफ़्हूम मुख़्तलिफ़ हो जाता है, जैसे एक मफ़्हूम अ़दल का यह है कि इनसान अपने नफ़्स और अपने रब के बीच अ़दल करे, तो इसके मायने यह होंगे कि अल्लाह तआ़ला के हक़ को अपने नफ़्स के हिस्से पर और उसकी रज़ा तलब करने को अपनी इच्छाओं पर आगे जाने और उसके अहकाम की तामील और उसकी मना और हराम की हुई बातों और चीज़ों से पूरी तरह परहेज़ करे।

दूसरा अ़दल यह है कि आदमी ख़ुद अपने नफ़्स के साथ अ़दल का मामला करे। वह यह है कि अपने नफ़्स को ऐसी तमाम चीज़ों से बचाये जिसमें उसकी जिस्मानी या रूहानी तबाही हो, उसकी ऐसी इच्छाओं को पूरा न करे जो उसके लिये अन्जाम के एतिबार से नुक़सानदेह हों, और क़नाअ़त व सब्र से काम ले, नफ़्स पर बिना वजह ज़्यादा बोझ न डाले।

तीसरा अ़दल अपने नफ़्स और तमाम मख़्लूक़ात के बीच है, इसकी हक़ीक़त यह है कि तमाम मख़्लूक़ात के साथ ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी का मामला करे, और किसी छोटे बड़े के मामले में किसी से ख़ियानत न करे, सब लोगों के लिये अपने नफ़्स से इन्साफ़ का मुतालबा करे, किसी इनसान को उसके किसी क़ौल व फ़ेल से ज़ाहिरी या बातिनी तौर पर कोई दुख और तकलीफ़ न पहुँचे।

इसी तरह एक अ़दल यह है कि जब दो फ़रीक़ अपने किसी मामले का फ़ैसला कराने के लिये उसके पास लायें तो फ़ैसले में किसी की तरफ़ मैलान (झुकाव और तरफ़दारी) के बग़ैर हक़ के मुताबिक़ फ़ैसला करे। और एक अ़दल यह भी है कि हर मामले में कमी व ज़्यादती की राहों को छोड़कर दरमियानी राह इख़्तियार करे। अबू अ़ब्दुल्लाह राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने यही मायने इख़्तियार करके फ़रमाया है कि लफ़्ज़ अ़दल में अ़क़ीदे का एतिदाल, अ़मल का एतिदाल, अख़्लाक़ का एतिदाल (दरमियानी और सही रास्ता) सब शामिल हैं। (बहरे मुहीत)

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अ़दल के मफ़्हूम में इस तफ़सील का ज़िक्र करके फ़रमाया कि यह तफ़सील बहुत बेहतर है। इससे यह भी मालूम हुआ कि इस आयत का सिर्फ़ लफ़्ज़ अ़दल तमाम आमाल व अच्छे अख़्लाक़ की पाबन्दी और बुरे आमाल व अख़्लाक़ से बचने को हावी और अपने अन्दर समोने वाला है।

अल्-एहसानः इसके असल लुग़वी मायने अच्छा करने के हैं, और इसकी दो क़िस्में हैं एक यह कि काम या अख़्लाक़ व आ़दात को अपनी ज़ात में अच्छा और मुकम्मल करे, दूसरे यह कि किसी दूसरे शख़्स के साथ अच्छा सुलूक और बेहतरीन मामला करे। और दूसरे मायने के लिये अ़रबी भाषा में लफ़्ज़ एहसान के साथ हर्फ़ इला इस्तेमाल होता है, जैसे एक आयत मेंः

أَحْسِنْ كَمَا أَحْسَنَ اللّٰهُ إِلَيْكَ

फ़रमाया है।

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि आयत में यह लफ़्ज़ अपने आ़म मफ़्हूम के लिये इस्तेमाल हुआ है, इसलिये एहसान की दोनों क़िस्मों को शामिल है। फिर पहली क़िस्म का

एहसान यानी किसी काम को अपनी ज़ात में अच्छा करना यह भी आम है इबादतों को अच्छा करना, आमाल व अख़्लाक़ को अच्छा करना, मामलात को अच्छा करना।

हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम की मशहूर हदीस में ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एहसान के जो मायने बयान फ़रमाये हैं वह एहसान इबादत के लिये है। उस इरशाद का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआ़ला की इबादत इस तरह करो कि गोया तुम ख़ुदा तआ़ला को देख रहे हो, और अगर ख़्याल व ध्यान का यह दर्जा नसीब न हो तो इतनी बात का यक़ीन तो हर शख़्स को होना ही चाहिये कि हक़ तआ़ला उसके अ़मल को देख रहे हैं, क्योंकि यह तो इस्लामी अ़क़ीदे का अहम हिस्सा है कि हक़ तआ़ला की जानकारी व देखने से कायनात का कोई ज़र्रा बाहर नहीं रह सकता।

ख़ुलासा यह है कि दूसरा हुक्म इस आयत में एहसान का आया है, इसमें इबादत का एहसान हदीस की वज़ाहत के मुताबिक़ भी दाख़िल है, और तमाम आमाल, अख़्लाक़, आ़दतों का एहसान यानी उनको मतलूबा सूरत के मुताबिक़ बिल्कुल सही दुरुस्त करना भी दाख़िल है, और तमाम मख़्लूक़ात के साथ अच्छा सुलूक करना भी दाख़िल है चाहे वह मुसलमान हो या काफ़िर, इनसान हों या जानवर।

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जिस शख़्स के घर में उसकी बिल्ली को उसकी ख़ुराक और ज़रूरतें न मिलें और जिसके पिंजरे में बन्द परिन्दों की पूरी देखभाल न होती हो वह कितनी ही इबादत करे मोहसिनों (अच्छा अ़मल करने वालों) में शुमार नहीं होगा।

इस आयत में पहले अ़दल का हुक्म दिया गया फिर एहसान का। तफ़सीर के कुछ इमामों ने फ़रमाया कि अ़दल तो यह है कि दूसरे का हक़ पूरा-पूरा उसको दे दे और अपना वसूल कर ले, न कम न ज़्यादा और कोई तकलीफ़ तुम्हें पहुँचाये तो ठीक उतनी ही तकलीफ़ तुम उसको पहुँचाओ, न कम न ज़्यादा, और एहसान यह है कि दूसरे को उसके असल हक़ से ज़्यादा दो और ख़ुद अपने हक़ से नज़र बचाने से काम लो, कि कुछ कम हो जाये तो ख़ुशी से क़ुबूल कर लो, इसी तरह दूसरा कोई तुम्हें हाथ या ज़बान से तकलीफ़ पहुँचाये तो तुम बराबर का इन्तिक़ाम (बदला) लेने के बजाय उसको माफ़ कर दो, बल्कि बुराई का बदला भलाई से दो। इसी तरह अ़दल का हुक्म तो फ़र्ज़ व वाजिब के दर्जे में हुआ और एहसान का हुक्म नफ़्ली और एहसान के तौर पर हुआ।

اِیْتَاۤئِ ذِی الْقُرْبٰی

तीसरा हुक्म जो इस आयत में दिया गया है वह 'ईता-इ ज़िल्क़ुर्बा' है। ईता के मायने अ़ता यानी कोई चीज़ देने के हैं, और लफ़्ज़ **क़ुर्बा** के मायने क़राबत और रिश्तेदारी के हैं। **ज़ी क़ुर्बा** के मायने रिश्तेदार, ज़ी रहम। ईता-इ **ज़ी क़ुर्बा** के मायने हुए रिश्तेदार को कुछ देना। यहाँ इसका ख़ुलासा नहीं फ़रमाया कि क्या चीज़ देना, लेकिन एक दूसरी आयत में उस दी जाने वाली चीज़ का भी ज़िक्र है:

فَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰی حَقَّهٗ

"यानी रिश्तेदार को उसका हक्" ज़ाहिर यही है कि यहाँ भी यही चीज़ मुराद है, कि रिश्तेदार को उसका हक् दिया जाये। इस हक् में रिश्तेदार को माल देकर माली ख़िदमत करना भी दाख़िल है और जिस्मानी ख़िदमत भी, बीमार का हाल पूछना और ख़बरगीरी करना भी, ज़बानी तसल्ली व हमदर्दी का इज़हार भी। और अगरचे लफ़्ज़ एहसान में रिश्तेदारों का हक् अदा करना भी दाख़िल था मगर इसकी ज़्यादा अहमियत बतलाने के लिये इसको अलग से बयान फ़रमाया गया।

ये तीन बातें वो थीं जिनका हुक्म किया गया था आगे तीन अहकाम वो हैं जिनसे मना किया गया और उनका हराम होना बताया गया है:

وَيَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ وَالْبَغْيِ.

यानी अल्लाह तआ़ला मना करता है फ़हशा और मुन्कर और बग़्य से। फ़हशा हर ऐसे बुरे काम या क़ौल को कहा जाता है जिसकी बुराई खुली हुई और स्पष्ट हो, हर शख़्स उसको बुरा समझे। और मुन्कर वह क़ौल व फ़ेल है जिसके हराम व नाजायज़ होने पर शरीअ़त वालों का इत्तिफ़ाक़ (सर्वसम्मति) हो, इसलिये वैचारिक और इज्तिहादी मतभेदों में किसी एक दिशा को मुन्कर नहीं कहा जा सकता, और लफ़्ज़ मुन्कर में तमाम गुनाह खुले और छुपे, अ़मली और अख़्लाक़ी सब दाख़िल हैं। और बग़्य के असली मायने हद से निकलने के हैं, मुराद इससे ज़ुल्म व ज़्यादती है। यहाँ अगरचे लफ़्ज़ मुन्कर के मतलब में फ़हशा (बेहयाई) भी दाख़िल है और बग़्य (नाफ़रमानी) भी, लेकिन फ़हशा को उसकी हद से ज़्यादा बुराई और ख़राबी की वजह से अलग करके बयान फ़रमाया और पहले रखा। और बग़्य को इसलिये अलग बयान किया कि इसका असर दूसरों तक पहुँचाता है, और कई बार यह दूसरों तक पहुँचना आपसी लड़ाई झगड़े या उससे भी आगे वैश्विक फ़साद तक पहुँच जाती है।

हदीस में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि ज़ुल्म के सिवा कोई गुनाह ऐसा नहीं जिसका बदला और अ़ज़ाब जल्द दिया जाता हो। इससे मालूम हुआ कि ज़ुल्म पर आख़िरत का सख़्त अ़ज़ाब तो होना ही है उससे पहले दुनिया में भी अल्लाह तआ़ला ज़ालिम को सज़ा देते हैं, अगरचे वह यह न समझे कि यह फ़ुलाँ ज़ुल्म की सज़ा है और अल्लाह तआ़ला ने मज़लूम की मदद करने का वायदा फ़रमाया है।

इस आयत ने जो छह हुक्म (तीन करने के और तीन न करने के) दिये हैं, अगर ग़ौर किया जाये तो वो इनसान की व्यक्तिगत और सामूहिक ज़िन्दगी की मुकम्मल कामयाबी का अचूक नुस्ख़ा हैं। अल्लाह तआ़ला हमें इन पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ नसीब फ़रमाये।

وَاَوْفُوْا بِعَهْدِ اللّٰهِ اِذَا عٰهَدْتُّمْ وَلَا تَنْقُضُوا الْاَيْمَانَ بَعْدَ تَوْكِيْدِهَا وَقَدْ جَعَلْتُمُ اللّٰهَ عَلَيْكُمْ كَفِيْلًا ۚ اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا تَفْعَلُوْنَ ۝ وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّتِيْ نَقَضَتْ غَزْلَهَا مِنْۢ بَعْدِ قُوَّةٍ اَنْكَاثًا ۭ تَتَّخِذُوْنَ اَيْمَانَكُمْ دَخَلًۢا بَيْنَكُمْ اَنْ تَكُوْنَ اُمَّةٌ هِيَ اَرْبٰى مِنْ اُمَّةٍ ۭ

إِنَّمَا يَبْلُوكُمُ اللّٰهُ بِهٖ ۚ وَلَيُبَيِّنَنَّ لَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ مَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ۝ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ
لَجَعَلَكُمْ أُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ يُّضِلُّ مَنْ يَّشَآءُ وَيَهْدِي مَنْ يَّشَآءُ ۚ وَلَتُسْئَلُنَّ عَمَّا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ۝
وَلَا تَتَّخِذُوٓا أَيْمَانَكُمْ دَخَلًا بَيْنَكُمْ فَتَزِلَّ قَدَمٌۢ بَعْدَ ثُبُوتِهَا وَتَذُوقُوا السُّوٓءَ بِمَا صَدَدْتُّمْ عَنْ
سَبِيلِ اللّٰهِ ۚ وَلَكُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ۝ وَلَا تَشْتَرُوا بِعَهْدِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۚ إِنَّمَا عِنْدَ اللّٰهِ هُوَ خَيْرٌ
لَّكُمْ إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ مَا عِنْدَكُمْ يَنْفَدُ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ بَاقٍ ۚ وَلَنَجْزِيَنَّ الَّذِينَ صَبَرُوٓا
أَجْرَهُمْ بِأَحْسَنِ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

व औफ़ू बि-अ़ह्दिल्लाहि इज़ा आहत्तुम् व ला तन्क़ुज़ुल्-ऐमा-न बअ़्-द तौकीदिहा व क़द् जअ़ल्तुमुल्ला-ह अ़लैकुम् कफ़ीलन्, इन्नल्ला-ह यअ़्लमु मा तफ़्अ़लून (91) व ला तकूनू कल्लती न-क़ज़त् ग़ज़्लहा मिम्-बअ़्दि क़ुव्वतिन् अन्कासन्, तत्तख़िज़ू-न ऐमानकुम् द-ख़लम्-बैनकुम् अन् तकू-न उम्मतुन् हि-य अर्बा मिन् उम्मतिन्, इन्नमा यब्लूकुमुल्लाहु बिही, व लयुबय्यिनन्-न लकुम् यौमल्-क़ियामति मा कुन्तुम् फ़ीहि तख़्तलिफ़ून (92) व लौ शा-अल्लाहु ल-ज-अ़-लकुम् उम्मतंव्- वाहि-दतंव्-व लाकिंय्-युज़िल्लु मंय्यशा-उ व यह्दी मंय्यशा-उ, व लतुस्अलुन्-न अ़म्मा कुन्तुम् तअ़्मलून (93)

और पूरा करो अ़हद अल्लाह का जब आपस में अ़हद करो और न तोड़ो क़समों को पक्का करने के बाद, और तुम ने किया है अल्लाह को अपना ज़मानती, अल्लाह जानता है जो तुम करते हो। (91) और मत रहो जैसे वह औरत कि तोड़ा उसने अपना सूत काता हुआ मेहनत के बाद टुकड़े-टुकड़े, कि ठहराओ अपनी क़समों को दख़ल देने का बहाना एक दूसरे में, इस वास्ते कि एक फ़िर्क़ा हो चढ़ा हुआ दूसरे से, यह तो अल्लाह परखता है तुमको उससे, और आईन्दा खोल देगा अल्लाह तुमको क़ियामत के दिन, जिस बात में तुम झगड़ रहे थे। (92) और अल्लाह चाहता तो सबको एक ही फ़िर्क़ा कर देता लेकिन राह भुलाता है जिसको चाहे और सुझाता है जिसको चाहे, और तुमसे पूछ होगी जो काम तुम करते थे। (93)

व ला तत्तख़िज़ू ऐमानकुम् द-ख़लम् बैनकुम् फ़-तज़िल्-ल क़-दमुम्-बअ्-द सुबूतिहा व तज़ूक़ुस्सू-अ बिमा सदत्तुम् अ़न् सबीलिल्लाहि व लकुम् अ़ज़ाबुन् अ़ज़ीम (94) व ला तश्तरू बि-अ़ह्दिल्लाहि स-मनन् क़लीलन्, इन्नमा अ़िन्दल्लाहि हु-व ख़ैरुल्लकुम् इन् कुन्तुम् तअ्लमून (95) मा अ़िन्दकुम् यन्फ़दु व मा अ़िन्दल्लाहि बाक़िन्, व ल-नज्ज़ियन्नल्लज़ी-न स-बरू अज्रहुम् बि-अह्सनि मा कानू यअ्मलून (96)	और न ठहराओ अपनी क़समों को धोखा आपस में कि डिग न जाये किसी का पाँव जमने के बाद, और तुम चखो सज़ा इस बात पर कि तुमने रोका अल्लाह की राह से, और तुमको बड़ा अ़ज़ाब हो। (94) और न लो अल्लाह के अ़हद पर मोल थोड़ा सा, बेशक जो अल्लाह के यहाँ है वही बेहतर है तुम्हारे हक़ में अगर तुम जानते हो। (95) जो तुम्हारे पास है ख़त्म हो जायेगा और जो अल्लाह के पास है कभी ख़त्म न होगा, और हम बदले में देंगे सब्र करने वालों को उनका हक़ अच्छे कामों पर जो करते थे। (96)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अ़हद पूरा करने का हुक्म और अ़हद तोड़ने की निंदा

और तुम अल्लाह के अ़हद को (यानी जिस अ़हद के पूरा करने का अल्लाह ने हुक्म दिया है उसको) पूरा करो (इससे वह निकल गया जो ख़िलाफ़े शरीअ़त अ़हद हो, और बाक़ी सब जायज़ और शरीअ़त के ज़रिये हुक्म किये गये अ़हद चाहे वो अल्लाह के हुक़ूक़ से संबन्धित हों या बन्दों के हुक़ूक़ से, वो इसमें दाख़िल हो गये) जबकि तुम उसको (विशेष तौर पर या उमूमी तौर पर) अपने ज़िम्मे कर लो (विशेष तौर पर यह कि स्पष्ट रूप से किसी काम की ज़िम्मेदारी ली और उमूमी तौर पर यह कि ईमान लाये तो तमाम वाजिब अहकाम की ज़िम्मेदारी उसके ज़िमन में आ गई) और (ख़ासकर जिन अ़हदों में क़सम भी खाई हो वे ज़्यादा पाबन्दी और ध्यान करने के क़ाबिल हैं, सो उनमें) क़समों को उनके मज़बूत करने के बाद (यानी अल्लाह का नाम लेकर क़सम खाने के बाद) मत तोड़ो, और तुम (उन क़समों की वजह से उन अ़हदों में) अल्लाह तआ़ला को गवाह भी बना चुके हो (ये क़ैदें कि पक्का करने के बाद और अल्लाह को गवाह बनाने के बाद, अ़हद पर ज़ोर डालने और उसकी पाबन्दी की तरफ़ ख़ास तवज्जोह दिलाने के लिये हैं), बेशक अल्लाह तआ़ला को मालूम है जो कुछ तुम करते हो (चाहे अ़हद पूरा करो या

उसको तोड़ो उसी के मुवाफ़िक़ तुमको जज़ा व सज़ा देगा)।

और तुम (अ़हद तोड़ करके) उस (मक्का में रहने वाली पागल) औ़रत के जैसे मत बनो जिसने अपना सूत कातने के बाद बोटी-बोटी करके नोच डाला, कि (उसकी तरह) तुम (भी) अपनी क़समों को (सही व दुरुस्त करने के बाद तोड़कर उनको) आपस में फ़साद डालने का ज़रिया बनाने लगो (क्योंकि क़सम व अ़हद तोड़ने से मुवाफ़िक़ और समर्थकों में अविश्वास और मुख़ालिफ़ों व विरोधियों में उत्तेजना व आक्रोश पैदा होता है और यह जड़ है फ़साद की, और तोड़ना भी महज़ इस वजह से कि) एक गिरोह दूसरे गिरोह से (माल या संख्या में) बढ़ जाये (यानी जैसे काफ़िरों के दो गिरोहों में आपस में मुख़ालफ़त हो और तुम्हारी एक से सुलह हो जाये फिर दूसरी तरफ़ पल्ला झुकता हुआ देखकर जिस गिरोह से सुलह की थी उससे उज़्र करके दूसरे गिरोह से साज़िश कर ले। या जैसे कोई मुसलमान होकर मुसलमानों में शामिल हो और फिर काफ़िरों की तरफ़ ज़ोर देखा तो इस्लाम के अ़हद को तोड़कर दीन इस्लाम से फिर जाये, और यह जो एक गिरोह दूसरे से बढ़ा हुआ होता है या दूसरी किसी जमाअ़त के शामिल हो जाने से बढ़ जाता है तो) बस इस (ज़्यादा होने) से अल्लाह तआ़ला तुम्हारी आज़माईश करता है (कि देखें अ़हद को पूरा करते हो या झुकता पल्ला देखकर उधर ढल जाते हो), और जिन चीज़ों में तुम झगड़ा करते रहे (और विभिन्न राहें चलते रहे) क़ियामत के दिन उन सब (की हक़ीक़त) को तुम्हारे सामने (अ़मली तौर पर) ज़ाहिर कर देगा (कि हक़ वालों को जज़ा और बातिल वालों को सज़ा हो जायेगी। आगे असल मज़मून को बीच में रोककर उस झगड़े की हिक्मत मुख़्तसर तौर पर बयान फ़रमाते हैं)।

और (अल्लाह तआ़ला को अगरचे पूरी तरह यह भी क़ुदरत थी कि विवाद व झगड़ा न होने देते, चुनाँचे) अगर अल्लाह को मन्ज़ूर होता तो तुम सब को एक ही तरीक़े का बना देते, लेकिन (हिक्मत के तक़ाज़े के तहत जिसकी वज़ाहत और निर्धारण यहाँ ज़रूरी नहीं) जिसको चाहते हैं राह से हटा देते हैं और जिसको चाहते हैं राह पर डाल देते हैं (चुनाँचे हिदायत और राह पर डाल देने में से अ़हद का पूरा करना भी है और गुमराही और राह से हटा देने में दूसरी बातों के अ़लावा अ़हद का तोड़ना भी है। और यह न समझना चाहिये कि जैसे दुनिया में गुमराहों को पूरी सज़ा नहीं होती ऐसे ही आख़िरत में आज़ाद और खुले मुहार रहेंगे, हरगिज़ नहीं! बल्कि क़ियामत में) तुमसे तुम्हारे सब आमाल की ज़रूर पूछताछ और सवाल होगा। और (जैसा कि अ़हद व क़सम के तोड़ने से महसूस नुक़सान होता है जिसका ऊपर बयान था इसी तरह इससे मानवी नुक़सान भी होता है। आगे उसी का ज़िक्र है, यानी) तुम अपनी क़समों को आपस में फ़साद डालने का ज़रिया मत बनाओ (यानी क़समों और अ़हदों को मत तोड़ो, कभी इसको देखकर और किसी का क़दम जमने के बाद न फिसल जाये, यानी दूसरे भी तुम्हारी पैरवी करें और अ़हद तोड़ने लगें) फिर तुमको इस सबब से कि तुम (दूसरों के लिये) अल्लाह की राह से रुकावट हुए, तकलीफ़ भुगतनी पड़े (क्योंकि अ़हद का पूरा करना अल्लाह की राह है, तुम उसके तोड़ने का सबब बन गये, और यही है वह मानवी नुक़सान कि दूसरों को भी अ़हद तोड़ने वाला बनाया

और तकलीफ़ यह होगी कि इस हालत में) तुमको बड़ा अ़ज़ाब होगा।

और (जिस तरह ग़ालिब गिरोह में शामिल होकर रुतबा व इ़ज़्ज़त हासिल करने की ग़र्ज़ से अ़हद का तोड़ना मना है जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ इसी तरह माल हासिल करने की ग़र्ज़ से जो अ़हद तोड़ा हो उसकी मनाही फ़रमाते हैं कि) तुम लोग अल्लाह के अ़हद के बदले में (दुनिया का) थोड़ा-सा फ़ायदा मत हासिल करो (अल्लाह के अ़हद के मायने तो आयत के शुरू में मालूम हुए और थोड़े फ़ायदे से मुराद दुनिया है, कि ज़्यादा होने के बावजूद भी कम ही है। इसकी हक़ीक़त इस तरह बयान फ़रमाई कि) बस अल्लाह के पास की जो चीज़ है (यानी आख़िरत का ज़ख़ीरा) वह तुम्हारे लिये (दुनियावी फ़ायदे से) कई दर्जे और बहुत ज़्यादा बेहतर है अगर तुम समझना चाहो (पस आख़िरत की दौलत ज़्यादा हुई और दुनियावी दौलत और फ़ायदा चाहे कितना भी हो कम हुआ)। और (कम ज़्यादा होने के फ़र्क़ के अ़लावा दूसरा फ़र्क़ यह भी है कि) जो कुछ तुम्हारे पास (दुनिया में) है वह (एक दिन) ख़त्म हो जायेगा (चाहे उसके हाथ से जाते रहने से या मौत से) और जो कुछ अल्लाह के पास है वह हमेशा रहेगा। और जो लोग (अ़हद पूरा करने वग़ैरह दीन के अहकाम पर) साबित-क़दम हैं हम उनके अच्छे कामों के बदले उनका अज्र (यानी ऊपर बयान हुई हमेशा बाक़ी रहने वाली नेमत) उनको ज़रूर देंगे (पस अ़हद पूरा करके हमेशा बाक़ी रहने वाली ज़्यादा दौलत को हासिल करो और फ़ना होने वाली मामूली और कम दौलत और फ़ायदे के लिये अ़हद तोड़ने की हरकत मत करो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अ़हद को तोड़ना हराम है

लफ़्ज़ अ़हद उन तमाम मामलों और समझौतों व संधियों को शामिल है जिनका ज़बान से इल्तिज़ाम किया जाये यानी उसकी ज़िम्मेदारी ली जाये, चाहे उस पर क़सम खाये या न खाये, चाहे वह किसी काम के करने से संबन्धित हो या न हो।

और ये आयतें दर हक़ीक़त पहले बयान हुई आयत की वज़ाहत व पूरक हैं, पहले बयान हुई आयत में अ़दल व इन्साफ़ का हुक्म था, लफ़्ज़ अ़दल के मफ़्हूम में अ़हद का पूरा करना भी दाख़िल है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

किसी से अ़हद व समझौता करने के बाद अ़हद तोड़ना बड़ा गुनाह है, मगर उसके तोड़ने पर कोई कफ़्फ़ारा मुक़र्रर नहीं, बल्कि आख़िरत का अ़ज़ाब है। हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि क़ियामत के दिन अ़हद तोड़ने और समझौते के ख़िलाफ़ करने वाले की पीठ पर एक झण्डा गाड़ दिया जायेगा जो मैदाने हश्र में उसकी रुस्वाई का सबब बनेगा।

इसी तरह जिस काम की क़सम खाई है उसके ख़िलाफ़ करना भी बड़ा गुनाह है, आख़िरत में उसका भारी वबाल है और दुनिया में भी उसकी कुछ ख़ास सूरतों में कफ़्फ़ारा (बदला) लाज़िम होता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

اَنْ تَكُوْنَ اُمَّةٌ هِيَ اَرْبٰى مِنْ اُمَّةٍ

इस आयत में मुसलमानों को यह हिदायत की गई है कि जिस जमाअ़त से तुम्हारा समझौता व मुआ़हदा हो जाये उस मुआ़हदे को दुनियावी स्वार्थों व फ़ायदों के लिये न तोड़ो, जैसे तुम्हें यह महसूस हो कि जिस जमाअ़त या पार्टी से समझौता हुआ है वह कमज़ोर और संख्या में थोड़ी है, या माल के एतिबार से ग़रीब व निर्धन है और उसके मुक़ाबले में दूसरी जमाअ़त ज़्यादा भारी और ताक़तवर है या माल व दौलत वाली है तो सिर्फ़ इस लालच से कि ताक़तवर और मालदार पार्टी में शामिल हो जाने से ज़्यादा फ़ायदे होंगे पहली जमाअ़त का अ़हद तोड़ना जायज़ नहीं बल्कि अपने अ़हद पर क़ायम रहे और नफ़े व नुक़सान को ख़ुदा तआ़ला के सुपुर्द कर दे, अलबत्ता जिस जमाअ़त या पार्टी से अ़हद किया है वह अगर शरीअ़त के ख़िलाफ़ काम और बातें करे और कराये तो उसका अ़हद तोड़ देना वाजिब है, बशर्तेकि स्पष्ट तौर पर उनको जतला दिया जाये कि हम अब इस अ़हद के पाबन्द नहीं रहेंगे जैसा कि आयत 'फ़म्बिज़् इलैहिम् अ़ला सवाइन्' में बयान हुआ है।

आयत के आख़िर में उक्त स्थिति को मुसलमानों की आज़माईश का सबब बतलाया गया है कि हक़ तआ़ला इसका इम्तिहान लेते हैं कि यह अपने नफ़्स के स्वार्थों व इच्छाओं का ताबे होकर अ़हद को तोड़ डालता है या अल्लाह तआ़ला के हुक्म की तामील में नफ़्सानी जज़्बात को क़ुरबान करता है।

किसी को धोखा देने के लिये क़सम खाने में ईमान के छिन जाने का ख़तरा है

وَلَا تَتَّخِذُوْٓا اَيْمَانَكُمْ دَخَلًا.............الخ

इस आयत में एक और भारी गुनाह और वबाल से बचाने की हिदायत है, वह यह कि क़सम खाते वक़्त ही से उस क़सम के ख़िलाफ़ करने का इरादा हो, सामने वाले को सिर्फ़ फ़रेब देने के लिये क़सम खाई जाये तो यह आ़म क़सम तोड़ने से ज़्यादा ख़तरनाक गुनाह है, जिसके नतीजे में यह ख़तरा है कि ईमान की दौलत ही से मेहरूम हो जाये, 'फ़-तज़िल्-ल क़-दमुम् बअ़्-द सुबूतिहा' का यही मतलब है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

रिश्वत लेना सख़्त हराम और अल्लाह से किये अ़हद को तोड़ना है

وَلَا تَشْتَرُوْا بِعَهْدِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا

यानी अल्लाह के अ़हद को थोड़ी-सी क़ीमत के बदले में न तोड़ो। यहाँ थोड़ी-सी क़ीमत से

मुराद दुनिया और इसके फ़ायदे हैं, वो मात्रा में कितने भी बड़े हों, आख़िरत के नफ़ों के सामने सारी दुनिया और इसकी सारी दौलतें भी थोड़ी ही हैं। जिसने आख़िरत के बदले में दुनिया ले ली उसने बहुत ही घाटे का सौदा किया है क्योंकि हमेशा रहने वाली आला तरीन नेमत व दौलत को बहुत जल्द फ़ना होने वाली घटिया क़िस्म की चीज़ के बदले में बेच डालना कोई समझ-बूझ वाला इनसान गवारा नहीं कर सकता।

इब्ने अ़तीया ने फ़रमाया कि जिस काम का पूरा करना किसी शख़्स के ज़िम्मे वाजिब हो वह अल्लाह का अ़हद उसके ज़िम्मे है, उसके पूरा करने पर किसी से मुआ़वज़ा लेना और बग़ैर लिये न करना अल्लाह का अ़हद तोड़ना है। इसी तरह जिस काम का न करना किसी के ज़िम्मे वाजिब है, किसी से मुआ़वज़ा लेकर उसको कर देना यह भी अल्लाह का अ़हद तोड़ना है।

इससे मालूम हुआ कि रिश्वत की प्रचलित क़िस्में सब हराम हैं, जैसे कोई सरकारी मुलाज़िम किसी काम की तन्ख़्वाह हुकूमत से पाता है तो उसने अल्लाह से अ़हद कर लिया है कि यह तन्ख़्वाह लेकर सौंपी गयी ख़िदमत पूरी करूँगा, अब अगर वह उसके करने पर किसी से मुआ़वज़ा माँगे और बग़ैर मुआ़वज़ा लिये उसको टलाये तो यह अल्लाह के अ़हद को तोड़ रहा है। इसी तरह जिस काम का उसको महकमे की तरफ़ से इख़्तियार नहीं उसको रिश्वत लेकर कर डालना भी अल्लाह से किये गये अ़हद को तोड़ना है। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

रिश्वत की पूर्ण परिभाषा

इब्ने अ़तीया के इस कलाम में रिश्वत की पूर्ण परिभाषा भी आ गई जो तफ़सीर बहरे मुहीत के अलफ़ाज़ में यह है:

اخذ الاموال علی فعل ما یجب علی الاٰخذ فعله او فعل ما یجب علیه ترکه.

''यानी जिस काम का करना उसके ज़िम्मे वाजिब है उसके करने पर मुआ़वज़ा लेना या जिस काम का छोड़ना उसके ज़िम्मे लाज़िम है उसके करने पर मुआ़वज़ा लेना रिश्वत है।

(तफ़सीर बहरे मुहीत पेज 533 जिल्द 5)

और पूरी दुनिया की सारी नेमतों का थोड़ा होना अगली आयत में इस तरह बयान फ़रमायाः

مَا عِنْدَكُمْ يَنْفَدُ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ بَاقٍ.

यानी जो कुछ तुम्हारे पास है (मुराद इससे दुनियावी फ़ायदे और मुनाफ़े हैं) वह सब ख़त्म और फ़ना होने वाला है, और जो कुछ अल्लाह तआ़ला के पास है (मुराद इससे आख़िरत का सवाब व अ़ज़ाब है) वह हमेशा बाक़ी रहने वाला है।

दुनिया की ख़त्म होने वाली और आख़िरत की बाक़ी रहने वाली चीज़ें

दुनिया की राहत व तकलीफ़, दोस्ती व दुश्मनी सब फ़ना होने वाली हैं और उनके परिणाम

व फल जो अल्लाह के पास हैं वो बाक़ी रहने वाले हैं। 'मा अिन्दकुम्' के लफ़्ज़ से आम तौर पर ज़ेहन सिर्फ़ माल व मता की तरफ़ जाता है, मेरे उस्तादे मोहतरम मौलाना सैयद असग़र हुसैन साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि लफ़्ज़ मा लुग़त के एतिबार से आ़म है और आ़म होने के मायने मुराद लेने से कोई शरई हुक्म रुकावट नहीं, इसलिये इसमें दुनिया का माल व मता भी दाख़िल है और इसमें पेश आने वाले तमाम हालात व मामलात, ख़ुशी व ग़म, रंज और राहत, बीमारी और सेहत, नफ़ा और नुक़सान, किसी की दोस्ती या दुश्मनी ये सब चीज़ें शामिल हैं कि सब की सब फ़ना होने वाली हैं, अलबत्ता इन हालात व मामलात पर जो परिणाम व असरात मुरत्तब होने वाले हैं और क़ियामत में उन पर अ़ज़ाब व सवाब होने वाला है वो सब बाक़ी रहने वाले हैं। फ़ना हो जाने वाले हालात व मामलात की धुन में लगा रहना और अपनी ज़िन्दगी और इसकी ताक़त को उसी की फ़िक्र में लगाकर हमेशा के अ़ज़ाब व सवाब से ग़फ़लत बरतना किसी अ़क़्लमन्द का काम नहीं।

दौराने बक़ा चू बादे सेहरा बगुज़िश्त तल्ख़ी व ख़ुशी व ज़श्त व ज़ेबा बगुज़िश्त
पिन्दाश्त सितमगर कि जफ़ा बरमा कर्द बर गर्दने वे बमानद् व बरमा ब-गुज़िश्त

ज़िन्दगी का समय जंगल की हवा की तरह गुज़र गया, ख़ुशी व नाख़ुशी, पसन्दीदा और नापसन्दीदा कुछ बाक़ी नहीं रहा। हम पर ज़ुल्म करने वाले सितमगर अच्छी तरह जान ले कि तेरे सितम का वार हम पर से तो गुज़र गया मगर तेरी गर्दन पर उसका वार होना बाक़ी है।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

مَنْ عَمِلَ صَالِحًا مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَنُحْيِيَنَّهٗ حَيٰوةً طَيِّبَةً ۚ وَلَنَجْزِيَنَّهُمْ اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝

मन् अ़मि-ल सालिहम्-मिन् ज़-करिन् औ उन्सा व हु-व मुअ्मिनुन् फ़-लनुह्यि-यन्नहू हयातन् तय्यि-बतन् व लनज्ज़ियन्नहुम् अज्रहुम् बिअह्सनि मा कानू यअ़्मलून (97)	जिसने किया नेक काम मर्द हो या औरत और वह ईमान पर है तो उसको हम ज़िन्दगी देंगे एक अच्छी ज़िन्दगी, और बदले में देंगे उनको हक़ उनका बेहतर कामों पर जो करते थे। (97)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इससे पहली आयतों में अ़हद के पूरा करने की ताकीद और अ़हद तोड़ने की निंदा का बयान था जो एक ख़ास अ़मल है। इस आयत में तमाम नेक आमाल और नेक काम करने वालों

का उमूमी बयान है। आयत का मज़मून यह है कि आख़िरत का अज्र व सवाब और दुनिया की बरकतें सिर्फ़ अहद को पूरा करने में सीमित नहीं और न किसी अमल करने वाले की ख़ुसूसियत है बल्कि एक आम कायदा यह है कि) जो शख़्स कोई नेक काम करेगा चाहे वह मर्द हो या औरत हो, शर्त यह है कि ईमान वाला हो (क्योंकि काफ़िर के नेक आमाल मक़बूल नहीं) तो हम उस शख़्स को (दुनिया में तो) मज़ेदार ज़िन्दगी देंगे और (आख़िरत में) उनके अच्छे कामों के बदले में उनका अज्र देंगे।

मआरिफ़ व मसाईल

अच्छी और मज़ेदार ज़िन्दगी क्या चीज़ है?

मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) की बड़ी जमाअ़त के नज़दीक यहाँ 'हयात-ए-तय्यिबा' से मुराद दुनिया की पाकीज़ा और लुत्फ़ वाली ज़िन्दगी है, और तफ़सीर के कुछ इमामों ने इससे आख़िरत की ज़िन्दगी मुराद ली है, और जमहूर की तफ़सीर के मुताबिक़ भी इससे यह मुराद नहीं कि उसको कभी फ़क्र व फ़ाक़ा या बीमारी पेश न आयेगी, बल्कि मुराद यह है कि मोमिन को अगर कभी आर्थिक तंगी या कोई तकलीफ़ भी पेश आती है तो दो चीज़ें उसको परेशान नहीं होने देतीं— एक क़नाअ़त और सादा ज़िन्दगी की आ़दत जो तंगदस्ती में भी चल जाती है, दूसरे उसका यह अ़क़ीदा कि मुझे इस तंगी और बीमारी के बदले में आख़िरत की अ़ज़ीमुश्शान हमेशा की नेमतें मिलने वाली हैं, बख़िलाफ़ काफ़िर व बदकार के कि अगर उसको तंगदस्ती और बीमारी पेश आती है तो उसके लिये कोई तसल्ली का सामान नहीं होता, अ़क़्ल व होश खो बैठता है, कई बार ख़ुदकुशी की नौबत आ जाती है, और अगर उसको ख़ुशहाली व ऐश भी नसीब हो तो उसको ज़्यादती की हिर्स किसी वक़्त चैन से नहीं बैठने देती, वह करोड़पति हो जाता है तो अरबपति बनने की फ़िक्र उसके ऐश (आराम और चैन-सुकून) को ख़राब करती रहती है।

इब्ने अ़तीया रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि नेक मोमिनों को हक़ तआ़ला दुनिया में भी वह ख़ुशी व सुरूर और लुत्फ़ भरी ज़िन्दगी अ़ता फ़रमाते हैं जो किसी हाल में तब्दील नहीं होती, तन्दुरुस्ती और ख़ुशहाली के वक़्त तो उनकी ज़िन्दगी का लुत्फ़ भरा होना ज़ाहिर है ही, ख़ुसूसन इस बिना पर कि बिना ज़रूरत माल को बढ़ाने की हिर्स उनमें नहीं होती जो इनसान को हर हाल में परेशान रखती है, और अगर तंगदस्ती या बीमारी भी पेश आये तो अल्लाह तआ़ला के वायदों पर उनका मुकम्मल यक़ीन और मुश्किल के बाद आसानी, परेशानी के बाद राहत मिलने की प्रबल उम्मीद उनकी ज़िन्दगी को बेलुत्फ़ नहीं होने देती। जैसे काश्तकार खेत बो ले और उसकी परवरिश के वक़्त उसको कितनी ही तकलीफ़ें पेश आ जायें सब को इसलिये राहत महसूस करता है कि चन्द दिन के बाद उसका बड़ा सिला उसको मिलने वाला है। ताजिर अपनी तिजारत में, मुलाज़िम अपनी ड्यूटी अदा करने में कैसी-कैसी मेहनत व मशक़्क़त बल्कि कभी-कभी ज़िल्लत भी बरदाश्त करता है मगर इसलिये ख़ुश रहता है कि चन्द दिन के बाद उसको तिजारत का बड़ा

नफ़ा या मुलाज़िमत की तन्ख़्वाह मिलने का यक़ीन होता है। मोमिन का भी यह अक़ीदा होता है कि मुझे हर तकलीफ़ पर अज्र मिल रहा है और आख़िरत में उसका बदला हमेशा बाक़ी रहने वाली अज़ीमुश्शान नेमतों की सूरत में मिलेगा, और दुनिया की ज़िन्दगी आख़िरत के मुक़ाबले में कोई हैसियत नहीं रखती, इसलिये यहाँ के रंज व राहत और सर्द व गर्म सब को आसानी से बरदाश्त कर लेता है, उसकी ज़िन्दगी ऐसे हालात में भी परेशानी वाली और बेमज़ा नहीं होती, यही वह 'हयात-ए-तय्यिबा' है जो मोमिन को दुनिया में नक़द मिलती है।

فَإِذَا قَرَأْتَ الْقُرْاٰنَ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ۝ إِنَّهُ لَيْسَ لَهُ سُلْطٰنٌ عَلَى الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُوْنَ ۝ إِنَّمَا سُلْطٰنُهُ عَلَى الَّذِيْنَ يَتَوَلَّوْنَهُ وَالَّذِيْنَ هُمْ بِهِ مُشْرِكُوْنَ ۝

फ़-इज़ा क़रअ्तल्-क़ुरआ-न फ़स्तअिज़् बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम (98) इन्नहू लै-स लहू सुल्तानुन् अलल्लज़ी-न आमनू व अ़ला रब्बिहिम् य-तवक्कलून (99) इन्नमा सुल्तानुहू अलल्लज़ी-न य-तवल्लौनहू वल्लज़ी-न हुम् बिही मुश्रिकून (100) ✿	सो जब तू पढ़ने लगे क़ुरआन तो पनाह ले अल्लाह की शैतान मरदूद से। (98) उसका ज़ोर नहीं चलता उन पर जो ईमान रखते हैं और अपने रब पर भरोसा करते हैं। (99) उसका ज़ोर तो उन्हीं पर है जो उसको रफ़ीक़ (साथी) समझते हैं और जो उसको शरीक मानते हैं। (100) ✿

इन आयतों का पीछे के मज़मून से संबन्ध

पहले गुज़री आयतों में पहले अ़हद को पूरा करने की ताकीद और उमूमी तौर पर नेक आमाल की ताकीद व तरग़ीब का बयान आया है। इनसान को इन अहकाम में ग़फ़लत शैतानी बहकावे से पैदा होती है, इसलिये इस आयत में शैतान मरदूद से पनाह माँगने की तालीम दी गई है, जिसकी ज़रूरत हर नेक अ़मल में है, मगर इस आयत में इसको ख़ास तौर से क़ुरआन के पढ़ने के साथ ज़िक्र किया गया है, इस ख़ास करने की वजह यह भी हो सकती है कि क़ुरआन की तिलावत (पढ़ना) एक ऐसा अ़मल है जिससे ख़ुद शैतान भागता है:

देव बगुरेज़द अज़ाँ क़ौम कि क़ुरआँ ख़्वानंद

जिन्न (यानी शैतान) उस क़ौम से दूर रहता और भागता है जो क़ुरआन पढ़ते हैं।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

और कुछ ख़ास आयतें और सूरतें विशेष तौर पर शैतानी असरात को दूर करने के लिये मुजर्रब हैं जिनका असरदार व मुफ़ीद होना शरई वज़ाहतों से साबित है। (बयानुल-क़ुरआन)

इसके बावजूद जब क़ुरआन की तिलावत के साथ शैतान से पनाह माँगने का हुक्म दिया गया तो दूसरे आमाल के साथ और भी ज़्यादा ज़रूरी हो गया।

इसके अ़लावा ख़ुद क़ुरआन की तिलावत में शैतानी वस्वसों का भी ख़तरा रहता है कि तिलावत के आदाब में कमी हो जाये, उसमें सोचने-समझने और दिली ध्यान व आ़जिज़ी न रहे, तो इसके लिये भी शैतानी वस्वसों (ख़्यालात दिल में आने) से पनाह माँगना ज़रूरी समझा गया।

(इब्ने कसीर, मज़हरी वग़ैरह)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और जब नेक अ़मल की फ़ज़ीलत मालूम हुई और कभी-कभी शैतान उसमें ख़लल डालता है, कभी अ़हद के पूरा करने में भी ख़लल डालता है और कभी दूसरे अ़मल जैसे क़ुरआन के पढ़ने में भी) तो (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! आप और आपके माध्यम से आपकी उम्मत सुन लें कि) जब आप (कैसा ही नेक काम करना चाहें यहाँ तक कि) क़ुरआन पढ़ना चाहें तो शैतान मरदूद (के शर) से अल्लाह की पनाह माँग लिया करें (असल में तो दिल से ख़ुदा पर नज़र रखना है, और यही हक़ीक़त पनाह माँगने की वाजिब है, और क़ुरआन पढ़ने में अऊज़ु बिल्लाह का पढ़ लेना ज़बान से भी मस्नून है और पनाह माँगने का हुक्म हम इसलिये देते हैं कि) यक़ीनन उसका क़ाबू उन लोगों पर नहीं चलता जो ईमान रखते हैं और अपने रब पर (दिल से) भरोसा रखते हैं। बस उसका क़ाबू तो सिर्फ़ उन्हीं लोगों पर चलता है जो उससे ताल्लुक़ रखते हैं, और उन लोगों पर (चलता है) जो कि अल्लाह के साथ शिर्क करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने मुक़द्दिमा-ए-तफ़सीर में फ़रमाया कि इनसान के दुश्मन दो क़िस्म के हैं— एक ख़ुद इनसानी नस्ल में से जैसे आ़म काफ़िर लोग, दूसरे जिन्नात में से जो शैतान व नाफ़रमान हैं। पहली क़िस्म के दुश्मन के साथ इस्लाम ने जंग व जिहाद के ज़रिये अपनी रक्षा का हुक्म दिया है, मगर दूसरी क़िस्म के लिये सिर्फ़ अल्लाह से पनाह माँगने का हुक्म है। इसकी वजह यह है कि पहली क़िस्म का दुश्मन अपनी ही जिन्स व प्रजाति से है उसका हमला ज़ाहिर होकर होता है इसलिये उससे जंग व जिहाद फ़र्ज़ कर दिया गया, और शैतानी दुश्मन नज़र नहीं आता, उसका हमला भी इनसान पर आमने सामने नहीं होता, इसलिये उससे बचाव के लिये एक ऐसी ज़ात की पनाह लेना वाजिब किया गया जो न इनसान को नज़र आती है न शैतान को, और शैतान से बचाव को अल्लाह तआ़ला के हवाले करने में यह भी मस्लेहत है कि जो उससे मग़लूब (पराजित) हो जाये वह अल्लाह के नज़दीक मरदूद, ठुकराया हुआ और अ़ज़ाब का मुस्तहिक़ है, बख़िलाफ़ इनसानी दुश्मन यानी काफ़िरों के कि उनके मुक़ाबले में जो शख़्स मग़लूब हो जाये या मारा जाये तो वह शहीद और सवाब का मुस्तहिक़ है,

इसलिये इनसानी दुश्मन का मुक़ाबला हाथ-पैर और बदनी अंगों के साथ हर हाल में नफ़ा ही नफ़ा है, या तो दुश्मन पर ग़ालिब आकर उसकी ताक़त को ख़त्म कर देगा या फिर ख़ुद शहीद होकर अल्लाह के यहाँ अज्र व सवाब का हक़दार होगा।

मसलाः क़ुरआन की तिलावत से पहले 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' का पढ़ना इस आयत के हुक्म पर अ़मल करने के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है मगर कभी-कभी इसका छोड़ देना भी सही हदीसों से साबित है, इसलिये उलेमा-ए-उम्मत की अक्सरियत ने इस हुक्म को वाजिब नहीं बल्कि सुन्नत क़रार दिया है, और इब्ने जरीर तबरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस पर उम्मत की सहमति नक़ल की है, इस मामले में क़ौली व अ़मली हदीस की रिवायतें तिलावत से पहले अक्सर हालात में अऊज़ु बिल्लाह...... पढ़ने की और कुछ हालात में न पढ़ने की ये सब इमाम इब्ने कसीर ने अपनी तफ़सीर के शुरू में तफ़सील के साथ ज़िक्र की हैं।

मसलाः नमाज़ में तअ़व्वुज़ (यानी अऊज़ु बिल्लाह.......) सिर्फ़ पहली रक्अ़त के शुरू में पढ़ा जाये या हर रक्अ़त के शुरू में, इसमें फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) के अक़वाल अलग-अलग हैं, इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक सिर्फ़ पहली रक्अ़त में पढ़ना चाहिये, और इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाहि अ़लैहि हर रक्अ़त के शुरू में पढ़ने को मुस्तहब क़रार देते हैं, दोनों की दलीलें तफ़सीरे मज़हरी में विस्तार से लिखी गयी हैं। (पेज 49 जिल्द 5)

मसलाः क़ुरआन की तिलावत नमाज़ में हो या नमाज़ से बाहर दोनों सूरतों में तिलावत से पहले अऊज़ु बिल्लाह..... पढ़ना सुन्नत है, मगर एक दफ़ा पढ़ लिया तो आगे जितना पढ़ता रहे वही एक तअ़व्वुज़ काफ़ी है, अलबत्ता तिलावत को बीच में छोड़कर किसी दुनियावी काम में मश्ग़ूल हो गया और फिर दोबारा शुरू किया तो उस वक़्त दोबारा तअ़व्वुज़ और बिस्मिल्लाह पढ़ना चाहिये।

मसलाः क़ुरआन की तिलावत के अ़लावा किसी दूसरे कलाम या किताब पढ़ने से पहले अऊज़ु बिल्लाह..... पढ़ना सुन्नत नहीं, वहाँ सिर्फ़ बिस्मिल्लाह पढ़ना चाहिये। (दुर्रे मुख़्तार, शामी)

अलबत्ता मुख़्तलिफ़ आमाल और हालात में तअ़व्वुज़ (अऊज़ु बिल्लाह...... पढ़ने) की तालीम हदीस में मन्क़ूल है, जैसे जब किसी को ग़ुस्सा ज़्यादा आये तो हदीस में है कि अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम पढ़ने से ग़ुस्से का जोश ख़त्म हो जाता है। (इब्ने कसीर)

और हदीस में यह भी है कि बैतुलख़ला (लैट्रीन) में जाने से पहलेः

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْٓ اَعُوْذُبِكَ مِنَ الْخُبُثِ وَالْخَبَآئِثِ

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिनल् ख़ुब्सि वल्-ख़बाइसि'

पढ़ना मुस्तहब है। (शामी)

अल्लाह तआला पर ईमान व भरोसा शैतानी शिकंजे और क़ब्ज़े से मुक्ति का रास्ता है

इस आयत में यह स्पष्ट कर दिया कि अल्लाह तआला ने शैतान को ऐसी ताक़त नहीं दी कि वह किसी भी इनसान को बुराई पर मजबूर व बेइख़्तियार कर दे, इनसान ख़ुद अपने इख़्तियार व ताक़त को ग़फ़लत या किसी नफ़्सानी ग़र्ज़ से इस्तेमाल न करे तो यह उसका क़सूर है। इसी लिये फ़रमाया कि जो लोग अल्लाह पर ईमान रखते हैं और अपने हालात व आमाल में अपनी इरादी ताक़त के बजाय अल्लाह तआला पर भरोसा करते हैं कि वही हर ख़ैर की तौफ़ीक़ देने वाला और हर शर (बुराई) से बचाने वाला है, ऐसे लोगों पर शैतान का क़ब्ज़ा नहीं होता, हाँ जो अपनी नफ़्सानी ग़र्ज़ों के सबब शैतान ही से दोस्ती करते हैं, उसी की बातों को पसन्द करते हैं और अल्लाह तआला के साथ ग़ैरों को शरीक ठहराते हैं उन पर शैतान मुसल्लत हो जाता है कि किसी ख़ैर की तरफ़ नहीं जाने देता, और हर बुराई में वे आगे-आगे होते हैं।

यही मज़मून सूरः हिज्र की आयत का है जिसमें शैतान के दावे के मुक़ाबले में ख़ुद हक़ तआला ने यह जवाब दे दिया है:

اِنَّ عِبَادِیْ لَیْسَ لَکَ عَلَیْهِمْ سُلْطٰنٌ اِلَّا مَنِ اتَّبَعَکَ مِنَ الْغٰوِیْنَ○

"यानी मेरे ख़ास बन्दों पर तेरा तसल्लुत (क़ब्ज़ा व इख़्तियार) नहीं हो सकता, हाँ! उस पर होगा जो ख़ुद ही गुमराह हो और तेरी पैरवी करने लगे।"

وَاِذَا بَدَّلْنَآ اٰیَةً مَّكَانَ اٰیَةٍ ۙ وَّاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا یُنَزِّلُ قَالُوْٓا اِنَّمَآ اَنْتَ مُفْتَرٍ ؕ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا یَعْلَمُوْنَ ۝ قُلْ نَزَّلَهٗ رُوْحُ الْقُدُسِ مِنْ رَّبِّكَ بِالْحَقِّ لِیُثَبِّتَ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَهُدًى وَّبُشْرٰى لِلْمُسْلِمِیْنَ ۝ وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّهُمْ یَقُوْلُوْنَ اِنَّمَا یُعَلِّمُهٗ بَشَرٌ ؕ لِسَانُ الَّذِیْ یُلْحِدُوْنَ اِلَیْهِ اَعْجَمِیٌّ وَّهٰذَا لِسَانٌ عَرَبِیٌّ مُّبِیْنٌ ۝ اِنَّ الَّذِیْنَ لَا یُؤْمِنُوْنَ بِاٰیٰتِ اللّٰهِ ۙ لَا یَهْدِیْهِمُ اللّٰهُ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ ۝ اِنَّمَا یَفْتَرِی الْكَذِبَ الَّذِیْنَ لَا یُؤْمِنُوْنَ بِاٰیٰتِ اللّٰهِ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰذِبُوْنَ ۝

व इज़ा बद्दल्ना आ-यतम् मका-न आयतिंव्-वल्लाहु अअ्लमु बिमा युनज़्ज़िलु क़ालू इन्नमा अन्-त मुफ़्तरिन्, बल् अक्सरुहुम् ला	और जब हम बदलते हैं एक आयत की जगह दूसरी आयत और अल्लाह ख़ूब जानता है जो उतारता है तो कहते हैं तू तो बना लाता है यह बात, नहीं! पर उनमें से अक्सरों को ख़बर नहीं। (101)

यअ्लमून (101) क़ुल् नज़्ज़-लहू रूहुल्-क़ुदुसि मिर्रब्बि-क बिल्हक़्क़ि लियुसब्बितल्लज़ी-न आमनू व हुदंव्-व बुशरा लिल्-मुस्लिमीन (102) व ल-क़द् नअ्लमु अन्नहुम् यक़ूलू-न इन्नमा युअ़ल्लिमुहू ब-शरुन्, लिसानुल्लज़ी युल्हिदू-न इलैहि अअ्-जमिय्युंव्-व हाज़ा लिसानुन् अ़-रबिय्युम् मुबीन (103) इन्नल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिआयातिल्लाहि ला यह्दीहिमुल्लाहु व लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (104) इन्नमा यफ़्तरिल्-कज़िबल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिआयातिल्लाहि व उलाइ-क हुमुल्-काज़िबून (105)	तू कह इसको उतारा है पाक फ़रिश्ते ने तेरे रब की तरफ़ से बेशक, ताकि साबित करे "जमाये" ईमान वालों को और हिदायत और ख़ुशख़बरी मुसलमानों के वास्ते। (102) और हमको ख़ूब मालूम है कि वे कहते हैं– इसको सिखलाता है एक आदमी, जिसकी तरफ़ तारीज "इशारा और निस्बत" करते हैं उसकी भाषा है अ़जमी और यह क़ुरआन अ़रबी भाषा है साफ़। (103) वे लोग जिनको अल्लाह की बातों पर यक़ीन नहीं उनको अल्लाह राह नहीं देता और उनके लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है। (104) झूठ तो वे लोग बनाते हैं जिनको यक़ीन नहीं अल्लाह की बातों पर और वही लोग झूठे हैं। (105)

इन आयतों का पीछे के मज़मून से ताल्लुक़

इससे पहली आयत में क़ुरआन की तिलावत के वक़्त अऊज़ु बिल्लाह पढ़ने की हिदायत थी जिसमें इशारा है कि शैतान तिलावत के वक़्त इनसान के दिल में वस्वसे (बुरे ख़्यालात) डालता है, अब इन आयतों में इसी तरह के शैतानी वस्वसों का जवाब है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

नुबुव्वत पर काफ़िरों के शुब्हात का जवाब मय डरावे के

और जब हम किसी आयत को दूसरी आयत की जगह बदलते हैं (यानी एक आयत को लफ़्ज़ी या मानवी तौर पर निरस्त करके उसकी जगह दूसरा हुक्म भेज देते हैं) और हालाँकि अल्लाह तआ़ला जो हुक्म (पहली मर्तबा या दूसरी मर्तबा) भेजता है (उसकी मस्लेहत व हिक्मत को) वही ख़ूब जानता है (कि जिनको यह हुक्म दिया गया है उनके हालात के एतिबार से एक

वक़्त में मस्लेहत कुछ थी, फिर हालत बदल जाने से मस्लेहत और हिक्मत दूसरी हो गई) तो ये लोग कहते हैं कि (मआज़ल्लाह) आप (ख़ुदा पर) गढ़ने वाले हैं (कि अपने कलाम को अल्लाह की तरफ़ मन्सूब कर देते हैं, वरना अल्लाह का हुक्म होता तो उसके बदलने की क्या ज़रूरत थी, क्या अल्लाह तआला को पहले इल्म न था, और ये लोग इस पर ग़ौर नहीं करते कि कई बार सब हालात का इल्म होने के बावजूद पहली हालत पेश आने पर पहला हुक्म दिया जाता है और दूसरी हालत पेश आने का अगरचे उस वक़्त भी इल्म है मगर मस्लेहत के तक़ाज़े के तहत उस दूसरी हालत का हुक्म उस वक़्त बयान नहीं किया जाता, बल्कि जब वह हालत पेश आ जाती है उस वक़्त बयान किया जाता है। जैसे तबीब डॉक्टर एक दवा तजवीज़ करता है और वह जानता है कि इसके इस्तेमाल से हालत बदलेगी और फिर दूसरी दवा दी जायेगी, मगर मरीज़ को शुरू ही में सब तफ़सील नहीं बताता, यही हक़ीक़त अहकाम के बदलने और निरस्त होने की है जो क़ुरआन व सुन्नत में होता है, जो हक़ीक़त से वाक़िफ़ नहीं वह शैतानी बहकावे से अहकाम के बदलने और निरस्त होने का इनकार करने लगते हैं, इसी लिये इसके जवाब में हक़ तआला ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह की तरफ़ झूठी निस्बत करने वाले और कलाम को गढ़ने वाले नहीं) बल्कि उन्हीं में के अक्सर लोग जाहिल हैं (कि अहकाम में रद्दोबदल को बिना किसी दलील के अल्लाह का कलाम होने के ख़िलाफ़ समझते हैं)। आप (उनके जवाब में) फ़रमा दीजिये (कि यह कलाम मेरा बनाया हुआ नहीं बल्कि इसको) रूहुल-क़ुदुस (यानी जिब्रील अ़लैहिस्सलाम) आपके रब की तरफ़ से हिक्मत के मुवाफ़िक़ लाये हैं (इसलिये यह कलाम अल्लाह का कलाम है, और इसमें अहकाम की तब्दीली हिक्मत व मस्लेहत के तक़ाज़े के मुताबिक़ है, और यह कलाम इसलिये भेजा गया है) ताकि ईमान वालों को (ईमान पर) साबित-क़दम रखे और मुसलमानों के लिये हिदायत और ख़ुशख़बरी (का ज़रिया) हो जाये।

(इसके बाद काफ़िरों के एक और बेहूदा शुब्हे का जवाब है) और हमको मालूम है कि ये लोग (एक दूसरी ग़लत बात) यह भी कहते हैं कि इनको तो आदमी सिखला जाता है (इससे मुराद एक अ़जमी रूम का बाशिन्दा लुहार है, जिसका नाम बलआम या मक़ीस था, वह हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें जी लगाकर सुनता तो हुज़ूरे पाक कभी उसके पास जा बैठते और वह कुछ इन्जील वग़ैरह को भी जानता था, इस पर काफ़िरों ने यह बात चलती की कि यही शख़्स हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़ुरआन का कलाम सिखाता है। इसका ज़िक्र किताब दुर्रे मन्सूर में है। अल्लाह तआला ने इसका जवाब दिया कि क़ुरआन मजीद तो अलफ़ाज़ व मायनों के मजमूए का नाम है, तुम लोग अगर क़ुरआने करीम के मायनों और उलूम को नहीं पहचान सकते तो कम से कम अ़रबी भाषा के मेयारी स्तर और आला ख़ूबी व कमाल से तो नावाक़िफ़ नहीं हो, तो इतना तो तुम्हें समझना चाहिये कि अगर फ़र्ज़ करो क़ुरआन के मायने उस शख़्स ने सिखला दिये हों तो कलाम के अलफ़ाज़ और उनकी ऐसी आला मेयारी जिसका मुक़ाबला करने से पूरा अ़रब आजिज़ हो गया यह कहाँ से आ गई, क्योंकि) जिस शख़्स की तरफ़ उसकी निस्बत करते हैं उसकी भाषा तो अ़जमी "यानी ग़ैर-अ़रबी" है, और यह

क़ुरआन साफ़ अ़रबी है (कोई अ़जमी बेचारा ऐसी इबारत कैसे बना सकता है। और अगर कहा जाये कि इबारत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बनाई होगी तो इसका खुला जवाब उस चुनौती से पूरी तरह हो चुका है जो सूरः ब-क़रह में आ चुका है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह के हुक्म से अपनी नुबुव्वत और क़ुरआन की हक़्क़ानियत का मेयार इसी को क़रार दिया था, कि अगर तुम्हारे कहने के मुताबिक़ यह इनसान का कलाम है तो तुम भी इनसान हो और अ़रबी भाषा में आला महारत और बड़ी फ़साहत व बलाग़त के दावेदार हो तो तुम इस जैसा कलाम ज़्यादा नहीं तो एक आयत ही के बराबर लिख लाओ, मगर सारा अ़रब इसके बावजूद कि आपके मुक़ाबले में अपना सब कुछ जान व माल क़ुरबान करने को तैयार था मगर इस चेलैंज को क़ुबूल करने की किसी को हिम्मत न हुई। इसके बाद नुबुव्वत के इनकारियों और क़ुरआन पर ऐसे एतिराज़ करने वालों पर वईद और सज़ा की धमकी है कि) जो लोग अल्लाह की आयतों पर ईमान नहीं लाते उनको अल्लाह तआ़ला कभी राह पर न लाएँगे, और उनके लिये दर्दनाक सज़ा होगी (और ये लोग जो नऊज़ु बिल्लाह आपको अल्लाह पर झूठ गढ़ने वाला कहते हैं तो) झूठ गढ़ने वाले तो यही लोग हैं जो अल्लाह की आयतों पर ईमान नहीं रखते, और ये लोग हैं पूरे झूठे।

مَنْ كَفَرَ بِاللّٰهِ مِنْۢ بَعْدِ اِيْمَانِهٖٓ اِلَّا مَنْ اُكْرِهَ وَ قَلْبُهٗ مُطْمَئِنٌّۢ بِالْاِيْمَانِ وَلٰكِنْ مَّنْ شَرَحَ بِالْكُفْرِ صَدْرًا فَعَلَيْهِمْ غَضَبٌ مِّنَ اللّٰهِ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمُ اسْتَحَبُّوا الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا عَلَى الْاٰخِرَةِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ طَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ وَسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْغٰفِلُوْنَ ۝ لَا جَرَمَ اَنَّهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝

मन् क-फ़-र बिल्लाहि मिम्-बअ़्दि ईमानिही इल्ला मन् उक्रि-ह व क़ल्बुहू मुत्मइन्नुम्-बिल्ईमानि व लाकिम्-मन् श-र-ह बिल्कुफ़्रि सद्रन् फ़-अ़लैहिम् ग़-ज़बुम्-मिनल्लाहि व लहुम् अ़ज़ाबुन् अ़ज़ीम (106) ज़ालि-क बिअन्नहुमुस्त-हब्बुल्-हयातद्दुन्या अ़लल्-आख़िरति व	जो कोई मुन्किर हुआ अल्लाह से यक़ीन लाने के बाद मगर वह नहीं जिस पर ज़बरदस्ती की गई और उसका दिल बरक़रार है ईमान पर, व लेकिन जो कोई दिल खोल मुन्किर हुआ सो उन पर ग़ज़ब है अल्लाह का और उनको बड़ा अ़ज़ाब है। (106) यह इस वास्ते कि उन्होंने अज़ीज़ "पसन्दीदा" रखा दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत से और अल्लाह

अन्नल्ला-ह ला यह्दिल् कौमल्-काफ़िरीन (107) उलाइ-कल्लज़ी-न त-बअ़ल्लाहु अ़ला क़ुलूबिहिम् व सम्अिहिम् व अब्सारिहिम् व उलाइ-क हुमुल्-ग़ाफ़िलून (108) ला ज-र-म अन्नहुम् फ़िल्आख़िरति हुमुल्-ख़ासिरून (109)	रस्ता नहीं देता मुन्किर लोगों को। (107) ये वही हैं कि मुहर कर दी अल्लाह ने इनके दिलों पर और कानों पर और आँखों पर और यही हैं बेहोश। (108) ख़ुद ज़ाहिर है कि आख़िरत में यही लोग ख़राब हैं। (109)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो शख़्स ईमान लाने के बाद अल्लाह के साथ कुफ़्र करे (इसमें रसूल के साथ कुफ़्र करना और क़ियामत वग़ैरह का इनकार करना सब दाख़िल हैं) मगर जिस शख़्स पर (काफ़िरों की तरफ़ से) ज़बरदस्ती की जाये (जैसे कि अगर तू कुफ़्र का फ़ुलाँ कलाम या फ़ुलाँ बात नहीं करेगा तो हम तुझको कत्ल कर देंगे और हालात से इसका अन्दाज़ा भी हो कि वे ऐसा कर सकते हैं) शर्त यह है कि उसका दिल ईमान पर मुत्मईन हो (यानी अक़ीदे में कोई ख़राबी न आये और उस क़ौल व फ़ेल को सख़्त गुनाह और बुरा समझता हो तो वह इस हुक्म से बाहर है कि उसका ज़ाहिरी तौर पर कलिमा-ए-कुफ़्र या कुफ़्र के काम में मुब्तला हो जाना एक उज़्र की बिना पर है, इसलिये जो सज़ा की वईद इस्लाम से फिर जाने और विमुख हो जाने की आगे आ रही है वह ऐसे शख़्स के लिये नहीं) लेकिन हाँ जो जी खोलकर (यानी उस कुफ़्र को सही और अच्छा समझकर) कुफ़्र करे तो ऐसे लोगों पर अल्लाह तआ़ला का ग़ज़ब होगा और उनको बड़ी सज़ा होगी। (और) यह (ग़ज़ब व अ़ज़ाब) इस सबब से होगा कि उन्होंने दुनियावी ज़िन्दगी को आख़िरत के मुक़ाबले में अ़ज़ीज़ "पसन्दीदा और प्यारा" रखा, और इस सबब से होगा कि अल्लाह ऐसे काफ़िरों को (जो दुनिया को हमेशा आख़िरत पर तरजीह दें) हिदायत नहीं किया करता (ये दो सबब अलग-अलग नहीं बल्कि सबब का मजमूआ़ है। हासिल इसका यह है कि किसी काम के इरादे के बाद अल्लाह की आ़दत यह है कि उस काम का वजूद में आना होता है जिस पर उस काम का सादिर व ज़ाहिर होना मुरत्तब होता है, यहाँ पर 'अ़ज़ीज़ रखने' से इरादा और 'हिदायत नहीं करता' से उसके वजूद में आने की तरफ़ इशारा है, और इस मजमूए पर उस बुरे फ़ेल का सादिर व ज़ाहिर होना मुरत्तब है)। ये वे लोग हैं कि (दुनिया में इनके कुफ़्र पर अड़े और जमे रहने की हालत यह है कि) अल्लाह तआ़ला ने इनके दिलों पर और कानों पर और आँखों पर मुहर लगा दी है, और ये लोग (अन्जाम से) बिल्कुल ग़ाफ़िल हैं (इसलिये) लाज़िमी बात है कि आख़िरत में ये लोग बिल्कुल घाटे में रहेंगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मसलाः इस आयत से साबित हुआ कि जिस शख़्स को कलिमा-ए-कुफ़्र कहने पर इस तरह मजबूर कर दिया गया कि यह कलिमा न कहे तो उसको क़त्ल कर दिया जाये, और यह भी ग़ालिब गुमान से मालूम हो कि धमकी देने वाले को इस पर पूरी क़ुदरत हासिल है, तो ऐसे मजबूर करने की हालत में अगर वह ज़बान से कुफ़्र का कलिमा कह दे मगर उसका दिल ईमान पर जमा हुआ हो और उस कलिमे को बातिल और बुरा जानता हो तो उस पर कोई गुनाह नहीं और न उसकी बीवी उस पर हराम होगी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

यह आयत उन सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के बारे में नाज़िल हुई जिनको मुश्रिकों ने गिरफ़्तार कर लिया था और कहा था कि या तो वे कुफ़्र इख़्तियार करें वरना क़त्ल कर दिये जायेंगे।

ये गिरफ़्तार होने वाले हज़रात हज़रत अ़म्मार और उनके माँ-बाप यासिर और सुमैया और सुहैब और बिलाल और ख़ब्बाब रज़ियल्लाहु अ़न्हुम थे, जिनमें से हज़रत यासिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनकी बीवी सुमैया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने कुफ़्र का कलिमा बोलने से क़तई इनकार किया, हज़रत यासिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को क़त्ल कर दिया गया और हज़रत सुमैया रज़ियल्लाहु अ़न्हा को दो ऊँटों के बीच बाँधकर दौड़ाया गया जिससे उनके दो टुकड़े अलग-अलग होकर शहीद हुईं, और यही दो बुज़ुर्ग हैं जिनको इस्लाम की ख़ातिर सबसे पहले शहादत नसीब हुई। इसी तरह हज़रत ख़ब्बाब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने कुफ़्र का कलिमा बोलने से क़तई इनकार करके बड़े इत्मीनान के साथ क़त्ल किये जाने को क़ुबूल किया, उनमें से हज़रत अ़म्मार रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जान के ख़ौफ़ से ज़बानी कुफ़्र का इक़रार कर लिया मगर दिल उनका ईमान पर मुत्मईन और जमा हुआ था। जब ये दुश्मनों से रिहाई पाकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो बड़े रंज व ग़म के साथ इस वाक़िए का इज़हार किया। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे पूछा कि जब तुम यह कलिमा बोल रहे थे तो तुम्हारे दिल का क्या हाल था, उन्होंने अ़र्ज़ किया कि दिल तो ईमान पर मुत्मईन और जमा हुआ था, इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको मुत्मईन किया कि तुम पर उसका कोई वबाल नहीं। आपके इस फ़ैसले की तस्दीक़ में यह आयत नाज़िल हुई। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

मजबूर और ज़बरदस्ती करने का मतलब और उसकी हद

इक्राह के लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि किसी शख़्स को ऐसे क़ौल व फ़ेल पर मजबूर किया जाये जिसके कहने या करने पर वह राज़ी नहीं। फिर उसके दो दर्जे हैं— एक दर्जा इक्राह का यह है कि वह दिल से तो उस पर आमादा नहीं मगर ऐसा बेइख़्तियार व बेक़ाबू भी नहीं कि इनकार न कर सके, यह फ़ुक़हा की इस्तिलाह में 'इक्राह ग़ैर-मुलजी' कहलाता है, ऐसे इक्राह से कोई कुफ़्र का कलिमा कहना या किसी हराम फ़ेल को करना जायज़ नहीं होता, अलबत्ता कुछ

आंशिक अहकाम में इस पर भी कुछ आसार मुरत्तब होते हैं जो मसाईल की किताबों में तफ़सील से बयान हुए हैं।

दूसरा दर्जा इक्राह (मजबूर करने) का यह है कि वह बिल्कुल बेइख़्तियार कर दिया जाये कि अगर वह मजबूर करने वालों के कहने पर अमल न करे तो उसको क़त्ल कर दिया जायेगा, या उसका कोई बदनी हिस्सा काट दिया जायेगा, यह फ़ुक़हा की इस्तिलाह में 'इक्राह मुलजी' कहलाता है, जिसके मायने हैं ऐसा इक्राह (मजबूर करना) जो इनसान को बेइख़्तियार और पूरी तरह मजबूर कर दे, ऐसे इक्राह (मजबूर करने) की हालत में कुफ़्र का कलिमा ज़बान से कह देना बशर्तेकि दिल ईमान पर मुत्मईन हो जायज़ है। इसी तरह दूसरे इनसान को क़त्ल करने के अलावा और कोई हराम फ़ेल करने पर मजबूर कर दिया जाये तो इसमें भी कोई गुनाह नहीं।

मगर दोनों क़िस्म के इक्राह (मजबूर करने) में शर्त यह है कि इक्राह करने वाला जिस काम की धमकी दे रहा है वह उस पर क़ादिर भी हो, और जो शख़्स फंसा हुआ है उसको ग़ालिब गुमान यह हो कि अगर मैं इसकी बात न मानूँगा तो जिस चीज़ की धमकी दे रहा है वह उसको ज़रूर कर डालेगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

मसलाः मामलात दो क़िस्म के हैं-- एक वो जिनमें दिल से रज़ामन्द होना ज़रूरी है, जैसे ख़रीद व फ़रोख़्त और हिबा वग़ैरह कि उनमें दिल से रज़ामन्द होना मामले के लिये शर्त है क़ुरआन के हुक्म व बयान के मुताबिक़ः

إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ.

"यानी किसी दूसरे शख़्स का माल हलाल नहीं होता जब तक तिजारत वग़ैरह का मामला दोनों पक्षों की रज़ामन्दी से न हो।" और हदीस में हैः

لَا يَحِلُّ مَالُ امْرِءٍ مُّسْلِمٍ إِلَّا بِطِيْبِ نَفْسٍ مِّنْهُ.

"यानी किसी मुसलमान का माल उस वक़्त तक हलाल नहीं जब तक वह दिल की ख़ुशी से उसके देने पर राज़ी न हो।"

ऐसे मामलात अगर इक्राह के साथ करा लिये जायें तो शरई तौर पर उनका कोई एतिबार नहीं। इक्राह (मजबूर करने) की हालत से निकलने के बाद उसको इख़्तियार होगा कि मजबूर करने की हालत में जो ख़रीद व बेच या हिबा वग़ैरह किया था उसको अपनी रज़ा से बाक़ी रखे या ख़त्म कर दे।

और कुछ मामलात ऐसे भी हैं जिनमें सिर्फ़ ज़बान से अलफ़ाज़ कह देने पर मदार है, दिल का इरादा व क़स्द या रज़ा व ख़ुशी शर्त नहीं, जैसे निकाह, तलाक़, रजई तलाक़ के बाद बीवी को वापस लौटा लेना, गुलाम-बाँदी वग़ैहर आज़ाद करना वग़ैरह, ऐसे मामलात के मुताल्लिक़ हदीस में इरशाद हैः

ثلث جدّهنّ جدّ وهزلهنّ جدّ النكاح والطلاق والرّجعة (رواه ابوداؤد والترمذی وحسنه)

(यानी अगर दो शख़्स ज़बान से निकाह का ईजाब व क़ुबूल शर्तों के मुताबिक़ कर लें या

कोई शौहर अपनी बीवी को ज़बान से तलाक़ दे दे या तलाक़ के बाद ज़बान से रजूअ़त करे चाहे वह हंसी-मज़ाक़ के तौर पर हो दिल में इरादा निकाह या तलाक़ या रजूअ़त का न हो, फिर भी महज़ अलफ़ाज़ के कहने से निकाह आयोजित हो जायेगा और तलाक़ पड़ जायेगी, तथा रजूअ़त सही हो जायेगी। तफ़सीरे मज़हरी)

इमामे आज़म अबू हनीफ़ा, इमाम शअ़बी, इमाम ज़ोहरी, इमाम नख़ई और इमाम क़तादा रहमतुल्लाहि अ़लैहिम के नज़दीक मजबूर किये गये शख़्स की तलाक़ का भी यही हुक्म है कि इक्राह (मजबूर करने) की हालत में अगरचे वह तलाक़ देने पर दिल से आमादा नहीं था, मजबूर होकर तलाक़ के अलफ़ाज़ कह दिये, और तलाक़ के वाक़े होने का ताल्लुक़ सिर्फ़ तलाक़ के अलफ़ाज़ अदा कर देने से है, दिल का क़स्द व इरादा शर्त नहीं, जैसा कि उक्त हदीस से साबित है, इसलिये यह तलाक़ वाक़े हो जायेगी।

मगर इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाहि अ़लैहि और हज़रत अ़ली और इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा के नज़दीक मजबूर करने की हालत की तलाक़ वाक़े न होगी क्योंकि हदीस में है:

رُفِعَ عَنْ اُمَّتِی الْخَطَاءُ وَالنِّسْیَانُ وَ مَااسْتُکْرِهُوْا عَلَیْہِ (رواہ الطبرانی عن ثوبانؓ)

"यानी मेरी उम्मत से ख़ता और भूल और जिस चीज़ पर उनको बेक़रार व मजबूर कर दिया जाये सब उठा दिये गये।"

इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक यह हदीस आख़िरत के अहकाम से संबन्धित है कि ख़ता या भूल से या इक्राह (मजबूर करने) की हालत में जो कोई क़ौल व फ़ेल शरीअ़त के ख़िलाफ़ कर लिया उस पर कोई गुनाह नहीं होगा, बाक़ी रहे दुनिया के अहकाम और वो परिणाम जो उस फ़ेल पर मुरत्तब हो सकते हैं उनका वाक़े व उत्पन्न होना तो महसूस और आँखों देखा है, और दुनिया में इस वाक़े होने पर जों आसार व अहकाम मुरत्तब होते हैं वो होकर रहेंगे। जैसे किसी ने किसी को ग़लती से क़त्ल कर दिया तो उसको क़त्ल का गुनाह और आख़िरत की सज़ा तो बेशक न होगी मगर जिस तरह क़त्ल का महसूस असर मक़्तूल की जान का चला जाना वाक़े है इसी तरह उसका यह शरई असर भी साबित होगा कि उसकी बीवी इद्दत के बाद दूसरा निकाह कर सकेगी, उसका माल विरासत में तक़सीम हो जायेगा। इसी तरह जब तलाक़ या निकाह या रजूअ़त के अलफ़ाज़ ज़बान से अदा कर दिये तो उनका शरई असर भी साबित हो जायेगा। (तफ़सीरे मज़हरी व क़ुर्तुबी। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम)

ثُمَّ اِنَّ رَبَّکَ لِلَّذِیْنَ هَاجَرُوْا مِنْۢ بَعْدِ مَا فُتِنُوْا ثُمَّ جٰهَدُوْا وَصَبَرُوْٓا ۙ اِنَّ رَبَّکَ مِنْۢ بَعْدِهَا لَغَفُوْرٌ رَّحِیْمٌ ﴿۱۱۰﴾ یَوْمَ تَاْتِیْ کُلُّ نَفْسٍ تُجَادِلُ عَنْ نَّفْسِهَا وَتُوَفّٰی کُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ وَهُمْ لَا یُظْلَمُوْنَ ﴿۱۱۱﴾ وَضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا قَرْیَةً کَانَتْ اٰمِنَةً مُّطْمَئِنَّةً یَّاْتِیْهَا رِزْقُهَا رَغَدًا مِّنْ کُلِّ مَکَانٍ فَکَفَرَتْ بِاَنْعُمِ اللّٰهِ فَاَذَاقَهَا اللّٰهُ لِبَاسَ الْجُوْعِ وَالْخَوْفِ بِمَا کَانُوْا یَصْنَعُوْنَ ﴿۱۱۲﴾ وَلَقَدْ جَآءَهُمْ رَسُوْلٌ مِّنْهُمْ فَکَذَّبُوْهُ فَاَخَذَهُمُ الْعَذَابُ وَهُمْ ظٰلِمُوْنَ ﴿۱۱۳﴾

सुम्-म इन्-न रब्ब-क लिल्लज़ी-न हाजरू मिम्-बअ्दि मा फ़ुतिनू सुम्-म जाहदू व स-बरू इन्-न रब्ब-क मिम्-बअ्दिहा ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (110) ✿	फिर बात यह है कि तेरा रब उन लोगों पर कि उन्होंने वतन छोड़ा है बाद उसके कि मुसीबत उठाई फिर जिहाद करते रहे और क़ायम रहे, बेशक तेरा रब इन बातों के बाद बख़्शने वाला मेहरबान है। (110) ✿
यौ-म तअ्ती कुल्लु नफ़्सिन् तुजादिलु अ़न् नफ़्सिहा व तुवफ़्फ़ा कुल्लु नफ़्सिम्-मा अ़मिलत् व हुम् ला युज़्लमून (111) व ज़-रबल्लाहु म-सलन् क़र्-यतन् कानत् आमि-नतम्-मुत्मइन्नतंय्-यअ्तीहा रिज़्क़ुहा र-ग़दम्-मिन् कुल्लि मकानिन् फ़-क-फ़रत् बिअन्अुमिल्लाहि फ़-अज़ा-क़हल्लाहु लिबासल्-जूअि वल्ख़ौफ़ि बिमा कानू यस्नअून (112) व ल-क़द् जाअहुम् रसूलुम्-मिन्हुम् फ़-कज़्ज़बूहु फ़-अ-ख़-ज़हुमुल्-अ़ज़ाबु व हुम् ज़ालिमून (113)	जिस दिन आयेगा हर जी जवाब-सवाल करता अपनी तरफ़ से और पूरा मिलेगा हर किसी को जो उसने कमाया और उन पर ज़ुल्म न होगा। (111) और बतलाई अल्लाह ने एक मिसाल एक बस्ती थी, चैन अमन से चली आती थी उसको रोज़ी फ़रागत की हर जगह से, फिर नाशुक्री की अल्लाह के एहसानों की, फिर चखाया उसको अल्लाह ने मज़ा कि उनके तन के कपड़े हो गये भूख और डर, बदला उस का जो वे करते थे। (112) और उनके पास पहुँच चुका रसूल उन्हीं में का फिर उसको झुठलाया, फिर आ पकड़ा उनको अ़ज़ाब ने और वे गुनाहगार थे। (113)

इन आयतों का पीछे के मज़मून से संबन्ध

पिछली आयतों में कुफ़्र पर वईद (सज़ा के ऐलान) का ज़िक्र था, चाहे कुफ़्र असली हो या दीन इस्लाम क़ुबूल कर लेने के बाद उससे फिर जाने का कुफ़्र। इसके बाद की ज़िक्र होने वाली तीन आयतों में से पहली आयत में यह बतलाया गया है कि ईमान ऐसी दौलत है कि जो काफ़िर या मुर्तद सच्चा ईमान ले आये उसके पिछले सब गुनाह माफ़ हो जाते हैं।

दूसरी आयत में क़ियामत का ज़िक्र इसलिये किया गया कि यह जज़ा व सज़ा सब क़ियामत के बाद ही होने वाली है। तीसरी आयत में यह बतलाया गया कि कुफ़्र व नाफ़रमानी की असली सज़ा तो क़ियामत के बाद ही मिलेगी मगर कुछ गुनाहों की सज़ा दुनिया में भी कुछ मिल जाती है। तीनों आयतों की मुख़्तसर तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर (अगर कुफ़्र के बाद ये लोग ईमान ले आयें तो) बेशक आपका रब ऐसे लोगों के लिये कि जिन्होंने कुफ़्र में मुब्तला होने के बाद (ईमान लाकर) हिजरत की, फिर जिहाद किया और (ईमान पर) क़ायम रहे, तो आपका रब (ऐसे लोगों के लिये) इन (आमाल) के बाद बड़ी मग़फ़िरत करने वाला, बड़ी रहमत करने वाला है (यानी ईमान और नेक आमाल की बरकत से सब पिछले गुनाह माफ़ हो जायेंगे और अल्लाह तआ़ला की रहमत से उनको जन्नत में बड़े-बड़े दर्जे मिलेंगे। कुफ़्र से पहले के गुनाह तो सिर्फ़ ईमान से माफ़ हो जाते हैं, जिहाद वग़ैरह नेक आमाल माफ़ी की शर्त नहीं, लेकिन नेक आमाल जन्नत के दर्जे मिलने के असबाब हैं, इसलिये इसके साथ ज़िक्र कर दिया गया)।

(और यह उक्त जज़ा व सज़ा उस दिन वाक़े होगी) जिस दिन हर शख़्स अपनी-अपनी तरफ़दारी में गुफ़्तगू करेगा (और दूसरों को न पूछेगा) और हर शख़्स को उसके किये का पूरा बदला मिलेगा (यानी नेकी के बदले में कमी न होगी, अगरचे अल्लाह की रहमत से ज़्यादती हो जाने की संभावना है, और बदी के बदले में ज़्यादती न होगी हाँ यह मुम्किन है कि रहमत से उसमें कुछ कमी हो जाये। यही मतलब है इसका कि) उन पर ज़ुल्म न किया जायेगा। (इसके बाद यह बतलाया गया है कि अगरचे कुफ़्र व नाफ़रमानी की पूरी सज़ा हश्र के बाद होगी मगर कभी दुनिया में भी उसका वबाल अ़ज़ाब की सूरत में आ जाता है)। और अल्लाह तआ़ला एक बस्ती वालों की अ़जीब हालत बयान फ़रमाते हैं कि वे (बड़े) अमन व इत्मीनान में रहते थे (और) उनके खाने-पहनने की चीज़ें बड़ी फ़रागत से चारों तरफ़ से उनके पास पहुँचा करती थीं (उन लोगों ने अल्लाह की नेमतों का शुक्र अदा न किया बल्कि) उन्होंने ख़ुदा की नेमतों की बेक़द्री की (यानी कुफ़्र व शिर्क और नाफ़रमानी में मुब्तला हो गये)। इस पर अल्लाह तआ़ला ने उनको उनकी हरकतों के सबब एक घेरने वाले क़हत और ख़ौफ़ का मज़ा चखाया (कि माल व दौलत की फ़रावानी छिनकर क़हत "सूखे) और भूख में मुब्तला हो गये, और दुश्मनों का ख़ौफ़ मुसल्लत करके उनकी बस्तियों का अमन व इत्मीनान भी छीन लिया)। और (इस सज़ा में हक़ तआ़ला की तरफ़ से कुछ जल्दी नहीं की गई बल्कि पहले इसकी चेतावनी व इस्लाह के वास्ते) उनके पास उन्हीं में का एक रसूल भी (अल्लाह की तरफ़ से) आया (जिसकी सच्चाई व ईमानदारी का हाल ख़ुद अपनी क़ौम में होने की वजह से उनको पूरी तरह मालूम था)। सो उस (रसूल) को (भी) उन्होंने झूठा बतलाया तब उनको अ़ज़ाब ने आन पकड़ा, जबकि वे बिल्कुल ही ज़ुल्म पर कमर बाँधने लगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आख़िरी आयत में भूख और ख़ौफ़ का मज़ा चखाने के लिये लफ़्ज़ लिबास इस्तेमाल

फ़रमाया कि लिबास भूख और ख़ौफ़ का उनको चखाया गया, हालाँकि लिबास चखने की चीज़ नहीं, मगर यहाँ लिबास का लफ़्ज़ पूरी तरह घेरने और समेटने वाला होने के लिये तश्बीह के तौर पर इस्तेमाल हुआ है, कि यह भूख और ख़ौफ़ उन सब के सब पर ऐसा छा गया कि जिस तरह लिबास बदन के साथ एक अनिवार्य और लाज़िमी चीज़ बन जाता है, ये भूख और ख़ौफ़ भी उन पर इसी तरह मुसल्लत कर दिये गये।

यह मिसाल जो इस आयत में बयान की गई है तफ़सीर के कुछ इमामों के नज़दीक तो आ़म मिसाल है, किसी ख़ास बस्ती से इसका ताल्लुक़ नहीं, और अक्सर हज़रात ने इसको मक्का मुकर्रमा का वाक़िआ़ क़रार दिया कि वे सात साल तक सख़्त सूखे में मुब्तला रहे, कि मुर्दार जानवर और कुत्ते और गन्दगियाँ खाने पर मजबूर हो गये, और मुसलमानों का ख़ौफ़ उन पर मुसल्लत हो गया। फिर मक्का के सरदारों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि कुफ़्र व नाफ़रमानी के क़सूरवार तो मर्द हैं औरतें, बच्चे तो बेक़सूर हैं, इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके लिये मदीना तय्यिबा से खाने वग़ैरह का सामान भिजवा दिया। (तफ़सीरे मज़हरी)

और अबू सुफ़ियान ने कुफ़्र की हालत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से दरख़्वास्त की कि आप तो सिला-रहमी और माफ़ी व दरगुज़र की तालीम देते हैं, यह आपकी क़ौम तबाह हुई जाती है, अल्लाह तआ़ला से दुआ़ कीजिये कि यह क़हत (सूखा) हम से दूर हो जाये, इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके लिये दुआ़ फ़रमाई और क़हत ख़त्म हुआ। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

فَكُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللَّهُ حَلَالًا طَيِّبًا ۖ وَاشْكُرُوا نِعْمَتَ اللَّهِ إِن كُنتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١١٤﴾ إِنَّمَا
حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنزِيرِ وَمَا أُهِلَّ لِغَيْرِ اللَّهِ بِهِ ۖ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا
عَادٍ فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١١٥﴾ وَلَا تَقُولُوا لِمَا تَصِفُ أَلْسِنَتُكُمُ الْكَذِبَ هَٰذَا حَلَالٌ وَ
هَٰذَا حَرَامٌ لِّتَفْتَرُوا عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ ۚ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ
لَا يُفْلِحُونَ ﴿١١٦﴾ مَتَاعٌ قَلِيلٌ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١١٧﴾ وَعَلَى الَّذِينَ هَادُوا حَرَّمْنَا مَا
قَصَصْنَا عَلَيْكَ مِن قَبْلُ ۖ وَمَا ظَلَمْنَاهُمْ وَلَٰكِن كَانُوا أَنفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١١٨﴾ ثُمَّ إِنَّ رَبَّكَ
لِلَّذِينَ عَمِلُوا السُّوءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابُوا مِن بَعْدِ ذَٰلِكَ وَأَصْلَحُوا إِنَّ رَبَّكَ مِن بَعْدِهَا
لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١١٩﴾

फ़कुलू मिम्मा र-ज़-क़कुमुल्लाहु हलालन् तय्यिबंव्-वश्कुरू	सो खाओ जो रोज़ी दी तुमको अल्लाह ने हलाल और पाक, और शुक्र करो अल्लाह

निअ्-मतल्लाहि इन् कुन्तुम् इय्याहु तअ्बुदून (114) इन्नमा हर्र-म अ़लैकुमुल्-मैत-त वद्द-म व लह्मल्-ख़िन्ज़ीरि व मा उहिल्-ल लिग़ैरिल्लाहि बिही फ़-मनिज़्तुर्-र ग़ै-र बाग़िंव्-व ला आदिन् फ़-इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (115) व ला तक़ूलू लिमा तसिफ़ु अल्सि-नतुकुमुल्-कज़ि-ब हाज़ा हलालुंव्-व हाज़ा हरामुल्-लितफ़्तरू अ़लल्लाहिल्-कज़ि-ब, इन्नल्लज़ी-न यफ़्तरू-न अ़लल्लाहिल्-कज़ि-ब ला युफ़्लिहून (116) मताअ़ुन् क़लीलुंव्-व लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (117) व अ़लल्लज़ी-न हादू हर्रम्ना मा क़सस्ना अ़लै-क मिन् क़ब्लु व मा ज़लम्नाहुम् व लाकिन् कानू अन्फ़ु-सहुम् यज़्लिमून (118) सुम्-म इन्-न रब्ब-क लिल्लज़ी-न अ़मिलुस्--सू-अ बि-जहालतिन् सुम्-म ताबू मिम्-बअ़्दि ज़ालि-क व अस्लहू इन्-न रब्ब-क मिम्बअ़्दिहा ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (119) ✿

के एहसान का अगर तुम उसी को पूजते हो। (114) अल्लाह ने तो यही हराम किया है तुम पर मुर्दार और लहू और सुअर का गोश्त और जिस पर नाम पुकारा अल्लाह के सिवा किसी और का, फिर जो कोई मजबूर हो जाये न ज़ोर करता हो न ज़्यादती तो अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (115) और मत कहो अपनी ज़बानों के झूठ बना लेने से कि यह हलाल है और यह हराम है कि अल्लाह पर बोहतान बाँधो, बेशक जो बोहतान बाँधते हैं अल्लाह पर उनका भला न होगा। (116) थोड़ा सा फ़ायदा उठा लें, और उनके वास्ते दर्दनाक अ़ज़ाब है। (117) और जो लोग यहूदी हैं उन पर हराम किया था जो तुझको पहले सुना चुके, और हमने उन पर ज़ुल्म नहीं किया पर वे अपने ऊपर आप ज़ुल्म करते थे। (118) फिर बात यह है कि तेरा रब उन लोगों पर जिन्होंने बुराई की नादानी से फिर तौबा की उसके बाद और संवारा अपने आपको, सो तेरा रब इन बातों के बाद बख़्शने वाला मेहरबान है। (119) ✿

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

पिछली आयत में अल्लाह जल्ल शानुहू की नेमतों पर काफ़िरों की नाशुक्री और उसके

अ़ज़ाब का ज़िक्र था, इन ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में पहले तो मुसलमानों को इसकी हिदायत की गई कि वे नाशुक्री न करें, अल्लाह तआ़ला ने जो हलाल नेमतें उनको दी हैं उनको शुक्र के साथ इस्तेमाल करें, उसके बाद यह इरशाद फ़रमाया कि काफ़िरों व मुश्रिकों ने अल्लाह तआ़ला की नेमतों की नाशुक्री की एक ख़ास शक्ल यह भी इख़्तियार कर रखी थी कि बहुत-सी चीज़ें जिनको अल्लाह तआ़ला ने उनके लिये हलाल किया था अपनी तरफ़ से उनको हराम कहने लगे, और बहुत-सी चीज़ें जिनको अल्लाह ने हराम कहा था उनको हलाल कहने लगे, मुसलमानों को इस पर तंबीह फ़रमाई कि वे ऐसा न करें, किसी चीज़ का हलाल या हराम करना सिर्फ़ उस ज़ात का हक़ है जिसने उनको पैदा किया है, अपनी तरफ़ से ऐसा करना ख़ुदाई इख़्तियारात में दख़ल देना और अल्लाह तआ़ला पर बोहतान बाँधना है।

आख़िर में यह भी इरशाद फ़रमाया कि जिन लोगों ने जहालत से इस तरह के अपराध किये हैं वे भी अल्लाह तआ़ला की रहमत से मायूस न हों, अगर वे तौबा कर लें और सही ईमान ले आयें तो अल्लाह तआ़ला सब गुनाह बख़्श देंगे। आयतों की मुख़्तसर तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

सो जो चीज़ें अल्लाह तआ़ला ने तुमको हलाल और पाक दी हैं उनको (हराम न समझो कि यह मुश्रिकों की जाहिलाना रस्म है, बल्कि) खाओ और अल्लाह तआ़ला की नेमत का शुक्र करो अगर तुम (अपने दावे के मुताबिक़) उसी की इबादत करते हो। तुम पर तो (उन चीज़ों में से जिनको तुम हराम कहते हो, अल्लाह तआ़ला ने) सिर्फ़ मुर्दार को हराम किया है, और ख़ून को और सुअर के गोश्त (वग़ैरह) को, और जिस चीज़ को अल्लाह के अ़लावा किसी और के लिये नामज़द कर दिया गया हो। फिर जो शख़्स कि (फ़ाक़े के सबब) बिल्कुल बेक़रार हो जाये, शर्त यह है कि लज़्ज़त का तालिब न हो और न (ज़रूरत की) हद से आगे बढ़ने वाला हो, तो अल्लाह तआ़ला (उसके लिये अगर वह चीज़ों को खा ले) बख़्श देने वाला, मेहरबानी करने वाला है। और जिन चीज़ों के बारे में तुम्हारा महज़ झूठा ज़बानी दावा है (और उस पर कोई सही दलील क़ायम नहीं) उनके बारे में यूँ मत कह दिया करो कि फ़ुलाँ चीज़ हलाल है और फ़ुलाँ चीज़ हराम है (जैसा कि पारा नम्बर आठ में सूरः अन्आ़म के अन्दर आयत 136 में उनके ऐसे झूठे दावे आ चुके हैं) जिसका हासिल यह होगा कि अल्लाह पर झूठी तोहमत लगाओगे (क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने तो ऐसा नहीं कहा, बल्कि इसके ख़िलाफ़ फ़रमाया है) बिला शुब्हा जो लोग अल्लाह पर झूठ तोहमत लगाते हैं वे फ़लाह न पाएँगे (चाहे दुनिया व आख़िरत दोनों में या सिर्फ़ आख़िरत में)।

यह (दुनिया में) कुछ दिन का ऐश है (और आगे मरने के बाद) उनके लिये दर्दनाक सज़ा है। और (ये मुश्रिक लोग इब्राहीमी शरीअ़त की पैरवी करने वाला होने का दावा करते हैं हालाँकि उनकी शरीअ़त में तो ये चीज़ें हराम न थीं जिनको इन्होंने हराम क़रार दे दिया है, अलबत्ता बहुत ज़माने के बाद इन चीज़ों में से) सिर्फ़ यहूदियों पर हमने वे चीज़ें हराम कर दी थीं

जिनका बयान हम इससे पहले (सूरः अन्आम में) आप से कर चुके हैं (और उनके हराम करने में भी) हमने उन पर (बज़ाहिर भी) कोई ज़्यादती नहीं की, लेकिन वे ख़ुद ही अपने ऊपर (नबियों की मुख़ालफ़त करके) ज़्यादती किया करते थे (तो मालूम हुआ कि हलाल चीज़ों को इरादतन् तो कभी हराम नहीं किया गया और इब्राहीमी शरीअ़त में किसी वक़्ती ज़रूरत की वजह से भी नहीं हुई, फिर यह तुमने कहाँ से गढ़ लिया)।

फिर आपका रब ऐसे लोगों के लिए जिन्होंने जहालत से बुरा काम (चाहे कुछ भी हो) कर लिया, फिर उसके बाद तौबा कर ली और (आईन्दा के लिये) अपने आमाल दुरुस्त कर लिये, तो आपका रब उसके बाद बड़ी मग़फ़िरत करने वाला, बड़ी रहमत करने वाला है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हराम चीज़ें ऊपर बयान हुई चीज़ों के अ़लावा भी हैं

इस आयत में लफ़्ज़ **इन्नमा** से मालूम होता है कि हराम चीज़ें सिर्फ़ यही चार हैं जो आयत में बयान हुई हैं, और इससे ज़्यादा स्पष्ट रूप से आयतः

قُلْ لَّآ اَجِدُ فِيْمَآ اُوْحِيَ اِلَيَّ مُحَرَّمًا........ الاية

(यानी सूरः अन्आम की आयत 145) से मालूम होता है कि इन चीज़ों के सिवा कोई चीज़ हराम नहीं, हालाँकि क़ुरआन व सुन्नत की वज़ाहत व बयान के मुताबिक़ उम्मत की सर्वसम्मति से और भी बहुत-सी चीज़ें हराम हैं। इस इश्काल का जवाब ख़ुद इन्हीं आयतों के आगे-पीछे के मज़मून पर ग़ौर करने से मालूम हो जाता है कि इस जगह आ़म हराम व हलाल का बयान करना मक़सद नहीं बल्कि इस्लाम से पहले ज़माने के मुश्रिकों ने जो बहुत-सी चीज़ों को अपनी तरफ़ से हराम कर लिया था हालाँकि अल्लाह तआ़ला ने उनकी हुर्मत (हराम होने) का हुक्म नहीं दिया था, उनका बयान करना मक़सूद है, कि तुम्हारी हराम की हुई चीज़ों में से अल्लाह के नज़दीक सिर्फ़ यही चीज़ें हराम हैं, इस आयत की मुकम्मल तफ़सीर और इन चारों हराम की गयी चीज़ों के अहकाम का विस्तृत बयान सूरः ब-क़रह की आयत नम्बर 173 में "मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन" जिल्द अव्वल में आ चुका है, वहाँ देख लिया जाये।

तौबा से गुनाह का माफ़ होना आ़म है चाहे बेसमझी से करे या जान-बूझकर

ऊपर बयान हुई आयत 119 में लफ़्ज़ जहल नहीं बल्कि **जहालत** इस्तेमाल फ़रमाया है। **जहल** तो इल्म के मुक़ाबले में आता है और बेइल्मी बेसमझी के मायने में है, और **जहालत** का लफ़्ज़ जहालत भरी हरकत के लिये बोला जाता है, अगरचे जान-बूझकर करे। इससे मालूम हो गया कि तौबा से गुनाह की माफ़ी बेसमझी या बेइख़्तियारी के साथ मुक़ैयद नहीं।

اِنَّ اِبْرٰهِيْمَ كَانَ اُمَّةً قَانِتًا لِّلّٰهِ حَنِيْفًا ؕ وَلَمْ يَكُ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۙ شَاكِرًا لِّاَنْعُمِهٖ ؕ اِجْتَبٰىهُ وَهَدٰىهُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ وَاٰتَيْنٰهُ فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً ؕ وَاِنَّهٗ فِى الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝ ثُمَّ اَوْحَيْنَاۤ اِلَيْكَ اَنِ اتَّبِعْ مِلَّةَ اِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا ؕ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ اِنَّمَا جُعِلَ السَّبْتُ عَلَى الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ؕ وَاِنَّ رَبَّكَ لَيَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيْمَا كَانُوْا فِيْهِ يَخْتَلِفُوْنَ ۝

इन्-न इब्राही-म का-न उम्म-तन् क़ानितल्-लिल्लाहि हनीफ़न्, व लम् यकु मिनल्-मुशिरकीन (120) शाकिरल्-लिअन्अुमिही, इज्तबाहु व हदाहु इला सिरातिम्-मुस्तक़ीम (121) व आतैनाहु फ़िद्दुन्या ह-स-नतन्, व इन्नहू फ़िल्-आख़िरति लमिनस्-सालिहीन (122) सुम्-म औहैना इलै-क अनित्तबिअ् मिल्ल-त इब्राही-म हनीफ़न्, व मा का-न मिनल्-मुशिरकीन (123) इन्नमा जुअ़िलस्सब्तु अ़लल्लज़ीनख़्त-लफ़ू फ़ीहि, व इन्-न रब्ब-क ल-यह्कुमु बैनहुम् यौमल्-क़ियामति फ़ीमा कानू फ़ीहि यख़्तलिफ़ून (124)	असल में इब्राहीम था राह डालने वाला फ़रमाँबरदार अल्लाह का सबसे एक तरफ़ होकर, और न था शिर्क करने वालों में। (120) हक़ मानने वाला उसके एहसानों का, उसको अल्लाह ने चुन लिया और चलाया सीधी राह पर। (121) और दी हमने दुनिया में उसको ख़ूबी और वह आख़िरत में अच्छे लोगों में है। (122) फिर हुक्म भेजा तुझको हमने कि चल दीने इब्राहीम पर जो एक तरफ़ का था और न था वह शिर्क करने वालों में। (123) हफ़्ते "शनिवार" का दिन जो मुक़र्रर किया सो उन्हीं पर जो उसमें झगड़ते थे, और तेरा रब हुक्म करेगा उनमें क़ियामत के दिन जिस बात में झगड़ते थे। (124)

इन आयतों के मज़मून की पीछे से संबन्ध

पिछली आयतों में शिर्क व कुफ़्र के उसूल यानी तौहीद व रिसालत के इनकार पर रद्द और कुफ़्र व शिर्क के कुछ फ़ुरूअ़ (अर्थात ऊपर के अहकाम) यानी हराम को हलाल कर लेना और हलाल को हराम कर लेने पर रद्द और इसको बातिल क़रार देने की तफ़सील थी और मक्का

मुकर्रमा के मुश्रिक जो क़ुरआने करीम के पहले और डायरेक्ट मुख़ातब थे, अपने कुफ़ व बुत-परस्ती के बावजूद दावा यह करते थे कि हम इब्राहीमी तरीक़े और मज़हब के पाबन्द हैं, और हम जो कुछ करते हैं यह सब हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की तालीमात हैं। इसलिये उक्त चार आयतों में उनके इस दावे की तरदीद और उन्हीं की मानी हुई बातों से उनके जाहिलाना ख़्यालात का रद्द और बातिल होना इस तरह बयान किया गया कि ऊपर बयान हुई पाँच आयतों में से पहली आयत में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का दुनिया की तमाम कौमों का मुसल्लम मुक़्तदा (माना हुआ धार्मिक पेशवा) होना बयान फ़रमाया, जो नुबुव्वत व रिसालत का ऊँचा मक़ाम है, इससे उनका अ़ज़ीमुश्शान नबी व रसूल होना साबित हुआ। इसके साथ ही 'मा का-न मिनल् मुश्रिकीन' से उनका पूर्ण तौहीद पर होना बयान फ़रमाया।

और दूसरी आयत में उनका शुक्रगुज़ार और सिरात-ए-मुस्तक़ीम (सही और सीधे रास्ते) पर होना बयान फ़रमाकर उनको तंबीह की कि तुम अल्लाह तआ़ला की नाशुक्री करते हुए अपने को उनका ताबेदार (पैरवी करने वाला) किस ज़बान से कहते हो?

तीसरी आयत में उनका दुनिया व आख़िरत में कामयाब व बामुराद होना और चौथी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत व रिसालत को साबित करने के साथ आपका सही इब्राहीमी तरीक़े का पाबन्द होना बयान फ़रमाकर यह हिदायत की गई कि अगर तुम अपने दावे में सच्चे हो तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाने और आपकी इताअ़त के बग़ैर यह दावा सही नहीं हो सकता।

पाँचवीं आयत यानी आयत नम्बर 124 में इशारतन यह बयान फ़रमाया कि इब्राहीमी तरीक़े और मज़हब में हलाल व पाक चीज़ें हराम नहीं थीं जिनको तुमने ख़ुद अपने ऊपर हराम कर लिया है। उक्त आयतों की मुख़्तसर तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम जिनको तुम भी मानते हो) बड़े मुक़्तदा ''यानी पेशवा और रहनुमा'' थे अल्लाह तआ़ला के (पूरे) फ़रमाँबरदार थे (उनका कोई अ़क़ीदा या अ़मल अपनी नफ़्सानी इच्छा से न था, फिर तुम उसके ख़िलाफ़ महज़ अपने नफ़्स की पैरवी से अल्लाह के हराम को हलाल और हलाल को हराम क्यों ठहराते हो, और वह) बिल्कुल एक (ख़ुदा) की तरफ़ के हो रहे थे (और मतलब एक तरफ़ होने का यह है कि) वह शिर्क करने वालों में से न थे (तो फिर तुम शिर्क कैसे करते हो, और वह) अल्लाह की नेमतों के (बड़े) शुक्रगुज़ार थे (फिर तुम शिर्क व कुफ़ में मुब्तला होकर नाशुक्री क्यों करते हो। ग़र्ज़ कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की यह शान और तरीक़ा था और वह ऐसे मक़बूल थे कि) अल्लाह तआ़ला ने उनको चुन लिया था और उनको सीधे रास्ते पर डाल दिया था। और हमने उनको दुनिया में भी ख़ूबियाँ (जैसे नुबुव्वत व रिसालत में चुनिन्दा होना और हिदायत पर होना वग़ैरह) दी थीं और वह आख़िरत में भी (आला

दर्जे के) अच्छे लोगों में होंगे (इसलिये तुम सब को उन्हीं का तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिये और वह तरीक़ा अब सीमित है मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े में जिसका बयान यह है कि), फिर हमने आपके पास वही भेजी कि आप इब्राहीम के तरीक़े पर जो कि बिल्कुल एक (ख़ुदा की) तरफ़ के हो रहे थे चलिये (और चूँकि उस ज़माने के वे लोग जो मिल्लते इब्राहीमी के दावेदार थे कुछ न कुछ शिर्क में मुब्तला थे, इसलिये दोबारा फ़रमाया कि) वह शिर्क करने वालों में से न थे (ताकि बुत-परस्तों के साथ यहूदियों व ईसाईयों के मौजूदा तरीक़े पर रद्द हो जाये जो शिर्क से ख़ाली नहीं, और चूँकि ये लोग हलाल व पाक चीज़ों को हराम करने की जाहिलाना व मुश्रिकाना रस्मों में मुब्तला थे, इसलिये फ़रमाया कि) बस हफ़्ते की ताज़ीम (यानी शनिवार के दिन मछली के शिकार की मनाही जो हलाल चीज़ों को हराम करने में से एक है वह तो) सिर्फ़ उन्हीं लोगों पर लाज़िम की गई थी जिन्होंने उसमें (अ़मलन) ख़िलाफ़ किया था (कि किसी ने माना और अ़मल किया और किसी ने उसके ख़िलाफ़ किया। मुराद इससे यहूदी हैं कि पाक व हलाल चीज़ों को हराम करने की यह सूरत दूसरी सूरतों की तरह सिर्फ़ यहूदियों के साथ मख़्सूस थी, मिल्लते इब्राहीमी में ये चीज़ें हराम नहीं थीं। आगे अल्लाह के अहकाम में झगड़ा करने के मुताल्लिक़ फ़रमाते हैं) बेशक आपका रब क़ियामत के दिन इनमें आपस में (अ़मली तौर पर) फ़ैसला कर देगा जिस बात में ये (दुनिया में) झगड़े किया करते थे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

लफ़्ज़ उम्मत कई मायनों के लिये इस्तेमाल होता है, मशहूर मायने जमाअ़त और क़ौम के हैं। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस जगह यही मायने मन्क़ूल हैं, और मुराद यह है कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम तन्हा एक फ़र्द एक उम्मत और क़ौम के कमालात व फ़ज़ाईल के मालिक हैं। और एक मायने लफ़्ज़ उम्मत के क़ौम के मुक़्तदा (पेशवा और रहनुमा) और कमालात वाले के भी आते हैं, कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस जगह यही मायने लिये हैं, और क़ानित के मायने फ़रमान के ताबेदार के हैं, हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम इन दोनों गुणों में ख़ास विशेषता रखते हैं, मुक़्तदा होने का तो यह आ़लम है कि पूरी दुनिया के तमाम मशहूर धर्मों के लोग सब आप पर एतिक़ाद रखते हैं, और आपकी मिल्लत की पैरवी को इज़्ज़त व फ़ख़्र जानते हैं। यहूद, ईसाई, मुसलमान तो उनका अदब व सम्मान करते ही हैं, अ़रब के मुश्रिक लोग बुत-परस्ती के बावजूद बुतों को तोड़नी वाली इस हस्ती के मोतक़िद और उनकी मिल्लत पर चलने को अपना फ़ख़्र जानते हैं। और क़ानित व फ़रमाँबरदार होने की ख़ास विशेषता उन इम्तिहानों और आज़माईशों से स्पष्ट हो जाती है जिनसे अल्लाह के यह ख़लील गुज़रे हैं। नमरूद की आग, बीवी-बच्चे को एक सुनसान बयाबान जंगल में छोड़कर चले जाने का हुक्म, फिर आरज़ुओं से हासिल होने वाले बेटे की क़ुरबानी पर तैयार हो जाना, ये सब वो ख़ुसूसियतें और विशेषतायें हैं जिनकी वजह से अल्लाह तआ़ला ने उनको इन उपाधियों से सम्मानित फ़रमाया है।

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये मिल्लते इब्राहीमी की पैरवी

हक़ तआ़ला ने जो शरीअ़त व अहकाम हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को अ़ता फ़रमाये थे, ख़ातिमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शरीअ़त भी कुछ ख़ास अहकाम के अ़लावा उसके मुताबिक़ रखी गई, और अगरचे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तमाम अम्बिया व रसूलों से अफ़ज़ल हैं मगर यहाँ अफ़ज़ल (आला दर्जे वाले) को मफ़ज़ूल (कम दर्जे वाले) की पैरवी का हुक्म देने में दो हिक्मतें हैं– अव्वल तो यह कि वह शरीअ़त पहले दुनिया में आ चुकी है और मालूम व मारूफ़ हो चुकी है, आख़िरी शरीअ़त भी चूँकि उसके मुताबिक़ होने वाली थी इसलिये इसको इत्तिबा (पैरवी और अनुसरण) के लफ़्ज़ से ताबीर किया गया है। दूसरे अ़ल्लामा ज़मख़्शरी के क़ौल के मुताबिक़ यह कि यह हुक्म पैरवी का हुक्म भी हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह के सम्मानों में से एक ख़ास सम्मान है और इसकी ख़ुसूसियत की तरफ़ लफ़्ज़ सुम्-म से इशारा कर दिया गया है कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के तमाम फ़ज़ाईल व कमालात एक तरफ़ और इन सब पर बढ़ा हुआ यह कमाल है कि अल्लाह तआ़ला ने अपने सबसे अफ़ज़ल रसूल व हबीब को उनकी मिल्लत की पैरवी का हुक्म फ़रमाया।

اُدْعُ اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ۭ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيْلِهٖ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ ۝ وَاِنْ عَاقَبْتُمْ فَعَاقِبُوْا بِمِثْلِ مَا عُوْقِبْتُمْ بِهٖ ۭ وَلَىِٕنْ صَبَرْتُمْ لَهُوَ خَيْرٌ لِّلصّٰبِرِيْنَ ۝ وَاصْبِرْ وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ وَلَا تَكُ فِيْ ضَيْقٍ مِّمَّا يَمْكُرُوْنَ ۝ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا وَّالَّذِيْنَ هُمْ مُّحْسِنُوْنَ ۝

उद्अ़ु इला सबीलि रब्बि-क बिल्हिक्मति वल्मौअ़ि-ज़तिल्-ह-स-नति व जादिल्हुम् बिल्लती हि-य अह्सनु, इन्-न रब्ब-क हु-व अअ़्लमु बिमन् ज़ल्-ल अ़न् सबीलिही व हु-व अअ़्लमु बिल्मुह्तदीन (125)	बुला अपने रब की राह पर पक्की बातें समझाकर और नसीहत सुनाकर भली तरह और इल्ज़ाम दे उनको जिस तरह बेहतर हो, तेरा रब ही बेहतर जानता है उसको जो भूल गया उसकी राह से और वही बेहतर जानता है उनको जो राह पर हैं। (125) और अगर बदला लो तो बदला

व इन् आक़ब्तुम् फ़आक़िबू बिमिस्लि मा ऊक़िब्तुम् बिही, व ल-इन् सबर्तुम् लहु-व ख़ैरुल्-लिस्साबिरीन (126) वस्बिर् व मा सब्रु-क इल्ला बिल्लाहि व ला तह़्ज़न् अ़लैहिम् व ला तकु फ़ी ज़ैक़िम्-मिम्मा यम्कुरून (127) इन्नल्ला-ह मअ़ल्लज़ीनत्तक़ौ वल्लज़ी-न हुम् मुह्सिनून (128) ✿	लो उसी क़द्र कि (जितनी) तुमको तकलीफ़ पहुँचाई जाये, और अगर सब्र करो तो यह बेहतर है सब्र करने वालों को। (126) और तू सब्र कर और तुझसे सब्र हो सके अल्लाह ही की मदद से, और न उन पर ग़म खा, और तंग मत हो उनके फ़रेब से। (127) अल्लाह साथ है उनके जो परहेज़गार हैं और जो नेकी करते हैं। (128) ✿

इन आयतों के मज़मून का पीछे के मज़मून से संबन्ध

इनसे पहले की आयतों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत व रिसालत के साबित करने से मक़सद यह था कि उम्मत आपके अहकाम की तामील करके रिसालत के हुक़ूक़ अदा करें, अब इन ऊपर ज़िक्र की गयी आयतों में ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को रिसालत के हुक़ूक़ अदा करने और उसके आदाब की तालीम है, चूँकि हुक्म और ख़िताब आ़म है इसलिये इसमें तमाम मोमिन शरीक हैं। मुख़्तसर तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप अपने रब की राह (यानी दीने इस्लाम) की तरफ़ (लोगों को) हिक्मत और अच्छी नसीहत के ज़रिये से बुलाईये (हिक्मत से दावत का वह तरीक़ा मुराद है जिसमें मुख़ातब के हालात की रियायत से ऐसी तदबीर इख़्तियार की गई हो जो मुख़ातब के दिल पर असर डालने वाली हो सके, और नसीहत से मुराद यह है कि ख़ैरख़्वाही व हमदर्दी के जज़्बे से बात कही जाये, और अच्छी नसीहत से मुराद यह है कि अन्दाज़ व तरीक़ा भी नर्म हो, दिल को दुखाने वाला अपमान भरा न हो) और उनके साथ अच्छे तरीक़े से बहस कीजिये (यानी अगर बहस-मुबाहसे की नौबत आ जाये तो वह भी सख़्ती और अखड़ मिज़ाजी और और मुख़ातब पर इल्ज़ाम लगाने और बेइन्साफ़ी से ख़ाली होना चाहिये। बस इतना काम आपका है, फिर इस तहक़ीक़ में न पड़िये कि किसने माना किसने नहीं माना, यह काम ख़ुदा तआ़ला का है। पस) आपका रब ख़ूब जानता है उस शख़्स को भी जो उसके रास्ते से गुम हो गया और वही राह पर चलने वालों को भी ख़ूब जानता है। और (अगर कभी मुख़ातब इल्मी बहस व मुबाहसे की हद से आगे बढ़कर अ़मली झगड़े और हाथ या ज़बान से तकलीफ़ पहुँचाने लगें तो इसमें आपको और आपके पैरोकारों को बदला लेना भी जायज़ है और सब्र करना भी। पस) अगर (पहली सूरत इख़्तियार

करो यानी) बदला लेने लगो तो उतना ही बदला लो जितना तुम्हारे साथ बर्ताव किया गया है (उससे ज़्यादती न करो), और अगर (दूसरी सूरत यानी तकलीफ़ों पर) सब्र करो तो वह (सब्र करना) सब्र करने वालों के हक़ में बहुत ही अच्छी बात है (कि मुख़ालिफ़ पर भी अच्छा असर पड़ता है और देखने वालों पर भी, और आख़िरत में बड़े अज्र का ज़रिया है)।

और (सब्र करना अगरचे सभी के लिये बेहतर है मगर आपकी बड़ी शान के लिहाज़ से आपको विशेष तौर पर हुक्म है कि आप बदला लेने की सूरत इख़्तियार न करें बल्कि) आप सब्र कीजिए और आपका सब्र करना ख़ुदा ही की ख़ास तौफ़ीक़ से है (इसलिये आप इत्मीनान रखें कि सब्र में आपको दुश्वारी न होगी) और उन लोगों (यानी उनके ईमान न लाने पर या मुसलमानों को सताने) पर ग़म न कीजिये। और जो कुछ ये तदबीरें किया करते हैं उससे तंगदिल न होईये (उनकी मुख़ालिफ़ तदबीरों से आपका कोई नुक़सान न होगा, क्योंकि आपको एहसान और तक़वे की सिफ़ात हासिल हैं, और) अल्लाह तआ़ला ऐसे लोगों के साथ होता है (यानी उनका मददगार होता है) जो परहेज़गार होते हैं और जो नेक काम करने वाले होते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

दावत व तब्लीग़ के उसूल और मुकम्मल निसाब

इस आयत में दावत व तब्लीग़ का मुकम्मल निसाब, उसके उसूल और आदाब की पूरी तफ़सील चन्द कलिमात में समोई हुई है। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि हज़रत हरम इब्ने हय्यान रहमतुल्लाहि अ़लैहि की मौत का वक़्त आया तो परिजनों ने दरख़्वास्त की कि हमें कुछ वसीयत फ़रमाईये, तो फ़रमाया कि वसीयत तो लोग मालों की किया करते हैं वह मेरे पास है नहीं, लेकिन मैं तुमको अल्लाह की आयतों विशेष तौर पर सूरः नहल की आख़िरी आयतों की वसीयत करता हूँ कि उन पर मज़बूती से क़ायम रहो, वो आयतें यही हैं जो ऊपर बयान हुईं।

दावत के लफ़्ज़ी मायने बुलाने के हैं, अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का पहला फ़र्ज़े मन्सबी (ज़िम्मेदारी और कर्तव्य) लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाना है, फिर नुबुव्वत व रिसालत तमाम तालीमात इसी दावत की वज़ाहतें और व्याख्यायें हैं, क़ुरआने करीम में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़ास सिफ़त दाओ़ी इलल्लाह (अल्लाह की तरफ़ बुलाने वाला) होना है। जैसा कि इन आयतों में आया है:

وَدَاعِيًا إِلَى اللّٰهِ بِإِذْنِهٖ وَسِرَاجًا مُّنِيْرًا ○ (احزاب ۴۶)

يٰقَوْمَنَآ أَجِيْبُوْا دَاعِيَ اللّٰهِ. (احقاف ۳۱)

(यानी सूरः अहज़ाब की आयत 46 और सूरः अहक़ाफ़ की आयत 31)

उम्मत पर भी आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नक़्शे-क़दम पर दावत इलल्लाह (अल्लाह की तरफ़ बुलाने और दावत देने) को फ़र्ज़ किया गया है, सूरः आले इमरान में इरशाद है:

وَلْتَكُنْ مِّنْكُمْ اُمَّةٌ يَّدْعُوْنَ اِلَى الْخَيْرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ. (آل عمران:۱۰۴)

"तुम में से एक जमाअ़त ऐसी होनी चाहिये जो लोगों को ख़ैर की तरफ़ दावत दें (यानी) नेक कामों का हुक्म करें और बुरे कामों से रोकें।" (सूरः आले इमरान आयत 104)

और एक आयत में इरशाद हैः

وَمَنْ اَحْسَنُ قَوْلًا مِّمَّنْ دَعَآ اِلَى اللّٰهِ.

"बात कहने के एतिबार से उस शख़्स से अच्छा कौन हो सकता है जिसने लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाया।"

ताबीर में कभी इस लफ़्ज़ को दावत इलल्लाह का उनवान दिया जाता है और कभी दावत इलल्-ख़ैर का और कभी दावत इला सबीलिल्लाह का। हासिल सब का एक है, क्योंकि अल्लाह की तरफ़ बुलाने से उसके दीन और सिराते मुस्तक़ीम ही की तरफ़ बुलाना मक़सूद है।

اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ

इसमें अल्लाह जल्ल शानुहू की ख़ास सिफ़त रब होना, और फिर उसकी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ निस्बत में इशारा है कि दावत का काम रबूबियत और तरबियत की सिफ़त से ताल्लुक़ रखता है, जिस तरह हक़ तआ़ला शानुहू ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरबियत फ़रमाई, आपको भी तरबियत के अन्दाज़ से दावत देनी चाहिये जिसमें मुख़ातब के हालात की रियायत करके वह तरीक़ा और अन्दाज़ इख़्तियार किया जाये कि मुख़ातब पर बोझ न हो, और उसकी तासीर (प्रभाव और असर) ज़्यादा से ज़्यादा हो। खुद लफ़्ज़ दावत भी इस मफ़्हूम को अदा करता है कि पैग़म्बर का काम सिर्फ़ अल्लाह के अहकाम पहुँचा देना और सुना देना नहीं बल्कि लोगों को उनकी तामील की तरफ़ दावत देना है, और ज़ाहिर है कि किसी को दावत देने वाला उसके साथ ऐसा ख़िताब नहीं किया करता जिससे मुख़ातब को घबराहट व नफ़रत हो, या जिसमें उसके साथ मज़ाक़ व अपमान किया गया हो।

"बिल्-हिक्मति" लफ़्ज़ **हिक्मत** क़ुरआने करीम में बहुत से मायने के लिये इस्तेमाल हुआ है, इस जगह तफ़सीर के कुछ इमामों ने हिक्मत से मुराद क़ुरआने करीम, कुछ ने क़ुरआन व सुन्नत, कुछ ने मज़बूत व कामिल दलील को क़रार दिया है, और तफ़सीर रूहुल-मआ़नी ने बहरे-मुहीत के हवाले से हिक्मत की तफ़सीर यह की हैः

انها الكلام الصواب الواقع من النفس اجمل موقع. (روح)

"यानी हिक्मत उस दुरुस्त कलाम का नाम है जो इनसान के दिल में उतर जाये।"

इस तफ़सीर में तमाम अक़्वाल जमा हो जाते हैं और रूहुल-बयान के लेखक ने भी तक़रीबन यही मतलब इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया है कि "हिक्मत से मुराद वह शऊर व समझ है जिसके ज़रिये इनसान हालात के तक़ाज़ों को मालूम करके उसके मुनासिब कलाम करे, वक़्त और मौक़ा ऐसा तलाश करे कि मुख़ातब पर नागवार व बोझ न हो, नर्मी की जगह नर्मी

और सख़्ती की जगह सख़्ती इख़्तियार करे, और जहाँ यह समझे कि खुलकर कहने में मुख़ातब को शर्मिन्दगी होगी वहाँ इशारों से कलाम करे, या कोई ऐसा उनवान इख़्तियार करे कि मुख़ातब को न शर्मिन्दगी हो और न उसके दिल में अपने ख़्याल पर जमने की हठधर्मी पैदा हो।

"अल्-मौअिज़तु" मौअिज़त और वअ़ज़ के लुग़वी मायनें यह हैं कि किसी ख़ैरख़्वाही (हमदर्दी) की बात को इस तरह कहा जाये कि उससे मुख़ातब का दिल क़ुबूल करने के लिये नर्म हो जाये, मसलन उसके साथ क़ुबूल करने के सवाब व फ़ायदे और न करने के अ़ज़ाब व ख़राबियाँ ज़िक्र की जायें। (क़ामूस व मुफ़रदात, राग़िब)

"अलह्-स-नतु" के मायने यह हैं कि बयान और उनवान भी ऐसा हो जिससे मुख़ातब (जिससे संबोधन किया जा रहा है उस) का दिल मुत्मईन हो, उसके शुकूक व शुब्हात दूर हों और मुख़ातब यह महसूस कर ले कि आपकी इसमें कोई ग़र्ज़ नहीं सिर्फ़ उसकी ख़ैरख़्वाही (भलाई और हमदर्दी) के लिये कह रहे हैं।

"मौअिज़तुन" के लफ़्ज़ से ख़ैरख़्वाही की बात असरदार अन्दाज़ में कहना तो स्पष्ट हो गया था, मगर ख़ैरख़्वाही (हमदर्दी) की बात कई बार दिल दुखाने वाले उनवान से या इस तरह भी कही जाती है जिससे मुख़ातब अपनी बेइज़्ज़ती महसूस करे। (रूहुल-मआ़नी) इस तरीक़े को छोड़ने के लिये लफ़्ज़ **हसना** का इज़ाफ़ा कर दिया गया।

وَجَادِلْهُم بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ

लफ़्ज़ मुजादला के मायने अगरचे झगड़ने के भी आते हैं मगर इस जगह मुजादले से मुराद बहस व मुनाज़रा है, और 'बिल्लती हि-य अहसनु' से मुराद यह है कि अगर दावत में कहीं बहस व मुनाज़रे की सूरत पेश आ जाये तो वह मुबाहसा (बहस करना) भी अच्छे तरीक़े से होना चाहिये। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में है कि अच्छे तरीक़े से मुराद यह है कि बातचीत में लुत्फ़ और नर्मी इख़्तियार की जाये, दलीलें ऐसे पेश की जायें जो मुख़ातब आसानी से समझ सके, दलील में वो तर्क दिये जायें जो मशहूर व परिचित हों ताकि मुख़ातब के शक दूर हों और हठधर्मी के रास्ते पर न पड़ जाये। और क़ुरआने करीम की दूसरी आयतें इस पर सुबूत हैं कि बहस व मुबाहसे में यह अच्छा तरीक़ा इख़्तियार करना सिर्फ़ मुसलमानों के साथ मख़्सूस नहीं अहले किताब (यानी जो किसी आसमानी मज़हब पर अ़मल करने के दावेदार हैं) के बारे में तो ख़ुसूसियत के साथ क़ुरआन का इरशाद है:

وَلَا تُجَادِلُوٓا أَهْلَ الْكِتَابِ إِلَّا بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ

और एक दूसरी आयत में हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम को नर्मी से बात करने की हिदायत देकर यह भी बतला दिया कि फ़िरऔ़न जैसे सरकश काफ़िर के साथ भी यही मामला करना है।

दावत के उसूल व आदाब

ऊपर बयान हुई आयत में दावत के लिये तीन चीज़ों का ज़िक्र है:

अव्वल हिक्मत (मुख़ातब के दिल में उतर जाने वाले तरीक़े से बात करना और हालात की रियायत करके कलाम करना) दूसरे **मौअ़िज़ते हसना** (अच्छी नसीहत) तीसरे **मुजादला बिल्लती हि-य अहसनु** (यानी अगर दावत में कहीं बहस व मुबाहसे की नौबत आ जाये तो नर्मी और बेहतर अन्दाज़ में सामने वाले को समझाना और अपनी दलील रखना)।

क़ुरआन पाक के मुफ़स्सिरीन में से कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि ये तीन चीज़ें मुख़ातबों (संबोधित लोगों) की तीन क़िस्मों की बिना पर हैं। हिक्मत के साथ दावत इल्म व समझ रखने वालों के लिये, मौअ़िज़ते हसना यानी अच्छी बात के ज़रिये दावत अ़वाम के लिये, मुजादला (यानी बहस व मुनाज़रा) उन लोगों के लिये जिनके दिलों में शक व शुब्हात हों, या जो मुख़ालफ़त और हठधर्मी के सबब बात मानने से मुन्किर हों।

सय्यिदी हज़रत हकीमुल-उम्मत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने बयानुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि इन तीन चीज़ों के मुख़ातब अलग-अलग तीन क़िस्म की जमाअ़तें होना आयत के मज़मून के लिहाज़ से दूर की बात मालूम होता है।

ज़ाहिर यह है कि दावत के ये आदाब हर एक के लिये इस्तेमाल करने हैं कि दावत में सबसे पहले हिक्मत से मुख़ातब के हालात का जायज़ा लेकर उसके मुनासिब कलाम तजवीज़ करना है, फिर उस कलाम में ख़ैरख़्वाही व हमदर्दी के जज़्बे के साथ ऐसे तथ्य और सुबूत सामने लाना है जिनसे मुख़ातब मुत्मईन हो सके और बयान व कलाम का अन्दाज़ ऐसा शफ़क़त भरा और नर्म रखना है कि मुख़ातब को इसका यक़ीन हो जाये कि यह जो कुछ कह रहे हैं मेरी ही मस्लेहत और हमदर्दी के लिये कह रहे हैं, मुझे शर्मिन्दा करना या मेरी हैसियत को कम करना इनका मक़सद नहीं।

अलबत्ता तफ़सीर रूहुल-मआ़नी के लेखक ने इस जगह एक बहुत ही बारीक नुक्ता यह बयान फ़रमाया कि आयत के अन्दाज़ व तरतीब से मालूम होता है कि दावत के उसूल असल में दो ही चीज़ें हैं- हिक्मत और मौअ़िज़त, तीसरी चीज़ मुजादला दावत के उसूल में दाख़िल नहीं, हाँ दावत के तरीक़े में कभी इसकी भी ज़रूरत पेश आ जाती है।

रूहुल-मआ़नी के लेखक का तर्क इस पर यह है कि अगर ये तीनों चीज़ें दावत के उसूल होतीं तो इस मक़ाम का तक़ाज़ा यह था कि तीनों चीज़ों को एक-दूसरे के साथ जोड़कर इस तरह बयान किया जाताः

بالحكمة والموعظة الحسنة والجدال الاحسن.

मगर क़ुरआने करीम ने हिक्मत और मौअ़िज़ते हसना को तो मिलाकर एक ही तरतीब में बयान फ़रमाया और मुजादले के लिये अलग जुमलाः

جَادِلْهُمْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ

इख़्तियार किया। इससे मालूम होता है कि मुजादला (यानी बहस व मुनाज़रा करना) दर असल अल्लाह की तरफ़ दावत देने का रुक्न या शर्त नहीं बल्कि दावत के रास्ते में पेश आने

वाले मामलात से संबन्धित एक हिदायत है, जैसा कि इसके बाद की आयत में सब्र की तालीम फ़रमाई है, क्योंकि दावत के तरीक़े और रास्ते में लोगों के तकलीफ़ देने और सताने पर सब्र करना एक लाज़िमी चीज़ है।

ख़ुलासा यह है कि दावत के उसूल दो चीज़ें हैं— हिक्मत और मौअ़िज़त। जिनसे कोई दावत ख़ाली न होनी चाहिये, चाहे उलेमा व ख़ास लोगों को हो या आ़म लोगों को, अलबत्ता दावत में किसी वक़्त ऐसे लोगों से भी साबक़ा पड़ जाता है जो शक व शुब्हे और ग़लत फ़हमियों में मुब्तला और दावत देने वाले के साथ बहस-मुबाहसे पर आमादा हैं, तो ऐसी हालत में मुजादले (बहस-मुबाहसे) की तालीम दी गई मगर उसके साथ 'बिल्लती हि-य अहसनु' की क़ैद लगाकर बतला दिया कि जो मुजादला इस शर्त से ख़ाली हो इसकी शरीअ़त में कोई हैसियत नहीं।

अल्लाह की तरफ़ दावत देने के पैग़म्बराना आदाब

अल्लाह की तरफ़ दावत देना दर असल अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का मक़ाम व फ़रीज़ा है, उम्मत के उलेमा इस मन्सब को उनका नायब होने की हैसियत से इस्तेमाल करते हैं तो लाज़िम यह है कि इसके आदाब और तरीक़े भी उन्हीं से सीखें, जो दावत उन तरीक़ों पर न रहे वह दावत के बजाय अ़दावत (दुश्मनी) और जंग व जदाल (झगड़ों) का कारण बन जाती है।

पैग़म्बराना दावत के उसूल में जो हिदायत क़ुरआने करीम में हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम के लिये नक़ल की गई है किः

فَقُوْلَا لَهٗ قَوْلًا لَّيِّنًا لَّعَلَّهٗ يَتَذَكَّرُ اَوْ يَخْشٰى○

"यानी फ़िरऔन से नर्म बात करो शायद वह समझ ले या डर जाये।"

यह हर हक़ के दावत देने वाले को हर वक़्त सामने रखनी ज़रूरी है कि फ़िरऔन जैसा सरकश काफ़िर जिसकी मौत भी अल्लाह के इल्म में कुफ़्र ही पर होने वाली थी उसकी तरफ़ भी जब अल्लाह तआ़ला अपने दाओ़ी को भेजते हैं तो जो नर्म गुफ़्तार की हिदायत के साथ भेजते हैं। आज हम जिन लोगों को दावत देते हैं वे फ़िरऔन से ज़्यादा गुमराह नहीं, और हम में से कोई मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम के बराबर हादी व दाओ़ी नहीं, तो जो हक़ अल्लाह तआ़ला ने अपने दोनों पैग़म्बरों को नहीं दिया कि मुख़ातब से सख़्त कलामी करें, उस पर फ़िक़रे कसें, उसकी तौहीन करें, वह हक़ हमें कहाँ से हासिल हो गया।

क़ुरआने करीम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की दावत व तब्लीग़ और काफ़िरों के मुजादलों (बहस-मुबाहसों और झगड़ा करने) से भरा हुआ है, इसमें कहीं नज़र नहीं आता कि किसी अल्लाह के रसूल ने हक़ के ख़िलाफ़ उन पर ताने मारने वालों के जवाब में कोई सख़्त कलिमा भी बोला हो, इसकी चन्द मिसालें देखियेः

सूरः आराफ़ के सातवें रुकूअ़ में आयात 59 से 67 तक दो पैग़म्बर हज़रत नूह और हज़रत हूद अ़लैहिमस्सलाम के साथ उनकी क़ौम के झगड़ने और सख़्त-सुस्त इल्ज़ामात के जवाब में इन

बुज़ुर्गों के कलिमात सुनने और ध्यान देने के क़ाबिल हैं।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम अल्लाह तआ़ला के वह बुलन्द रुतबे वाले पैग़म्बर हैं जिनकी लम्बी उम्र दुनिया में मशहूर है, साढ़े नौ सौ बरस तक अपनी क़ौम की दावत व तब्लीग़, इस्लाह व इरशाद में दिन-रात मशग़ूल रहे, मगर इस बदबख़्त क़ौम में से थोड़े से अफ़राद के अ़लावा किसी ने उनकी बात न मानी, और तो और ख़ुद उनका एक लड़का और बीवी काफ़िरों के साथ लगे रहे। उनकी जगह आजका कोई दावत व इस्लाह का दावेदार होता तो उस क़ौम के साथ उसका बात करने का तरीक़ा व रवैया कैसा होता अन्दाज़ा लगाईये, फिर देखिये कि उनकी तमाम हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही की दावत के जवाब में क़ौम ने क्या कहाः

اِنَّا لَنَرٰكَ فِیْ ضَلٰلٍ مُّبِیْنٍo (اعراف)

"हम तो आपको खुली हुई गुमराही में पाते हैं।" (सूरः आराफ़)

उधर से अल्लाह के पैग़म्बर बजाय इसके कि उस सरकश क़ौम की गुमराहियों, बदकारियों का पर्दा चाक करते जवाब में क्या फ़रमाते हैं:

یٰقَوْمِ لَیْسَ بِیْ ضَلٰلَةٌ وَّلٰكِنِّیْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِیْنَo

"मेरे भाईयो! मुझमें कोई गुमराही नहीं, मैं तो रब्बुल-आ़लमीन का रसूल और क़ासिद हूँ (तुम्हारे फ़ायदे की बातें बतलाता हूँ)।"

उनके बाद आने वाले दूसरे अल्लाह के रसूल हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम को उनकी क़ौम ने मोजिज़े देखने के बावजूद दुश्मनी व मुख़ालफ़त के तौर पर कहा कि आपने अपने दावे पर कोई दलील पेश नहीं की और हम आपके कहने से अपने माबूदों (बुतों) को छोड़ने वाले नहीं, हम तो यही कहते हैं कि तुमने जो हमारे माबूदों की शान में बेअदबी की है उसकी वजह से तुम जुनून (पागलपन) में मुब्तला हो गये हो।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम ने यह सब कुछ सुनकर जवाब दियाः

اِنِّیْٓ اُشْهِدُ اللّٰهَ وَاشْهَدُوْٓا اَنِّیْ بَرِیْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَo

"यानी मैं अल्लाह को गवाह बनाता हूँ और तुम भी गवाह रहो कि मैं उन बुतों से बरी और बेज़ार हूँ जिनको तुम अल्लाह का शरीक मानते हो।" (सूरः हूद)

और सूरः आराफ़ में है कि उनकी क़ौम ने उनको कहाः

اِنَّا لَنَرٰكَ فِیْ سَفَاهَةٍ وَّاِنَّا لَنَظُنُّكَ مِنَ الْكٰذِبِیْنَo (اعراف)

"हम तो आपको बेवक़ूफ़ी में मुब्तला समझते हैं और हमारा ख़्याल यह है कि आप झूठ बोलने वालों में से हैं।"

क़ौम के इस दिल दुखाने वाले ख़िताब के जवाब में अल्लाह के रसूल हूद अ़लैहिस्सलाम न उन पर कोई फ़िक़रा कसते हैं, न उनकी गुमराही और अल्लाह पर झूठ व बोहतान बाँधने की कोई बात कहते हैं, जवाब क्या है सिर्फ़ यह कि:

يٰقَوْمِ لَيْسَ بِىْ سَفَاهَةٌ وَّلٰكِنِّىْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○ (اعراف)

"ऐ मेरी बिरादरी के लोगो! मुझ में कोई बेवक़ूफ़ी या कम-अक़्ली नहीं, मैं तो रब्बुल-आलमीन का रसूल हूँ।"

हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने क़ौम को नबियों के दस्तूर के मुताबिक़ अल्लाह की तरफ़ दावत दी, उनमें जो बड़ा ऐब नाप-तौल में कमी करने का था उससे बाज़ आने की हिदायत फ़रमाई तो उनकी क़ौम ने मज़ाक़ उड़ाया और अपमान जनक अन्दाज़ में ख़िताब किया:

يٰشُعَيْبُ اَصَلٰوتُكَ تَاْمُرُكَ اَنْ نَّتْرُكَ مَا يَعْبُدُ اٰبَآؤُنَآ اَوْ اَنْ نَّفْعَلَ فِىْٓ اَمْوَالِنَا مَا نَشٰٓؤُا اِنَّكَ لَاَنْتَ الْحَلِيْمُ الرَّشِيْدُ ○

"ऐ शुऐब! क्या तुम्हारी नमाज़ तुम्हें यह हुक्म देती है कि हम अपने बाप-दादा के माबूदों को छोड़ दें और यह कि जिन मालों के हम मालिक हैं उनमें अपनी मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ जो चाहें न करें, वाक़ई आप हैं बड़े अक़्लमन्द दीन पर चलने वाले।"

उन्होंने एक तो यह ताना दिया कि तुम जो नमाज़ पढ़ते हो यही तुम्हें बेवक़ूफ़ी के काम सिखाती है, दूसरे यह कि माल हमारे हैं, उनकी ख़रीद व फ़रोख़्त के मामलात में तुम्हारा या ख़ुदा का क्या दख़ल है, हम जिस तरह चाहें उनमें इख़्तियार चलाने और ख़र्च करने का हक़ रखते हैं। तीसरा जुमला मज़ाक़ उड़ाने और अपमान करने का यह कहा कि आप हैं बड़े अक़्लमन्द बहुत दीन पर चलने वाले।

मालूम हुआ कि ये अधर्मी और इस्लाम के ख़िलाफ़ आर्थिक निज़ाम के पुजारी सिर्फ़ आज नहीं पैदा हुए इनके भी कुछ पूर्वज हैं जिनका नज़रिया वही था जो आजके कुछ नाम के मुसलमान कह रहे हैं कि हम मुसलमान हैं, इस्लाम को मानते हैं, मगर कारोबारी और आर्थिक मामलात में हम सोशलिज़्म को इख़्तियार करते हैं, इसमें इस्लाम का क्या दख़ल है। बहरहाल! इस ज़ालिम क़ौम के इस मज़ाक़ उड़ाने और दिल दुखाने वाली गुफ़्तगू का जवाब अल्लाह का रसूल क्या देता है, देखिये:

قَالَ يٰقَوْمِ اَرَءَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّىْ وَرَزَقَنِىْ مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا، وَمَآ اُرِيْدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَآ اَنْهٰكُمْ عَنْهُ، اِنْ اُرِيْدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ وَمَا تَوْفِيْقِىْٓ اِلَّا بِاللّٰهِ. عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُنِيْبُ ○ (سورہ ہود، آیت ۸۸)

"ऐ मेरी क़ौम! भला यह तो बतलाओ कि अगर मैं अपने रब की तरफ़ से दलील पर क़ायम हूँ और उसने मुझको अपनी तरफ़ से उम्दा दौलत यानी नुबुव्वत दी हो तो फिर मैं कैसे उसकी तब्लीग़ न करूँ, और मैं ख़ुद भी तो उसके ख़िलाफ़ कोई अ़मल नहीं करता जो तुम्हें बतलाता हूँ, मैं तो सिर्फ़ इस्लाह चाहता हूँ जहाँ तक मेरी ताक़त में है, और मुझको जो कुछ इस्लाह और अ़मल की तौफ़ीक़ हो जाती है वह सिर्फ़ अल्लाह ही की मदद से है, मैं उसी पर भरोसा रखता हूँ और तमाम मामलात में उसी की तरफ़ रुजू करता हूँ।"

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को फ़िरऔन की तरफ़ भेजने के वक़्त जो नर्म गुफ़्तार की हिदायत अल्लाह की तरफ़ से दी गई थी उसकी पूरी तामील करने के बावजूद फ़िरऔन का

ख़िताब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से यह थाः

قَالَ اَلَمْ نُرَبِّكَ فِيْنَا وَلِيْدًا وَّلَبِثْتَ فِيْنَا مِنْ عُمُرِكَ سِنِيْنَ ٥ وَفَعَلْتَ فَعْلَتَكَ الَّتِيْ فَعَلْتَ وَاَنْتَ مِنَ الْكٰفِرِيْنَ ٥ (سورہ شعرآء)

"फ़िरऔ़न कहने लगा (आहा! तुम हो) क्या हमने बचपन में तुमको परवरिश नहीं किया, और तुम उस उम्र में बरसों हमारे पास रहा सहा किये, और तुमने अपनी वह हरकत भी की थी जो की थी (क़िब्ती को क़त्ल किया था) और तुम बड़े नाशुक्रे हो।"

इसमें हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर अपना यह एहसान भी जतलाया कि बचपन में हमने तुझे पाला, फिर यह एहसान भी जतलाया कि बड़े होने के बाद भी काफ़ी मुद्दत तक तुम हमारे पास रहे, फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के हाथ से जो एक क़िब्ती बग़ैर क़त्ल के इरादे के मारा गया था उस पर ग़ुस्सा व नाराज़ी का इज़हार करके यह भी कहा कि तुम काफ़िरों में से हो गये।

यहाँ काफ़िरों में से होने के लुग़वी मायने भी हो सकते हैं, यानी नाशुक्री करने वाला, जिसका मतलब यह होगा कि हमने तो तुम पर एहसान किये और तुमने हमारे एक आदमी को मार डाला जो एहसान की नाशुक्री थी, और इस्तिलाही मायने भी हो सकते हैं, क्योंकि फ़िरऔ़न ख़ुद ख़ुदाई का दावेदार था तो जो उसकी ख़ुदाई का मुन्किर हुआ वह काफ़िर हुआ।

अब इस मौक़े पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का जवाब सुनिये, जो पैग़म्बराना दावत के आदाब और पैग़म्बराना अख़्लाक़ का नमूना है कि इसमें सबसे पहले तो उस कमज़ोरी व कोताही का इक़रार कर लिया जो उनसे सर्ज़द हो गई थी यानी एक इस्राईली आदमी से लड़ने वाले क़िब्ती को हटाने के लिये एक मुक्का उसके मारा था जिससे वह मर गया तो गोया क़त्ल जान-बूझकर और इरादतन नहीं था मगर कोई दीनी तक़ाज़ा भी नहीं था बल्कि हज़रत मूसा की शरीअ़त के लिहाज़ से भी वह शख़्स क़त्ल का मुस्तहिक़ नहीं था, इसलिये पहले यह इक़रार फ़रमायाः

فَعَلْتُهَآ اِذًا وَّاَنَا مِنَ الضَّآلِّيْنَ ٥ (سورہ شعرآء)

"यानी मैंने यह काम उस वक़्त किया था जबकि मैं नावाक़िफ़ था।"

मुराद यह है कि यह फ़ेल नुबुव्वत मिलने से पहले सर्ज़द हो गया था जबकि मुझे इस बारे में अल्लाह का कोई हुक्म मालूम नहीं था। इसके बाद फ़रमायाः

فَفَرَرْتُ مِنْكُمْ لَمَّا خِفْتُكُمْ فَوَهَبَ لِيْ رَبِّيْ حُكْمًا وَّجَعَلَنِيْ مِنَ الْمُرْسَلِيْنَ ٥ (سورة شعرآء)

"फिर मुझको डर लगा तो मैं तुम्हारे यहाँ से फ़रार हो गया, फिर मुझको मेरे रब ने दानाई अ़ता फ़रमाई, और मुझको अपने पैग़म्बरों में शामिल कर दिया।"

फिर उसके एहसान जतलाने का जवाब यह दिया कि तुम्हारा यह एहसान जतलाना सही नहीं, क्योंकि मेरी परवरिश का मामला तुम्हारे ही ज़ुल्म व ज़्यादती का नतीजा था, कि तुमने इस्राईली बच्चों के क़त्ल का हुक्म दे रखा था इसलिये वालिदा ने मजबूर होकर मुझे दरिया में डाला और तुम्हारे घर तक पहुँचने की नौबत आई। फ़रमायाः

وَتِلْكَ نِعْمَةٌ تَمُنُّهَا عَلَيَّ اَنْ عَبَّدْتَّ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ٥ (سورة شعرآء)

"(रहा एहसान जतलाना परवरिश का) सो यह वह नेमत है जिसका तू मुझ पर एहसान रखता है कि तूने बनी इस्राईल को सख़्त ज़िल्लत में डाल रखा था।"

इसके बाद फ़िरऔन ने जब सवाल कियाः

وَمَارَبُّ الْعٰلَمِيْنَ٥

यानी रब्बुल-आलमीन कौन है और क्या है? तो जवाब में फ़रमाया कि वह रब है आसमानों और ज़मीन का और जो कुछ इनके बीच है उस सब का। इस पर फ़िरऔन ने वहाँ मौजूद लोगों से बतौर मज़ाक़ के कहाः

اَلَا تَسْتَمِعُوْنَ٥

यानी तुम सुन रहे हो कि यह कैसी बेअ़क़्ली की बातें कह रहे हैं? इस पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

رَبُّكُمْ وَرَبُّ اٰبَآئِكُمُ الْاَوَّلِيْنَ٥

"यानी तुम्हारा और तुम्हारे बाप दादों का भी वही रब परवर्दिगार है।"

इस पर फ़िरऔन ने झुंझलाकर कहाः

اِنَّ رَسُوْلَكُمُ الَّذِيْٓ اُرْسِلَ اِلَيْكُمْ لَمَجْنُوْنٌ٥

"यानी यह जो तुम्हारी तरफ़ अल्लाह के रसूल होने का दावेदार है यह दीवाना है।"

मजनूँ दीवाने का ख़िताब देने पर भी मूसा अ़लैहिस्सलाम बजाय इसके कि उनका दीवाना होना और अपना अ़क़्लमन्द होना साबित करते इस तरफ़ कोई ध्यान ही नहीं किया, बल्कि अल्लाह रब्बुल-आलमीन की एक और सिफ़त बयान फ़रमा दीः

رَبُّ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَمَا بَيْنَهُمَا اِنْ كُنْتُمْ تَعْقِلُوْنَ٥ (شعرآء)

"वह रब है पूरब व पश्चिम का और जो कुछ उनके बीच है अगर तुमको कुछ अ़क़्ल हो।"

यह एक लम्बी गुफ़्तगू है जो फ़िरऔन के दरबार में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और फ़िरऔन के दरमियान हो रही है, जो सूरः शु-अ़रा के तीन रुकूअ़ में बयान हुई है। अल्लाह के मक़बूल रसूल हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की इस बातचीत को अव्वल से आख़िर तक देखिये, न कहीं जज़्बात का इज़हार है न उसकी बदगोई का जवाब है, न उसकी सख़्त-कलामी के जवाब में कोई सख़्त कलिमा है बल्कि बराबर अल्लाह जल्ल शानुहू की कमाल वाली सिफ़ात का बयान है, और तब्लीग़ का सिलसिला जारी है।

यह मुख़्तसर नमूना है अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के मुजादलों (बहस-मुबाहसों) का जो अपने दुश्मन और ज़िद्दी कौम के मुक़ाबले में किये गये हैं, और अच्छे अन्दाज़ से बहस-मुबाहसा और समझाना जो क़ुरआन की तालीम है उसकी अ़मली वज़ाहत है।

मुजादलों (बहस-मुबाहसों) के अ़लावा दावत व तब्लीग़ में हर मुख़ातब और हर मौक़े के

मुनासिब कलाम करने में हकीमाना उसूल और उनवान व ताबीर में हिक्मत व मस्लेहत की रियायतें भी जो अम्बिया अलैहिमुस्सलाम ने इख़्तियार फ़रमाई हैं, और अल्लाह की तरफ़ बुलाने को मक़बूल व असरदार और पायेदार बनाने के लिये जो तरीक़ा और व्यवहार इख़्तियार फ़रमाया है वही दर'असल दावत की रूह है। इसकी तफ़सीलात तो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तमाम तालीमात में फैली हुई हैं। नमूने के तौर पर चन्द चीज़ें देखियेः

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को दावत व तब्लीग़ और वअ़ज़ व नसीहत में इसका बड़ा लिहाज़ रहता था कि मुख़ातब पर भार न होने पाये। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम जैसे आशिक़ाने रसूल जिनसे किसी वक़्त भी इसका शुब्हा व गुमान न था कि वे आपकी बातें सुनने से उकता जायेंगे उनके लिये भी आपकी आ़दत यह थी कि वअ़ज़ व नसीहत रोज़ाना नहीं बल्कि हफ़्ते के कुछ दिनों में फ़रमाते थे ताकि लोगों के कारोबार का हर्ज और उनकी तबीयत पर बोझ न हो।

सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हफ़्ते के कुछ दिनों ही में वअ़ज़ फ़रमाते थे ताकि हम उकता न जायें, और दूसरों को भी आपकी तरफ़ से यही हिदायत थी।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

يَسِّرُوْا وَلَا تُعَسِّرُوْا وَبَشِّرُوْا وَلَا تُنَفِّرُوْا. (صحیح بخاری، کتاب العلم)

"लोगों पर आसानी करो दुश्वारी पैदा न करो, और उनको अल्लाह की रहमत की ख़ुशख़बरी सुनाओ, मायूस या नफ़रत करने वाला न बनाओ।"

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि तुम्हें चाहिये कि रब्बानी, अ़क़्लमन्द, उलेमा और फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर) बनो। सही बुख़ारी में यह क़ौल नक़ल करके लफ़्ज़ **रब्बानी** की यह तफ़सीर फ़रमाई है कि जो शख़्स दावत व तब्लीग़ और तालीम में तरबियत के उसूल को ध्यान में रखकर पहले आसान-आसान बातें बतलाये, जब लोग उसके आ़दी हो जायें तो उस वक़्त वो दूसरे अहकाम बतलाये जो शुरू के मरहले में मुश्किल होते, वह आ़लिमे रब्बानी है। आजकल जो वअ़ज़ व तब्लीग़ का असर बहुत कम होता है इसकी बड़ी वजह यह है कि उमूमन इस काम के करने वाले इन उसूल व आदाब की रियायत नहीं करते। लम्बी तक़रीरें, वक़्त बेवक़्त नसीहत, मुख़ातब के हालात को मालूम किये बग़ैर उसको किसी काम पर मजबूर करना उनकी आ़दत बन गई है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को दावत व इस्लाह के काम में इसका भी बड़ा एहतिमाम था कि मुख़ातब का अपमान या रुस्वाई न हो, इसी लिये जब किसी शख़्स को देखते कि किसी ग़लत और बुरे काम में मुब्तला है तो उसको डायरेक्ट संबोधित करने के बजाय आ़म मजमे को मुख़ातब करके फ़रमाते थेः

مَا بَالُ اَقْوَامٍ يَفْعَلُوْنَ كَذَا.

"लोगों को क्या हो गया कि फ़ुलाँ काम करते हैं।"

इस आ़म ख़िताब में जिसको सुनाना असल मक़सद होता वह भी सुन लेता, और दिल में शर्मिन्दा होकर उसके छोड़ने की फ़िक्र में लग जाता था।

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की आ़म आ़दत यही थी कि मुख़ातब को शर्मिन्दगी से बचाते थे, इसी लिये कई बार जो काम मुख़ातब से सर्ज़द हुआ है उसको अपनी तरफ़ मन्सूब करके इस्लाह की कोशिश फ़रमाते। सूरः यासीन में है:

وَمَا لِيَ لَآ اَعْبُدُ الَّذِيْ فَطَرَنِيْ.

"यानी मुझे क्या हो गया कि मैं अपने पैदा करने वाले की इबादत न करूँ।"

ज़ाहिर है कि रसूल के यह क़ासिद तो हर वक़्त इबादत में मशग़ूल थे, सुनाना उस मुख़ातब को था जो इबादत में मशग़ूल नहीं है, मगर इस काम को अपनी तरफ़ मन्सूब फ़रमाया।

और दावत के मायने दूसरे को अपने पास बुलाना है, महज़ उसके ऐब बयान करना नहीं, और यह बुलाना उसी वक़्त हो सकता है जबकि संबोधित करने वाले और मुख़ातब में कोई ताल्लुक़ और कुछ एक जैसा मामला हो। इसी लिये क़ुरआने करीम में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की दावत का उनवान अक्सर "या क़ौमि" से शुरू होता है, जिसमें बिरादराना रिश्ते का साझा होना पहले जतलाकर आगे इस्लाही कलाम किया जाता है कि हम तुम तो एक ही बिरादरी के आदमी हैं, कोई बेताल्लुक़ी या दूरी नहीं होनी चाहिये। यह कहकर उनकी इस्लाह का काम शुरू फ़रमाते हैं।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो दावत का ख़त रूम के बादशाह हिरक़्ल के नाम भेजा उसमें पहले तो रूम के बादशाह को "रूम के महान" के लक़ब से याद फ़रमाया जिसमें उसका जायज़ सम्मान है, क्योंकि इसमें उसके महान होने का इक़रार भी है, मगर रोमियों के लिये, अपने लिये नहीं। इसके बाद ईमान की दावत इस उनवान से दी गई:

يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ. (سورة آل عمران)

"ऐ अहले किताब! उस कलिमे की तरफ़ आ जाओ जो हमारे और तुम्हारे बीच साझा है, यानी यह कि हम अल्लाह के सिवा किसी की इबादत नहीं करेंगे।"

जिसमें पहले आपस का एक साझा एकता का बिन्दू ज़िक्र किया कि तौहीद का अ़क़ीदा हमारे और तुम्हारे बीच मुश्तरक (साझा) है, इसके बाद ईसाईयों की ग़लती पर चेताया।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात पर ध्यान दिया जाये तो हर तालीम व दावत में इसी तरह के आदाब व उसूल मिलेंगे, आजकल अव्वल तो दावत व इस्लाह और 'अम्र बिल्-मारूफ़ व नही अ़निल्-मुन्कर' (यानी अच्छे कामों का हुक्म देने, उनकी तरफ़ तवज्जोह दिलाने और बुरे कामों से रोकने) की तरफ़ ध्यान ही न रहा, और जो इसमें मशग़ूल भी हैं उन्होंने सिर्फ़ बहस व मुबाहसे और मुख़ालिफ़ पर इल्ज़ाम लगाने, फ़िक़रे कसने और उसका अपमान व

तौहीन करने को दावत व तब्लीग़ समझ लिया है जो ख़िलाफ़े सुन्नत होने की वजह से कभी असरदार व मुफ़ीद नहीं होता। वे समझते रहते हैं कि हमने इस्लाम की बड़ी ख़िदमत की और हक़ीक़त में वे लोगों को दीन से नफ़रत दिलाने और दूर करने का सबब बन रहे हैं।

प्रचलित और रिवाजी बहस-मुबाहसों के दीनी और दुनियावी नुक़सानात

ऊपर बयान हुई आयत की तफ़सीर में यह मालूम हो चुका है कि शरीअ़त का असल मक़सद अल्लाह तआ़ला की तरफ़ दावत देना है, जिसके दो उसूल हैं– हिक्मत और मौअ़िज़ते हसना, मुजादले की सूरत कभी सर आ पड़े तो उसके लिये भी **अहसन** की क़ैद लगाकर इजाज़त दे दी गई है, मगर वह हक़ीक़त में दावत का कोई हिस्सा और विभाग नहीं बल्कि उसके मनफ़ी (नकारात्मक) पहलू की एक तदबीर है, जिसमें क़ुरआने करीम ने 'बिल्लती हि-य अहसनु' की क़ैद लगाकर जिस तरह यह बतला दिया है कि वह नर्मी, ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी के जज़्बे से होना चाहिये और उसमें स्पष्ट दलीलें मुख़ातब के हाल की रियायत करते हुए बयान करना चाहिये, मुख़ातब की तौहीन व अपमान से पूरी तरह परहेज़ करना चाहिये। इसी तरह उसके **अहसन** होने के लिये यह भी ज़रूरी है कि वह ख़ुद मुतकल्लिम (कलाम करने वाले) के लिये नुक़सानदेह न हो जाये, कि उसमें बुरे अख़्लाक़ हसद, बुग़ज़, तकब्बुर, बड़ाई चाहना वग़ैरह पैदा न हो जायें, जो अन्दर के बड़े गुनाह हैं और आजकल के बहस व मुबाहसे मुनाज़िरे, मुजादले में शायद ही कोई अल्लाह का बन्दा इनसे निजात पाये तो मुम्किन है वरना आ़दतन इनसे बचना सख़्त दुश्वार है।

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जिस तरह शराब तमाम ख़राबियों की जड़ है कि ख़ुद भी बड़ा गुनाह है और दूसरे बड़े-बड़े जिस्मानी गुनाहों का ज़रिया भी है, इसी तरह बहस व मुबाहसे में जब उद्देश्य मुख़ातब पर ग़लबा पाना और अपनी इल्मी बरतरी लोगों पर ज़ाहिर करना हो जाये तो वह भी बातिन के लिये तमाम बुराईयों की जड़ है जिसके नतीजे में बहुत-से रूहानी रोग और बुराईयाँ पैदा होती हैं, जैसे हसद, बुग़ज़, तकब्बुर, ग़ीबत, दूसरे के ऐबों की तलाश, उसकी बुराई से ख़ुश और भलाई से रंजीदा होना, हक़ के क़ुबूल करने से घमंड के तौर पर इनकार, दूसरे के क़ौल पर इन्साफ़ व एतिदाल के साथ ग़ौर करने के बजाय जवाब देने की फ़िक्र, चाहे उसमें क़ुरआन व सुन्नत में कैसी ही तावीलें (दूर का मतलब बयान) करना पड़ें।

ये तो वो हलाक करने वाली और घातक चीज़ें हैं जिनमें बा-वक़ार व सन्जीदा उलेमा ही मुब्तला होते हैं और मामला जब उनके पैरोकारों में पहुँचता है तो हाथा-पाई और झगड़े व फ़साद के मैदान गर्म हो जाते हैं, इन्ना लिल्लाह। हज़रत इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमायाः

"इल्म तो इल्म व कमाल वालों के बीच भाईचारे और बिरादरी का रिश्ता है तो वे लोग जिन्होंने इल्म ही को दुश्मनी बना लिया है, वे दूसरों को अपने मज़हब की पैरवी की दावत

किस तरह देते हैं, उनका मक़सद तो दूसरे पर ग़लबा पाना ही है, तो फिर उनसे आपसी ताल्लुक़ व मुहब्बत और मुरव्वत का तसव्वुर कैसे किया जा सकता है। और एक इनसान के लिये इससे बढ़कर शर और बुराई और क्या होगी कि वह उसको मुनाफ़िक़ों के अख़्लाक़ में मुब्तला कर दे और मोमिनों व मुत्तक़ी लोगों के अख़्लाक़ से मेहरूम कर दे।"

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि दीन के इल्म और हक़ की दावत में मशग़ूल रहने वाला या तो सही उसूलों के ताबे और तबाह करने वाले ख़तरों से बचने वाला रहकर हमेशा की सआ़दत (नेकबख़्ती व कामयाबी) हासिल कर लेता है या फिर इस मक़ाम से गिरता है तो हमेशा की बदबख़्ती की तरफ़ जाता है, उसका दरमियान में रहना बहुत मुश्किल है, क्योंकि जो इल्म नफ़ा देने वाला न हो वह अ़ज़ाब ही है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اَشَدُّ النَّاسِ عَذَابًا يَّوْمَ الْقِيٰمَةِ عَالِمٌ لَّمْ يَنْفَعْهُ اللّٰهُ بِعِلْمِهٖ.

"सबसे ज़्यादा सख़्त अ़ज़ाब में क़ियामत के दिन वह आ़लिम होगा जिसके इल्म से अल्लाह तआ़ला ने उसको नफ़ा न बख़्शा हो।"

एक दूसरी सही हदीस में है:

لَا تَتَعَلَّمُوا الْعِلْمَ لِتُبَاهُوْا بِهِ الْعُلَمَآءَ وَلِتُمَارُوْا بِهِ السُّفَهَآءَ وَلِتَصْرِفُوْا بِهٖ وُجُوْهَ النَّاسِ اِلَيْكُمْ فَمَنْ فَعَلَ ذٰلِكَ فَهُوَ فِى النَّارِ. (ابن ماجه من حديث جابر با سناد صحيح كذا فى تخريج العراقى على الاحيآء)

"इल्मे दीन को इस ग़र्ज़ से न सीखो कि उसके ज़रिये दूसरे उलेमा के मुक़ाबले में फ़ख़्र व इज़्ज़त हासिल करो, या कम-इल्म लोगों से झगड़े करो, या उसके ज़रिये लोगों की तवज्जोह अपनी तरफ़ कर लो, और जो ऐसा करेगा वह आग में है।"

इसी लिये फ़क़ीह इमामों और अहले हक़ का मस्लक इस मामले में यह था कि इल्मी मसाईल में झगड़ा और बहस हरगिज़ जायज़ नहीं समझते थे, हक़ की दावत के लिये इतना काफ़ी है कि जिसको ख़ता (ग़लती) पर समझे उसको नर्मी और ख़ैरख़्वाही के उनवान से दलीलों के साथ उसकी ख़ता पर आगाह कर दे, फिर वह क़ुबूल कर ले तो बेहतर वरना ख़ामोशी इख़्तियार करे, झगड़े और बुरा कहने से पूरी तरह बचे। हज़रत इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि का इरशाद है:

كَانَ مَالِكٌ يَقُوْلُ الْمِرَآءُ وَ الْجِدَالُ فِى الْعِلْمِ يَذْهَبُ بِنُوْرِ الْعِلْمِ عَنْ قَلْبِ الْعَبْدِ وَقِيْلَ لَهٗ رَجُلٌ لَّهٗ عِلْمٌ بِالسُّنَّةِ فَهَلْ يُجَادِلُ عَنْهَا قَالَ لَا وَلٰكِنْ يُّخْبِرُ بِالسُّنَّةِ فَاِنْ قُبِلَ مِنْهُ وَاِلَّا سَكَتَ. (اوجز المسالك شرح مؤطا ص١٥ج١)

"इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इल्म में झगड़ा और बेकार की बहस इल्म के नूर को इनसान के दिल से निकाल देता है। किसी ने अ़र्ज़ किया कि एक शख़्स जिसको सुन्नत का इल्म हो क्या वह सुन्नत की हिफ़ाज़त के लिये बहस व मुनाज़रा कर सकता है? फ़रमाया नहीं! बल्कि उसको चाहिये कि मुख़ातब को सही बात से आगाह कर दे फिर वह क़ुबूल कर ले तो बेहतर वरना ख़ामोशी इख़्तियार करे।"

इस ज़माने में दावत व इस्लाह का काम पूरी तरह असरदार न होने के दो सबब हैं— एक तो यह कि ज़माने के बिगाड़ और हराम चीज़ों की अधिकता के सबब आम तौर पर लोगों के दिल सख़्त और आख़िरत से ग़ाफ़िल हो गये हैं और हक़ के क़ुबूल करने की तौफ़ीक़ कम हो गई है। और बाज़ तो उस क़हर में मुब्तला हैं जिसकी ख़बर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दी थी कि आख़िरी ज़माने में बहुत-से लोगों के दिल औंधे हो जायेंगे, भले-बुरे की पहचान और जायज़ व नाजायज़ का फ़र्क़ उनके दिल से उठ जायेगा।

और दूसरा सबब यह कि 'अम्र बिल्-मारूफ़ और नही अ़निल्-मुन्कर' (यानी अच्छे काम का हुक्म करना और बुरे काम से रोकना) और हक़ की दावत के फ़राईज़ से ग़फ़लत आम हो गई है, अ़वाम का तो क्या ज़िक्र ख़्वास उलेमा और नेक लोगों में इस ज़रूरत का एहसास बहुत कम है। यह समझ लिया गया है कि अपने आमाल दुरुस्त कर लिये जायें तो यह काफ़ी है, चाहे उनकी औलाद, बीवी, भाई, दोस्त अहबाब कैसे ही गुनाहों में मुब्तला रहें, उनकी इस्लाह की फ़िक्र गोया इनके ज़िम्मे ही नहीं, हालाँकि क़ुरआन व हदीस के स्पष्ट बयानात हर शख़्स के ज़िम्मे अपने अहल व अ़याल और संबन्धित अफ़राद की इस्लाह (सुधार) को फ़र्ज़ क़रार दे रहे हैं। जैसा कि क़ुरआन पाक का इरशाद है— 'क़ू अन्फ़ुसकुम व अहलीकुम् नारन्' यानी अपने और अपने अहल को दोज़ख़ की आग से बचाओ।

और फिर अगर कुछ लोग दावत व इस्लाह के फ़रीज़े की तरफ़ तवज्जोह देते भी हैं तो वे क़ुरआनी तालीमात और पैग़म्बराना दावत के उसूल व आदाब से नावाक़िफ़ हैं, बिना सोचे समझे जिसको जिस वक़्त जो चाहा कह डाला और यह समझ बैठे कि हमने अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया है, हालाँकि यह तरीक़ा और अ़मल नबियों की सुन्नत के ख़िलाफ़ होने की वजह से लोगों को दीन और दीन के अहकाम पर अ़मल करने से और ज़्यादा दूर फेंक देता है।

ख़ास तौर पर जहाँ किसी दूसरे पर तन्क़ीद (आलोचना) की नौबत आये तो तन्क़ीद का नाम लेकर उसकी बुराई करने और अपमान करने व मज़ाक़ उड़ाने तक पहुँच जाते हैं। हज़रत इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमायाः

> "जिस शख़्स को किसी ग़लती पर आगाह व सचेत करना है अगर तुमने उसको तन्हाई में नर्मी के साथ समझाया तो यह नसीहत है और अगर ऐलानिया लोगों के सामने उसको रुस्वा किया तो यह फ़ज़ीहत है।"

आजकल तो एक दूसरे के ऐबों को अख़बारों, इश्तिहारों के ज़रिये सबके सामने लाने को दीन की ख़िदमत समझ लिया गया है, अल्लाह तआ़ला हम सब को अपने दीन और उसकी दावत की सही समझ और आदाब के मुताबिक़ उसकी ख़िदमत की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमायें।

यहाँ तक दावत के उसूल और आदाब का बयान हुआ इसके बाद फ़रमायाः

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيْلِهٖ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ○

यह जुमला दीन की दावत देने वालों की तसल्ली के लिये इरशाद फ़रमाया है, क्योंकि दावत

के उपरोक्त आदाब को इस्तेमाल करने के बावजूद जब मुख़ातब हक़ बात को क़ुबूल न करे तो तबई तौर पर इनसान को सख़्त सदमा पहुँचता है और कई बार उसका यह असर भी हो सकता है कि दावत का फ़ायदा न देखकर आदमी पर मायूसी तारी हो जाये और काम ही छोड़ बैठे, इसलिये इस जुमले में यह फ़रमाया कि आपका काम सिर्फ़ सही उसूलों के मुताबिक़ हक़ की दावत को अदा कर देना हैं, आगे उसको क़ुबूल करना या न करना इसमें न आपका कोई दख़ल है न आपकी ज़िम्मेदारी, वह सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही का काम है, वही जानता है कि कौन गुमराह रहेगा और कौन हिदायत पायेगा, आप इस फ़िक्र में न पड़ें, अपना काम करते रहें। इसमें हिम्मत न हारें, मायूस न हों। इससे मालूम हुआ कि यह जुमला भी दावत के आदाब ही का हिस्सा और पूरक है।

हक़ के दाऔ़ी को कोई तकलीफ़ पहुँचाये तो बदला लेना भी जायज़ है मगर सब्र बेहतर है

इसके बाद की तीन आयतों में हक़ के दावत देने वालों के लिये एक और अहम हिदायत है, वह यह कि कई बार ऐसे सख़्त-दिल जाहिलों से साबक़ा पड़ता है कि उनको कितनी ही नर्मी और ख़ैरख़्वाही से बात समझाई जाये वे उस पर भी आग बगूला हो जाते हैं, बुरा-भला कहकर तकलीफ़ पहुँचाते हैं, और कभी-कभी इससे भी आगे बढ़कर उनको जिस्मानी तकलीफ़ पहुँचाते हैं बल्कि क़त्ल तक से भी गुरेज़ नहीं करते, ऐसे हालात में हक़ की दावत देने वालों को क्या करना चाहिये।

इसके लिये 'व इन् आ़क़ब्तुम......' (यानी आयत नम्बर 126) में एक तो उन हज़रात को क़ानूनी हक़ दिया गया कि जो आप पर ज़ुल्म करे आपको भी उससे अपना बदला लेना जायज़ है मगर इस शर्त के साथ कि बदला लेने में ज़ुल्म की मात्रा और हद से आगे बढ़ना न हो, जितना ज़ुल्म उसने किया है उतना ही बदला लिया जाये, उसमें ज़्यादती न होने पाये।

और आयत के आख़िर में मश्विरा दिया कि अगरचे आपको बदला लेने का हक़ है लेकिन सब्र करें और बदला न लें तो यह बेहतर है।

इन आयतों का शाने नुज़ूल और रसूले करीम सल्ल. और सहाबा की तरफ़ से हुक्म की तामील

क़ुरआन के मुफ़स्सिरीन (व्याख्यापकों) की अक्सरियत और बड़ी जमाअ़त के नज़दीक यह आयत मदनी है, जंगे-उहुद में सत्तर सहाबा की शहादत और हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को क़त्ल करके मुसला करने (नाक-कान वग़ैरह काटकर बेपहचान करने) के वाक़िए में नाज़िल हुई। सही बुख़ारी की रिवायत इसी के मुताबिक़ है। इमाम दारे क़ुतनी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास

रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नकल किया है किः

"उहुद की जंग में जब मुश्रिक लोग लौट गये तो सहाबा किराम में से सत्तर बड़े सहाबा की लाशें सामने आईं, जिनमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा मोहतरम हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु भी थे। चूँकि मुश्रिकों को उन पर बहुत ग़ुस्सा था इसलिये उनको क़त्ल करने के बाद उनकी लाश पर अपना ग़ुस्सा इस तरह निकाला कि उनकी नाक, कान और दूसरे बदनी अंग काटे गये, पेट चाक किया गया, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस मन्ज़र से सख़्त सदमा पहुँचा और आपने फ़रमाया कि मैं हमज़ा के बदले में मुश्रिकों के सत्तर आदमियों का इसी तरह मुसला करूँगा जैसा उन्होंने हमज़ा को किया है। इस वाकिए में ये तीन आयतें नाज़िल हुईं, यानी आयत नम्बर 126 से 128 तक जिनकी यह तफ़सीर बयान हो रही है। कुछ रिवायतों में है कि दूसरे हज़राते सहाबा के साथ भी इन ज़ालिमों ने इसी तरह का मामला मुसला करने का किया था। (जैसा कि इमाम तिर्मिज़ी, अहमद, इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हिब्बान ने अपनी हदीस की किताबों में हज़रत उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नकल किया है)

इसमें चूँकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ग़म की शिद्दत से संख्या का लिहाज़ किये बग़ैर उन सहाबा के बदले में सत्तर मुश्रिकों के मुसला करने का इरादा फ़रमाया था जो अल्लाह के नज़दीक अ़दल व बराबरी के उस उसूल के मुताबिक़ न था जिसको आपके ज़रिये दुनिया में क़ायम करना मन्ज़ूर था, इसलिये एक तो इस पर सचेत फ़रमाया गया कि बदला लेने का हक़ तो है मगर उसी मात्रा और पैमाने पर जिस मात्रा का ज़ुल्म है, संख्या का लिहाज़ किये बग़ैर सत्तर से बदला लेना दुरुस्त नहीं है। दूसरे आपको आला और उम्दा अख़्लाक़ का नमूना बनाना मक़सूद था इसलिये यह नसीहत की गई कि बराबर-सराबर बदला लेने की अगरचे इजाज़त है मगर वह भी छोड़ दो और मुजरिमों पर एहसान करो तो यह ज़्यादा बेहतर है।

इस पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अब हम सब्र ही करेंगे किसी एक से भी बदला नहीं लेंगे, और अपनी क़सम का कफ़्फ़ारा अदा कर दिया।

(तफ़सीरे मज़हरी बग़वी के हवाले से)

मक्का फ़तह होने के मौक़े पर जब ये तमाम मुश्रिक लोग पराजित होकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम के क़ब्ज़े में थे, यह मौक़ा था कि अपना वह इरादा पूरा कर लेते जो जंगे-उहुद के वक़्त किया था, मगर ऊपर बयान हुई आयतों के नाज़िल होने के वक़्त ही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने इरादे को छोड़कर सब्र करने का फ़ैसला फ़रमा चुके थे, इसलिये मक्का फ़तह होने के वक़्त इन आयतों के मुताबिक़ सब्र का अ़मल इख़्तियार किया गया। शायद इसी बिना पर कुछ रिवायतों में यह नक़ल किया गया है कि ये आयतें मक्का फ़तह होने के वक़्त नाज़िल हुई थीं, और यह भी कुछ बईद नहीं कि इन आयतों का नुज़ूल दोबारा हुआ हो, पहले जंगे-उहुद में नाज़िल हुईं और फिर मक्का फ़तह होने के वक़्त दोबारा नाज़िल हुईं। (जैसा कि तफ़सीरे मज़हरी में इब्ने हिसार से नक़ल किया गया है)

मसलाः इस आयत ने बदला लेने में बराबरी का क़ानून बताया है, इसी लिये फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) हज़रात ने फ़रमाया कि जो शख़्स किसी को क़त्ल कर दे उसके बदले में क़ातिल को क़त्ल किया जायेगा, जो ज़ख़्मी कर दे तो उतना ही ज़ख़्म उस करने वाले को लगाया जायेगा, जो किसी का हाथ-पाँव काट डाले फिर क़त्ल कर डाले तो मक़्तूल के वली को हक़ दिया जायेगा कि वह भी पहले क़ातिल का हाथ या पाँव काटे फिर क़त्ल कर दे।

अलबत्ता अगर किसी ने पत्थर मारकर किसी को क़त्ल किया या तीरों से ज़ख़्मी करके क़त्ल किया तो इसमें क़त्ल के अन्दाज़ और तरीक़े की सही हालत व अन्दाज़ा मुतैयन नहीं किया जा सकता कि कितनी चोटों से यह क़त्ल वाक़े हुआ है, और मक़्तूल को कितनी तकलीफ़ पहुँची है, इस मामले में पूरी तरह बराबरी का कोई पैमाना नहीं है, इसलिये उसको तलवार ही से क़त्ल किया जायेगा। (तफ़सीरे जस्सास)

मसलाः आयत का नुज़ूल (उतरना) अगरचे जिस्मानी तकलीफ़ और जिस्मानी नुक़सान पहुँचाने के संबन्ध में हुआ है मगर अलफ़ाज़ आम हैं, जिसमें माली नुक़सान पहुँचाना भी दाख़िल है, इसी लिये फ़ुक़हा हज़रात ने फ़रमाया कि जो शख़्स किसी से उसका माल छीन ले तो उसको भी हक़ हासिल है कि अपने हक़ के मुताबिक़ उससे माल छीन ले, या चोरी करके ले ले, बशर्तेकि जो माल लिया है वह अपने हक़ की जिन्स से हो, जैसे नक़द रुपया लिया है तो उसके बदले में उतना ही नक़द रुपया उससे छीन ले या चोरी के ज़रिये ले सकता है, ग़ल्ला कपड़ा वग़ैरह लिया है तो उसी तरह का ग़ल्ला कपड़ा ले सकता है, मगर एक जिन्स के बदले में दूसरी जिन्स नहीं ले सकता, जैसे रुपये के बदले में कपड़ा या कोई दूसरी इस्तेमाल की चीज़ ज़बरदस्ती नहीं ले सकता। और कुछ उलेमा ने उमूमी इजाज़त दी है कि चाहे हक़ वाली जिन्स से हो या किसी दूसरी जिन्स से, इस मसले की कुछ तफ़सील इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में लिखी है और तफ़सीली बहस मसाईल की किताबों में बयान हुई है।

आयत 'व इन् आक़ब्तुम.......' (यानी आयत नम्बर 126) में आम क़ानून बयान हुआ था जिसमें सब मुसलमानों के लिये बराबर का बदला लेना जायज़ मगर सब्र करना अफ़ज़ल व बेहतर बतलाया गया है, इसके बाद की आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़ुसूसी ख़िताब फ़रमाकर सब्र करने की हिदायत व तरग़ीब दी गई है, क्योंकि आपकी बड़ी शान और ऊँचे मक़ाम के लिये दूसरों के मुक़ाबले में वही ज़्यादा उचित व मुनासिब है इसलिये फ़रमायाः

وَاصْبِرْ وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ

यानी आप तो इन्तिक़ाम (बदला लेने) का इरादा ही न करें, सब्र ही को इख़्तियार करें। और साथ ही यह भी बतला दिया कि आपका सब्र अल्लाह ही की मदद से होगा, यानी सब्र करना आपके लिये आसान कर दिया जायेगा।

आख़िरी आयत में फिर एक आम क़ायदा अल्लाह तआला की नुसरत व मदद हासिल होने का यह बतला दियाः

إِنَّ اللَّهَ مَعَ الَّذِينَ اتَّقَوا وَّالَّذِينَ هُم مُّحْسِنُونَ ۝

जिसका हासिल यह है कि अल्लाह तआ़ला की मदद उन लोगों के साथ होती है जो दो सिफ़तों को अपने अन्दर रखते हों-- एक तक़वा दूसरे एहसान। तक़वे का हासिल नेक अ़मल करना और एहसान का मफ़्हूम इस जगह अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ के साथ अच्छा सुलूक करना है, यानी जो लोग शरीअ़त के मुताबिक़ नेक आमाल के पाबन्द हों और दूसरों के साथ एहसान का मामला करते हों हक़ तआ़ला उनके साथ है, और यह ज़ाहिर है कि जिसको अल्लाह तआ़ला का साथ (मदद) हासिल हो उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है।

अल्हम्दु लिल्लाह सूरः नहल की तफ़सीर आज 25 शाबान सन् 1389 हिजरी शनिवार की रात में पूरी हुई।

* सूरः बनी इस्राईल *

यह सूरत मक्की है। इसमें 111 आयतें और 12 रुकूअ़ हैं।

सूरः बनी इस्राईल (पारा 15)

सूरः बनी इस्राईल मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 111 आयतें और 12 रुकूअ़ हैं।

اٰیَاتُهَا ۱۱۱ (۱۷) سُوْرَةُ بَنِیْٓ اِسْرَآءِیْلَ مَکِّیَّةٌ (۵۰) رُکُوْعَاتُهَا ۱۲

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

سُبْحٰنَ الَّذِیْٓ اَسْرٰی بِعَبْدِهٖ لَیْلًا مِّنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَی الْمَسْجِدِ الْاَقْصَا الَّذِیْ بٰرَکْنَا حَوْلَهٗ لِنُرِیَهٗ مِنْ اٰیٰتِنَا ؕ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِیْعُ الْبَصِیْرُ ۝

الجزء الخامس عشر — ١٥

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

सुब्हानल्लज़ी अस्रा बिअ़ब्दिही लैलम् मिनल्-मस्जिदिल्-हरामि इलल् मस्जिदिल्-अक़्सल्लज़ी बारक्ना हौलहू लिनुरियहू मिन् आयातिना इन्नहू हुवस्समीअ़ुल्-बसीर (1)	पाक ज़ात है जो ले गया अपने बन्दे को रातों रात मस्जिद-ए-हराम से मस्जिद-ए-अक़्सा तक, जिसको घेर रखा है हमारी बरकत ने ताकि दिखलायें उसको कुछ अपनी क़ुदरत के नमूने, वही है सुनने वाला देखने वाला। (1)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह पाक ज़ात है जो अपने बन्दे (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को रात के वक़्त मस्जिदे हराम (यानी काबे की मस्जिद) से मस्जिदे अक़्सा (यानी बैतुल-मुक़द्दस) तक, जिसके आस-पास (कि मुल्के शाम है) हमने (दीनी और दुनियावी) बरकतें कर रखी हैं (दीनी बरकत यह है कि वहाँ कसरत से अम्बिया हज़रात दफ़न हैं, और दुनियावी बरकत यह है कि वहाँ बाग़ों और नहरों, चश्मों और पैदावार की अधिकता है, ग़र्ज़ कि उस मस्जिदे अक़्सा तक अ़जीब तौर पर इस वास्ते) ले गया ताकि हम उनको अपनी क़ुदरत के कुछ नमूने और करिश्मे दिखला दें (जिनमें कुछ तो ख़ुद वहाँ से संबन्धित हैं जैसे इतनी बड़ी दूरी को बहुत थोड़े से वक़्त में तय कर लेना और तमाम नबियों से मुलाक़ात करना और उनकी बातें सुनना वग़ैरह, और कुछ आगे से संबन्धित हैं जैसे आसमानों पर जाना और वहाँ की अ़जीब व ग़रीब चीज़ों को देखना) बेशक

अल्लाह तआ़ला बड़े सुनने वाले, बड़े देखने वाले हैं (चूँकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि सल्लम की बातों को सुनते और हालात को देखते थे उसके मुनासिब उनको यह ख़ास विशेषता और सम्मान बख़्शा और अपनी निकटता का वह ख़ास मक़ाम अ़ता किया जो किसी को नहीं मिला)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस आयत में मेराज के वाक़िए का बयान है जो हमारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का एक ख़ुसूसी सम्मान और इम्तियाज़ी मोजिज़ा है। लफ़्ज़ अस्रा इस्रा से निकला है जिसके लुग़वी मायने रात को लेजाना हैं, इसके बाद लैलन के लफ़्ज़ से स्पष्ट रूप से भी इस मफ़्हूम को वाज़ेह कर दिया, और लफ़्ज़ लैलन से इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि इस तमाम वाक़िए में पूरी रात भी ख़र्च नहीं हुई बल्कि रात का एक हिस्सा इस्तेमाल हुआ है। मस्जिदे हराम से मस्जिदे अक़्सा तक का सफ़र जिसका ज़िक्र इस आयत में है इसको इस्रा कहते हैं, और यहाँ से जो सफ़र आसमानों की तरफ़ हुआ उसका नाम मेराज है। इस्रा इस आयत की क़तई दलील व स्पष्ट बयान से साबित है और मेराज का ज़िक्र सूरः नज्म की आयतों में है, और निरन्तर हदीसों से साबित है।

"बि-अ़ब्दिही" इकराम व सम्मान के इस मक़ाम में लफ़्ज़ बि-अ़ब्दिही एक ख़ास महबूबियत की तरफ़ इशारा है, क्योंकि हक़ तआ़ला किसी को ख़ुद फ़रमा दें कि यह मेरा बन्दा है इससे बढ़कर किसी बशर का बड़ा सम्मान नहीं हो सकता। हज़रत हसन देहलवी ने ख़ूब फ़रमायाः

बन्दा हसन ब-सद् ज़ुबान गुफ़्त कि बन्दा-ए-तू अम्
तू ब-ज़ुबाने ख़ुद बगो बन्दा-नवाज़ कीस्ती

यह ऐसा ही है जैसे एक दूसरी आयत में 'अ़िबादुर्रहमानिल्लज़ी-न..........'' फ़रमाकर अपनी बारगाह के मक़बूल बन्दों का सम्मान व इ़ज़्ज़त बढ़ाना मक़सूद है। इससे यह भी मालूम हुआ कि इनसान का सबसे बड़ा कमाल यह है कि वह अल्लाह का कामिल बन्दा बन जाये, इसलिये कि ख़ुसूसी सम्मान के मक़ाम पर आपकी बहुत सी कमाल वाली सिफ़ात में से बन्दगी की सिफ़त को इख़्तियार किया गया। और इस लफ़्ज़ से एक बड़ा फ़ायदा यह भी मक़सूद है कि इस हैरत-अंगेज़ सफ़र से जिसमें अव्वल से आख़िर तक सब आ़म इनसानी आ़दत व ताक़त से ऊपर की बातें यानी मोजिज़े ही हैं किसी को ख़ुदाई का वहम न हो जाये, जैसे ईसा अ़लैहिस्सलाम के आसमान पर उठाये जाने से ईसाईयों को धोखा लगा है, इसलिये लफ़्ज़ अ़ब्द कहकर यह बतला दिया कि इन तमाम सिफ़ात व कमालात और मोजिज़ों के बावजूद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के बन्दे ही हैं, ख़ुदा नहीं।

मेराज के जिस्मानी होने पर क़ुरआन व सुन्नत की दलीलें और उम्मत का इजमा

क़ुरआन मजीद के इरशादात और मुतवातिर हदीसों से जिनका ज़िक्र आगे आता है साबित

है कि इस्रा व मेराज का तमाम सफ़र सिर्फ़ रूहानी नहीं था बल्कि जिस्मानी था, जैसे आ़म इनसान सफ़र करते हैं। क़ुरआने करीम के पहले ही लफ़्ज़ सुब्हा-न में इस तरफ़ इशारा मौजूद है, क्योंकि यह लफ़्ज़ ताज्जुब और किसी अ़ज़ीमुश्शान काम के लिये इस्तेमाल होता है। अगर मेराज सिर्फ़ रूहानी ख़्वाब के तौर पर होती तो इसमें कौनसी अ़जीब बात है, ख़्वाब तो हर मुसलमान बल्कि हर इनसान देख सकता है कि मैं आसमान पर गया, फ़ुलाँ-फ़ुलाँ काम किये।

दूसरा इशारा लफ़्ज़ अ़ब्द से इसी तरफ़ है, क्योंकि अ़ब्द (बन्दा) सिर्फ़ रूह नहीं बल्कि जिस्म व रूह के मजमूए का नाम है। इसके अ़लावा मेराज का वाक़िआ आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अ़न्हा को बतलाया तो उन्होंने हुज़ूरे पाक को यह मश्विरा दिया कि आप इसका किसी से ज़िक्र न करें वरना लोग और ज़्यादा आपको झुठलायेंगे, अगर मामला ख़्वाब का होता तो इसमें झुठलाने की क्या बात थी।

फिर जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लोगों पर इसका इज़हार किया तो मक्का के काफ़िरों ने झुठलाया और मज़ाक़ उड़ाया, यहाँ तक कि कुछ नौमुस्लिम इस ख़बर को सुनकर मुर्तद हो गये (यानी इस्लाम से फिर गये) अगर मामला ख़्वाब का होता तो इन मामलात की क्या संभावना थी और यह बात इसके विरुद्ध नहीं कि आपको इससे पहले और बाद में कोई रूहानी मेराज ख़्वाब की सूरत में भी हुई हो, उम्मत के उलेमा की अक्सरियत के नज़दीक क़ुरआन की आयतः

وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّتِىْٓ اَرَيْنٰكَ

में 'अरैना-क' से मुराद 'रूयत' है मगर इसको 'रुअ्या' लफ़्ज़ के साथ (जो अक्सर ख़्वाब देखने के मायने में इस्तेमाल होता है) ताबीर करने की वजह यह हो सकती है कि इस मामले को तश्बीह (मिसाल देने) के तौर पर 'रुअ्या' कहा गया हो, कि इसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई ख़्वाब देख ले। और अगर 'रुअ्या' के मायने ख़्वाब ही के लिये जायें तो यह भी कुछ दूर की बात नहीं कि मेराज के जिस्मानी वाक़िए के अ़लावा उससे पहले या बाद में यह रूहानी मेराज ख़्वाब के तौर पर भी हुई हो, इसलिये हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उम्मुल-मोमिनीन हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से जो इस वाक़िए का ख़्वाब होना मन्क़ूल है वह भी अपनी जगह सही है मगर इससे यह लाज़िम नहीं आता कि जिस्मानी मेराज न हुई हो।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि 'इस्रा' (यानी मेराज वाली) हदीसें मुतवातिर हैं और नक़्क़ाश ने बीस सहाबा किराम की रिवायतें इस बारे में नक़ल की हैं, और क़ाज़ी अ़याज़ ने शिफ़ा में और ज़्यादा तफ़सील दी है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और इमाम इब्ने कसीर ने अपनी तफ़सीर में इन तमाम रिवायतों को पूरी छान-पिछोड़ के साथ नक़ल किया है, फिर पच्चीस सहाबा किराम के नाम ज़िक्र किये हैं जिनसे ये रिवायतें मन्क़ूल हैं। उनके नाम ये हैं: 1. हज़रत उमर इब्ने ख़त्ताब। 2. अ़ली मुर्तज़ा। 3. इब्ने मसऊद। 4. अबूज़र ग़िफ़ारी। 5. मालिक बिन सअ़्सआ़। 6. अबू हुरैरह। 7. अबू सईद। 8. इब्ने अ़ब्बास।

9. शद्दाद बिन औस। 10. उबई बिन कअ़ब। 11. अ़ब्दुर्रहमान बिन क़रज़। 12. अबू हय्या। 13. अबू लैला। 14. अ़ब्दुल्लाह बिन उमर। 15. जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह। 16. हुज़ैफ़ा बिन यमान। 17. बरीदा। 18. अबू अय्यूब अन्सारी। 19. अबू उमामा। 20. समुरा बिन जुन्दुब। 21. अबू हमरा। 22. सुहैब रूमी। 23. उम्मे हानी। 24. उम्मुल-मोमिनीन हज़रत आयशा। 25. अस्मा बिन्ते अबी बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हुम अज्मईन। इसके बाद इमाम इब्ने कसीर ने फ़रमायाः

فَحَدِيْثُ الاسراءِ اجمع عليه المسلمون واعرض عنه الزنادقة والملحدون. (ابن كثير)

कि इस्रा के वाक़िए की हदीस पर तमाम मुसलमानों का इजमा (एक राय) है, सिर्फ़ गुमराह व बेदीन लोगों ने इसको नहीं माना।

मेराज का मुख़्तसर वाक़िआ

इमाम इब्ने कसीर रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की रिवायत से

इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर में उपरोक्त आयत की तफ़सीर और संबन्धित हदीसों की तफ़सील बयान करने के बाद फ़रमाया कि हक़ बात यह है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस्रा का सफ़र जागने की हालत में पेश आया, ख़्वाब में नहीं। मक्का मुकर्रमा से बैतुल-मुक़द्दस तक यह सफ़र बुर्राक़ पर हुआ। जब बैतुल-मुक़द्दस के दरवाज़े पर पहुँचे तो बुर्राक़ को दरवाज़े के क़रीब बाँध दिया और आप मस्जिदे बैतुल-मुक़द्दस में दाख़िल हुए और उसके क़िब्ले की तरफ़ तहिय्यतुल-मस्जिद की दो रकअ़तें अदा फ़रमाईं, उसके बाद एक ज़ीना लाया गया जिसमें नीचे से ऊपर जाने के दर्जे बने हुए थे, उस ज़ीने के ज़रिये आप पहले आसमान पर तशरीफ़ ले गये। उसके बाद बाक़ी आसमानों पर तशरीफ़ ले गये (उस ज़ीने की हक़ीक़त तो अल्लाह तआ़ला को ही मालूम है कि क्या और कैसा था, आजकल भी ज़ीने की बहुत सी क़िस्में दुनिया में राइज हैं, ऐसे ज़ीने भी हैं जो ख़ुद हरकत करने में लिफ़्ट की सूरत के हैं। इस मोजिज़े वाले ज़ीने के मुताल्लिक़ किसी शक व शुब्हे में पड़ने का कोई मक़ाम नहीं)। हर आसमान में वहाँ के फ़रिश्तों ने आपका स्वागत किया और हर आसमान में उन नबियों से मुलाक़ात हुई जिनका मक़ाम किसी निर्धारित आसमान में है, जैसे छठे आसमान पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और सातवें आसमान में हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई, फिर आप उन तमाम नबियों के मक़ामात से भी आगे तशरीफ़ ले गये और एक ऐसे मैदान में पहुँचे जहाँ तक़दीर के क़लम के लिखने की आवाज़ सुनाई दे रही थी और आपने सिद्रतुल-मुन्तहा को देखा जिस पर अल्लाह जल्ल शानुहू के हुक्म से सोने के परवाने और विभिन्न रंग के परवाने गिर रहे थे, और जिसको अल्लाह के फ़रिश्तों ने घेरा हुआ था, उसी जगह हज़रत जिब्रीले अमीन को आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी असल शक्ल में देखा जिनके छह सौ बाज़ू (पंख) थे और वहीं पर एक रफ़रफ़ हरे रंग का देखा जिसने आसमान के किनारे को घेरे हुए था। रफ़रफ़ एक हरे रंग की पालकी के जैसा था।

और आपने बैतुल-मामूर को भी देखा जिसके पास काबे का निर्माण करने वाले हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम दीवार से कमर लगाये हुए बैठे थे। उस बैतुल-मामूर में रोज़ाना सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दाख़िल होते हैं जिनकी बारी दोबारा दाख़िल होने की क़ियामत तक नहीं आती, और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जन्नत और दोज़ख़ को ख़ुद अपनी आँख से देखा, उस वक़्त आपकी उम्मत पर शुरू में पचास नमाज़ों के फ़र्ज़ होने का हुक्म मिला फिर कमी करके पाँच कर दी गईं, इससे तमाम इबादतों के अन्दर नमाज़ की ख़ास अहमियत और फ़ज़ीलत साबित होती है।

उसके बाद आप वापस बैतुल-मुक़द्दस में उतरे और जिन अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के साथ मुख़्तलिफ़ आसमानों में मुलाक़ात हुई थी वे भी आपके साथ उतरे (गोया) आपको रुख़्सत करने के लिये बैतुल-मुक़द्दस तक साथ आये, उस वक़्त आपने नमाज़ का वक़्त हो जाने पर तमाम अम्बिया के साथ नमाज़ अदा फ़रमाई, यह भी हो सकता है कि यह नमाज़ उसी दिन की सुबह की नमाज़ हो। इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि नबियों की इमामत का यह वाक़िआ़ कुछ हज़रात के नज़दीक आसमान पर जाने से पहले पेश आया है, लेकिन ज़ाहिर यह है कि यह वाक़िआ़ वापसी के बाद हुआ, क्योंकि आसमानों पर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से मुलाक़ात के वाक़िए में यह नक़ल किया गया है कि सब अम्बिया से जिब्रीले अमीन ने आपका परिचय कराया। अगर इमामत का वाक़िआ़ पहले हो चुका होता तो यहाँ परिचय की ज़रूरत न होती, और यूँ भी ज़ाहिर यही है कि इस सफ़र का असल मक़सद 'मला-ए-आला' में जाने का था, पहले उसी को पूरा करना ज़्यादा सही मालूम होता है, फिर जब इस असल काम से फ़राग़त हुई तो तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम आपके साथ रुख़्सत करने के लिये बैतुल-मुक़द्दस तक आये और आपको जिब्रीले अमीन के इशारे से सब का इमाम बनाकर आपकी सरदारी और सब पर फ़ज़ीलत का अ़मली सुबूत दिया गया।

इसके बाद आप बैतुल-मुक़द्दस से रुख़्सत हुए और बुर्राक़ पर सवार होकर अंधेरे वक़्त में मक्का मुकर्रमा पहुँच गये। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

मेराज के वाक़िए के मुताल्लिक़ एक ग़ैर-मुस्लिम की गवाही

तफ़सीर इब्ने कसीर में है कि हाफ़िज़ अबू नुऐम अस्बहानी ने अपनी किताब 'दलाईल-ए-नुबुव्वत' में मुहम्मद बिन उमर वाक़िदी (1) की सनद से मुहम्मद बिन कअ़ब क़रज़ी की रिवायत से यह वाक़िआ़ नक़ल किया है कि:

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने रूम के बादशाह के पास अपना पत्र मुबारक देकर हज़रत दहया इब्ने ख़लीफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को भेजा, उसके बाद हज़रत दहया के ख़त

(1) वाक़िदी रहमतुल्लाहि अ़लैहि को हदीस की रिवायत में मुहद्दिसीन ने ज़ईफ़ कहा है लेकिन इमाम इब्ने कसीर जैसे एहतियात-पसन्द मुहद्दिस ने उनकी रिवायत को नक़ल किया है इसलिये कि इस मामले का ताल्लुक़ अ़क़ाइद या हलाल व हराम से नहीं और ऐसे तारीख़ी मामलात में उनकी रिवायत मोतबर है।

पहुँचाने और रूम के बादशाह तक पहुँचने और उसके अ़क्ल व समझ वाला होने का तफ़सीली वाक़िआ़ बयान किया (जो सही बुख़ारी और हदीस की सब मोतबर किताबों में मौजूद है, जिसके आख़िर में है कि रूम के बादशाह हिरक़्ल ने ख़त मुबारक पढ़ने के बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हालात की तहक़ीक़ करने के लिये अ़रब के उन लोगों को जमा किया जो उस वक़्त उनके मुल्क में तिजारत के मक़सद से आये हुए थे, शाही हुक्म के मुताबिक़ अबू सुफ़ियान इब्ने हरब और उनके साथी जो उस वक़्त मशहूर तिजारती क़ाफ़िला लेकर शाम में आये हुए थे वे हाज़िर किये गये। बादशाह हिरक़्ल ने उनसे वे सवालात किये जिनकी तफ़सील सही बुख़ारी व मुस्लिम वग़ैरह में मौजूद है। अबू सुफ़ियान की दिली इच्छा यह थी कि वह इस मौक़े पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में कुछ ऐसी बातें बयान करें जिनसे आपका हक़ीर और बेहैसियत होना ज़ाहिर हो, मगर अबू सुफ़ियान कहते हैं कि मुझे अपने इस इरादे से कोई चीज़ इसके सिवा बाधा नहीं थी कि कहीं मेरी ज़बान से कोई ऐसी बात निकल जाये जिसका झूठ होना खुल जाये और मैं बादशाह की नज़र में गिर जाऊँ और मेरे साथी भी हमेशा मुझे झूठा होने का ताना दिया करें। अलबत्ता मुझे उस वक़्त ख़्याल आया कि इसके सामने मेराज का वाक़िआ़ बयान करूँ जिसका झूठ होना बादशाह ख़ुद समझ लेगा, तो मैंने कहा कि मैं उनका एक मामला आप से बयान करता हूँ जिसके मुताल्लिक़ आप ख़ुद मालूम कर लेंगे कि वह झूठ है। हिरक़्ल ने पूछा वह क्या वाक़िआ़ है? अबू सुफ़ियान ने कहा कि वह नुबुव्वत के दावेदार कहते हैं कि वह एक रात में मक्का मुकर्रमा से निकले और आपकी इस मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस में पहुँचे और फिर उसी रात में सुबह से पहले मक्का मुकर्रमा में हमारे पास पहुँच गये।

ईलिया (बैतुल-मुक़द्दस) का सबसे बड़ा आ़लिम उस वक़्त रूम के बादशाह हिरक़्ल के सिरहाने पर क़रीब खड़ा हुआ था, उसने बयान किया कि मैं उस रात से वाक़िफ़ हूँ। रूम का बादशाह उसकी तरफ़ मुतवज्जह हुआ और पूछा कि आपको उसका इल्म कैसे और क्योंकर हुआ? उसने अ़र्ज़ किया कि मेरी आ़दत थी कि मैं रात को उस वक़्त तक सोता नहीं था जब तक बैतुल-मुक़द्दस के तमाम दरवाज़े बन्द न कर दूँ। उस रात मैंने आ़दत के अनुसार तमाम दरवाज़े बन्द कर दिये मगर एक दरवाज़ा मुझसे बन्द न हो सका तो मैंने अपने अ़मले के लोगों को बुलाया, उन्होंने मिलकर कोशिश की मगर वह उनसे भी बन्द न हो सका। दरवाज़े के किवाड़ अपनी जगह से हरकत न कर सके, ऐसा मालूम होता था कि जैसे हम किसी पहाड़ को हिला रहे हैं। मैंने आ़जिज़ आकर कारीगरों और मिस्त्रियों को बुलवया, उन्होंने देखकर कहा कि इन किवाड़ों के ऊपर इमारत का बोझ पड़ गया है अब सुबह से पहले इसके बन्द होने की कोई तदबीर नहीं, सुबह को हम देखेंगे कि किस तरह किया जाये। मैं मजबूर होकर लौट आया और दोनों किवाड़ उस दरवाज़े के खुले रहे। सुबह होते ही मैं फिर उस दरवाज़े पर पहुँचा तो मैंने देखा कि मस्जिद के दरवाज़े के पास एक पत्थर की चट्टान में सूराख़ किया हुआ है, और ऐसा महसूस होता है कि यहाँ कोई जानवर बाँधा गया है। उस वक़्त मैंने अपने साथियों से कहा था कि आज इस दरवाज़े को अल्लाह तआ़ला ने शायद इसलिये बन्द होने से रोका है कि कोई नबी यहाँ आने

वाले थे और फिर बयान किया कि उस रात आपने हमारी मस्जिद में नमाज़ भी पढ़ी है, इसके बाद और तफ़सीलात बयान की हैं। (तफ़सीर इब्ने कसीर जिल्द 3)

इस्रा व मेराज की तारीख़

इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में फ़रमाया कि मेराज की तारीख़ में रिवायतें बहुत मुख़्तलिफ़ (भिन्न) हैं— मूसा बिन उक़्बा की रिवायत यह है कि यह वाक़िआ मदीना की हिजरत से छह माह पहले पेश आया और हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि हज़रत ख़दीजा उम्मुल-मोमिनीन रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात नमाज़ों के फ़र्ज़ होने से पहले हो चुकी थी, इमाम ज़ोहरी फ़रमाते हैं कि हज़रत ख़दीजा रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात का वाक़िआ नुबुव्वत मिलने के सात साल बाद हुआ है।

कुछ रिवायतों में है कि मेराज का वाक़िआ नुबुव्वत मिलने से पाँच साल बाद में हुआ है। इब्ने इस्हाक़ कहते हैं कि मेराज का वाक़िआ उस वक़्त पेश आया जबकि इस्लाम अ़रब के आ़म क़बीलों में फैल चुका था, इन तमाम रिवायतों का हासिल यह है कि मेराज का वाक़िआ मदीने की हिजरत से कई साल पहले का है।

हरबी कहते हैं कि इस्रा व मेराज का वाक़िआ रबीउस्सानी की सत्ताईसवीं रात में हिजरत से एक साल पहले हुआ है, और इब्ने क़ासिम ज़हबी कहते हैं कि नुबुव्वत मिलने से अट्ठारह महीने के बाद यह वाक़िआ पेश आया है। हज़राते मुहद्दिसीन ने विभिन्न और अनेक रिवायतें ज़िक्र करने के बाद कोई निर्णायक बात नहीं लिखी और मशहूर आ़म तौर पर यह है कि रजब के महीने की सत्ताईसवीं रात शब-ए-मेराज है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम

मस्जिद-ए-हराम और मस्जिद-ए-अक़्सा

हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया कि दुनिया की सबसे पहली मस्जिद कौनसी है? तो आपने फ़रमाया कि "मस्जिद-ए-हराम"। फिर मैंने अ़र्ज़ किया कि उसके बाद कौनसी? तो आपने फ़रमाया "मस्जिद-ए-अक़्सा"। मैंने पूछा कि इन दोनों के बीच कितनी मुद्दत का फ़ासला है? तो आपने फ़रमाया चालीस साल। फिर फ़रमाया कि (मस्जिदों की तरतीब तो यह है) लेकिन अल्लाह तआ़ला ने हमारे लिये सारी ज़मीन को मस्जिद बना दिया है, जिस जगह नमाज़ का वक़्त हो जाये वहीं नमाज़ अदा कर लिया करो। (मुस्लिम शरीफ़)

इमामे तफ़सीर मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने बैतुल्लाह की जगह को पूरी ज़मीन से दो हज़ार साल पहले बनाया है और इसकी बुनियादें सातवीं ज़मीन के अन्दर तक पहुँची हुई हैं, और मस्जिद-ए-अक़्सा को हज़रत सुलैमान अ़लैहिस्सलाम ने बनाया है।

(नसाई, सही सनद के साथ अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि. की रिवायत से, तफ़सीरे क़ुर्तुबी पेज 137 जिल्द 4)

और मस्जिद-ए-हराम उस मस्जिद का नाम है जो बैतुल्लाह के गिर्द बनी हुई है, और कई

बार पूरे हरम को भी मस्जिद-ए-हराम से ताबीर किया जाता है। इस दूसरे मायने के एतिबार से दो रिवायतों का यह टकराव भी ख़त्म हो जाता है कि कुछ रिवायतों में आपका इस्रा के लिये तशरीफ़ ले जाना हज़रत उम्मे हानी के मकान से मन्क़ूल है और कुछ में बैतुल्लाह के हतीम से, अगर मस्जिद-ए-हराम के आम मायने लिये जायें तो हो सकता है कि पहले आप उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अन्हा के मकान में हों, वहाँ से चलकर काबा के हतीम में तशरीफ़ लाये, फिर वहाँ से इस्रा के सफ़र की शुरूआत हुई। वल्लाहु आलम

मस्जिद-ए-अक़्सा और मुल्के शाम की बरकतें

आयत में 'बारक्ना हौलहू' में **हौल** से मुराद मुल्क शाम की पूरी ज़मीन है। एक हदीस में है कि अल्लाह तआ़ला ने अ़र्श से फ़ुरात के दरिया तक मुबारक ज़मीन बनाई है और उसमें से फ़िलिस्तीन की ज़मीन को ख़ास पाकीज़गी अ़ता फ़रमाई है। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

उसकी बरकतें दीनी भी हैं और दुनियावी भी। दीनी बरकतें तो ये हैं कि वह तमाम पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का क़िब्ला और तमाम नबियों का ठिकाना व मदफ़न (दफ़न होने का स्थान) है, और दुनियावी बरकतें उसकी ज़मीन का सरसब्ज़ (हरा-भरा और उपजाऊ) होना और उसमें उम्दा चश्मे, नहरें बाग़ात वग़ैरह का होना है।

हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया— ऐ मुल्के शाम! तू तमाम शहरों में से मेरा चुनिन्दा ख़ित्ता है, और मैं तेरी तरफ़ अपने चुने हुए और ख़ास बन्दों को पहुँचाऊँगा। (क़ुर्तुबी)

और मुस्नद अहमद में हदीस है कि दज्जाल सारी ज़मीन में फिरेगा मगर चार मस्जिदों तक उसकी पहुँच न होगी— 1. मस्जिद-ए-मदीना। 2. मस्जिद-ए-मक्का मुकर्रमा। 3. मस्जिद-ए-अक़्सा। 4. मस्जिद-ए-तूर।

وَاٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَجَعَلْنٰهُ هُدًى لِّبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اَلَّا تَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِيْ وَكِيْلًا ۝ ذُرِّيَّةَ مَنْ حَمَلْنَا مَعَ نُوْحٍ ۭ اِنَّهٗ كَانَ عَبْدًا شَكُوْرًا ۝

व आतैना मूसल्-किता-ब व जअ़ल्नाहु हुदल् लि-बनी इस्राई-ल अल्ला तत्तख़िज़ू मिन् दूनी वकीला (2) ज़ुर्रिय्य-त मन् हमल्ना म-अ़ नूहिन् इन्नहू का-न अ़ब्दन् शकूरा (3)	और दी हमने मूसा को किताब और किया उसको हिदायत बनी इस्राईल के वास्ते, कि न ठहराओ मेरे सिवा किसी को कारसाज़। (2) तुम जो औलाद हो उन लोगों की जिनको चढ़ाया हमने नूह के साथ, बेशक वह था बन्दा हक़ मानने वाला। (3)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मूसा (अलैहिस्सलाम) को किताब (यानी तौरात) दी, और हमने उसको बनी इस्राईल के लिये हिदायत (का ज़रिया) बनाया (जिसमें और अहकाम के साथ यह तौहीद का अज़ीमुश्शान हुक्म भी था) कि तुम मेरे सिवा (अपना) कोई कारसाज़ मत क़रार दो। ऐ उन लोगों की नस्ल! जिनको हमने नूह (अलैहिस्सलाम) के साथ (कश्ती में) सवार किया था (हम तुम से ख़िताब कर रहे हैं ताकि इस नेमत को याद करो कि अगर हम उनको कश्ती पर सवार करके न बचाते तो आज तुम उनकी नस्ल कहाँ होते, और नेमत को याद करके उसका शुक्र करो जिसकी बड़ी इकाई तौहीद है और) वह नूह अलैहिस्सलाम बड़े शुक्रगुज़ार बन्दे थे (पस जब अम्बिया शुक्र करते रहे तो तुम कैसे उसके छोड़ने वाले हो सकते हो)।

وَقَضَيْنَآ اِلٰى بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ فِي الْكِتٰبِ لَتُفْسِدُنَّ فِي الْاَرْضِ مَرَّتَيْنِ وَلَتَعْلُنَّ
عُلُوًّا كَبِيْرًا ۝ فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ اُوْلٰىهُمَا بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَّنَآ اُولِيْ بَاْسٍ شَدِيْدٍ فَجَاسُوْا خِلٰلَ الدِّيَارِ
وَكَانَ وَعْدًا مَّفْعُوْلًا ۝ ثُمَّ رَدَدْنَا لَكُمُ الْكَرَّةَ عَلَيْهِمْ وَاَمْدَدْنٰكُمْ بِاَمْوَالٍ وَّبَنِيْنَ وَجَعَلْنٰكُمْ اَكْثَرَ نَفِيْرًا ۝
اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ لِيَسُوْٓءٗا وُجُوْهَكُمْ وَلِيَدْخُلُوا
الْمَسْجِدَ كَمَا دَخَلُوْهُ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّلِيُتَبِّرُوْا مَا عَلَوْا تَتْبِيْرًا ۝ عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يَّرْحَمَكُمْ وَاِنْ عُدْتُّمْ
عُدْنَا وَجَعَلْنَا جَهَنَّمَ لِلْكٰفِرِيْنَ حَصِيْرًا ۝

व क़ज़ैना इला बनी इस्राई-ल फ़िल्-किताबि लतुफ़्सिदुन्-न फ़िल्अर्ज़ि मर्रतैनि व ल-तअ्लुन्-न अ़ुलुव्वन् कबीरा (4) फ़-इज़ा जा-अ वअ्दु ऊलाहुमा बअ़स्ना अ़लैकुम् अ़िबादल्-लना उली बअ्सिन् शदीदिन् फ़जासू ख़िलालद्दियारि, व का-न वअ्दम्-मफ़्अूला (5) सुम्-म रदद्ना लकुमुल्-क र्र-त अ़लैहिम् व अम्दद्नाकुम् बिअम्वालिंव्-व बनी-न व जअ़ल्नाकुम्	और साफ़ कह सुनाया हमने बनी इस्राईल को किताब में कि तुम ख़राबी करोगे मुल्क में दो बार और सरकशी करोगे बड़ी सरकशी। (4) फिर जब आया पहला वायदा भेजे हमने तुम पर अपने बन्दे सख़्त लड़ाई वाले, फिर फैल पड़े शहरों के बीच और वह वायदा होना ही था। (5) फिर हमने फेर दी तुम्हारी बारी उन पर और क़ुव्वत दी तुमको माल से और बेटों से और उससे ज़्यादा कर दिया

अक्स-र नफ़ीरा (6) इन् अह्सन्तुम् अह्सन्तुम् लिअन्फ़ुसिकुम्, व इन् अ-सअ्तुम् फ़-लहा, फ़-इज़ा जा-अ वअ्दुल्-आख़िरति लि-यसूऊ वुजू-हकुम् व लियद्ख़ुलुल्-मस्जि-द कमा द-ख़लूहु अव्व-ल मर्रतिंव्-व लियुतब्बिरू मा अलौ तत्बीरा (7) असा रब्बुकुम् अंय्यर्-ह-मकुम् व इन् अुत्तुम् अुद्ना। व जअल्ना जहन्न-म लिल्काफ़िरी-न हसीरा (8)	तुम्हारा लश्कर। (6) अगर भलाई की तुमने तो भला किया अपना, और अगर बुराई की तो अपने लिये, फिर जब पहुँचा वायदा दूसरा भेजे और बन्दे कि उदास कर दें तुम्हारे मुँह और घुस जायें मस्जिद में जैसे घुस गये थे पहली बार और ख़राब कर दें जिस जगह ग़ालिब हों पूरी ख़राबी। (7) बईद नहीं तुम्हारे रब से कि रहम करे तुम पर और अगर फिर वही करोगे तो हम फिर वही करेंगे, और किया है हमने दोज़ख़ को क़ैदख़ाना काफ़िरों का। (8)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने बनी इस्राईल को किताब में (चाहे तौरात में या बनी इस्राईल के दूसरे नबियों के सहीफ़ों में) यह बात (भविष्यवाणी के तौर पर) बतला दी थी कि तुम (मुल्क शाम की) सरज़मीन में दो बार (गुनाहों की कसरत से) ख़राबी करोगे (एक मर्तबा मूसा की शरीअत की मुख़ालफ़त और दूसरी मर्तबा इसाई शरीअत की मुख़ालफ़त) और दूसरों पर भी बड़ा ज़ोर चलाने लगोगे (यानी ज़ुल्म व ज़्यादती करोगे, इसी तरह ख़राबी करने में अल्लाह के हुक़ूक़ के ज़ाया करने की तरफ़ और सरकशी करने में बन्दों के हुक़ूक़ ज़ाया करने की तरफ़ इशारा है, और यह भी बतला दिया था कि दोनों मर्तबा सख़्त सज़ाओं में मुब्तला किये जाओगे)। फिर जब उन दो बार में से पहली बार की मियाद आएगी हम तुम पर अपने ऐसे बन्दों को मुसल्लत कर देंगे जो बड़े लड़ाकू होंगे, फिर वे (तुम्हारे) घरों में घुस पड़ेंगे (और तुमको क़त्ल व क़ैद और ग़ारत कर देंगे) और यह (सज़ा का वायदा) एक वायदा है जो ज़रूर होकर रहेगा। फिर (जब तुम अपने किये पर शर्मिन्दा और तौबा करने वाले हो जाओगे) तो फिर हम उन पर तुम्हारा ग़लबा कर देंगे (चाहे दूसरों के वास्ते ही सही, कि जो क़ौम उन पर ग़ालिब आयेगी वह तुम्हारी हिमायती हो जायेगी। इसी तरह तुम्हारे दुश्मन उस क़ौम से और तुमसे दोनों से पराजित हो जायेंगे) और माल और बेटों से (जो कि बन्दी बनाये गये और ग़ारत किये गये थे) हम तुम्हारी मदद करेंगे (यानी ये चीज़ें तुमको वापस मिल जायेंगी जिनसे तुम्हें ताक़त पहुँचेगी) और हम तुम्हारी जमाअत (यानी तुम्हारे पैरोकारों) को बढ़ा देंगे (पस माल व इज़्ज़त और औलाद व पैरोकारों सब में तरक़्क़ी होगी और उस किताब में नसीहत के तौर पर यह भी लिखा था कि) अगर (अब आईन्दा) अच्छे काम करते

रहोगे तो अपने ही नफ़े के लिये अच्छे काम करोगे (यानी दुनिया व आख़िरत में उसका नफ़ा हासिल होगा) और अगर (फिर) तुम बुरे काम करोगे तो भी अपने ही लिये (बुराई करोगे, यानी फिर सज़ा होगी। चुनाँचे ऐसा ही हुआ जिसका आगे बयान है कि) फिर जब (ज़िक्र हुए दो मर्तबा के फ़साद में से) आख़िरी मर्तबा का वक़्त आयेगा (और उस वक़्त तुम ईसाई दीन की मुख़ालफ़त करोगे) तो हम फिर दूसरों को मुसल्लत कर देंगे ताकि (वे मार-मारकर) तुम्हारे मुँह बिगाड़ दें, और जिस तरह वे (पहले) लोग मस्जिद (बैतुल-मुक़द्दस) में (लूट-मार के साथ) घुसे थे ये (पिछले) लोग भी उसमें घुस पड़ेंगे और जिस-जिस पर उनका ज़ोर चले सब को (हलाक व) बरबाद कर डालें।

(और उस किताब में यह भी लिखा था कि अगर इस दूसरी मर्तबा के बाद जब शरीअ़ते मुहम्मदिया का दौर हो तुम मुख़ालफ़त व नाफ़रमानी से बाज़ आकर शरीअ़ते मुहम्मदिया की पैरवी कर लो तो) अ़जब नहीं (यानी उम्मीद वायदे के मायने में है) कि तुम्हारा रब तुम पर रहम फ़रमा दे (और तुमको ज़िल्लत व बरबादी से निकाल ले) और अगर फिर वही (शरारत) करोगे तो हम भी फिर वही (सज़ा का बर्ताव) करेंगे (चुनाँचे नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर में उन्होंने आपकी मुख़ालफ़त की तो फिर क़त्ल व क़ैद और ज़लील हुए। यह तो दुनिया की सज़ा हो गई) और (आख़िरत में) हमने जहन्नम को (ऐसे) काफ़िरों का जेलख़ाना बना ही रखा है।

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

इनसे पहली आयतों यानी आयत नम्बर 2 और 3 में शरीअ़त के अहकाम और अल्लाह की हिदायतों के पालन और फ़रमाँबरदारी की तरग़ीब थी, और अब ऊपर बयान हुई इन आयतों में उनकी मुख़ालफ़त से डरावा और डाँट का मज़मून है। इन आयतों में बनी इस्राईल के दो वाक़िए इब्रत व नसीहत के लिये ज़िक्र किये गये कि वे एक मर्तबा गुनाहों और अल्लाह के हुक्म की मुख़ालफ़त में मशग़ूल हुए तो अल्लाह तआ़ला ने उनके दुश्मनों को उन पर मुसल्लत कर दिया जिन्होंने उनको तबाह किया, फिर उनको कुछ तंबीह हो गई और शरारत कम कर दी तो संभल गये, मगर कुछ समय के बाद फिर वही शरारतें और बुरे आमाल उनमें फैल गये तो फिर अल्लाह तआ़ला ने उनको उनके दुश्मन के हाथ से सज़ा दिलाई। क़ुरआने करीम में दो वाक़िओं का ज़िक्र है मगर तारीख़ (इतिहास) में इस तरह के छह वाक़िआ़त बयान हुए हैं।

पहला वाक़िआ़

हज़रत सुलैमान अ़लैहिस्सलाम (संस्थापक मस्जिदे अक़्सा) की वफ़ात के कुछ समय के बाद पेश आया कि बैतुल-मुक़द्दस के हाकिम ने बेदीनी और बुरे आमाल इख़्तियार कर लिये तो मिस्र का एक बादशाह उस पर चढ़ आया और बैतुल-मुक़द्दस का सामान सोने-चाँदी का लूटकर ले गया मगर शहर और मस्जिद को गिराया नहीं।

दूसरा वाक़िआ

इससे तक़रीबन चार सौ साल बाद का है कि बैतुल-मुक़द्दस में बसने वाले कुछ यहूदियों ने बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) शुरू कर दी और बाक़ियों में नाइत्तिफ़ाक़ी और आपसी झगड़े होने लगे इसकी नहूसत से फिर मिस्र के किसी बादशाह ने उन पर चढ़ाई कर दी और किसी क़द्र शहर और मस्जिद की इमारत को भी नुक़सान पहुँचाया, फिर उनकी हालत कुछ संभल गई।

तीसरा वाक़िआ

इसके चन्द साल बाद जब बुख़्ते नस्सर बाबिल के बादशाह ने बैतुल-मुक़द्दस पर चढ़ाई कर दी और शहर को फ़तह करके बहुत-सा माल लूट लिया और बहुत-से लोगों को क़ैदी बनाकर ले गया और पहले बादशाह के ख़ानदान के एक फ़र्द को अपने जानशीन और उत्तराधिकारी की हैसियत से उस शहर का हाकिम बना दिया।

चौथा वाक़िआ

इस नये बादशाह ने जो बुत-परस्त और बुरे आमाल वाला था, बुख़्ते नस्सर से बग़ावत की तो बुख़्ते नस्सर दोबारा चढ़ आया और मार-काट और क़त्ल व ग़ारत की कोई हद न रही, शहर में आग लगाकर मैदान कर दिया, यह हादसा मस्जिद के निर्माण से तक़रीबन चार सौ पन्द्रह साल के बाद पेश आया। इसके बाद यहूदी यहाँ से जिलावतन होकर बाबिल चले गये जहाँ बहुत ही ज़िल्लत व ख़्वारी से रहते हुए सत्तर साल गुज़र गये। इसके बाद ईरान के बादशाह ने बाबिल के बादशाह पर चढ़ाई करके बाबिल फ़तह कर लिया, फिर ईरान के बादशाह को उन जिलावतन यहूदियों पर रहम आया और उनको वापस मुल्के शाम में पहुँचा दिया और उनका लूटा हुआ सामान भी वापस कर दिया। अब यहूद अपने बुरे आमाल और गुनाहों से तौबा कर चुके थे यहाँ नये सिरे से आबाद हुए तो ईरान के बादशाह ने उनके सहयोग से फिर मस्जिदे अक़्सा को पहले नमूने के तौर पर बना दिया।

पाँचवाँ वाक़िआ

यह पेश आया कि जब यहूद को यहाँ इत्मीनान और ख़ुशहाली दोबारा हासिल हो गई तो अपने अतीत को भूल गये और फिर बदकारी और बुरे आमाल में मशग़ूल हो गये, तो हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश से एक सौ सत्तर साल पहले यह वाक़िआ पेश आया कि जिस बादशाह ने अन्ताकिया आबाद किया था उसने चढ़ाई कर दी और चालीस हज़ार यहूदियों को क़त्ल किया, चालीस हज़ार को क़ैदी और ग़ुलाम बनाकर अपने साथ ले गया और मस्जिद की भी बहुत बेहुर्मती की मगर मस्जिद की इमारत बच गई, लेकिन फिर उस बादशाह के जानशीनों ने शहर और मस्जिद को बिल्कुल मैदान कर दिया, उसके कुछ समय के बाद बैतुल-मुक़द्दस पर रूम के बादशाहों की हुकूमत हो गई उन्होंने मस्जिद को फिर दुरुस्त किया और उसके आठ साल बाद हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पैदा हुए।

छठा वाक़िआ

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के आसमान पर उठा लिये जाने के चालीस बरस बाद यह वाक़िआ पेश आया कि यहूदियों ने अपने हुक्मराँ रूम के बादशाहों से बग़ावत इख़्तियार कर ली रूमियों ने फिर शहर और मस्जिद को तबाह करके वही हालत बना दी जो पहले थी, उस वक़्त के बादशाह का नाम तीतस था जो न यहूदी था न ईसाई, क्योंकि उसके बहुत दिन के बाद क़ुस्तुनतीन पहले ईसाई हुआ है और उसके बाद से हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़माने तक यह मस्जिद वीरान पड़ी रही, यहाँ तक कि आपने इसकी तामीर कराई। ये छह वाक़िआत तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में तफ़सीरे हक़्क़ानी के हवाले से लिखे गये हैं।

अब यह बात कि क़ुरआने करीम ने जिन दो वाक़िओं का ज़िक्र किया है वे इनमें से कौनसे हैं, इसका निश्चित तौर पर निर्धारण तो मुश्किल है लेकिन ज़ाहिर यह है कि इनमें से जो वाक़िआत ज़्यादा संगीन और बड़े हैं जिनमें यहूदियों की शरारतें भी ज़्यादा हुईं और सज़ा भी सख़्त मिली उन पर महमूल किया जाये और वह चौथा और छठा वाक़िआ है। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में यहाँ एक लम्बी मरफ़ूअ़ हदीस हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल की है, उससे भी इसका निर्धारण होता है कि इन दो वाक़िआत से मुराद चौथा और छठा वाक़िआ है। उस लम्बी हदीस का तर्जुमा यह है।

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि बैतुल-मुक़द्दस अल्लाह तआ़ला के नज़दीक बड़ी शान व रुतबे वाली मस्जिद है। आपने फ़रमाया कि वह दुनिया के सब घरों में एक विशेष बड़ाई वाला घर है जिसको अल्लाह तआ़ला ने सुलैमान बिन दाऊद अ़लैहिमस्सलाम के लिये सोने चाँदी और जवाहिरात याक़ूत व ज़मर्रुद से बनाया था, और यह इस तरह कि जब सुलैमान अ़लैहिस्सलाम ने इसकी तामीर शुरू की तो हक़ तआ़ला ने जिन्नात को उनके ताबे कर दिया, जिन्नात ने ये तमाम जवाहिरात और सोना-चाँदी जमा करके उनसे मस्जिद बनाई। हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु कहते हैं कि मैंने अ़र्ज़ किया कि फिर बैतुल-मुक़द्दस से यह सोना-चाँदी और जवाहिरात कहाँ और किस तरह गये? तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब बनी इस्राईल ने अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी की और गुनाहों और बुरे आमाल में मुब्तला हो गये, नबियों को क़त्ल किया तो अल्लाह तआ़ला ने उन पर बुख़्ते नस्सर को मुसल्लत कर दिया जो मजूसी (आग को पूजने वाला) था, उसने सात सौ बरस बैतुल-मुक़द्दस पर हुकूमत की और क़ुरआने करीम में आयतः

فَإِذَا جَآءَ وَعْدُ أُولٰـهُمَا بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَّنَآ أُولِىْ بَأْسٍ شَدِيْدٍ

(यानी यही ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 5) से यही वाक़िआ मुराद है। बुख़्ते नस्सर का लश्कर मस्जिदे-अक़्सा में दाख़िल हुआ, मर्दों को क़त्ल और औ़रतों व बच्चों को क़ैद किया और बैतुल-मुक़द्दस के तमाम माल और सोने-चाँदी जवाहिरात को एक लाख सत्तर हज़ार गाड़ियों में

भरकर ले गया, और अपने मुल्क बाबिल में रख लिया, और सौ बरस तक उन बनी इस्राईल को अपना गुलाम बनाकर तरह-तरह की मशक़्क़त भरी ख़िदमत ज़िल्लत के साथ उनसे लेता रहा।

फिर अल्लाह तआ़ला ने फ़ारस (ईरान) के बादशाहों में से एक बादशाह को उसके मुक़ाबले के लिये खड़ा कर दिया जिसने बाबिल को फ़तह किया और बाक़ी बचे बनी इस्राईल को बुख़्ते नस्सर की क़ैद से आज़ाद कराया और जितने माल वह बैतुल-मुक़द्दस से लाया था वो सब वापस बैतुल-मुक़द्दस में पहुँचा दिये और फिर बनी इस्राईल को हुक्म दिया कि अगर तुम फिर नाफ़रमानी और गुनाहों की तरफ़ लौट जाओगे तो हम भी फिर क़त्ल व क़ैद का अ़ज़ाब तुम पर लौटा देंगे। क़ुरआन की आयत–

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يَّرْحَمَكُمْ وَاِنْ عُدْتُّمْ عُدْنَا.

(यानी यही ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 8) से यही मुराद है।

फिर जब बनी इस्राईल बैतुल-मुक़द्दस में लौट आये (और सब माल व सामान भी क़ब्ज़े में आ गया) तो फिर अल्लाह की नाफ़रमानी और बुरे आमाल की तरफ़ लौट गये, उस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने उन पर रूम के बादशाह क़ैसर को मुसल्लत कर दिया, आयतः

فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ لِيَسُوْٓءٗا وُجُوْهَكُمْ

(यानी यही ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 7) से यही मुराद है। रूम के बादशाह ने उन लोगों से थल और जल के दोनों रास्तों पर जंग की और बहुत-से लोगों को क़त्ल और क़ैद किया और फिर बैतुल-मुक़द्दस के उन तमाम मालों को एक लाख सत्तर हज़ार गाड़ियों पर लादकर ले गया और अपने 'कनीसतुज़्ज़हब' (धार्मिक स्थल) में रख दिया, ये सब माल अभी तक वहीं हैं और वहीं रहेंगे यहाँ तक कि हज़रत मेहदी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फिर इनको बैतुल-मुक़द्दस में एक लाख सत्तर हज़ार कश्तियों में वापस लायेंगे और उसी जगह अल्लाह तआ़ला पहले और बाद के तमाम लोगों को जमा कर देंगे। (हदीस का मज़मून काफ़ी लम्बा है जिसको इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में नक़ल किया है)

तफ़सीर 'बयानुल-क़ुरआन' में है कि दो वाक़िए जिनका ज़िक्र क़ुरआन में आया है इससे मुराद दो शरीअ़तों की मुख़ालफ़त है, पहले मूसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त की मुख़ालफ़त और फिर ईसा अ़लैहिस्सलाम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने के बाद उनकी शरीअ़त की मुख़ालफ़त है। इसी तरह पहली मुख़ालफ़त में वे सब वाक़िआ़त दर्ज हो सकते हैं जो ऊपर बयान किये गये हैं, वाक़िआ़त की तफ़सील के बाद ऊपर दर्ज हुई आयतों की तफ़सीर देखिये।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपरोक्त वाक़िआ़त का हासिल यह है कि बनी इस्राईल के बारे में हक़ तआ़ला ने यह फ़ैसला फ़रमा दिया था कि वे जब तक अल्लाह तआ़ला की इताअ़त करेंगे दीन व दुनिया में बामुराद और कामयाब रहेंगे, और जब कभी दीन से मुँह मोड़ेंगे तो ज़लील व ख़्वार किये जायेंगे

और दुश्मनों काफ़िरों के हाथों उन पर मार डाली जायेगी, और सिर्फ़ यही नहीं कि दुश्मन उन पर ग़ालिब होकर उनकी जान व माल को नुक़सान पहुँचायें बल्कि उनके साथ उनका क़िब्ला जो बैतुल-मुक़द्दस है वह भी उस दुश्मन की ज़द से महफ़ूज़ नहीं रहेगा। उनके काफ़िर दुश्मन मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस में घुसकर उसकी बेहुर्मती और तोड़-फोड़ करेंगे, यह भी बनी इस्राईल की सज़ा ही का एक हिस्सा होगा। क़ुरआने करीम ने उनके दो वाक़िए बयान फ़रमाये-- पहला वाक़िआ मूसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त के ज़माने का है दूसरा ईसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त के ज़माने का, इन दोनों में बनी इस्राईल ने अपने वक़्त की ख़ुदाई शरीअ़त से मुँह मोड़कर सरकशी इख़्तियार की तो पहले वाक़िए में एक मजूसी (आग को पूजने वाले) काफ़िर बादशाह को उन पर और बैतुल-मुक़द्दस पर मुसल्लत कर दिया गया जिसने तबाही मचाई, और दूसरे वाक़िए में एक रूमी बादशाह को मुसल्लत किया जिसने उनको क़त्ल व ग़ारत किया और बैतुल-मुक़द्दस को गिराया और वीरान किया। इसी के साथ यह भी ज़िक्र कर दिया गया है कि दोनों मर्तबा जब बनी इस्राईल अपने बुरे आमाल पर शर्मिन्दा होकर ताइब (तौबा करने वाले) हुए तो फिर अल्लाह तआ़ला ने उनके मुल्क व दौलत और आल व औलाद को बहाल कर दिया।

इन दोनों वाक़िआ़त के ज़िक्र के बाद आख़िर में अल्लाह तआ़ला ने इन मामलात में अपना उसूल व नियम बयान फ़रमा दियाः

وَاِنْ عُدْتُّمْ عُدْنَا

यानी अगर तुम फिर नाफ़रमानी और सरकशी की तरफ़ लौटोगे तो हम फिर इसी तरह की सज़ा व अ़ज़ाब तुम पर लौटा देंगे। यह उसूल क़ियामत तक के लिये इरशाद हुआ है और इसके मुख़ातब वे बनी इस्राईल थे जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर में मौजूद थे, जिसमें इशारा कर दिया गया है कि जिस तरह पहले मूसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त की मुख़ालफ़त से और दूसरी मर्तबा ईसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त की मुख़ालफ़त से तुम लोग सज़ा व अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हुए थे अब तीसरा दौर शरीअ़ते मुहम्मदिया का है जो क़ियामत तक चलेगा, इसकी मुख़ालफ़त करने का भी वही अन्जाम होगा। चुनाँचे ऐसा ही हुआ कि उन लोगों ने शरीअ़ते मुहम्मदिया और इस्लाम की मुख़ालफ़त की तो मुसलमानों के हाथों जिलावतन और ज़लील व ख़्वार हुए और आख़िरकार उनके क़िब्ले बैतुल-मुक़द्दस पर भी मुसलमानों का क़ब्ज़ा हुआ। फ़र्क़ यह रहा कि पिछले बादशाहों ने उनको भी ज़लील व ख़्वार किया था और उनके क़िब्ले बैतुल-मुक़द्दस की बेहुर्मती (बेक़द्री) भी की थी, अब मुसलमानों ने बैतुल-मुक़द्दस फ़तह किया तो मस्जिदे बैतुल-मुक़द्दस जो सदियों से गिरी और ग़ैर-आबाद पड़ी थी, उसको नये सिरे से तामीर किया और नबियों के इस क़िब्ले के एहतिराम को बहाल किया।

बनी इस्राईल के वाक़िआत मुसलमानों के लिये इब्रत हैं, बैतुल-मुक़द्दस का मौजूदा वाक़िआ इसी सिलसिले की एक कड़ी है

बनी इस्राईल के ये वाक़िआत क़ुरआने करीम में बयान करने और मुसलमानों को सुनाने से बज़ाहिर मक़सद यही है कि मुसलमान भी अल्लाह के इस क़ानून से बाहर नहीं हैं, दुनिया व दीन में उनकी इज़्ज़त व शान और माल व दौलत अल्लाह की इताअ़त के साथ जुड़ी हैं, जब वे अल्लाह व रसूल की इताअ़त से मुँह मोड़ेंगे तो उनके दुश्मनों और काफ़िरों को उन पर ग़ालिब और मुसल्लत कर दिया जायेगा जिनके हाथों उनके इबादत ख़ानों और मस्जिदों की बेहुर्मती भी होगी।

आजकल जो बैतुल-मुक़द्दस पर यहूदियों के क़ब्ज़े की दुखद घटना और फिर उसको आग लगाने की पूरी इस्लामी दुनिया को परेशान किये हुए है हक़ीक़त यह है कि यह इसी क़ुरआनी इरशाद की तस्दीक़ हो रही है, मुसलमानों ने ख़ुदा व रसूल को भुलाया, आख़िरत से ग़ाफ़िल होकर दुनिया की शान व शौकत में लग गये और क़ुरआन व सुन्नत के अहकाम से बेगाना हो गये तो अल्लाह का वही क़ायदा व उसूल सामने आया कि करोड़ों अ़रब वालों पर चन्द लाख यहूदी ग़ालिब आ गये, उन्होंने उनकी जान व माल को भी नुक़सान पहुँचाया और इस्लामी शरीअ़त की रू से दुनिया की तीन अ़ज़ीमुश्शान मस्जिदों में से एक जो तमाम नबियों का क़िब्ला रहा है वह उनसे छीन लिया गया और एक ऐसी क़ौम ग़ालिब आ गई जो दुनिया में सबसे ज़्यादा ज़लील व ख़्वार समझी जाती है यानी यहूदी। इस पर अतिरिक्त यह देखा जा रहा है कि वह क़ौम न संख्या में मुसलमानों के मुक़ाबले में कोई हैसियत रखती है और न मुसलमानों के मजमूई मौजूदा लड़ाई के सामान और हथियारों के मुक़ाबले में उसकी कोई हैसियत है, इससे यह भी मालूम हो गया कि यह वाक़िआ यहूदियों को कोई इज़्ज़त का मक़ाम नहीं देता अलबत्ता मुसलमानों के लिये उनकी नाफ़रमानी की सज़ा ज़रूर है, जिससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह जो कुछ हुआ हमारे बुरे आमाल की सज़ा के तौर पर हुआ, और इसका इलाज इसके सिवा कुछ नहीं कि हम फिर अपने बुरे आमाल पर शर्मिन्दा होकर सच्ची तौबा करें, अल्लाह के अहकाम की इताअ़त में लग जायें, सच्चे मुसलमान बनें, ग़ैरों की नक़ल करने और ग़ैरों पर भरोसा करने के ज़बरदस्त गुनाह से बाज़ आ जायें तो अल्लाह के वायदे के अनुसार इन्शा-अल्लाह तआ़ला बैतुल-मुक़द्दस और फ़िलिस्तीन फिर हमारे क़ब्ज़े में आयेगा, मगर अफ़सोस है कि आजकल के अ़रब शासक और वहाँ के आ़म मुसलमान अब तक भी इस हक़ीक़त पर सचेत नहीं हुए, वे अब भी ग़ैरों की इमदाद पर सहारा लगाये हुए बैतुल-मुक़द्दस की वापसी के प्लान और नक़्शे बना रहे हैं जिसकी बज़ाहिर कोई संभावना नज़र नहीं आती।

वह असलेहा और सामान जिससे बैतुल-मुक़द्दस और फ़िलिस्तीन फिर मुसलमानों को वापस मिल सकता है सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ तवज्जोह व रुजू, आख़िरत पर यक़ीन, शरीअ़त के अहकाम की पैरवी, अपने रहन-सहन, सामाजिक ज़िन्दगी और सियासत में ग़ैरों पर भरोसा और उनकी नक़ल करने से परहेज़ और फिर अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करके ख़ालिस इस्लामी और शरई जिहाद है, अल्लाह तआ़ला हमारे अ़रब हुक्मरानों और दूसरे मुसलमानों को इसकी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमायें।

एक अ़जीब मामला

अल्लाह तआ़ला ने इस ज़मीन में अपनी इबादत के लिये दो जगहों को इबादत करने वालों का क़िब्ला बनाया है-- एक बैतुल-मुक़द्दस, दूसरा बैतुल्लाह। मगर क़ानूने क़ुदरत दोनों के बारे में अलग-अलग है, बैतुल्लाह की हिफ़ाज़त और काफ़िरों का उस पर ग़ालिब न आना यह अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद अपने ज़िम्मे ले लिया है, इसका नतीजा वह हाथी वालों का वाक़िआ़ है जो क़ुरआने करीम की सूरः फ़ील में ज़िक्र किया गया है, कि यमन के ईसाई बादशाह ने बैतुल्लाह पर चढ़ाई की तो अल्लाह तआ़ला ने मय उसके हाथियों की फ़ौज के बैतुल्लाह के क़रीब तक जाने से पहले ही परिन्दे जानवरों के ज़रिये हलाक व बरबाद कर दिया।

लेकिन बैतुल-मुक़द्दस के मुताल्लिक़ यह क़ानून नहीं बल्कि उपरोक्त आयतों से मालूम हुआ है कि जब मुसलमान गुमराही और नाफ़रमानी में मुब्तला होंगे तो उनकी सज़ा के तौर पर उनसे यह क़िब्ला भी छीन लिया जायेगा और काफ़िर लोग इस पर ग़ालिब आ जायेंगे।

काफ़िर भी अल्लाह के बन्दे हैं मगर उसके मक़बूल नहीं

उपर्युक्त पहले वाक़िए में क़ुरआने करीम ने इरशाद फ़रमाया है कि जब दीनदार लोग फ़ितने व फ़साद पर उतर आयेंगे तो अल्लाह तआ़ला उन पर अपने ऐसे बन्दों को मुसल्लत कर देंगे जो उनके घरों में घुसकर उनको क़त्ल व ग़ारत करेंगे। इस जगह क़ुरआने करीम ने लफ़्ज़ 'अ़िबादल् लना' फ़रमाया है, "अ़िबादना" नहीं कहा, हालाँकि वह मुख़्तसर था। हिक्मत यह है कि किसी बन्दे की इज़ाफ़त व निस्बत अल्लाह की तरफ़ हो जाना उसके लिये सबसे बड़ा सम्मान है जैसा कि इसी सूरत के शुरू में 'अस्रा बिअ़ब्दिही' के तहत में यह बतलाया जा चुका है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जो हद से ज़्यादा सम्मान और बहुत ज़्यादा निकटता मेराज की रात में नसीब हुई क़ुरआने करीम ने इस वाक़िए के बयान में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का नाम या कोई सिफ़त बयान करने के बजाय सिर्फ़ 'अ़ब्दिही' कहकर यह बतला दिया कि इनसान का आख़िरी कमाल और सबसे ऊँचा मक़ाम यह है कि अल्लाह तआ़ला उसको अपना बन्दा कहकर नवाज़ें। मज़कूरा आयत में जिन लोगों से बनी इस्राईल की सज़ा का काम लिया गया ये ख़ुद भी काफ़िर थे इसलिये हक़ तआ़ला ने उनको "इबादना" के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाने के बजाय इज़ाफ़त व निस्बत को तोड़कर "अ़बादल् लना" फ़रमाया जिसमें इस तरफ़

इशारा है कि कायनात का पैदा करने वाला होने के तौर पर तो सारे ही इनसान अल्लाह के बन्दे हैं मगर बग़ैर ईमान के मक़बूल बन्दे नहीं होते जिनकी निस्बत व इज़ाफ़त अल्लाह तआ़ला की तरफ़ की जा सके।

إِنَّ هَٰذَا الْقُرْآنَ يَهْدِي لِلَّتِي هِيَ أَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِينَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ الصَّالِحَاتِ أَنَّ لَهُمْ أَجْرًا كَبِيرًا ۝ وَأَنَّ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ أَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا أَلِيمًا ۝ وَيَدْعُ الْإِنسَانُ بِالشَّرِّ دُعَاءَهُ بِالْخَيْرِ ۖ وَكَانَ الْإِنسَانُ عَجُولًا ۝

इन्-न हाज़ल्-क़ुर्आ-न यह्दी लिल्लती हि-य अक़्वमु व युबश्शिरुल्-मुअ्मिनीनल्लज़ी-न यअ्मलूनस्-सालिहाति अन्-न लहुम् अज्रन् कबीरा (9) व अन्नल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्आख़िरति अअ्तद्ना लहुम् अ़ज़ाबन् अलीमा (10) ✿ व यद्अुल्-इन्सानु बिश्शर्रि दुआ़-अहू बिल्ख़ैरि, व कानल्-इन्सानु अ़जूला (11)	यह क़ुरआन बतलाता है वह राह जो सब से सीधी है और ख़ुशख़बरी सुनाता है ईमान वालों को जो अमल करते हैं अच्छे कि उनके लिये है बड़ा सवाब। (9) और यह कि जो नहीं मानते आख़िरत को उनके लिये तैयार किया है हमने दर्दनाक अ़ज़ाब। (10) ✿ और माँगता है आदमी बुराई जैसे माँगता है भलाई और है इनसान जल्द बाज़। (11)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

सूरत के शुरू में मेराज के मोजिज़े से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शाने रिसालत का बयान था, इन आयतों में क़ुरआन के मोजिज़े से उसको साबित किया गया है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक यह क़ुरआन ऐसे तरीक़े की हिदायत करता है जो बिल्कुल सीधा है (यानी इस्लाम) और (उस तरीक़े के मानने और न मानने वालों की जज़ा व सज़ा भी बतलाता है कि) उन ईमान वालों को जो कि नेक काम करते हैं यह ख़ुशख़बरी देता है कि उनको बड़ा भारी सवाब मिलेगा। और यह भी बतलाता है कि जो लोग आख़िरत पर ईमान नहीं रखते हमने उनके लिये एक दर्दनाक सज़ा तैयार कर रखी है।

और (बाज़ा) इनसान (जैसे काफ़िर लोग हैं) बुराई (यानी अ़ज़ाब) की ऐसी दुआ़ करता है

जिस तरह भलाई की दुआ (की जाती है) और इनसान कुछ (कुछ तबई तौर पर ही) जल्दबाज़ (होता) है।

मआरिफ़ व मसाईल

क़ौमों का तरीक़ा

क़ुरआन जिस तरीक़े की हिदायत करता है उसको 'अक़्वम' कहा जाता है। अक़्वम की तफ़सीर यह है कि वह रास्ता जो मन्ज़िले मक़सूद तक पहुँचाने में क़रीब भी हो, आसान भी हो और ख़तरों से ख़ाली भी हो। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इससे मालूम हुआ कि क़ुरआने करीम इनसानी ज़िन्दगी के लिये जो अहकाम देता है वह इन तीनों ख़ूबियों और सिफ़तों को अपने अन्दर रखते हैं, अगरचे इनसान अपनी कम-समझी की वजह से कई बार उस रास्ते को दुश्वार या ख़तरे से भरा समझने लगे लेकिन रब्बुल-आ़लमीन जो कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे का इल्म रखता है और अतीत व भविष्य उसके सामने बराबर है, वही इस हक़ीक़त को जान सकता है कि इनसान का नफ़ा किस काम और किस सूरत में ज़्यादा है, और ख़ुद इनसान चूँकि मजमूई हालात से वाक़िफ़ नहीं वह अपने भले-बुरे को भी पूरी तरह नहीं पहचान सकता।

शायद इसी ताल्लुक़ से उपर्युक्त आयतों में से आख़िरी आयत में यह ज़िक्र फ़रमाया है कि इनसान तो कई बार जल्दबाज़ी में अपने लिये ऐसी दुआ माँग लेता है जो उसके लिये तबाही व बरबादी का सबब है, अगर अल्लाह तआ़ला उसकी ऐसी दुआ को क़ुबूल फ़रमा लें तो यह बरबाद हो जाये। मगर अल्लाह तआ़ला अक्सर ऐसी दुआ़ओं को फ़ौरन क़ुबूल नहीं फ़रमाता यहाँ तक कि ख़ुद इनसान समझ लेता है कि मेरी यह दरख़्वास्त ग़लत और मेरे लिये सख़्त नुक़सान देने वाली थी, और आयत के आख़िरी जुमले में इनसान की एक तबई कमज़ोरी को ज़ाब्ते के तौर पर भी ज़िक्र फ़रमाया कि इनसान अपनी तबीयत ही से जल्दबाज़ वाक़े हुआ है, सरसरी नफ़े-नुक़सान पर नज़र रखता है अन्जाम पर निगाह करने और परिणाम के बारे में सोचने में कोताही करता है, फ़ौरी राहत चाहे थोड़ी हो उसको बड़ी और हमेशा की राहत पर तरजीह देने लगता है। इस तक़रीर का हासिल यह है कि इस आयत में आ़म इनसानों की एक तबई कमज़ोरी का बयान है।

और तफ़सीर के कुछ इमामों ने इस आयत को एक ख़ास वाक़िए के संबन्धित क़रार दिया है, वह यह कि नज़र बिन हारिस ने इस्लाम की मुख़ालफ़त में एक मर्तबा यह दुआ कर डाली:

اَللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَالْحَقَّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِائْتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ۝

यानी या अल्लाह! अगर आपके नज़दीक यह इस्लाम ही हक़ है तो हम पर आसमान से पत्थर बरसा दे या कोई और दर्दनाक अ़ज़ाब भेज दे। इस सूरत में इनसान से यह ख़ास इनसान या जो इसके जैसी तबीयत वाले हों मुराद होंगे।

وَجَعَلْنَا الَّيْلَ وَالنَّهَارَ اٰيَتَيْنِ فَمَحَوْنَآ اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَآ اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً
لِّتَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ ۭ وَكُلَّ شَيْءٍ فَصَّلْنٰهُ تَفْصِيْلًا ۝ وَكُلَّ
اِنْسَانٍ اَلْزَمْنٰهُ طٰۗىِٕرَهٗ فِيْ عُنُقِهٖ ۭ وَنُخْرِجُ لَهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ كِتٰبًا يَّلْقٰىهُ مَنْشُوْرًا ۝ اِقْرَاْ كِتٰبَكَ ۭ كَفٰى
بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيْبًا ۝ مَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِيْ لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ۭ
وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰى ۭ وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا ۝

व जअ़ल्नल्लै-ल वन्नहा-र आयतैनि फ़-महौना आयतल्लैलि व जअ़ल्ना आयतन्नहारि मुब्सि-रतल्-लितब्तग़ू फ़ज़्लम् मिर्रब्बिकुम् व लितअ़्-लमू अ़-ददस्सिनी-न वल्-हिसा-ब, व कुल्-ल शैइन् फ़स्सल्नाहु तफ़्सीला (12) व कुल्-ल इन्सानिन् अल्ज़म्ना ताइ-रहू फ़ी अ़ुनुक़िही, व नुख़्रिजु लहू यौमल्-क़ियामति किताबंय्-यल्क़ाहु मन्शूरा (13) इक़्रअ् किताब-क, कफ़ा बिनफ़्सिकल्-यौ-म अ़लै-क हसीबा (14) मनिह्तदा फ़-इन्नमा यह्तदी लिनफ़्सिही व मन् ज़ल्-ल फ़-इन्नमा यज़िल्लु अ़लैहा, व ला तज़िरु वाज़ि-रतुंव्-विज़्-र उख़्रा, व मा कुन्ना मुअ़ज़्ज़िबी-न हत्ता नबुअ़-स रसूला (15)

और हमने बनाये रात और दिन दो नमूने फिर मिटा दिया रात का नमूना और बना दिया दिन का नमूना देखने को ताकि तलाश करो फ़ज़्ल अपने रब का और ताकि मालूम करो गिनती बरसों की और हिसाब, और सब चीज़ें सुनाईं हमने खोलकर। (12) और जो आदमी है लगा दी है हमने उसकी बुरी क़िस्मत उसकी गर्दन से, और निकाल दिखायेंगे उसको क़ियामत के दिन एक किताब कि देखेगा उसको खुली हुई। (13) पढ़ ले किताब अपनी, तू ही बस है आज के दिन अपना हिसाब लेने वाला। (14) जो कोई राह पर आया तो आया अपने ही भले को और जो कोई बहका रहा तो बहका रहा अपने ही बुरे को, और किसी पर नहीं पड़ता बोझ दूसरे का, और हम नहीं डालते बला जब तक न भेजें कोई रसूल। (15)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हमने रात और दिन को (अपनी क़ुदरत की) दो निशानियाँ बनाया, सो रात की निशानी

(यानी ख़ुद रात) को तो हमने धुंधला बना दिया और दिन की निशानी को हमने रोशन बनाया (कि उसमें सब चीज़ें बेतकल्लुफ़ दिखाई दें) ताकि (दिन में) तुम अपने रब की रोज़ी तलाश करो और (रात और दिन के आने-जाने और दोनों के रंग में फ़र्क़ व पहचान कि एक रोशन दूसरा अंधेरा है, और दोनों की मात्राओं में भिन्नता से) बरसों का शुमार और (दूसरे छोटे-छोटे) हिसाब मालूम कर लो (जैसा कि सूरः यूनुस के पहले रुकूअ़ में बयान हुआ है)। और हमने हर चीज़ को ख़ूब तफ़सील के साथ बयान किया है (लौह-ए-महफ़ूज़ में तो तमाम कायनात की मुकम्मल तफ़सील बग़ैर किसी चीज़ को अलग किये है और क़ुरआने करीम में ज़रूरत के हिसाब से तफ़सील है, इसलिये यह बयान दोनों की तरफ़ मन्सूब हो सकता है)।

और हमने हर (अ़मल करने वाले) इनसान का अ़मल (नेक हो या बुरा) उसके गले का हार बना रखा है (यानी हर शख़्स का अ़मल उसके साथ जुड़ा और चिपका हुआ है) और (फिर) क़ियामत के दिन हम उसका आमाल नामा उसके (देखने के) वास्ते निकाल कर सामने कर देंगे, जिसको वह खुला हुआ देख लेगा (और उससे कहा जायेगा कि ले) अपना आमाल नामा (ख़ुद) पढ़ ले, आज तू ख़ुद ही अपना हिसाब जाँचने के लिये काफ़ी है (यानी इसकी ज़रूरत नहीं कि तेरे आमाल को कोई दूसरा आदमी गिनाये बल्कि तू ख़ुद ही अपना आमाल नामा पढ़ता जा और हिसाब लगाता जा कि तुझे कितनी सज़ा और कितनी जज़ा मिलनी चाहिये। मतलब यह है कि अगरचे अभी अ़ज़ाब सामने नहीं आया मगर वह टलने वाला नहीं, एक वक़्त ऐसा आने वाला है कि इनसान अपने सब आमाल को खुली आँखों देख लेगा, और अ़ज़ाब की हुज्जत उस पर क़ायम हो जायेगी। और) जो शख़्स (दुनिया में सीधी) राह पर चलता है वह अपने ही नफ़े के लिये चलता है, और जो शख़्स ग़लत रास्ता इख़्तियार करता है वह भी अपने ही नुक़सान के लिये गुमरा होता है (वह उस वक़्त इसका ख़मियाज़ा भुगतेगा किसी दूसरे का कुछ नुक़सान नहीं क्योंकि हमारा क़ानून यह है कि) और कोई शख़्स किसी (के गुनाह) का बोझ न उठायेगा (और जिस किसी को कोई सज़ा दी जाती है वह उस पर हुज्जत पूरी करने के बाद दी जाती है क्योंकि हमारा क़ानून यह है कि) हम (कभी) सज़ा नहीं देते जब तक किसी रसूल को (उसकी हिदायत के लिये) नहीं भेज लेते।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में पहले रात और दिन के अलग-अलग होने और विविधता को अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत की निशानी क़रार दिया और फिर बतलाया कि रात को अंधेरी और दिन को रोशन करने में बड़ी हिक्मतें हैं। रात को अंधेरी करने की हिक्मत तो इस जगह बयान नहीं फ़रमाई दूसरी आयतों में बयान हुई है कि रात का अंधेरा नींद और आराम के लिये मुनासिब है और क़ुदरत ने ऐसा निज़ाम बना दिया है कि हर इनसान और जानवर को इसी रात की अंधेरी में नींद आती है, पूरा आ़लम एक साथ नींद में होता है अगर विभिन्न लोगों की नींद के विभिन्न वक़्त होते तो जागने वालों के शोर-शराबे और काम-काज की वजह से सोने वालों

की नींद भी हराम हो जाती।

और दिन को रोशन करने की इस जगह दो हिक्मतें बयान फ़रमाई हैं— पहली यह कि दिन की रोशनी में आदमी अपनी रोज़ी तलाश कर सकता है, मेहनत मज़दूरी, कारीगरी व उद्योग सब के लिये रोशनी की ज़रूरत है। दूसरे यह कि रात दिन के आने जाने से सालों और बरसों की तादाद मालूम की जा सके जैसे कि तीन सौ साठ दिन पूरे होने पर एक साल पूरा हो गया।

इसी तरह दूसरे हिसाबात भी रात दिन के आने-जाने से जुड़े हुए हैं, अगर रात दिन का यह अलग-अलग होना न हो तो मज़दूर की मज़दूरी, मुलाज़िम की मुलाज़मत, मामलात की मियादें मुतैयन (निर्धारित) करना सब मुश्किल हो जायेगा।

'नामा-ए-आमाल' गले का हार होने का मतलब

इसका मतलब यह है कि इनसान किसी जगह किसी हाल में रहे उसके आमाल की किताब उसके साथ रहती है, उसका अ़मल लिखा जाता रहता है। जब वह मरता है तो वह किताब बन्द करके रख दी जाती है, फिर क़ियामत के दिन यह आमाल नामा हर एक के हाथ में दे दिया जायेगा कि ख़ुद पढ़कर ख़ुद ही अपने दिल में फ़ैसला कर ले कि वह सवाब का हक़दार है या अ़ज़ाब का हक़दार। हज़रत क़तादा रहमतुल्लाहि अ़लैहि से मन्क़ूल है कि उस दिन अनपढ़ आदमी भी नामा-ए-आमाल पढ़ लेगा। इस मौक़े पर अस्बहानी ने हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन कुछ लोगों का नामा-ए-आमाल जब उनके हाथ में दिया जायेगा, वह देखेगा कि उसके कुछ नेक आमाल उसमें लिखे हुए नहीं हैं तो अ़र्ज़ करेगा कि मेरे परवर्दिगार इसमें मेरे फ़ुलाँ-फ़ुलाँ अ़मल दर्ज नहीं हैं तो हक़ तआ़ला की तरफ़ से जवाब मिलेगा कि हमने उन आमाल को इसलिये मिटा दिया कि तुम लोगों की ग़ीबत किया करते थे। (तफ़सीरे मज़हरी)

रसूलों के भेजे बग़ैर अ़ज़ाब न होने की वज़ाहत

इस आयत की बिना पर कुछ फ़ुक़हा (दीनी मसाईल और क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) के नज़दीक उन लोगों को कुफ़्र के बावजूद कोई अ़ज़ाब नहीं होगा जिनके पास किसी नबी और रसूल की दावत नहीं पहुँची, और कुछ इमामों के नज़दीक जो इस्लामी अ़क़ीदे अ़क़्ल से समझे जा सकते हैं जैसे ख़ुदा का वजूद, उसकी तौहीद वग़ैरह, पस जो लोग इसके मुन्किर होंगे उनको कुफ़्र पर अ़ज़ाब होगा अगरचे उनको किसी नबी व रसूल की दावत न पहुँची हो, अलबत्ता आ़म नाफ़रमानी और गुनाहों पर नबियों की दावत व तब्लीग़ के बग़ैर सज़ा नहीं होगी, और कुछ हज़रात ने इस जगह रसूल से मुराद आ़म ली है चाहे वह रसूल व नबी हो चाहे इनसानी अ़क़्ल कि वह भी एक हैसियत से अल्लाह का रसूल (पैग़ाम पहुँचाने वाली) ही है।

मुश्रिकों की औलाद को अ़ज़ाब न होगा

आयत 'ला तज़िरु वाज़िरतुंव-विज़्-र उख़्रा' (किसी पर नहीं पड़ता बोझ दूसरे का) के तहत तफ़सीरे मज़हरी में लिखा है कि इस आयत से साबित होता है कि मुश्रिकों व काफ़िरों की औलाद जो बालिग़ होने से पहले मर जायें उनको अ़ज़ाब न होगा, क्योंकि माँ-बाप के कुफ़्र से वे सज़ा के पात्र नहीं होंगे, इस मसले में फ़ुक़हा व इमामों के अक़वाल अलग-अलग हैं जिनकी तफ़सील की यहाँ ज़रूरत नहीं।

وَإِذَآ أَرَدْنَآ أَن نُّهْلِكَ قَرْيَةً أَمَرْنَا مُتْرَفِيهَا فَفَسَقُوا فِيهَا فَحَقَّ عَلَيْهَا الْقَوْلُ فَدَمَّرْنٰهَا تَدْمِيرًا ۝ وَكَمْ أَهْلَكْنَا مِنَ الْقُرُونِ مِنۢ بَعْدِ نُوحٍ ۗ وَكَفٰى بِرَبِّكَ بِذُنُوبِ عِبَادِهِۦ خَبِيرًۢا بَصِيرًا ۝

व इज़ा अरद्ना अन्नुह्लि-क क़र्-यतन् अमर्ना मुत्-रफ़ीहा फ़-फ़-सक़ू फ़ीहा फ़-हक़्-क़ अ़लैहल्क़ौलु फ़-दम्मर्नाहा तद्मीरा (16) व कम् अह्लक्ना मिनल्क़ुरूनि मिम्-बअ़्दि नूहिन्, व कफ़ा बिरब्बि-क बिज़ुनूबि अ़िबादिही ख़बीरम्-बसीरा (17)	और जब हमने चाहा कि ग़ारत करें किसी बस्ती को हुक्म भेज दिया उसके ऐश करने वालों को फिर उन्होंने नाफ़रमानी की उसमें तब साबित हो गई उन पर बात फिर आखड़ मारा हमने उनको उठाकर। (16) और बहुत ग़ारत कर दिये हमने क़र्न नूह के पीछे और काफ़ी है तेरा रब अपने बन्दों के गुनाह जानने वाला देखने वाला। (17)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

इससे पहली आयतों में इसका बयान था कि हक़ तआ़ला की आ़दत यह है कि जब तक किसी क़ौम के पास अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के ज़रिये अल्लाह तआ़ला की हिदायतें न पहुँच जायें और फिर भी वे इताअ़त न करें उस वक़्त तक उन पर अ़ज़ाब नहीं भेजते। उक्त आयतों में इसके दूसरे रुख़ का बयान है कि जब किसी क़ौम के पास रसूल और अल्लाह के पैग़ाम पहुँच गये और फिर भी उन्होंने नाफ़रमानी से काम लिया तो उस पर आ़म अ़ज़ाब भेज दिया जाता है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब हम किसी बस्ती को (जो अपने कुफ़्र व नाफ़रमानी की वजह से अल्लाह की हिक्मत के तक़ाज़े के तहत हलाक करने के क़ाबिल हो) हलाक करना चाहते हैं तो (उसको

रसूलों के भेजने से पहले हलाक नहीं करते बल्कि पहले किसी रसूल के ज़रिये) उस (बस्ती) के ख़ुशहाल (यानी अमीर व सरदार) लोगों को (ख़ुसूसन और दूसरे अवाम को उमूमन ईमान व इताअ़त का) हुक्म देते हैं, फिर (जब) वे लोग (कहना नहीं मानते बल्कि) वहाँ शरारत मचाते हैं तो उन पर हुज्जत पूरी हो जाती है। फिर हम उस बस्ती को तबाह और ग़ारत कर डालते हैं। और (इसी आ़दत के मुवाफ़िक़) हमने बहुत-सी उम्मतों को नूह (अ़लैहिस्सलाम) के (ज़माने के) बाद (उनके कुफ़्र व नाफ़रमानी के सबब) हलाक किया है (जैसे आ़द व समूद वग़ैरह और नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम का ग़र्क़ होकर हलाक होना मशहूर व परिचित है इसलिये 'मिम्-बअ़्दि नूहिन्' पर बस किया गया, ख़ुद नूह की क़ौम का ज़िक्र नहीं किया। और यह भी कहा जा सकता है कि सूरत के शुरू में आयत 'ज़ुर्रिय्य-त मन् हमल्ना म-अ़ नूहिन्' में लफ़्ज़ 'हमल्ना' से तूफ़ाने नूह की तरफ़ इशारा मौजूद है उसको क़ौमे नूह की हलाकत का बयान क़रार देकर यहाँ नूह अ़लैहिस्सलाम के बाद के हालात का ज़िक्र फ़रमाया गया) और आपका रब अपने बन्दों के गुनाहों को जानने वाला, देखने वाला काफ़ी है (तो जैसा किसी क़ौम का गुनाह होता है वैसी ही सज़ा देता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

एक शुब्हा और उसका जवाब

आयत के अलफ़ाज़ 'इज़ा अरद्ना' और इसके बाद 'अमर्ना' के ज़ाहिर से यह शुब्हा हो सकता था कि उन लोगों का हलाक करना ही अल्लाह का मक़सद था इसलिये उनको पहले नबियों के द्वारा ईमान व फ़रमाँबरदारी का हुक्म देना, फिर उनके बुरे आमाल व नाफ़रमानी को अ़ज़ाब का सबब बनाना यह सब अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से हुआ, तो इस सूरत में ये बेचारे माज़ूर व मजबूर हुए। इसके जवाब की तरफ़ तर्जुमे और ख़ुलासा-ए-तफ़सीर के तहत यह इशारा आ चुका है कि अल्लाह तआ़ला ने इनसान को अ़क़्ल व इख़्तियार दिया और अ़ज़ाब व सवाब के रास्ते मुतैयन कर दिये, जब कोई अपने इख़्तियार से अ़ज़ाब ही के काम का इरादा करे तो अल्लाह का क़ानून यह है कि वह उसी अ़ज़ाब के असबाब मुहैया कर देते हैं, तो अ़ज़ाब का असली सबब ख़ुद उनका कुफ़्र व नाफ़रमानी का इरादा है न कि केवल इरादा, इसलिये वे माज़ूर नहीं हो सकते।

उक्त आयत की एक दूसरी तफ़सीर

लफ़्ज़ 'अमर्ना' का मशहूर मफ़्हूम व मतलब वही है जो ऊपर बयान किया गया है, यानी हुक्म दिया हमने, लेकिन इस आयत में इस लफ़्ज़ की क़िराअतें भिन्न हैं, एक क़िराअत में जिसको अबू उस्मान नहदी, अबू रजा, अबुल-आ़लिया और मुजाहिद ने इख़्तियार किया है यह लफ़्ज़ 'अम्मर्ना' आया है, जिसके मायने यह होते हैं कि हमने अमीर व हाकिम बना दिया

ख़ुशहाल और सरमायेदार लोगों को जो बुराई और गुनाहों में मुब्तला हो गये और सारी क़ौम के लिये अ़ज़ाब का सबब बने।

हज़रत अ़ली और इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की एक क़िराअत में यह लफ़्ज़ 'आमर्ना' पढ़ा गया जिसकी तफ़सीर उन्हीं हज़रात से 'अक्सर्ना' नक़ल की गई है, यानी जब अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम पर अ़ज़ाब भेजते हैं तो उसकी शुरूआ़ती निशानी यह होती है कि उस क़ौम में ख़ुशहाल सरमायेदार लोगों की अधिक संख्या कर दी जाती है और वे अपने गुनाहों और बदकारियों के ज़रिये पूरी क़ौम को अ़ज़ाब में मुब्तला करने का सबब बन जाते हैं।

इनमें से पहली क़िराअत का हासिल तो यह हुआ कि ऐसे ख़ुशहाल सरमायेदारों को क़ौम का हाकिम बना दिया जाता है, और दूसरी क़िराअत का हासिल यह है कि क़ौम में ऐसे लोगों की कसरत और अधिकता कर दी जाती है। इन दोनों से यह मालूम हुआ कि ऐश पसन्द लोगों की हुकूमत या ऐसे लोगों की क़ौम में अधिकता कुछ ख़ुशी की चीज़ नहीं बल्कि अल्लाह के अ़ज़ाब की निशानी है। हक़ तआ़ला जब किसी क़ौम पर नाराज़ होते हैं और उसको अ़ज़ाब में मुब्तला करना चाहते हैं तो उसकी शुरूआ़ती पहचान यह होती है कि उस क़ौम के हाकिम व सरदार ऐसे लोग बना दिये जाते हैं जो ऐश-पसन्द, अ़य्याश हों, या हाकिम भी न बनें तो उस क़ौम के अफ़राद में ऐसे लोगों की अधिक संख्या कर दी जाती है। दोनों सूरतों का नतीजा यह होता है कि ये लोग इच्छा पूर्ति और लज़्ज़तों में मस्त होकर अल्लाह की नाफ़रमानियाँ ख़ुद भी करते हैं और दूसरों के लिये भी उसकी राह हमवार करते हैं, आख़िरकार उन पर अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब आ जाता है।

मालदार लोगों का क़ौम पर असर होना एक तबई चीज़ है

आयत में ख़ुशहाल, अ़य्याशी में डूबे हुए और मालदारों का ख़ुसूसियत से ज़िक्र करना इस तरफ़ इशारा है कि फ़ितरी तौर पर अ़वाम अपने मालदारों और हाकिमों के अख़्लाक़ व आमाल से प्रभावित होते हैं, जब ये लोग बुरे आमाल वाले हो जायें तो पूरी क़ौम बुरे आमाल वाली हो जाती है, इसलिये जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला ने माल व दौलत दिया है उनको इसकी ज़्यादा फ़िक्र होनी चाहिये कि अपने आमाल व अख़्लाक़ की इस्लाह (सुधार) करते रहें, ऐसा न हो कि ये ऐश-परस्ती में पड़कर इससे ग़ाफ़िल हो जायें और पूरी क़ौम इनकी वजह से ग़लत रास्ते पर पड़ जाये, तो क़ौम के बुरे आमाल का वबाल भी उन पर पड़ेगा।

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهٗ فِيْهَا مَا نَشَآءُ لِمَنْ نُّرِيْدُ ثُمَّ جَعَلْنَا لَهٗ جَهَنَّمَ ۚ يَصْلٰهَا مَذْمُوْمًا مَّدْحُوْرًا ۝ وَمَنْ اَرَادَ الْاٰخِرَةَ وَسَعٰى لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَّشْكُوْرًا ۝ كُلًّا نُّمِدُّ هٰٓؤُلَآءِ وَهٰٓؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ۭ وَمَا كَانَ عَطَآءُ رَبِّكَ مَحْظُوْرًا ۝ اُنْظُرْ كَيْفَ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ ۭ وَلَلْاٰخِرَةُ اَكْبَرُ دَرَجٰتٍ وَّاَكْبَرُ تَفْضِيْلًا ۝

मन् का-न युरीदुल्-आजि-ल-त अ़ज्जल्ना लहू फ़ीहा मा नशा-उ लिमन्-नुरीदु सुम्-म जअ़ल्ना लहू जहन्न-म यस्लाहा मज़्मूमम्-मद्हूरा (18) व मन् अरादल्-आख़िर-त व सआ़ लहा सअ़्-यहा व हु-व मुअ्मिनुन् फ़-उलाइ-क का-न सअ़्युहुम् मश्कूरा (19) कुल्लन्-नुमिद्दु हाउला-इ व हाउला-इ मिन् अ़ता-इ रब्बि-क, व मा का-न अ़ता-उ रब्बि-क मह्ज़ूरा (20) उन्ज़ुर् कै-फ़ फ़ज़्ज़ल्ना बअ़्-ज़हुम् अ़ला बअ़्ज़िन्, व लल्आख़िरतु अक्बरु द-रजातिंव्-व अक्बरु तफ़्ज़ीला (21)	जो कोई चाहता हो पहला घर जल्द दे दें हम उसको उसी में जितना चाहें जिसको चाहें, फिर ठहराया है हमने उसके वास्ते दोज़ख़, दाख़िल होगा उसमें अपनी बुराई सुनकर धकेला जाकर। (18) और जिसने चाहा पिछला घर और दौड़ की उसके वास्ते जो उसकी दौड़ है और वह यक़ीन पर है सो ऐसों की दौड़ ठिकाने लगी है। (19) हर एक को हम पहुँचाये जाते हैं उनको और उनको तेरे रब की बख़्शिश में से, और तेरे रब की बख़्शिश किसी ने नहीं रोक ली। (20) देख कैसा बढ़ा दिया हमने एक को एक से, और पिछले घर में तो और बड़े दर्जे हैं और बड़ी फ़ज़ीलत। (21)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो शख़्स (अपने नेक आमाल से सिर्फ़) दुनिया (के नफ़े) की नीयत रखेगा (चाहे इसलिये कि वह आख़िरत का इनकारी है या इसलिये कि आख़िरत से ग़ाफ़िल है) हम ऐसे शख़्स को दुनिया ही में जितना चाहेंगे (फिर यह भी सब के लिये नहीं बल्कि) जिसके वास्ते चाहेंगे फ़िलहाल ही दे देंगे (यानी दुनिया ही में कुछ जज़ा मिल जायेगी) फिर (आख़िरत में ख़ाक न मिलेगा बल्कि वहाँ) हम उसके लिये जहन्नम तजवीज़ कर देंगे, वह उसमें बदहाल (बारगाह से) निकाला हुआ होकर दाख़िल होगा। और जो शख़्स (अपने आमाल में) आख़िरत (के सवाब) की नीयत रखेगा और उसके लिये जैसी कोशिश करनी चाहिए वैसी ही कोशिश भी करेगा (मतलब यह है कि हर कोशिश भी मुफ़ीद नहीं बल्कि कोशिश सिर्फ़ वही मुफ़ीद है जो शरीअ़त और सुन्नत के मुवाफ़िक़ हो, क्योंकि हुक्म ऐसी ही कोशिश का दिया गया है जो अ़मल और कोशिश शरीअ़त व सुन्नत के ख़िलाफ़ हो वह मक़बूल नहीं) शर्त यह है कि वह शख़्स मोमिन भी हो, सो ऐसे लोगों की यह कोशिश मक़बूल होगी (ग़र्ज़ कि अल्लाह तआ़ला के यहाँ कामयाबी की शर्तें चार हुईं– अव्वल नीयत का सही होना यानी ख़ालिस आख़िरत के सवाब की नीयत होना, जिसमें नफ़्सानी ग़र्ज़ें

शामिल न हों, दूसरे उस नीयत के लिये अ़मल और कोशिश करना, सिर्फ़ नीयत व इरादे से कोई काम नहीं होता जब तक उसके लिये अ़मल न करे, तीसरे अ़मल का सही होना यानी कोशिश व अ़मल का शरीअ़त और सुन्नत के मुताबिक़ होना, क्योंकि मक़सद के ख़िलाफ़ दिशा में दौड़ना और कोशिश करना बजाय मुफ़ीद होने के मक़सद से और दूर कर देता है, चौथी शर्त जो सबसे अहम और सब की असल है वह अ़क़ीदे का सही होना यानी ईमान है। इन शर्तों के बग़ैर कोई अ़मल अल्लाह के नज़दीक मक़बूल नहीं, और काफ़िरों को दुनिया की नेमतें हासिल होना उनके आमाल की मक़बूलियत की निशानी नहीं, क्योंकि दुनिया की नेमतें अल्लाह की बारगाह के मक़बूल लोगों के लिये मख़्सूस नहीं बल्कि) आपके रब की (इस दुनियावी) अ़ता में से तो हम उन (मक़बूल लोगों) की भी इमदाद करते हैं और उन (ग़ैर-मक़बूल लोगों) की भी (इमदाद करते हैं) और आपके रब की (यह दुनियावी) अ़ता (किसी पर) बन्द नहीं। आप देख लीजिए कि हमने (इस दुनियावी अ़ता में ईमान व कुफ़्र की शर्त के बग़ैर) एक को दूसरे पर किस तरह बरतरी दी है (यहाँ तक कि अक्सर काफ़िर अक्सर मोमिनों से ज़्यादा नेमत व दौलत रखते हैं क्योंकि ये चीज़ें वक़्अ़त के क़ाबिल नहीं) और अलबत्ता आख़िरत (जो अल्लाह की बारगाह के मक़बूल बन्दों के साथ ख़ास है वह) दर्जों के एतिबार से भी बहुत बड़ी है और फ़ज़ीलत के एतिबार से भी (इसलिये एहतिमाम उसी का करना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में अपने अ़मल से सिर्फ़ दुनिया का इरादा करने वालों का और उनकी सज़ा का जो बयान फ़रमाया है उसके लिये तो अलफ़ाज़ः

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْعَاجِلَةَ

इस्तेमाल फ़रमाये, जो किसी काम के लगातार और पाबन्दी से करते रहने पर दलालत करते हैं, जिसका मतलब यह है कि यह जहन्नम की सज़ा सिर्फ़ उस सूरत में है कि उसके हर अ़मल में हर वक़्त सिर्फ़ दुनिया ही की ग़र्ज़ छाई हुई हो, आख़िरत की तरफ़ कोई ध्यान ही न हो। और आख़िरत का इरादा करने और उसकी जज़ा के बयान में लफ़्ज़ः

اَرَادَ الْاٰخِرَةَ

का इस्तेमाल फ़रमाया, जिसका मफ़्हूम यह है कि मोमिन जिस वक़्त भी जिस अ़मल में आख़िरत का इरादा और नीयत कर लेगा उसका वह अ़मल मक़बूल हो जायेगा, चाहे किसी दूसरे अ़मल की नीयत में कोई फ़साद (ख़राबी) भी शामिल हो गया हो।

पहला हाल सिर्फ़ काफ़िर और आख़िरत के मुन्किर का हो सकता है इसलिये उसका कोई भी अ़मल मक़बूल नहीं, और दूसरा हाल मोमिन का है उसका वह अ़मल जो सही और ख़ालिस नीयत के साथ आख़िरत के लिये हो और बाक़ी शर्तें भी मौजूद हों वह मक़बूल हो जायेगा, और उसके भी जिस अ़मल में इख़्लास न हो या दूसरी शर्तें न पाई जायें वह मक़बूल नहीं होगा।

बिदअ़त और अपनी राय का अ़मल कितना ही अच्छा नज़र आये मक़बूल नहीं

इस आयत में कोशिश व अ़मल के साथ लफ़्ज़ 'सअ़्यहा' बढ़ाकर यह बतला दिया गया है कि हर अ़मल और हर कोशिश न मुफ़ीद होती है न अल्लाह के यहाँ मक़बूल, बल्कि अ़मल व कोशिश वही मोतबर है जो मक़सद (आख़िरत) के मुनासिब हो, और मुनासिब होना या न होना यह सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बयान से ही मालूम हो सकता है, इसलिये जो नेक आमाल अपनी राय से और मन-गढ़त तरीक़ों से किये जाते हैं जिनमें बिदअ़तों की रस्में शामिल हैं वो देखने में कितने ही भले और मुफ़ीद नज़र आयें मगर आख़िरत के लिये मुनासिब कोशिश नहीं, इसलिये ने वो अल्लाह के नज़दीक मक़बूल हैं और न आख़िरत में कारामद।

और तफ़सीर रूहुल-मआ़नी ने 'सअ़्यहा' की व्याख्या में कोशिश के सुन्नत के मुताबिक़ होने के साथ यह भी लिखा है कि उस अ़मल में इस्तिक़ामत (जमाव) भी हो, यानी अ़मल मुफ़ीद सुन्नत के मुताबिक़ भी हो और उस पर जमाव और पाबन्दी भी हो, बद-नज़्मी के साथ कभी कर लिया कभी न किया, इससे पूरा फ़ायदा नहीं होता।

لَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتَقْعُدَ مَذْمُوْمًا مَّخْذُوْلًا ﴿۲۲﴾ وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ
اِحْسَانًا ۭ اِمَّا يَبْلُغَنَّ عِنْدَكَ الْكِبَرَ اَحَدُهُمَآ اَوْ كِلٰهُمَا فَلَا تَقُلْ لَّهُمَآ اُفٍّ وَّلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَّهُمَا قَوْلًا
كَرِيْمًا ﴿۲۳﴾ وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ وَقُلْ رَّبِّ ارْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيٰنِيْ صَغِيْرًا ﴿۲۴﴾ رَبُّكُمْ اَعْلَمُ
بِمَا فِيْ نُفُوْسِكُمْ ۭ اِنْ تَكُوْنُوْا صٰلِحِيْنَ فَاِنَّهٗ كَانَ لِلْاَوَّابِيْنَ غَفُوْرًا ﴿۲۵﴾

ला तज्अ़ल् मअ़ल्लाहि इलाहन् आख़-र फ़-तक़्अु-द मज़्मूमम्-मख़्ज़ूला (22) ✿	मत ठहरा अल्लाह के साथ दूसरा हाकिम फिर बैठ रहेगा तू इल्ज़ाम खाकर बेकस होकर। (22) ✿
व क़ज़ा रब्बु-क अल्ला तअ़्बुदू इल्ला इय्याहु व बिल्-वालिदैनि इह्सानन्, इम्मा यब्लुग़न्-न अ़िन्द-कल्-कि-ब-र अ-हदुहुमा औ किलाहुमा फ़ला तक़ुल्-	और हुक्म कर चुका तेरा रब कि न पूजो उसके सिवाय और माँ बाप के साथ भलाई करो अगर पहुँच जाये तेरे सामने बुढ़ापे को एक उनमें से या दोनों तो न कह उनको 'हूँ' और न झिड़क उनको,

लहुमा उफ़्फ़िंव्-व ला तन्हर्हुमा व क़ुल्- लहुमा क़ौलन् करीमा (23) वख़्फ़िज़् लहुमा जनाहज़्ज़ुल्लि मिनर्रह्मति व क़ुर्रब्बिर्हम्हुमा कमा रब्बयानी सग़ीरा (24) रब्बुकुम् अअ़्लमु बिमा फ़ी नुफ़ूसिकुम् इन् तकूनू सालिही-न फ़-इन्नहू का-न लिल्-अव्वाबी-न ग़फ़ूरा (25)	और कह उनसे बात अदब की। (23) और झुका दे उनके आगे कन्धे आजिज़ी कर कर नियाज़ मन्दी से, और कह ऐ रब! इन पर रहम कर जैसा कि पाला इन्होंने मुझको छोटा-सा। (24) तुम्हारा रब ख़ूब जानता है जो तुम्हारे जी में है अगर तुम नेक होगे तो वह रुजू करने वालों को बख़्शता है। (25)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

इनसे पहली आयतों में आमाल के क़ुबूल होने के लिये चन्द शर्तों का बयान आया है जिनमें एक शर्त यह भी थी कि मक़बूल अ़मल वही हो सकता है जो ईमान के साथ हो और शरीअ़त व सुन्नत के मुताबिक़ हो। इन आयतों में ऐसे ही ख़ास-ख़ास आमाल की हिदायत की गई है जो शरीअ़त के बतलाये हुए अहकाम हैं, उन पर अ़मल करना आख़िरत की फ़लाह और उनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी आख़िरत की हलाकत का सबब है, और चूँकि उक्त शर्तों में सबसे अहम शर्त ईमान की है इसलिये सबसे पहला हुक्म भी तौहीद का बयान फ़रमाया उसके बाद बन्दों के हुक़ूक़ से संबन्धित अहकाम हैं।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

पहला हुक्म तौहीदः

لَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ.

(ऐ मुख़ातब!) अल्लाह के साथ कोई और माबूद मत तजवीज़ कर (यानी शिर्क न कर) वरना तू बदहाल, बेमददगार होकर बैठ रहेगा। (आगे फिर इसकी ताकीद है) तेरे रब ने हुक्म कर दिया है कि सिवाय उस (माबूदे बरहक़) के किसी और की इबादत मत कर (यह आख़िरत की कोशिश के तरीक़े की तफ़सील है)।

दूसरा हुक्म माँ-बाप के हुक़ूक़ अदा करनाः

وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا.

और तुम (अपने) माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक किया करो, अगर (वे) तेरे पास (हों और)

उनमें से एक या दोनों बुढ़ापे (की उम्र) को पहुँच जाएँ (जिसकी वजह से ख़िदमत के मोहताज हो जायें और जबकि तबई तौर पर उनकी ख़िदमत करना भारी मालूम हो) तो (उस वक़्त भी इतना अदब करो कि) उनको कभी (हाँ से) हूँ भी मत करना और न उनको झिड़कना, और उनसे ख़ूब अदब से बात करना। और उनके सामने मेहरबानी से आजिज़ी के साथ झुके रहना, और (उनके लिये हक़ तआ़ला से) यूँ दुआ़ करते रहना कि ऐ मेरे परवर्दिगार! इन दोनों पर रहमत फ़रमाईये जैसा कि इन्होंने मुझको बचपन (की उम्र) में पाला, परवरिश किया है (और सिर्फ़ इस ज़ाहिरी अदब व सम्मान पर बस मत करना, दिल में भी उनका अदब और इताअ़त का इरादा रखना, क्योंकि) तुम्हारा रब तुम्हारे दिलों की बात को ख़ूब जानता है (और इसी वजह से तुम्हारे लिये इस पर अ़मल करने को आसान करने के वास्ते एक आसानी का हुक्म भी सुनाते हैं कि) अगर तुम (हक़ीक़त में दिल ही से) सआ़दत मन्द हो (और ग़लती या तुनक-मिज़ाजी या दिली तंगी से कोई ज़ाहिरी कोताही हो जाये और फिर नादिम होकर माज़िरत कर लो) तो वह तौबा करने वालों की ख़ता माफ़ कर देता है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

माँ-बाप के अदब व एहतिराम और इताअ़त की बड़ी अहमियत

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि इस आयत में हक़ तआ़ला ने माँ-बाप के अदब व एहतिराम और उनके साथ अच्छा सुलूक करने को अपनी इबादत के साथ मिलाकर वाजिब फ़रमाया है जैसा कि सूरः लुक़मान में अपने शुक्र के साथ माँ-बाप के शुक्र को मिलाकर लाज़िम फ़रमाया है:

اَنِ اشْكُرْلِىْ وَلِوَالِدَيْكَ

(यानी मेरा शुक्र अदा कर और अपने माँ-बाप का भी) इससे साबित होता है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की इबादत के बाद माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी सबसे अहम और अल्लाह तआ़ला के शुक्र की तरह माँ-बाप का शुक्रगुज़ार होना वाजिब है। सही बुख़ारी की यह हदीस भी इसी पर सुबूत है जिसमें है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से एक शख़्स ने सवाल किया कि "अल्लाह के नज़दीक सबसे ज़्यादा महबूब अ़मल क्या है?" आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि "नमाज़ अपने (मुस्तहब) वक़्त में।" उसने फिर मालूम किया, उसके बाद कौनसा अ़मल सबसे ज़्यादा महबूब है? तो आपने फ़रमाया "माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक।" (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी व ख़िदमत के फ़ज़ाईल हदीस की रिवायतों में

1. मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, मुस्तद्रक हाकिम में सही सनद से हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "बाप

जन्नत का दरमियानी दरवाज़ा है, अब तुम्हें इख़्तियार है कि उसकी हिफ़ाज़त करो या ज़ाया कर दो।" (तफ़सीरे मज़हरी)

2. जामे तिर्मिज़ी व मुस्तद्रक हाकिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने उमर की रिवायत है और हाकिम ने इस रिवायत को सही कहा है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "अल्लाह की रज़ा बाप की रज़ा में है और अल्लाह की नाराज़ी बाप की नाराज़ी में।"

3. इब्ने माजा ने हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि एक शख़्स ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया कि औलाद पर माँ-बाप का क्या हक़ है? आपने फ़रमाया कि "वे दोनों ही तेरी जन्नत या दोज़ख़ हैं। मतलब यह है कि उनकी इताअ़त व ख़िदमत जन्नत में ले जाती है और उनकी बेअदबी और नाराज़ी दोज़ख़ में।

4. बैहक़ी ने शुअ़बुल-ईमान में और इब्ने अ़साकिर ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "जो शख़्स अल्लाह के लिये अपने माँ-बाप का फ़रमाँबरदार रहा उसके लिये जन्नत के दो दरवाज़े खुले रहेंगे, और जो उनका नाफ़रमान हुआ उसके लिये जहन्नम के दो दरवाज़े खुले रहेंगे, और अगर माँ या बाप में से कोई एक ही था तो एक दरवाज़ा (जन्नत या दोज़ख़ का खुला रहेगा)।" इस पर एक शख़्स ने सवाल किया कि (यह जहन्नम की वईद) क्या उस सूरत में भी है कि माँ-बाप ने उस शख़्स पर ज़ुल्म किया हो? तो आपने तीन मर्तबा फ़रमायाः

وَاِنْ ظَلَمَا، وَاِنْ ظَلَمَا، وَاِنْ ظَلَمَا

(यानी माँ-बाप की नाफ़रमानी और उनको तकलीफ़ पहुँचाने पर जहन्नम की वईद है चाहे माँ-बाप ने ही लड़के पर ज़ुल्म किया हो। जिसका हासिल यह है कि औलाद को माँ-बाप से बदला लेने का हक़ नहीं कि उन्होंने ज़ुल्म किया तो यह भी उनकी ख़िदमत व इताअ़त से हाथ खींच लें)।

5. बैहक़ी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो ख़िदमतगार बेटा अपने माँ-बाप पर रहमत व शफ़क़त की नज़र डालता है तो हर नज़र के बदले में एक मक़बूल हज का सवाब पाता है। लोगों ने अ़र्ज़ किया कि अगर वह दिन में सौ मर्तबा इस तरह नज़र कर ले? आपने फ़रमाया कि "हाँ सौ मर्तबा भी (हर नज़र पर यह सवाब मिलता रहेगा), अल्लाह तआ़ला बड़ा है (उसके ख़ज़ाने में कोई कमी नहीं आती)।"

माँ-बाप की हक़-तल्फ़ी की सज़ा आख़िरत से पहले दुनिया में भी मिलती है

6. बैहक़ी ने शुअ़बुल-ईमान में अबी बकरा की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि और सब गुनाहों की सज़ा तो अल्लाह तआ़ला जिसको चाहते हैं क़ियामत तक टाल देते हैं सिवाय माँ-बाप की हक़-तल्फ़ी और नाफ़रमानी के कि इसकी सज़ा आख़िरत से पहले दुनिया में भी दी जाती है (ये सब रिवायतें तफ़सीरे मज़हरी से नक़ल की गई हैं)।

माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी किन चीज़ों में वाजिब है और कहाँ मुख़ालफ़त की गुंजाईश है

इस पर उलेमा व फ़ुक़हा का इत्तिफ़ाक़ (सहमति) है कि माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी सिर्फ़ जायज़ कामों में वाजिब है, नाजायज़ या गुनाह के काम में फ़रमाँबरदारी वाजिब तो क्या जायज़ भी नहीं। हदीस में है:

لا طاعة لمخلوق فی معصية الخالق

(यानी ख़ालिक़ की नाफ़रमानी में किसी मख़्लूक़ की इताअ़त जायज़ नहीं।)

माँ-बाप की ख़िदमत और अच्छे सुलूक के लिये उनका मुसलमान होना ज़रूरी नहीं

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस मसले की शहादत में हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का यह वाक़िआ़ सही बुख़ारी से नक़ल किया है कि हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मेरी माँ जो मुश्रिका है मुझसे मिलने के लिये आती है, क्या मेरे लिये जायज़ है कि मैं उसकी ख़ातिर मुदारात करूँ? आपने फ़रमायाः

صِلِی اُمَّكِ

(यानी अपनी माँ की सिला-रहमी और ख़ातिर-मुदारात करो) और काफ़िर माँ-बाप के बारे में ख़ुद क़ुरआने करीम का यह इरशाद मौजूद है:

وَصَاحِبْهُمَا فِي الدُّنْيَا مَعْرُوْفًا

यानी जिसके माँ-बाप काफ़िर हों और उसको भी काफ़िर होने का हुक्म दें तो उनका इस मामले में हुक्म मानना जायज़ नहीं, मगर दुनिया में उनके साथ परिचित तरीक़े से बर्ताव किया जाये। ज़ाहिर है कि परिचित तरीक़े से यही मुराद है कि उनके साथ मुदारात का मामला करें।

मसलाः जब तक जिहाद फ़र्ज़े-ऐन (हर एक पर लाज़िमी फ़र्ज़) न हो जाये, फ़र्ज़े-किफ़ाया के दर्जे में रहे उस वक़्त तक किसी लड़के के लिये बग़ैर उनकी इजाज़त के जिहाद में शरीक होना जायज़ नहीं। सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में जिहाद में शरीक होने की इजाज़त

लेने के लिये हाज़िर हुआ, आपने उससे पूछा कि "क्या तुम्हारे माँ-बाप ज़िन्दा हैं?" उसने अर्ज़ किया कि हाँ ज़िन्दा हैं। आपने फ़रमायाः

ففيهما فجاهد

यानी बस तो अब तुम माँ-बाप की ख़िदमत में रहकर जिहाद करो। मतलब यह है कि उनकी ख़िदमत ही में तुम्हें जिहाद का सवाब मिल जायेगा। दूसरी रिवायत में इसके साथ यह भी बयान हुआ है कि उस शख़्स ने यह बयान किया कि मैं अपने माँ-बाप को रोता हुआ छोड़कर आया हूँ इस पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "जाओ उनको हंसाओ जैसा कि उनको रुलाया है।" यानी उनसे जाकर कह दो कि मैं आपकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ जिहाद में नहीं जाऊँगा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मसलाः इस रिवायत से मालूम हुआ कि जब कोई चीज़ फ़र्ज़े-ऐन या वाजिबुल-ऐन न हो किफ़ाया के दर्जे में हो तो औलाद के लिये वह काम बग़ैर माँ-बाप की इजाज़त के जायज़ नहीं। इसमें दीन का मुकम्मल इल्म हासिल करना और दीन की तब्लीग़ के लिये सफ़र करने का हुक्म भी शामिल है, कि दीन का इल्म फ़र्ज़ हिस्से के बराबर जिसको हासिल हो वह आ़लिम बनने के लिये सफ़र करे या लोगों को तब्लीग़ व दावत के लिये सफ़र करे तो बग़ैर माँ-बाप की इजाज़त के जायज़ नहीं।

मसलाः माँ-बाप के साथ जो अच्छे सुलूक का हुक्म क़ुरआन व हदीस में आया है इसमें यह भी दाख़िल है कि जिन लोगों से माँ-बाप की रिश्तेदारी या दोस्ती थी उनके साथ भी अच्छे सुलूक का मामला करे, ख़ुसूसन उनकी वफ़ात के बाद। सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "बाप के साथ बड़ा सुलूक यह है कि उसके मरने के बाद उसके दोस्तों के साथ अच्छा सुलूक करे। और हज़रत अबू उसैद बदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने नक़ल किया है कि मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ बैठा था एक अन्सारी शख़्स आया और सवाल किया या रसूलल्लाह! माँ-बाप के इन्तिक़ाल के बाद भी उनका कोई हक़ मेरे ज़िम्मे बाक़ी है? आपने फ़रमाया हाँ! उनके लिये दुआ़ और इस्तिग़फ़ार करना और जो अ़हद उन्होंने किसी से किया था उसको पूरा करना और उनके दोस्तों का अदब व सम्मान करना और उनके ऐसे रिश्तेदारों के साथ सिला-रहमी का बर्ताव करना जिनकी अ़ज़ीज़ दारी का रिश्ता सिर्फ़ उन्हीं के वास्ते से है। माँ-बाप के ये हुक़ूक़ हैं जो उनके बाद भी तुम्हारे ज़िम्मे बाक़ी हैं।

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़दत थी कि हज़रत ख़दीजा उम्मुल-मोमिनीन रज़ियल्लाहु अ़न्हा की वफ़ात के बाद उनकी सहेलियों के पास हदिया भेजा करते थे, जिससे हज़रत ख़दीजा का हक़ अदा करना मक़सद था।

माँ-बाप के अदब की रियायत ख़ुसूसन बुढ़ापे में

माँ-बाप की ख़िदमत व फ़रमाँबरदारी माँ-बाप होने की हैसियत से किसी ज़माने में और

किसी उम्र के साथ मुक़ैयद नहीं, हर हाल और हर उम्र में माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक वाजिब है, लेकिन वाजिबात व फ़राईज़ की अदायेगी में जो हालात आ़दतन रुकावट बना करते हैं उन हालात में क़ुरआने करीम का आ़म अन्दाज़ यह है कि अहकाम पर अ़मल को आसान करने के लिये विभिन्न पहलुओं से ज़ेहनों की तरबियत भी करता है और ऐसे हालात में अहकाम पर अ़मल करने की पाबन्दी की और अधिक ताकीद भी।

माँ-बाप के बुढ़ापे का ज़माना जबकि वे औलाद की ख़िदमत के मोहताज हो जायें, उनकी ज़िन्दगी औलाद के रहम व करम पर रह जाये, उस वक़्त अगर औलाद की तरफ़ से ज़रा-सी बेरुख़ी भी महसूस हो तो वह उनके दिल का ज़ख़्म बन जाती है। दूसरी तरफ़ बुढ़ापे के अ़वारिज़ तबई तौर पर इनसान को चिड़चिड़ा बना देते हैं। तीसरे बुढ़ापे के आख़िरी दौर में जब अ़क़्ल व समझ भी जवाब देने लगते हैं तो उनकी इच्छायें व मुतालबे कुछ ऐसे भी हो जाते हैं जिनका पूरा करना औलाद के लिये मुश्किल होता है, क़ुरआने करीम ने इन हालात में माँ-बाप की दिलजोई और राहत पहुँचाने के अहकाम देने के साथ इनसान को उसका बचपन का ज़माना याद दिलाया कि किसी वक़्त तुम भी अपने माँ-बाप के इससे ज़्यादा मोहताज थे जिस क़द्र आज वे तुम्हारे मोहताज हैं, तो जिस तरह उन्होंने अपनी राहत व इच्छाओं को उस वक़्त तुम पर क़ुरबान किया और तुम्हारी बेअ़क़्ली की बातों को प्यार के साथ बरदाश्त किया, अब जबकि उन पर मोहताजी का यह वक़्त आया तो अ़क़्ल व शराफ़त का तक़ाज़ा है कि उनके इस पहले वाले एहसान का बदला अदा करो। आयत में:

كَمَا رَبَّيٰنِيْ صَغِيْرًا۝

से इसी तरफ़ इशारा किया गया है और उक्त आयतों में माँ-बाप के बुढ़ापे की हालत को पहुँचने के वक़्त चन्द ताकीदी अहकाम दिये गये हैं।

अव्वल यह कि उनको **उफ़** भी न कहे। लफ़्ज़ उफ़ से मुराद ऐसा लफ़्ज़ और बात है जिससे अपनी नागवारी का इज़हार हो, यहाँ तक कि उनकी बात सुनकर इस तरह लम्बा साँस लेना जिससे उन पर नागवारी का इज़हार हो वह भी इसी कलिमे उफ़ में दाख़िल है। एक हदीस में हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि तकलीफ़ पहुँचाने में उफ़ कहने से भी कम कोई दर्जा होता तो यक़ीनन वह भी ज़िक्र किया जाता (हासिल यह है कि जिस चीज़ से माँ-बाप को कम से कम भी तकलीफ़ पहुँचे वह भी मना है)।

दूसरा हुक्म है 'व ला तन्हरहुमा'। लफ़्ज़ 'नहर' के मायने झिड़कने डाँटने के हैं, इसका तकलीफ़ का सबब होना ज़ाहिर है।

तीसरा हुक्म है 'क़ुल् लहुमा क़ौलन् करीमा'। पहले दो हुक्म मनफ़ी पहलू से संबन्धित थे जिनमें माँ-बाप की मामूली से मामूली उस चीज़ को रोका गया है जिससे उनके दिल को ठेस पहुँचे। इस तीसरे हुक्म में सकारात्मक अन्दाज़ से माँ-बाप के साथ बातचीत का अदब सिखलाया

गया है कि उनसे मुहब्बत व शफ़क़त के नर्म लहजे में बात की जाये। हज़रत सईद बिन मुसैयब ने फ़रमाया जिस तरह कोई ग़ुलाम अपने सख़्त-मिज़ाज आक़ा से बात करता है।

चौथा हुक्म है 'वख़्फ़िज़् लहुमा जनाहज़्ज़ुल्लि मिनर्रह्मति'। जिसका हासिल यह है कि उनके सामने अपने आपको आ़जिज़ व ज़लील आदमी की सूरत में पेश करे, जैसे ग़ुलाम आक़ा के सामने। जनाह के मायने बाज़ू के हैं, लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि माँ-बाप के लिये अपने बाज़ू आ़जिज़ी और ज़िल्लत के साथ झुकाये। आख़िर में 'मिनर्रह्मति' के लफ़्ज़ से एक तो इस पर सचेत किया कि माँ-बाप के साथ यह मामला महज़ दिखावे का न हो बल्कि दिली रहमत व इज़्ज़त की बुनियाद पर हो, दूसरे शायद इशारा इस तरफ़ भी है कि माँ-बाप के सामने ज़िल्लत के साथ पेश आना असली इज़्ज़त का पहला क़दम है, क्योंकि यह वास्तविक ज़िल्लत नहीं बल्कि इसका सबब शफ़क़त व रहमत है।

पाँचवाँ हुक्म है 'व क़ुर्रब्बिर्‌हम्हुमा'। जिसका हासिल यह है कि माँ-बाप को पूरी राहत पहुँचाना तो इनसान के बस की बात नहीं, अपनी हिम्मत भर राहत पहुँचाने की फ़िक्र के साथ उनके लिये अल्लाह तआ़ला से भी दुआ़ करता रहे कि अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से उनकी सब मुश्किलों को आसान और तकलीफ़ों को दूर फ़रमाये। यह आख़िरी हुक्म ऐसा विस्तृत और आ़म है कि माँ-बाप की वफ़ात के बाद भी जारी है, जिसके ज़रिये वह हमेशा माँ-बाप की ख़िदमत कर सकता है।

मसलाः माँ-बाप अगर मुसलमान हों तो उनके लिये रहमत की दुआ़ ज़ाहिर है, लेकिन अगर वे मुसलमान न हों तो उनकी ज़िन्दगी में यह दुआ़ इस नीयत से जायज़ होगी कि उनको दुनियावी तकलीफ़ से निजात हो और ईमान की तौफ़ीक़ हो, मरने के बाद उनके लिये रहमत की दुआ़ जायज़ नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, संक्षिप्तता के साथ)

एक अ़जीब वाक़िआ़

इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी मुत्तसिल सनद के साथ हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि एक शख़्स रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और शिकायत की कि मेरे बाप ने मेरा माल ले लिया है। आपने फ़रमाया कि अपने वालिद (बाप) को बुलाकर लाओ।-उसी वक़्त हज़रत जिब्रीले अमीन तशरीफ़ लाये और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कहा कि जब इसका बाप आ जाये तो आप उससे पूछें कि वो कलिमात क्या हैं जो उसने दिल में कहे हैं, ख़ुद उसके कानों ने भी उनको नहीं सुना? जब यह शख़्स अपने वालिद को लेकर पहुँचा तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वालिद से कहा कि क्या बात है, आपका बेटा आपकी शिकायत करता है। क्या आप चाहते हैं कि इसका माल छीन लें? वालिद ने अ़र्ज़ किया कि आप इसी से यह सवाल फ़रमायें कि मैं इसकी फूफी ख़ाला या अपने नफ़्स के सिवा कहाँ ख़र्च करता हूँ? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि 'ईह' (जिसका मतलब यह था कि बस हक़ीक़त मालूम हो गई अब

और कुछ कहने-सुनने की ज़रूरत नहीं)।

इसके बाद उसके वालिद से दरियाफ़्त किया कि वे कलिमात क्या हैं जिनको अभी तक ख़ुद तुम्हारे कानों ने भी नहीं सुना। उस शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! हमें हर मामले में अल्लाह तआ़ला आप पर हमारा ईमान और यक़ीन बढ़ा देते हैं (जो बात किसी ने नहीं सुनी उसकी आपको इत्तिला हो गई जो एक मोजिज़ा है) फिर उसने अ़र्ज़ किया कि यह एक हक़ीक़त है कि मैंने चन्द अश्आ़र दिल में कहे थे जिनको मेरे कानों ने भी नहीं सुना। आपने फ़रमाया कि वो हमें सुनाओ, उस वक़्त उसने ये निम्नलिखित अश्आ़र सुनाये।

غَذَوْتُكَ مَوْلُوْدًا وَمُنْتُكَ يا فعا ☆ تُعَلُّ بِمَا اَجْنِى عَلَيْكَ وتُنْهَلُ

"मैंने तुझे बचपन में ग़िज़ा दी और जवान होने के बाद भी तुम्हारी ज़िम्मेदारी उठाई, तुम्हारा सब खाना पीना मेरी ही कमाई से था।"

اِذا ليلة ضافتك بالقسم لم ابت ☆ لسقمك الا ساهرا الململُ

"जब किसी रात में तुम्हें कोई बीमारी पेश आ गई तो मैंने तमाम रात तुम्हारी बीमारी के सबब जागने और बेक़रारी में गुज़ार दी।"

كانّى انا المطروق دونك بالذى ☆ طُرِقْتَ به دونى فعينى تهملُ

"गोया कि तुम्हारी बीमारी मुझे ही लगी है तुम्हें नहीं, जिसकी वजह से मैं तमाम रात रोता रहा।"

تخاف الردٰى نفسى عليك وانها ☆ لَتعلَم ان الموْتَ وَقْتٌ مؤجَّلُ

"मेरा दिल तुम्हारी हलाकत से डरता रहा हालाँकि मैं जानता था कि मौत का एक दिन मुक़र्रर है आगे पीछे नहीं हो सकती।"

فَلَمَّا بَلَغْتَ السِنَّ والغاية الَّتِىْ ☆ اليها مدى ما كنت فيك اُؤَمِّلُ

"फिर जब तुम उस उम्र और हद तक पहुँच गये जिसकी मैं तमन्ना किया करता था।"

جعلت جزائى غلظةً وفظاظة ☆ كانك انت المنعم المتفضِّلُ

"तो तुमने मेरा बदला सख़्ती और सख़्त-कलामी बना दिया, गोया कि तुम्हीं मुझ पर एहसान व इनाम कर रहे हो।"

فليتكَ اذلم ترع حقّ اُبوّتى ☆ فعلتَ كما الجارُ المصاقب يفعلُ

"काश! अगर तुमसे मेरे बाप होने का हक़ अदा नहीं हो सकता तो कम से कम ऐसा ही कर लेते जैसा एक शरीफ़ पड़ोसी किया करता है।"

فَاَوْلَيْتَنِىْ حَقَّ الْجِوارِ ولم تكن ☆ علىَّ بمال دونَ مالك تَبْخَلُ

"तो कम से कम मुझे पड़ोसी का हक़ तो दिया होता और ख़ुद मेरे ही माल में मेरे हक़ में कन्जूसी से काम न लिया होता।"

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ये अश्आ़र सुने तो बेटे का गिरेबान पकड़ लिया और फ़रमायाः

اَنْتَ وَمَالُكَ لِاَبِيْكَ.

यानी जा तू भी और तेरा माल भी सब तेरे बाप का है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी पेज 246 जिल्द 10)

ये अश्आ़र अ़रबी अदब (साहित्य) की मशहूर किताब हमासा में भी नक़ल किये गये मगर इनको उमैया बिन अबिस्सुल्त शायर की तरफ़ मन्सूब किया है और कुछ लोगों ने कहा है कि यह अ़ब्दुल-अअ़्ला के अश्आ़र हैं। बाज़ लोगों ने इनकी निस्बत अबुल-अ़ब्बास अअ़्मा की तरफ़ की है। (हाशिया तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

उपर्युक्त आयतों में से आख़िरी आयतः

رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا فِىْ نُفُوْسِكُمْ

(यानी आयत नम्बर 25) में उस दिली तंगी को दूर फ़रमा दिया गया है जो माँ-बाप के अदब व सम्मान से सम्बन्धित उक्त अहकाम से औलाद के दिल में पैदा हो सकती है, कि माँ-बाप के साथ हर वक़्त रहना है, उनके और अपने हालात भी हर वक़्त एक जैसे और बराबर नहीं होते, किसी वक़्त ज़बान से कोई कलिमा ऐसा निकल गया जो उपरोक्त आदाब के ख़िलाफ़ हो तो उस पर जहन्नम की वईद (सज़ा की धमकी) है, इस तरह गुनाह से बचना सख़्त मुश्किल होगा। इस आयत में इस शुब्हे और इसे दिली तंगी को दूर करने के लिये फ़रमाया कि बग़ैर इरादे के बेअदबी के कभी किसी परेशानी या ग़फ़लत से कोई कलिमा निकल जाये और फिर उससे तौबा कर ले तो अल्लाह तआ़ला दिलों के हाल से वाक़िफ़ हैं कि वह कलिमा बेअदबी या तकलीफ़ पहुँचाने के लिये नहीं कहा था वह माफ़ फ़रमाने वाले हैं। लफ़्ज़ **अव्वाबीन** तव्वाबीन के मायने में है। हदीस में मग़रिब के बाद की छह रकअ़तों और इशराक़ की नवाफ़िल को 'सलात-ए-अव्वाबीन' कहा गया है जिसमें इशारा है कि इन नमाज़ों की तौफ़ीक़ उन्हीं लोगों को नसीब होती है जो अव्वाबीन और तव्वाबीन (अल्लाह की तरफ़ रुजू करने वाले और तौबा करने वाले) हैं।

وَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰى حَقَّهٗ وَالْمِسْكِيْنَ

وَابْنَ السَّبِيْلِ وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذِيْرًا ۝ اِنَّ الْمُبَذِّرِيْنَ كَانُوْٓا اِخْوَانَ الشَّيٰطِيْنِ ۭ وَكَانَ الشَّيْطٰنُ لِرَبِّهٖ كَفُوْرًا ۝

व आति ज़ल्क़ुर्बा हक़्क़हू वल्-मिस्की-न वब्नस्सबीलि व ला तुबज़्ज़िर् तब्ज़ीरा (26) इन्नल्-मुबज़्ज़िरी-न कानू इख़्वानश्शयातीनि, व कानश्शैतानु लिरब्बिही कफ़ूरा (27)	और दे क़राबत वाले को उसका हक़ और मोहताज को और मुसाफ़िर को, और मत उड़ा बेजा। (26) बेशक उड़ाने वाले भाई हैं शैतानों के, और शैतान है अपने रब का नाशुक्रा। (27)

इन आयतों के मज़मून का पीछे के मज़मून से ताल्लुक़

इन दोनों आयतों में बन्दों के हुक़ूक़ के बारे में दो और हुक्म बयान हुए हैं— पहला माँ-बाप के अ़लावा दूसरे रिश्तेदारों और आ़म मुसलमानों के हुक़ूक़। दूसरा ख़र्च करने में फ़ुज़ूलख़र्ची की मनाही। मुख़्तसर तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और क़राबतदार "यानी रिश्तेदार" को उसका (माली और ग़ैर-माली) हक़ देते रहना और मोहताज व मुसाफ़िर को भी (उनके हुक़ूक़) देते रहना और (माल को) बेमौक़ा मत उड़ाना, बेशक बेमौक़ा उड़ाने वाले शैतानों के भाई-बन्द हैं (यानी उनके जैसे हैं) और शैतान अपने परवर्दिगार का बड़ा नाशुक्रा है (कि हक़ तआ़ला ने उसको अ़क़्ल की दौलत दी उसने उस अ़क़्ल की दौलत को अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी में ख़र्च किया। इसी तरह फ़ुज़ूलख़र्ची करने वालों को अल्लाह तआ़ला ने माल की दौलत दी मगर वे उसको अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी में ख़र्च करते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आ़म रिश्तेदारों के हुक़ूक़ का ख़ास ख़्याल

पिछली आयतों में माँ-बाप के हुक़ूक़ और उनके अदब व एहतिराम की तालीम थी, इस आयत में आ़म रिश्तेदारों के हुक़ूक़ का बयान है कि हर रिश्ते का हक़ अदा किया जाये जो कम से कम उनके साथ अच्छा बर्ताव और उम्दा सुलूक है। और अगर वे ज़रूरत मन्द हों तो उनकी माली इमदाद भी अपनी गुंजाईश के मुताबिक़ इसमें दाख़िल है। इस आयत से इतनी बात तो साबित हो गई कि हर शख़्स पर उसके आ़म रिश्तेदार अ़ज़ीज़ों का भी हक़ है, वह क्या और कितना है इसकी तफ़सील बयान नहीं हुई, मगर आ़म सिला-रहमी और अच्छे बर्ताव का इसमें दाख़िल होना वाज़ेह है। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक इसी फ़रमान के तहत जो रिश्तेदार ज़ी-रहम मेहरम हो, अगर वह औरत या बच्चा है जिनके पास अपने गुज़ारे का सामान नहीं और कमाने पर भी क़ुदरत नहीं, इसी तरह जो रिश्तेदार ज़ी-रहम मेहरम अपाहिज या अंधा हो और उसकी मिल्क में इतना माल नहीं जिससे उसका गुज़ारा हो सके तो उनके जिन रिश्तेदारों में इतनी गुंजाईश है कि वे उनकी मदद कर सकते हैं उन पर उन सब का नफ़क़ा (खाना-ख़र्चा) फ़र्ज़ है, और अगर एक ही दर्जे के कई रिश्तेदार गुंजाईश वाले हों तो उन सब पर तक़सीम करके उनका गुज़ारा नफ़्क़ा दिया जायेगा। सूरः ब-क़रह की आयतः

وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ

(यानी आयत नम्बर 233) से भी यह हुक्म साबित है। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस आयत में रिश्तेदारों, मिस्कीन और मुसाफ़िर को माली मदद देने और सिला-रहमी करने

को उनका हक़ फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि देने वाले को उन पर एहसान जताने का कोई मौक़ा नहीं, क्योंकि उनका हक़ उसके ज़िम्मे फ़र्ज़ है, देने वाला अपना फ़र्ज़ अदा कर रहा है किसी पर एहसान नहीं कर रहा।

फ़ुज़ूलख़र्ची की मनाही

फ़ुज़ूलख़र्ची के मायने को क़ुरआने करीम ने दो लफ़्ज़ों से ताबीर फ़रमाया है– एक तब्ज़ीर और दूसरे इस्राफ़। तब्ज़ीर की मनाही तो इसी ऊपर बयान हुई आयत में वाज़ेह है, इस्राफ़ की मनाही 'व ला तुस्रिफ़ू' वाली आयत से साबित है। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि दोनों लफ़्ज़ एक जैसे मायने वाले हैं। किसी नाफ़रमानी में या बेमौक़ा ग़लत जगह ख़र्च करने को तब्ज़ीर व इस्राफ़ कहा जाता है, और कुछ हज़रात ने इसमें यह तफ़सील बयान की है कि किसी गुनाह में या बिल्कुल बेमौक़ा बेमहल ख़र्च करने को तब्ज़ीर कहते हैं और जहाँ ख़र्च करने का जायज़ मौक़ा तो हो मगर ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च किया जाये उसको इस्राफ़ कहते हैं। इसलिये तब्ज़ीर इस्राफ़ के मुक़ाबले में ज़्यादा सख़्त है, मुबज़्ज़िरीन (फ़ुज़ूलख़र्ची करने वालों) को शैतान का भाई क़रार दिया गया है।

इमामे तफ़सीर हज़रत मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि अगर कोई अपना सारा माल हक़ के लिये ख़र्च कर दे तो वह तब्ज़ीर नहीं, और अगर बातिल (ग़ैर-हक़ और ग़लत काम) के लिये एक मुद्द (आधा सैर) भी ख़र्च करे तो वह तब्ज़ीर है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ग़ैर-हक़ में बेमौक़ा ख़र्च करने का नाम तब्ज़ीर है। (तफ़सीरे मज़हरी) इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि तब्ज़ीर यह है कि इनसान माल को हासिल तो हक़ के मुताबिक़ करे मगर ख़िलाफ़े हक़ ख़र्च कर डाले, और इसका नाम इस्राफ़ भी है और यह हराम है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि हराम व नाजायज़ काम में तो एक दिरहम ख़र्च करना भी तब्ज़ीर है, और जायज़ व मुबाह इच्छाओं में हद से ज़्यादा ख़र्च करना जिससे आगे चलकर मोहताज फ़क़ीर हो जाने का ख़तरा हो जाये यह भी तब्ज़ीर में दाख़िल है, हाँ! अगर कोई शख़्स अपनी असल जमा को महफ़ूज़ रखते हुए उसके मुनाफ़े को अपनी जायज़ ज़रूरतों और इच्छाओं में वुस्अ़त के साथ ख़र्च करता है तो वह तब्ज़ीर में दाख़िल नहीं।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी पेज 248 जिल्द 10)

وَاِمَّا تُعْرِضَنَّ عَنْهُمُ ابْتِغَآءَ رَحْمَةٍ مِّنْ رَّبِّكَ تَرْجُوْهَا فَقُلْ لَّهُمْ قَوْلًا مَّيْسُوْرًا ۝

व इम्मा तुअ़्रिज़न्-न अ़न्हुमुब्तिग़ा-अ रह़्मतिम्-मिर्रब्बि-क तर्जूहा फ़क़ुल्-लहुम् क़ौलम्-मैसूरा (28)	और अगर कभी तू बेतवज्जोही करे उनकी तरफ़ से इन्तिज़ार में अपने रब की मेहरबानी के जिसकी तुझको उम्मीद है तो कह दे उनको बात नर्मी की। (28)

इस आयत के मज़मून का पीछे से संबन्ध

इस आयत में बन्दों के हुक़ूक़ से संबन्धित पाँचवाँ हुक्म यह दिया गया है कि अगर किसी वक़्त ज़रूरत मन्दों को उनकी ज़रूरत के मुताबिक़ देने का इन्तिज़ाम न हो सके तो उस वक़्त भी उनको रूखा जवाब न दिया जाये बल्कि हमदर्दी के साथ आईन्दा सहूलत की उम्मीद दिलाई जाये। आयत की तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर (किसी वक़्त तुम्हारे पास उन लोगों को देने के लिये माल न हो और इसलिये) तुमको उस रिज़्क़ के इन्तिज़ार में जिसकी अपने परवर्दिगार की तरफ़ से आने की उम्मीद हो (उसके न आने तक) उनसे दामन बचाना पड़े तो (इतना ख़्याल रखना कि) उनसे नर्मी की बात कह देना (यानी दिलजोई के साथ उनसे वायदा कर लेना कि इन्शा-अल्लाह तआ़ला कहीं से आयेगा तो देंगे, दिल दुखाने वाला जवाब मत देना)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और उनके वास्ते से पूरी उम्मत की अ़जीब अख़्लाक़ी तरबियत है कि अगर किसी वक़्त ज़रूरत मन्द लोग सवाल करें और आपके पास देने को कुछ न हो इसलिये उन लोगों से मुँह फेरने पर मजबूर हो तो भी आपका यह बेतवज्जोही बरतना बेपरवाही या मुख़ातब के लिये अपमान जनक न होना चाहिये बल्कि यह किनारा करना अपनी आ़जिज़ी व मजबूरी के इज़हार के साथ होना चाहिये।

इस आयत के शाने नुज़ूल में इब्ने ज़ैद की रिवायत यह है कि कुछ लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से माल का सवाल किया करते थे और आपको मालूम था कि इनको दिया जायेगा तो ये फ़साद (ख़राबी फैलाने) में ख़र्च करेंगे इसलिये आप उनको देने से इनकार कर देते थे कि यह इनकार उनको फ़साद से रोकने का ज़रिया है, इस पर यह आयत नाज़िल हुई। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मुस्नद सईद बिन मन्सूर में सबा बिन हकम की रिवायत से यह मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास कुछ कपड़ा आया था, आपने उसको मुस्तहिक़ लोगों में तक़सीम फ़रमा दिया, उसके बाद कुछ और लोग आये जबकि आप फ़ारिग़ हो चुके थे और कपड़ा ख़त्म हो चुका था, उनके बारे में यह आयत नाज़िल हुई।

وَلَا تَجْعَلْ يَدَكَ مَغْلُولَةً إِلٰى عُنُقِكَ وَلَا تَبْسُطْهَا كُلَّ الْبَسْطِ فَتَقْعُدَ مَلُومًا مَّحْسُورًا ۝ إِنَّ رَبَّكَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَن يَشَاءُ وَيَقْدِرُ ۚ إِنَّهُ كَانَ بِعِبَادِهِ خَبِيرًا بَصِيرًا ۝

व ला तजुअल् य-द-क मग़्लू-लतन् इला अुनुकि-क व ला तब्सुत्हा कुल्लल्बस्ति फ़-तक़्अु-द मलूमम्-मह्सूरा (29) इन्-न रब्ब-क यब्सुतुर्रिज़्-क़ लिमंय्यशा-उ व यक़्दिरु, इन्नहू का-न बिअिबादिही ख़बीरम्-बसीरा (30) ✿	और न रख अपना हाथ बंधा हुआ अपनी गर्दन के साथ और न खोल दे उसको बिल्कुल खोल देना, फिर तू बैठ रहे इल्ज़ाम खाया हारा हुआ। (29) तेरा रब खोल देता है रोज़ी जिसके वास्ते चाहे और तंग भी वही करता है, वही है अपने बन्दों को जानने वाला देखने वाला। (30) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और न तो अपना हाथ गर्दन ही से बाँध लो (कि हद से ज़्यादा कन्जूसी से बिल्कुल हाथ ख़र्च करने से रोक लो) और न बिल्कुल ही खोल देना चाहिए (कि ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च करके फ़ुज़ूलख़र्ची की जाये) वरना इल्ज़ाम लिये हुए (और) ख़ाली हाथ होकर बैठ रहोगे (और किसी की ग़रीबी व तंगदस्ती से इतना असर कर लेना कि अपने को परेशानी में डाल लो कोई माक़ूल बात नहीं, क्योंकि) बेशक तेरा रब जिसको चाहता है ज़्यादा रिज़्क़ देता है, और वही (जिस पर चाहे) तंगी कर देता है। बेशक वह अपने बन्दों (की हालत और उनकी मस्लेहत) को ख़ूब जानता है, देखता है (सारे आलम की ज़रूरतों को पूरा करना तो रब्बुल-आलमीन ही का काम है, तुम इस फ़िक्र में क्यों पड़े कि अपने से हो सके या न हो सके अपने आपको मुसीबत में डालकर सब की ज़रूरतें पूरी ही करो। यह सूरत इसलिये बेकार है कि यह सब कुछ करने के बाद भी सब की ज़रूरतें पूरी कर देना तुम्हारे बस की बात नहीं। इसका यह मतलब नहीं कि कोई किसी का ग़म न करे, उसके लिये तदबीर न करे, बल्कि मतलब यह है कि सब की हाजतें पूरी करना किसी इनसान के बस में नहीं चाहे वह अपने ऊपर कितनी ही मुसीबत बरदाश्त करने के लिये तैयार भी हो क्योंकि यह काम तो सिर्फ़ मालिके कायनात ही का है कि सब की हाजतों को जानता भी है और सब की मस्लेहतों से भी वाक़िफ़ है, कि किस वक़्त किस शख़्स की किस हाजत को किस मात्रा में पूरा करना चाहिये, इसलिये इनसान का काम तो सिर्फ़ इतना ही है कि दरमियानी चाल से काम ले, न ख़र्च करने के मौक़े में कन्जूसी करे और न इतना ख़र्च करे कि कल को ख़ुद ही फ़क़ीर हो जाये और बाल-बच्चे और घर वाले जिनके हुक़ूक़ उसके ज़िम्मे हैं उनके हुक़ूक़ अदा न हो सकें और बाद में पछताना पड़े)।

मआरिफ़ व मसाईल

ख़र्च करने में दरमियानी चाल की हिदायत

इस आयत में डायरेक्ट तौर पर मुख़ातब ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं

और आपके वास्ते से पूरी उम्मत मुख़ातब है, और मक़सद आर्थिक स्थिति की ऐसी तालीम है जो दूसरों की इमदाद में रुकावट भी न हो और ख़ुद अपने लिये भी मुसीबत न बने। इस आयत के शाने नुज़ूल में इब्ने मरदूया ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद की रिवायत से और इमाम बग़वी ने हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से एक वाक़िआ नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक लड़का हाज़िर हुआ और अ़र्ज़ किया कि मेरी वालिदा आप से एक कुर्ते का सवाल करती हैं, उस वक़्त हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास कोई कुर्ता उसके सिवा नहीं था जो आपके बदने मुबारक पर था। आपने लड़के को कहा कि फिर किसी वक़्त आओ जबकि हमारे पास इतनी गुंजाईश हो कि तुम्हारी वालिदा का सवाल पूरा कर सकें। लड़का घर गया, वापस आया और कहा कि मेरी वालिदा कहती हैं कि आपके बदन मुबारक पर जो कुर्ता है वही इनायत फ़रमा दें। यह सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने बदन मुबारक से कुर्ता उतारकर उसके हवाले कर दिया, आप नंगे बदन रह गये, नमाज़ का वक़्त आया हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अज़ान दी मगर आप आ़दत के अनुसार बाहर तशरीफ़ न लाये तो लोगों को फ़िक्र हुई, कुछ लोग अन्दर हाज़िर हुए तो देखा कि आप कुर्ते के बग़ैर नंगे बदन बैठे हैं, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

अल्लाह की राह में इतना ख़र्च करना कि ख़ुद परेशानी में पड़ जाये इसका दर्जा

इस आयत से बज़ाहिर इस तरह ख़र्च करने की मनाही मालूम होती है जिसके बाद ख़ुद फ़क़ीर व मोहताज हो जाये और परेशानी में पड़ जाये। इमामे तफ़सीर क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि यह हुक्म मुसलमानों के आ़म हालात के लिये है जो ख़र्च करने के बाद तकलीफ़ों से परेशान होकर पिछले ख़र्च किये हुए पर पछतायें और अफ़सोस करें। क़ुरआने करीम के लफ़्ज़ मह़सूरन में इसकी तरफ़ इशारा मौजूद है। (जैसा कि तफ़सीरे मज़हरी में इसकी वज़ाहत है)

और जो लोग इतने बुलन्द हौसले वाले हों कि बाद की परेशानी से न घबरायें और हुक़ूक़ वालों के हुक़ूक़ भी अदा कर सकें उनके लिये यह पाबन्दी नहीं है। यही वजह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़म आ़दत यह थी कि कल के लिये कुछ ज़ख़ीरा न करते थे जो कुछ आज आया आज ही ख़र्च फ़रमा देते थे और बहुत-सी बार भूख और फ़ाक़े की तकलीफ़ भी पेश आती, पेट पर पत्थर बाँधने की नौबत भी आ जाती थी और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में भी बहुत-से ऐसे हज़रात हैं जिन्होंने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर में अपना सारा माल अल्लाह की राह में ख़र्च कर दिया, आपने न इसको मना फ़रमाया न उनको मलामत की। इससे मालूम हुआ कि इस आयत की मनाही उन लोगों के लिये है जो फ़क्र व फ़ाक़े की तकलीफ़ बरदाश्त न कर सकें और ख़र्च करने के बाद उनको अफ़सोस

हो कि काश! हम ख़र्च न करते। यह सूरत उनके पिछले अ़मल को फ़ासिद (ख़राब) कर देगी इसलिये इससे मना फ़रमाया गया।

ख़र्च में अव्यवस्था मना है

और असल बात यह है कि इस आयत ने बद-नज़्मी (अव्यवस्था) के साथ ख़र्च करने को मना किया है कि आगे आने वाले हालात को अनदेखा करके जो कुछ पास है उसे इस वक़्त ख़र्च कर डाले, कल को दूसरे ज़रूरत वाले लोग आयें और कोई अहम दीनी ज़रूरत पेश आ जाये तो अब उसके लिये क़ुदरत न रहे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

या अहल व अ़याल (बीवी-बच्चे) जिनके हुक़ूक़ इसके ज़िम्मे वाजिब हैं उनके हक़ अदा करने से आ़जिज़ हो जाये। (तफ़सीरे मज़हरी)

"मलूमम् महसूरा" के अलफ़ाज़ के बारे में तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि 'मलूम' का ताल्लुक़ पहली हालत यानी कन्जूसी से है कि अगर हाथ को कन्जूसी से बिल्कुल रोक लेगा तो लोग मलामत करेंगे और महसूरा का ताल्लुक़ दूसरी हालत से है कि ख़र्च करने में इतनी ज़्यादती करे कि ख़ुद फ़क़ीर हो जाये, तो यह महसूर यानी थका-माँदा आ़जिज़ या अफ़सोस का मारा हुआ हो जायेगा।

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ خَشْيَةَ اِمْلَاقٍ ۭ نَحْنُ نَرْزُقُهُمْ وَاِيَّاكُمْ ۭ اِنَّ قَتْلَهُمْ كَانَ خِطْاً كَبِيْرًا ۝

व ला तक़्तुलू औलादकुम् ख़श्य-त इम्लाकिन्, नह्नु नर्ज़ुक़ुहुम् व इय्याकुम्, इन्-न क़त्लहुम् का-न ख़ित्अन् कबीरा (31)	और न मार डालो अपनी औलाद को मुफ़लिसी के ख़ौफ़ से, हम रोज़ी देते हैं उनको और तुमको, बेशक उनका मारना बड़ी ख़ता है। (31)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अपनी औलाद को मुफ़लिसी "तंगदस्ती व ग़ुर्बत" के डर से क़त्ल न करो (क्योंकि सब के राज़िक़ हम हैं) हम उनको भी रिज़्क़ देते हैं और तुमको भी (अगर राज़िक़ तुम होते तो ऐसी बातें सोचते) बेशक उनका क़त्ल करना बड़ा भारी गुनाह है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इससे पहले की आयतों में इनसानी हुक़ूक़ के बारे में हिदायतों का एक सिलसिला है, यह छठा हुक्म जाहिलीयत वालों (इस्लाम से पहले के ज़माने के लोगों) की एक ज़ालिमाना आ़दत की इस्लाह (सुधार) के लिये है। ज़माना-ए-जाहिलीयत में कुछ लोग पैदाईश के वक़्त अपनी

औलाद' ख़ास तौर से बेटियों को इस ख़ौफ़ से क़त्ल कर डालते थे कि उनके ख़र्चों का बोझ हम पर पड़ेगा। उपर्युक्त आयत में हक़ तआ़ला ने उनकी जहालत को वाज़ेह किया है कि रिज़्क़ देने वाले तुम कौन? यह तो ख़ालिस अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़े में है, तुम्हें भी तो वही रिज़्क़ देता है, जो तुम्हें देता है वही उनको भी देगा, तुम क्यों इस फ़िक्र में औलाद को क़त्ल करने के मुजरिम बनते हो। बल्कि इस जगह अल्लाह तआ़ला ने रिज़्क़ देने में औलाद का ज़िक्र पहले करके इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया है कि पहले उनको फिर तुम्हें देंगे, जिसका मतलब दर असल यह है कि अल्लाह तआ़ला जिस बन्दे को देखते हैं कि वह अपने अहल व अ़याल (बीवी-बच्चों) की परवरिश और ज़िम्मेदारी उठाता या दूसरे ग़रीबों ज़ईफ़ों की इमदाद करता है तो उसको उसी हिसाब से देते हैं कि वह अपनी ज़रूरतें भी पूरी कर सके और दूसरों की इमदाद भी कर सके। एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

إِنَّمَا تُنْصَرُوْنَ وَتُرْزَقُوْنَ بِضُعَفَائِكُمْ.

यानी तुम्हारे ज़ईफ़ व कमज़ोर तब्क़े ही की वजह से अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तुम्हारी इमदाद होती है और तुम्हें रिज़्क़ दिया जाता है। इससे मालूम हुआ कि अहल व अ़याल (बीवी-बच्चों) की ज़िम्मेदारी उठाने वाले माँ-बाप को जो कुछ मिलता है वह कमज़ोर औ़रतों बच्चों की ख़ातिर ही मिलता है।

मसलाः क़ुरआने करीम के इस इरशाद से उस मामले पर भी रोशनी पड़ती है जिसमें आज की दुनिया गिरफ़्तार है कि आबादी की अधिकता के ख़ौफ़ से बच्चों की पैदाईश को रोकने और ख़ानदानी मन्सूबा बन्दी (बर्थ कन्ट्रोल) को रिवाज दे रही है, इसकी बुनियाद भी इसी जाहिलाना सोच पर है कि रिज़्क़ का ज़िम्मेदार अपने आपको समझ लिया गया है, यह मामला औलाद के क़त्ल के बराबर गुनाह न सही मगर इसके बुरा और निंदनीय होने में कोई शुब्हा नहीं।

وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً ۗ وَسَاۗءَ سَبِيْلًا ۝

व ला तक़रबुज़्ज़िना इन्नहू का-न फ़ाहि-शतन्, व सा-अ सबीला (32)	और पास न जाओ बदकारी के वह है बेहयाई, और बुरी राह है। (32)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ज़िना के पास भी मत फटको (यानी जो चीज़ें उसकी तरफ़ दावत दें या जो उसकी पहली सीढ़ी हों उनसे भी बचो) बिला शुब्हा वह (ख़ुद भी) बड़ी बेहयाई की बात है और (दूसरी ख़राबियों के एतिबार से भी) बुरी राह है (क्योंकि उससे दुश्मनियों, फ़ितनों और नसब को ज़ाया व बरबाद करने की राहें खुलती हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

यह सातवाँ हुक्म ज़िना की हुर्मत (हराम होने) के बारे में है, जिसके हराम होने की दो वजह बयान की गई हैं– अव्वल यह कि वह बेहयाई है और इनसान में हया न रही तो वह इनसानियत ही से मेहरूम हो जाता है। फिर उसके लिये किसी भले-बुरे काम का फ़र्क़ और भेद नहीं रहता। इसी मायने के लिये हदीस में इरशाद है:

اذا فاتك الحياء فافعل ماشئت

यानी जब तेरी हया ही जाती रही तो किसी बुराई से रुकावट का कोई पर्दा न रहा, तो जो चाहोगे करोगे। और इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हया को ईमान का एक अहम हिस्सा क़रार दिया है:

وَالحياء شعبة من الايمان. (بخاری)

दूसरी वजह सामाजिक बिगाड़ और ख़राबी है जो ज़िना की वजह से इतनी फैलती है कि उसकी कोई हद नहीं रहती और इसके बुरे नतीजे कभी-कभी पूरे क़बीलों और क़ौमों को बरबाद कर देते हैं। फ़ितने, चोरी, डांका, क़त्ल की जितनी अधिकता आज दुनिया में बढ़ गई है उसके हालात की तहक़ीक़ की जाये तो आधे से ज़्यादा वाक़िआत का सबब कोई औरत व मर्द निकलते हैं जो इस जुर्म के करने वाले हुए। इस जुर्म का ताल्लुक़ अगरचे डायरेक्ट बन्दों के हुक़ूक़ से नहीं मगर इस जगह बन्दों के हुक़ूक़ से सम्बन्धित अहकाम के ज़िमन में इसका ज़िक्र करना शायद इसी बिना पर हो कि यह जुर्म बहुत से ऐसे जुर्मों को साथ लाता है जिससे बन्दों के हुक़ूक़ प्रभावित होते हैं और क़त्ल व ग़ारतगरी के हंगामे बरपा होते हैं, इसी लिये इस्लाम ने इस जुर्म को तमाम जुर्मों से ज़्यादा सख़्त क़रार दिया है, इसकी सज़ा भी सारे जुर्मों की सज़ाओं से ज़्यादा सख़्त रखी है, क्योंकि यह एक जुर्म दूसरे सैंकड़ों जुर्मों को अपने में समोये हुए है।

हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सातों आसमान और सातों ज़मीनें शादीशुदा ज़िनाकार पर लानत करती हैं और जहन्नम में ऐसे लोगों की शर्मगाहों से ऐसी सख़्त बदबू फैलेगी कि जहन्नम वाले भी उससे परेशान होंगे और आग के अ़ज़ाब के साथ उनकी रुस्वाई जहन्नम में भी होती रहेगी। (बज़्ज़ार, बरीदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से, मज़हरी)

एक दूसरी हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ज़िना करने वाला ज़िना करने के वक़्त मोमिन नहीं होता, चोरी करने वाला चोरी करने के वक़्त मोमिन नहीं होता और शराब पीने वाला शराब पीने के वक़्त मोमिन नहीं होता। यह हदीस बुख़ारी व मुस्लिम में है, इसकी शरह अबू दाऊद की रिवायत में यह है कि इन जुर्मों को करने वाले जिस वक़्त जुर्म में मुब्तला होते हैं तो ईमान उनके दिलों से निकलकर बाहर आ जाता है और फिर जब उससे लौट जाते हैं तो ईमान वापस आ जाता है। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِي حَرَّمَ اللّٰهُ

اِلَّا بِالْحَقِّ ۗ وَمَنْ قُتِلَ مَظْلُوْمًا فَقَدْ جَعَلْنَا لِوَلِيِّهٖ سُلْطٰنًا فَلَا يُسْرِفْ فِّي الْقَتْلِ ۗ اِنَّهٗ كَانَ مَنْصُوْرًا ۝

व ला तक़्तुलुन्-नफ़्सल्लती हर्रमल्लाहु इल्ला बिल्हक़्क़ि, व मन् क़ुति-ल मज़्लूमन् फ़-क़द् ज़अ़ल्ना लि-वलिय्यिही सुल्तानन् फ़ला युस्रिफ़्-फ़िल्क़त्लि, इन्नहू का-न मन्सूरा (33)	और न मारो उस जान को जिसको मना कर दिया है अल्लाह ने मगर हक़ पर, और जो मारा गया ज़ुल्म से तो दिया हमने उसके वारिस को ज़ोर सो हद से न निकल जाये क़त्ल करने में, उसको मदद मिलती है। (33)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जिस शख़्स (के क़त्ल करने) को अल्लाह तआ़ला ने हराम फ़रमाया है उसको क़त्ल मत करो, हाँ मगर हक़ पर (क़त्ल करना दुरुस्त है यानी जब किसी शरई हुक्म से क़त्ल करना वाजिब या जायज़ हो जाये तो वह अल्लाह तआ़ला के हराम करने में दाख़िल नहीं)। और जो शख़्स नाहक़ क़त्ल किया जाए तो हमने उसके (असली या हुक्मी) वारिस को इख़्तियार दिया है (क़िसास लेने का) सो उसको क़त्ल के बारे में (शरीअ़त की) हद से आगे न बढ़ना चाहिए (यानी क़ातिल पर क़त्ल का यक़ीनी सुबूत मिले बग़ैर क़त्ल न करे और उसके रिश्तेदारों और परिजनों वग़ैरह को जो क़त्ल में शरीक नहीं हैं महज़ बदला लेने के जोश में क़त्ल न करे और क़ातिल को भी सिर्फ़ क़त्ल करे नाक कान या हाथ पाँव वग़ैरह काटकर मुसला न करे, क्योंकि) वह शख़्स (क़िसास में हद से न निकलने की सूरत में तो शरई तौर से) मदद के क़ाबिल है (और उसने ज़्यादती की तो फिर दूसरा पक्ष मज़लूम होकर अल्लाह की मदद का मुस्तहिक़ हो जायेगा, इसलिये मक़्तूल के वली को चाहिये कि वह अपने अल्लाह की तरफ़ से मदद याफ़्ता होने की क़द्र करे, हद से बढ़कर अल्लाह की इस नेमत को ज़ाया न करे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यह आठवाँ हुक्म नाहक़ क़त्ल करने के हराम होने के बयान में है जिसका भारी जुर्म होना दुनिया की सारी जमाअ़तों, मज़हबों और फ़िर्क़ों में मुसल्लम (माना हुआ) है। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सारी दुनिया की तबाही अल्लाह के नज़दीक इससे हल्की है कि किसी मोमिन को नाहक़ क़त्ल किया जाये (और कुछ रिवायतों में इसके साथ यह भी है कि) अगर अल्लाह तआ़ला के सातों आसमानों और सातों ज़मीनों के

बाशिन्दे किसी मोमिन के नाहक़ क़त्ल में शरीक हो जायें तो उन सब को अल्लाह तआ़ला जहन्नम में दाख़िल कर देंगे। (इब्ने माजा, हसन सनद के साथ, बैहक़ी, तफ़सीरे मज़हरी)

और एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जिस शख़्स ने किसी मुसलमान के क़त्ल में क़ातिल की इमदाद एक बात से भी की तो मैदाने हश्र में जब वह अल्लाह तआ़ला के सामने पेश होगा तो उसकी पेशानी पर लिखा होगाः

آئس من رحمة الله

यानी यह शख़्स अल्लाह तआ़ला की रहमत से मायूस कर दिया गया है। (मज़हरी, इब्ने माजा व अस्बहानी के हवाले से)

और बैहक़ी ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास व हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला हर एक गुनाह को माफ़ कर दे मगर वह आदमी जो कुफ़्र की हालत में मर गया या जिसने जान-बूझकर किसी मुसलमान को नाहक़ क़त्ल किया।

नाहक़ क़त्ल की वज़ाहत

इमाम बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि किसी मुसलमान का ख़ून हलाल नहीं जो अल्लाह के एक होने और मेरे रसूल होने की गवाही देता हो सिवाय तीन सूरतों के– एक यह कि उसने शादीशुदा होने के बावजूद ज़िना किया हो (कि इसकी शरई सज़ा यह है कि पथराव करके उसको मार दिया जाये), दूसरे वह जिसने किसी इनसान को नाहक़ क़त्ल किया हो (कि उसकी सज़ा यह है कि मक़्तूल का वली उसको क़िसास में क़त्ल कर सकता है), तीसरे वह शख़्स जो दीने इस्लाम से मुर्तद हो गया (यानी इस्लाम से फिर गया) हो (कि उसकी सज़ा भी क़त्ल है)।

क़िसास लेने का हक़ किसको है?

उक्त आयत में बतलाया गया है कि यह हक़ मक़्तूल (क़त्ल होने वाले) के वली का है। अगर नसबी वली कोई मौजूद नहीं तो इस्लामी हुकूमत के हाकिम को यह हक़ हासिल होगा कि वह भी एक हैसियत से सब मुसलमानों का वली है, इसलिये ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में 'असली या हुक्मी वली' लिखा गया है।

ज़ुल्म का जवाब ज़ुल्म नहीं इन्साफ़ है, मुजरिम की सज़ा में भी इन्साफ़ की रियायत

فَلَا يُسْرِفْ فِّي الْقَتْلِ

इस्लामी क़ानून की एक ख़ास हिदायत है जिसका हासिल यह है कि ज़ुल्म का बदला ज़ुल्म

से लेना जायज़ नहीं, बदले में भी इन्साफ़ की रियायत लाज़िम है। जब तक मक़्तूल का वली इन्साफ़ के साथ अपने मक़्तूल का बदला शरई क़िसास के साथ लेना चाहे तो शरीअत का कानून उसके हक़ में है, यह अल्लाह की तरफ़ से मदद पाने वाला है, अल्लाह तआ़ला उसका मददगार है, और अगर उसने बदला लेने के जोश में शरई क़िसास की हद पार की तो अब यह मज़लूम के बजाय ज़ालिम हो गया और ज़ालिम इसका मज़लूम बन गया, अब मामला उल्टा हो जायेगा, अल्लाह तआ़ला और उसका क़ानून अब इसकी मदद करने के बजाय दूसरे फ़रीक़ की मदद करेगा कि उसको ज़ुल्म से बचायेगा।

अ़रब के जाहिली दौर में यह बात आ़म थी कि एक शख़्स क़त्ल हुआ तो उसके बदले में क़ातिल के ख़ानदान या साथियों में से जो भी हाथ लगे उसको क़त्ल कर देते थे। कुछ जगह यह सूरत होती कि जिसको क़त्ल किया गया वह क़ौम का कोई बड़ा आदमी है तो उसके बदले में सिर्फ़ एक क़ातिल को क़िसास के तौर पर क़त्ल करना काफ़ी न समझा जाता था बल्कि एक ख़ून के बदले दो तीन या इससे भी ज़्यादा आदमियों की जान ली जाती थी। कुछ लोग बदले के जोश में क़ातिल के सिर्फ़ क़त्ल करने पर बस नहीं करते थे बल्कि उसके नाक कान वग़ैरह काटकर मुसला कर देते थे। ये सब चीज़ें इस्लामी क़िसास की हद से बाहर और हराम हैं इसलिये आयत 'फ़ला युस्रिफ़् फ़िल्क़त्लि' में इनको रोका गया है।

याद रखने के क़ाबिल एक वाक़िआ़

बाज़ मुज्तहिद इमामों के सामने किसी शख़्स ने हज्जाज बिन यूसुफ़ पर कोई इल्ज़ाम लगाया, हज्जाज बिन यूसुफ़ इस्लामी इतिहास का सबसे बड़ा ज़ालिम और इन्तिहाई बदनाम शख़्स है जिसने हज़ारों सहाबा व ताबिईन को नाहक़ क़त्ल किया है, इसलिये आ़म तौर पर उसको बुरा कहने की बुराई लोगों के ज़ेहन में नहीं रहती। जिस बुज़ुर्ग के सामने यह इल्ज़ाम हज्जाज बिन यूसुफ़ पर लगाया गया उन्होंने इल्ज़ाम लगाने वाले से पूछा कि तुम्हारे पास इस इल्ज़ाम की कोई सनद या सुबूत मौजूद है? उन्होंने कहा नहीं। आपने फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआ़ला हज्जाज बिन यूसुफ़ ज़ालिम से हज़ारों बेगुनाह मक़्तूलों का बदला लेगा तो याद रखो कि जो शख़्स हज्जाज पर कोई ज़ुल्म करता है उसको भी बदले से नहीं छोड़ा जायेगा, हज्जाज का बदला अल्लाह तआ़ला उससे भी लेंगे, अल्लाह तआ़ला की अ़दालत में कोई पक्षपात नहीं है कि बुरे और गुनाहगार बन्दों पर दूसरों को आज़ाद छोड़ दें और वे जो चाहें इल्ज़ाम या तोहमत लगा दिया करें।

وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ ۪ وَاَوْفُوْا بِالْعَهْدِ ۚ اِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْـُٔوْلًا ۝ وَاَوْفُوا الْكَيْلَ اِذَا كِلْتُمْ وَزِنُوْا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقِيْمِ ۭ ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا ۝

व ला तक़रबू मालल्-यतीमि इल्ला बिल्लती हि-य अह्सनु हत्ता यब्लु-ग़ अशुद्दहू व औफ़ू बिल्अ़ह्दि इन्नल्-अ़ह्-द का-न मस्ऊला (34) व औफ़ुल्कै-ल इज़ा किल्तुम् व ज़िनू बिल्-किस्तासिल्-मुस्तक़ीमि, ज़ालि-क ख़ैरुंव्-व अह्सनु तअ्वीला (35)	और पास न जाओ यतीम के माल के मगर जिस तरह कि बेहतर हो जब तक वह पहुँचे अपनी जवानी को, और पूरा करो अ़हद को बेशक अ़हद की पूछ होगी। (34) और पूरा भर दो माप जब मापकर देने लगो, और तौलो सीधी तराज़ू से, यह बेहतर है और अच्छा है इसका अन्जाम। (35)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और यतीम के माल के पास न जाओ (यानी उसे ख़र्च व इस्तेमाल न करो) मगर ऐसे तरीक़े से जो कि (शरई तौर पर) पसन्दीदा है, यहाँ तक कि वह अपने बालिग़ होने की उम्र को पहुँच जाये, और (जायज़) अ़हद को पूरा किया करो, बेशक अ़हद की क़ियामत में पूछताछ और बाज़पुर्स होने वाली है (अ़हद में वो तमाम अ़हद भी दाख़िल हैं जो बन्दे ने अपने अल्लाह से किये हैं और वो भी जो किसी इनसान से किये हैं)। और (नापने की चीज़ों को) जब नाप-तौलकर दो तो पूरा नापो और (तौलने की चीज़ों को) सही तराज़ू से तौलकर दो। यह (अपने आप में भी) अच्छी बात है और इसका अन्जाम भी अच्छा है (आख़िरत में तो सवाब और दुनिया में नेकनामी की शोहरत जो तिजारत में तरक़्क़ी का ज़रिया है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन दो आयतों में तीन हुक्म (नवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ) माली हुक़ूक़ से संबन्धित बयान हुए हैं। पहले गुज़री आयतों में बदनी और जिस्मानी हुक़ूक़ का ज़िक्र था यह माली हुक़ूक़ का बयान है।

यतीमों के माल में एहतियात

इनमें पहली आयत में नवाँ हुक्म यतीमों के मालों की हिफ़ाज़त और उनमें एहतियात का है जिसमें बड़ी ताकीद से यह फ़रमाया कि यतीमों के माल के पास भी न जाओ यानी उनमें ख़िलाफ़े शरीअ़त या बच्चों की मस्लेहत के ख़िलाफ़ कोई तसर्रुफ़ न होने पाये, यतीमों के माल की हिफ़ाज़त और इन्तिज़ाम जिनके ज़िम्मे है उन पर लाज़िम है कि उनमें बड़ी एहतियात से काम लें, सिर्फ़ यतीमों की मस्लेहत को देखकर ख़र्च करें, अपनी इच्छा या बेफ़िक्री से ख़र्च न करें और यह सिलसिला उस वक़्त तक जारी रहे जब तक कि यतीम बच्चे जवान होकर अपने माल की हिफ़ाज़त खुद न कर सकें, जिसका मामूली दर्जा पन्द्रह साल की उम्र को पहुँचना और ज़्यादा

अट्ठारह साल तक है।

नाजायज़ तरीक़े पर किसी का माल भी ख़र्च करना जायज़ नहीं, यहाँ यतीमों का विशेष रूप से ज़िक्र इसलिये किया कि वे ख़ुद तो कोई हिसाब लेने के क़ाबिल नहीं दूसरों को उसकी ख़बर नहीं हो सकती, जिस जगह कोई इनसान अपने हक़ का मुतालबा करने वाला न हो वहाँ हक़ तआला का मुतालबा ज़्यादा सख़्त हो जाता है, उसमें कोताही आम लोगों के हुक़ूक़ की तुलना में ज़्यादा गुनाह हो जाती है।

मुआहदों व समझौतों के पूरा करने और उनके पालन का हुक्म

दसवाँ हुक्म अहद पूरा करने की ताकीद है। अहद दो तरह के हैं, एक वो जो बन्दे और अल्लाह के दरमियान हैं जैसे कायनात के पहले दिन में बन्दे का यह अहद कि बेशक अल्लाह तआला हमारा रब है, इस अहद का लाज़िमी असर उसके अहकाम की इताअत और उसकी रज़ा तलब करना होता है, यह अहद तो इनसान ने अज़ल (कायनात के पहले दिन) में किया है चाहे दुनिया में वह मोमिन हो या काफ़िर। दूसरा अहद मोमिन का है जो 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' की गवाही के ज़रिये किया है, जिसका हासिल अल्लाह के अहकाम की मुकम्मल पैरवी और उसकी रज़ा तलब करना है।

दूसरी क़िस्म अहद की वह है जो इनसान किसी इनसान से करता है जिसमें तमाम सियासी, व्यापारिक और सामाजिक समझौते और मुआहदे शामिल हैं जो व्यक्तियों या समूहों के बीच में दुनिया में होते हैं।

पहली क़िस्म के तमाम मुआहदों व समझौतों का पूरा करना इनसान पर वाजिब है और दूसरी क़िस्म में जो मुआहदे ख़िलाफ़े शरीअत न हों उनका पूरा करना वाजिब और जो ख़िलाफ़े शरीअत हों उनका दूसरे पक्ष को इत्तिला करके ख़त्म कर देना वाजिब है। जिस मुआहदे का पूरा करना वाजिब है अगर कोई फ़रीक़ पूरा न करे तो दूसरे को हक़ है कि अदालत से रुजू करके उसको पूरा करने पर मजबूर करे। मुआहदे की हक़ीक़त यह है कि दो फ़रीक़ों के बीच किसी काम के करने या न करने का अहद हो और जो कोई शख़्स किसी से एक तरफ़ा वायदा कर लेता है कि मैं आपको फ़ुलाँ चीज़ दूँगा या फ़ुलाँ वक़्त आपसे मिलूँगा या आपका फ़ुलाँ काम कर दूँगा उसका पूरा करना भी वाजिब है और कुछ हज़रात ने इसको भी अहद के इस मफ़्हूम में दाख़िल किया है, लेकिन एक फ़र्क़ के साथ कि दोनों फ़रीक़ों मुआहदे की सूरत में अगर कोई ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करे तो दूसरा फ़रीक़ उसको अदालत के ज़रिये मुआहदे को पूरा करने पर मजबूर कर सकता है, मगर एक तरफ़ा वायदे को अदालत के ज़रिये जबरन पूरा नहीं करा सकता, हाँ बिना शरई उज़्र के किसी से वायदा करके जो उसके ख़िलाफ़ करेगा वह शरई तौर पर गुनाहगार होगा, हदीस में इसको अमली निफ़ाक़ क़रार दिया गया है।

इस आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

إِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْئُولًا ۝

यानी क़ियामत में जैसे और फ़राईज़ व वाजिबात और अल्लाह के अहकाम के पूरा करने या न करने का सवाल होगा ऐसे ही आपसी मुआहदों और समझौतों के मुताल्लिक़ भी सवाल होगा। यहाँ सिर्फ़ इतना कहकर छोड़ दिया गया कि इसका सवाल होगा, आगे सवाल के बाद क्या होना है इसको अस्पष्ट रखने में ख़तरे के बड़ा होने की तरफ़ इशारा है।

ग्यारहवाँ हुक्म लेन-देन के मामलों में नाप-तौल पूरा करने की हिदायत और उसमें कमी करने की मनाही का है, जिसकी पूरी तफ़सील सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन में बयान हुई है।

मसलाः फ़ुक़हा हज़रात ने फ़रमाया कि आयत में नाप-तौल में कमी का जो हुक्म है उसका हासिल यह है कि जिसका जितना हक़ है उससे कम देना हराम है, इसलिये इसमें यह भी दाख़िल है कि कोई मुलाज़िम अपने सुपुर्द किये हुए और तयशुदा काम में कमी करे या जितना वक़्त देना है उससे कम दे या मज़दूर अपनी मज़दूरी में कामचोरी करे।

नाप-तौल में कमी की मनाही

मसलाः "औफ़ुल्कै-ल इज़ा किल्तुम"। तफ़सीर बहरे-मुहीत में अबू हय्यान रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इस आयत में नाप-तौल पूरा करने की ज़िम्मेदारी बेचने वाले पर डाली गई है जिससे मालूम हुआ कि नापने-तौलने और उसको पूरा करने का ज़िम्मेदार बेचने वाला है।

आयत के आख़िर में नाप-तौल पूरी करने के बारे में फ़रमायाः

ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا۝

इसमें नाप-तौल सही और बराबर करने के बारे में दो बातें फ़रमाईं— एक उसका ख़ैर (बेहतर) होना, इसका हासिल यह है कि ऐसा करना अपनी ज़ात में अच्छा और बेहतर है, शरई हुक्म के अ़लावा अ़क़्ली और तबई तौर पर भी कोई शरीफ़ इनसान नाप-तौल में कमी को अच्छा नहीं समझ सकता। दूसरी बात यह फ़रमाई कि अन्जाम और आख़िर उसका बेहतर है जिसमें आख़िरत का अन्जाम और सवाब व जन्नत का हासिल करना तो दाख़िल है ही इसके साथ दुनिया के अन्जाम की बेहतरी की तरफ़ भी इशारा है कि किसी व्यापार को उस वक़्त तक तरक़्क़ी नहीं हो सकती जब तक बाज़ार में उसकी साख और एतिबार क़ायम न हो, और वह इस तिजारती ईमानदारी के बग़ैर नहीं हो सकता।

وَلَا تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ ۭ اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰۗىِٕكَ كَانَ عَنْهُ مَسْــُٔـوْلًا ۝ وَلَا تَمْشِ فِي الْاَرْضِ مَرَحًا ۚ اِنَّكَ لَنْ تَخْرِقَ الْاَرْضَ وَلَنْ تَبْلُغَ الْجِبَالَ طُوْلًا ۝ كُلُّ ذٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهٗ عِنْدَ رَبِّكَ مَكْرُوْهًا ۝

व ला तक़्फ़ु मा लै-स ल-क बिही ज़िल्मुन्, इन्नस्सम्-अ़ वल्ब-स-र	और न पीछे पड़ जिस बात की ख़बर नहीं तुझको, बेशक कान और आँख और

वल्फ़ुआ-द कुल्लु उलाइ-क का-न अ़न्हु मस्ऊला (36) व ला तम्शि फ़िल्अर्ज़ि म-रहन् इन्न-क लन् तख़्रिक़ल्-अर्-ज़ व लन् तब्लुग़ल्-जिबा-ल तूला (37) कुल्लु ज़ालि-क का-न सय्यिउहू अ़िन्-द रब्बि-क मक्रूहा (38)	दिल इन सब की उससे पूछ होगी। (36) और मत चल ज़मीन पर इतराता हुआ, तू फाड़ न डालेगा ज़मीन को और न पहुँचेगा पहाड़ों तक लम्बा होकर। (37) ये जितनी बातें हैं इन सब में बुरी चीज़ है तेरे रब की बेज़ारी। (38)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जिस बात की तुझको तहक़ीक़ न हो उस पर अ़मल दरामद मत किया कर (क्योंकि) कान, आँख और दिल हर शख़्स से इन सब की (क़ियामत के दिन) पूछ होगी (कि आँख और कान का इस्तेमाल किस-किस काम में किया, वो काम अच्छे थे या बुरे और बेदलील बात का ख़्याल दिल में क्यों जमाया)। और ज़मीन पर इतराता हुआ मत चल (क्योंकि) तू (ज़मीन पर ज़ोर से पाँव रखकर) न ज़मीन को फाड़ सकता है और न (अपने बदन को तानकर) पहाड़ों की लम्बाई को पहुँच सकता है (फिर इतराना बेकार है), ये (ज़िक्र हुए) सारे बुरे काम तेरे रब के नज़दीक (बिल्कुल) नापसन्द हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में दो हुक्म बारहवाँ और तेरहवाँ आ़म सामाजिक ज़िन्दगी से संबन्धित हैं। बारहवें हुक्म में बग़ैर तहक़ीक़ के किसी बात पर अ़मल करने की मनाही फ़रमाई गई है।

यहाँ यह बात सामने रखना ज़रूरी है कि तहक़ीक़ के दर्जे मुख़्तलिफ़ होते हैं, एक ऐसी तहक़ीक़ जो कि यक़ीने कामिल के दर्जे को पहुँच जाये विपरीत दिशा का कोई शुब्हा भी न रहे, दूसरे यह कि ग़ालिब गुमान के दर्जे में आ जाये अगरचे विपरीत दिशा का गुमान व संदेह भी मौजूद हो। इसी तरह अहकाम में भी दो क़िस्में हैं एक यक़ीनी और क़तई चीज़ें हैं जैसे अ़क़ीदे और दीन की बुनियादी बातें, इनमें पहले दर्जे की तहक़ीक़ मतलूब है उसके बग़ैर अ़मल करना जायज़ नहीं। दूसरे ग़ालिब गुमान वाली चीज़ें जैसे ऊपर के आमाल से संबन्धित अहकाम, इस तफ़सील के बाद उक्त आयत के मज़मून का तक़ाज़ा यह है कि यक़ीनी और क़तई अहकाम में तहक़ीक़ भी अव्वल दर्जे की हो, यानी बिल्कुल क़तई और कामिल यक़ीन के दर्जे को पहुँच जाये और जब तक ऐसा न हो अ़क़ीदे और इस्लाम के उसूलों में उस तहक़ीक़ का एतिबार नहीं, उसके तक़ाज़े और हुक्म पर अ़मल जायज़ नहीं, और ग़ालिब गुमान वाले और ऊपर के अहकाम

व मामलात में दूसरे दर्जे यानी ग़ालिब गुमान के दर्जे की तहक़ीक़ काफ़ी है। (बयानुल-क़ुरआन)

कान, आँख और दिल के बारे में क़ियामत के दिन सवाल

إِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ أُولَٰئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُولًا ۝

इस आयत में बतलाया है कि क़ियामत के दिन कान, आँख और दिल से सवाल किया जायेगा। मतलब यह है कि कान से सवाल होगा कि तूने उम्र में क्या-क्या सुना? आँख से सवाल होगा कि तमाम उम्र में क्या-क्या देखा? दिल से सवाल होगा कि तमाम उम्र दिल में कैसे-कैसे ख़्यालात पकाये और किन-किन चीज़ों पर यक़ीन किया? अगर कान से ऐसी बातें सुनीं जिनका सुनना शरई तौर पर जायज़ नहीं था जैसे किसी की ग़ीबत या हराम गाना बजाना वग़ैरह, या आँख से ऐसी चीज़ें देखीं जिनका देखना शरई तौर पर हलाल न था जैसे ग़ैर-मेहरम औरत या मर्द लड़के पर बुरी नज़र करना, या दिल में कोई ऐसा अक़ीदा जमाया जो क़ुरआन व सुन्नत के ख़िलाफ़ हो या किसी के मुताल्लिक़ अपने दिल में बिना दलील और सुबुत के कोई इल्ज़ाम क़ायम कर लिया तो इस सवाल के नतीजे में अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होगा, क़ियामत के दिन अल्लाह की दी हुई सारी ही नेमतों का सवाल होगा।

لَتُسْأَلُنَّ يَوْمَئِذٍ عَنِ النَّعِيمِ ۝

(यानी तुम से क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला की सब नेमतों का सवाल होगा।) कान, आँख, दिल इन नेमतों में सबसे ज़्यादा अहम हैं इसलिये यहाँ इनका ख़ास तौर पर ज़िक्र फ़रमाया गया है।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी और तफ़सीरे मज़हरी में इसका यह मतलब भी बयान किया गया है कि इससे पहले जुमले में जो यह इरशाद आया है किः

لَا تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ

"यानी जिस चीज़ का तुम्हें इल्म और तहक़ीक़ नहीं उस पर अ़मल न करो।" उसके साथ ही कान, आँख और दिल से सवाल का मतलब यह है कि जिस शख़्स ने बिना तहक़ीक़ के जैसे किसी शख़्स पर कोई इल्ज़ाम लगाया और बिना तहक़ीक़ के किसी बात पर अ़मल किया, अगर वह ऐसी चीज़ से मुताल्लिक़ है जो कान से सुनी जाती हो तो कान से सवाल होगा और आँख से देखने की चीज़ है तो आँख और दिल से समझने की चीज़ है तो दिल से सवाल होगा कि यह शख़्स अपने इल्ज़ाम और अपने दिल में जमाये हुए ख़्याल में सच्चा है या झूठा। उस पर इनसान के ये बदनी हिस्से ख़ुद गवाही देंगे जो हश्र के मैदान में बिना तहक़ीक़ के इल्ज़ाम लगाने वाले और बिना तहक़ीक़ के बातों पर अ़मल करने वाले के लिये बड़ी रुस्वाई का सबब बनेगा, जैसा कि सूरः यासीन में हैः

اَلْيَوْمَ نَخْتِمُ عَلٰٓى اَفْوَاهِهِمْ وَتُكَلِّمُنَآ اَيْدِيْهِمْ وَتَشْهَدُ اَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝

यानी आज क़ियामत के दिन हम मुजरिमों के मुँहों पर मुहर लगाकर बन्द कर देंगे और

उनके हाथ बोलेंगे और पाँव गवाही देंगे कि इसने इन बदनी हिस्सों से क्या-क्या काम अच्छे या बुरे लिये हैं।

यहाँ कान, आँख और दिल की विशेषता शायद इसी बिना पर की गई है कि अल्लाह तआ़ला ने इनसान को यह हवास (महसूस करने वाली चीज़ें) और दिल का शऊर व एहसास इसी लिये बख़्शा है कि जो ख़्याल या अ़क़ीदा दिल में आये इन हवास और समझ के ज़रिये उसको जाँच सके कि यह सही है तो उस पर अ़मल करे और ग़लत है तो बाज़ रहे। जो शख़्स इनसे काम लिये बग़ैर बिना तहक़ीक़ बातों की पैरवी में लग गया उसने अल्लाह तआ़ला की इन नेमतों की नाशुक्री की।

फिर वो हवास (महसूस करने वाली क़ुव्वतें) जिनके ज़रिये इनसान विभिन्न चीज़ों को मालूम करता है पाँच हैं— कान, आँख, नाक, ज़बान की ताक़तें और पूरे बदन में वह एहसास जिससे किसी चीज़ का ठंडा व गर्म वग़ैरह होना मालूम होता है, मगर आ़दतन ज़्यादा मालूमात इनसान को कान या आँख से होती हैं, नाक से सूँघने और ज़बान से चखने और हाथ वग़ैरह से छूने के ज़रिये जिन चीज़ों का इल्म होता है वो सुनने देखने वाली चीज़ों की तुलना में बहुत कम है। इस जगह पाँचों हवास में से सिर्फ़ दो के ज़िक्र को काफ़ी समझना शायद इसी वजह से हो, फिर इनमें भी कान को आँख से पहले रखा गया है और क़ुरआने करीम के दूसरे स्थानों में भी जहाँ कहीं इन दोनों चीज़ों का ज़िक्र आया है उनमें कान ही को पहले बयान किया गया है, इसका सबब भी ग़ालिबन यही है कि इनसान की मालूमात में सबसे बड़ा हिस्सा कान से सुनी हुई चीज़ों का होता है, आँख से देखी हुई चीज़ें उनके मुक़ाबले में बहुत कम हैं।

ज़िक्र हुई दो आयतों में से दूसरी आयत में तेहरवाँ हुक्म यह है कि ज़मीन पर इतराकर न चलो, यानी ऐसी चाल न चलो जिससे तकब्बुर और फ़ख़्र व ग़ुरूर ज़ाहिर होता हो, कि यह अहमक़ाना काम है, गोया ज़मीन पर चलकर वह ज़मीन को फाड़ देना चाहता है जो उसके बस में नहीं, और तनकर चलने से बहुत ऊँचा होना चाहता है अल्लाह तआ़ला के पहाड़ उससे बहुत ऊँचे हैं। तकब्बुर दर असल इनसान के दिल से संबन्धित सख़्त क़िस्म का बहुत बड़ा गुनाह है। इनसान की चाल-ढाल में जो चीज़ें तकब्बुर पर दलालत करने वाली हैं वो भी नाजायज़ हैं, घमंड भरे अन्दाज़ से चलना चाहे ज़मीन पर ज़ोर से न चले और तनकर ऊँचा न बने बहरहाल नाजायज़ हैं, तकब्बुर के मायने अपने आपको दूसरों से बेहतर व आला समझना और दूसरों को अपने मुक़ाबले में कमतर व घटिया समझना है। हदीस में इस पर सज़ा के सख़्त वायदे बयान हुए हैं।

इमाम मुस्लिम ने हज़रत अ़याज़ बिन अ़म्मार रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने मेरे पास वही के ज़रिये यह हुक्म भेजा है कि तवाज़ो और पस्ती (यानी विनम्रता) इख़्तियार करो, कोई आदमी किसी दूसरे आदमी पर फ़ख़्र और अपनी बड़ाई का तरीक़ा इख़्तियार न करे और कोई किसी पर

ज़ुल्म न करे। (तफ़सीरे मज़हरी)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जन्नत में दाख़िल नहीं होगा वह आदमी जिसके दिल में ज़र्रा बराबर भी तकब्बुर होगा। (तफ़सीरे मज़हरी, सही मुस्लिम के हवाले से)

और एक हदीसे क़ुदसी में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं– बड़ाई मेरी चादर है और अ़ज़मत मेरी इज़ार, जो शख़्स मुझसे इनको छिनना चाहे तो मैं उसको जहन्नम में दाख़िल कर दूँगा (चादर और इज़ार से मुराद लिबास है और अल्लाह तआ़ला न जिस्म है न जिस्म वाला जिसके लिये लिबास दरकार हो, इसलिये इससे मुराद इस जगह अल्लाह तआ़ला की बड़ाई की सिफ़त है जो शख़्स इस सिफ़त में अल्लाह तआ़ला का शरीक बनना चाहे वह जहन्नमी है)। और एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तकब्बुर करने वाले क़ियामत के दिन छोटी चींवटियों के बराबर इनसानों की शक्ल में उठाये जायेंगे जिन पर हर तरफ़ से ज़िल्लत व रुस्वाई बरसती होगी। उनको जहन्नम के एक जेलख़ाने की तरफ़ हाँका जायेगा जिसका नाम **बोलस** है, उन पर सब आगों से बड़ी तेज़ आग चढ़ी होगी और पीने के लिये उनको जहन्नम वालों के बदन से निकला हुआ पीप लहू दिया जायेगा। (तिर्मिज़ी अ़मर बिन शुऐब की रिवायत से, जो अपने बा-दादा से इसे रिवायत करते हैं, अज़ मज़हरी)

और हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने मिम्बर पर ख़ुतबा देते हुए फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जो शख़्स तवाज़ो (इन्किसारी और विनम्रता) इख़्तियार करता है अल्लाह तआ़ला उसको सर-बुलन्द फ़रमाते हैं, तो वह अपने नज़दीक तो छोटा मगर सब लोगों की नज़रों में बड़ा होता है। और जो शख़्स तकब्बुर करता है अल्लाह तआ़ला उसको ज़लील करते हैं, वह ख़ुद अपनी नज़रों में बड़ा होता है और लोगों की नज़रों में वह कुत्ते और सुअर से भी बदतर होता है। (तफ़सीरे मज़हरी)

ज़िक्र किये गये अहकाम की तफ़सील बयान करने के बाद आख़िरी आयत में फ़रमायाः

كُلُّ ذٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهٗ عِنْدَ رَبِّكَ مَكْرُوْهًا○

यानी ज़िक्र किये गये तमाम बुरे काम अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक्रूह व नापसन्द हैं।

इन ऊपर ज़िक्र हुए अहकाम में जो हराम और वर्जित चीज़ें हैं उनका बुरा और नापसन्द होना तो ज़ाहिर है मगर इनमें कुछ अहकाम ऐसे हैं जिनका हुक्म किया गया है जैसे माँ-बाप और रिश्तेदारों के हुक़ूक़ अदा करना और अ़हद व समझौते का पूरा करना वग़ैरह, इनमें भी चूँकि मक़सद उनकी ज़िद (विपरीत दिशा) से बचना है कि माँ-बाप की तकलीफ़ से, रिश्तेदारों के साथ रिश्ता ख़त्म करने के अ़मल से, अ़हद व समझौते को तोड़ने से परहेज़ करो, ये चीज़ें सब हराम व नापसन्द हैं, इसलिये सब को एक साथ मिलाकर मक्रूह फ़रमाया गया है। (बयानुल-क़ुरआन)

तंबीह

ऊपर ज़िक्र हुई पन्द्रह आयतों में जो अहकाम बयान किये गये हैं वो एक हैसियत से उस कोशिश व अ़मल की वज़ाहत व तफ़सील हैं जो अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल हों, जिसका ज़िक्र अट्ठारह आयतों से पहले आया है 'व सआ़ लहा सअ़्यहा' जिसमें यह बतलाया गया था कि हर कोशिश व अ़मल अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल नहीं बल्कि सिर्फ़ वही जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत और तालीम के मुताबिक़ हो। इन अहकाम में उस मक़बूल कोशिश व अ़मल के अहम अध्यायों और चीज़ों का ज़िक्र आ गया है जिसमें पहले अल्लाह के हुक़ूक़ का फिर बन्दों के हुक़ूक़ का बयान है।

ये पन्द्रह आयतें पूरी तौरात का ख़ुलासा हैं

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि पूरी तौरात के अहकाम सूरः बनी इस्राईल की पन्द्रह आयतों में जमा कर दिये गये हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

ذٰلِكَ مِمَّآ اَوْحٰٓى اِلَيْكَ رَبُّكَ مِنَ الْحِكْمَةِ ۭ وَلَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰـهًا اٰخَرَ فَتُلْقٰى فِيْ جَهَنَّمَ مَلُوْمًا مَّدْحُوْرًا ۝ اَفَاَصْفٰىكُمْ رَبُّكُمْ بِالْبَنِيْنَ وَاتَّخَذَ مِنَ الْمَلٰۗىِٕكَةِ اِنَاثًا ۭ اِنَّكُمْ لَتَقُوْلُوْنَ قَوْلًا عَظِيْمًا ۝ وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِيْ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لِيَذَّكَّرُوْا ۭ وَمَا يَزِيْدُهُمْ اِلَّا نُفُوْرًا ۝ قُلْ لَّوْ كَانَ مَعَهٗٓ اٰلِـهَةٌ كَمَا يَقُوْلُوْنَ اِذًا لَّابْتَغَوْا اِلٰى ذِي الْعَرْشِ سَبِيْلًا ۝ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَقُوْلُوْنَ عُلُوًّا كَبِيْرًا ۝ تُسَبِّحُ لَهُ السَّمٰوٰتُ السَّبْعُ وَالْاَرْضُ وَمَنْ فِيْهِنَّ ۭ وَاِنْ مِّنْ شَيْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ وَلٰكِنْ لَّا تَفْقَهُوْنَ تَسْبِيْحَهُمْ ۭ اِنَّهٗ كَانَ حَلِيْمًا غَفُوْرًا ۝

ع

ज़ालि-क मिम्मा औहा इलै-क रब्बु-क मिनल्-हिक्मति, व ला तज्अ़ल् मअ़ल्लाहि इलाहन् आख़-र फ़-तुल्क़ा फ़ी जहन्न-म मलूमम्-मद्हूरा (39) अ-फ़अस्फ़ाकुम् रब्बुकुम् बिल्बनी-न वत्त-ख़ा-ज़ मिनल्-मलाइ-कति इनासन्, इन्नकुम् ल-तक़ूलू-न क़ौलन् अ़ज़ीमा (40) ✿	यह है उन बातों में से जो वही भेजी तेरे रब ने तेरी तरफ़ अ़क्ल के कामों से, और न ठहरा अल्लाह के सिवा किसी और की बन्दगी फिर पड़े तू दोज़ख़ में इल्ज़ाम खाकर धकेला जाकर। (39) क्या तुमको चुनकर दे दिये तुम्हारे रब ने बेटे और अपने लिये कर लिया फ़रिश्तों को बेटियाँ, तुम कहते हो भारी बात। (40) ✿

व ल-क़द् सर्रफ़्ना फ़ी हाज़ल्-क़ुर्आनि लि-यज़्ज़क्करू, व मा यज़ीदुहुम् इल्ला नुफ़ूरा (41) क़ुल् लौ का-न म-अ़हू आलि-हतुन् कमा यक़ूलू-न इज़ल्-लब्तग़ौ इला ज़िल्-अ़र्शि सबीला (42) सुब्हानहू व तआ़ला अ़म्मा यक़ूलू-न अ़ुलुव्वन् कबीरा (43) तुसब्बिहु लहुस्समावातुस्-सब्अ़ु वल्अर्ज़ु व मन् फ़ीहिन्-न, व इम्-मिन् शैइन् इल्ला युसब्बिहु बिहम्दिही व लाकिल्-ला तफ़्क़हू-न तस्बी-हहुम्, इन्नहू का-न हलीमन् ग़फ़ूरा (44)

और फेर-फेरकर समझाया हमने इस क़ुरआन में ताकि वे सोचें और उनको ज़्यादा होता है वही बिदकना। (41) कह अगर होते उसके साथ और हाकिम जैसा कि ये बतलाते हैं तो निकालते अ़र्श वाले की तरफ़ राह। (42) वह पाक है और बरतर है उनकी बातों से बेइन्तिहा। (43) उसकी पाकी बयान करते हैं सातों आसमान और ज़मीन और जो कोई उनमें है, और कोई चीज़ नहीं जो नहीं पढ़ती ख़ूबियाँ उसकी, लेकिन तुम नहीं समझते उनका पढ़ना, बेशक वह है बरदाश्त वाला बख़्शने वाला। (44)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) ये बातें (यानी ज़िक्र हुए अहकाम) उस हिक्मत में की हैं जो ख़ुदा तआ़ला ने आप पर वही के ज़रिये से भेजी हैं (और ऐ मुख़ातब!) अल्लाह बरहक़ के साथ कोई और माबूद तजवीज़ मत करना, वरना तू इल्ज़ाम खाया हुआ और मरदूद होकर जहन्नम में फेंक दिया जायेगा (ज़िक्र हुए अहकाम को शुरू भी तौहीद के मज़मून से किया गया था ख़त्म भी इसी पर किया गया, और आगे भी इसी तौहीद के मज़मून का बयान है कि जब ऊपर शिर्क का बुरा और बातिल होना सुन लिया) तो क्या (फिर भी ऐसी बातों के क़ायल होते हो जो तौहीद के ख़िलाफ़ हैं जैसे यह कि) तुम्हारे रब ने तुमको तो बेटों के साथ ख़ास किया है और ख़ुद फ़रिश्तों को (अपनी) बेटियाँ बनाई हैं (जैसा कि अ़रब के जाहिल फ़रिश्तों को अल्लाह की बेटियाँ कहा करते थे, जो दो वजह से बातिल है— अव्वल तो अल्लाह के लिये औलाद क़रार देना, फिर औलाद भी लड़कियाँ जिनको लोग अपने लिये पसन्द नहीं करते, नाकारा समझते हैं। इससे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ एक और नुक़्स की निस्बत होती है) बेशक तुम बड़ी बात कहते हो।

और (अफ़सोस तो यह है कि इस तौहीद के मज़मून और शिर्क के बातिल होने को) हमने

इस क़ुरआन में तरह-तरह से बयान कर दिया है ताकि अच्छी तरह से समझ लें, और (विभिन्न तरीक़ों से बार-बार तौहीद के साबित करने और शिर्क के बातिल होने के बावजूद तौहीद से) उनको नफ़रत ही बढ़ती जाती है। आप (शिर्क के बातिल करने के लिये उनसे) फ़रमाईये कि अगर उस (माबूदे बरहक़) के साथ और माबूद भी (शरीक) होते जैसे कि ये लोग कहते हैं तो उस हालत में अ़र्श वाले (असली ख़ुदा) तक उन्होंने (यानी दूसरे माबूदों ने कभी का) रास्ता ढूँढ लिया होता (यानी जिनको तुम अल्लाह के साथ ख़ुदाई का शरीक क़रार देते हो अगर वे वाक़ई शरीक होते तो अ़र्श वाले ख़ुदा पर चढ़ाई कर देते और रास्ता ढूँढ लेते, और जब ख़ुदाओं में जंग हो जाती तो दुनिया का निज़ाम किस तरह चलता जिसका एक ख़ास स्थिर निज़ाम के साथ चलना हर शख़्स देख रहा है, इसलिये दुनिया के निज़ाम का सही तौर पर चलते रहना ख़ुद इसकी दलील है कि एक ख़ुदा के सिवा कोई दूसरा उसका शरीक नहीं है। इससे साबित हुआ कि) ये लोग जो कुछ कहते हैं अल्लाह तआ़ला उससे पाक और बहुत ज़्यादा बुलन्द व बरतर है (वह ऐसा पाक है कि) तमाम सातों आसमान और ज़मीन और जितने (फ़रिश्ते आदमी और जिन्न) उनमें (मौजूद) हैं (सब के सब अपनी ज़बान या हाल से) उसकी पाकी बयान कर रहे हैं, और (यह तस्बीह "यानी पाकी बयान करना" सिर्फ़ अ़क़्ल वाले इनसान और जिन्नात के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि ज़मीन व आसमान की) कोई चीज़ ऐसी नहीं जो कि तारीफ़ के साथ उसकी पाकी बयान न करती हो, लेकिन तुम लोग उनकी तस्बीह (पाकी बयान करने को) समझते नहीं हो, बेशक वह बड़ा बरदाश्त वाला है, बड़ा मग़फ़िरत करने वाला है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

तौहीद की जो दलील आयत "इज़ल्लब्तग़ौ इला ज़िल्-अ़र्शिल् सबीला" (यानी आयत नम्बर 42) में बयान फ़रमाई है अगर दुनिया की तमाम कायनात का ख़ालिक़ व मालिक और हर तरह का इख़्तियार चलाने वाली सिर्फ़ एक ज़ात अल्लाह की न हो बल्कि इस ख़ुदाई में और भी शरीक हों तो लाज़िमी है कि उनमें कभी मतभेद व विवाद भी होगा और मतभेद की सूरत में दुनिया का सारा निज़ाम बरबाद हो जायेगा, क्योंकि उन सब में हमेशा सुलह होना और उस सुलह का हमेशा बाक़ी रहना आदतन नामुम्किन व मुहाल है। यह दलील यहाँ अगरचे नफ़ी के अन्दाज़ में बयान की गई है मगर इल्मे कलाम की किताबों में इस दलील का बुरहानी और मन्तिक़ी होना भी वज़ाहत से बयान किया गया है आ़लिम हज़रात वहाँ देख सकते हैं।

ज़मीन व आसमान और इनमें मौजूद तमाम चीज़ों के तस्बीह करने का मतलब

इन चीज़ों में फ़रिश्ते सब के सब और इनसान व जिन्नात जो मोमिन हैं उनका अल्लाह की तस्बीह करना तो ज़ाहिर और आसानी से समझ में आने वाली बात है, सभी जानते हैं, काफ़िर

इनसान और जिन्न जो बज़ाहिर तस्बीह नहीं करते, इसी तरह दुनिया की दूसरी चीज़ें जिनको कहा जाता है कि उनमें अक़्ल व शऊर नहीं है, उनके तस्बीह पढ़ने का मतलब क्या है? कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि उनकी तस्बीह से मुराद हाल की तस्बीह यानी उनके हालात की गवाही है क्योंकि अल्लाह तआ़ला के सिवा हर चीज़ का मजमूई हाल बता रहा है कि यह न अपने वजूद में मुस्तक़िल (स्थायी) है न अपने बाक़ी रहने में, वह किसी बड़ी क़ुदरत के ताबे चल रहा है यही हाल की गवाही उसकी तस्बीह (पाकी बयान करना) है।

मगर दूसरे तहक़ीक़ वाले हज़रात का क़ौल यह है कि इख़्तियारी तस्बीह तो सिर्फ़ फ़रिश्ते और मोमिन जिन्नात व इनसानों के लिये मख़्सूस है मगर क़ुदरती और ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर अल्लाह तआ़ला ने कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे को अपना तस्बीह करने वाला बना रखा है, काफ़िर भी अव्वल तो उमूमन ख़ुदा तआ़ला को मानते और उसकी बड़ाई के क़ायल हैं और जो माद्दा-परस्त दहरिये (भौतिकवादी नास्तिक) या आजकल के कम्यूनिस्ट ख़ुदा के वजूद के बज़ाहिर क़ायल नहीं मगर उनके वजूद का हर अंग जबरी तौर पर अल्लाह तआ़ला की तस्बीह कर रहा है। जैसे दरख़्त और पत्थर मिट्टी वग़ैरह सब चीज़ें अल्लाह की तस्बीह में मश्ग़ूल हैं मगर उनकी यह तस्बीह जो जबरी और तकवीनी (ग़ैर-इख़्तियारी और क़ुदरती वजूद के एतिबार से) है यह आ़म लोग सुनते नहीं, क़ुरआने करीम का इरशादः

وَلٰكِنْ لَّا تَفْقَهُوْنَ تَسْبِيْحَهُمْ

इस पर दलालत करता है कि यह हर ज़र्रे-ज़र्रे की जबरी तस्बीह कोई ऐसी चीज़ है जिसको आ़म इनसान समझ नहीं सकते, हाल की तस्बीह को तो अ़क़्ल व समझ वाले जान सकते हैं। इससे मालूम हुआ कि यह तस्बीह सिर्फ़ हाल की नहीं असली है मगर हमारी समझ व पहुँच से ऊपर है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हदीस में जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह मोजिज़ा बयान हुआ है कि आपकी मुट्ठी में कंकरों का तस्बीह करना सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने कानों से सुना, इसका मोजिज़ा होना तो ज़ाहिर है मगर किताब 'ख़साइस-ए-कुबरा' में शैख़ जलालुद्दीन सुयूती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि कंकरों का तस्बीह पढ़ना हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मोजिज़ा नहीं, वो तो जहाँ कहीं भी हैं तस्बीह पढ़ती हैं, बल्कि मोजिज़ा आपका यह है कि आपके हाथ मुबारक में आने के बाद उनकी वह तस्बीह कानों से सुनी जाने लगी।

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इसी तहक़ीक़ को राजेह (ज़्यादा सही) क़रार दिया है, और इस पर क़ुरआन व सुन्नत की बहुत-सी दलीलें पेश की हैं जैसे सूरः सॉद में हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम के बारे में इरशाद हैः

اِنَّا سَخَّرْنَا الْجِبَالَ مَعَهٗ يُسَبِّحْنَ بِالْعَشِيِّ وَالْاِشْرَاقِ○

(यानी हमने पहाड़ों को ताबे कर दिया कि वो दाऊद अ़लैहिस्सलाम के साथ सुबह व शाम तस्बीह करते हैं। और सूरः ब-क़रह में पहाड़ों के पत्थरों के मुताल्लिक़ इरशाद हैः

اِنَّ مِنۡهَا لَمَا يَهۡبِطُ مِنۡ خَشۡيَةِ اللّٰهِ‌ؕ

(यानी पहाड़ों के कुछ पत्थर अल्लाह के ख़ौफ़ से नीचे गिर जाते हैं) जिससे पत्थरों में शऊर व समझ और ख़ुदा का ख़ौफ़ होना साबित हुआ। और सूरः मरियम में ईसाईयों के हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा का बेटा कहने की तरदीद में फ़रमायाः

تَخِرُّ الۡجِبَالُ هَدًّا ۙ اَنۡ دَعَوۡا لِلرَّحۡمٰنِ وَلَدًا ۚ

"यानी ये लोग अल्लाह के लिये बेटा तजवीज़ करते हैं, इनके इस कलिमा-ए-कुफ़्र से पहाड़ों पर ख़ौफ़ तारी हो जाता है और वे गिरने लगते हैं।"

और ज़ाहिर है कि यह ख़ौफ़ उनके शऊर व समझ का पता देता है और शऊर व समझ के बाद तस्बीह करना कोई मुहाल चीज़ नहीं रहती।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि एक पहाड़ दूसरे पहाड़ से कहता है कि ऐ फ़ुलाँ! क्या तेरे ऊपर कोई ऐसा आदमी गुज़रा है जो अल्लाह को याद करने वाला हो? अगर वह कहता है कि हाँ, तो यह पहाड़ इससे ख़ुश होता है। इस पर दलील देने के लिये हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह आयत पढ़ीः

وَقَالُوا اتَّخَذَ الرَّحۡمٰنُ وَلَدًا ؕ

और फिर फ़रमाया कि जब इस आयत से यह साबित हुआ कि पहाड़ कुफ़्र के कलिमात सुनने से प्रभावित होते हैं, उन पर ख़ौफ़ तारी हो जाता है तो क्या तुम्हारा यह ख़्याल है कि वे बातिल (ग़लत और ग़ैर-हक़) कलिमात को सुनते हैं हक़ बात और ज़िक्रुल्लाह नहीं सुनते और उससे मुतास्सिर नहीं होते। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, दक़ाईक़ इब्ने मुबारक के हवाले से)

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई जिन्न व इनसान और दरख़्त और पत्थर और ढेला ऐसा नहीं जो मुअज़्ज़िन की आवाज़ को सुनता है और क़ियामत के दिन उसके ईमान और नेक होने की गवाही न दे। (मुवत्ता इमाम मालिक व सुनन इब्ने माजा, अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से)

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद की रिवायत से नक़ल किया है कि हम खाने की तस्बीह की आवाज़ सुना करते थे जबकि वह खाया जा रहा हो। और एक दूसरी रिवायत में है कि हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ खाना खाते तो खाने की तस्बीह की आवाज़ सुना करते थे। और सही मुस्लिम में हज़रत जाबिर बिन समुरा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं मक्का मुकर्रमा के उस पत्थर को पहचानता हूँ जो नुबुव्वत से पहले मुझे सलाम किया करता था और मैं अब भी उसको पहचानता हूँ। कुछ हज़रात ने कहा कि इससे मुराद हजरे-अस्वद है। वल्लाहु आलम

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि हदीस की रिवायतें इस तरह के मामलात में बहुत हैं और उस्तुवाना हन्नाना की हिकायत तो आ़म मुसलमानों की ज़बानों पर है जिसके रोने की आवाज़

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने सुनी जबकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खुतबे के वक़्त उसको छोड़कर मिम्बर पर खुतबा देना शुरू किया।

इन रिवायतों के बाद इसमें क्या मुश्किल बात और शुब्हा रह जाता है कि ज़मीन व आसमान की हर चीज़ में शऊर व समझ है और हर चीज़ वास्तविक तौर पर अल्लाह की तस्बीह करती है, और इब्राहीम रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि यह तस्बीह आम है जानदार चीज़ों में भी और ग़ैर-जानदार चीज़ों में भी, यहाँ तक कि दरवाज़े के किवाड़ों की आवाज़ में भी तस्बीह है। इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि अगर तस्बीह से मुराद हाल की तस्बीह होती तो उक्त आयत में हज़रत दाऊद की क्या विशेषता रहती, हाल वाली तस्बीह तो हर अक़्ल व शऊर वाला इनसान हर चीज़ से मालूम कर सकता है, इसलिये ज़ाहिर यही है कि यह तस्बीह क़ौल (ज़बान से अदा करने वाली) थी (और जैसा कि किताब 'ख़साइस-ए-कुबरा' के हवाले से ऊपर नक़ल किया है कि कंकरों का तस्बीह पढ़ना मोजिज़ा नहीं वह हर जगह हर हाल और हर वक़्त में आम है, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मोजिज़ा यह था कि आपके हाथ मुबारक में आने के बाद उनकी तस्बीह इस तरह हो गई कि आम लोगों ने कानों से सुना, इसी तरह पहाड़ों की तस्बीह भी हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम का मोजिज़ा इसी हैसियत से है कि उनके मोजिज़े से वह तस्बीह कानों से सुनने के क़ाबिल हो गई। वल्लाहु आलम)।

وَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ جَعَلْنَا بَيْنَكَ وَبَيْنَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ حِجَابًا مَّسْتُوْرًا ۝ وَّ جَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْٓ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ۚ وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِى الْقُرْاٰنِ وَحْدَهٗ وَلَّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِهِمْ نُفُوْرًا ۝ نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَسْتَمِعُوْنَ بِهٖٓ اِذْ يَسْتَمِعُوْنَ اِلَيْكَ وَاِذْ هُمْ نَجْوٰٓى اِذْ يَقُوْلُ الظّٰلِمُوْنَ اِنْ تَتَّبِعُوْنَ اِلَّا رَجُلًا مَّسْحُوْرًا ۝ اُنْظُرْ كَيْفَ ضَرَبُوْا لَكَ الْاَمْثَالَ فَضَلُّوْا فَلَا يَسْتَطِيْعُوْنَ سَبِيْلًا ۝

व इज़ा क़रअ्तल्-क़ुरआ-न जअ़ल्ना बैन-क व बैनल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्-आख़िरति हिजाबम्-मस्तूरा (45) व जअ़ल्ना अ़ला क़ुलूबिहिम् अकिन्नतन् अय्यंफ़्क़हूहु व फ़ी आज़ानिहिम् वक़्रन्, व इज़ा ज़कर्-त रब्ब-क फ़िल्क़ुर्आनि वह्दहू वल्लौ अ़ला अद्बारिहिम् नुफ़ूरा (46) नह्नु	और जब तू पढ़ता है क़ुरआन कर देते हैं हम बीच में तेरे और उन लोगों के जो नहीं मानते आख़िरत को एक पर्दा छुपा हुआ। (45) और हम रखते हैं उनके दिलों पर पर्दा कि उसको न समझें और उनके कानों में बोझ, और जब ज़िक्र करता है तू क़ुरआन में अपने रब का अकेला कर-कर भागते हैं अपनी पीठ पर बिदक कर। (46) हम ख़ूब जानते हैं

अअ्लमु बिमा यस्तमिअू-न बिही इज़् यस्तमिअू-न इलै-क व इज़् हुम् नज्वा इज़् यक़ूलुज़्ज़ालिमू-न इन् तत्तबिअू-न इल्ला रजुलम्-मस्हूरा (47) उन्ज़ुर् कै-फ़ ज़-रबू लकल्-अम्सा-ल फ़-ज़ल्लू फ़ला यस्ततीअू-न सबीला। (48) ❖	जिस वास्ते वे सुनते हैं जिस वक़्त कान रखते हैं तेरी तरफ़ और जब वे मश्विरा करते हैं जबकि कहते हैं यह बेइन्साफ़ जिसके कहने पर तुम चलते हो वह नहीं है मगर एक मर्द जादू का मारा। (47) देख ले कैसे जमाते हैं तुझ पर मिसालें और बहकते फिरते हैं सो राह नहीं पा सकते। (48) ❖

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

इससे पहले की आयतों में यह ज़िक्र था कि तौहीद का मज़मून क़ुरआने करीम में विभिन्न और अनेक उनवानों और विभिन्न दलीलों के साथ बार-बार ज़िक्र होने के बावजूद ये बद-नसीब मुश्रिक लोग इसको नहीं मानते। इन आयतों में उनके न मानने की वजह बतलाई गई है कि ये आयतों में ग़ौर व फ़िक्र ही नहीं करते बल्कि उनसे नफ़रत और मज़ाक़ करते हैं, इसलिये इनको हक़ीक़त के इल्म से अंधा कर दिया गया है। ख़ुलासा-ए-तफ़सीर यह है:

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब आप (तब्लीग़ के लिये) क़ुरआन पढ़ते हैं तो हम आपके और जो लोग आख़िरत पर ईमान नहीं रखते उनके बीच एक पर्दा आड़ कर देते हैं (और वह पर्दा यह है कि) हम उनके दिलों पर पर्दा डाल देते हैं इससे कि वे इस (क़ुरआन के मक़सद) को समझें, और उनके कानों में डाट दे देते हैं (इससे कि वे इनको हिदायत हासिल करने के लिये सुनें। मतलब यह है कि वह पर्दा उनकी नासमझी का और इसका है कि वे समझने का इरादा ही नहीं करते जिससे वे आपकी नुबुव्वत की शान को पहचान सकें) और जब आप क़ुरआन में सिर्फ़ अपने रब (के कमालात और सिफ़तों) का ज़िक्र करते हैं (और ये लोग जिन माबूदों की इबादत करते हैं उनमें वो सिफ़तें हैं नहीं) तो वे लोग (अपनी नासमझी बल्कि टेढ़ी समझ के सबब इससे) नफ़रत करते हुए पीठ फेरकर चल देते हैं (आगे उनके इस बातिल अ़मल पर सज़ा की धमकी है कि) जिस वक़्त ये लोग आपकी तरफ़ कान लगाते हैं तो हम ख़ूब जानते हैं जिस ग़र्ज़ से ये (क़ुरआन को) सुनते हैं (कि वह ग़र्ज़ महज़ एतिराज़ करना, ताने देना और आलोचना करना है) और जिस वक़्त ये लोग (क़ुरआन सुनने के बाद) आपस में सरगोशियाँ "यानी चुपके-चुपके बातें" करते हैं (हम उसको भी ख़ूब जानते हैं) जबकि ये ज़ालिम यूँ कहते हैं कि तुम लोग (यानी उनकी बिरादरी में से जो लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ लग गये हैं) महज़ ऐसे शख़्स का

साथ दे रहे हो जिस पर जादू का (ख़ास) असर (यानी जिन्नों का) हो गया है (यानी यह जो अजीब-अजीब बातें करते हैं यह सब जुनून और दिमाग़ी ख़लल है। ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! ज़रा) आप देखिए तो ये लोग आपके लिये कैसे-कैसे लक़ब तजवीज़ करते हैं। सो ये लोग (बिल्कुल ही) गुमराह हो गये, तो (अब हक़ का) रास्ता नहीं पा सकते (क्योंकि ऐसी हठधर्मी, ज़िद और फिर अल्लाह के रसूल के साथ ऐसा मामला इससे इनसान की समझ व हिदायत की क़ाबलियत छिन जाती है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पैग़म्बर पर जादू का असर हो सकता है

किसी नबी और पैग़म्बर पर जादू का असर हो जाना ऐसे ही मुम्किन है जैसे बीमारी का असर हो जाना, इसलिये कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम इनसानी ख़ासियतों से अलग नहीं होते। जैसे उनको ज़ख़्म लग सकता है, बुख़ार और दर्द हो सकता है, ऐसे ही जादू का असर भी हो सकता है, क्योंकि वह भी ख़ास तबई असबाब जिन्नात वग़ैरह के असर से होता है, और हदीस में साबित भी है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर सेहर (जादू) का असर हो गया था। आख़िरी आयत में जो काफ़िरों ने आपको मस्हूर (जादू का मारा हुआ) कहा और क़ुरआन ने उसकी तरदीद (खंडन) की इसका हासिल वह है जिसकी तरफ़ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में इशारा कर दिया गया है कि उनकी मुराद दर हक़ीक़त मस्हूर कहने से मजनूँ कहना था, उसी की तरदीद क़ुरआन ने फ़रमाई है, इसलिये जादू वाली हदीस इसके ख़िलाफ़ और टकराने वाली नहीं।

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली व दूसरी आयत में जो मज़मून आया है उसके उतरने का एक ख़ास मौक़ा और सबब है जो इमाम क़ुर्तुबी ने सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अ़लैहि से नक़ल किया है, कि जब क़ुरआन में सूरः लहब नाज़िल हुई जिसमें अबू लहब की बीवी की भी मज़म्मत (निंदा) ज़िक्र हुई है तो उसकी बीवी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मज्लिस में गई उस वक़्त सिद्दीक़े अकबर मज्लिस में मौजूद थे, उसको दूर से देखकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि आप यहाँ से हठ जायें तो बेहतर है, क्योंकि यह औ़रत बड़ी ख़राब ज़बान वाली है, यह ऐसी बातें कहेगी जिससे आपको तकलीफ़ पहुँचेगी। आपने फ़रमाया नहीं! इसके और मेरे बीच अल्लाह तआ़ला पर्दा रोक कर देंगे, चुनाँचे वह मज्लिस में पहुँची मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को न देख सकी तो सिद्दीक़े अकबर से मुख़ातब होकर कहने लगी कि आपके साथी ने हमारी बुराई और निंदा की है। सिद्दीक़े अकबर ने फ़रमाया कि अल्लाह की क़सम वह तो कोई शे'र ही नहीं कहते, जिसमें आ़दतन बुराई की जाती है, तो वह यह कहती हुई चली गई कि तुम भी उनकी तस्दीक़ करने वालों में से हो। उसके चले जाने के बाद सिद्दीक़े अकबर ने अ़र्ज़ किया कि क्या उसने आपको नहीं देखा? आपने फ़रमाया कि जब

तक वह यहाँ रही एक फ़रिश्ता मेरे और उसके बीच पर्दा करता रहा।

दुश्मनों की नज़र से छुपे रहने का एक अमल

हज़रत कअ़ब फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब मुश्रिकों की आँखों से छुपना चाहते तो क़ुरआन की तीन आयतें पढ़ लेते थे, इसके असर से काफ़िर लोग आपको देख न सकते थे। वो तीन आयतें ये हैं– एक आयत सूरः कहफ़ में है यानी:

إِنَّا جَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْٓ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا.

(यानी आयत नम्बर 157) दूसरी आयत सूरः नहल में है:

اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ طَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ وَسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ.

(यानी आयत नम्बर 108) और तीसरी आयत सूरः जासिया में है:

اَفَرَءَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهٗ هَوٰهُ وَاَضَلَّهُ اللّٰهُ عَلٰى عِلْمٍ وَّخَتَمَ عَلٰى سَمْعِهٖ وَقَلْبِهٖ وَجَعَلَ عَلٰى بَصَرِهٖ غِشٰوَةً.

(यानी आयत नम्बर 23)

हज़रत कअ़ब फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह मामला मैंने मुल्के शाम के एक शख़्स से बयान किया, उसको किसी ज़रूरत से रूम वालों के मुल्क में जाना था, वहाँ गया और एक ज़माने तक वहाँ मुक़ीम रहा, फिर रूम के काफ़िरों ने उसको सताया तो वह वहाँ से भाग निकला। उन लोगों ने उसका पीछा किया, उस शख़्स को वह रिवायत याद आ गई और उक्त तीन आयतें पढ़ीं। क़ुदरत ने उनकी आँखों पर ऐसा पर्दा डाला कि जिस रास्ते पर ये चल रहे थे उसी रास्ते पर दुश्मन गुज़र रहे थे मगर वे इनको न देख सकते थे।

इमाम सालबी कहते हैं कि हज़रत कअ़ब से जो रिवायत नक़ल की गई है कि मैंने रै के रहने वाले एक शख़्स को बतलाई। इत्तिफ़ाक़ से दैलम के काफ़िरों ने उसको गिरफ़्तार कर लिया कुछ मुद्दत उनकी क़ैद में रहा फिर एक दिन मौक़ा पाकर भाग खड़ा हुआ। ये लोग उसका पीछा करने निकले मगर उस शख़्स ने भी ये तीन आयतें पढ़ लीं, इसका यह असर हुआ कि अल्लाह ने उनकी आँखों पर ऐसा पर्दा डाल दिया कि वे उसको न देख सके हालाँकि साथ-साथ चल रहे थे और उनके कपड़े इनके कपड़ों से छू जाते थे।

इमाम क़ुर्तुबी कहते हैं कि इन तीनों के साथ सूरः यासीन की वो आयतें भी मिलाई जायें जिनको नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हिजरत के वक़्त पढ़ा था जबकि मक्का के मुश्रिकों ने आपके मकान का घेराव कर रखा था, आपने ये आयतें पढ़ीं और उनके बीच से निकलते हुए चले गये बल्कि उनके सरों पर मिट्टी डालते हुए गये। उनमें से किसी को ख़बर नहीं हुई। वो आयतें सूरः यासीन की ये हैं:

يٰسٓ ○ وَالْقُرْاٰنِ الْحَكِيْمِ ○ اِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِيْنَ ○ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ○ تَنْزِيْلَ الْعَزِيْزِ الرَّحِيْمِ ○ لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَّآ اُنْذِرَ اٰبَآؤُهُمْ فَهُمْ غٰفِلُوْنَ ○ لَقَدْ حَقَّ الْقَوْلُ عَلٰٓى اَكْثَرِهِمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ○ اِنَّا جَعَلْنَا فِيْٓ اَعْنَاقِهِمْ اَغْلٰلًا فَهِيَ اِلَى الْاَذْقَانِ فَهُمْ مُّقْمَحُوْنَ ○ وَجَعَلْنَا مِنْۢ بَيْنِ اَيْدِيْهِمْ سَدًّا وَّمِنْ خَلْفِهِمْ سَدًّا فَاَغْشَيْنٰهُمْ فَهُمْ لَا يُبْصِرُوْنَ ○

(यानी सूरः यासीन की शुरू की नौ आयतें)

इमाम क़ुर्तुबी फ़रमाते हैं कि मुझे ख़ुद अपने मुल्क उन्दुलुस में क़ुर्तुबा के क़रीब क़िला मन्सूर में यह वाक़िआ पेश आया कि मैं दुश्मन के सामने भागा और एक कोने में बैठ गया, दुश्मन ने दो घोड़े सवार मेरा पीछा करने के लिये भेजे और मैं बिल्कुल खुले मैदान में था कोई चीज़ पर्दा करने वाली न थी, मगर मैं सूरः यासीन की ये आयतें पढ़ रहा था। वे दोनों सवार मेरे बराबर से गुज़रे फिर जहाँ से आये थे यह कहते हुए लौट गये कि यह शख़्स कोई शैतान है, क्योंकि वह मुझे देख न सके अल्लाह तआ़ला ने उनको मुझसे अंधा कर दिया था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَقَالُوٓا أَءِذَا كُنَّا عِظَامًا وَرُفَاتًا أَءِنَّا لَمَبْعُوثُونَ خَلْقًا جَدِيدًا ﴿٤٩﴾ قُلْ كُونُوا حِجَارَةً أَوْ حَدِيدًا ﴿٥٠﴾ أَوْ خَلْقًا مِّمَّا يَكْبُرُ فِي صُدُورِكُمْ ۚ فَسَيَقُولُونَ مَن يُعِيدُنَا ۖ قُلِ الَّذِي فَطَرَكُمْ أَوَّلَ مَرَّةٍ ۚ فَسَيُنْغِضُونَ إِلَيْكَ رُءُوسَهُمْ وَيَقُولُونَ مَتَىٰ هُوَ ۖ قُلْ عَسَىٰٓ أَن يَكُونَ قَرِيبًا ﴿٥١﴾ يَوْمَ يَدْعُوكُمْ فَتَسْتَجِيبُونَ بِحَمْدِهِ وَتَظُنُّونَ إِن لَّبِثْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا ﴿٥٢﴾

व क़ालू अ-इज़ा कुन्ना अ़िज़ामंव्-व रुफ़ातन् अ-इन्ना लमब्अ़ूसू-न ख़ल्क़न् जदीदा (49) क़ुल् कूनू हिजा-रतन् औ हदीदा (50) औ ख़ल्क़म्-मिम्मा यक्बुरु फ़ी सुदूरिकुम् फ़-स-यक़ूलू-न मंय्युअ़ीदुना, क़ुलिल्लज़ी फ़-त-रकुम् अव्व-ल मर्रतिन् फ़-सयुन्ग़िज़ू-न इलै-क रुऊ-सहुम् व यक़ूलू-न मता हु-व, क़ुल् अ़सा अंय्यकू-न क़रीबा (51) यौ-म यद्अ़ूकुम् फ़-तस्तजीबू-न बिहम्दिही व तज़ुन्नू-न इल्लबिस्तुम् इल्ला क़लीला (52) ✿	और कहते हैं कि जब हम हो जायें हड्डियाँ और चूरा-चूरा फिर उठेंगे नये बनकर? (49) तू कह तुम हो जाओ पत्थर या लोहा, (50) या कोई ख़ल्क़त जिसको मुश्किल समझो अपने जी में। फिर अब कहेंगे कौन लौटाकर लायेगा हमको? कह जिसने पैदा किया तुमको पहली बार, फिर अब मटकायेंगे तेरी तरफ़ अपने सर और कहेंगे कब होगा यह? तू कह शायद नज़दीक ही होगा। (51) जिस दिन तुमको पुकारेगा फिर चले आओगे उसकी तारीफ़ करते हुए और अटकल करोगे कि देर नहीं लगी तुमको मगर थोड़ी। (52) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये लोग कहते हैं कि जब हम (मरकर) हड्डियाँ और (हड्डियों का भी) चूरा (यानी रेज़ा-रेज़ा)

हो जाएँगे तो क्या (उसके बाद क़ियामत में) हम नये सिरे से पैदा और ज़िन्दा किए जाएँगे (यानी अव्वल तो मरकर ज़िन्दा होना ही मुश्किल है कि जिस्म में ज़िन्दगी की सलाहियत नहीं रही, फिर जबकि वह जिस्म भी रेज़ा-रेज़ा होकर उसके हिस्से बिखर जायें तो उसके ज़िन्दा होने को कौन मान सकता है)? आप (उनके जवाब में) फ़रमा दीजिए कि (तुम तो हड्डियों ही की ज़िन्दगी को दूर की और नामुम्किन बात समझते हो और हम कहते हैं कि) तुम पत्थर या लोहा या और कोई ऐसी मख़्लूक़ होकर देख लो जो तुम्हारे ज़ेहन में (ज़िन्दगी की सलाहियत से) बहुत ही दूर की चीज़ हो (फिर देखो कि ज़िन्दा किये जाओगे या नहीं। और पत्थर और लोहे को ज़िन्दगी से दूर की चीज़ क़रार देना इसलिये ज़ाहिर है कि इनमें किसी वक़्त भी हैवानी ज़िन्दगी नहीं आती, बख़िलाफ़ हड्डियों के कि उनमें पहले उस वक़्त तक ज़िन्दगी रह चुकी है तो जब पत्थर व लोहे का ज़िन्दा करना अल्लाह तआला के लिये मुश्किल नहीं तो इनसानी हिस्सों (अंगों) को दोबारा ज़िन्दगी बख़्श देना क्या मुश्किल होगा। और आयत में लफ़्ज़ कूनू जो हुक्म का कलिमा है इससे मुराद यहाँ हुक्म नहीं बल्कि एक शर्त है, कि फ़र्ज़ करो अगर तुम पत्थर और लोहा भी हो जाओ तो अल्लाह तआला फिर भी तुम्हें दोबारा ज़िन्दा कर देने पर क़ादिर है)। इस पर वे पूछेंगे कि वह कौन है जो हमको दोबारा ज़िन्दा करेगा? आप फ़रमा दीजिए कि वह वह है जिसने तुमको पहली बार पैदा किया था (असल बात यह है कि किसी चीज़ के वजूद में आने के लिये दो चीज़ें दरकार हैं– एक माद्दा और महल "मौक़ा व स्थान" में वजूद की क़ाबलियत दूसरे उसको वजूद में लाने के लिये काम करने वाली क़ुव्वत। पहला सवाल महल "जगह और मौक़े" की क़ाबलियत के मुताल्लिक़ था कि वह मरने के बाद ज़िन्दगी के क़ाबिल नहीं रहा, इसका जवाब देकर महल की क़ाबलियत साबित कर दी गई, तो यह दूसरा सवाल काम करने वाली ताक़त के मुताल्लिक़ किया गया कि ऐसा कौनसा ताक़त व क़ुदरत वाला है जो अपनी काम करने की क़ुव्वत से यह अजीब काम कर सके? इसके जवाब में फ़रमा दिया गया कि जिसने पहले तुम्हें ऐसे माद्दे से पैदा किया था जिसमें ज़िन्दगी की क़ाबलियत का किसी को गुमान भी न था तो उसको दोबारा पैदा कर देना क्या मुश्किल है। और जब क़ाबिल (क़ुबूल करने और असर लेने वाला) व फ़ाज़िल (काम करने और असर करने वाला) दोनों का सवाल हल हो गया तो अब ये लोग उसके वाक़े व ज़ाहिर होने के वक़्त की तहक़ीक़ के लिये) आपके आगे सर हिला-हिलाकर कहेंगे कि (अच्छा बतलाईये कि) यह (ज़िन्दा होना) कब होगा? आप फ़रमा दीजिए कि अजब नहीं यह क़रीब ही आ पहुँचा हो (आगे उन हालात का बयान है जो इस नई ज़िन्दगी के वक़्त पेश आयेंगे)।

यह उस दिन होगा कि अल्लाह तुमको (ज़िन्दा करने और मैदाने हश्र में जमा करने के लिये फ़रिश्तों के ज़रिये) पुकारेगा और तुम (बिना इख़्तियार) उसकी तारीफ़ करते हुए हुक्म का पालन करोगे (यानी ज़िन्दा भी हो जाओगे और मैदाने हश्र में जमा भी हो जाओगे) और (उस दिन की हौल और हैबत देखकर तुम्हारा यह हाल हो जायेगा कि दुनिया की सारी उम्र और क़ब्र में रहने की सारी मुद्दत के बारे में) तुम यह ख़्याल करोगे कि तुम बहुत ही कम (मुद्दत दुनिया में) रहे थे

(क्योंकि दुनिया और क़ब्र में आजकी हौलनाकी के मुक़ाबले में फिर कुछ न कुछ राहत थी और राहत का ज़माना इनसान को मुसीबत पड़ने के वक़्त बहुत मुख़्तसर मालूम हुआ करता है)।

मआरिफ़ व मसाईल

يَوْمَ يَدْعُوكُمْ فَتَسْتَجِيبُونَ بِحَمْدِهِ

लफ़्ज़ यद्ऊकुम दुआ से निकला है जिसके मायने आवाज़ देकर बुलाने के हैं, और मायने यह हैं कि जिस दिन अल्लाह तआ़ला तुम सब को मेहशर की तरफ़ बुलायेगा और यह बुलाना फ़रिश्ते इस्राफ़ील के ज़रिये होगा कि जब वह दूसरा सूर फूँकेंगे तो सब मुर्दे ज़िन्दा होकर मैदाने हश्र में जमा हो जायेंगे, और यह भी हो सकता है कि ज़िन्दा होने के बाद सब को मैदाने हश्र में जमा करने के लिये आवाज़ दी जाये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "क़ियामत के दिन तुमको तुम्हारे अपने और बाप के नाम से पुकारा जायेगा इसलिये अपने नाम अच्छे रखा करो, (बेहूदा नामों से परेहज़ करो)।" (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मेहशर में काफ़िर लोग भी अल्लाह की तारीफ़ व सना करते हुए उठेंगे

فَتَسْتَجِيبُونَ بِحَمْدِهِ

इस्तिजाबत के मायने किसी के बुलाने पर हुक्म की तामील करने और हाज़िर हो जाने के हैं। मायने यह हैं कि मैदाने हश्र में जब तुमको बुलाया जायेगा तो तुम सब उस आवाज़ की इताअ़त करोगे और जमा हो जाओगे। बिहम्दिही इस लफ़्ज़ से हुक्म की तामील करने वालों की हालत को बयान किया जा रहा है कि उस मैदान में आने के वक़्त तुम सब के सब अल्लाह की तारीफ़ व प्रशंसा करते हुए हाज़िर होगे।

इस आयत के ज़ाहिर से यही मालूम होता है कि उस वक़्त मोमिन व काफ़िर सब का यही हाल होगा कि अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ करते हुए उठेंगे, क्योंकि इस आयत में असल ख़िताब काफ़िरों ही को है, उन्हीं के बारे में यह बयान हो रहा है कि सब तारीफ़ करते हुए उठेंगे। तफ़सीर के इमाम सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि काफ़िर लोग भी अपनी क़ब्रों से निकलते वक़्त 'सुब्हान-क व बिहम्दिही' के अलफ़ाज़ कहते हुए निकलेंगे, मगर उस वक़्त का तारीफ़ व सना करना उनको कोई नफ़ा नहीं देगा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

क्योंकि ये लोग जब मरने के बाद ज़िन्दगी देखेंगे तो ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर उनकी ज़बान से अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व सना के अलफ़ाज़ निकलेंगे, वह कोई ऐसा अ़मल नहीं होगा जिस पर जज़ा मुरत्तब हो।

और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने इस हाल को मोमिनों के लिये मख़्सूस बतलाया है, उनकी दलील यह है कि काफ़िरों के मुताल्लिक़ तो क़ुरआने करीम में यह है कि जब वे ज़िन्दा किये जायेंगे तो यह कहेंगे:

يٰوَيْلَنَا مَنْ م بَعَثَنَا مِنْ مَّرْقَدِنَا.

"ऐ अफ़सोस! हमें किसने हमारी क़ब्र से ज़िन्दा कर उठाया है।" और दूसरी आयत में है कि यह कहेंगे:

يٰحَسْرَتٰى عَلٰى مَا فَرَّطْتُّ فِىْ جَنْبِ اللّٰهِ.

"यानी ऐ हसरत व अफ़सोस! इस पर कि मैंने अल्लाह तआला के मामले में बड़ी कोताही की है।"

लेकिन हक़ीक़त यह है कि इन दोनों अक़वाल में कोई टकराव नहीं हो सकता है कि शुरू में सब के सब तारीफ़ करते हुए उठें बाद में जब काफ़िरों को मोमिनों से अलग कर दिया जायेगा जैसा कि सूरः यासीन की आयत में है:

وَامْتَازُوا الْيَوْمَ اَيُّهَا الْمُجْرِمُوْنَo

"ऐ मुजरिमो! तुम आज सब अलग अलग और नुमायाँ होकर जमा हो जाओ।" उस वक़्त उनकी ज़बानों से वो कलिमात भी निकलेंगे जो उक्त आयतों में आये हैं, और यह बात क़ुरआन व सुन्नत की बेशुमार वज़ाहतों से मालूम और साबित है कि मेहशर के लोगों के खड़े होने के मौक़े और स्थान अलग-अलग होंगे, हर स्थान और मौक़े में लोगों के हाल अलग-अलग होंगे। इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि हश्र में उठने की शुरूआत भी तारीफ़ से होगी, सब के सब अल्लाह की तारीफ़ करते हुए उठेंगे और सब मामलात का ख़ात्मा भी अल्लाह की तारीफ़ पर होगा जैसा कि इरशाद है:

وَقُضِىَ بَيْنَهُمْ بِالْحَقِّ وَ قِيْلَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَo

"यानी सब मेहशर वालों का फ़ैसला हक़ के मुताबिक़ कर दिया गया है और यह कहा गया है कि तारीफ़ व शुक्र है अल्लाह रब्बुल-आलमीन का।"

وَقُلْ لِّعِبَادِىْ يَقُوْلُوا الَّتِىْ هِىَ اَحْسَنُ ؕ اِنَّ الشَّيْطٰنَ يَنْزَغُ بَيْنَهُمْ ؕ اِنَّ الشَّيْطٰنَ كَانَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ۝ رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِكُمْ ؕ اِنْ يَّشَاْ يَرْحَمْكُمْ اَوْ اِنْ يَّشَاْ يُعَذِّبْكُمْ ؕ وَمَاۤ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ۝ وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِمَنْ فِى السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضِ ؕ وَلَقَدْ فَضَّلْنَا بَعْضَ النَّبِيّٖنَ عَلٰى بَعْضٍ وَّ اٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ۝

व क़ुल्-लिअ़िबादी यक़ूलुल्लती हि-य अह़्सनु, इन्नश्शैता-न यन्ज़गु बैनहुम्,	और कह दे मेरे बन्दों को कि बात वही कहें जो बेहतर हो, शैतान झड़प करवाता

इन्नश्शैता-न का-न लिल्इन्सानि अ़दुव्वम्-मुबीना (53) रब्बुकुम् अअ़्लमु बिकुम्, इंय्यशअ् यर्हम्कुम् औ इंय्यशअ् युअ़ज़्ज़िब्कुम्, व मा अर्सल्ना-क अ़लैहिम् वकीला (54) व रब्बु-क अअ़्लमु बिमन् फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि, व ल-क़द् फ़ज़्ज़ल्ना बअ़्ज़न्नबिय्यी-न अ़ला बअ़्ज़िंव्-व आतैना दावू-द ज़बूरा (55)	है उनमें, शैतान है इनसान का खुला दुश्मन। (53) तुम्हारा रब ख़ूब जानता है तुमको अगर चाहे तुम पर रहम करे और अगर चाहे तुमको अ़ज़ाब दे, और तुझको नहीं भेजा हमने उन पर ज़िम्मा लेने वाला। (54) और तेरा रब ख़ूब जानता है उनको जो आसमानों में हैं और ज़मीन में और हमने अफ़ज़ल किया है बाज़े पैग़म्बरों को बाज़ों से, और दी हमने दाऊद को ज़बूर। (55)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आप मेरे (मुसलमान) बन्दों से कह दीजिए कि (अगर काफ़िरों को जवाब दें तो) ऐसी बात कहा करें जो (अख़्लाक़ के एतिबार से) बेहतर हो (यानी उसमें गाली-गलौज, बुरा-भला कहना, सख़्ती की बात और उत्तेजना शामिल न हो, क्योंकि) शैतान (सख़्त बात कहलवाकर) लोगों में फ़साद डलवा देता है, वाक़ई शैतान इनसान का खुला दुश्मन है (और वजह इस तालीम की यह है कि सख़्ती से कोई फ़ायदा नहीं होता और हिदायत व गुमराही तो अल्लाह के हुक्म और तक़दीर के ताबे है)। तुम सब का हाल तुम्हारा परवर्दिगार ख़ूब जानता है (कि कौन किस क़ाबिल है, बस) अगर वह चाहे तो तुम (में से जिस) पर (चाहे) रहमत फ़रमा दे (यानी हिदायत कर दे) या अगर वह चाहे तुम (में से जिस) को (चाहे) अ़ज़ाब देने लगे (यानी उसको तौफ़ीक़ व हिदायत न दे)। और हमने आप (तक) को उन (की हिदायत) का ज़िम्मेदार बनाकर नहीं भेजा (और जब बावजूद नबी होने के आप ज़िम्मेदार नहीं बनाये गये तो दूसरों की क्या मजाल है इसलिये किसी के पीछे पड़ जाना और सख़्ती करना बेफ़ायदा है)।

और आपका रब ख़ूब जानता है उनको (भी) जो कि आसमानों में हैं और (उनको भी जो कि) ज़मीन में हैं (आसमान वालों से मुराद फ़रिश्ते और ज़मीन वालों से मुराद इनसान और जिन्नात हैं। मतलब यह है कि हम ख़ूब वाक़िफ़ हैं कि उनमें से किसको नबी और रसूल बनाना मुनासिब है किसको नहीं, इसलिये अगर हमने आपको नबी बना दिया तो इसमें ताज्जुब की क्या बात है) और (इसी तरह अगर हमने आपको दूसरों पर फ़ज़ीलत दे दी तो ताज्जुब क्या है क्योंकि) हमने (पहले भी) बाज़े नबियों को बाज़ों पर फ़ज़ीलत दी है (और इसी तरह अगर हमने आपको क़ुरआन दिया तो ताज्जुब की क्या बात है क्योंकि आप से पहले) हम दाऊद को ज़बूर दे चुके हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बद-ज़ुबानी और सख़्त-कलामी काफ़िरों के साथ भी दुरुस्त नहीं

पहली आयत में जो मुसलमानों को काफ़िरों के साथ सख़्त अन्दाज़ से कलाम करने से मना किया गया है उसकी मुराद यह है कि बिना ज़रूरत सख़्ती न की जाये, और ज़रूरत हो तो क़त्ल तक करने की इजाज़त है:

कि बे हुक्मे-शरअ़ आब ख़ुर्दन ख़तास्त
व गर ख़ूँ ब-फ़तवा ब-रेज़ी रवास्त

यानी अगर शरीअ़त की इजाज़त न हो तो पानी तक का पीना मना और गुनाह है और शरीअ़त की तरफ़ से इजाज़त व हिदायत और हालात का तक़ाज़ा हो तो ख़ून बहाना भी जायज़ है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

जंग व क़त्ल के ज़रिये कुफ़्र का दबदबा व ज़ोर और इस्लाम की मुख़ालफ़त को दबाया जा सकता है इसलिये इसकी इजाज़त है। गाली-गलौज और सख़्त-कलामी से न कोई क़िला फ़तह होता है न किसी को हिदायत होती है इसलिये इससे मना किया गया है। इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि यह आयत हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के एक वाक़िए में नाज़िल हुई जिसकी सूरत यह थी कि किसी शख़्स ने हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को गाली दी, उसके जवाब में उन्होंने भी उसको सख़्त जवाब दिया और उसके क़त्ल का इरादा किया, इसके नतीजे में ख़तरा पैदा हो गया कि दो क़बीलों में जंग छिड़ जाये, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

और इमाम क़ुर्तुबी की तहक़ीक़ यह है कि इस आयत में मुसलमानों को आपस में ख़िताब करने के बारे में हिदायत है कि आपस के विवाद व झगड़े के वक़्त सख़्त-कलामी न किया करें कि इसके ज़रिये शैतान उनमें आपस में जंग व फ़साद पैदा करा देता है।

وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا.

यहाँ ख़ास तौर पर ज़बूर का ज़िक्र शायद इसलिये किया गया है कि ज़बूर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में यह ख़बर दी गई है कि आप रसूल व पैग़म्बर होने के साथ मुल्क व सल्तनत के मालिक भी होंगे जैसा कि क़ुरआने करीम में है:

وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِى الزَّبُوْرِ مِنْ ۢ بَعْدِ الذِّكْرِ اَنَّ الْاَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِىَ الصّٰلِحُوْنَ٥

मौजूदा ज़बूर में भी कुछ हज़रात ने इसका उल्लेख होना साबित किया है। (तफ़सीरे हक़्क़ानी)

इमाम बग़वी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर में इस जगह लिखा है कि ज़बूर अल्लाह तआ़ला की किताब है जो हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई, उसमें एक सौ पचास सूरतें हैं और तमाम सूरतें सिर्फ़ दुआ़ और अल्लाह की तारीफ़ व सना पर आधारित हैं, उनमें

हलाल व हराम और शरई क़ानूनों का बयान नहीं है।

قُلِ ادْعُوا الَّذِينَ زَعَمْتُمْ مِّن دُونِهِ فَلَا يَمْلِكُونَ كَشْفَ الضُّرِّ عَنكُمْ وَلَا تَحْوِيلًا ۞ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ يَدْعُونَ يَبْتَغُونَ إِلَىٰ رَبِّهِمُ الْوَسِيلَةَ أَيُّهُمْ أَقْرَبُ وَيَرْجُونَ رَحْمَتَهُ وَيَخَافُونَ عَذَابَهُ ۚ إِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ كَانَ مَحْذُورًا ۞ وَإِن مِّن قَرْيَةٍ إِلَّا نَحْنُ مُهْلِكُوهَا قَبْلَ يَوْمِ الْقِيَامَةِ أَوْ مُعَذِّبُوهَا عَذَابًا شَدِيدًا ۚ كَانَ ذَٰلِكَ فِي الْكِتَابِ مَسْطُورًا ۞

क़ुलिद्अुल्लज़ी-न ज़अ़म्तुम् मिन् दूनिही फ़ला यम्लिकू-न कश्फ़ज़्ज़ुर्रि अ़न्कुम् व ला तह्वीला (56) उलाइ-कल्लज़ी-न यद्अू-न यब्तग़ू-न इला रब्बिहिमुल्-वसील-त अय्युहुम् अक़्रबु व यरजू-न रह्म-तहू व यख़ाफ़ू-न अ़ज़ाबहू, इन्-न अ़ज़ा-ब रब्बि-क का-न मह्ज़ूरा (57) व इम्-मिन् क़र्यतिन् इल्ला नह्नु मुह्लिकूहा क़ब्-ल यौमिल्-क़ियामति औ मुअ़ज़्ज़िबूहा अ़ज़ाबन् शदीदन्, का-न ज़ालि-क फ़िल्किताबि मस्तूरा (58)	कह पुकारो जिनको तुम समझते हो सिवाय उसके सो वे इख़्तियार नहीं रखते कि खोल दें तकलीफ़ को तुम से और न (यह कि) बदल दें। (56) वे लोग जिनको ये पुकारते हैं वे ख़ुद ढूँढते हैं अपने रब तक वसीला कि कौनसा बन्दा बहुत नज़दीक है, और उम्मीद रखते हैं उसकी मेहरबानी की और डरते हैं उसके अ़ज़ाब से, बेशक तेरे रब का अ़ज़ाब डरने की चीज़ है। (57) और कोई बस्ती नहीं जिस को हम ख़राब न कर देंगे क़ियामत से पहले या आफ़त डालेंगे उस पर सख़्त आफ़त। यह है किताब में लिखा गया। (58)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उन लोगों से) फ़रमा दीजिये कि जिनको तुम अल्लाह तआ़ला के सिवा (माबूद) क़रार दे रहे हो (जैसे फ़रिश्ते और जिन्नात) ज़रा उनको (अपनी तकलीफ़ दूर करने के लिये) पुकारो तो सही। सो वे न तुमसे तकलीफ़ को दूर करने का इख़्तियार रखते हैं और न उसके बदल डालने का (जैसे तकलीफ़ को बिल्कुल दूर न कर सकें कुछ हल्का ही कर दें)। ये लोग कि जिनको ये मुश्रिक लोग (अपनी ज़रूरत पूरी करने या मुश्किल को हल करने के लिये) पुकार रहे हैं, वे ख़ुद ही अपने रब की तरफ़ (पहुँचने का) ज़रिया ढूँढ रहे हैं, कि उनमें कौन ज़्यादा मुक़र्रब "यानी अल्लाह का ख़ास और क़रीबी" बनता है (यानी वे ख़ुद ही फ़रमाँबरदारी व इबादत में मशग़ूल हैं ताकि अल्लाह तआ़ला की निकटता मयस्सर हो जाये, और चाहते हैं कि अल्लाह की निकटता

का दर्जा और बढ़ जाये)। और वे उसकी रहमत के उम्मीदवार हैं और उसके अ़ज़ाब से (नाफ़रमानी की सूरत में) डरते हैं। वाक़ई आपके रब का अ़ज़ाब है भी डरने की चीज़ (मतलब यह है कि जब वे ख़ुद इबादत में लगे हुए हैं तो माबूद कैसे हो सकते हैं, और जब वे ख़ुद ही अपनी ज़रूरतों में और तकलीफ़ के दूर करने में अल्लाह तआ़ला के मोहताज हैं तो वे दूसरों की हाजत पूरी करने और मुश्किल को हल करने में क्या कर सकते हैं)।

और (काफ़िरों की) ऐसी कोई बस्ती नहीं जिसको हम क़ियामत से पहले हलाक न करें (या क़ियामत के दिन) उसके रहने वालों को (दोज़ख़ का) सख़्त अ़ज़ाब न दें। यह बात किताब (यानी लौह-ए-महफ़ूज़) में लिखी हुई है (पस अगर कोई काफ़िर यहाँ हलाक होने से बच गया तो क़ियामत के दिन की बड़ी आफ़त से न बचेगा, और तबई मौत से हलाक होना तो काफ़िरों के साथ मख़्सूस नहीं सभी मरते हैं, इसलिये बस्तियों के हलाक होने से इस जगह मुराद यह है कि किसी अ़ज़ाब और आफ़त के ज़रिये हलाक किया जाये। तो ख़ुलासा यह हुआ कि काफ़िरों पर कभी तो दुनिया में अ़ज़ाब भेज दिया जाता है और आख़िरत का अ़ज़ाब उसके अ़लावा होगा और कभी ऐसा भी होता है कि दुनिया में कोई अ़ज़ाब न आया तो आख़िरत के अ़ज़ाब से बहरहाल निजात नहीं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

يَبْتَغُونَ إِلَىٰ رَبِّهِمُ الْوَسِيلَةَ.

लफ़्ज़ वसीला के मायने हर वह चीज़ जिसको किसी दूसरे तक पहुँचने का ज़रिया बनाया जाये। और अल्लाह के लिये वसीला यह है कि इल्म व अ़मल में अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी की हर वक़्त रियायत रखे और शरीअ़त के अहकाम की पाबन्दी करे। मतलब यह है कि ये सब हज़रात अपने नेक अ़मल के ज़रिये अल्लाह तआ़ला की रज़ा व ख़ुशनूदी और निकटता की तलब में लगे हुए हैं।

يَرْجُونَ رَحْمَتَهُ وَيَخَافُونَ عَذَابَهُ.

हज़रत सहल बिन अ़ब्दुल्लाह ने फ़रमाया कि उम्मीद और ख़ौफ़ यानी अल्लाह तआ़ला की रहमत का उम्मीदवार भी रहना और डरते भी रहना ये इनसान के दो अलग-अलग हाल हैं, जब ये दोनों बराबर दर्जे में रहें तो इनसान सही रास्ते पर चलता रहता है और अगर इनमें से कोई एक मग़लूब हो जाये तो उसी मात्रा से इनसान के हालात में ख़राबी आ जाती है। (क़ुर्तुबी)

وَمَا مَنَعَنَآ أَن نُّرْسِلَ بِالْاٰيٰتِ إِلَّآ أَن كَذَّبَ بِهَا الْأَوَّلُونَ ۚ وَاٰتَيْنَا ثَمُودَ النَّاقَةَ مُبْصِرَةً فَظَلَمُوا بِهَا ۚ وَمَا نُرْسِلُ بِالْاٰيٰتِ إِلَّا تَخْوِيفًا ﴿٥٩﴾ وَإِذْ قُلْنَا لَكَ إِنَّ رَبَّكَ أَحَاطَ بِالنَّاسِ ۚ وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّتِيٓ أَرَيْنٰكَ إِلَّا فِتْنَةً لِّلنَّاسِ وَالشَّجَرَةَ الْمَلْعُونَةَ فِي الْقُرْاٰنِ ۚ وَنُخَوِّفُهُمْ فَمَا يَزِيدُهُمْ إِلَّا طُغْيَانًا كَبِيرًا ﴿٦٠﴾

व मा म-न-अ़ना अन्नुर्सि-ल बिल्आयाति इल्ला अन् कज़्ज़-ब बिहल्-अव्वलू-न, व आतैना समूदन्नाक़-त मुब्सि-रतन् फ़-ज़-लमू बिहा, व मा नुर्सिलु बिल्आयाति इल्ला तख़्वीफ़ा (59) व इज़् क़ुल्ना ल-क इन्-न रब्ब-क अहा-त बिन्नासि, व मा जअ़ल्नर्रुअ्यल्लती अरैना-क इल्ला फ़ित्न-तल्-लिन्नासि वश्श-ज-रतल्-मल्ऊ़न-त फ़िल्क़ुर्आनि, व नुख़व्विफ़ुहुम् फ़मा यज़ीदुहुम् इल्ला तुग़्यानन् कबीरा (60) ❁

और हमने इसलिए रोक दीं निशानियाँ भेजनी कि अगलों ने उनको झुठलाया और हमने दी समूद को ऊँटनी उनके समझाने को फिर ज़ुल्म किया उस पर, और निशानियाँ जो हम भेजते हैं सो डराने को। (59) और जब कह दिया हमने तुझ से कि तेरे रब ने घेर लिया है लोगों को और वह दिखलावा जो तुझको दिखलाया हमने सो जाँचने को लोगों के और ऐसे ही वह पेड़ जिस पर फटकार है क़ुरआन में और हम उनको डराते हैं तो उनको ज़्यादा होती है बड़ी शरारत। (60) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमको ख़ास (फ़रमाईशी) मोजिज़ों के भेजने से यही बात रुकावट है कि पहले लोग उन (के जैसे फ़रमाईशी मोजिज़ों) को झुठला चुके हैं (और मिज़ाज व तबीयतें सब काफ़िरों की मिलती-जुलती हैं तो ज़ाहिर यह है कि ये भी झुठलायेंगे) और (नमूने के तौर पर एक क़िस्सा भी सुन लो कि) हमने क़ौमे समूद को (उनकी फ़रमाईश के मुताबिक़ हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े के तौर पर) ऊँटनी दी थी (जो अ़जीब अन्दाज़ से पैदा हुई और) जो कि (मोजिज़ा होने के सबब अपने आप में) बसीरत "यानी समझ और दानाई" का ज़रिया थी, सो उन लोगों ने (उससे समझ हासिल न की बल्कि) उसके साथ ज़ुल्म किया (कि उसको क़त्ल कर डाला तो ज़ाहिर यह है कि अगर मौजूदा लोगों के फ़रमाईशी मोजिज़े दिखलाये गये तो ये भी ऐसा ही करेंगे) और हम ऐसे मोजिज़ों को सिर्फ़ (इस बात से) डराने के लिये भेजा करते हैं (कि अगर ये फ़रमाईशी मोजिज़े देखकर भी ईमान न लाओगे तो फ़ौरन हलाक कर दिये जाओगे, और होता यही रहा है कि जिन लोगों को फ़रमाईशी मोजिज़े दिखलाये गये वे तो ईमान लाये ही नहीं यही मामला उनकी हलाकत और सार्वजनिक अ़ज़ाब का सबब बनेगा, और अल्लाह की हिक्मत का तक़ाज़ा यह है कि ये लोग अभी हलाक न किये जायें इसलिये इनके फ़रमाईशी मोजिज़े नहीं दिखलाये जाते। इसकी ताईद उस वाक़िए से होती है जो इन लोगों को पहले पेश आ चुका है जिसका ज़िक्र यह है कि) आप वह वक़्त याद कर लीजिये जबकि हमने आप से कहा था कि आपका रब (अपने इल्म से) तमाम लोगों (के ज़ाहिरी व बातिनी, मौजूदा व आने वाले हालात)

को घेरे हुए है (और आने वाले हालात में उनका ईमान न लाना भी अल्लाह तआ़ला को मालूम है जिसकी एक दलील उन्हीं का वाक़िआ़ यह है कि) हमने (मेराज के वाक़िए में) जो तमाशा (जागने की हालत में) आपको दिखलाया था, और जिस पेड़ की क़ुरआन में मज़म्मत "निंदा" की गई है (यानी ज़क़्क़ूम जो काफ़िरों का खाना है) हमने तो दोनों चीज़ों को उन लोगों के लिये गुमराही का सबब कर दिया (यानी उन लोगों ने इन दोनों बातों को सुनकर झुठलाया, मेराज को तो इस बिना पर झुठलाया कि एक रात की थोड़ी-सी मुद्दत में मुल्के शाम जाना और फिर आसमान पर जाना उनके नज़दीक मुम्किन न था, और ज़क़्क़ूम के पेड़ को इस वजह से झुठलाया कि उसको दोज़ख़ के अन्दर बतलाया जाता है कि आग में कोई पेड़ कैसे रह सकता है, अगर हो भी तो जल जायेगा, हालाँकि न एक रात में इतना लम्बा सफ़र तय करना अ़क़्ली तौर पर मुहाल है न आसमान पर जाना नामुम्किन है, और आग के अन्दर पेड़ का वजूद उनकी समझ में न आया हालाँकि कोई मुहाल बात नहीं कि किसी पेड़ का मिज़ाज ही अल्लाह तआ़ला ऐसा बना दें कि वह पानी के बजाय आग से परवरिश पाये। फिर फ़रमाया) और हम उन लोगों को डराते रहते हैं लेकिन उनकी बड़ी सरकशी बढ़ती ही चली जाती है (ज़क़्क़ूम के पेड़ के इनकार के साथ ये लोग मज़ाक़ भी करते थे जिसका बयान और अधिक तफ़सील व तहक़ीक़ के साथ सूरः साफ़्फ़ात में आयेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّتِيْ اَرَيْنٰكَ اِلَّا فِتْنَةً لِّلنَّاسِ.

"यानी मेराज की रात में जो तमाशा हमने आपको दिखलाया था वह लोगों के लिये एक फ़ितना था।"

लफ़्ज़ फ़ितना अ़रबी भाषा में बहुत-से मायनों के लिये इस्तेमाल होता है। इसके मायने वह हैं जो ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में लिये गये यानी गुमराही। एक मायने आज़माईश के भी आते हैं, एक मायने किसी हंगामे व फ़साद के बरपा होने के भी आते हैं, यहाँ इन सब मायनों की गुंजाईश है। हज़रत आ़यशा और हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा और हज़रत हसन व हज़रत मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहिमा वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने इस जगह फ़ितने से मुराद यही आख़िरी मायने लिये हैं और फ़रमाया कि यह फ़ितना दीन इस्लाम से फिर जाने का था, कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मेराज की रात में बैतुल-मुक़द्दस और वहाँ से आसमानों पर जाने और सुबह से पहले वापस आने का ज़िक्र किया तो बहुत-से नवमुस्लिम लोग जिनमें ईमान अच्छी तरह जमा नहीं था इस कलाम को झुठलाकर मुर्तद हो गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इसी वाक़िए से यह भी साबित हो गया कि लफ़्ज़ 'रुअ्या' अ़रबी भाषा में अगरचे ख़्वाब के मायने भी आता है लेकिन इस जगह मुराद ख़्वाब (सपने) का क़िस्सा नहीं, क्योंकि ऐसा होता तो लोगों के मुर्तद हो जाने (इस्लाम से फिर जाने) की कोई वजह नहीं थी, ख़्वाब तो हर शख़्स ऐसे

देख सकता है, बल्कि इस जगह 'रुअ्या' से मुराद एक अ़जीब वाक़िए का जागने की हालत में दिखलाना है। उक्त आयत की तफ़सीर में कुछ हज़रात ने इसको मेराज के वाक़िए के अ़लावा दूसरे वाक़िआत पर भी महमूल किया है, मगर मजमूई एतिबार से वो यहाँ फ़िट नहीं बैठते इसलिये उलेमा की अक्सरियत ने मेराज के वाक़िए ही को इस आयत की मुराद क़रार दिया है और बताया है यह उसी की तरफ़ इस आयत में इशारा है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوْٓا اِلَّآ اِبْلِيْسَ ۭ قَالَ ءَاَسْجُدُ لِمَنْ خَلَقْتَ طِيْنًا ۝ قَالَ اَرَءَيْتَكَ هٰذَا الَّذِيْ كَرَّمْتَ عَلَيَّ ۡ لَىِٕنْ اَخَّرْتَنِ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَاَحْتَنِكَنَّ ذُرِّيَّتَهٗٓ اِلَّا قَلِيْلًا ۝ قَالَ اذْهَبْ فَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ فَاِنَّ جَهَنَّمَ جَزَاۗؤُكُمْ جَزَاۗءً مَّوْفُوْرًا ۝ وَاسْتَفْزِزْ مَنِ اسْتَطَعْتَ مِنْهُمْ بِصَوْتِكَ وَاَجْلِبْ عَلَيْهِمْ بِخَيْلِكَ وَرَجِلِكَ وَشَارِكْهُمْ فِي الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ وَعِدْهُمْ ۭ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ۝ اِنَّ عِبَادِيْ لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنٌ ۭ وَكَفٰى بِرَبِّكَ وَكِيْلًا ۝

व इज़् क़ुल्ना लिल्मलाइ-कतिस्जुदू लिआद-म फ़-स-जदू इल्ला इब्ली-स, क़ा-ल अ-अस्जुदु लिमन् ख़लक़्-त तीना (61) क़ा-ल अ-रऐत-क हाज़ल्लज़ी कर्रम्-त अ़लय्-य, ल-इन् अख़्ख़र्तनि इला यौमिल्-क़ियामति ल-अह्तनिकन्-न ज़ुर्रिय्य-तहू इल्ला क़लीला (62) क़ालज़्हब् फ़-मन् तबि-अ़-क मिन्हुम् फ़-इन्-न जहन्न-म जज़ाउकुम् जज़ाअम्-मौफ़ूरा (63) वस्तफ़्ज़िज़् मनिस्त-तअ़्-त मिन्हुम् बिसौति-क व अज्लिब् अ़लैहिम् बिख़ैलि-क व रजिलि-क व शारिक्हुम् फ़िल्अम्वालि वल्-औलादि व अ़िद्हुम्, व मा यअ़िदुहुमुश्-शैतानु	और जब हमने कहा फ़रिश्तों को कि सज्दा करो आदम को तो वे सज्दे में गिर पड़े मगर इब्लीस बोला क्या मैं सज्दा करूँ एक शख़्स को जिसको तूने बनाया मिट्टी का। (61) कहने लगा भला देख तू यह शख़्स जिसको तूने मुझसे बढ़ा दिया अगर तू मुझको ढील दे क़ियामत के दिन तक तो मैं इसकी औलाद को ढाँटी दे लूँ मगर थोड़े से। (62) फ़रमाया जा फिर जो कोई तेरे साथ हुआ उनमें से सो दोज़ख़ है तुम सब की सज़ा, पूरा बदला। (63) और घबरा ले उनमें से जिसको तू घबरा सके अपनी आवाज़ से, और ले आ उन पर अपने सवार और प्यादे और साझा कर उनसे माल और औलाद में, और वायदा दे उनको और कुछ नहीं वायदा देता उनको शैतान

इल्ला ग़ुरूरा (64) इन्-न अ़िबादी लै-स ल-क अ़लैहिम् सुल्तानुन्, व कफ़ा बिरब्बि-क वकीला (65)	मगर दग़ाबाज़ी। (64) वे जो मेरे बन्दे हैं उन पर नहीं तेरी हुकूमत, और तेरा रब काफ़ी है काम बनाने वाला। (65)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त याद रखने के क़ाबिल है) जबकि हमने फ़रिश्तों से कहा कि आदम को सज्दा करो, तो उन सब ने सज्दा किया मगर इब्लीस "यानी शैतान" ने (न किया और) कहा कि क्या मैं ऐसे शख़्स को सज्दा करूँ जिसको आपने मिट्टी से बनाया है (इस पर मरदूद हो गया। उस वक़्त) कहने लगा कि इस शख़्स को जो आपने मुझ पर फ़ौक़ियत "यानी बरतरी" दी है (और इसी बिना पर इसको सज्दा करने का मुझे हुक्म दिया है) तो भला बताईये तो (इसमें क्या फ़ज़ीलत है जिसकी वजह से मैं मरदूद हुआ) अगर आपने (मेरी दरख़्वास्त के मुताबिक़) मुझको क़ियामत के ज़माने तक (मौत से) मोहलत दे दी तो मैं (भी) सिवाय थोड़े-से लोगों के (जो नेक व परहेज़गार होंगे बाक़ी) इसकी तमाम औलाद को अपने क़ाबू में कर लूँगा (यानी गुमराह कर दूँगा)। इरशाद हुआ— जा (जो तुझसे हो सके कर ले) जो शख़्स उनमें से तेरे साथ हो लेगा तो तुम सब की सज़ा जहन्नम है, सज़ा पूरी। और उनमें से जिस-जिस पर तेरा क़ाबू चले, अपनी चीख़-पुकार से (यानी बहकाने और बुरे ख़्यालात दिल में डालने से) उसका क़दम (सही रास्ते से) उखाड़ देना, और उन पर अपने सवार और प्यादे चढ़ा लाना (कि तेरा सारा लश्कर मिलकर गुमराह करने में ख़ूब ज़ोर लगाये) और उनके माल और औलाद में अपना साझा कर लेना (यानी माल व औलाद को गुमराही का ज़रिया बना देना जैसा कि यह चीज़ सामने आई), और उनसे (झूठे-झूठे) वायदे करना (कि क़ियामत में गुनाहों पर पकड़ न होगी और ये सब बातें शैतान को डाँट-डपट और चेतावनी के तौर पर कही गई हैं) और शैतान उन लोगों से बिल्कुल झूठे वायदे करता है (यह बयान हो रहे मज़मून से हटकर एक बात थी आगे फिर शैतान को ख़िताब है)। मेरे ख़ास बन्दों पर तेरा ज़रा भी क़ाबू न चलेगा और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! उसका क़ाबू मुख़्लिस लोगों पर क्योंकर चले क्योंकि) आपका रब (उनका) कारसाज़ काफ़ी है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

'ल-अह्तनिकन्-न'। एहतिनाक के मायने हैं किसी चीज़ को तहस-नहस और फ़ना कर देना या पूरी तरह उस पर ग़ालिब आना। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) 'वस्तफ़्ज़िज़्'। इस्तिफ़ज़ाज़ के असल मायने काटने के हैं, मुराद इस जगह हक़ से काट देना है। 'बिसौति-क'। लफ़्ज़ 'सौत' आवाज़ के मायने में परिचित है और शैतान की आवाज़ क्या है इसके बारे में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि गाने, बाजे और खेल-तमाशे की आवाज़ें यही शैतान की आवाज़

है जिससे वह लोगों को हक़ से हटा और काट देता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इससे मालूम हुआ कि हर तरह का बाजा, संगीत और गाना बजाना हराम है। (क़ुर्तुबी)

इब्लीस (शैतान) ने हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम को सज्दा न करने के वक़्त दो बातें कही थीं– एक यह कि आदम अ़लैहिस्सलाम मिट्टी से पैदा किये गये और मैं आग की मख़्लूक़ हूँ, आपने मिट्टी को आग पर क्यों बरतरी और बड़ाई दे दी। यह सवाल अल्लाह के हुक्म के मुक़ाबले में हुक्म की हिक्मत मालूम करने से संबन्धित था जिसका किसी मामूर (जिसको किसी काम का हुक्म दिया जाये) को हक़ नहीं। अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से मामूर (हुक्म दिये गये शख़्स) को तो हिक्मत और वजह पूछने का हक़ क्या होता दुनिया में ख़ुद इनसान अपने नौकर को इसका हक़ नहीं देता कि वह किसी काम को कहे तो नौकर वह काम करने के बजाय आक़ा से पूछे कि इस काम में क्या हिक्मत है। इसलिये उसका यह सवाल नाक़ाबिले जवाब क़रार देकर यहाँ इसका जवाब नहीं दिया गया। इसके अ़लावा ज़ाहिर जवाब यही है कि किसी चीज़ को किसी दूसरी चीज़ पर बरतरी व बड़ाई देने का हक़ उसी ज़ात को है जिसने उनको पैदा किया और पाला है, वह जिस वक़्त जिस चीज़ को दूसरी चीज़ पर बड़ाई दे दे वही अफ़ज़ल हो जायेगी।

दूसरी बात यह कही थी कि अगर क़ियामत तक की ज़िन्दगी मिलने की मेरी दरख़्वास्त मन्ज़ूर कर ली गई तो मैं आदम की सारी औलाद को सिवाय चन्द लोगों के गुमराह कर डालूँगा। उक्त आयतों में हक़ तआ़ला ने इसका जवाब दे दिया कि मेरे ख़ास बन्दे जो मुख़्लिस हैं उन पर तो तेरा क़ाबू न चलेगा, चाहे तू अपना सारा लाव-लश्कर ले आये और पूरा ज़ोर ख़र्च करे, बाक़ी ग़ैर-मुख़्लिस अगर वे तेरे क़ाबू में आ गये तो उनका भी वही हाल होगा जो तेरा है कि जहन्नम के अ़ज़ाब में तुम सब गिरफ़्तार होगे। इसमें 'अज्लिब् अ़लैहिम् बिख़ैलि-क व रजिलि-क' में जो शैतानी लश्कर के सवार और प्यादों का ज़िक्र है इससे यह लाज़िम नहीं आता कि वास्तव में भी शैतान के कुछ अफ़राद सवार हों कुछ प्यादे, बल्कि यह मुहावरा पूरे लश्कर और पूरी ताक़त इस्तेमाल करने के लिये बोला जाता है। और अगर वास्तव में ऐसा हो कि कुछ शैतान सवार होते हों कुछ प्यादे तो इसमें भी कोई इनकार की वजह नहीं, और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जितने अफ़राद भी कुफ़्र व नाफ़रमानी की हिमायत के लिये लड़ने को चलते हैं वे सवार और प्यादे सब शैतान ही का सवार और प्यादा लश्कर है।

रहा यह मामला कि शैतान को यह कैसे मालूम हुआ कि वह आदम अ़लैहिस्सलाम की औलाद को बहकाकर गुमराह करने पर क़ादिर हो जायेगा, जिसकी बिना पर उसने यह दावा किया। तो मुम्किन है कि इनसान के वो तत्व जिनसे यह तैयार हुआ है उनको देखकर उसने यह समझ लिया हो कि इसके अन्दर नफ़्सानी इच्छाओं का ग़लबा होगा इसलिये बहकाने में आ जाना दुश्वार नहीं और इसमें भी कुछ दूर की और मुश्किल बात नहीं कि यह दावा भी बिल्कुल झूठा ही हो।

وَشَارِكْهُمْ فِى الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ

लोगों के मालों और औलाद में शैतान की शिर्कत (साझेदारी) का मतलब हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह बयान फ़रमाया कि मालों में जो माल नाजायज़ हराम तरीक़ों से हासिल किया जाये या हराम कामों में ख़र्च किया जाये यही शैतान की उसमें शिर्कत है, और औलाद में शैतान की शिर्कत हराम औलाद होने से भी होती है और इससे भी कि औलाद के नाम मुश्रिकों वाले रखे, या उनकी हिफ़ाज़त के लिये मुश्रिकों की रस्में अदा करे, या उनकी परवरिश के लिये आमदनी के हराम साधन और असबाब इख़्तियार करे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

رَبُّكُمُ الَّذِي يُزْجِي لَكُمُ الْفُلْكَ فِي الْبَحْرِ لِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِهِ ۚ إِنَّهُ كَانَ بِكُمْ رَحِيمًا ﴿٦٦﴾ وَإِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فِي الْبَحْرِ ضَلَّ مَنْ تَدْعُونَ إِلَّا إِيَّاهُ ۖ فَلَمَّا نَجَّاكُمْ إِلَى الْبَرِّ أَعْرَضْتُمْ ۚ وَكَانَ الْإِنْسَانُ كَفُورًا ﴿٦٧﴾ أَفَأَمِنْتُمْ أَنْ يَخْسِفَ بِكُمْ جَانِبَ الْبَرِّ أَوْ يُرْسِلَ عَلَيْكُمْ حَاصِبًا ثُمَّ لَا تَجِدُوا لَكُمْ وَكِيلًا ﴿٦٨﴾ أَمْ أَمِنْتُمْ أَنْ يُعِيدَكُمْ فِيهِ تَارَةً أُخْرَىٰ فَيُرْسِلَ عَلَيْكُمْ قَاصِفًا مِنَ الرِّيحِ فَيُغْرِقَكُمْ بِمَا كَفَرْتُمْ ۙ ثُمَّ لَا تَجِدُوا لَكُمْ عَلَيْنَا بِهِ تَبِيعًا ﴿٦٩﴾ وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِي آدَمَ وَحَمَلْنَاهُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ وَرَزَقْنَاهُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ وَفَضَّلْنَاهُمْ عَلَىٰ كَثِيرٍ مِمَّنْ خَلَقْنَا تَفْضِيلًا ﴿٧٠﴾

ع

रब्बुकुमुल्लज़ी युज़्जी लकुमुल्-फ़ुल्-क फ़िल्बह्रि लितब्तग़ू मिन् फ़ज़्लिही, इन्नहू का-न बिकुम् रहीमा (66) व इज़ा मस्सकुमुज़्ज़ुर्रु फ़िल्बह्रि ज़ल्-ल मन् तद्अ़ू-न इल्ला इय्याहु फ़-लम्मा नज्जाकुम् इलल्-बर्रि अअ़्रज़्तुम्, व कानल्-इन्सानु कफ़ूरा (67) अ-फ़-अमिन्तुम् अंय्यख़्सि-फ़ बिकुम् जानिबल्-बर्रि औ युर्सि-ल अ़लैकुम् हासिबन् सुम्-म ला तजिदू लकुम् वकीला (68) अम् अमिन्तुम् अंय्युअ़ी-दकुम् फ़ीहि ता-रतन् उख़्रा फ़युर्सि-ल अ़लैकुम् क़ासिफ़म्-	तुम्हारा रब वह है जो चलाता है तुम्हारे वास्ते कश्ती दरिया में ताकि तलाश करो उसका फ़ज़्ल, वही है तुम पर मेहरबान। (66) और जब आती है तुम पर आफ़त दरिया में भूल जाते हो जिनको तुम पुकारा करते थे अल्लाह के अ़लावा, फिर जब बचा लाया तुमको ख़ुश्की में फिर जाते हो, और है इनसान बड़ा नाशुक्रा। (67) सो क्या तुम बेडर हो गये इससे कि धंसा दे तुमको जंगल के किनारे या भेज दे तुम पर आँधी पत्थर बरसाने वाली फिर न पाओ अपना कोई निगहबान। (68) या बेडर हो गये हो इससे कि फिर ले जाये तुमको दरिया में दूसरी बार, फिर भेजे तुम पर एक सख़्त झोंका हवा का,

मिनर्‌-रीहि फ़युग्‌रि-क़कुम्‌ बिमा कफ़र्तुम्‌ सुम्‌-म ला तजिदू लकुम्‌ अ़लैना बिही तबीआ़ (69) व ल-क़द्‌ कर्रम्ना बनी आद-म व हमल्नाहुम्‌ फ़िल्बर्रि वल्बह्रि व रज़क़्नाहुम्‌ मिनत्तय्यिबाति व फ़ज़्ज़ल्नाहुम्‌ अ़ला कसीरिम्‌-मिम्मन्‌ ख़लक़्ना तफ़्ज़ीला (70) ✿	फिर डुबा दे तुमको बदले में इस नाशुक्री के, फिर न पाओ अपनी तरफ़ से हम पर उसका कोई पूछगछ करने वाला। (69) और हमने इज़्ज़त दी है आदम की औलाद को और सवारी दी उनको जंगल और दरिया में और रोज़ी दी हमने उनको सुथरी चीज़ों से और बढ़ा दिया उनको बहुतों से जिनको पैदा किया हमने बड़ाई देकर। (70) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इनसे पहले की आयतों में तौहीद को साबित करने और शिर्क के बातिल होने का बयान था, अब इन आयतों में यही मज़मून एक ख़ास अन्दाज़ से बयान किया गया है जिसका हासिल यह है कि हक़ तआ़ला की बेशुमार अ़ज़ीमुश्शान नेमतें जो इनसानों पर हर वक़्त नाज़िल होती हैं उनको बयान करके यह बतलाना मन्ज़ूर है कि इन तमाम नेमतों का बख़्शने वाला सिवाय एक हक़ तआ़ला के कोई नहीं हो सकता, और सब नेमतें उसकी हैं तो उसके साथ किसी दूसरे को शरीक ठहराना बड़ी गुमराही है। और इरशाद फ़रमाया कि) तुम्हारा रब ऐसा (नेमत देने वाला) है कि तुम्हारे (नफ़े के) लिये कश्ती को दरिया में ले चलता है ताकि तुम उसके रिज़्क़ की तलाश करो (इसमें इशारा है कि पानी का सफ़र तिजारत के लिये उमूमन बड़े नफ़े का सबब होता है) बेशक वह तुम्हारे हाल पर बहुत मेहरबान है।

और जब तुमको दरिया में कोई तकलीफ़ पहुँचती है (जैसे दरिया की लहर और हवा के तूफ़ान से डूबने का ख़तरा) तो सिवाय ख़ुदा के और जिस जिसकी तुम इबादत करते थे सब ग़ायब हो जाते हैं (कि न तुम्हें ख़ुद ही उस वक़्त उनका ख़्याल आता है न उनको पुकारते हो और पुकारो भी तो उनसे किसी इमदाद की ज़र्रा बराबर उम्मीद नहीं, यह ख़ुद अ़मली तौर पर तुम्हारी तरफ़ से तौहीद "यानी अल्लाह के एक होने और उसके अ़लावा किसी के ख़ुदा व माबूद न होने" का इक़रार और शिर्क को बातिल ठहराना है) फिर जब तुमको ख़ुश्की की तरफ़ बचा लाता है तो तुम फिर उससे रुख़ फेर लेते हो, और इनसान है बड़ा नाशुक्रा (कि इतनी जल्दी अल्लाह के इनाम और अपने फ़रियाद करने व गिड़गिड़ाने को भूल जाता है, और तुम जो ख़ुश्की में पहुँचकर उससे अपना रुख़ फेर लेते हो) तो क्या तुम इस बात से बेफ़िक्र हो बैठे हो कि तुमको ख़ुश्की की तरफ़ लाकर ही ज़मीन में धंसा दे (मतलब यह है कि अल्लाह के नज़दीक दरिया और ख़ुश्की में कोई फ़र्क़ नहीं, वह जैसे दरिया में ग़र्क़ कर सकता है ऐसा ही ख़ुश्की में

भी ज़मीन में धंसाकर ग़र्क़ कर सकता है) या तुम पर कोई ऐसी सख़्त हवा भेज दे जो कंकर पत्थर बरसाने लगे (जैसा कि आ़द क़ौम ऐसे ही हवा के तूफ़ान से हलाक की गई थी) फिर तुम ख़ुदा के अ़लावा किसी को अपना कारसाज़ न पाओ। या तुम इससे बेफ़िक्र हो गये कि ख़ुदा तआ़ला फिर तुमको दरिया ही में दोबारा ले जाये, फिर तुम पर हवा का सख़्त तूफ़ान भेज दे, फिर तुमको तुम्हारे कुफ़्र के सबब डुबो दे, फिर इस बात पर (यानी डुबो देने पर) कोई हमारा पीछा करने वाला भी तुमको न मिले (जो हम से तुम्हारा बदला ले सके)। और हमने आदम की औलाद को (विशेष सिफ़तें देकर) इज़्ज़त दी, और हमने उनको ख़ुश्की और दरिया में (जानवरों और कश्तियों पर) सवार किया और उम्दा-उम्दा चीज़ें उनको अ़ता फ़रमाईं। और हमने उनको अपनी बहुत-सी मख़्लूक़ात पर बरतरी दी।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसान की बड़ाई अक्सर मख़्लूक़ात पर किस वजह से है?

आख़िरी आयत में आदम की औलाद (यानी इनसान) की अक्सर मख़्लूक़ात पर बरतरी व बड़ाई का ज़िक्र है। इसमें दो बातें ध्यान देने के क़ाबिल हैं अव्वल यह कि यह अफ़ज़ल व बेहतर होना किन सिफ़ात और किन कारणों की बिना पर है। दूसरे यह कि इसमें बड़ाई अक्सर मख़्लूक़ात पर देना बयान फ़रमाया है इससे क्या मुराद है?

पहली बात की तफ़सील यह है कि हक़ तआ़ला ने इनसान को विभिन्न हैसियतों से ऐसी विशेषतायें अ़ता फ़रमाई हैं जो दूसरी मख़्लूक़ात में नहीं, जैसे सूरत की ख़ूबसूरती, जिस्म में दरमियानापन, मिज़ाज में संतुलन, क़द-काठी डील-डोल में दरमियानापन जो इनसान को अ़ता हुआ है किसी दूसरे हैवान में नहीं। इसके अ़लावा अ़क्ल व शऊर में इसको ख़ास विशेषता और दूसरों से अलग ख़ुसूसियत बख़्शी गयी है जिसके ज़रिये वह ऊपर नीचे की तमाम कायनात से अपने काम निकालता है, उसको अल्लाह तआ़ला ने इसकी क़ुदरत बख़्शी है कि अल्लाह की मख़्लूक़ात से ऐसे मिश्रण और चीज़ें तैयार करे जो उसके रहने-सहने, चलने-फिरने और खाने व लिबास में उसके विभिन्न तौर पर काम आयें।

बोलने व बात करने और समझने व समझाने का जो मलका (महारत व कमाल) उसको अ़ता हुआ है वह किसी दूसरे हैवान को नहीं। इशारों के ज़रिये अपने दिल की बात दूसरों को बतला देना, तहरीर और ख़त के ज़रिये दिल की बात दूसरों तक पहुँचाना यह सब इनसान ही की विशेषतायें हैं। कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि हाथ की उंगलियों से खाना भी इनसान ही की विशेष सिफ़त है, इसके सिवा तमाम जानवर अपने मुँह से खाते हैं, अपने खाने की चीज़ों को विभिन्न चीज़ों से तैयार करके लज़ीज़ और मुफ़ीद बनाने का काम भी इनसान ही करता है; बाक़ी सब जानवर अकेली-अकेली चीज़ें खाते हैं। कोई कच्चा गोश्त खाता है, कोई घास कोई फल वग़ैरह, बहरहाल सब अकेली-अकेली चीज़ें खाते हैं, इनसान ही अपनी ग़िज़ा के लिये इन

सब चीज़ों के मुरक्कबात (मिलीजुली चीज़ें और पकवान) तैयार करता है और सब से बड़ी फ़ज़ीलत अक़्ल व शऊर की है जिससे वह अपने ख़ालिक़ और मालिक को पहचाने और उसकी मर्ज़ी और नामर्ज़ी को मालूम करके उसकी पसन्दीदा बातों का पालन करे नापसन्दीदा बातों से परहेज़ करे, और अक़्ल व शऊर के एतिबार से मख़्लूक़ात की तक़सीम इस तरह है कि आम जानवरों में इच्छायें और शहवतें (नफ़्सानी तक़ाज़े) हैं अक़्ल व शऊर नहीं, फ़रिश्तों में अक़्ल व शऊर भी है इच्छायें और शहवतें नहीं। इनसान में ये दोनों चीज़ें जमा हैं, अक़्ल व शऊर भी है और इच्छायें और शहवतें (नफ़्सानी तक़ाज़े) भी हैं इसी वजह से जब वह शहवतों व इच्छाओं को अक़्ल व शऊर के ज़रिये दबा लेता है और अल्लाह तआ़ला की नापसन्दीदा चीज़ों से अपने आपको बचा लेता है तो उसका मक़ाम बहुत-से फ़रिश्तों से भी ऊँचा हो जाता है।

दूसरी बात कि आदम की औलाद को अक्सर मख़्लूक़ात पर फ़ज़ीलत देने का क्या मतलब है, इसमें तो किसी को मतभेद की गुंजाईश नहीं कि दुनिया की ऊपर नीचे की तमाम मख़्लूक़ात और तमाम जानवरों पर इनसान को फ़ज़ीलत हासिल है, इसी तरह जिन्नात जो अक़्ल व शऊर में इनसान ही की तरह हैं उन पर भी इनसान का अफ़ज़ल होना सबके नज़दीक माना हुआ है, अब सिर्फ़ मामला फ़रिश्तों का रह जाता है कि इनसान और फ़रिश्ते में कौन अफ़ज़ल (बेहतर और ऊँचे रुतबे वाला) है, इसमें तहक़ीक़ी बात यह है कि इनसानों में आम मोमिन और नेक लोग जैसे औलिया-अल्लाह वे आम फ़रिश्तों से अफ़ज़ल हैं, मगर ख़ास फ़रिश्ते जैसे जिब्रील, मीकाईल वग़ैरह उन आम नेक मोमिनों से अफ़ज़ल हैं, और मोमिनों में से ख़ास हज़रात जैसे अम्बिया अलैहिमुस्सलाम, वे ख़ास फ़रिश्तों से भी अफ़ज़ल हैं। बाक़ी रहे काफ़िर व बदकार इनसान, वे ज़ाहिर है कि फ़रिश्तों से तो क्या अफ़ज़ल होते वे तो जानवरों से भी असल मक़सद यानी कामयाबी में अफ़ज़ल नहीं, उनके मुताल्लिक़ तो क़ुरआन का फ़ैसला यह है:

أُولَٰئِكَ كَالْأَنْعَامِ بَلْ هُمْ أَضَلُّ

यानी ये तो चौपाये जानवरों की तरह हैं बल्कि उनसे भी ज़्यादा गुमराह हैं। (तफ़सीरे मज़हरी) वल्लाहु आलम।

يَوْمَ نَدْعُوا كُلَّ أُنَاسٍ بِإِمَامِهِمْ ۖ فَمَنْ أُوتِيَ كِتَابَهُ بِيَمِينِهِ فَأُولَٰئِكَ يَقْرَءُونَ كِتَابَهُمْ وَلَا يُظْلَمُونَ فَتِيلًا ۝ وَمَنْ كَانَ فِي هَٰذِهِ أَعْمَىٰ فَهُوَ فِي الْآخِرَةِ أَعْمَىٰ وَأَضَلُّ سَبِيلًا ۝

यौ-म नद्अू कुल्-ल उनासिम् बि-इमामिहिम् फ़-मन् ऊति-य किताबहू बियमीनिही फ़-उलाइ-क यक़्रऊ-न किताबहुम् व ला युज़्लमू-न	जिस दिन हम बुलायेंगे हर फ़िर्क़े को उन के सरदारों के साथ सो जिसको मिला उसका आमाल नामा उसके दाहिने हाथ में सो वे लोग पढ़ेंगे अपना लिखा और ज़ुल्म न होगा उन पर एक धागे का। (71)

फ़तीला (71) व मन् का-न फ़ी हाज़िही अअ्मा फ़हु-व फ़िल्आख़िरति अअ्मा व अज़ल्लु सबीला (72)	और जो कोई रहा इस जहान में अंधा सो वह बाद के जहान में भी अंधा है और बहुत दूर पड़ा हुआ राह से। (72)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(उस दिन को याद करना चाहिये) जिस दिन हम तमाम आदमियों को उनके आमाल नामे समेत (मैदाने हश्र में) बुलाएँगे (और वो आमाल नामे उड़ा दिये जायेंगे, फिर किसी के दाहिने हाथ और किसी के बायें हाथ में आ जायेंगे)। फिर जिसका आमाल नामा उसके दाहिने हाथ में दिया जायेगा (और ये ईमान वाले होंगे) तो ऐसे लोग अपना आमाल नामा (ख़ुश होकर) पढ़ेंगे, और उनका ज़रा भी नुक़सान न किया जायेगा (यानी उनके ईमान और आमाल का सवाब पूरा पूरा मिलेगा, ज़रा न कम होगा चाहे ज़्यादा मिल जाये, और अ़ज़ाब से निजात भी होगी चाहे शुरू ही में या गुनाहों की सज़ा भुगतने के बाद)। और जो शख़्स दुनिया में (निजात का रास्ता देखने से) अंधा रहा, सो वह आख़िरत में भी (निजात की मन्ज़िल तक पहुँचने से) अंधा रहेगा; और (बल्कि वहाँ दुनिया से भी) ज़्यादा भटका हुआ होगा (क्योंकि दुनिया में तो गुमराही का इलाज मुम्किन था वहाँ यह भी न हो सकेगा, ये वे लोग होंगे जिनका आमाल नामा उनके बायें हाथ में दिया जायेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

يَوْمَ نَدْعُوْا كُلَّ اُنَاسٍ م بِاِمَامِهِمْ

इस आयत में लफ़्ज़ इमाम किताब के मायने में है जैसा कि सूरः यासीन में है:

وَكُلَّ شَيْءٍ اَحْصَيْنٰهُ فِيْٓ اِمَامٍ مُّبِيْنٍ٥

इसमें इमामे मुबीन से मुराद स्पष्ट और खुली किताब है, और किताब को इमाम इसलिये कहा जाता है कि भूल-चूक और मतभेद के वक़्त किताब ही की तरफ़ रुजू किया जाता है जैसे किसी पेशवा और इमाम की तरफ़ रुजू किया जाता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और तिर्मिज़ी की हदीस हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से (जिसको तिर्मिज़ी ने हसन ग़रीब कहा है) उससे भी यही मालूम होता है कि इमाम से मुराद इस आयत में किताब है। हदीस के अलफ़ाज़ ये हैं:

يَوْمَ نَدْعُوْا كُلَّ اُنَاسٍ م بِاِمَامِهِمْ. قَالَ يُدْعٰى اَحَدُهُمْ فَيُعْطٰى كِتَابَهٗ بِيَمِيْنِهٖ. (الحديث بطوله)

"आयत 'यौ-म नद्ऊ़ कुल्-ल उनासिम् बि-इमामिहिम्' की तफ़सीर में ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि एक शख़्स को बुलाया जायेगा और उसका आमाल नामा दाहिने हाथ में दे दिया जायेगा।"

इस हदीस से यह भी मुतैयन हो गया कि इमाम किताब के मायने में है, और यह भी मालूम हो गया कि किताब से मुराद आमाल नामा है, इसलिये ख़ुलासा-ए-तफ़सीर जो बयानुल-क़ुरआन से लिया गया है उसमें इसका तर्जुमा आमाल नामे से कर दिया गया है।

और हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु और मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि वग़ैरह मुफ़स्सिरीन से यहाँ लफ़्ज़ इमाम के मायने मुक़्तदा और पेशवा के भी मन्क़ूल हैं, कि हर शख़्स को उसके मुक़्तदा व पेशवा का नाम लेकर पुकारा जाये, चाहे वह मुक़्तदा व पेशवा अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके नायब बुज़ुर्ग व उलेमा हों या गुमराही और नाफ़रमानी की तरफ़ दावत देने वाले पेशवा (लीडर व सरग़ना)। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इस मायने के लिहाज़ से आयत का मतलब यह होगा कि मैदाने हश्र में हर शख़्स को उसके मुक़्तदा और पेशवा के नाम से पुकारा जायेगा और सब को एक जगह जमा कर दिया जायेगा, जैसे इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के पैरोकारों, मूसा अ़लैहिस्सलाम के मानने वालों व ईसा अ़लैहिस्सलाम के पैरोकारों, मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पैरोकारों, फिर इनके तहत में मुम्किन है कि उन पैरोकारों और मानने वालों के डायरेक्ट पेशवाओं का नाम भी लिया जाये।

नामा-ए-आमाल

क़ुरआन मजीद की अनेक आयतों से मालूम होता है कि बायें हाथ में आमाल नामा सिर्फ़ काफ़िरों को दिया जायेगा जैसा कि एक आयत में है:

اِنَّهٗ كَانَ لَا يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ الْعَظِيْمِ.

और एक दूसरी आयत में है:

اِنَّهٗ ظَنَّ اَنْ لَّنْ يَّحُوْرَ.

पहली आयत में स्पष्ट रूप से ईमान की नफ़ी गई है और दूसरी में आख़िरत का इनकार बयान हुआ है वह भी कुफ़्र ही है। इस तुलना करने से मालूम होता है कि दाहिने हाथ में आमाल नामा ईमान वालों को दिया जायेगा चाहे मुत्तक़ी हों या गुनाहगार, मोमिन अपने आमाल नामे को ख़ुशी के साथ पढ़ेगा बल्कि दूसरों को भी पढ़वायेगा, यह ख़ुशी ईमान की और हमेशा के अ़ज़ाब से निजात की होगी अगरचे कुछ आमाल पर सज़ा भी होगी।

और क़ुरआने करीम में नामा-ए-आमाल दाहिने या बायें हाथ में दिये जाने की कैफ़ियत बयान नहीं हुई लेकिन कुछ हदीसों में आमाल नामों के उड़ाये जाने का ज़िक्र आया है। (इसको इमाम अहमद ने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत से मरफ़ूअ़न नक़ल किया है) और हदीस की कुछ रिवायतों में है कि सब आमाल नामे अ़र्श के नीचे जमा होंगे, फिर एक हवा चलेगी जो सब को उड़ाकर लोगों के हाथ में पहुँचा देगी, किसी के दाहिने हाथ में किसी के बायें हाथ में। (बयानुल-क़ुरआन, रूहुल-मआनी के हवाले से)

وَاِنۡ كَادُوۡا لَيَفۡتِنُوۡنَكَ عَنِ الَّذِىۡۤ اَوۡحَيۡنَاۤ اِلَيۡكَ لِتَفۡتَرِىَ عَلَيۡنَا غَيۡرَهٗ ۖ وَاِذًا لَّاتَّخَذُوۡكَ خَلِيۡلًا ۝ وَلَوۡلَاۤ اَنۡ ثَبَّتۡنٰكَ لَقَدۡ كِدْتَّ تَرۡكَنُ اِلَيۡهِمۡ شَيۡـًٔا قَلِيۡلًا ۝ اِذًا لَّاَذَقۡنٰكَ ضِعۡفَ الۡحَيٰوةِ وَضِعۡفَ الۡمَمَاتِ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ عَلَيۡنَا نَصِيۡرًا ۝ وَاِنۡ كَادُوۡا لَيَسۡتَفِزُّوۡنَكَ مِنَ الۡاَرۡضِ لِيُخۡرِجُوۡكَ مِنۡهَا وَاِذًا لَّا يَلۡبَثُوۡنَ خِلٰفَكَ اِلَّا قَلِيۡلًا ۝ سُنَّةَ مَنۡ قَدۡ اَرۡسَلۡنَا قَبۡلَكَ مِنۡ رُّسُلِنَا وَلَا تَجِدُ لِسُنَّتِنَا تَحۡوِيۡلًا ۝

ع ८

व इन् कादू लयफ़्तिनू-न-क अ़निल्लज़ी औहैना इलै-क लितफ़्तरि-य अ़लैना ग़ैरहू व इज़ल्-लत्त-ख़ज़ू-क ख़लीला (73) व लौ ला अन् सब्बत्ना-क ल-क़द् कित्-त तर्-कनु इलैहिम् शैअन् क़लीला (74) इज़ल् ल-अज़क़्ना-क ज़िअ़्फ़ल्-हयाति व ज़िअ़्फ़ल्-ममाति सुम्-म ला तजिदु ल-क अ़लैना नसीरा (75) व इन् कादू लयस्तफ़िज़्ज़ू-न-क मिनल्अर्ज़ि लियुख़्रिजू-क मिन्हा व इज़ल्-ला यल्बसू-न ख़िलाफ़-क इल्ला क़लीला (76) सुन्न-त मन् क़द् अर्सल्ना क़ब्ल-क मिर्रुसुलिना व ला तजिदु लिसुन्नतिना तह़्वीला (77) ✿

और वे लोग तो चाहते थे कि तुझको बिचला दें उस चीज़ से कि जो वही भेजी हमने तेरी तरफ़, ताकि झूठ बना लाये तू हम पर वही के सिवा और तब तो बना लेते तुझको दोस्त। (73) और अगर यह न होता कि हमने तुझको संभाले रखा तो तू लग जाता झुकने उनकी तरफ़ थोड़ा सा। (74) तब तो ज़रूर चखाते हम तुझको दुगना मज़ा ज़िन्दगी में और दुगना मरने में फिर न पाता तू अपने वास्ते हम पर मदद करने वाला। (75) और वे तो चाहते थे कि घबरा दें तुझको इस ज़मीन से ताकि निकाल दें तुझको यहाँ से और उस वक़्त न ठहरेंगे वे भी तेरे पीछे मगर थोड़ा। (76) दस्तूर चला आता है उन रसूलों का जो तुझसे पहले भेजे हमने अपने पैग़म्बर और न पायेगा तू हमारे दस्तूर में फ़र्क़। (77) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ये काफ़िर लोग (अपनी मज़बूत तदबीरों के ज़रिये) आपको उस चीज़ से बिचलाने (और हटाने) ही लगे थे जो हमने आप पर वही के ज़रिये से भेजी है (यानी इस कोशिश में लगे थे कि आप से अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ अ़मल करा दें और) ताकि आप उस (अल्लाह के

हुक्म) के सिवा हमारी तरफ़ (अमली तौर पर) ग़लत बात की निस्बत कर दें (क्योंकि नबी का अमल शरीअत के ख़िलाफ़ नहीं होता इसलिये अगर नऊज़ु बिल्लाहि आप से कोई अमल ख़िलाफ़े शरीअत हो जाता तो यह लाज़िम आता कि उस ख़िलाफ़े शरीअत अमल को गोया अल्लाह की तरफ़ मन्सूब कर रहे हैं) और ऐसी हालत में आपको गहरा दोस्त बना लेते। और (उनकी यह शरारत ऐसी सख़्त थी कि) अगर हमने आपको साबित-क़दम "सही राह पर जमने वाला" न बनाया होता (यानी ख़ताओं से सुरक्षित न किया होता) तो आप उनकी तरफ़ कुछ-कुछ झुकने के क़रीब जा पहुँचते। (और) अगर ऐसा हो जाता (कि आपका कुछ मैलान उनकी बात की तरफ़ होता) तो हम आपको (इस वजह से कि अल्लाह की बारगाह के क़रीबी व ख़ास लोगों का मक़ाम बहुत बुलन्द है) ज़िन्दगी की हालत में भी और मौत के बाद भी दोहरा अ़ज़ाब चखाते, फिर आप हमारे मुक़ाबले में कोई मददगार भी न पाते (मगर चूँकि आपको हमने गुनाहों से सुरक्षित और ख़ुदाई शरीअत पर जमने और मज़बूत रहने वाला बनाया है इसलिये उनकी तरफ़ ज़रा भी मैलान न हुआ और इस अ़ज़ाब से बच गये)।

और ये (काफ़िर) लोग इस (मक्का या मदीना की) सरज़मीन से आपके क़दम ही उखाड़ने लगे थे ताकि आपको इससे निकाल दें, और अगर ऐसा हो जाता तो आपके बाद ये भी बहुत कम (यहाँ) ठहरने पाते। जैसा कि उन अम्बिया के बारे में (हमारा) क़ानून व दस्तूर रहा है जिनको आपसे पहले हमने रसूल बनाकर भेजा था (कि जब उनकी क़ौम ने उनको वतन से निकाला तो फिर उस क़ौम को भी वहाँ रहना नसीब नहीं हुआ) और आप हमारे क़ायदे में बदलाव न पाएँगे।

मआरिफ़ व मसाईल

इन ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली तीन आयतें एक ख़ास वाकिए से संबन्धित हैं। तफ़सीरे मज़हरी में इस वाकिए के निर्धारण के बारे में चन्द रिवायतें नक़ल की हैं जिनमें से क़ुरआनी इशारात से सबसे ज़्यादा क़रीब और ताईद करने वाला यह वाक़िआ है जो हज़रत ज़ुबैर बिन नुफ़ैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इब्ने अबी हातिम ने नक़ल किया है कि मक्का के क़ुरैश में के चन्द सरदार नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि अगर आप वाक़ई हमारी तरफ़ (नबी बनाकर) भेजे गये हैं तो फिर अपनी मज्लिस से उन ग़रीब बुरी हालत वाले लोगों को हटा दीजिये जिनके साथ बैठना हमारे लिये तौहीन की बात है, तो फिर हम भी आपके साथी और दोस्त हो जायेंगे। उनकी इस बात पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को कुछ ख़्याल पैदा हुआ कि इनकी बात पूरी कर दें, शायद ये मुसलमान हो जायें, जिस पर यह आयत नाज़िल हुई।

इस आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़बर दे दी गयी कि उनकी बात फ़ितना है, उनकी दोस्ती भी फ़ितना है, आपको उनकी बात नहीं माननी चाहिये और फिर इरशाद फ़रमाया कि अगर हमारी तरफ़ से आपकी तरबियत और साबित-क़दम रखने का एहतिमाम न होता तो कुछ बईद नहीं था कि आप उनकी बात की तरफ़ मैलान के थोड़े से क़रीब हो जाते।

तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस आयत से यह बात स्पष्ट तौर पर समझी जाती है कि क़ुरैश के काफ़िरों की बेहूदा और ग़लत बातों की तरफ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मैलान (रुझान और झुकाव) का तो कोई गुमान व ख़्याल ही न था हाँ मैलान के क़रीब हो जाने का और वह भी बहुत मामूली-सी हद में संभावना थी मगर अल्लाह तआ़ला ने मासूम (सुरक्षित) बनाकर उससे भी बचा लिया। ग़ौर किया जाये तो यह आयत अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की आला तरीन पाकीज़ा पैदाईश व तबीयत पर बड़ी दलील है कि अगर पैग़म्बराना सुरक्षा भी न होती तब भी नबी की फ़ितरत ऐसी थी कि काफ़िरों की बेहूदा और ग़लत बात की तरफ़ मैलान हो जाना उससे मुम्किन न था, हाँ मैलान के कुछ क़रीब वह भी बहुत कम का शुब्हा व गुमान था जो पैग़म्बराना हिफ़ाज़त व सुरक्षा ने ख़त्म कर दिया।

اِذًا لَّاَذَقْنٰكَ ضِعْفَ الْحَيٰوةِ وَضِعْفَ الْمَمَاتِ

यानी अगर मान लो जबकि यह असंभव है कि आप उनकी ग़लत रविश की तरफ़ मैलान के क़रीब हो जाते तो आपका अ़ज़ाब दुनिया में भी दोहरा होता और मौत के बाद क़ब्र या आख़िरत में भी दोहरा होता, क्योंकि अल्लाह की बारगाह के क़रीबी व ख़ास हज़रात की मामूली-सी ग़लती भी बहुत बड़ी समझी जाती है और यह मज़मून तक़रीबन वही है जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों के मुताल्लिक़ क़ुरआने करीम में आया है:

يٰنِسَآءَ النَّبِيِّ مَنْ يَّاْتِ مِنْكُنَّ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ يُّضٰعَفْ لَهَا الْعَذَابُ ضِعْفَيْنِ

यानी ऐ नबी की औरतो! अगर तुम में से किसी ने खुली बेहयाई का काम किया तो उसको दोहरा अ़ज़ाब दिया जायेगा।

وَاِنْ كَادُوْا لَيَسْتَفِزُّوْنَكَ

इस्तिफ़ज़ाज़ के लफ़्ज़ी मायने काट देने के हैं, यहाँ मुराद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपने वतन व ठिकाने मक्का या मदीना से निकाल देना है और आयत के मायने यह हैं कि क़रीब था कि ये काफ़िर लोग आपको अपनी ज़मीन से निकाल दें और अगर वे ऐसा कर लेते तो इसकी सज़ा उनको यह मिलती कि वे भी आपके बाद ज़्यादा देर उस शहर में न रह पाते। यह एक दूसरे वाक़िए का बयान है और इसके मुतैयन करने में भी दो रिवायतें मन्क़ूल हैं एक वाक़िआ मदीना तय्यिबा का है कि मदीना के यहूद एक दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि "ऐ अबुल-क़ासिम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! अगर आप अपनी नुबुव्वत के दावे में सच्चे हैं तो आपको चाहिये कि मुल्क शाम में जाकर रहें क्योंकि मुल्क शाम ही मेहशर की ज़मीन है, और वही अम्बिया की ज़मीन है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर उनके कलाम का कुछ असर हुआ और तबूक की जंग के वक़्त जो मुल्के शाम का सफ़र हुआ तो आपका इरादा यह था कि मुल्के शाम को अपना एक ठिकाना बनायें मगर यह आयत नाज़िल हुई:

وَاِنْ كَادُوْا لَيَسْتَفِزُّوْنَكَ

(यानी आयत नम्बर 76) जिसमें अपको इस इरादे से रोक दिया गया, मगर इब्ने कसीर ने इस रिवायत को नक़ल करके नाक़ाबिले इत्मीनान क़रार दिया है और इस आयत का मिस्दाक़ (चरितार्थ) एक दूसरा वाक़िआ बतलाया है जो मक्का मुकर्रमा में पेश आया और इस सूरत का मक्की होना इसके लिये प्रबल इशारा है और वह वाक़िआ यह है कि एक मर्तबा क़ुरैश के काफ़िरों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मक्का मुकर्रमा से निकालने का इरादा किया, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाईः

وَاِنْ كَادُوْا لَيَسْتَفِزُّوْنَكَ

(यानी आयत नम्बर 76) और इसमें मक्का के काफ़िरों को इस पर चेताया कि अगर वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मक्का से निकाल देंगे तो फिर ख़ुद भी मक्का में देर तक चैन से न बैठ सकेंगे। इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इसी वाक़िए को आयत का मिस्दाक़ (चरितार्थ) होना ज़्यादा सही क़रार दिया है, और फिर बतलाया कि क़ुरआने करीम की यह वईद (वायदा व धमकी) भी मक्का के काफ़िरों ने खुली आँखों देख ली कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मक्का मुकर्रमा से हिजरत फ़रमाई तो मक्का वाले एक दिन भी मक्का में चैन से नहीं बैठ सके, सिर्फ़ डेढ़ साल के बाद अल्लाह तआ़ला ने उनको बदर के मैदान में जमा कर दिया, जहाँ उनके सत्तर सरदार मारे गये और उनकी ताक़त टूट गई, फिर उहुद की जंग के आख़िरी नतीजे में उन पर और ज़्यादा हैबत तारी हो गई और जंगे अहज़ाब के आख़िरी मुक़ाबले ने तो उनकी कमर ही तोड़ दी और हिजरत के आठवें साल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पूरा मक्का मुकर्रमा फ़तह कर लिया।

سُنَّةَ مَنْ قَدْ اَرْسَلْنَا

इस आयत (यानी आयत नम्बर 77) में बतलाया गया कि अल्लाह तआ़ला की आ़म आ़दत और क़ायदा पहले से यही चला आया है कि जब कोई क़ौम अपने नबी को उसके वतन से निकालती या निकलने पर मजबूर करती है तो फिर वह क़ौम भी वहाँ बाक़ी नहीं रखी जाती, उस पर ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब आता है।

اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوْكِ الشَّمْسِ اِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ ۭ اِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ مَشْهُوْدًا ۝ وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهٖ نَافِلَةً لَّكَ ڰ عَسٰٓى اَنْ يَّبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا مَّحْمُوْدًا ۝ وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِيْ مُدْخَلَ صِدْقٍ وَّاَخْرِجْنِيْ مُخْرَجَ صِدْقٍ وَّاجْعَلْ لِّيْ مِنْ لَّدُنْكَ سُلْطٰنًا نَّصِيْرًا ۝ وَقُلْ جَاۗءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ ۭ اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوْقًا ۝ وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَاۗءٌ وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ ۙ وَلَا يَزِيْدُ الظّٰلِمِيْنَ اِلَّا خَسَارًا ۝

अक़िमिस्सला-त लिदुलूकिश्शम्सि	क़ायम रख नमाज़ को सूरज ढलने से रात

इला ग़-सक़िल्लैलि व क़ुर्आनल्-फ़ज्रि, इन्-न क़ुर्आनल्-फ़ज्रि का-न मश्हूदा (78) व मिनल्लैलि फ़-तहज्जद् बिही नाफ़ि-लतल् ल-क अ़सा अंय्यब्अ़-स-क रब्बु-क मक़ामम्-मस्मूदा (79) व क़ुर्रब्बि अद्ख़िल्नी मुद्ख़-ल सिद्किंव्-व अख़्रिज्नी मुख़्र-ज सिद्किंव्-वज्अ़ल्-ली मिल्लदुन्-क सुल्तानन् नसीरा (80) व क़ुल् जाअल्-हक़्क़ु व ज़-हक़ल्-बातिलु, इन्नल्-बाति-ल का-न ज़हूक़ा (81) व नुनज़्ज़िलु मिनल्-क़ुर्आनि मा हु-व शिफ़ाउंव्-व रह्मतुल् लिल्-मुअ्मिनी-न व ला यज़ीदुज़्ज़ालिमी-न इल्ला ख़सारा (82)	के अंधेरे तक और क़ुरआन पढ़ना फजर का, बेशक क़ुरआन पढ़ना फजर का होता है 'रू-ब-रू'। (78) और कुछ रात जागता रह क़ुरआन के साथ यह ज़्यादती है तेरे लिये क़रीब है कि खड़ा कर दे तुझको तेरा रब मक़ाम-ए-महमूद में। (79) और कहे ऐ रब! दाख़िल कर मुझको सच्चा दाख़िल करना और निकाल मुझको सच्चा निकालना, और अ़ता कर दे मुझको अपने पास से हुकूमत की मदद। (80) और कह— आया सच और निकल भागा झूठ, बेशक झूठ है निकल भागने वाला। (81) और हम उतारते हैं क़ुरआन में से जिससे रोग दूर हों, और रहमत ईमान वालों के वास्ते और गुनाहगारों को तो इससे नुक़सान ही बढ़ता है। (82)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

सूरज ढलने के बाद से रात के अंधेरे तक नमाज़ें अदा किया कीजिए (इसमें ज़ोहर, अ़सर, मग़रिब, इशा चार नमाज़ें आ गईं जैसा कि हदीस में इस संक्षिप्तता की तफ़सील बयान कर दी गई है), और सुबह की नमाज़ भी (अदा करें), बेशक सुबह की नमाज़ (फ़रिश्तों के) हाज़िर होने का वक़्त है (सुबह का वक़्त चूँकि नींद से जागने का वक़्त है जिसमें सुस्ती का ख़तरा था इसलिये इसको अलग करके एहतिमाम के साथ बयान फ़रमाया और इसकी एक अतिरिक्त फ़ज़ीलत भी यह बयान कर दी कि इस वक़्त में फ़रिश्ते जमा होते हैं। इसकी तफ़सील हदीस से यह मालूम हुई कि इनसान की हिफ़ाज़त और उसके आमाल को लिखने वाले फ़रिश्ते दिन के अलग और रात के अलग हैं, सुबह की नमाज़ में फ़रिश्तों की दोनों जमाअ़तें जमा होती हैं, रात के फ़रिश्ते अपना काम ख़त्म करके और दिन के फ़रिश्ते अपना काम संभालने के लिये जमा हो जाते हैं। इसी तरह शाम को अ़सर की नमाज़ में दोनों जमाअ़तें जमा होती हैं, और ज़ाहिर है कि फ़रिश्तों का जमा होना बरकतों का सबब है)। और किसी क़द्र रात के हिस्से में भी (नमाज़ अदा

करें), यानी उसमें तहज्जुद पढ़ा कीजिए जो कि आपके लिये (पाँच फ़र्ज़ नमाज़ों के अ़लावा) एक ज़ायद चीज़ है (इस ज़ायद से मुराद कुछ हज़रात के नज़दीक एक ज़ायद फ़र्ज़ है जो ख़ास रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर फ़र्ज़ किया गया, और कुछ हज़रात ने ज़ायद से नफ़्लि मुराद ली है), उम्मीद (यानी वायदा) है कि आपका रब आपको मक़ाम-ए-महमूद में जगह देगा (मक़ाम-ए-महमूद से मुराद बड़ी शफ़ाअ़त का मक़ाम है जो मेहशर में तमाम इनसानों के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अ़ता होगा)।

और आप यह दुआ़ कीजिए कि ऐ मेरे रब! (मक्का से जाने के बाद) मुझको (जहाँ लेजाना हो) ख़ूबी (यानी राहत) के साथ पहुँचाईयो, और (जब मक्का से लेजाना हो तो) मुझको ख़ूबी (यानी राहत) के साथ ले जाईयो और मुझको अपने पास से (उन काफ़िरों पर) ऐसा ग़लबा दीजियो जिसके साथ (आपकी) नुसरत (और मदद) हो (जिससे वह ग़लबा बाक़ी रहने वाला और तरक़्क़ी करने वाला हो, वरना वक़्ती व अस्थायी ग़लबा तो कभी काफ़िरों को भी हो जाता है मगर उसके साथ अल्लाह की मदद नहीं होती इसलिये पायेदार नहीं होता)। और कह दीजिए कि (बस अब) हक़ (दीन ग़ालिब होने को) आया और बातिल गया-गुज़रा हुआ। वाक़ई बातिल चीज़ तो यूँ ही आती-जाती रहती है (हिजरत के बाद मक्का फ़तह हुआ तो ये सब वायदे पूरे हो गये)। और हम क़ुरआन में ऐसी चीज़ें नाज़िल करते हैं कि वो ईमान वालों के हक़ में तो शिफ़ा और रहमत है (क्योंकि वे उसको मानते और उस पर अ़मल करते हैं जिससे उन पर रहमत होती और बातिल अ़क़ीदों और फ़ासिद ख़्यालों से शिफ़ा होती है) और ज़ालिमों को उससे और उल्टा नुक़सान बढ़ता है (कि जब वे उसको नहीं मानते तो अल्लाह तआ़ला के क़हर व अ़ज़ाब के हक़दार हो जाते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

दुश्मनों के फ़रेब व जाल से बचने का बेहतरीन इलाज नमाज़ है

इनसे पहले की आयतों में इस्लाम के दुश्मनों की मुख़ालफ़त और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को विभिन्न प्रकार की तकलीफ़ों में मुब्तला करने की तदबीरें और उसका जवाब बयान हुआ था, उसके बाद ऊपर बयान हुई आयतों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को नमाज़ क़ायम करने का हुक्म देने में इस तरफ़ इशारा है कि दुश्मनों के फ़रेब व जाल और तकलीफ़ों से बचने का बेहतरीन इलाज नमाज़ का क़ायम करना है जैसा कि सूरः हिज्र की आयत में इससे ज़्यादा स्पष्ट अलफ़ाज़ में यह इरशाद है:

وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيْقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُوْلُوْنَ فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ وَكُنْ مِّنَ السّٰجِدِيْنَ۝

"यानी हम जानते हैं कि काफ़िरों की दिल दुखाने वाली बातों से आप तंगदिल (दुखी और परेशान) होते हैं तो आप अल्लाह की तारीफ़ के साथ तस्बीह किया करें और सज्दा करने वालों में से हो जायें।" (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इस आयत में दुश्मनों के सताने और तकलीफ़ें देने का इलाज अल्लाह के ज़िक्र, तारीफ़ व तस्बीह और नमाज़ में मशग़ूल हो जाने को क़रार दिया है। ज़िक्रुल्लाह और नमाज़ ख़ास तौर पर इनसे बचने का इलाज है, और यह भी कुछ दूर की बात नहीं कि दुश्मनों की तकलीफ़ों से बचना अल्लाह तआ़ला की मदद पर मौक़ूफ़ है और अल्लाह की मदद हासिल करने का सब से अफ़ज़ल ज़रिया नमाज़ है जैसा कि क़ुरआने करीम का इरशाद है:

وَاسْتَعِيْنُوْا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ

(यानी मदद हासिल करो सब्र और नमाज़ के ज़रिये।)

पाँच वक़्त की नमाज़ों का हुक्म

तफ़सीर के इमामों की अक्सरियत ने इस आयत को पाँचों नमाज़ों के लिये जामे (मुकम्मल) हुक्म क़रार दिया है क्योंकि 'दुलूक' का लफ़्ज़ अगरचे असल में मैलान के मायने में आता है और सूरज का मैलान ज़वाल के वक़्त शुरू होता है, और ग़ुरूब को भी कह सकते हैं लेकिन सहाबा व ताबिईन में की बड़ी जमाअ़त ने इस जगह लफ़्ज़ 'दुलूक' के मायने सूरज के ज़वाल (ढलने) ही के लिये हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, मज़हरी और इब्ने कसीर में इसकी तफ़सील मौजूद है)

اِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ

लफ़्ज़ 'ग़सक़' के मायने रात की अंधेरी मुकम्मल हो जाने के हैं इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से ग़सक़ की यही तफ़सीर नक़ल फ़रमाई है।

इस तरह 'दुलूकिश्शम्सि इला ग़-सक़िल्लैलि' में चार नमाज़ें आ गईं— ज़ोहर, अ़सर, मग़रिब, इशा और इनमें से दो नमाज़ों का शुरूआ़ती वक़्त भी बतला दिया गया कि ज़ोहर का वक़्त सूरज ढलने से शुरू होता है और इशा का वक़्त 'ग़सक़-ए-लैल' से यानी जिस वक़्त रात की अंधेरी मुकम्मल हो जाये, इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इशा के वक़्त की शुरूआ़त उस वक़्त से क़रार दी है जबकि 'शफ़क़-ए-अह्मर' के बाद 'शफ़क़-ए-अब्यज़' भी छुप जाये। यह सब जानते हैं कि सूरज छुपने के फ़ौरन बाद आसमान के पश्चिमी किनारे पर एक सुर्ख़ी ज़ाहिर होती है और उस सुर्ख़ी के बाद एक क़िस्म की सफ़ेदी आसमानी किनारे पर फैली हुई नज़र आती है, फिर वह सफ़ेदी भी छुप जाती है। यह ज़ाहिर है कि रात की अंधेरी उस वक़्त पूरी होगी जबकि आसमानी किनारे की सफ़ेदी भी ख़त्म हो जाये, इसलिये इस लफ़्ज़ में इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के मस्लक की तरफ़ इशारा पाया जाता है। दूसरे इमामों ने 'शफ़क़-ए-अह्मर' (सुर्ख़ रोशनी) के छुपने पर इशा के वक़्त की शुरूआ़त क़रार दी है और इसी को 'ग़-सक़िल्लैलि' की तफ़सीर क़रार दिया है।

وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ

इस जगह लफ़्ज़ क़ुरआन बोलकर नमाज़ मुराद ली गई है, क्योंकि क़ुरआन नमाज़ का मुख्य अंश है, तफ़सीर के अक्सर इमामों के हवाले से तफ़सीर इब्ने कसीर, तफ़सीरे क़ुर्तुबी और

तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह ने यही मायने लिखे हैं, इसलिये आयत का मतलब यह हो गया कि 'दुलूकिश्शम्सि इला ग़-सक़िल्लैलि' के अलफ़ाज़ में चार नमाज़ों का बयान था यह पाँचवीं नमाज़ फ़जर का बयान है इसको अलग करके बयान करने में इस नमाज़ की ख़ास अहमियत और फ़ज़ीलत की तरफ़ इशारा किया गया है।

كَانَ مَشْهُوْدًا

"का-न मश्हूदा" यह लफ़्ज़ शहादत से निकला है जिसके मायने हैं हाज़िर होना। इस वक़्त में सही हदीसों की वज़ाहत के मुताबिक़ रात और दिन के दोनों फ़रिश्तों की जमाअ़तें नमाज़ में हाज़िर होती हैं इसलिये इसको **मशहूद** कहा गया है। इस आयत में पाँच नमाज़ों का हुक्म संक्षिप्त रूप से आया है जिसकी मुकम्मल तफ़सीर व वज़ाहत नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने क़ौल व फ़ेल से बतलाई हैं और जब तक उस वज़ाहत पर अ़मल न किया जाये कोई शख़्स नमाज़ अदा ही नहीं कर सकता। मालूम नहीं कि जो लोग क़ुरआन को बग़ैर हदीस और रसूल के बयान के समझने का दावा करते हैं वे नमाज़ कैसे पढ़ते हैं। इसी तरह इस आयत में नमाज़ के अन्दर क़ुरआन के पढ़ने का ज़िक्र भी संक्षिप्त रूप से आया है इसकी तफ़सील रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के क़ौल व अ़मल से यह साबित हुई कि फ़जर की नमाज़ में हिम्मत व गुंजाईश के अनुसार किराअत लम्बी की जाये (क़ुरआन ज़्यादा पढ़ा जाये) और ज़ोहर व जुमे में उससे कम और अ़सर व इशा में दरमियानी दर्जे की और मग़रिब में बहुत मुख़्तसर। मग़रिब में क़िराअत लम्बी करने और फ़जर में कम करना जो कुछ रिवायतों में आया है वह अ़मली तौर पर मतरूक है (यानी इस पर अ़मल नहीं है), इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने सही मुस्लिम की वह रिवायत जिसमें मग़रिब की नमाज़ में सूरः आराफ़ और मुर्सलात वग़ैरह लम्बी सूरतों का पढ़ना या सुबह की नमाज़ में सिर्फ़ 'सूरः फ़लक़ और सूरः नास' पर बस करना मन्क़ूल है उसको नक़ल करके फ़रमाया है:

فمتروك بالعمل ولا نكاره على معاذ التطويل و بامره الائمة بالتخفيف

यानी ये इत्तिफ़ाक़ी वाकिआ़त मग़रिब में लम्बी क़िराअत करने और फ़जर में मुख़्तसर और कम करने के नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हमेशा के और मुस्तक़िल अ़मल से और ज़बानी इरशादात की वजह से मतरूक (छोड़े हुए) हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

तहज्जुद की नमाज़ का वक़्त और उसके अहकाम व मसाईल

وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهٖ

लफ़्ज़ **तहज्जुद** हजूद से निकला है और यह लफ़्ज़ दो अलग-अलग मायनों के लिये इस्तेमाल होता है। इसके मायने सोने के भी आते हैं और जागने व बेदार होने के भी। इस जगह 'व मिनल्लैलि फ़-तहज्जद् बिही' के मायने ये हैं कि रात के कुछ हिस्से में क़ुरआन के साथ जागा करो क्योंकि **बिही** (उसके साथ) में ज़मीर यानी उस से क़ुरआन की तरफ़ इशारा है। (मज़हरी)

क़ुरआन के साथ जागने का मतलब नमाज़ अदा करना है, इसी रात की नमाज़ को शरीअ़त की इस्तिलाह में तहज्जुद की नमाज़ कहा जाता है और उमूमन इसका यह मफ़्हूम लिया गया है कि कुछ देर सोकर उठने के बाद जो नमाज़ पढ़ी जाये वह तहज्जुद की नमाज़ है, लेकिन तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस आयत का मतलब इतना है कि रात के कुछ हिस्से में नमाज़ के लिये सोने को छोड़ दो और यह मफ़्हूम जिस तरह कुछ देर सोने के बाद जागकर नमाज़ पढ़ने पर सादिक़ आता है उसी तरह शुरू ही में नमाज़ के लिये नींद को लेट करके नमाज़ पढ़ने पर भी सादिक़ है इसलिये तहज्जुद की नमाज़ के लिये पहले नींद होने की शर्त क़ुरआन के बयान का मक़सद नहीं, फिर हदीस की कुछ रिवायतों से भी तहज्जुद के इसी आ़म मायने पर दलील पकड़ी है।

और इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत हसन बसरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि से तहज्जुद की नमाज़ की जो तारीफ़ (परिभाषा) नक़ल की है वह भी इसी उमूमी मायने पर सुबूत है उसके अलफ़ाज़ ये हैं:

قال الحسن البصری ہو ما کان بعد العشاء و یحمل علی ما کان بعد النوم. (ابن کثیر)

"हसन बसरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि तहज्जुद की नमाज़ हर उस नमाज़ पर सादिक़ है जो इशा के बाद पढ़ी जाये, अलबत्ता मामूल की वजह से उसको कुछ नींद के बाद पर महमूल किया जायेगा।"

इसका हासिल यह है कि तहज्जुद की नमाज़ के असल मफ़्हूम में सोने और नींद के बाद होना शर्त नहीं और क़ुरआन के अलफ़ाज़ में भी यह शर्त मौजूद नहीं लेकिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का आ़म मामूल यही रहा है कि नमाज़ रात के आख़िरी हिस्से में जागकर पढ़ते थे इसलिये इसकी अफ़ज़ल सूरत यही होगी।

तहज्जुद की नमाज़ फ़र्ज़ है या नफ़िल?

"नाफ़िलतल् ल-क"। लफ़्ज़ नफ़िल और नाफ़िला के लुग़वी मायने ज़्यादा के हैं, इसी लिये इस नमाज़ और सदक़ा व ख़ैरात वग़ैरह को नफ़िल कहते हैं जो शरई तौर पर वाजिब और ज़रूरी न हो, जिसके करने में सवाब है और न करने में न कोई गुनाह है और न किसी क़िस्म की बुराई। इस आयत में तहज्जुद की नमाज़ के साथ 'नाफ़िलतल् ल-क' के अलफ़ाज़ से ज़ाहिरी तौर पर यह समझा जाता है कि तहज्जुद की नमाज़ ख़ुसूसियत के साथ नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये नफ़िल है हालाँकि उसके नफ़िल होने में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और पूरी उम्मत सब ही शरीक हैं, इसी लिये कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने इस जगह नाफ़िला को फ़रीज़ा की सिफ़त क़रार देकर मायने यह क़रार दिये हैं कि आ़म उम्मत पर तो सिर्फ़ पाँच वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ है मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर तहज्जुद भी एक ज़्यादा फ़र्ज़ है, तो यहाँ लफ़्ज़ नाफ़िला ज़ायद फ़र्ज़ के मायने में है, नफ़िल के आ़म मायने में नहीं।

और इस मामले की सही तहक़ीक़ यह है कि इस्लाम के शुरूआ़ती दौर में जब सूरः मुज़्ज़म्मिल नाज़िल हुई तो उस वक़्त पाँच नमाज़ें तो फ़र्ज़ हुई न थीं सिर्फ़ तहज्जुद की नमाज़

सब पर फ़र्ज़ थी, इसी फ़र्ज़ का ज़िक्र सूरः मुज़्ज़म्मिल में है, फिर मेराज की रात में पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ कर दी गईं तो तहज्जुद की फ़र्ज़ियत (फ़र्ज़ होना) आम उम्मत से तो सब के नज़दीक मन्सूख़ (ख़त्म) हो गई और इसमें मतभेद रहा कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से भी इसकी फ़र्ज़ियत मन्सूख़ हुई या विशेष तौर पर आपके ज़िम्मे फ़र्ज़ रहा, और इस आयत में 'नाफ़िलतल् ल-क' के यही मायने हैं कि तहज्जुद की नमाज़ आपके ज़िम्मे एक ज़ायद फ़र्ज़ है, मगर तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि यह कई वजह से सही नहीं— अव्वल यह कि फ़र्ज़ को नफ़िल से ताबीर करने की कोई वजह नहीं, अगर कहा जाये कि मजाज़ (यानी असल मायनों से हटकर दूसरे मायनों में) है तो यह एक ऐसा मजाज़ होगा जिसकी कोई हक़ीक़त नहीं। दूसरे सही हदीसों में मुतैयन करके सिर्फ़ पाँच नमाज़ों के फ़र्ज़ होने का ज़िक्र है और एक हदीस में इसके आख़िर में यह भी बयान हुआ है कि मेराज की रात में शुरू में जो पचास नमाज़ें फ़र्ज़ की गई थीं फिर कमी करके पाँच कर दी गईं तो अगरचे अ़दद (संख्या) घटा दिया गया मगर सवाब पचास ही का मिलेगा, और फिर फ़रमाया 'ला युबद्दलुल्-क़ौलु ल-दय्-य' यानी मेरा क़ौल बदला नहीं करता, जब पचास का हुक्म दिया था तो सवाब पचास ही का दिया जायेगा अगरचे अ़मल में कमी कर दी गई।

इन रिवायतों का हासिल यही है कि आम उम्मत और ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर पाँच नमाज़ों के सिवा कोई और नमाज़ फ़र्ज़ नहीं है। एक वजह यह भी है कि नाफ़िला का लफ़्ज़ अगर इस जगह ज़ायद फ़रीज़े के मायने में होता तो इसके बाद लफ़्ज़ **ल-क** (तेरे लिये) के बजाय **अ़लै-क** (तेरे ऊपर) होना चाहिये था जो वाजिब होने पर दलालत करता है, लफ़्ज़ **ल-क** तो सिर्फ़ जायज़ होने और इजाज़त के लिये इस्तेमाल होता है।

इसी तरह तफ़सीर-ए-मज़हरी में सही इसी को क़रार दिया है कि जब तहज्जुद की फ़र्ज़ियत (फ़र्ज़ और ज़रूरी होना) उम्मत से मन्सूख़ (रद्द व ख़त्म) हुई तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से भी मन्सूख़ हो गई, और सब के लिये नफ़िल रहेगा, मगर इस सूरत में यह सवाल पैदा होता है कि फिर इसमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़ुसूसियत (विशेषता और ख़ूबी) क्या है, नफ़िल होना तो सब ही के लिये साबित है फिर 'नाफ़िलतल् ल-क' फ़रमाने का क्या हासिल होगा? जवाब यह है कि हदीसों के बयान व वज़ाहत के मुताबिक़ तमाम उम्मत की नवाफ़िल और तमाम नफ़्ली इबादतें उनके गुनाहों का कफ़्फ़ारा और फ़र्ज़ नमाज़ों में जो कोताही कमी रह जाये उसके पूरा करने का काम देती हैं मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम गुनाहों से भी मासूम (सुरक्षित) हैं और नमाज़ के आदाब में कोताही से भी, इसलिये आपके हक़ में नफ़्ली इबादत बिल्कुल ज़ायद ही है जो किसी कोताही की भरपाई नहीं बल्कि महज़ अल्लाह की निकटता के ज़्यादा होने का ज़रिया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

तहज्जुद की नमाज़ नफ़िल है या सुन्नत-ए-मुअक्कदा

सुन्नत-ए-मुअक्कदा के लिये जो आम क़ायदा और उसूल फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस के

माहिर उलेमा) का है कि जिस काम पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अमली तौर पर पाबन्दी फ़रमाई हो और बिना मजबूरी के न छोड़ा हो वह सुन्नत-ए-मुअक्कदा है, सिवाय इसके कि किसी शरई दलील से यह साबित हो जाये कि यह काम नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये ख़ास था आम उम्मत के लिये नहीं था। इस उसूल व क़ायदे का तक़ाज़ा बज़ाहिर यही है कि तहज्जुद की नमाज़ भी सब के लिये सुन्नत-ए-मुअक्कदा क़रार पाये न कि सिर्फ़ नफ़िल, क्योंकि इस नमाज़ पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाबन्दी मुतवातिर (लगातार और निरंतर) सुन्नत से साबित है, और ख़ास होने व विशेषता की कोई दलील नहीं, इसलिये आम उम्मत के लिये भी सुन्नत-ए-मुअक्कदा होना चाहिये। तफ़सीरे मज़हरी में इसी को पसन्दीदा और ज़्यादा सही क़रार दिया है, और इसके वरीयता प्राप्त होने पर हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की उस हदीस से भी दलील ली गयी है जिसमें आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस शख़्स के बारे में जो पहले तहज्जुद पढ़ा करता था फिर छोड़ दिया यह इरशाद फ़रमाया कि "उसके कान में शैतान ने पेशाब कर दिया है।" इस तरह की वईद (डाँट) और चेतावनी सिर्फ़ नफ़िल में नहीं हो सकती, इससे मालूम हुआ कि यह सुन्नते मुअक्कदा है।

और जिन हज़रात ने तहज्जुद को सिर्फ़ नफ़िल क़रार दिया है वे इस पाबन्दी और इसका हमेशा एहतिमाम करने को नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़ुसूसियत (विशेषता) क़रार देते हैं और तहज्जुद पढ़ने वाले के तहज्जुद छोड़ने पर जो डाँट व तंबीह के अलफ़ाज़ इरशाद फ़रमाये वो दर असल ख़ाली छोड़ने पर नहीं बल्कि पहले आदत डालने के बाद छोड़ने पर हैं, क्योंकि आदमी जिस नफ़िल की आदत डाल ले तो उम्मत का इत्तिफ़ाक़ इस पर है कि उसको चाहिये कि उस पर पाबन्दी करे, अगर आदत डालने के बाद छोड़ेगा तो क़ाबिले मलामत होगा, क्योंकि आदत के बाद बिना उज़्र छोड़ना एक क़िस्म के मुँह मोड़ने और लापरवाही बरतने की निशानी है और जो शुरू से आदी न हो तो उस पर कोई मलामत नहीं। वल्लाहु आलम

तहज्जुद की रक्अ़तों की तादाद

सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायत यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रमज़ान या ग़ैर-रमज़ान में कभी ग्यारह रक्अ़तों से ज़्यादा न पढ़ते थे, उन ग्यारह रक्अ़तों में हनफ़िया के नज़दीक तीन रक्अ़तें वित्र की होती थीं बाक़ी आठ तहज्जुद की।

और सही मुस्लिम की एक रिवायत में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के ये अलफ़ाज़ नक़ल किये गये हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रात में तेरह रक्अ़तें पढ़ते थे जिनमें वित्र भी शामिल हैं और दो रक्अ़तें फ़जर की सुन्नत की भी। (तफ़सीरे मज़हरी)

फ़जर की सुन्नतों को रात की नमाज़ में रमज़ान की वजह से शुमार कर लिया है। इन रिवायतों से मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आम आदत यह थी कि तहज्जुद की नमाज़ में आठ रक्अ़तें अदा फ़रमाते थे।

लेकिन सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ही की एक रिवायत से यह भी साबित है कि कभी-कभी इस संख्या से कम चार या छह रक्अ़तों पर भी इक्तिफ़ा फ़रमाया है जैसा कि सही बुख़ारी में आपसे यह मन्क़ूल है कि हज़रत मसरूक़ ने हज़रत सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा से तहज्जुद की नमाज़ के बारे में मालूम किया तो फ़रमाया कि सात, नौ और ग्यारह रक्अ़तें होती हैं फ़जर की सुन्नतों के अ़लावा। (तफ़सीरे मज़हरी, बुख़ारी के हवाले से) हनफ़िया के क़ायदे के मुताबिक़ तीन रक्अ़तें वित्र की हुईं तो सात में से चार नौ में से छह ग्यारह में से आठ तहज्जुद की रक्अ़तें रह जाती हैं।

नमाज़-ए-तहज्जुद की कैफ़ियत

इस नमाज़ की कैफ़ियत जो हदीस की आ़म रिवायतों से साबित है वह यह है कि शुरू में दो रक्अ़त हल्की मुख़्तसर क़िराअत के साथ फिर बाक़ी रक्अ़तों में क़िराअत भी लम्बी और रुकूअ़ सज्दे भी लम्बे होते और यह लम्बा होना कभी-कभी बहुत ज़्यादा हो जाता था कभी कुछ कम (यह ख़ुलासा हदीस की उन रिवायतों का है जो इस जगह तफ़सीर-ए-मज़हरी में नक़ल की गई हैं)।

मक़ाम-ए-महमूद

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस आयत में मक़ाम-ए-महमूद का वायदा किया गया है और यह मक़ाम (दर्जा और मर्तबा) तमाम अम्बिया में से नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये मख़्सूस (ख़ास) है, इसकी तफ़सीर में विभिन्न और अनेक अक़वाल हैं मगर सही वह है जो सही हदीसों में ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मन्क़ूल है, यह शफ़ाअ़त-ए-कुबरा का मक़ाम है, कि मैदाने हश्र में जिस वक़्त तमाम इनसान जमा होंगे और हर नबी व पैग़म्बर से शफ़ाअ़त की दरख़्वास्त करेंगे तो तमाम नबी उज़्र कर देंगे, सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह सम्मान अ़ता होगा कि तमाम इनसानों की शफ़ाअ़त फ़रमायेंगे, इसकी तफ़सील हदीस की रिवायतों में विस्तार से बयान हुई है जो इस जगह तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी में लिखी है।

नबियों और उम्मत के नेक लोगों की शफ़ाअ़त मक़बूल होगी

इस्लामी फ़िर्क़ों में से ख़्वारिज और मोतज़िला नबियों के शफ़ाअ़त करने के इनकारी हैं, वे कहते हैं कि गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा गुनाह) किसी की शफ़ाअ़त से माफ़ नहीं होगा, मगर मुतवातिर हदीसें इस पर गवाह हैं कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की बल्कि उम्मत के नेक लोग की भी शफ़ाअ़त गुनाहगारों के हक़ में मक़बूल होगी, बहुत से लोगों के गुनाह शफ़ाअ़त से माफ़ कर दिये जायेंगे।

इब्ने माजा और बैहक़ी में हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन पहले अम्बिया हज़रात

गुनाहगारों की शफ़ाअ़त करेंगे फिर उलेमा फिर शहीद। और दैलमी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि आ़लिम से कहा जायेगा कि आप अपने शागिर्दों की शफ़ाअ़त कर सकते हैं अगरचे उनकी तायदाद आसमान के सितारों के बराबर हो।

और अबू दाऊद और इब्ने हिब्बान रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मरफ़ूअन नक़ल किया है कि शहीद की शफ़ाअ़त उसके ख़ानदान के सत्तर आदमियों के बारे में क़ुबूल की जायेगी।

मुस्नद अहमद, तबरानी और बैहक़ी ने सही सनद के साथ हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी उम्मत के एक आदमी की शफ़ाअ़त पर क़बीला रबीआ़ और मुज़र के तमाम लोगों से ज़्यादा आदमी जन्नत में दाख़िल किये जायेंगे।

एक सवाल और उसका जवाब

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि जब ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम शफ़ाअ़त फ़रमायेंगे और आपकी शफ़ाअ़त से कोई मोमिन दोज़ख़ में न रह जायेगा तो फिर उम्मत के उलेमा और नेक लोगों की शफ़ाअ़त किस लिये और क्योंकर होगी? तफ़सीरे मज़हरी में है कि ग़ालिबन सूरत यह होगी कि उलेमा और उम्मत के नेक लोग जिन लोगों की शफ़ाअ़त करना चाहेंगे वे अपनी शफ़ाअ़त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पेश करेंगे, फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हक़ तआ़ला की बारगाह में शफ़ाअ़त फ़रमायेंगे।

फ़ायदा

एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

شَفَاعَتِیْ لِاَهْلِ الْکَبَآئِرِ مِنْ اُمَّتِیْ.

यानी मेरी शफ़ाअ़त मेरी उम्मत के उन लोगों के लिये होगी जिन्होंने कबीरा (बड़े) गुनाह किये थे। इससे बज़ाहिर यह मालूम होता है कि बड़े गुनाह वालों की शफ़ाअ़त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस होगी, कोई फ़रिश्ता या उम्मत का फ़र्द बड़े गुनाहों वालों की शफ़ाअ़त न कर सकेगा, बल्कि उम्मत के नेक लोगों की शफ़ाअ़त छोटे गुनाह वालों के लिये होगी।

तहज्जुद की नमाज़ को शफ़ाअ़त का मक़ाम हासिल होने में ख़ास दख़ल है

हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इस आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पहले तहज्जुद की नमाज़ का हुक्म दिया गया फिर मक़ामे महमूद यानी शफ़ाअ़त-ए-कुबरा (बड़ी शफ़ाअ़त) का वायदा किया गया, इससे मालूम होता है कि

तहज्जुद की नमाज़ को शफ़ाअ़त का मक़ाम हासिल होने में ख़ास दख़ल है।

وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِیْ مُدْخَلَ صِدْقٍ.....الایة

इससे पहले की आयतों में पहले मक्का के काफ़िरों के सताने और उन तदबीरों का ज़िक्र था जो वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तकलीफ़ पहुँचाने के लिये करते थे, इसके साथ यह भी बयान हुआ कि उनकी ये तदबीरें कामयाब नहीं होंगी और उनके मुक़ाबले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को असल तदबीर के दर्जे में तो सिर्फ़ पाँच वक़्त की नमाज़ क़ायम करने और तहज्जुद अदा करने की हिदायत फ़रमाई, उसके बाद आख़िरत में आपको तमाम नबियों से आला मक़ाम यानी **मक़ाम-ए-महमूद** अ़ता फ़रमाने का वायदा फ़रमाया जो आख़िरत में पूरा होगा। उपरोक्त आयत नम्बर 80 में हक़ तआ़ला ने इसी दुनिया में पहले आपको काफ़िरों के फ़रेब, जाल और तकलीफ़ें देने से निजात देने की तदबीर मदीना को हिजरत करने की सूरत में इरशाद फ़रमाई और उसके बाद मक्का के फ़तह होने की ख़ुशख़बरी 'व क़ुल् जाअल् हक़्क़ु.....' (यानी आयत नम्बर 81) में इरशाद फ़रमाई गई।

हदीस की किताब जामे तिर्मिज़ी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मक्का मुअ़ज़्ज़मा में थे फिर आपको मदीना की हिजरत का हुक्म दिया गया, इस पर यह आयत नाज़िल हुईः

وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِیْ مُدْخَلَ صِدْقٍ وَّاَخْرِجْنِیْ مُخْرَجَ صِدْقٍ

(यानी यही ऊपर बयान हुई आयत 80) इसमें लफ़्ज़ 'मुद्ख़-ल' और 'मुख़्र-ज' दाख़िल होने और ख़ारिज होने की जगह के लिये है और इनके साथ सिद्क़ की सिफ़त बढ़ाने से मुराद यह है कि यह निकलना और दाख़िल होना सब अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़ैर व ख़ूबी के साथ हो, क्योंकि लफ़्ज़ सिद्क़ अ़रबी भाषा में हर ऐसे काम के लिये भी इस्तेमाल होता है जो ज़ाहिरी और बातिनी तौर पर दुरुस्त और बेहतर हो, क़ुरआने करीम में क़दम, ज़ुबान और मक़ाम के साथ भी यह लफ़्ज़ सिद्क़ इसी मायने में इस्तेमाल हुआ है।

दाख़िल होने की जगह से मुराद मदीना और ख़ारिज होने (निलकने) की जगह से मुराद मक्का है। मतलब यह है कि या अल्लाह! मदीने में मेरा दाख़िला ख़ैर व ख़ूबी के साथ हो जाये वहाँ कोई ख़िलाफ़े तबीयत और नागवार सूरत पेश न आये, और मक्का मुकर्रमा से मेरा निकलना ख़ैर व ख़ूबी के साथ हो जाये कि वतन और घर-बार की मुहब्बत में दिल उलझा न रहे। इस आयत की तफ़सीर में कुछ और क़ौल भी आये हैं मगर यह तफ़सीर हज़रत हसन बसरी और हज़रत क़तादा से मन्क़ूल है, इब्ने कसीर ने इसी को ज़्यादा सही क़ौल कहा है, इब्ने जरीर ने भी इसी को इख़्तियार किया है। तरतीब का तक़ाज़ा यह था कि पहले निकलने की जगह का और फिर दाख़िल होने की जगह का ज़िक्र होता मगर यहाँ दाख़िल होने की जगह को पहले बयान करने और निकलने की जगह को बाद में लाने में शायद इस तरफ़ इशारा हो कि मक्का मुकर्रमा से निकलना ख़ुद कोई मक़सद न था बल्कि बैतुल्लाह को छोड़ना बहुत बड़े सदमे की

चीज़ थी, अलबत्ता इस्लाम और मुसलमानों के लिये अमन की जगह तलाश करना मक़सद था जो मदीने में दाख़िल होने के ज़रिये हासिल होने की उम्मीद थी, इसलिये जो मक़सद था उसको पहले और आगे रखा गया।

अहम और बड़े उद्देश्यों के लिये मक़बूल दुआ

मदीना की हिजरत के वक़्त हक़ तआ़ला ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस दुआ़ की तालीम व हिदायत फ़रमाई कि मक्का से निकलना और फिर मदीना पहुँचना दोनों ख़ैर व ख़ूबी और आ़फ़ियत के साथ हों, इसी दुआ़ का नतीजा था कि हिजरत के वक़्त पीछा करने वाले काफ़िरों की पकड़ से अल्लाह तआ़ला ने हर क़दम पर बचाया और मदीना तय्यिबा को ज़ाहिरी व बातिनी तौर पर आपके और सब मुसलमानों के लिये साज़गार बनाया, इसी लिये कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि यह दुआ़ हर मुसलमान को अपने तमाम मक़ासिद (उद्देश्यों) के शुरू में याद रखनी चाहिये और हर मक़सद के लिये यह दुआ़ मुफ़ीद है। इसी दुआ़ का आख़िरी हिस्सा बाद का जुमला है 'वज्अ़ल्-ली मिल्लदुन्-क सुल्तानन् नसीरा'।

हज़रत क़तादा फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह मालूम था कि रिसालत के ओ़हदे के फ़राईज़ और ज़िम्मेदारियों की अदायेगी और दुश्मनों के घेरे में रहकर काम करना अपने बस का नहीं इसलिये हक़ तआ़ला से ग़लबे और मदद की दुआ़ फ़रमाई जो क़ुबूल हुई और उसके आसार (निशानात) सब के सामने आ गये।

وَقُلْ جَآءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ

यह आयत हिजरत के बाद मक्का फ़तह होने के बारे में नाज़िल हुई। हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मक्का फ़तह होने के दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मक्का में दाख़िल हुए तो उस वक़्त बैतुल्लाह के गिर्द तीन सौ साठ बुतों की मूर्तियाँ खड़ी हुई थीं, कुछ उलेमा ने इस ख़ास संख्या की वजह यह बतलाई है कि मक्का के मुश्रिक साल भर के दिनों में हर दिन का बुत अलग रखते थे, उस दिन में उसकी पूजा करते थे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब वहाँ पहुँचे तो यह आयत आपकी ज़बाने मुबारक पर थी 'जाअल्-हक़्क़ु व ज़-हक़ल्-बातिलु' और अपनी लकड़ी एक-एक बुत के सीने पर मारते जाते थे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

कुछ रिवायतों में है कि उस छड़ी के नीचे राँग या लोहे की शाम (धातु का बना हुआ एक छल्ला) लगी हुई थी जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी बुत के सीने में उसको मारते तो वह उल्टा गिर जाता था यहाँ तक कि ये सब बुत गिर गये और फिर आपने उनके तोड़ने का हुक्म दे दिया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, क़ाज़ी अ़याज़ व क़ुशैरी के हवाले से)

शिर्क व कुफ़्र और बातिल की रस्मों व निशानात का मिटाना वाजिब है

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि इस आयत में इसकी दलील है कि मुश्रिक लोगों के बुत और दूसरे शिर्क वाले निशानात को मिटाना वाजिब है, और बातिल के वो तमाम असबाब व सामान और उपकरण जिनका इस्तेमाल सिर्फ़ नाफ़रमानी और गुनाह में हो उनका मिटाना भी इसी हुक्म में है। इब्ने मुन्ज़िर ने फ़रमाया कि तस्वीरें और प्रतिमायें जो लकड़ी पीतल वग़ैरह से बनाई जाती हैं वो भी बुतों ही के हुक्म में हैं, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस पर्दे को फाड़ डाला जिस पर तस्वीरें नक़्श व रंग से बनाई गई थीं। इससे आ़म तस्वीरों का हुक्म मालूम हो गया। हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम आख़िरी ज़माने में तशरीफ़ लायेंगे तो सही हदीस के मुताबिक़ सलीबों को तोड़ेंगे, ख़िन्ज़ीर (सुअर) को क़त्ल करेंगे, ये सब बातें इसकी दलील हैं कि शिर्क व कुफ़्र और बातिल के सामानों को तोड़ना और ज़ाया कर देना वाजिब है।

وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَآءٌ.

क़ुरआने करीम का दिलों के लिये शिफ़ा होना, शिर्क व कुफ़्र और बुरे अख़्लाक़ और अन्दरूनी बीमारियों से नफ़्सों की निजात का ज़रिया होना तो खुला हुआ मामला है और तमाम उम्मत इस पर एकमत है, और कुछ उलेमा के नज़दीक क़ुरआन जिस तरह अन्दरूनी और रूहानी बीमारियों की शिफ़ा है इसी तरह ज़ाहिरी बीमारियों की भी शिफ़ा है कि क़ुरआन की आयतें पढ़कर मरीज़ पर दम करना और तावीज़ लिखकर गले में डालना ज़ाहिरी बीमारियों के लिये भी शिफ़ा (का सबब) होता है, हदीस की रिवायतें इस पर गवाह हैं, हदीस की तमाम किताबों में हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की यह हदीस मौजूद है कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की एक जमाअ़त सफ़र में थी, किसी गाँव के सरदार को बिच्छू ने काट लिया था, लोगों ने सहाबा किराम से पूछा कि आप कुछ इसका इलाज कर सकते हैं? उन्होंने सात मर्तबा सूरः फ़ातिहा पढ़कर उस पर दम किया, मरीज़ अच्छा हो गया, फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने इसका तज़किरा आया तो आपने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के इस अ़मल को जायज़ क़रार दिया।

इसी तरह हदीस की दूसरी अनेक रिवायतों से ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का सूरः फ़लक़ और सूरः नास पढ़कर दम करना साबित है, और सहाबा व ताबिईन से सूरः फ़लक़, सूरः नास और क़ुरआन की दूसरी आयतों के ज़रिये मरीज़ों का इलाज करना लिखकर गले में डालना साबित है जिसको इस आयत के तहत इमाम क़ुर्तुबी ने तफ़सील से लिखा है।

وَلَا يَزِيْدُ الظّٰلِمِيْنَ اِلَّا خَسَارًا○

इससे मालूम हुआ कि क़ुरआने करीम को जब एतिक़ाद व एहतिराम के साथ पढ़ा जाये तो

उसका शिफ़ा होना जिस तरह ज़ाहिर और साबित है इसी तरह क़ुरआन का इनकार या बेअदबी ख़सारे और आफ़तों का सबब भी है।

وَإِذَآ أَنْعَمْنَا عَلَى ٱلْإِنسَٰنِ أَعْرَضَ وَنَـَٔا بِجَانِبِهِۦ ۖ وَإِذَا مَسَّهُ ٱلشَّرُّ كَانَ يَـُٔوسًا ۝ قُلْ كُلٌّ يَعْمَلُ عَلَىٰ شَاكِلَتِهِۦ فَرَبُّكُمْ أَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ أَهْدَىٰ سَبِيلًا ۝

व इज़ा अन्अ़म्ना अ़लल्-इन्सानि अअ़्र-ज़ व नआ बिजानिबिही व इज़ा मस्सहुश्शर्रु का-न यऊसा (83) क़ुल् कुल्लुंय्-यअ़्मलु अ़ला शाकि-लतिही, फ़रब्बुकुम् अअ़्लमु बिमन् हु-व अह्दा सबीला (84) ✿	और जब हम आराम भेजें इनसान पर तो टाल जाये और बचाये अपना पहलू, और जब पहुँचे उसको बुराई तो रह जाये मायूस होकर। (83) तू कह हर एक काम करता है अपने ढंग पर, सो तेरा रब ख़ूब जानता है किसने ख़ूब पा लिया रास्ता। (84) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (बाज़ा) आदमी (यानी काफ़िर ऐसा होता है कि उस) को जब हम नेमत अ़ता करते हैं तो (हम से और हमारे अहकाम से) मुँह मोड़ लेता है और करवट फेर लेता है, और जब उसको कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो (बिल्कुल रहमत से) नाउम्मीद हो जाता है (और ये दोनों हालतें दलील हैं अल्लाह तआ़ला से बेताल्लुक़ी की और वही बुनियाद है हर कुफ़्र व गुमराही की)। आप फ़रमा दीजिये कि (मोमिनों और काफ़िरों और अच्छों और बुरों में से) हर शख़्स अपने तरीक़े पर काम कर रहा है (यानी अपनी-अपनी सही अ़क़्ल पर ठहरा हुआ और इल्म या जहल की बुनियाद पर विभिन्न प्रकार के काम कर रहे हैं), सो आपका रब ख़ूब जानता है उसको जो ज़्यादा ठीक और दुरुस्त रास्ते पर हो (इसी तरह जो ठीक रास्ते पर न हो उसको भी जानता है, और हर एक को उसके अ़मल के मुवाफ़िक़ जज़ा या सज़ा देगा, यह नहीं कि जिसका दिल चाहे बिना किसी दलील के अपने को ठीक रास्ते पर समझने लगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

كُلٌّ يَّعْمَلُ عَلٰى شَاكِلَتِهٖ

लफ़्ज़ 'शाकिलतुन' की तफ़सीर में पुराने बुज़ुर्गों और तफ़सीर के इमामों से विभिन्न अक़्वाल नक़ल किये गये हैं– तबीयत, आ़दत, फ़ितरत, नीयत, तरीक़ा वग़ैरह। और हासिल सब का यह है कि हर इनसान की अपने माहौल, परम्पराओं और रस्म व रिवाज के एतिबार से एक आ़दत और मिज़ाज बन जाता है, उसका अ़मल उसी के ताबे रहता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इसमें इनसान को इस पर चेताया गया है कि बुरे माहौल, बुरी सोहबत और बुरी आ़दतों से परहेज़ करे, नेक लोगों की सोहबत और अच्छी आ़दतों का आ़दी बने। (तफ़सीरे जस्सास) क्योंकि अपने माहौल और सोहबत और रस्म व रिवाज से इनसान की एक तबीयत बन जाती है उसका हर अ़मल उसी के ताबे चलता है। इमाम जस्सास ने इस जगह शाकिलतुन के एक मायने हम-शक्ल के भी लिये हैं। इस मायने के लिहाज़ से आयत का मतलब यह होगा कि हर शख़्स अपने मिज़ाज के मुताबिक़ आदमी से मानूस होता है, नेक आदमी नेक से और बुरा बुरे से मानूस होता है, उसी के तरीक़े पर चलता है और इसकी नज़ीर हक़ तआ़ला का यह क़ौल है:

اَلْخَبِيْثٰتُ لِلْخَبِيْثِيْنَ

और:

وَالطَّيِّبٰتُ لِلطَّيِّبِيْنَ

यानी ख़बीस औरतें ख़बीस मर्दों के लिये और पाकीज़ा औरतें पाकीज़ा मर्दों के लिये हैं। मुराद यह है कि हर एक अपने मिज़ाज के मुताबिक़ मर्द व औरत से मानूस होता है और इसके मतलब का हासिल भी इस बात पर तंबीह और चेतावनी है कि इनसान को चाहिये कि ख़राब सोहबत और ख़राब आ़दतों से परहेज़ का एहतिमाम करे।

وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الرُّوْحِ ۭ قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ وَمَآ اُوْتِيْتُمْ مِّنَ الْعِلْمِ اِلَّا قَلِيْلًا ۝ وَلَىِٕنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ بِهٖ عَلَيْنَا وَكِيْلًا ۝ اِلَّا رَحْمَةً مِّنْ رَّبِّكَ ۭ اِنَّ فَضْلَهٗ كَانَ عَلَيْكَ كَبِيْرًا ۝ قُلْ لَّىِٕنِ اجْتَمَعَتِ الْاِنْسُ وَالْجِنُّ عَلٰٓي اَنْ يَّاْتُوْا بِمِثْلِ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لَا يَاْتُوْنَ بِمِثْلِهٖ وَلَوْ كَانَ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ ظَهِيْرًا ۝ وَلَقَدْ صَرَّفْنَا لِلنَّاسِ فِيْ هٰذَا الْقُرْاٰنِ مِنْ كُلِّ مَثَلٍ ۡ فَاَبٰٓى اَكْثَرُ النَّاسِ اِلَّا كُفُوْرًا ۝

व यस्अलून-क अ़निर्रूहि क़ुलिर्रूहु मिन् अम्रि रब्बी व मा ऊतीतुम् मिनल्-अ़िल्मि इल्ला क़लीला (85) व ल-इन् शिअ्ना लनज़्ह-बन्-न बिल्लज़ी औहैना इलै-क सुम्-म ला तजिदु ल-क बिही अ़लैना वकीला (86) इल्ला रह्म-तम् मिर्रब्बि-क, इन्-न फ़ज़्लहू का-न अ़लै-क कबीरा (87)	और तुझसे पूछते हैं रूह को, कह दे रूह है मेरे रब के हुक्म से और तुमको इल्म दिया है थोड़ा-सा। (85) और अगर हम चाहें तो ले जायें उस चीज़ को जो हमने तुझको वही भेजी फिर तू न पाये अपने वास्ते उसके ला देने को हम पर कोई ज़िम्मेदार (86) मगर मेहरबानी से तेरे रब की, उसकी बख़्शिश तुझ पर बड़ी है। (87)

क़ुल् ल-इनिज्त-म-अ़तिल्-इन्सु वल्जिन्नु अ़ला अंय्यअ्तू बिमिस्लि हाज़ल्-क़ुर्आनि ला यअ्तू-न बिमिस्लिही व लौ का-न बअ्ज़ुहुम् लिबअ्ज़िन् ज़हीरा (88) व ल-क़द् सर्रफ्ना लिन्नासि फ़ी हाज़ल्-क़ुर्आनि मिन् कुल्लि म-सलिन्, फ़-अबा अक्सरुन्नासि इल्ला कुफ़ूरा (89)	कह अगर जमा हों आदमी और जिन्न इस पर कि लायें ऐसा क़ुरआन हरगिज़ न लायेंगे ऐसा क़ुरआन और पड़े मदद किया करें एक दूसरे की। (88) और हमने फेर-फेरकर समझाई लोगों को इस क़ुरआन में हर मिसाल सो नहीं रहते बहुत लोग बग़ैर नाशुक्री किये। (89)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ये लोग आप से (इम्तिहान के तौर पर) रूह (की हक़ीक़त) के बारे में पूछते हैं, आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि रूह (के बारे में मुख़्तसर तौर पर बस इतना समझ लो कि वह एक चीज़ है जो) मेरे रब के हुक्म से बनी है, और (बाक़ी उसकी विस्तृत हक़ीक़त सो) तुमको बहुत थोड़ा इल्म (तुम्हारी समझ और ज़रूरत के मुताबिक़) दिया गया है (और रूह की हक़ीक़त का मालूम करना कोई ज़रूरत की चीज़ नहीं और न उसकी हक़ीक़त आ़म तौर पर समझ में आ सकती है इसलिये क़ुरआन उसकी हक़ीक़त को बयान नहीं करता)।

और अगर हम चाहें तो जिस क़द्र आप पर हमने वही भेजी है (और उसके ज़रिये आपको इल्म दिया है) सब छीन लें, फिर उस (वही) के (वापस लाने के लिये) आपको हमारे मुक़ाबले में कोई हिमायती भी न मिलेगा मगर (यह) आपके रब ही की रहमत है (कि ऐसा नहीं किया) बेशक आप पर उसका बड़ा फ़ज़्ल है (मतलब यह है कि इनसान को रूह वग़ैरह हर चीज़ की हक़ीक़त का तो क्या इल्म होता उसको जो थोड़ा-सा इल्म वही के ज़रिये अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से दिया गया है वह भी उसकी कोई जागीर नहीं, अल्लाह तआ़ला चाहे तो देने के बाद भी छीन सकता है मगर वह अपनी रहमत से ऐसा करता नहीं, वजह यह है कि आप पर अल्लाह तआ़ला का बड़ा फ़ज़्ल है)। आप फ़रमा दीजिए कि अगर तमाम इनसान और जिन्नात सब इस बात के लिए जमा हो जाएँ कि ऐसा क़ुरआन बना लाएँ तब भी वे ऐसा न कर सकेंगे, अगरचे एक दूसरे का मददगार भी बन जाये (यानी उनमें से हर एक अलग-अलग कोशिश करके तो क्या कामयाब होता सब के सब एक दूसरे की मदद से काम करके भी क़ुरआन के जैसा नहीं बना सकते)। और हमने लोगों के (समझाने के) लिये इस क़ुरआन में हर क़िस्म का उम्दा मज़मून तरह-तरह से बयान किया है, फिर भी अक्सर लोग इनकार किये बग़ैर न रहे।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में से पहली आयत में काफ़िरों की तरफ़ से रूह के मुताल्लिक़ एक सवाल और हक़ तआला की तरफ़ से उसका जवाब ज़िक्र हुआ है। लफ़्ज़ रूह लुग़ात व मुहावरों में तथा क़ुरआने करीम में कई मायने के लिये इस्तेमाल होता है, मशहूर व परिचित मायने तो वही हैं जो आम तौर पर इस लफ़्ज़ से समझे जाते हैं, यानी जान जिससे हयात और ज़िन्दगी क़ायम है। क़ुरआने करीम में यह लफ़्ज़ जिब्रीले अमीन के लिये भी इस्तेमाल हुआ है:

نَزَلَ بِهِ الرُّوْحُ الْاَمِيْنُ عَلٰى قَلْبِكَ

और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के लिये भी कई आयतों में इस्तेमाल हुआ है और ख़ुद क़ुरआने करीम और वही को भी रूह के लफ़्ज़ से ताबीर किया गया है:

اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ رُوْحًا مِّنْ اَمْرِنَا

रूह से मुराद क्या है?

इसलिये यहाँ पहली बात सोचने के क़ाबिल यह है कि सवाल करने वालों ने रूह का सवाल किस मायने के लिहाज़ से किया था? मुफ़स्सिरीन हज़रात में से कुछ ने मौक़े के मज़मून की रियायत से यह सवाल वही और क़ुरआन या वही लाने वाले फ़रिश्ते जिब्रील के बारे में क़रार दिया है क्योंकि इससे पहले भी 'नुनज़्ज़िलु मिनल्-क़ुरआनि' में क़ुरआन का ज़िक्र था और बाद की आयतों में फिर क़ुरआन ही का ज़िक्र है। इसके मुनासिब इसको समझा कि सवाल में भी रूह से मुराद वही व क़ुरआन या जिब्रील ही हैं, और मतलब सवाल का यह होगा कि आप पर वही किस तरह आती है, कौन लाता है? क़ुरआने करीम ने इसके जवाब में इस पर बस किया कि अल्लाह के हुक्म से वही आती है, तफ़सील और कैफ़ियतें जिनका सवाल था वो नहीं बतलाईं।

लेकिन सही मरफ़ूअ़ हदीसों में जो इस आयत का शाने नुज़ूल बतलाया गया है वह तक़रीबन इसमें स्पष्ट है कि सवाल करने वालों ने ज़िन्दगी वाली रूह का सवाल किया था और मक़सद सवाल का रूह की हक़ीक़त मालूम करना था कि वह क्या चीज़ है, इनसानी बदन में किस तरह आती जाती है और किस तरह उससे हैवान और इनसान ज़िन्दा हो जाता है। सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि मैं एक दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मदीना के ग़ैर-आबाद हिस्से में चल रहा था रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ मुबारक में एक छड़ी खजूर की शाख़ की थी आपका गुज़र चन्द यहूदियों पर हुआ, ये लोग आपस में कहने लगे कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आ रहे हैं, इनसे रूह के बारे में सवाल करो, दूसरों ने मना किया मगर सवाल करने वालों ने सवाल कर ही डाला। यह सवाल सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम लकड़ी पर टेक लगाकर ख़ामोश खड़े हो गये जिससे मुझे अन्दाज़ा हुआ कि आप पर वही नाज़िल होने वाली है, कुछ ही देर के बाद वही नाज़िल हुई तो आपने यह आयत पढ़कर सुनाई:

وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الرُّوْحِ

(यानी यही आयत नम्बर 85 जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है) यहाँ ज़ाहिर है कि क़ुरआन या वही को रूह कहना यह क़ुरआन की एक ख़ास इस्तिलाह (परिभाषा) थी, उन लोगों के सवाल को इस पर फ़िट करना बहुत दूर की बात है, अलबत्ता हैवान व इनसान की रूह का मामला ऐसा है कि इसका सवाल हर शख़्स के दिल में पैदा होता ही है इसी लिये मुफ़स्सिरीन की एक बड़ी जमाअ़त– इब्ने कसीर, इब्ने जरीर, क़ुर्तुबी, बहरे-मुहीत व रूहुल-मआ़नी के लेखकों सभी ने इसी को सही क़रार दिया है कि सवाल हैवानी रूह (ज़िन्दगी वाली रूह) की हक़ीक़त से था। रहा यह मामला कि आगे-पीछे के मज़मून में ज़िक्र क़ुरआन का चला आया है बीच में रूह का सवाल जवाब बेजोड़ है तो इसका जवाब खुला है कि इससे पहली आयतों में काफ़िरों व मुश्रिकों की मुख़ालफ़त और दुश्मनी भरे सवालों का ज़िक्र आया है जिनसे मक़सद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का रिसालत के बारे में इम्तिहान करना था, यह सवाल भी उसी सिलसिले की एक कड़ी है, इसलिये बेजोड़ नहीं, ख़ास तौर पर इसके शाने नुज़ूल (उतरने के मौक़े व सबब) के बारे में एक दूसरी सही हदीस मन्क़ूल है, उसमें यह बात ज़्यादा स्पष्ट रूप से आ गई है कि सवाल करने वालों का मतलब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत का इम्तिहान लेना था।

चुनाँचे मुस्नद अहमद में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि (मक्का के क़ुरैश जो सही-ग़लत और मुनासिब व ग़ैर-मुनासिब सवालात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से करते रहते थे उनको ख़्याल पैदा हुआ कि यहूदी लोग इल्म वाले हैं उनको पिछली किताबों का भी इल्म है उनसे कुछ सवालात हासिल किये जायें जिनके ज़रिये मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) का इम्तिहान लिया जाये, इसलिये क़ुरैश ने यहूद से मालूम करने के लिये अपने आदमी भेजे उन्होंने कहा कि तुम उनसे रूह के बारे में सवाल करो। (इब्ने कसीर)

और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ही से इस आयत की तफ़सीर में यह भी नक़ल किया है कि यहूद ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अपने सवाल में यह भी कहा था कि आप हमें यह बतलायें कि रूह पर अ़ज़ाब किस तरह होता है, उस वक़्त तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर इस बारे में कोई बात नाज़िल न हुई थी इसलिये उस वक़्त आपने फ़ौरी जवाब नहीं दिया, फिर जिब्रीले अमीन यह आयत लेकर नाज़िल हुए:

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ. (ابن کثیر ملخصا)

(यानी यही आयत नम्बर 85 जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है।)

सवाल का वाक़िआ़ मक्का में पेश आया या मदीना में?

इससे पहले यहाँ एक बात और ग़ौर करने के क़ाबिल है कि इस आयत के उतरने के मुताल्लिक़ जो दो हदीसें हज़रत इब्ने मसऊद और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की ऊपर नक़ल की गई हैं उनमें से हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत के मुताबिक़

सवाल का यह वाक़िआ मदीना में पेश आया और इसी लिये कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस आयत को मदनी क़रार दिया है अगरचे सूरः बनी इस्राईल का अक्सर हिस्सा मक्की है, और इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत का ताल्लुक़ मक्का मुकर्रमा के वाक़िए से है उसके मुताबिक़ यह आयत भी पूरी सूरत की तरह मक्की बाक़ी रहती है इसी लिये इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इसी शुब्हे व गुमान को वरीयता वाला क़रार दिया है और इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत का जवाब यह दिया है कि यह मुम्किन है कि इस आयत का उतरना मदीना में दूसरी मर्तबा हुआ हो जैसा कि क़ुरआन की बहुत-सी आयतों का नुज़ूल (उतरना) दोबारा होना सब उलेमा के नज़दीक मुसल्लम है। और तफ़सीरे मज़हरी ने हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत को वरीयता प्राप्त क़रार देकर यह वाक़िआ मदीना का और आयत को मदनी क़रार दिया है, जिसकी दो वज्हें बतलाईं– एक यह कि यह रिवायत बुख़ारी व मुस्लिम में है और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इसकी सनद ज़्यादा मज़बूत है, दूसरे यह कि इसमें ख़ुद वाक़िआ वाले यानी हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु अपना वाक़िआ बयान कर रहे हैं, बख़िलाफ़ इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वाली रिवायत के कि उसमें ज़ाहिर यही है कि इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह बात किसी से सुनी होगी।

उपर्युक्त सवाल का जवाब

क़ुरआने करीम ने ऊपर बयान हुए सवाल का जवाब यह दिया है:

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ.

इस जवाब की व्याख्या व वज़ाहत में क़ुरआन के मुफ़स्सिरीन हज़रात के कलिमात और ताबीरें भिन्न और अलग-अलग हैं, उनमें सबसे ज़्यादा क़रीब और स्पष्ट वह है जो तफ़सीरे मज़हरी में हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इख़्तियार किया है। वह यह है कि इस जवाब में जितनी बात का बतलाना ज़रूरी था और जो आ़म लोगों की समझ में आने के क़ाबिल है सिर्फ़ वह बतला दी गई, और रूह की मुकम्मल हक़ीक़त जिसका सवाल था उसको इसलिये नहीं बतलाया कि वह आ़म लोगों की समझ से बाहर भी थी और उनकी कोई ज़रूरत उसके समझने पर अटकी भी न थी। यहाँ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हुक्म हुआ कि आप उनके जवाब में यह फ़रमा दीजिये कि "रूह मेरे परवर्दिगार के हुक्म से है।" यानी वो आ़म मख़्लूक़ात की तरह नहीं जो माद्दे के बदलाव और पैदाईश व नस्ल चलने के ज़रिये वजूद में आती हैं, बल्कि वो डायरेक्ट हक़ तआ़ला के हुक्म कुन से पैदा होने वाली चीज़ है।

इस जवाब ने यह तो स्पष्ट कर दिया कि रूह को आ़म माद्दी चीज़ों पर क़ियास नहीं किया जा सकता जिससे वो तमाम शुब्हे दूर हो गये जो रूह को आ़म माद्दी चीज़ों पर क़ियास (अन्दाज़ा व तुलना) करने के नतीजे में पैदा होते हैं, और इनसान के लिये इतना ही इल्म रूह के बारे में काफ़ी है इससे ज़्यादा इल्म के साथ उसका कोई दीनी या दुनियावी काम अटका हुआ नहीं, इसलिये सवाल का वह हिस्सा फ़ुज़ूल और बेमक़सद क़रार देकर उसका जवाब नहीं दिया गया,

ख़ुसूसन जबकि उसकी हक़ीक़त का समझना अ़वाम के लिये तो क्या बड़े-बड़े अ़क़्लमन्दों और फ़लॉस्फ़रों के लिये भी आसान नहीं।

हर सवाल का जवाब देना ज़रूरी नहीं

सवाल करने वाले की दीनी मस्लेहत की रियायत लाज़िम है

इमाम जस्सास रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस जवाब से यह मसला निकाला कि मुफ़्ती और आ़लिम के ज़िम्मे यह ज़रूरी नहीं कि सवाल करने वाले के हर सवाल और उसके हर हिस्से का जवाब ज़रूर दे, बल्कि दीनी मस्लेहतों पर नज़र रखकर जवाब देना चाहिये, जो जवाब मुख़ातब की समझ से बाहर हो या उसके ग़लत-फ़हमी में पड़ जाने का ख़तरा हो तो उसका जवाब नहीं देना चाहिये। इसी तरह बेज़रूरत या बेकार के सवालों का जवाब भी नहीं देना चाहिये, अलबत्ता जिस शख़्स को कोई वाक़िआ पेश आया जिसके बारे में उसको कुछ अ़मल करना लाज़िम है और ख़ुद वह आ़लिम नहीं तो मुफ़्ती और आ़लिम को अपने इल्म के मुताबिक़ उसका जवाब देना ज़रूरी है। (तफ़सीरे जस्सास)

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने 'किताबुल-इल्म' में इस मसले का एक मुस्तक़िल 'तर्जमतुल-बाब' रखकर बतलाया है कि जिस सवाल के जवाब से मुग़ालते (धोखे और ग़लत-फ़हमी) में पड़ जाने का ख़तरा हो उसका जवाब नहीं देना चाहिये।

रूह की हक़ीक़त का इल्म किसी को हो सकता है या नहीं?

क़ुरआने करीम ने इस सवाल का जवाब मुख़ातब की ज़रूरत और समझ के मुताबिक़ दे दिया, रूह की हक़ीक़त को बयान नहीं फ़रमाया, मगर इससे यह लाज़िम नहीं आता कि रूह की हक़ीक़त को कोई इनसान समझ ही नहीं सकता और यह कि ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी उसकी हक़ीक़त मालूम नहीं थी। सही बात यह है कि यह आयत न इसकी नफ़ी करती है न साबित करती है, अगर किसी नबी व रसूल को वही के ज़रिये या किसी वली को कश्फ़ व इल्हाम (अल्लाह की तरफ़ से किसी चीज़ को दिल में डालने या किसी चीज़ की हक़ीक़त खोलने) के ज़रिये इसकी हक़ीक़त मालूम हो जाये तो इस आयत के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि अ़क़्ल व ज्ञान के एतिबार से भी इस पर कोई बहस व तहक़ीक़ की जाये तो इसको फ़ुज़ूल और बेकार तो कहा जायेगा मगर नाजायज़ नहीं कहा जा सकता। इसी लिये पहले और बाद के बहुत-से उलेमा ने रूह के मुताल्लिक़ मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं, आख़िरी दौर में हमारे उस्तादे मोहतरम शैख़ुल-इस्लाम हज़रत मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक मुख़्तसर से रिसाले में इस मसले को बेहतरीन अन्दाज़ पर लिखा है और उसमें जिस क़द्र हक़ीक़त समझना आ़म इनसान के लिये मुम्किन है वह समझा दी है, जिस पर एक पढ़ा-लिखा इनसान क़नाअ़त कर सकता है और शुब्हों व इश्कालों से बच सकता है।

फ़ायदा

इमाम बग़वी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस जगह हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक तफ़सीली रिवायत इस तरह नक़ल फ़रमाई है कि यह आयत मक्का मुकर्रमा में नाज़िल हुई जबकि मक्का के क़ुरैशी सरदारों ने जमा होकर मश्विरा किया कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) हमारे अन्दर पैदा हुए और जवान हुए, उनकी ईमानदारी व सच्चाई में कभी किसी को शुब्हा नहीं हुआ, और कभी उनके बारे में झूठ बोलने की तोहमत भी किसी ने नहीं लगाई और इसके बावजूद अब जो नुबुव्वत का दावा वह कर रहे हैं हमारी समझ में नहीं आता, इसलिये ऐसा करो कि अपना एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) मदीना के यहूदी उलेमा के पास भेजकर उनसे इनके बारे में तहक़ीक़ात करो। चुनाँचे क़ुरैश का एक वफ़्द यहूदियों के उलेमा के पास मदीना पहुँचा, यहूद के उलेमा ने उनको मश्विरा दिया कि हम तुम्हें तीन चीज़ें बतलाते हैं तुम उनसे इन तीनों का सवाल करो। अगर उन्होंने तीनों का जवाब दे दिया तो वह नबी नहीं, और इसी तरह तीनों में से किसी का जवाब न दिया तो भी नबी नहीं, और अगर दो का जवाब दिया तीसरी चीज़ का जवाब न दिया तो समझ लो कि वह नबी हैं। (1) वो तीन सवाल ये बतलाये कि एक तो उनसे उन लोगों का हाल पूछो जो पुराने ज़माने में शिर्क से बचने के लिये किसी ग़ार (गुफा) में छुप गये थे, क्योंकि उनका वाक़िआ़ अ़जीब है। दूसरे उस शख़्स का हाल पूछो जिसने ज़मीन के पूरब व पश्चिम का सफ़र तय किया कि उसका क्या क़िस्सा है। तीसरे रूह के बारे में पूछो।

यह वफ़्द वापस आया और तीनों सवाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने पेश कर दिये। आपने फ़रमाया कि मैं इसका जवाब तुम्हें कल दूँगा, मगर इस पर इन्शा-अल्लाह नहीं कहा, इसका नतीजा यह हुआ कि चन्द दिन तक वही का सिलसिला बन्द हो गया, बारह पन्द्रह से लेकर चालीस दिन तक की विभिन्न रिवायतें हैं जिनमें वही का सिलसिला बन्द रहा। मक्का के क़ुरैश को ताने मारने और बुराई करने का मौक़ा मिला कि कल जवाब देने को कहा था आज इतने दिन हो गये जवाब नहीं मिला। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी परेशानी हुई फिर हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम यह आयत लेकर नाज़िल हुए:

وَلَا تَقُوْلَنَّ لِشَایْءٍ اِنِّیْ فَاعِلٌ ذٰلِكَ غَدًا ۝ اِلَّآ اَنْ یَّشَآءَ اللّٰهُ

जिसमें आपको यह तालीम की गई कि आईन्दा किसी काम के करने का वायदा किया जाये तो इन्शा-अल्लाह कहकर किया जाये, और इसके बाद रूह के मुताल्लिक़ यह आयत सुनाई जो ऊपर बयान हुई, और ग़ार में छुपने वालों के मुताल्लिक़ अस्हाब-ए-कहफ़ का वाक़िआ़ और पूरब से पश्चिम तक सफ़र करने वाले ज़ुल्क़रनैन का वाक़िआ़ पूरी तफ़सील के साथ जवाब में बयान फ़रमाया गया, और रूह के बारे में जिस हक़ीक़त का सवाल था उसका जवाब नहीं दिया गया (जिससे यहूद की बतलाई हुई सच्चा नबी होने की निशानियाँ ज़ाहिर हो गईं)। इस वाक़िए को

(1) यह तफ़सील तफ़सीर मआ़लिमुत्तन्ज़ील पेज 134 जिल्द 4 के मुताबिक़ है। मुहम्मद तक़ी उस्मानी

हदीस की किताब तिर्मिज़ी ने भी मुख़्तसर तौर पर बयान किया है। (तफ़सीरे मज़हरी)

सूरः हिज्र की आयत 29 'नफ़ख़्तु फ़ीहि मिर्रूही' के तहत रूह और नफ़्स वग़ैरह की हक़ीक़त के मुताल्लिक़ एक तहक़ीक़ तफ़सीरे मज़हरी के हवाले से पहले गुज़र चुकी है जिसमें रूह की क़िस्में और हर एक की हक़ीक़त को काफ़ी हद तक खोलकर बयान कर दिया है।

وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ............الخ

पिछली आयत (यानी आयत नम्बर 85) में रूह के सवाल पर ज़रूरत के मुताबिक़ जवाब देकर रूह की हक़ीक़त पूछने की कोशिश से यह कहकर रोक दिया गया था कि इनसान का इल्म कितना ही ज़्यादा हो जाये मगर चीज़ों की हक़ीक़तों के विभिन्न पहलुओं के एतिबार से कम ही रहता है इसलिये ग़ैर-ज़रूरी बहसों और तहक़ीक़ात में उलझना अपने वक़्त को बरबाद करना है। इस आयत नम्बर 86 में इस तरफ़ इशारा है कि इनसान को जिस क़द्र भी इल्म मिला है वह भी उसकी ज़ाती जागीर नहीं, अल्लाह तआ़ला चाहें तो उसको भी छीन सकते हैं, इसलिये उसको चाहिये कि मौजूदा इल्म पर अल्लाह का शुक्र अदा करे और फ़ुज़ूल व बेकार की तहक़ीक़ात में वक़्त बरबाद न करे, विशेष तौर पर जबकि मक़सद तहक़ीक़ करना भी न हो बल्कि दूसरे का इम्तिहान लेना या उसको नीचा दिखाना मक़सद हो, अगर उसने ऐसा किया तो कुछ मुश्किल नहीं कि इस ग़लत हरकत के नतीजे में जितना इल्म हासिल है वह सब छिन जाये। इस आयत में ख़िताब अगरचे नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है मगर असल सुनाना उम्मत को मक़सद है कि जब रसूल का इल्म भी उनके इख़्तियार में नहीं तो दूसरों का क्या कहना है।

قُلْ لَّئِنِ اجْتَمَعَتِ الْاِنْسُ وَالْجِنُّ

यह मज़मून क़ुरआन मजीद की चन्द आयतों में आया है जिसमें पूरी इनसानी दुनिया को ख़िताब करके यह दावा किया गया है कि अगर तुम क़ुरआन को अल्लाह का कलाम नहीं मानते बल्कि किसी इनसान का बनाया हुआ मानते हो तो फिर तुम भी इनसान हो इसकी मिसाल बना कर दिखला दो। इस आयत में इस दावे के साथ यह भी फ़रमा दिया गया कि सिर्फ़ इनसान नहीं जिन्नात को भी अपने साथ मिला लो और फिर तुम सब मिलकर क़ुरआन की एक सूरत बल्कि एक आयत की मिसाल भी न बना सकोगे।

इस मज़मून का इस जगह पर दोहराना मुम्किन है कि यह बतलाने के लिये हो कि तुम जो हमारे रसूल से विभिन्न क़िस्म के सवालात रूह वग़ैरह के बारे में उनकी रिसालत व नुबुव्वत की आज़माईश के लिये करते हो, क्यों इन फ़ुज़ूल क़िस्सों में पड़े हो, ख़ुद क़ुरआने करीम को देख लो तो आपकी नुबुव्वत व रिसालत में किसी शक व शुब्हे की गुंजाईश नहीं रहती, क्योंकि जब सारी दुनिया के जिन्नात व इनसान इसकी मामूली-सी मिसाल बनाने से आ़जिज़ हैं तो इसके अल्लाह का कलाम होने में क्या शुब्हा रहता है, और जब क़ुरआने करीम का अल्लाह का कलाम होना इस आसानी से साबित हो गया तो आपकी नुबुव्वत व रिसालत में किसी शुब्हे की क्या गुंजाईश रहती है।

आख़िरी आयत 'व लक़द् सर्रफ़्ना.......' (यानी आयत नम्बर 89) में यह बतला दिया कि अगरचे क़ुरआने करीम का मोजिज़ा (ख़ुदाई करिश्मा होना) इतना खुला हुआ है कि इसके बाद किसी सवाल और शक व शुब्हे की गुंजाईश नहीं रहती मगर हो यह रहा है कि लोग अल्लाह की नेमतों का शुक्र अदा नहीं करते, क़ुरआन की नेमत की भी क़द्र नहीं पहचानते इसलिये गुमराही में भटकते रहते हैं।

وَقَالُوا لَنْ نُّؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى تَفْجُرَ لَنَا مِنَ الْاَرْضِ يَنْۢبُوْعًا ۙ﴿۹۰﴾ اَوْ تَكُوْنَ لَكَ جَنَّةٌ مِّنْ نَّخِيْلٍ وَّعِنَبٍ فَتُفَجِّرَ الْاَنْهٰرَ خِلٰلَهَا تَفْجِيْرًا ﴿۹۱﴾ اَوْ تُسْقِطَ السَّمَآءَ كَمَا زَعَمْتَ عَلَيْنَا كِسَفًا اَوْ تَاْتِيَ بِاللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ قَبِيْلًا ۙ﴿۹۲﴾ اَوْ يَكُوْنَ لَكَ بَيْتٌ مِّنْ زُخْرُفٍ اَوْ تَرْقٰى فِي السَّمَآءِ ؕ وَلَنْ نُّؤْمِنَ لِرُقِيِّكَ حَتّٰى تُنَزِّلَ عَلَيْنَا كِتٰبًا نَّقْرَؤُهٗ ؕ قُلْ سُبْحَانَ رَبِّيْ هَلْ كُنْتُ اِلَّا بَشَرًا رَّسُوْلًا ۠﴿۹۳﴾ وَمَا مَنَعَ النَّاسَ اَنْ يُّؤْمِنُوْۤا اِذْ جَآءَهُمُ الْهُدٰٓى اِلَّاۤ اَنْ قَالُوْۤا اَبَعَثَ اللّٰهُ بَشَرًا رَّسُوْلًا ﴿۹۴﴾ قُلْ لَّوْ كَانَ فِي الْاَرْضِ مَلٰٓئِكَةٌ يَّمْشُوْنَ مُطْمَئِنِّيْنَ لَنَزَّلْنَا عَلَيْهِمْ مِّنَ السَّمَآءِ مَلَكًا رَّسُوْلًا ﴿۹۵﴾

व क़ालू लन् नुअ्मि-न ल-क हत्ता तफ़्जु-र लना मिनल्-अर्ज़ि यम्बूआ (90) औ तकू-न ल-क जन्नतुम् मिन् नख़ीलिंव्-व ि़अ-नबिन् फतुफज्जिरल् -अन्हा-र ख़िलालहा तफ़्जीरा (91) औ तुस्क़ितस्समा-अ कमा ज़अ़म्-त अ़लैना कि-सफ़न् औ तअ्ति-य बिल्लाहि वल्मलाइ-कति क़बीला (92) औ यकू-न ल-क बैतुम्-मिन् ज़ुख़्रुफिन् औ तर्क़ा फ़िस्समा-इ, व लन्-नुअ्मि-न लिरुक़िय्यि-क हत्ता तुनज़्ज़ि-ल अ़लैना किताबन् नक़्रउहू, क़ुल् सुब्हा-न रब्बी हल् कुन्तु इल्ला ब-शरर्-रसूला (93) ✿	और बोले हम न मानेंगे तेरा कहा जब तक तू न जारी कर दे हमारे वास्ते ज़मीन से एक चश्मा। (90) या हो जाये तेरे वास्ते एक बाग़ खजूर और अंगूर का, फिर बहाये तू उसके बीच नहरें चलाकर। (91) या गिरा दे हम पर आसमान जैसा कि तू कहा करता है टुकड़े-टुकड़े, या ले आ अल्लाह को और फ़रिश्तों को सामने। (92) या हो जाये तेरे लिये एक घर सुनहरा या चढ़ जाये तू आसमान में और हम न मानेंगे तेरे चढ़ जाने को जब तक न उतार लाये हम पर एक किताब जिसको हम पढ़ लें। तू कह सुब्हानल्लाह मैं कौन हूँ मगर एक आदमी हूँ भेजा हुआ। (93) ✿

व मा म-नअ़न्ना-स अंय्युअ्मिनू इज़् जा-अहुमुल्-हुदा इल्ला अन् क़ालू अ-ब-अ़सल्लाहु ब-शर्रसूला (94)	और लोगों को रोका नहीं ईमान लाने से जब पहुँची उनको हिदायत मगर इसी बात ने कि कहने लगे- क्या अल्लाह ने भेजा आदमी को पैग़ाम देकर? (94)
क़ुल् लौ का-न फ़िल्अर्ज़ि मलाइ-कतुंय्-यम्शू-न मुत्मइन्नी-न लनज़्ज़ल्ना अ़लैहिम् मिनस्समा-इ म-लकर्रसूला (95)	कह अगर होते ज़मीन में फ़रिश्ते फिरते-बस्ते तो हम उतारते उन पर आसमान से कोई फ़रिश्ता पैग़ाम देकर। (95)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

इनसे पहले की आयतों में काफ़िरों के चन्द सवालात और उनके जवाबात ज़िक्र किये गये हैं अब इन आयतों में उनके चन्द दुश्मनी व मुख़ालफ़त भरे सवालात और बेसर-पैर की फ़रमाईशों का ज़िक्र और उनका जवाब है। (तफ़सीर इब्ने जरीर, हज़रत इब्ने अ़ब्बास की रिवायत से)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ये लोग (इसके बावजूद कि क़ुरआन के मोजिज़ा होने के ज़रिये आपकी नुबुव्वत व रिसालत का काफ़ी और वाज़ेह सुबूत इनको मिल चुका, फिर भी दुश्मनी व मुख़ालफ़त की वजह से ईमान नहीं लाते और ये बहाने करते हैं कि) कहते हैं कि हम आप पर हरगिज़ ईमान न लाएँगे जब तक आप हमारे लिये (मक्का की) ज़मीन से कोई चश्मा जारी न कर दें। या ख़ास आपके लिए खजूर और अंगूरों का कोई बाग़ न हो, फिर उस बाग़ के बीच-बीच में जगह-जगह बहुत-सी नहरें आप जारी कर दें। या जैसा कि आप कहा करते हैं, आप आसमान के टुकड़े हम पर न गिरा दें (जैसा कि क़ुरआन की इस आयत में इरशाद है:

إِنْ نَّشَأْ نَخْسِفْ بِهِمُ الْأَرْضَ أَوْ نُسْقِطْ عَلَيْهِمْ كِسَفًا مِّنَ السَّمَآءِ.

"यानी हम चाहें तो उनको ज़मीन के अन्दर धंसा दें या उन पर आसमान के टुकड़े गिरा दें") या आप अल्लाह को और फ़रिश्तों को (हमारे) सामने न ला खड़ा कर दें (कि हम खुल्लम खुल्ला देख लें)। या आपके पास कोई सोने का बना हुआ घर न हो, या आप (हमारे सामने) आसमान पर न चढ़ जाएँ, और हम तो आपके (आसमान पर) चढ़ने का कभी भी यक़ीन न करेंगे जब तक कि (वहाँ से) आप हमारे पास एक किताब न ला दें, जिसको हम पढ़ भी लें (और उसमें आपके आसमान पर पहुँचने की तस्दीक़ के तौर पर रसीद लिखी हुई हो)। आप (इन सब ख़ुराफ़ात के जवाब में) फ़रमा दीजिये कि सुब्हानल्लाह! मैं सिवाय इसके कि आदमी हूँ (मगर) पैग़म्बर हूँ और क्या हूँ (कि इन फ़रमाईशों को पूरा करना मेरी क़ुदरत में हो, यह कामिल

क़ुदरत और पूरा इख़्तियार तो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही की सिफ़त है, इनसान होना अपनी ज़ात में ख़ुद बेबसी व बेइख़्तियारी को लिये हुए है, रहा रिसालत का मामला तो वह भी इसका तक़ाज़ा नहीं करता कि अल्लाह के रसूल को हर चीज़ का मुकम्मल इख़्तियार हो बल्कि नुबुव्वत व रिसालत के लिये तो इतनी बात काफ़ी है कि रिसालत की कोई साफ़ स्पष्ट दलील आ जाये जिस पर अक़्ल वाले को एतिराज़ न हो सके, और वह दलील क़ुरआन के बेमिसाल व मोजिज़ा होना और दूसरे मोजिज़ों की सूरत में बार-बार पेश की जा चुकी है, इसलिये नुबुव्वत व रिसालत के लिये इन फ़रमाईशों का मुतालबा बिल्कुल बेहूदा है, हाँ! अल्लाह तआ़ला को सब क़ुदरत है वह सब कुछ कर सकते हैं मगर उससे किसी को मुतालबे का हक़ नहीं, जिस चीज़ को वह हिक्मत के मुताबिक़ देखते हैं ज़ाहिर भी कर देते हैं मगर यह ज़रूरी नहीं कि तुम्हारी सब फ़रमाईशें पूरी करें)।

और जिस वक़्त उन लोगों के पास हिदायत (यानी रिसालत की सही दलील जैसे क़ुरआन का मोजिज़ा होना) पहुँच चुकी, उस वक़्त उनको ईमान लाने से सिवाय इसके और कोई (क़ाबिले तवज्जोह) बात रुकावट नहीं हुई कि उन्होंने (इनसान होने को रिसालत के विरुद्ध समझा, इसलिये कहा) क्या अल्लाह तआ़ला ने आदमी को रसूल बनाकर भेजा है (यानी ऐसा नहीं हो सकता)। आप (जवाब में हमारी तरफ़ से) फ़रमा दीजिए कि अगर ज़मीन पर फ़रिश्ते (रहते) होते कि इसमें चलते-बसते तो ज़रूर हम अलबत्ता उन पर आसमान से फ़रिश्ते को रसूल बनाकर भेजते।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बिना सर-पैर के मुख़ालफ़त भरे सवालात का पैग़म्बराना जवाब

ऊपर बयान हुई आयतों में जो सवालात और फ़रमाईशें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अपने ईमान लाने की शर्त क़रार देकर की गईं वो सब ऐसी हैं कि हर इनसान उनको सुनकर एक क़िस्म का मज़ाक़ और ईमान न लाने का बेहूदा बहाने के सिवा कुछ नहीं समझ सकता। ऐसे सवालात के जवाब में इनसान को फ़ितरी तौर पर ग़ुस्सा आता है और जवाब भी उसी अन्दाज़ का देता है, मगर इन आयतों में उनके बेहूदा सवालात का जो जवाब हक़ तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तालीम फ़रमाया वह ध्यान देने के क़ाबिल और उम्मत के सुधारकों के लिये हमेशा याद रखने और अ़मल में लाने वाली चीज़ है, कि उन सब के जवाब में न उनकी बेवक़ूफ़ी का इज़हार किया गया न उनकी दुश्मनी भरी शरारत का, न उन पर कोई फ़िक़रा कसा गया बल्कि निहायत सादा अलफ़ाज़ में असल हक़ीक़त को स्पष्ट कर दिया गया कि तुम लोग शायद यह समझते हो कि जो शख़्स ख़ुदा का रसूल होकर आये उसे सारे ख़ुदाई के इख़्तियारात का मालिक और हर चीज़ पर क़ादिर होना चाहिये, यह सोच और धारणा ग़लत है, रसूल का काम सिर्फ़ अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाना है, अल्लाह तआ़ला उनकी रिसालत

को साबित करने के लिये बहुत-से मोजिज़े भी भेजते हैं मगर वो सब कुछ महज़ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत व इख़्तियार से होता है, रसूल को ख़ुदाई के इख़्तियारात नहीं मिलते, वह एक इनसान होता है और इनसानी ताक़त व क़ुदरत से बाहर नहीं होता सिवाय इसके कि अल्लाह तआ़ला ही उसकी इमदाद के लिये अपनी ग़लबे वाली ताक़त को ज़ाहिर फ़रमा दें।

अल्लाह का रसूल इनसान ही हो सकता है फ़रिश्ते इनसानों की तरफ़ रसूल नहीं हो सकते

आ़म काफ़िरों व मुश्रिकों का ख़्याल था कि बशर यानी आदमी अल्लाह का रसूल नहीं हो सकता, क्योंकि वह तो हमारी तरह तमाम इनसानी ज़रूरतों का आ़दी होता है, फिर उसको हम पर क्या बरतरी और श्रेष्ठता हासिल है कि हम उसको अल्लाह का रसूल समझें और अपना मुक़्तदा (पेशवा और क़ाबिले पैरवी) बना लें। उनके इस ख़्याल का जवाब क़ुरआने करीम में कई जगह विभिन्न उनवानों से दिया गया है। यहाँ आयत 'व मा म-नअ़न्ना-स.....' (यानी आयत नम्बर 94) में जो जवाब दिया गया है उसका हासिल यह है कि अल्लाह का रसूल जिन लोगों की तरफ़ भेजा जाये वह उन्हीं की जिन्स में से होना ज़रूरी है। अगर ये आदमी हैं तो रसूल भी आदमी होना चाहिये, क्योंकि ग़ैर-जिन्स के साथ आपसी मुनासबत नहीं होती और बिना मुनासबत के हिदायत व रहनुमाई का फ़ायदा हासिल नहीं होता। अगर आदमियों की तरफ़ किसी फ़रिश्ते को रसूल बनाकर भेज दें जो न भूख को जानता है न प्यास को न जिन्सी इच्छाओं को न सर्दी गर्मी के एहसास को, न उसको कभी मेहनत से थकान लाहिक़ होती है तो वह इनसानों से भी ऐसे ही अ़मल की अपेक्षा रखता, उनकी कमज़ोरी व मजबूरी का एहसास न करता।

इसी तरह इनसान जब यह समझते कि यह तो फ़रिश्ता है हम इसके कामों की नक़ल करने की सलाहियत नहीं रखते तो उसकी पैरवी क्या ख़ाक करते। यह फ़ायदा इस्लाह और हिदायत व रहनुमाई का सिर्फ़ इसी सूरत में हो सकता है कि अल्लाह का रसूल हो तो आदमियत की जिन्स से जो तमाम इनसानी जज़्बात और तबई इच्छाओं को ख़ुद भी अपने अन्दर रखता हो मगर साथ ही उसको फ़रिश्तों वाली एक शान भी हासिल हो कि आ़म इनसानों और फ़रिश्तों के बीच वास्ते (माध्यम) और संपर्क का काम कर सके, वही लाने वाले फ़रिश्तों से वही हासिल करे और अपने हम-जिन्स इनसानों को पहुँचाये।

इस तक़रीर से यह शुब्हा भी दूर हो गया कि जब इनसान फ़रिश्ते से फ़ैज़ (लाभ व फ़ायदा) हासिल नहीं कर सकता तो फिर रसूल बावजूद इनसान होने के किस तरह उनसे वही का फ़ैज़ हासिल कर सकेगा।

रहा यह शुब्हा कि जब रसूल और उम्मत में एक जिन्स का होना शर्त है तो फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जिन्नात का रसूल किस तरह बनाया गया, जिन्नात तो इनसान

के हम-जिन्स नहीं, तो जवाब यह है कि रसूल सिर्फ़ इनसान नहीं बल्कि उसमें एक शान फ़रिश्तों वाली भी होती है, उसकी वजह से जिन्नात को भी मुनासबत उनसे हो सकती है।

आयत के आख़िर में यह इरशाद फ़रमाया कि तुम इनसान होने के बावजूद जो यह मुतालबा करते हो कि हमारा रसूल फ़रिश्ता होना चाहिये, यह मुतालबा तो नामाक़ूल है, अलबत्ता अगर इस ज़मीन पर फ़रिश्ते आबाद होते और उनकी तरफ़ रसूल भेजने की ज़रूरत होती तो फ़रिश्ते ही को रसूल बनाया जाता। इसमें जो ज़मीन पर बसने वाले फ़रिश्तों का यह वस्फ़ (सिफ़त और ख़ूबी) ज़िक्र किया गया है कि 'यमशू-न मुत्मइन्नी-न' यानी वे फ़रिश्ते ज़मीन पर मुत्मईन होकर चलते-फिरते, इससे मालूम हुआ कि फ़रिश्तों की तरफ़ फ़रिश्तों को रसूल बनाकर भेजने की ज़रूरत उसी वक़्त हो सकती थी जबकि ज़मीन के फ़रिश्ते ख़ुद आसमान पर न जा सकते बल्कि ज़मीन ही पर चलते-फिरते रहते, वरना अगर वे ख़ुद आसमान पर जाने की क़ुदरत रखते तो ज़मीन पर रसूल भेजने की ज़रूरत ही न रहती।

قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ۚ إِنَّهٗ كَانَ بِعِبَادِهٖ خَبِيْرًا بَصِيْرًا ۝ وَمَنْ يَّهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ ۚ وَمَنْ يُّضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ أَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِهٖ ۚ وَنَحْشُرُهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَلٰى وُجُوْهِهِمْ عُمْيًا وَّبُكْمًا وَّصُمًّا ۚ مَأْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۚ كُلَّمَا خَبَتْ زِدْنٰهُمْ سَعِيْرًا ۝ ذٰلِكَ جَزَآؤُهُمْ بِأَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا وَقَالُوْٓا ءَإِذَا كُنَّا عِظَامًا وَّرُفَاتًا ءَإِنَّا لَمَبْعُوْثُوْنَ خَلْقًا جَدِيْدًا ۝ أَوَلَمْ يَرَوْا أَنَّ اللّٰهَ الَّذِيْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضَ قَادِرٌ عَلٰٓى أَنْ يَّخْلُقَ مِثْلَهُمْ وَجَعَلَ لَهُمْ أَجَلًا لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۚ فَأَبَى الظّٰلِمُوْنَ إِلَّا كُفُوْرًا ۝ قُلْ لَّوْ أَنْتُمْ تَمْلِكُوْنَ خَزَآئِنَ رَحْمَةِ رَبِّيْٓ إِذًا لَّأَمْسَكْتُمْ خَشْيَةَ الْإِنْفَاقِ ۚ وَكَانَ الْإِنْسَانُ قَتُوْرًا ۝

क़ुल् कफ़ा बिल्लाहि शहीदम्-बैनी व बैनकुम्, इन्नहू का-न बिअ़िबादिही ख़बीरम्-बसीरा (96) व मंय्यहदिल्लाहु फ़हुवल्-मुह्तदि व मंय्युज़्लिल् फ़-लन् तजि-द लहुम् औलिया-अ मिन् दूनिही, व नह़्शुरुहुम् यौमल्-क़ियामति अ़ला वुजूहिहिम् उम्यंव्-व बुक्मंव्-व सुम्मन्, मअ्वाहुम् जहन्नमु, कुल्लमा ख़बत् ज़िद्नाहुम् सअ़ीरा (97) ●	कह अल्लाह काफ़ी है हक़ साबित करने वाला मेरे और तुम्हारे बीच में, वह है अपने बन्दों से ख़बरदार देखने वाला। (96) और जिसको राह दिखलाये अल्लाह वही है राह पाने वाला और जिसको भटकाये फिर तू न पाये उनके वास्ते कोई साथी अल्लाह के सिवा, और उठायेंगे हम उनको क़ियामत के दिन, चलेंगे मुँह के बल अंधे और गूँगे और बहरे, ठिकाना उनका दोज़ख़ है, जब लगेगी बुझने और भड़का देंगे उन पर। (97) ●

ज़ालि-क जज़ा-उहुम् बिअन्नहुम् क-फ़रू बिआयातिना व क़ालू अ-इज़ा कुन्ना अ़िज़ामंव्-व रुफ़ातन् अ-इन्ना लमब्अूसू-न ख़ल्क़न् जदीदा (98) अ-व लम् यरौ अन्नल्लाहल्लज़ी ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ क़ादिरुन् अ़ला अंय्यख़्लु-क़ मिस्लहुम् व ज-अ़-ल लहुम् अ-जलल्-ला रै-ब फ़ीहि, फ़-अबज़्ज़ालिमू-न इल्ला कुफ़ूरा (99) क़ुल् लौ अन्तुम् तम्लिकू-न ख़ज़ाइ-न रह्मति रब्बी इज़ल् ल-अम्सक्तुम् ख़श्य-तल्-इन्फ़ाक़ि, व कानल्-इन्सानु क़तूरा (100) ✿

यह उनकी सज़ा है इस वास्ते कि मुन्किर हुए हमारी आयतों से और बोले क्या जब हम हो गये हड्डियाँ और चूरा चूरा, क्या हमको उठायेंगे नये बनाकर। (98) क्या नहीं देख चुके कि जिस अल्लाह ने बनाये आसमान और ज़मीन वह बना सकता है ऐसों को और मुक़र्रर किया है उनके वास्ते एक वक़्त जिसमें कोई शुब्हा नहीं, सो नहीं रहा जाता बेइन्साफ़ों से नाशुक्री किये बग़ैर। (99) कह अगर तुम्हारे हाथ में होते मेरे रब की रहमत के ख़ज़ाने तो ज़रूर बन्द कर रखते इस डर से कि ख़र्च न हो जायें, और इनसान है दिल का तंग। (100) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(जब ये लोग रिसालत व नुबुव्वत की स्पष्ट दलीलें आ जाने और तमाम शुब्हात दूर हो जाने के बाद भी नहीं मानते तो) आप (आख़िरी बात) कह दीजिये कि अल्लाह तआ़ला मेरे और तुम्हारे बीच (के झगड़े में) काफ़ी गवाह है (यानी ख़ुदा जानता है कि मैं वास्तव में अल्लाह का रसूल हूँ क्योंकि) वह अपने बन्दों (के हालात) को ख़ूब जानता, ख़ूब देखता है (तुम्हारी दुश्मनी व मुख़ालफ़त को भी देखता है)। और अल्लाह तआ़ला जिसको राह पर लाये वही राह पर आता है, और जिसको वह बेराह कर दे तो ख़ुदा के सिवा आप किसी को भी ऐसों का मददगार न पाएँगे (और कुफ़्र की वजह से ये ख़ुदा की मदद से मेहरूम रहे। मतलब यह है कि जब तक ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से मदद न हो न हिदायत हो सकती है न अ़ज़ाब से निजात)।

और हम कियामत के दिन उनको अंधा गूँगा बहरा करके मुँह के बल चलाएँगे, उनका ठिकाना दोज़ख़ है (जिसकी यह कैफ़ियत होगी कि) वह (यानी दोज़ख़ की आग) जब ज़रा धीमी होने लगेगी उसी वक़्त हम उनके लिये और ज़्यादा भड़का देंगे। यह है उनकी सज़ा, इस सबब से कि उन्होंने हमारी आयतों का इनकार किया था, और यूँ कहा था कि क्या हम हड्डियाँ और (वह

भी) बिल्कुल चूरा-चूरा हो जाएँगे तो क्या हम नये सिरे से पैदा करके (क़ब्रों से) उठाये जाएँगे। क्या उन लोगों को इतना मालूम नहीं कि जिस अल्लाह ने आसमान और ज़मीन पैदा किये वह इस बात पर (और भी ज़्यादा) क़ादिर है कि वह उन जैसे आदमी दोबारा पैदा कर दे, और (इनकार करने वालों को शायद यह ख़्याल व गुमान हो कि हज़ारों लाखों मर गये मगर अब तक तो यह वायदा दोबारा ज़िन्दा होकर उठने का पूरा हुआ नहीं, तो इसकी वजह यह है कि) उनके (दोबारा पैदा करने के) लिये एक मियाद निर्धारित कर रखी है, उस (निर्धारित) मियाद (के आने) में ज़रा भी शक नहीं, इस पर भी बेइन्साफ़ लोग इनकार किये बग़ैर न रहे। आप फ़रमा दीजिये कि अगर तुम लोग मेरे रब की रहमत (यानी नुबुव्वत) के ख़ज़ानों (यानी कमालात) के मुख़्तार होते (कि जिसको चाहते देते जिसको चाहते न देते) तो उस सूरत में तुम (उसके) ख़र्च हो जाने के डर से ज़रूर हाथ रोक लेते (कभी किसी को न देते, हालाँकि यह चीज़ किसी को देने से घटती भी नहीं), और आदमी है ही बड़ा तंगदिल (कि न घटने वाली चीज़ को भी अ़ता करने में संकोच करता है, जिसकी वजह रसूलों से दुश्मनी और कन्जूसी के अ़लावा शायद यह भी हो कि अगर किसी को नबी और रसूल बना लिया तो फिर उसके अहकाम की पाबन्दी करनी पड़ेगी जैसे कोई क़ौम आपस में इत्तिफ़ाक़ करके किसी को अपना बादशाह बना ले तो अगरचे बनाया उन्होंने है मगर जब वह बादशाह बनेगा तो उसकी फ़रमाँबरदारी करनी पड़ती है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आख़िरी आयत में जो यह इरशाद है कि अगर तुम लोग अल्लाह की रहमत के ख़ज़ानों के मालिक हो जाओ तो तुम कन्जूसी करोगे किसी को न दोगे, इस डर से कि अगर लोगों को देते रहे तो यह ख़ज़ाना ख़त्म हो जायेगा अगरचे रहमते रब का ख़ज़ाना ख़त्म होने वाला नहीं मगर इनसान अपनी तबीयत से तंगदिल कम-हौसला होता है उसको खुले दिल के साथ लोगों को देने का हौसला नहीं होता।

इसमें रहमते रब के ख़ज़ानों के लफ़्ज़ से आ़म मुफ़स्सिरीन ने माल व दौलत के ख़ज़ाने मुराद लिये हैं और इसका संबन्ध पीछे के मज़मून से यह है कि मक्का के काफ़िरों ने इसकी फ़रमाईश भी की थी कि अगर आप वाक़ई सच्चे नबी हैं तो आप इस मक्का के सूखे रेगिस्तान में नहरें जारी करके इसको हरे-भरे बाग़ात में मुन्तकिल कर दें, जैसा मुल्के शाम में ख़ित्ता है, जिसका जवाब पहले आ चुका है कि तुमने तो गोया मुझे ख़ुदा ही समझ लिया कि ख़ुदाई के इख़्तियारात का मुझसे मुतालबा कर रहे हो, मैं तो सिर्फ़ एक रसूल हूँ ख़ुदा नहीं कि जो चाहूँ कर दूँ। यह आयत भी अगर इसी से संबन्धित क़रार दी जाये तो मतलब यह होगा कि मक्का की सरज़मीन को नहरी ज़मीन और हरी-भरी बनाने की फ़रमाईश अगर मेरी नुबुव्वत व रिसालत के इम्तिहान के लिये है तो इसके लिये क़ुरआन का बेमिसाल और मोजिज़ा होना काफ़ी है, दूसरी फ़रमाईशों की ज़रूरत नहीं। और अगर अपनी क़ौमी और मुल्की ज़रूरत पूरी करने के लिये है तो याद रखो कि अगर तुम्हारी फ़रमाईश के मुताबिक़ तुम्हें मक्का की ज़मीन में सब कुछ दे भी

दिया जाये और ख़ज़ानों का मालिक तुम्हें बना दिया जाये तो इसका अन्जाम भी क़ौम और मुल्क के अ़वाम की ख़ुशहाली नहीं होगा बल्कि इनसानी आ़दत के मुताबिक़ जिनके क़ब्ज़े में ये ख़ज़ाने आ जायेंगे वे इन पर साँप बनकर बैठ जायेंगे, अ़वाम पर ख़र्च करते हुए तंगदस्ती और ग़ुर्बत का ख़ौफ़ उनके लिये रुकावट होगा। ऐसी सूरत में सिवाय इसके कि मक्का के चन्द सरदार और ज़्यादा अमीर और ख़ुशहाल हो जायें अ़वाम का क्या फ़ायदा होगा। अक्सर मुफ़स्सिरीन ने इस आयत का यही मतलब बयान किया है।

सय्यिदी हज़रत हकीमुल-उम्मत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में इस जगह रहमते रब से मुराद नुबुव्वत व रिसालत और रहमत के ख़ज़ानों से मुराद नुबुव्वत के कमालात लिये हैं। इस तफ़सीर के मुताबिक़ इसका पहले की आयतों से ताल्लुक़ यह होगा कि तुम जो नुबुव्वत व रिसालत के लिये बिना सर-पैर के और बेहूदा मुतालबे कर रहे हो इसका हासिल यह है कि मेरी नुबुव्वत को मानना नहीं चाहते, तो क्या फिर तुम्हारी इच्छा यह है कि नुबुव्वत का निज़ाम तुम्हारे हाथों में दे दिया जाये जिसको तुम चाहो नबी बना लो। अगर ऐसा कर लिया जाये तो इसका नतीजा यह होगा कि तुम किसी को भी नुबुव्वत व रिसालत न दोगे, हाथ रोक कर बैठ जाओगे। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस तफ़सीर को नक़ल करके फ़रमाया है कि यह तफ़सीर अल्लाह तआ़ला की ख़ास अ़ताओं में से है कि मक़ाम के साथ बहुत ही फ़िट है, इसमें नुबुव्वत को रहमत के साथ ताबीर करना ऐसा ही होगा जैसे आयतः

اَهُمْ يَقْسِمُوْنَ رَحْمَةَ رَبِّكَ

में तमाम हज़रात के नज़दीक रहमत से मुराद नुबुव्वत ही है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ فَسْــَٔلْ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ

اِذْ جَاۗءَهُمْ فَقَالَ لَهٗ فِرْعَوْنُ اِنِّىْ لَاَظُنُّكَ يٰمُوْسٰي مَسْحُوْرًا ۝ قَالَ لَقَدْ عَلِمْتَ مَآ اَنْزَلَ هٰٓؤُلَاۗءِ اِلَّا رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ بَصَاۗىِٕرَ ۚ وَاِنِّىْ لَاَظُنُّكَ يٰفِرْعَوْنُ مَثْبُوْرًا ۝ فَاَرَادَ اَنْ يَّسْتَفِزَّهُمْ مِّنَ الْاَرْضِ فَاَغْرَقْنٰهُ وَمَنْ مَّعَهٗ جَمِيْعًا ۝ وَّقُلْنَا مِنْۢ بَعْدِهٖ لِبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اسْكُنُوا الْاَرْضَ فَاِذَا جَاۗءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ جِئْنَا بِكُمْ لَفِيْفًا ۝ وَبِالْحَقِّ اَنْزَلْنٰهُ وَبِالْحَقِّ نَزَلَ ۭ وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا مُبَشِّرًا وَّنَذِيْرًا ۝ وَقُرْاٰنًا فَرَقْنٰهُ لِتَقْرَاَهٗ عَلَي النَّاسِ عَلٰي مُكْثٍ وَّنَزَّلْنٰهُ تَنْزِيْلًا ۝ قُلْ اٰمِنُوْا بِهٖٓ اَوْ لَا تُؤْمِنُوْا ۭ اِنَّ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْعِلْمَ مِنْ قَبْلِهٖٓ اِذَا يُتْلٰى عَلَيْهِمْ يَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ سُجَّدًا ۝ وَّيَقُوْلُوْنَ سُبْحٰنَ رَبِّنَآ اِنْ كَانَ وَعْدُ رَبِّنَا لَمَفْعُوْلًا ۝ وَيَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ يَبْكُوْنَ وَيَزِيْدُهُمْ خُشُوْعًا ۝

وقف لازم

السجدة (٢)

व ल-क़द् आतैना मूसा तिस्-अ आयातिम्-बय्यिनातिन् फ़स्अल् बनी इस्राई-ल इज़् जा-अहुम् फ़क़ा-ल लहू फ़िर्औ़नु इन्नी ल-अज़ुन्नु-क या मूसा मस्हूरा (101) क़ा-ल ल-क़द् अ़लिम्-त मा अन्ज़-ल हाउला-इ इल्ला रब्बुस्समावाति वल्अर्ज़ि बसाइ-र व इन्नी ल-अज़ुन्नु-क या फ़िर्औ़नु मस्बूरा (102) फ़-अरा-द अंय्यस्तफ़िज़्ज़हुम् मिनल्-अर्ज़ि फ़-अग़्रक़्नाहु व मम्-म-अ़हू जमीआ़ (103) व क़ुल्ना मिम्-बअ़्दिही लि-बनी इस्राईलस्कुनुल्-अर्-ज़ फ़-इज़ा जा-अ वअ़्दुल्-आख़िरति जिअ्ना बिकुम् लफ़ीफ़ा (104) व बिल्हक़्क़ि अन्ज़ल्नाहु व बिल्हक़्क़ि न-ज़-ल, मा अर्सल्ना-क इल्ला मुबश्शिरंव्-व नज़ीरा। (105) व क़ुर्आनन् फ़रक़्नाहु लितक़्र-अहू अ़लन्नासि अ़ला मुक्सिंव्-व नज़्ज़ल्नाहु तन्ज़ीला (106) क़ुल् आमिनू बिही औ ला तुअ्मिनू, इन्नल्लज़ी-न ऊतुल्-अ़िल्-म मिन् क़ब्लिही इज़ा युत्ला अ़लैहिम् यख़िर्रू-न लिल्अज़्क़ानि

और हमने दीं मूसा को नौ निशानियाँ साफ़ फिर पूछ बनी इस्राईल से जब आया वह उनके पास तो कहा उसको फ़िरऔ़न ने मेरी अटकल में तो मूसा तुझ पर जादू हुआ। (101) बोला तू जान चुका है कि ये चीज़ें किसी ने नहीं उतारीं मगर ज़मीन और आसमान के मालिक ने समझाने को और मेरी अटकल में फ़िरऔ़न तू ग़ारत हुआ चाहता है। (102) फिर चाहा कि बनी इस्राईल को चैन न दे उस ज़मीन में, फिर डुबा दिया हमने उसको और उसके साथ वालों को सब को। (103) और कहा हमने उसके बाद बनी इस्राईल को, आबाद रहो तुम ज़मीन में फिर जब आयेगा वायदा आख़िरत का ले आयेंगे हम तुमको समेटकर। (104) और सच के साथ उतारा हमने यह क़ुरआन और सच के साथ उतरा, और तुझको जो भेजा हमने सो ख़ुशी और डर सुनाने को। (105) और पढ़ने को वज़ीफ़ा किया हमने क़ुरआन को अलग-अलग करके कि पढ़े तू इसको लोगों पर ठहर-ठहरकर और हम ने इसको उतारते उतारते उतारा। (106) कह तुम इसको मानो या न मानो जिनको इल्म मिला है इससे पहले से जब उनके पास इसको पढ़िये गिरते हैं ठोड़ियों पर

सुज्जदा (107) व यक़ूलू-न सुब्हा-न रब्बिना इन् का-न वअ्दु रब्बिना ल-मफ़्अूला (108) व यख़िर्रू-न लिल्अज़्क़ानि यब्कू-न व यज़ीदुहुम् ख़ुशूआ। (109) ۞	सज्दे में। (107) और कहते हैं पाक है हमारा रब, बेशक हमारे रब का वायदा होकर रहेगा। (108) और गिरते हैं ठोड़ियों पर रोते हुए और ज़्यादा होती है उनको आजिज़ी। (109) ۞

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को खुले हुए नौ मोजिज़े दिये (जिनका ज़िक्र पारा नम्बर नौ के छठे रुकूअ़ आयत नम्बर एक में है) जबकि वह बनी इस्राईल के पास आये थे। सो आप बनी इस्राईल से (भी चाहे) पूछ देखिये (और चूँकि आप फ़िरऔन की तरफ़ भी भेजे गये थे और फ़िरऔन और उसकी आल के ईमान न लाने से वो अ़जीब चीज़ें और मोजिज़े ज़ाहिर हुए थे इसलिये मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़िरऔन को दोबारा ईमान लाने के लिये याददेहानी कराई और उन स्पष्ट निशानियों से डराया) तो फ़िरऔन ने उनसे कहा कि ऐ मूसा! मेरे ख़्याल में तो ज़रूर तुम पर किसी ने जादू कर दिया है (जिससे तुम्हारी अ़क्ल ख़राब हो गई कि ऐसी बहकी-बहकी बातें करते हो)। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया तू (दिल में) ख़ूब जानता है (अगरचे शर्म की वजह से ज़बान से इक़रार नहीं करता) कि ये अ़जीब चीज़ें ख़ास आसमान और ज़मीन के परवर्दिगार ने ही भेजी हैं, जो कि बसीरत "यानी समझ व अ़क्ल" के लिये (काफ़ी) साधन हैं, और मेरे ख़्याल में ज़रूर तेरी कम-बख़्ती के दिन आ गये हैं (और या तो फ़िरऔन की यह हालत थी कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की दरख़्वास्त पर भी बनी इस्राईल को मिस्र से जाने की इजाज़त न देता था और) फिर (यह हुआ कि) उसने (इस ख़्याल व संदेह से कि कहीं बनी इस्राईल मूसा अ़लैहिस्सलाम के असर से ताक़त न पकड़ जायें ख़ुद ही) चाहा कि बनी इस्राईल का उस सरज़मीन से क़दम उखाड़ दे (यानी उनको शहर से निकाल दे), सो हमने (इससे पहले कि वह कामयाब हो ख़ुद) उस (ही) को और जो उसके साथ थे सब को डुबो दिया। और उस (डुबोने) के बाद हमने बनी इस्राईल को कह दिया कि (अब) तुम इस सरज़मीन (के जहाँ से तुमको निकालना चाहता था मालिक हो, तुम ही इस) में रहो-सहो (चाहे मौजूदा हालत में या सलाहियत के एतिबार से, मगर यह मालिक बनना दुनियावी ज़िन्दगी तक है) फिर जब आख़िरत का वायदा आ जायेगा तो हम सब को जमा करके (क़ियामत के मैदान में गुलामी और मातहती की हालत में) ला हाज़िर करेंगे (यह शुरूआ़त में होगा फिर मोमिन व काफ़िर और नेक व बद को अलग अलग कर दिया जायेगा)।

और (जिस तरह हमने मूसा अ़लैहिस्सलाम को मोजिज़े दिये उसी तरह आपको भी बहुत-से

मोजिज़े दिये जिनमें अ़ज़ीमुश्शान मोजिज़ा क़ुरआन है कि) हमने इस क़ुरआन को सच्चाई ही के साथ नाज़िल किया और वह सच्चाई ही के साथ (आप पर) नाज़िल हो गया (यानी जैसा अल्लाह के पास से चला था उसी तरह आप तक पहुँच गया और बीच में कोई कमी-बेशी व तब्दीली और उलट-फेर नहीं हुआ। पस पूरी तरह सच्चाई ही सच्चाई है)। और (जिस तरह हमने मूसा अ़लैहिस्सलाम को पैग़म्बर बनाया था और हिदायत उनके इख़्तियार में न थी उसी तरह) हमने आपको (भी) सिर्फ़ (ईमान पर सवाब की) ख़ुशी सुनाने वाला और (कुफ़्र पर अ़ज़ाब से) डराने वाला बनाकर भेजा है (अगर कोई ईमान न लाये कुछ ग़म न कीजिये)। और क़ुरआन (में सच्चाई व हक़ की सिफ़त के साथ रहमत के तक़ाज़े से और भी ऐसी सिफ़ात की रियायत की गई है कि उससे हिदायत ज़्यादा आसान हो, चुनाँचे एक तो यह कि इस) में हमने (आयतें वग़ैरह का) जगह-जगह फ़ासला रखा, ताकि आप इसको लोगों के सामने ठहर-ठहरकर पढ़ें (जिसमें वे अच्छी तरह समझ सकें, क्योंकि लगातार लम्बी तक़रीर कई बार ज़ेहन में नहीं बैठती) और (दूसरे यह कि) हमने इसको उतारने में भी (वाक़िआ़त के हिसाब से) थोड़ा-थोड़ा करके उतारा (ताकि मायने ख़ूब ज़ाहिर व स्पष्ट हों, अब इन सब बातों का तक़ाज़ा यह था कि ये लोग ईमान ले आते लेकिन इस पर भी ईमान न लायें तो आप कुछ परवाह न कीजिये बल्कि साफ़) कह दीजिये कि तुम इस क़ुरआन पर चाहे ईमान लाओ या ईमान न लाओ (मुझको कोई परवाह नहीं, दो वजह से– पहली तो यह कि मेरा क्या नुक़सान किया, दूसरे यह कि तुम ईमान न लाये तो क्या हुआ दूसरे लोग ईमान ले आये, चुनाँचे) जिन लोगों को क़ुरआन (के उतरने) से पहले (दीन का) इल्म दिया गया था (यानी अहले किताब में के इन्साफ़-पसन्द उलेमा) यह क़ुरआन जब उनके सामने पढ़ा जाता है तो ठोड़ियों के बल सज्दे में गिर पड़ते हैं और कहते हैं कि हमारा रब (वायदा-ख़िलाफ़ी से) पाक है, बेशक हमारे परवर्दिगार का वायदा ज़रूर पूरा ही होता है (सो जिस किताब का जिस नबी पर नाज़िल करने का वायदा पहली आसमानी किताबों में किया था उसको पूरा फ़रमा दिया)। और ठोड़ियों के बल (जो) गिरते हैं (तो) रोते हुए (गिरते हैं) और यह क़ुरआन (यानी इसका सुनना) उनका (दिली) ख़ुशू "यानी आ़जिज़ी" और बढ़ा देता है (क्योंकि ज़ाहिर व बातिन का समान और एक जैसा होना कैफ़ियत को मज़बूत कर देता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍ.

इसमें हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को नौ खुली और स्पष्ट निशानियाँ अ़ता फ़रमाने का ज़िक्र है। आयत का लफ़्ज़ मोजिज़े के मायने में भी आता है और क़ुरआन की आयतों यानी अल्लाह के अहकाम के मायने में भी, इस जगह दोनों मायनों की गुंजाईश है इसी लिये मुफ़स्सिरीन की एक जमाअ़त ने इस जगह आयात से मुराद मोजिज़े लिये हैं और नौ की संख्या से यह ज़रूरी नहीं कि नौ से ज़्यादा न हों, मगर इस जगह नौ का ज़िक्र किसी ख़ास अहमियत की बिना पर

किया गया है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने ये नौ मोजिज़े इस तरह शुमार फ़रमाये हैं:

1. मूसा अ़लैहिस्सलाम की लाठी जो अज़्दहा बन जाती थी।

2. सफ़ेद हाथ जिसको गिरेबान में डालकर निकालने से चमकने लगता था।

3. ज़ुबान में लुक्नत (लड़खड़ाहट) थी वह दूर कर दी गई।

4. बनी इस्राईल के दरिया पार करने के लिये दरिया को फाड़कर उसके दो हिस्से अलग कर दिये और रास्ता दे दिया।

5. टिड्डी दल का अ़ज़ाब असाधारण सूरत में भेज दिया गया।

6. तूफ़ान भेज दिया गया।

7. बदन के कपड़ों में बेहद जुँए पैदा कर दी गईं जिनसे बचने का कोई रास्ता न रहा।

8. मेंढकों का एक अ़ज़ाब मुसल्लत कर दिया गया कि हर खाने पीने की चीज़ में मेंढक आ जाते थे।

9. ख़ून का अ़ज़ाब भेजा गया कि हर बरतन और खाने पीने में ख़ून मिल जाता था।

और एक सही हदीस के मज़मून से यह मालूम होता है कि यहाँ आयात से मुराद अल्लाह के अहकाम हैं, यह हदीस अबू दाऊद, नसाई, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा में सही सनद से हज़रत सफ़वान बिन अ़स्साल रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है, वह फ़रमाते हैं कि एक यहूदी ने अपने एक साथी से कहा कि मुझे उस नबी के पास ले चलो। साथी ने कहा कि नबी न कहो अगर उनको ख़बर हो गई कि हम भी उनको नबी कहते हैं तो उनकी चार आँखें हो जायेंगी, यानी उनको फ़ख़्र व ख़ुशी का मौक़ा मिल जायेगा। फिर ये दोनों रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और पूछा कि मूसा अ़लैहिस्सलाम को जो नौ आयात-ए-बय्यिनात (खुली निशानियाँ) दी गई थीं वो क्या हैं? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

1. अल्लाह के साथ किसी को शरीक न करो।

2. चोरी न करो।

3. ज़िना न करो।

4. जिस जान को अल्लाह ने हराम किया है उसको नाहक़ क़त्ल न करो।

5. किसी बेगुनाह पर झूठा इल्ज़ाम लगाकर क़त्ल व सज़ा के लिये पेश न करो।

6. जादू न करो।

7. सूद न खाओ।

8. पाकदामन औरत पर बदकारी का बोहतान न बाँधो।

9. जिहाद के मैदान से जान बचाकर न भागो। और ऐ यहूदियो! विशेष तौर पर तुम्हारे

लिये यह भी हुक्म है कि यौम-ए-सब्त (शनिवार के दिन) के जो ख़ास अहकाम तुम्हें दिये गये हैं उनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी न करो।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह बात सुनकर दोनों ने आपके हाथों और पाँव को बोसा दिया और कहा कि हम गवाही देते हैं कि आप अल्लाह के नबी हैं। आपने फ़रमाया कि फिर तुम्हें मेरी पैरवी करने से क्या चीज़ रोकती है? कहने लगे कि हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम ने अपने रब से यह दुआ़ की थी कि उनकी नस्ल में हमेशा नबी होते रहें, और हमें ख़तरा है कि अगर हम आपकी पैरवी करने लगें तो यहूदी हमें क़त्ल कर देंगे।

चूँकि यह तफ़सीर सही हदीस से साबित है इसलिये बहुत-से मुफ़स्सिरीन ने इसी को तरजीह (वरीयता) दी है।

يَبْكُوْنَ وَيَزِيْدُهُمْ خُشُوْعًا.

तफ़सीरे मज़हरी में है कि क़ुरआन तिलावत करने के वक़्त रोना मुस्तहब (अच्छा और पसन्दीदा) है। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जहन्नम में न जायेगा वह शख़्स जो अल्लाह के ख़ौफ़ से रोया जब तक कि दूहा हुआ दूध थनों में वापस न लौट जाये (यानी जैसे यह नहीं हो सकता कि थनों से निकला हुआ दूध दोबारा थनों में वापस डाल दिया जाये इसी तरह यह भी नहीं हो सकता कि अल्लाह के ख़ौफ़ से रोने वाला जहन्नम में चला जाये)। और एक रिवायत में है कि अल्लाह तआ़ला ने दो आँखों पर जहन्नम की आग हराम कर दी— एक वह जो अल्लाह के ख़ौफ़ से रोये, दूसरे वह जो इस्लामी सरहद की हिफ़ाज़त के लिये रात को जागती रहे। (बैहक़ी व हाकिम, और इन दोनों मुहद्दिसों ने इस रिवायत को सही कहा है)

और हज़रत नज़र बिन सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस क़ौम में कोई अल्लाह के ख़ौफ़ से रोने वाला हो तो अल्लाह तआ़ला उस क़ौम को उसकी वजह से आग से निजात अ़ता फ़रमा देंगे। (रूहुल-मआ़नी)

आज सबसे बड़ी मुसीबत जो मुसलमानों पर पड़ी है उसका सबब यही है कि उनमें ख़ुदा के ख़ौफ़ से रोने वाले बहुत कम रह गये। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी के लेखक इस मौक़े पर ख़ुदा के ख़ौफ़ से रोने के फ़ज़ाईल की हदीसें नक़ल करने के बाद फ़रमाते हैं:

وينبغى ان يكون ذلك حال العلماء

यानी उलेमा-ए-दीन का यही हाल होना चाहिये। क्योंकि इब्ने जरीर, इब्ने मुन्ज़िर वग़ैरह ने अ़ब्दुल-आला तैमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का यह क़ौल नक़ल किया है:

"जिस शख़्स को सिर्फ़ ऐसा इल्म मिला जो उसको रुलाता नहीं तो समझ लो कि उसको नफ़ा देने वाला इल्म नहीं मिला।"

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ ؕ اَیًّا مَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰی ۚ وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَیْنَ ذٰلِكَ سَبِیْلًا ۝ وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ لَمْ یَتَّخِذْ وَلَدًا وَّلَمْ یَكُنْ لَّهٗ شَرِیْكٌ فِی الْمُلْكِ وَلَمْ یَكُنْ لَّهٗ وَلِیٌّ مِّنَ الذُّلِّ وَكَبِّرْهُ تَكْبِیْرًا ۝

क़ुलिद्अुल्ला-ह अविद्अुर्रह्मा-न, अय्यम् मा तद्अू फ़-लहुल्-अस्माउल्-हुस्ना व ला तज्हर् बि-सलाति-क व ला तुख़ाफ़ित् बिहा वब्तग़ि बै-न ज़ालि-क सबीला (110) व क़ुलिल्-हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी लम् यत्तख़िज़् व-लदंव्-व लम् यकुल्-लहू शरीकुन् फ़िल्मुल्कि व लम् यकुल्लहू वलिय्युम्-मिनज़्ज़ुल्लि व कब्बिर्हु तक्बीरा (111) ❁	कह— अल्लाह कहकर पुकारो या रहमान कहकर जो कहकर पुकारोगे सो उसी के हैं सब नाम ख़ासे, और पुकार कर मत पढ़ अपनी नमाज़ और न चुपके पढ़ और ढूँढ ले उसके बीच में राह। (110) और कह सब तारीफ़ें अल्लाह के लिये हैं जो नहीं रखता औलाद और न कोई उसका साझी सल्तनत में और न कोई उसका मददगार ज़िल्लत के वक़्त पर, और उस की बड़ाई कर बड़ा जानकर। (111) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप फ़रमा दीजिये कि चाहे अल्लाह कहकर पुकारो या रहमान कहकर पुकारो, जिस नाम से भी पुकारोगे (तो बेहतर है, क्योंकि) उसके बहुत-से अच्छे-अच्छे नाम हैं (और उसका शिर्क से कोई वास्ता नहीं, क्योंकि एक ही ज़ात के कई नाम होने से उसकी तौहीद में कोई फ़र्क़ नहीं आता)। और अपनी जहरी "आवाज़ से क़िराअत करने वाली" नमाज़ में न तो बहुत पुकारकर पढ़िये (कि मुश्रिक लोग सुनें और ख़ुराफ़ात बकें और नमाज़ में दिल परेशान हो) और न बिल्कुल चुपके-चुपके ही पढ़िये (कि मुक़्तदी नमाज़ियों को भी सुनाई न दे, क्योंकि इससे उनकी तालीम व तरबियत में कमी आती है) और दोनों के बीच एक (दरमियाना) तरीक़ा इख़्तियार कर लीजिये (ताकि मस्लेहत भी न छूटे और नुक़सान भी पेश न आये)। और (काफ़िरों पर रद्द करने के लिये खुल्लम-खुल्ला) कह दीजिए कि तमाम ख़ूबियाँ उसी अल्लाह तआ़ला के लिये (ख़ास) हैं, जो न औलाद रखता है और न बादशाहत में कोई उसका शरीक है, और न कमज़ोरी की वजह से उसका कोई मददगार है। और उसकी बड़ाईयाँ ख़ूब बयान किया कीजिये।

मआरिफ़ व मसाईल

ये सूरः बनी इस्राईल की आख़िरी आयतें हैं, इस सूरत के शुरू में भी हक् तआला की पाकीज़गी और तौहीद (एक होने) का बयान था, इन आख़िरी आयतों में भी इसी पर ख़त्म किया जा रहा है। इन आयतों का उतरना चन्द वाकिआत की बिना पर हुआ, अव्वल यह कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक दिन दुआ में या अल्लाह! और या रहमान! कहकर पहुकारा तो मुश्रिकों ने समझा कि यह दो खुदाओं को पुकारते हैं और कहने लगे कि हमें तो एक के सिवा किसी और को पुकारने से मना करते हैं और खुद दो माबूदों को पुकारते हैं। इसका जवाब आयत के पहले हिस्से में दिया गया है कि अल्लाह जल्ल शानुहू के दो ही नहीं और भी बहुत-से अच्छे-अच्छे नाम हैं, किसी नाम से भी पुकारें मुराद एक ही ज़ात है, तुम्हारा वहम ग़लत है।

दूसरा क़िस्सा यह है कि जब मक्का मुकर्रमा में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ में बुलन्द आवाज़ से क़ुरआन की तिलावत फ़रमाते तो मुश्रिक लोग मज़ाक़ व ठट्ठा करते और क़ुरआन और जिब्रीले अमीन और ख़ुद हक् तआला की शान में गुस्ताख़ी भरी बातें कहते थे, इसके जवाब में इसी आयत का आख़िरी हिस्सा नाज़िल हुआ जिसमें आपको ज़ाहिर करने और धीरे पढ़ने में बीच का रास्ता इख़्तियार करने की तालीम फ़रमाई कि ज़रूरत तो इस बीच की आवाज़ से पूरी हो जाती है और ज़्यादा बुलन्द आवाज़ से जो मुश्रिक लोगों को मौक़ा तकलीफ़ पहुँचाने का मिलता था उससे निजात हो।

तीसरा क़िस्सा यह है कि यहूदी व ईसाई अल्लाह तआला के लिये औलाद क़रार देते थे और अरब के लोग बुतों को अल्लाह का शरीक कहते थे और साबई और मजूसी लोग कहा करते थे कि अगर अल्लाह तआला के ख़ास और क़रीबी नहीं तो उसकी क़द्र व इज़्ज़त में कमी आ जाये। इन तीनों फ़िर्क़ों के जवाब में आख़िरी आयत नाज़िल हुई जिसमें तीनों चीज़ों की नफ़ी ज़िक्र की गई है।

दुनिया में जिससे मख़्लूक़ को किसी क़द्र ताक़त पहुँचा करती है वह कभी तो अपने से छोटा होता है जैसे औलाद और कभी अपने बराबर का होता है जैसे साझी और कभी अपने से बड़ा होता है जैसे मददगार व हिमायती, हक् तआला ने इस आयत में तरतीबवार तीनों की नफ़ी फ़रमा दी (यानी तीनों को नकार दिया)।

मसलाः उक्त आयत में नमाज़ के अन्दर तिलावत करने का यह अदब बतलाया गया है कि बहुत बुलन्द आवाज़ से हो, न बहुत आहिस्ता जिसको मुक़्तदी न सुन सकें। यह हुक्म ज़ाहिर है कि जहरी (आवाज़ से क़िराअत करने वाली) नमाज़ों के साथ मख़्सूस है, ज़ोहर और असर की नमाज़ों में तो बिल्कुल पोशीदा आवाज़ से पढ़ना मुतवातिर सुन्नत से साबित है।

जहरी नमाज़ में मग़रिब, इशा और फ़जर के फ़र्ज़ भी दाख़िल हैं और तहज्जुद की नमाज़ भी जैसा कि एक हदीस में है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तहज्जुद की

नमाज़ के वक़्त हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा के पास से गुज़रे तो सिद्दीक़े अकबर तिलावत आहिस्ता कर रहे थे और फ़ारूक़े आज़म ख़ूब बुलन्द आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अकबर से फ़रमाया कि आप इतना आहिस्ता क्यों पढ़ते हैं? हज़रत अबू बक्र ने अ़र्ज़ किया कि मुझे जिसको सुनाना था उसको सुना दिया, क्योंकि अल्लाह तआ़ला तो हर छुपी से छुपी और हल्की से हल्की आवाज़ को भी सुनते हैं। आपने फ़रमाया कि थोड़ा आवाज़ से ज़ाहिर करके पढ़ा करो। फिर हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि आप इतनी बुलन्द आवाज़ से क्यों पढ़ते हैं? हज़रत उमर ने फ़रमाया कि मैं नींद और शैतान को दूर करने के लिये बुलन्द आवाज़ से पढ़ता हूँ। आपने उनको भी यही हुक्म दिया कि कुछ हल्की और धीमी आवाज़ से पढ़ा करो।
(तफ़सीरे मज़हरी, तिर्मिज़ी के हवाले से)

नमाज़ और ग़ैर-नमाज़ में क़ुरआन की तिलावत को ज़ाहिर करके और बिना ज़ोर की आवाज़ के अदा करने से संबन्धित मसाईल सूरः आराफ़ में बयान हो चुके हैं। आख़िरी आयत 'व क़ुलिल् हम्दु लिल्लाहि......' (यानी ऊपर बयान हुई आयत 111) के मुताल्लिक़ हदीस में है कि इज़्ज़त वाली यही आयत है। (अहमद व तबरानी, मुआज़ जोहनी की रिवायत से, तफ़सीरे मज़हरी)

इस आयत में यह हिदायत भी है कि कोई इनसान कितनी ही अल्लाह तआ़ला की इबादत और तस्बीह व तारीफ़ करे अपने अ़मल को उसके हक़ के मुक़ाबले में कम समझना और कोताही का इक़रार करना उसके लिये लाज़िम है। (तफ़सीरे मज़हरी)

और हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि अ़ब्दुल-मुत्तलिब की औलाद में जब कोई बच्चा ज़बान खोलने के क़ाबिल हो जाता तो उसको आप यह आयत सिखा देते थेः

وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ لَمْ یَتَّخِذْ وَلَدًا وَّلَمْ یَكُنْ لَّهٗ شَرِیْكٌ فِی الْمُلْكِ وَلَمْ یَكُنْ لَّهٗ وَلِیٌّ مِّنَ الذُّلِّ وَكَبِّرْهُ تَكْبِیْرًا.

(تفسیر مظهری)

(यानी यही इस सूरत की आख़िरी आयत जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है) और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक दिन मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ बाहर निकला इस तरह कि मेरा हाथ आपके हाथ में था, आपका गुज़र एक ऐसे शख़्स पर हुआ जो बहुत बुरे हाल में और परेशान था। आपने पूछा कि तुम्हारा यह हाल कैसे हो गया? उस शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि बीमारी और तंगदस्ती ने यह हाल कर दिया। आपने फ़रमाया कि मैं तुम्हें चन्द कलिमात बतलाता हूँ वो पढ़ोगे तो तुम्हारी बीमारी और तंगदस्ती जाती रहेगी, वो कलिमात ये थेः

تَوَكَّلْتُ عَلَى الْحَيِّ الَّذِیْ لَا یَمُوْتُ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ لَمْ یَتَّخِذْ وَلَدًا وَّلَمْ یَكُنْ لَّهٗ شَرِیْكٌ فِی الْمُلْكِ وَلَمْ یَكُنْ لَّهٗ وَلِیٌّ مِّنَ الذُّلِّ وَكَبِّرْهُ تَكْبِیْرًا.

तवक्कल्तु अलल्-हय्यिल्लज़ी ला यमूतु अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी लम् यत्तख़िज़् व-लदंव्-व लम् यकुल्-लहू शरीकुन् फ़िल्मुल्कि व लम् यकुल्लहू वलिय्युम्-मिनज़्ज़ुल्लि व कब्बिरहु तक्बीरा।

इसके कुछ समय के बाद फिर आप उस तरफ़ तशरीफ़ ले गये तो उसको अच्छे हाल में पाया, आपने ख़ुशी का इज़्हार फ़रमाया। उसने अ़र्ज़ किया कि जब से आपने मुझे ये कलिमात बतलाये थे मैं पाबन्दी से इनको पढ़ता हूँ। (अबू यअ़्ला व इब्ने सनी, अज़् मज़्हरी)

अल्लाह का शुक्र व एहसान है उसकी मदद व तौफ़ीक़ से आज 10 जुमादल-ऊला सन् 1390 हिजरी को इशा के बाद सूरः बनी इस्राईल की तफ़सीर मुकम्मल हुई। अव्वल व आख़िर तमाम तारीफ़ें अल्लाह तआ़ला ही के लिये हैं।

तफ़सीर के लेखक की तरफ़ से इज़्हार-ए-हाल

आज 29 शाबान सन् 1390 हिजरी दिन शनिवार में अल्लाह का शुक्र है कि तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन के मसौदे को दूसरी बार देखना भी मुकम्मल हो गया है, अब यह आधे क़ुरआने करीम की तफ़सीर हक़ तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल व करम से पूरी करा दी जिसकी ज़ाहिरी असबाब के एतिबार से कोई उम्मीद नहीं थी, क्योंकि रमज़ान सन् 1388 हिजरी के आख़िर में यह नाकारा ऐसी विभिन्न और अनेक बीमारियों में मुब्तला हुआ कि तक़रीबन एक साल तो बिस्तर ही पर मौत व ज़िन्दगी की कश्मकश में गुज़रा। उस वक़्त मजबूरी व माज़ूरी के आ़लम में बार-बार यह हसरत होती थी कि कुछ किताबों के मसौदे जो मुकम्मल होने के क़रीब थे उनकी तकमील हो जाती तो मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन के नाम से जो दर्से क़ुरआन लम्बे समय तक रेडियो पाकिस्तान से प्रसारित होता रहा, बहुत से दोस्तों के तक़ाज़े से उस पर एक नज़र डालकर और बीच में से बाक़ी रही हुई आयतों की तफ़सीर के मुकम्मल करने का जो सिलसिला चल रहा था किसी तरह वह पूरा हो जाता। इसी तरह सय्यिदी हज़रत हकीमुल-उम्मत (मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी) रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने क़ुरआने करीम की दो मन्ज़िलें पाँचवीं और छठी के अहकामुल-क़ुरआन अ़रबी भाषा में लिखने के लिये अहक़र को पाबन्द फ़रमाया था उसका भी आख़िरी हिस्सा लिखने से बाक़ी रह गया था। मौत व ज़िन्दगी की कश्मकश, उठने बैठने से माज़ूरी ही के आ़लम में शायद मेरी इस हसरत की सुनवाई अल्लाह रब्बुल-इ़ज़्ज़त की बारगाह में हो गई और यह ख़्याल ग़ालिब आया कि जो कुछ और जितना बन पड़े वह काम कर लिया जाये, यह फ़िक्र छोड़ दी जाये कि जो रह जायेगा उसका क्या होगा।

इस ख़्याल ने एक पुख़्ता इरादे की सूरत इख़्तियार कर ली, बिस्तर पर लेटे हुए ही तफ़सीर पर दोबारा नज़र डालने और अहकामुल-क़ुरआन के पूरा करने का काम शुरू कर दिया। क़ुदरत

का करिश्मा देखिये कि उस बीमारी के ज़माने में काम इतनी तेज़ी से चला कि तन्दुरुस्ती में भी यह रफ़्तार न थी, और फिर शायद इसी की बरकत से हक़ तआ़ला ने उन माज़ूर व मजबूर कर देने वाली बीमारियों से शिफ़ा भी फ़रमा दी और एक हद तक तन्दुरुस्ती की सूरत हासिल हो गई तो अब वक़्त की क़द्र पहचानी और इन कामों पर अपनी हिम्मत व गुंजाईश के मुताबिक़ वक़्त लगाया। यह महज़ हक़ तआ़ला का फ़ज़्ल व इनाम ही था कि अहकामुल-क़ुरआन की दोनों मन्ज़िलों की तकमील भी हो गई और इसी अ़रसे में ये दोनों जिल्दें प्रकाशित भी हो गईं और तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन की दो जिल्दें सूरः निसा तक छपकर शाया हो गई हैं। तीसरी जिल्द सूरः आराफ़ तक छपाई में चल रही है और आज आधे क़ुरआन के मसौदा-ए-तफ़सीर पर दोबारा नज़र डालने का काम भी पूरा हो गया (अव्वल व आख़िर में तमाम तारीफ़ें अल्लाह तआ़ला ही के लिये हैं)।

इस वक़्त जबकि ये लाईनें लिखी जा रही हैं अहक़र नाकारा की उम्र के 75 साल पूरे होकर 21 शाबान सन् 1390 हिजरी को उम्र की 76वीं मन्ज़िल शुरू हो गई। विभिन्न बीमारियों से पीड़ित होना, तबई कमज़ोरी और ऊपर से व्यस्तताओं और फ़िक्रों का हुजूम है, अब आगे किसी किताब लिखने और तरतीब देने की उम्मीद रखना एक ख़्याल व आरज़ू से ज़्यादा कुछ नहीं हो सकता, लेकिन क़ुरआन की ख़िदमत के नाम पर क़लम चलाना चाहे कितनी ही नाक़िस दर नाक़िस ख़िदमत हो लिखने वाले के लिये नेकबख़्ती ही नेकबख़्ती है। इस ख़्याल ने इस पर तैयार कर दिया कि सूरः कहफ़ की तफ़सीर भी अल्लाह के नाम से शुरू कर दी जाये और बाक़ी बची उम्र में जो कुछ हो सके उसको ग़नीमत समझा जाये, क्योंकि मक़सद क़ुरआन ख़त्म करना नहीं क़ुरआन में अपनी उम्र व ताक़त को ख़त्म करना है। अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है और वही मददगार है।

सूरः बनी इस्राईल की तफ़सीर मुकम्मल हुई।
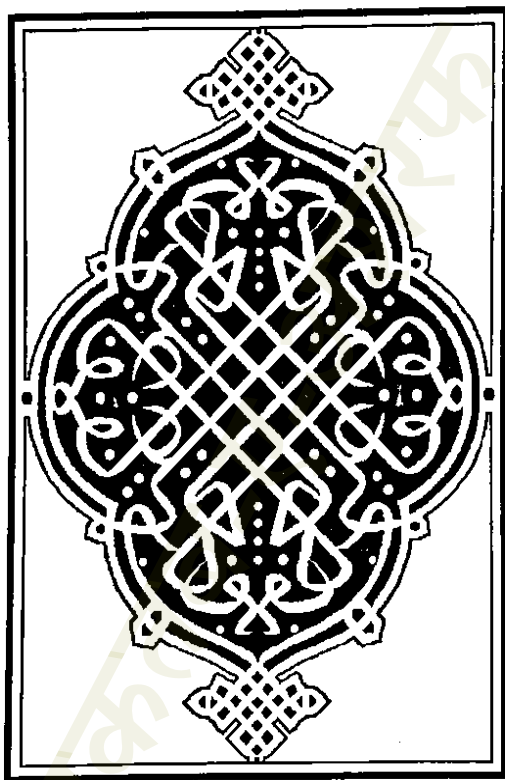
* सूरः कहफ़ *

यह सूरत मक्की है। इसमें 110 आयतें
और 12 रुकूअ़ हैं।

सूरः कहफ़

सूरः कहफ़ मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 110 आयतें और 12 रुकूअ़ हैं।

آيَاتُهَا ١١٠ (١٨) سُوْرَةُ الْكَهْفِ مَكِّيَّةٌ (٦٩) رُكُوْعَاتُهَا ١٢

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلٰى عَبْدِهِ الْكِتٰبَ وَلَمْ يَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا ۜ قَيِّمًا لِّيُنْذِرَ بَاْسًا شَدِيْدًا مِّنْ لَّدُنْهُ وَيُبَشِّرَ الْمُؤْمِنِيْنَ الَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا حَسَنًا ۙ مَّاكِثِيْنَ فِيْهِ اَبَدًا ۙ وَّ يُنْذِرَ الَّذِيْنَ قَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا ۤ مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ وَّلَا لِاٰبَآئِهِمْ ۭ كَبُرَتْ كَلِمَةً تَخْرُجُ مِنْ اَفْوَاهِهِمْ ۭ اِنْ يَّقُوْلُوْنَ اِلَّا كَذِبًا ○ فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ اِنْ لَّمْ يُؤْمِنُوْا بِهٰذَا الْحَدِيْثِ اَسَفًا ○ اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ زِيْنَةً لَّهَا لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ○ وَاِنَّا لَجٰعِلُوْنَ مَا عَلَيْهَا صَعِيْدًا جُرُزًا ○

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अन्ज़-ल अ़ला अ़ब्दिहिल्-किता-ब व लम् यज्अ़ल्-लहू अि़-वजा (1) क़य्यिमल् लियुन्ज़ि-र बअ्सन् शदीदम्-मिल्लदुन्हु व युबश्शिरल्-मुअ्मिनीनल्लज़ी-न यअ़्मलूनस्सालिहाति अन्-न लहुम् अज्रन् ह-सना (2) माकिसी-न फ़ीहि अ-बदा (3) व युन्ज़िरल्लज़ी-न क़ालुत्त-ख़ज़ल्लाहु व-लदा (4) मा	सब तारीफ़ अल्लाह को जिसने उतारी अपने बन्दे पर किताब और न रखी उसमें कुछ कजी (टेढ़ और नुक़्स)। (1) ठीक उतारी ताकि डर सुना दे एक आफ़त का अल्लाह की तरफ़ से और ख़ुशख़बरी दे ईमान लाने वालों को जो करते हैं नेकियाँ कि उनके लिये अच्छा बदला है। (2) जिसमें रहा करें हमेशा। (3) और डर सुना दे उनको जो कहते हैं कि अल्लाह रखता है औलाद। (4) कुछ ख़बर नहीं

लहुम् बिही मिन् अिल्मिंव्-व ला लि-आबाइहिम्, कबुरत् कलि-मतन् तख़्रुजु मिन् अफ़्वाहिहिम्, इंय्यक़ूलू-न इल्ला कज़िबा (5) फ़-लअ़ल्ल-क बाख़िअ़ुन्-नफ़्स-क अ़ला आसारिहिम् इल्लम् युअ्मिनू बिहाज़ल्-हदीसि अ-सफ़ा (6) इन्ना जअ़ल्ना मा अ़लल्-अर्ज़ि ज़ीनतल्-लहा लिनब्लु-वहुम् अय्युहुम् अह्सनु अ़-मला (7) व इन्ना लजाअ़िलू-न मा अ़लैहा सअ़ीदन् जुरुज़ा (8)	उनको इस बात की और न उनके बाप दादाओं को, क्या बड़ी बात निकलती है उनके मुँह से, सब झूठ है जो कहते हैं। (5) सो कहीं तू घोंट डालेगा अपनी जान को उनके पीछे अगर वे न मानेंगे इस बात को पछता-पछताकर। (6) हमने बनाया है जो कुछ ज़मीन पर है उसकी रौनक़ ताकि जाँचें लोगों को, कौन उनमें अच्छा करता है काम। (7) और हमको करना है जो कुछ उस पर है मैदान छाँटकर। (8)

सूरः कहफ़ की विशेषतायें और फ़ज़ाईल

हदीस की किताबों— मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई और मुस्नद अहमद में हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक रिवायत है कि जिस शख़्स ने सूरः कहफ़ की पहली दस आयतें हिफ़्ज़ याद कर लीं वह दज्जाल के फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगा और उपर्युक्त किताबों में हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ही से एक दूसरी रिवायत में यही मज़मून सूरः कहफ़ की आख़िरी दस आयतें याद करने के बारे में नक़ल किया गया है।

और मुस्नद अहमद में हज़रत सहल बिन मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स सूरः कहफ़ की पहली और आख़िरी आयतें पढ़ ले उसके लिये उसके क़दम से सर तक एक नूर हो जाता है और जो पूरी सूरत पढ़ ले तो उसके लिये ज़मीन से आसमान तक नूर हो जाता है।

और कुछ रिवायतों में है कि जो शख़्स जुमा के दिन सूरः कहफ़ की तिलावत कर ले उसके क़दम से लेकर आसमान की बुलन्दी तक नूर हो जायेगा जो क़ियामत के दिन रोशनी देगा और पिछले जुमे से उस जुमे तक के लिये उसके सब गुनाह माफ़ हो जायेंगे (इमाम इब्ने कसीर ने इस रिवायत को मौक़ूफ़ क़रार दिया है)।

और हाफ़िज़ ज़िया मक़्दसी ने अपनी किताब 'मुख़्तारा' में हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स जुमे के दिन सूरः कहफ़ पढ़ ले वह आठ दिन तक हर फ़ितने से सुरक्षित रहेगा और अगर

दज्जाल निकल आये तो यह उसके फ़ितने से भी सुरक्षित रहेगा (ये सब रिवायतें तफ़सीर इब्ने कसीर से ली गई हैं)।

तफ़सीर रूहुल-मआनी में दैलमी से हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सूरः कहफ़ पूरी की पूरी एक वक़्त में नाज़िल हुई और सत्तर हज़ार फ़रिश्ते इसके साथ आये जिससे इसकी बड़ी शान ज़ाहिर होती है।

शाने नुज़ूल

इमाम इब्ने जरीर तबरी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि (जब मक्का मुकर्रमा में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत का चर्चा हुआ और मक्का के क़ुरैश इससे परेशान हुए तो) उन्होंने अपने दो आदमी नज़र बिन हारिस और उक़्बा बिन अबी मुईत को मदीना तय्यिबा के यहूदियों के उलेमा के पास भेजा कि वे लोग पिछली किताबों तौरात व इन्जील के आ़लिम हैं, वे आपके बारे में क्या कहते हैं। यहूदियों के उलेमा ने उनको बतलाया कि तुम लोग उनसे तीन सवालात करो अगर उन्होंने उनका जवाब सही (1) दे दिया तो समझ लो कि वह अल्लाह के रसूल हैं, और यह न कर सके तो यह समझ लो कि यह बात बनाने वाले हैं, रसूल नहीं। एक तो उनसे उन नौजवानों का हाल पूछो जो पुराने ज़माने में अपने शहर से निकल गये थे, उनका क्या वाक़िआ़ है। क्योंकि यह वाक़िआ़ अ़जीब है। दूसरे उनसे उस शख़्स का हाल पूछो जिसने दुनिया के पूरब व पश्चिम और तमाम ज़मीन का सफ़र किया, उसका क्या वाक़िआ़ है? तीसरे उनसे रूह के मुताल्लिक़ सवाल करो कि वह क्या चीज़ है?

ये दोनों क़ुरैशी मक्का मुकर्रमा वापस आये और अपनी बिरादरी के लोगों से कहा कि हम एक निर्णायक सूरतेहाल लेकर आये हैं, और यहूदी उलेमा का पूरा क़िस्सा सुना दिया, फिर ये लोग नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में ये सवालात लेकर हाज़िर हुए, आपने सुनकर फ़रमाया कि मैं कल इसका जवाब दूँगा, मगर आप उस वक़्त इन्शा-अल्लाह कहना भूल गये। ये लोग लौट गये और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह की वही के इन्तिज़ार में रहे कि इन सवालात का जवाब वही से बतला दिया जायेगा मगर वायदे के मुताबिक़ अगले दिन तक कोई वही न आई बल्कि पन्द्रह दिन इसी हाल में गुज़र गये कि न जिब्रीले अमीन आये न कोई वही नाज़िल हुई। मक्का के क़ुरैश ने मज़ाक़ उड़ाना शुरू किया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इससे सख़्त रंज व ग़म पहुँचा।

(1) यानी जो जवाब उन्हें देना चाहिये वह दे दिया (और रूह के बारे में उनका सही जवाब यह होगा कि इसकी हक़ीक़त अल्लाह तआ़ला ही बेहतर जानते हैं) लिहाज़ा यह रिवायत जो तफ़सीर-ए-तबरी पेज 191 जिल्द 15 में नक़ल की गयी है उस रिवायत के विरुद्ध नहीं जो पीछे इसी जिल्द में सूरः बनी इस्राईल आयत नम्बर 85 के तहत गुज़री है। मुहम्मद तक़ी उस्मानी।

पन्द्रह दिन के बाद जिब्रीले अमीन सूरः कहफ़ लेकर नाज़िल हुए (जिसमें वही में देर होने का सबब भी बयान कर दिया गया है कि आने वाले ज़माने में किसी काम के करने का वायदा किया जाये तो इन्शा-अल्लाह कहना चाहिये। इस वाक़िए में चूँकि ऐसा न हुआ इस पर तंबीह करने के लिये वही में देरी हुई। इस सूरत में इस मामले के मुताल्लिक़ ये आयतें आगे आयेंगीः

وَلَا تَقُوْلَنَّ لِشَایْءٍ اِنِّیْ فَاعِلٌ ذٰلِكَ غَدًا اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ اللّٰهُ

और इस सूरत में उन नौजवानों का वाक़िआ भी पूरा बतला दिया गया जिनको अस्हाब-ए-कहफ़ कहा जाता है, और पूरब व पश्चिम का सफ़र करने वाले ज़ुल्क़रनैन के वाक़िए का भी विस्तृत बयान आ गया, और रूह के सवाल का जवाब भी। (क़ुर्तुबी व मज़हरी, इब्ने जरीर के हवाले से)

मगर रूह के सवाल का जवाब संक्षिप्त रूप से देना हिक्मत का तक़ाज़ा था इसको सूरः बनी इस्राईल के आख़िर में अलग से बयान कर दिया गया और इसी सबब से सूरः कहफ़ को सूरः बनी इस्राईल के बाद रखा गया है, जैसा कि इमाम सुयूती ने बयान किया है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तमाम ख़ूबियाँ उस अल्लाह के लिये साबित हैं जिसने अपने (ख़ास) बन्दे (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) पर यह किताब नाज़िल फ़रमाई, और इस (किताब) में (किसी क़िस्म की) ज़रा भी टेढ़ नहीं रखी (न लफ़्ज़ी कि साहित्य और कलाम की ख़ूबियों के ख़िलाफ़ हो और न मानवी कि इसका कोई हुक्म हिक्मत के ख़िलाफ़ हो, बल्कि इसको) बिल्कुल इस्तिक़ामत "यानी मज़बूती" वाला बनाया (और नाज़िल इसलिये किया) ताकि वह (किताब काफ़िरों को उमूमन) एक सख़्त अ़ज़ाब से जो कि अल्लाह की तरफ़ से (उनको आख़िरत में होगा) डराये। और उन ईमान वालों को जो नेक काम करते हैं यह ख़ुशख़बरी दे कि उनको (आख़िरत में) अच्छा अज्र मिलेगा, जिसमें वे हमेशा रहेंगे। और ताकि (काफ़िरों में से विशेष तौर पर) उन लोगों को (अ़ज़ाब से) डराये जो यूँ कहते हैं (नऊ़ज़ु बिल्लाह) कि अल्लाह तआ़ला औलाद रखता है (और औलाद का अ़क़ीदा रखने वाले काफ़िरों का आ़म काफ़िरों से अलग करके इसलिये बयान किया गया कि इस बातिल अ़क़ीदे में अ़रब के आ़म लोग मुश्रिक, यहूदी, ईसाई सब ही मुब्तला और फंसे हुए थे)।

न तो इसकी कोई दलील उनके पास है और न उनके बाप-दादाओं के पास थी। बड़ी भारी बात है जो उनके मुँह से निकलती है। (और) वे लोग बिल्कुल (ही) झूठ बकते हैं (जो अ़क़्ली तौर पर भी नामुम्किन है, कोई मामूली अ़क़्ल रखने वाला भी इसका क़ायल नहीं हो सकता, और आप जो उन लोगों के कुफ़्र व दुश्मनी पर इतना ग़म करते हैं) सो शायद आप उनके पीछे अगर ये लोग इस (क़ुरआनी) मज़मून पर ईमान न लाये तो ग़म से अपनी जान दे देंगे (यानी इतना ग़म न करें कि हलाकत के क़रीब कर दे, वजह यह है कि दुनिया आज़माईश का जहान है इस

में ईमान व कुफ़्र और अच्छाई बुराई दोनों का मजमूआ ही रहेगा, सभी मोमिन हो जायेंगे ऐसा न होगा, इसी इम्तिहान के लिये) हमने ज़मीन पर की चीज़ों को इस (ज़मीन) के लिये रौनक़ का सबब बनाया, ताकि हम (इसके ज़रिये) लोगों की आज़माईश करें कि उनमें से ज़्यादा अच्छा अ़मल कौन करता है (यह इम्तिहान करना है कि कौन इस दुनिया की चमक-दमक और रौनक़ पर फ़िदा होकर अल्लाह तआ़ला से और आख़िरत से ग़ाफ़िल हो जाता है और कौन नहीं। ग़र्ज़ यह कि यह इम्तिहान व आज़माईश का जहान है क़ुदरती तौर पर इसमें कोई मोमिन होगा कोई काफ़िर रहेगा, फिर ग़म बेकार है, आप अपना काम किये जाईये और उनके कुफ़्र का नतीजा दुनिया ही में ज़ाहिर हो जाने का इन्तिज़ार न कीजिये, क्योंकि वह हमारा काम है एक निर्धारित वक़्त पर होगा। चुनाँचे एक दिन वह आयेगा कि) हम इस ज़मीन पर की तमाम चीज़ों को एक साफ़ मैदान कर देंगे (न इस पर कोई बसने वाला होगा न कोई पेड़ और पहाड़ और न कोई मकान व तामीर, ख़ुलासा यह है कि आप अपना तब्लीग़ का काम करते रहिये, इनकार करने वालों के बुरे अन्जाम का इतना ग़म न कीजिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَلَمْ يَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا. قَيِّمًا.

लफ़्ज़ **अ़िवज** के मायने किसी क़िस्म की कजी (टेढ़, कमी, नुक़्स) और एक तरफ़ झुकाव के हैं। क़ुरआने करीम अपने लफ़्ज़ी और मानवी कमाल में इससे पाक है। न कलाम की उम्दगी और आला मेयार का होने के लिहाज़ से किसी जगह ज़र्रा बराबर कमी या कजी हो सकती है न इल्म व हिक्मत के लिहाज़ से। जो मफ़्हूम लफ़्ज़ः

وَلَمْ يَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا

से एक नफ़ी के अन्दाज़ में बतलाया गया है फिर ताकीद के लिये इसी मज़मून को साबित करने के तौर पर **क़य्यिमन** से स्पष्ट कर दिया है, क्योंकि क़य्यिमन के मायने हैं मुस्तक़ीमन, और मुस्तक़ीम वही है जिसमें कोई मामूली-सी कजी (टेढ़) और झुकाव किसी तरफ़ न हो। और यहाँ क़य्यिम के एक दूसरे मायने भी हो सकते हैं यानी निगराँ और मुहाफ़िज़। इस मायने के लिहाज़ से इस लफ़्ज़ का मफ़्हूम यह होगा कि क़ुरआने करीम जैसे अपनी ज़ात में कामिल मुकम्मल हर क़िस्म की कजी और कमी-बेशी से पाक है इसी तरह यह दूसरों को भी सही राह पर क़ायम रखने वाला और बन्दों की तमाम मस्लेहतों की हिफ़ाज़त करने वाला है। अब ख़ुलासा इन दोनों लफ़्ज़ों का यह हो जायेगा कि क़ुरआने करीम ख़ुद भी कामिल व मुकम्मल है और अल्लाह की मख़्लूक़ को भी कामिल व मुकम्मल बनाने वाला है। (तफ़सीरे मज़हरी)

اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ زِيْنَةً لَّهَا.

यानी ज़मीन पर जो मख़्लूक़ात- जानदार, पेड़-पौधे, बेजान चीज़ें और ज़मीन के अन्दर

विभिन्न चीज़ों की खानें मौजूद हैं वे सब ज़मीन के लिये ज़ीनत और रौनक़ बनाई गई हैं। इस पर यह शुब्हा न किया जाये कि ज़मीनी मख़्लूक़ात में तो साँप, बिच्छू, दरिन्दे जानवर और बहुत सी नुक़सान देने वाली और घातक चीज़ें भी हैं उनको ज़मीन की ज़ीनत और रौनक़ कैसे कहा जा सकता है, क्योंकि जितनी चीज़ें दुनिया में नुक़सानदेह, घातक और ख़राब समझती जाती हैं वे एक एतिबार से बेशक ख़राब हैं मगर इस जहान के मजमूए के लिहाज़ से कोई चीज़ ख़राब नहीं, क्योंकि हर बुरी से बुरी चीज़ में दूसरी हैसियतों से बहुत-से फ़ायदे भी अल्लाह तआ़ला ने रखे हैं। क्या ज़हरीले जानवरों और दरिन्दों से हज़ारों इनसानी ज़रूरतें इलाज व चिकित्सा वग़ैरह में पूरी नहीं की जातीं? इसलिये जो चीज़ें किसी एक हैसियत से बुरी भी हैं लेकिन दुनिया के इस मजमूई कारख़ाने के लिहाज़ से वो भी बुरी नहीं, किसी ने ख़ूब कहा है:

नहीं है चीज़ निकम्मी कोई ज़माने में ☆ कोई बुरा नहीं क़ुदरत के कारख़ाने में

أَمْ حَسِبْتَ أَنَّ أَصْحٰبَ الْكَهْفِ وَالرَّقِيْمِ كَانُوْا مِنْ اٰيٰتِنَا عَجَبًا ۝ إِذْ أَوَى الْفِتْيَةُ إِلَى الْكَهْفِ فَقَالُوْا رَبَّنَآ اٰتِنَا مِنْ لَّدُنْكَ رَحْمَةً وَّهَيِّئْ لَنَا مِنْ أَمْرِنَا رَشَدًا ۝ فَضَرَبْنَا عَلٰٓى اٰذَانِهِمْ فِي الْكَهْفِ سِنِيْنَ عَدَدًا ۝ ثُمَّ بَعَثْنٰهُمْ لِنَعْلَمَ أَيُّ الْحِزْبَيْنِ أَحْصٰى لِمَا لَبِثُوْٓا أَمَدًا ۝

अम् हसिब्-त अन्-न अस्हाबल्-कह्फ़ि वर्रक़ीमि कानू मिन् आयातिना अ-जबा (9) इज़् अवल्-फ़ित्यतु इलल्-कह्फ़ि फ़क़ालू रब्बना आतिना मिल्लदुन्-क रह्म-तंव्-व हय्यिअ् लना मिन् अम्रिना र-शदा (10) फ़-ज़रब्ना अ़ला आज़ानिहिम् फ़िल्-कह्फ़ि सिनी-न अ़-ददा (11) सुम्-म बअ़स्नाहुम् लि-नअ़्ल-म अय्युहल्-हिज़्बैनि अह्सा लिमा लबिसू अ-मदा (12) ❁	क्या तू ख़्याल करता है कि ग़ार और खोह के रहने वाले हमारी क़ुदरतों में अजब अचंभा थे। (9) जब जा बैठे वे जवान पहाड़ की खोह में फिर बोले ऐ रब! हमको दे अपने पास से बख़्शिश और पूरी कर दे हमारे काम की दुरुस्ती। (10) फिर थपक दिये हमने उनके कान उस खोह में चन्द बरस गिनती के। (11) फिर हमने उनको उठाया कि मालूम करें दो फ़िर्क़ों में किसने याद रखी है जितनी मुद्दत वे रहे। (12) ❁

लुग़ात की वज़ाहत

कहफ़— पहाड़ी गुफा जो लम्बी-चौड़ी हो उसको कहफ़ कहते हैं, जो लम्बी-चौड़ी न हो उसको ग़ार कहा जाता है। **रक़ीम** लफ़्ज़ी एतिबार से मरक़ूम के मायने में है यानी लिखी हुई चीज़। इस मक़ाम पर इससे क्या मुराद है इसमें मुफ़स्सिरीन के अक़वाल भिन्न और अलग-अलग हैं। इमाम ज़ह्हाक, सुद्दी और इब्ने जुबैर रहमतुल्लाहि अ़लैहि हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इसके मायने एक लिखी हुई तख़्ती के क़रार देते हैं जिस पर उस वक़्त के बादशाह ने अस्हाब-ए-कहफ़ के नाम खुदवाकर ग़ार के दरवाज़े पर लगा दिया था, इसी वजह से अस्हाब-ए-कहफ़ को अस्हाबुर्रक़ीम भी कहा जाता है। क़तादा, अ़तीया, औफ़ी और मुजाहिद का क़ौल यह है कि **रक़ीम** उस पहाड़ के नीचे की वादी का नाम है जिसमें अस्हाब-ए-कहफ़ का ग़ार था। कुछ हज़रात ने ख़ुद उस पहाड़ को रक़ीम कहा है। हज़रत इक्रिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने हज़रत इब्ने अ़ब्बास से यह कहते हुए सुना है कि मुझे मालूम नहीं कि रक़ीम किसी लिखी हुई तख़्ती का नाम है या किसी बस्ती का। कअ़बे अहबार और वहब बिन मुनब्बेह हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह रिवायत नक़ल करते हैं कि रक़ीम, ऐला यानी अ़क़बा के क़रीब एक शहर का नाम है जो मुल्क रूम में स्थित है।

फ़ित्यतुन फ़ता की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं **नौजवान**। 'फ़ज़रब्ना अ़ला आज़ानिहिम' के लफ़्ज़ी मायने कानों को बन्द कर देने के हैं, ग़फ़लत की नींद को इन अलफ़ाज़ से ताबीर किया जाता है, क्योंकि नींद के वक़्त सबसे पहले आँख बन्द होती है, मगर कान अपना काम करते रहते हैं, आवाज़ सुनाई देती है। जब नींद पूरी तरह मुसल्लत हो जाती है तो कान भी अपना काम छोड़ देते हैं और फिर जागने में सबसे पहले कान अपना काम शुरू करते हैं कि आवाज़ से सोने वाला चौंकता है फिर जागता है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या आप यह ख़्याल करते हैं कि ग़ार (खोह) वाले और पहाड़ वाले (ये दोनों एक ही जमाअ़त के लक़ब हैं) हमारी (क़ुदरत की) अ़जीब चीज़ों में से कुछ ताज्जुब की चीज़ थे (जैसा कि यहूदियों ने कहा था कि उनका वाक़िआ़ अ़जीब है या ख़ुद ही सवाल करने वाले क़ुरैश के काफ़िरों ने इसको अ़जीब समझकर सवाल किया था। इसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब बनाकर दूसरों को सुनाना मक़सूद है कि यह वाक़िआ़ भी अगरचे अ़जीब ज़रूर है मगर अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत की अ़जीब चीज़ों के मुक़ाबले में ऐसा क़ाबिले ताज्जुब भी नहीं जैसा उन लोगों ने समझा है। क्योंकि ज़मीन व आसमान, चाँद सूरज और ज़मीन की तमाम कायनात को अ़दम से वजूद में लाना असल अ़जीब चीज़ों में से है। चन्द नौजवानों का लम्बी मुद्दत तक सोते रहना फिर जाग जाना इसके मुक़ाबले में कुछ अ़जीब नहीं। इस प्रारंभिका और भूमिका के बाद अस्हाब-ए-कहफ़ का क़िस्सा इस तरह बयान फ़रमाया और) वह वक़्त ज़िक्र

के क़ाबिल है जबकि उन नौजवानों ने (एक बेदीन बादशाह की पकड़ से भागकर) उस ग़ार में (जिसका क़िस्सा आगे आता है) जाकर पनाह ली, फिर (अल्लाह तआ़ला से इस तरह दुआ़ माँगी कि) कहा कि ऐ हमारे परवर्दिगार! हमको अपने पास से रहमत का सामान अ़ता फ़रमाईये, और हमारे (इस) काम में दुरुस्ती का सामान मुहैया कर दीजिये (ग़ालिबन रहमत से मुराद उद्देश्य का हासिल होना है और दुरुस्ती के सामान से मुराद वो असबाब और बुनियादी चीज़ें हैं जो मक़सद के हासिल करने के लिये आ़दतन ज़रूरी होती हैं। अल्लाह तआ़ला ने उनकी दुआ़ को क़ुबूल फ़रमाया और उनकी हिफ़ाज़त और तमाम परेशानियों से निजात देने की सूरत इस तरह बयान फ़रमाई कि) सो हमने उस ग़ार में उनके कानों पर सालों तक नींद का पर्दा डाल दिया। फिर हमने उनको (नींद से) उठाया ताकि हम (ज़ाहिरी तौर पर भी) मालूम कर लें कि (ग़ार में रहने की मुद्दत में बहस व झगड़ा करने वालों में से) कौनसा गिरोह उनके रहने की मुद्दत का ज़्यादा जानकार था (नींद से जागने के बाद उनमें एक गिरोह का क़ौल तो यह था कि हम पूरा दिन या कुछ हिस्सा एक दिन का सोये हैं, दूसरे गिरोह ने कहा कि अल्लाह ही जानता है कि तुम कितने दिन सोते रहे। आयत में इशारा इसी तरफ़ है कि यह दूसरा गिरोह ही ज़्यादा हक़ीक़त को पहचानने वाला था जिसने मुद्दत के निर्धारण को अल्लाह के हवाले किया क्योंकि इसकी कोई दलील न थी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अस्हाब-ए-कहफ़ और रक़ीम वालों का क़िस्सा

इस क़िस्से में चन्द बातें ग़ौर करने और तहक़ीक़ करने वाली हैं– अव्वल यह कि अस्हाब-ए-कहफ़ व अस्हाब-ए-रक़ीम एक ही जमाअ़त के दो नाम हैं या ये अलग-अलग दो जमाअ़तें हैं। अगरचे किसी सही हदीस में इसकी कोई स्पष्टता नहीं मगर इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब 'सही' में अस्हाब-ए-कहफ़ और अस्हाब-ए-रक़ीम दो उनवान अलग-अलग दिये फिर अस्हाब-ए-रक़ीम के तहत वह मशहूर क़िस्सा तीन शख़्सों के ग़ार में बन्द हो जाने फिर दुआ़ओं के ज़रिये रास्ता खुल जाने का ज़िक्र किया है जो हदीस की तमाम किताबों में तफ़सील से मौजूद है। इमाम बुख़ारी के इस अ़मल से यह समझा जाता है कि उनके नज़दीक अस्हाबे कहफ़ एक जमाअ़त है और अस्हाबे रक़ीम उन तीन शख़्सों को कहा गया है जो किसी ज़माने में ग़ार (खोह) में छुपे थे, फिर पहाड़ से एक बड़ा पत्थर उस ग़ार के दहाने पर आकर गिरा जिससे ग़ार बिल्कुल बन्द हो गया, उनके निकलने का रास्ता न रहा। उन तीनों ने अपने-अपने ख़ास नेक आमाल का वास्ता देकर अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की कि यह काम अगर हमने आपकी रज़ा के लिये किया था तो अपने फ़ज़्ल से हमारा रास्ता खोल दीजिये। पहले शख़्स की दुआ़ से पत्थर कुछ सरक गया रोशनी आने लगी, दूसरे की दुआ़ से और ज़्यादा सरका, फिर तीसरे की दुआ़ से रास्ता बिल्कुल खुल गया।

लेकिन हाफ़िज़ इब्ने हजर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने शरह बुख़ारी में यह वाज़ेह किया है कि हदीस की रिवायत के एतिबार से इसकी कोई स्पष्ट दलील नहीं है कि अस्हाबे रक़ीम उक्त तीन शख़्सों का नाम है, बात सिर्फ़ इतनी है कि खोह वाले वाक़िए के एक रावी हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत में कुछ रावियों ने यह इज़ाफ़ा नक़ल किया है कि हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को रक़ीम का ज़िक्र करते हुए सुना, आप ग़ार में बन्द रह जाने वाले तीन आदमियों का वाक़िआ़ सुना रहे थे, यह इज़ाफ़ा किताब फ़तहुल-बारी में बज़्ज़ार और तिबरानी की रिवायत से नक़ल किया है। मगर अव्वल तो इस हदीस के आ़म रावियों की रिवायतें जो सिहाह-ए-सित्ता (हदीस की छह बड़ी और मशहूर किताबों) और हदीस की दूसरी किताबों में तफ़सील के साथ मौजूद हैं उनमें किसी ने हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह जुमला नक़ल नहीं किया, ख़ुद बुख़ारी की रिवायत भी इस जुमले से ख़ाली है। फिर इस जुमले में भी इसकी वज़ाहत नहीं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ग़ार में बन्द रह जाने वाले उन तीनों शख़्सों को अस्हाब-ए-रक़ीम फ़रमाया था बल्कि अलफ़ाज़ ये हैं कि आप रक़ीम का ज़िक्र फ़रमा रहे थे उसी के तहत में इन तीन शख़्सों का ज़िक्र फ़रमाया।

लफ़्ज़ रक़ीम से क्या मुराद है इसके बारे में सहाबा व ताबिईन और आ़म मुफ़स्सिरीन में जो अक़वाल की भिन्नता और मतभेद ऊपर नक़ल किया गया है वह ख़ुद इसकी दलील है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रक़ीम की कोई मुराद मुतैयन और तय करने के बारे में हदीस की कोई रिवायत नहीं थी, वरना कैसे मुम्किन था कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक लफ़्ज़ की मुराद ख़ुद मुतैयन फ़रमा दें फिर सहाबा व ताबिईन और दूसरे मुफ़स्सिरीन उसके ख़िलाफ़ कोई क़ौल इख़्तियार करें। इसी लिये हाफ़िज़ इब्ने हजर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अस्हाबे कहफ़ व रक़ीम के दो अलग-अलग जमाअ़तें होने से इनकार फ़रमाया और सही यह क़रार दिया कि ये दोनों एक ही जमाअ़त के नाम हैं, ग़ार में बन्द रह जाने वाले तीनों शख़्सों का ज़िक्र रक़ीम के ज़िक्र के साथ आ गया हो इससे यह लाज़िम नहीं आता कि यही तीन शख़्स अस्हाबे रक़ीम थे।

हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इस जगह यह भी स्पष्ट कर दिया कि क़ुरआन ने जो क़िस्सा अस्हाबे कहफ़ का बयान किया है उसका मज़मून ख़ुद यह बतला रहा है कि अस्हाबे कहफ़ व रक़ीम एक ही जमाअ़त है, यही वजह है कि मुफ़स्सिरीन और मुहद्दिसीन की अक्सरियत और बड़ी संख्या इन दोनों के एक ही होने पर सहमत हैं।

दूसरा मसला इस जगह ख़ुद इस क़िस्से की तफ़सीलात का है जिसके दो हिस्से हैं— एक वह जो इस क़िस्से की रूह और असल मक़सद है, जिससे यहूदियों के सवाल का जवाब भी हो जाता है और मुसलमानों के लिये हिदायतें और नसीहतें भी। दूसरा हिस्सा वह है जिसका ताल्लुक़ इस क़िस्से की सिर्फ़ ऐतिहासिक और भूगोलिक हैसियत से है, मक़सद के बयान करने में उसका कोई

ख़ास दख़ल नहीं, जैसे यह क़िस्सा किस ज़माने में और किस शहर और बस्ती में पेश आया, जिस काफ़िर बादशाह से भागकर उन लोगों ने ग़ार में पनाह ली थी वह कौन था? उसके क्या अ़क़ीदे व ख़्यालात थे? और उसने इन लोगों के साथ क्या मामला किया जिससे ये भागने और ग़ार में छुपने पर मजबूर हो गये? फिर यह कि उन लोगों की संख्या कितनी थी और लम्बे ज़माने तक सोते रहने का कुल ज़माना कितना था? और फिर ये लोग अब तक ज़िन्दा हैं या मर गये?

क़ुरआने करीम ने अपने हकीमाना उसूल और ख़ास अन्दाज़ के तहत सारे क़ुरआन में एक युसूफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से के सिवा किसी क़िस्से को पूरी तफ़सील और तरतीब से बयान नहीं किया, जो आ़म तारीख़ी किताबों का तरीक़ा है, बल्कि हर क़िस्से के सिर्फ़ वो हिस्से मौक़े मौक़े पर बयान फ़रमाये हैं जिनसे इनसानी हिदायतों और तालीमात का ताल्लुक़ था (यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से को इस अन्दाज़ व तरीक़े से अलग रखने की वजह सूरः यूसुफ़ की तफ़सीर में गुज़र चुकी है)।

अस्हाब-ए-कहफ़ के क़िस्से में भी यही तरीक़ा इख़्तियार किया गया है कि क़ुरआन में इसके सिर्फ़ वो हिस्से बयान किये गये जो असली मक़सूद से संबन्धित थे बाक़ी हिस्से जो ख़ालिस ऐतिहासिक और भूगोलिक थे उनका कोई ज़िक्र नहीं फ़रमाया। अस्हाब-ए-कहफ़ की संख्या और सोने के ज़माने की मुद्दत के सवालात का ज़िक्र तो फ़रमाया और जवाब की तरफ़ इशारा भी फ़रमाया मगर साथ ही यह भी हिदायत कर दी कि ऐसे मसाईल में ज़्यादा ग़ौर व फ़िक्र और बहस व तकरार मुनासिब नहीं, उनको ख़ुदा तआ़ला के हवाले करना चाहिये।

यही वजह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जिनका फ़र्ज़े-मन्सबी क़ुरआने के मायने बयान करना है, आपने भी किसी हदीस में क़िस्से के उन हिस्सों को बयान नहीं फ़रमाया और बड़े सहाबा व ताबिईन ने इसी क़ुरआनी अन्दाज़ की बिना पर ऐसे मामलात में काम का यही उसूल क़रार दिया कि:

أَبْهِمُوْا مَآ أَبْهَمَهُ اللّٰهُ. (اتقان، سيوطی)

"यानी जिस ग़ैर-ज़रूरी चीज़ को अल्लाह तआ़ला ने अस्पष्ट रखा तुम भी उसे अस्पष्ट रहने दो (कि उसमें बहस व तहक़ीक़ और छानबीन कुछ मुफ़ीद नहीं)।"

सहाबा व ताबिईन के बड़े हज़रात के इस अ़मल और तरीक़े का तक़ाज़ा तो यह था कि इस तफ़सीर में भी क़िस्से के उन हिस्सों को नज़र-अन्दाज़ कर दिया जाये जिनको क़ुरआन और हदीस ने नज़र-अन्दाज़ किया है, लेकिन यह ज़माना वह है जिसमें तारीख़ी और भूगोलिक चीज़ों की छानबीन और नई-नई चीज़ें सामने लाने ही को सबसे बड़ा कमाल समझ लिया गया है, और बाद के उलेमा-ए-तफ़सीर ने इसी लिये कम-ज़्यादा उन हिस्सों को भी बयान फ़रमा दिया है इसलिये इस तफ़सीर में क़िस्से के वो हिस्से जो ख़ुद क़ुरआन में बयान हुए हैं उनका बयान तो क़ुरआन की आयत की तफ़सीर के तहत आ जायेगा बाक़ी क़िस्से के तारीख़ी और भूगोलिक अंशों (हिस्सों) को यहाँ ज़रूरत के मुताबिक़ बयान किया जाता है, और बयान करने के बाद भी

आख़िरी नतीजा वही रहेगा कि इन मामलात में कोई निश्चित और आख़िरी फ़ैसला नामुम्किन है क्योंकि इस्लामी और फिर ईसाई तारीख़ों में इसके बारे में जो कुछ लिखा गया है वह ख़ुद इस क़द्र भिन्न और अलग है कि एक मुसन्निफ़ (लेखक) अपनी तहक़ीक़ व राय को सामने रखकर इशारात और बुनियादी चीज़ों की मदद से किसी एक चीज़ को मुतैयन करता है तो दूसरा उसी तरह दूसरी सूरत को तरजीह देता है।

दीन की हिफ़ाज़त के लिये ग़ारों में पनाह लेने वालों के वाक़िआत विभिन्न शहरों और ख़ित्तों में अनेक हुए हैं

इतिहास के जानकारों के मतभेद की एक बड़ी वजह यह भी है कि ईसाई दीन में चूँकि रहबानियत (दुनिया और सामाजिक ज़िन्दगी से किनारा करने) को दीन का सबसे बड़ा काम समझ लिया गया था, तो हर ख़ित्ते और हर मुल्क में ऐसे अनेक वाक़िआत पेश आये हैं कि कुछ लोग अल्लाह तआ़ला की इबादत के लिये ग़ारों में पनाह लेने वाले हो गये, वहीं उम्रें गुज़ार दीं। अब जहाँ-जहाँ ऐसा कोई वाक़िआ पेश आया है उस पर इतिहासकार को अस्हाब-ए-कहफ़ का गुमान हो जाना कुछ बईद नहीं था।

अस्हाब-ए-कहफ़ की जगह और उनका ज़माना

इमामे तफ़सीर क़ुर्तुबी उन्दुलुसी ने अपनी तफ़सीर में इस जगह चन्द वाक़िआत कुछ दूसरों से सुने हुए और कुछ अपनी आँखों देखे नक़ल किये हैं, जो विभिन्न शहरों से संबन्धित हैं। इमाम क़ुर्तुबी ने सबसे पहले तो इमाम ज़ह्हाक की रिवायत से यह नक़ल किया है कि **रक़ीम** रूम के एक शहर का नाम है जिसके एक ग़ार में इक्कीस आदमी लेटे हुए हैं, ऐसा मालूम होता है कि सो रहे हैं, फिर इमामे तफ़सीर इब्ने अ़तीया से नक़ल किया है कि मैंने बहुत से लोगों से सुना है कि शाम में एक ग़ार (खोह) है जिसमें कुछ मुर्दा लाशें हैं, वहाँ के मुजाविर लोग यह कहते हैं कि यही लोग अस्हाब-ए-कहफ़ हैं, और उस ग़ार के पास एक मस्जिद और मकान की तामीर है जिसको **रक़ीम** कहा जाता है और उन मुर्दा लाशों के साथ एक मुर्दा कुत्ते का ढाँचा भी मौजूद है।

और दूसरा वाक़िआ उन्दुलुस ग़रनाता का नक़ल किया है, इब्ने अ़तीया कहते हैं कि ग़रनाता में एक लोशा नाम के गाँव के क़रीब एक ग़ार (गुफा) है जिसमें कुछ मुर्दा लाशें हैं और उनके साथ एक मुर्दा कुत्ते का ढाँचा भी मौजूद है, उनमें से अक्सर लाशों पर गोश्त बाक़ी नहीं रहा, सिर्फ़ हड्डियों के ढाँचे हैं और कुछ पर अब तक गोश्त पोस्त भी मौजूद है। उन पर सदियाँ गुज़र गईं मगर सही सनद से उनका कुछ हाल मालूम नहीं, कुछ लोग यह कहते हैं कि यही अस्हाबे कहफ़ हैं। इब्ने अ़तीया कहते हैं कि यह ख़बर सुनकर मैं ख़ुद सन् 504 हिजरी में वहाँ पहुँचा तो वाक़ई लाशें उसी हालत पर पाईं और उनके क़रीब ही एक मस्जिद भी है और एक रूमी ज़माने

की तामीर भी है जिसको रकीम कहा जाता है। ऐसा मालूम होता है कि पुराने ज़माने में कोई आलीशान महल होगा, इस वक़्त भी उसकी कई दीवारें मौजूद हैं, और यह एक ग़ैर-आबाद जंगल में है। और फ़रमाया कि ग़रनाता के ऊपरी हिस्से में एक पुराने शहर के आसार व निशानात पाये जाते हैं जो रूमियों के अन्दाज़ के हैं, उस शहर का नाम दक्यूस बतलाया जाता है, हमने उसके खण्डरों में बहुत सी अजीब चीज़ें और क़ब्रें देखी हैं। इमाम क़ुर्तुबी जो उन्दुलुस ही के रहने वाले हैं इन तमाम वाक़िआत को नक़ल करने के बाद भी किसी को मुतैयन तौर पर अस्हाबे कहफ़ कहने से गुरेज़ करते हैं और ख़ुद इब्ने अ़तीया ने भी अपने देखने के बावजूद यह निश्चित तौर पर नहीं कहा कि यही लोग अस्हाबे कहफ़ हैं, महज़ आ़म शोहरत नक़ल की है मगर दूसरे उन्दुलुसी मुफ़स्सिर अबू हय्यान जो सातवीं सदी सन् 654 हिजरी में ख़ास ग़रनाता में पैदा हुए वहीं रहे, बसे हैं, वह भी अपनी तफ़सीर बहरे-मुहीत में ग़रनाता के उस ग़ार का उसी तरह ज़िक्र करते हैं जिस तरह क़ुर्तुबी ने किया है। और इब्ने अ़तीया के अपने देखने और अनुभव का ज़िक्र लिखने के बाद लिखते हैं कि हम जब उन्दुलुस में थे (यानी क़ाहिरा मुन्तक़िल होने से पहले) तो बहुत लोग उस ग़ार की ज़ियारत के लिये जाया करते थे और यह कहते थे कि अगरचे वो लाशें अब तक वहाँ मौजूद हैं और ज़ियारत करने वाले उनको गिनते भी हैं मगर हमेशा उनकी संख्या बताने में ग़लती करते हैं। फिर फ़रमाया कि इब्ने अ़तीया ने जिस शहर दक्यूस का ज़िक्र किया है जो ग़रनाता की क़िब्ले की दिशा में स्थित है तो उस शहर से मैं ख़ुद बेशुमार मर्तबा गुज़रा हूँ और उसमें बड़े-बड़े ग़ैर-मामूली पत्थर देखे हैं। इसके बाद कहते हैं:

ويترجح كون اهل الكهف بالاندلس لكثرة دين النصارىٰ بها حتّٰى هى بلاد مملكتهم العظمٰى.

(تفسير بحر محيط ص١٠٢ ج٦)

"यानी अस्हाब-ए-कहफ़ के उन्दुलुस में होने की तरजीह के लिये यह भी इशारा है कि वहाँ ईसाईयत का ग़लबा है, यहाँ तक कि यही ख़ित्ता उनकी सबसे बड़ी मज़हबी मिल्कियत है।"

इसमें यह बात स्पष्ट है कि अबू हय्यान के नज़दीक अस्हाबे कहफ़ का उन्दुलुस में होना वरीयता प्राप्त है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी पेज 356, 357 जिल्द 9)

तफ़सीर के इमाम इब्ने जरीर और इब्ने अबी हातिम ने औफ़ी की रिवायत से हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि रक़ीम एक वादी का नाम है जो फ़िलिस्तीन से नीचे ऐला (अक़बा) के क़रीब है, और इब्ने जरीर और इब्ने अबी हातिम और चन्द दूसरे मुहद्दिसीन ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह नक़ल किया है कि उन्होंने फ़रमाया कि "मैं नहीं जानता कि रक़ीम क्या है, लेकिन मैंने कअ़बे अहबार से पूछा तो उन्होंने बतलाया कि रक़ीम उस बस्ती का नाम है जिसमें अस्हाबे कहफ़ ग़ार में जाने से पहले रहते थे।"

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इब्ने अबी शैबा, इब्ने मुन्ज़िर और इब्ने अबी हातिम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि वह फ़रमाते हैं कि हमने हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु

अन्हु के साथ रूमियों के मुक़ाबले में एक जिहाद किया जिसको ग़ज़वा-ए-मुज़ीक़ कहते हैं, उस मौक़े पर हमारा गुज़र उस ग़ार (गुफा) पर हुआ जिसमें अस्हाबे कहफ़ हैं जिनका ज़िक्र अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन में फ़रमाया है। हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरादा किया कि ग़ार के अन्दर जायें और अस्हाब-ए-कहफ़ की लाशों को देखें मगर इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ऐसा नहीं करना चाहिये, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने उनको देखने से उस हस्ती को भी मना कर दिया है जो आप से बेहतर थी यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम, क्योंकि हक़ तआ़ला ने क़ुरआन में फ़रमाया है:

لَوِاطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ لَوَلَّيْتَ مِنْهُمْ فِرَارًا وَّلَمُلِئْتَ مِنْهُمْ رُعْبًا٥

(यानी अगर आप उनको देखें तो आप उनसे भागेंगे और रौब व दहशत से मग़लूब हो जायेंगे) मगर हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास की इस बात को शायद इसलिये क़ुबूल नहीं किया कि क़ुरआने करीम ने उनकी जो हालत बयान की है यह वह है जो उनकी ज़िन्दगी के वक़्त थी, यह क्या ज़रूरी है कि अब भी वही हालत हो इसलिये कुछ आदमियों को देखने के लिये भेजा, वे ग़ार पर पहुँचे मगर जब ग़ार में दाख़िल होना चाहा तो अल्लाह तआ़ला ने उन पर एक सख़्त हवा भेज दी जिसने उन सब को ग़ार से निकाल दिया।

(रूहुल-मआ़नी पेज 227 जिल्द 15)

ऊपर बयान हुई रिवायतों और क़िस्सों से इतनी बात साबित हुई कि मुफ़स्सिरीन हज़रात में से जिन हज़रात ने अस्हाबे कहफ़ के ग़ार की जगह का पता दिया है उनके अक़वाल तीन जगहों का पता देते हैं— एक फ़ारस की खाड़ी के किनारे अ़क़बा (ऐला) के क़रीब, हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की अधिकतर रिवायतें इसी की ताईद में हैं, जैसा कि ऊपर बयान हुई रिवायतों में गुज़र चुका है।

इब्ने अ़तीया के देखने और अबू हय्यान की ताईद से यह ज़्यादा सही मालूम होता है कि यह ग़ार ग़रनाता उन्दुलुस में है, इन दोनों जगहों में से अ़क़बा में एक शहर या किसी ख़ास इमारत का नाम रक़ीम होना भी बतलाया गया है। इसी तरह ग़रनाता में ग़ार के क़रीब अ़ज़ीमुश्शान टूटी-फूटी इमारत का नाम रक़ीम बतलाया गया है और दोनों क़िस्म की रिवायतों में किसी ने भी इसका निश्चित फ़ैसला और पक्का भरोसा नहीं किया कि यही ग़ार अस्हाबे कहफ़ का ग़ार है बल्कि दोनों क़िस्म की रिवायतों का मदार स्थानीय शोहरत और सुनी हुई रिवायतों पर है और तक़रीबन तमाम तफ़सीरें— क़ुर्तुबी, अबू हय्यान, इब्ने जरीर वग़ैरह की रिवायतों में अस्हाबे कहफ़ जिस शहर में रहते थे उसका पुराना नाम अफ़सोस और इस्लामी नाम तरसूस बतलाया गया है, इस शहर का एशिया-ए-कोचक के पश्चिमी किनारे पर होना इतिहास लेखकों के नज़दीक मुसल्लम है, इससे मालूम होता है कि यह ग़ार भी एशिया-ए-कोचक में है, इसलिये किसी एक को क़तई और निश्चित तौर पर सही और बाक़ी को ग़लत कहने की कोई दलील नहीं, संभावना और संदेह तीनों जगह का हो सकता है बल्कि इस संभावना की भी कोई नफ़ी नहीं कर सकता

कि इन ग़ारों के वाक़िआत सही होने के बावजूद भी ये उन अस्हाबे कहफ़ के ग़ार न हों जिनका ज़िक्र क़ुरआने करीम में आया है, वह और किसी जगह हो, और यह भी ज़रूरी नहीं कि रक़ीम उस जगह किसी शहर या इमारत ही का नाम हो बल्कि इस संभावना की भी नफ़ी नहीं की जा सकती कि रक़ीम से मुराद वह लिखित पतरा या पत्थर हो जिस पर अस्हाबे कहफ़ के नाम खोदकर ग़ार के दहाने पर किसी बादशाह ने लगा दिया था।

नये इतिहासकारों की तहक़ीक़

मौजूदा ज़माने के कुछ तारीख़ लिखने वालों और उलेमा ने ईसाई तारीख़ों और यूरोप वालों के इतिहास की मदद से अस्हाबे कहफ़ के ग़ार, जगह और ज़माना मुतैयन करने के लिये काफ़ी बहस व तहक़ीक़ और खोजबीन की है।

अबुल-कलाम साहिब आज़ाद ने ऐला (अक़बा) के क़रीब मौजूदा शहर टपरा जिसको अ़रब के इतिहास लेखक बतरा लिखते हैं, उसको पुराना शहर रक़ीम क़रार दिया है और मौजूदा तारीख़ों से इसके क़रीब पहाड़ में एक ग़ार के निशानात भी बतलाये हैं जिसके साथ किसी मस्जिद की तामीर के निशानात भी बतलाये जाते हैं। इसके सुबूत में लिखा है कि बाईबल की किताब यशू (बाब 18 आयत 27) में जिस जगह को रक़ीम या राक़िम कहा है यह वही मक़ाम है जिसको अब टपरा कहा जाता है। मगर इस पर यह शुब्हा किया गया है कि किताब यशू में जो रक़ीम या राक़िम का ज़िक्र बनी बिन-यमीन की औलाद की मीरास के सिलसिले में आया है और यह इलाक़ा उर्दुन के दरिया के और बहरे-लूत के पश्चिम में स्थित था जिसमें शहर टपरा के होने की कोई संभावना नहीं, इसलिये इस ज़माने के पुरातत्व विभाग के तहक़ीक़ करने वालों ने इस बात के मानने में सख़्त संकोच किया है कि टपरा और राक़िम एक चीज़ हैं। (इन्साईक्लूपीडिया बरटानिका, प्रकाशित सन् 1946 ई. जिल्द 17 पेज 658)

और आ़म मुफ़स्सिरीन ने अस्हाबे कहफ़ की जगह शहर अफ़सोस को क़रार दिया है जो एशिया-ए-कोचक के पश्चिमी किनारे पर रूम वालों का सबसे बड़ा शहर था जिसके खंडर अब भी मौजूदा तुर्की के शहर अज़मीर (समरना) से 20-25 मील दक्षिण की ओर पाये जाते हैं।

हज़रत मौलाना सैयद सुलैमान साहिब नदवी रह. ने भी अपनी किताब अरज़ुल-क़ुरआन में शहर टपरा का ज़िक्र करते हुए ब्रेकिट में (रक़ीम) लिखा है मगर इसकी कोई गवाही पेश नहीं की कि शहर टपरा का पुराना नाम रक़ीम था। मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान सेवहारवी ने अपनी किताब क़ससुल-क़ुरआन में इसी को इख़्तियार फ़रमाया और इसके सुबूत में तौरात सफ़र अ़दद और सहीफ़ा सअ़या के हवाले से शहर टपरा का नाम राक़िमा बयान किया है। (दायरतुल-मआ़रिफ़ अ़रब)

उर्दुन देश में अ़म्मान के क़रीब एक सुनसान जंगल में एक ग़ार का पता लगा तो हुकूमत के पुरातत्व विभाग ने सन् 1963 ई. में उस जगह खुदाई का काम जारी किया तो उसमें मिट्टी और पत्थरों के हटाने के बाद हड्डियों और पत्थरों से भरे हुए छह ताबूत और दो क़ब्रें बरामद हुईं, ग़ार

की दक्षिणी दिशा में पत्थरों पर कुछ नुक़ूश भी छपे हुए निकले जो बज़नतीनी भाषा में हैं, यहाँ के लोगों का ख़्याल यह है कि यही जगह रक़ीम है, जिसके पास अस्हाबे कहफ़ का यह ग़ार है। वल्लाहु आलम।

हज़रत सय्यिदी हकीमुल-उम्मत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में तफ़सीर-ए-हक़्क़ानी के हवाले से अस्हाब-ए-कहफ़ की जगह और मक़ाम की तारीख़ी तहक़ीक़ यह नक़ल की है कि ज़ालिम बादशाह जिसके ख़ौफ़ से भागकर अस्हाबे कहफ़ ने ग़ार में पनाह ली थी उसका ज़माना सन् 250 ई. था, फिर तीन सौ साल तक ये लोग सोते रहे तो मजमूआ़ सन् 550 ई. हो गया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैदाईश सन् 570 ई. में हुई, इसलिये हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैदाईश से बीस साल पहले यह वाक़िआ़ उनके जागने का पेश आया और तफ़सीरे हक़्क़ानी में भी उनका मक़ाम शहर अफ़सोस या तरतूस को क़रार दिया है जो एशिया-ए-कोचक में था, अब उसके खंडरात मौजूद हैं। अल्लाह तआ़ला ही असल हक़ीक़त को ज़्यादा जानते हैं।

ये तमाम ऐतिहासिक और भूगोलिक तफ़सीलात हैं जो पुराने मुफ़स्सिरीन की रिवायतों से फिर नये इतिहासकारों के बयानात से पेश की गई हैं। अहक़र ने पहले ही यह अ़र्ज़ कर दिया था कि न क़ुरआन की किसी आयत का समझना इन पर मौक़ूफ़ है न इस मक़सद का कोई ज़रूरी हिस्सा इनसे संबन्धित है जिसके लिये क़ुरआने करीम ने यह क़िस्सा बयान किया है, फिर रिवायतों, क़िस्सों और उनके निशानात व इशारात इस हद तक भिन्न और अलग-अलग हैं कि सारी तहक़ीक़ व खोजबीन के बाद भी इसका कोई क़तई फ़ैसला मुम्किन नहीं, सिर्फ़ तरजीहात और रुझानात ही हो सकते हैं, लेकिन आजकल तालीम याफ़्ता तब्क़े में तारीख़ी तहक़ीक़ात का ज़ौक़ बहुत बढ़ा हुआ है, उसको सुकून पहुँचाने के लिये ये तफ़सीलात नक़ल कर दी गई हैं, जिनसे तक़रीबी और अन्दाज़े के तौर पर इतना मालूम हो जाता है कि यह वाक़िआ़ हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने के क़रीब पेश आया और ज़्यादातर रिवायतें इसके शहर अफ़सोस या तरतूस के क़रीब होने पर सहमत नज़र आती हैं। वल्लाहु आलम

और हक़ीक़त यह है कि इन तमाम तहक़ीक़ात के बाद भी हम वहीं खड़े हैं जहाँ से चले थे कि जगह निर्धारित करने की न कोई ज़रूरत है और न उसका निर्धारित करना किसी यक़ीनी माध्यम से किया जा सकता है, तफ़सीर व हदीस के इमाम इब्ने कसीर रह. ने इसके बारे में यही फ़रमाया है कि:

قَدْ اَخْبَرَنَا اللّٰهُ تَعَالٰى بِذٰلِكَ وَاَرَادَ مِنَّا فَهْمَهٗ وَتَدَبُّرَهٗ وَ لَمْ يُخْبِرْنَا بِمَكَانِ هٰذَا الْكَهْفِ فِىْ اَىِّ الْبِلَادِ مِنَ الْاَرْضِ اِذْ لَا فَائِدَةَ لَنَا فِيْهِ وَلَا قَصْدٌ شَرْعِىٌّ. (ابن کثیر ج۳ ص۷۵)

"यानी अल्लाह तआ़ला ने हमें अस्हाबे कहफ़ के उन हालात की ख़बर दी जिनका ज़िक्र क़ुरआने करीम में होता है कि हम उनको समझें और उनमें गहराई से सोचें और इसकी ख़बर

नहीं दी कि यह कहफ़ (ग़ार) किस ज़मीन और किस शहर में है, क्योंकि इसमें हमारा कोई फ़ायदा नहीं और न कोई शरई मक़सद इससे संबन्धित है।''

अस्हाबे कहफ़ का वाक़िआ किस ज़माने में पेश आया और ग़ार में पनाह लेने के असबाब क्या थे?

क़िस्से का यह टुकड़ा भी वही है जिस पर न किसी क़ुरआनी आयत का समझना मौक़ूफ़ है न क़िस्से के मक़सद पर इसका कोई ख़ास असर है, और न क़ुरआन व सुन्नत में इसका बयान है, सिर्फ़ तारीख़ी वाक़िआत हैं, इसी लिये अबू हय्यान रह. ने तफ़सीर बहरे-मुहीत में फ़रमायाः

وَالرُّوَاةُ مُخْتَلِفُوْنَ فِىْ قَصَصِهِمْ وَكَيْفَ كَانَ اِجْتِمَاعُهُمْ وَخُرُوْجُهُمْ وَلَمْ يَاْتِ فِى الْحَدِيْثِ الصَّحِيْحِ كَيْفِيَّةُ ذٰلِكَ وَلَا فِى الْقُرْاٰنِ. (بحر محیط ص۱۰۱ ج۶)

''इन हज़रात के क़िस्से में बयान करने वालों का सख़्त मतभेद है, और इसमें कि ये अपने इस प्रोग्राम में किस तरह एकराय हुए और किस तरह निकले, न किसी सही हदीस में इसकी कैफ़ियत बयान हुई है न क़ुरआन में।''

फिर भी मौजूदा तबीयतों की दिलचस्पी के लिये जैसे ऊपर अस्हाबे कहफ़ के मक़ाम (स्थान) से संबन्धित कुछ मालूमात लिखी गई हैं इस वाक़िए के पेश आने के ज़माने और पेश आने के कारणों के बारे में भी मुख़्तसर मालूमात तफ़सीरी और तारीख़ी रिवायतों से नक़ल की जाती हैं। इस क़िस्से को पूरी तफ़सील और विस्तार के साथ हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीर-ए-मज़हरी में मुख़्तलिफ़ रिवायतों से नक़ल फ़रमाया है मगर यहाँ सिर्फ़ वह मुख़्तसर वाक़िआ लिखा जाता है जिसको इमाम इब्ने कसीर ने पहले और बाद के बहुत से मुफ़स्सिरीन के हवाले से पेश किया है, वह फ़रमाते हैं किः

''अस्हाबे कहफ़ बादशाहों की औलाद और अपनी क़ौम के सरदार थे, क़ौम बुत-परस्त थी। एक दिन उनकी क़ौम अपने किसी मज़हबी मेले के लिये शहर से बाहर निकली, जहाँ उनका सालाना समारोह होता था, वहाँ जाकर ये लोग अपने बुतों की पूजा-पाठ करते और उनके लिये जानवरों की क़ुरबानी देते थे। उनका बादशाह एक जाबिर व ज़ालिम दक़ियानूस नाम का था जो क़ौम को उस बुतपरस्ती पर मजबूर करता था। उस साल जबकि पूरी क़ौम उस मेले में जमा हुई तो ये अस्हाबे कहफ़ नौजवान भी पहुँचे और वहाँ अपनी क़ौम की ये हरकतें देखीं कि अपने हाथों के बनाये हुए पत्थरों को ख़ुदा समझते और उनकी इबादत करते और उनके लिये क़ुरबानी करते हैं, उस वक़्त अल्लाह तआला ने उनको यह अ़क़्ले सलीम अ़ता फ़रमा दी कि क़ौम की इस अहमक़ाना हरकत से उनको नफ़रत हुई और अ़क़्ल से काम लिया तो उनकी समझ में आ गया कि यह इबादत तो सिर्फ़ उस ज़ात की होनी चाहिये जिसने ज़मीन व आसमान और सारी मख़्लूक़ात पैदा फ़रमाई हैं। यह ख़्याल एक ही

वक़्त में उन चन्द नौजवानों के दिल में आया और उनमें से हर एक ने क़ौम की इस अहमक़ाना इबादत से बचने के लिये उस जगह से हटना शुरू किया, उनमें सबसे पहले एक नौजवान मजमे से दूर एक पेड़ के नीचे बैठ गया, उसके बाद एक दूसरा शख़्स आया और वह भी उसी पेड़ के नीचे बैठ गया, इसी तरह फिर तीसरा और चौथा आदमी आता गया और पेड़ के नीचे बैठता रहा मगर उनमें कोई दूसरे को न पहचानता था और न यह कि यहाँ क्यों आया है, मगर उनको दर हक़ीक़त उस क़ुदरत ने यहाँ जमा किया था जिसने उनके दिलों में ईमान पैदा फ़रमाया।"

क़ौमियत और एकता की असल बुनियाद

अ़ल्लामा इब्ने कसीर ने इसको नक़ल करके फ़रमाया कि लोग तो आपसी संगठन का सबब क़ौमियत और जिन्सियत को समझते हैं मगर हक़ीक़त वह है जो सही बुख़ारी की हदीस में है कि वास्तव में एकता व ताल्लुक़ या बिखराव व जुदाई पहले रूहों में पैदा होती है, उसका असर इस आ़लम के जिस्मों में पड़ता है। जिन रूहों के बीच कायनात के पहले दिन में मुनासबत और इत्तिफ़ाक़ पैदा हुआ वे यहाँ भी आपस में जुड़े हुए और एक जमाअ़त की शक्ल इख़्तियार कर लेती हैं और जिनमें यह मुनासबत और आपसी इत्तिफ़ाक़ न हुआ बल्कि वहाँ अलग ही रहीं उनमें यहाँ भी अ़लैहदगी रहेगी। इसी वाक़िए की मिसाल को देखो कि किस तरह अलग-अलग हर शख़्स के दिल में एक ही ख़्याल पैदा हुआ, उस ख़्याल ने उन सब को ग़ैर-महसूस तौर पर एक जगह जमा कर दिया।

ख़ुलासा यह है कि ये लोग एक जगह जमा तो हो गये मगर हर एक अपने अ़क़ीदे को दूसरे से इसलिये छुपाता था कि कहीं यह जाकर बादशाह के पास मुख़बिरी न कर दे, और मैं गिरफ़्तार न हो जाऊँ। कुछ देर चुप्पी के आ़लम में जमा रहने के बाद उनमें से एक शख़्स बोला कि भाई हम सब के सब का क़ौम से अलग होकर यहाँ पहुँचने का कोई सबब तो ज़रूर है, मुनासिब यह है कि हम सब आपस में एक दूसरे के ख़्याल से वाक़िफ़ हो जायें। इस पर एक शख़्स बोल उठा कि हक़ीक़त यह है कि मैंने अपनी क़ौम को जिस दीन व मज़हब और जिस इबादत में मुब्तला पाया मुझे यक़ीन हो गया कि यह बातिल है, इबादत तो सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की होनी चाहिये जिसका कायनात के पैदा करने में कोई शरीक और साझी नहीं, अब तो दूसरों को भी मौक़ा मिल गया और उनमें से हर एक ने इक़रार किया कि यही अ़क़ीदा और ख़्याल है जिसने मुझे क़ौम से अलग करके यहाँ पहुँचाया।

अब यह एक राय वाली जमाअ़त एक दूसरे की रफ़ीक़ और दोस्त हो गई और इन्होंने अलग अपनी इबादत की जगह बना ली जिसमें जमा होकर ये लोग अल्लाह वह्दहू ला शरीक लहू की इबादत करने लगे।

मगर धीरे-धीरे इनकी ख़बर शहर में फैल गई और चुग़लख़ोरों ने बादशाह तक इनकी ख़बर पहुँचा दी। बादशाह ने इन सब को हाज़िर होने का हुक्म दिया, ये लोग दरबार में हाज़िर हुए तो

बादशाह ने इनके अक़ीदे और तरीक़े के बारे में सवाल किया, अल्लाह ने इनको हिम्मत बख़्शी इन्होंने बग़ैर किसी ख़ौफ़ व ख़तरे के अपना तौहीद (अल्लाह को एक मानने) का अक़ीदा बयान कर दिया और ख़ुद बादशाह को भी इस तरफ़ दावत दी, इसी का बयान क़ुरआने करीम की आयतों में इस तरह आया है:

وَرَبَطْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اِذْ قَامُوْا فَقَالُوْا رَبُّنَا رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ لَنْ نَّدْعُوَا مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلٰهًا لَّقَدْ قُلْنَآ اِذًا شَطَطًا ٥ هٰٓـؤُلَآءِ قَوْمُنَا اتَّخَذُوْا مِنْ دُوْنِهٖٓ اٰلِهَةً. لَوْلَا يَاْتُوْنَ عَلَيْهِمْ بِسُلْطٰنٍ ، بَيِّنٍ. فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا ٥

जब उन लोगों ने बादशाह को बेबाक होकर ईमान की दावत दी तो बादशाह ने उससे इनकार किया और उनको डराया धमकाया, और उनके बदन से वह उम्दा पोशाक जो उन शहज़ादों के बदन पर थी उतरवा दी, ताकि ये लोग अपने मामले में ग़ौर करें और ग़ौर करने के लिये चन्द दिन की मोहलत यह कहकर दी कि तुम नौजवान हो मैं तुम्हारे क़त्ल में इसलिये जल्दी नहीं करता कि तुमको ग़ौर करने का मौक़ा मिल जाये, अब भी अगर तुम अपनी क़ौम के दीन व मज़हब पर आ जाते हो तो तुम अपने हाल पर रहोगे वरना क़त्ल कर दिये जाओगे।

यह अल्लाह तआ़ला का लुत्फ़ व करम अपने मोमिन बन्दों पर था कि इस मोहलत ने उन लोगों के लिये वहाँ से निकलने की राह खोल दी और ये लोग यहाँ से भागकर एक ग़ार (खोह) में छुप गये।

मुफ़स्सिरीन की आ़म रिवायतें इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि ये लोग ईसा अ़लैहिस्सलाम के दीन पर थे, अ़ल्लामा इब्ने कसीर और दूसरे आ़म मुफ़स्सिरीन ने यह ज़िक्र किया है अगरचे इब्ने कसीर ने इसको क़ुबूल इसलिये नहीं किया कि अगर ये लोग ईसाई दीन पर होते तो मदीना के यहूदी इनसे दुश्मनी की बिना पर इनके वाक़िए का सवाल न कराते और इनको अहमियत न देते, मगर यह कोई ऐसी बुनियाद नहीं जिसकी वजह से तमाम रिवायतों को रद्द कर दिया जाये, मदीना के यहूदियों ने तो महज़ एक अ़जीब वाक़िआ़ होने की हैसियत से इसका सवाल कराया जैसे ज़ुल्क़रनैन का सवाल भी इसी बिना पर है, इस तरह के सवालात में यहूदियत और ईसाईयत का तास्सुब (पक्षपात) बीच में न आना ही ज़ाहिर है।

तफ़सीरे मज़हरी में इब्ने इस्हाक़ की रिवायत से उन लोगों को ईमान वालों में शुमार किया है जो ईसाई दीन के मिट जाने के बाद उनमें के हक़-परस्त लोग इक्का-दुक्का रह गये थे, जो सही ईसाई दीन और तौहीद पर क़ायम थे। इब्ने इस्हाक़ की रिवायत में भी उस ज़ालिम बादशाह का नाम **दक़ियानूस** बतलाया है और जिस शहर में ये नौजवान ग़ार में छुपने से पहले रहते थे उसका नाम **अफ़सोस** बतलाया है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत में भी वाक़िआ़ इसी तरह बयान किया है और बादशाह का नाम दक़ियानूस बतलाया है। इब्ने इस्हाक़ की रिवायत में यह भी है कि अस्हाबे कहफ़ के जागने के वक़्त मुल्क पर ईसाई दीन के पाबन्द जिन लोगों का

क़ब्ज़ा हो गया था उनके बादशाह का नाम बैदूसीस था।

रिवायतों के मजमूए से यह बात तो ग़ालिब गुमान से साबित हो जाती है कि अस्हाबे कहफ़ सही ईसाई दीन पर थे और उनका ज़माना मसीह अ़लैहिस्सलाम के बाद का है और जिस मुश्रिक बादशाह से भागे थे उसका नाम दक़ियानूस था। तीन सौ नौ साल के बाद नींद से जागने के वक़्त जिस नेक मोमिन बादशाह की हुकूमत थी इब्ने इस्हाक़ की रिवायत में उसका नाम बैदूसीस बतलाया है, इसके साथ मौजूदा ज़माने की तारीख़ों को मिलाकर देखा जाये तो अन्दाज़े के तौर पर उनका ज़माना मुतैयन (निर्धारित) हो सकता है, इससे ज़्यादा निर्धारित करने की न ज़रूरत है और न उसकी जानकारी के असबाब मौजूद हैं।

क्या अस्हाब-ए-कहफ़ अब भी ज़िन्दा हैं?

इस मामले में सही और ज़ाहिर यही है कि उनकी वफ़ात हो चुकी है। तफ़सीरे मज़हरी में इब्ने इस्हाक़ की तफ़सीली रिवायत में है कि अस्हाबे कहफ़ के जागने और शहर में उनके अ़जीब वाक़िए की शोहरत हो जाने और उस वक़्त के बादशाह बैदूसीस के पास पहुँचकर मुलाक़ात करने के बाद अस्हाबे कहफ़ ने बैदूसीस बादशाह से रुख़्सत चाही और रुख़्सती सलाम के साथ उसके लिये दुआ़ की और अभी बादशाह उसी जगह मौजूद था कि ये लोग अपने लेटने की जगहों पर जाकर लेट गये और उसी वक़्त अल्लाह तआ़ला ने इनको मौत दे दी।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की यह रिवायत इब्ने जरीर, इब्ने कसीर वग़ैरह सभी मुफ़स्सिरीन ने नक़ल की है कि:

قَالَ قَتَادَةُ غَزَا ابْنُ عَبَّاسٍ مَعَ حَبِيْبِ بْنِ مَسْلَمَةَ فَمَرُّوْا بِكَهْفٍ فِيْ بِلَادِ الرُّوْمِ فَرَاَوْا فِيْهِ عِظَامًا فَقَالَ قَآئِلٌ هٰذِهٖ عِظَامُ اَهْلِ الْكَهْفِ فَقَالَ ابْنُ عَبَّاسٌ لَقَدْ بَلِيَتْ عِظَامُهُمْ مِنْ اَكْثَرَ مِنْ ثَلٰثِ مِائَةِ سَنَةٍ. (ابن كثير)

"क़तादा कहते हैं कि इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हबीब इब्ने मस्लमा के साथ एक जिहाद किया तो रूम के इलाक़े में उनका गुज़र एक ग़ार पर हुआ जिसमें मुर्दा लाशों की हड्डियाँ थीं, किसी ने कहा कि ये अस्हाबे कहफ़ की हड्डियाँ हैं तो इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि उनकी हड्डियाँ तो अब से तीन सौ बरस पहले ख़ाक हो चुकी हैं।"

ये सब इस तारीख़ी क़िस्से के वो अंश और हिस्से थे जिनको न क़ुरआन ने बयान किया न हदीसे रसूल ने और न इस वाक़िए का कोई ख़ास मक़सद या क़ुरआन की किसी आयत का समझना इस पर मौक़ूफ़ है, और न तारीख़ी रिवायतों से इन चीज़ों का निश्चित और आख़िरी फ़ैसला किया जा सकता है, बाक़ी रहे क़िस्से के वो हिस्से जिनका ख़ुद क़ुरआने करीम ने ज़िक्र फ़रमाया है उनकी तफ़सील इन्हीं आयतों के तहत आती है।

यहाँ तक क़ुरआने करीम ने इस क़िस्से का संक्षिप्त रूप से ज़िक्र फ़रमाया था आगे तफ़सीली ज़िक्र आता है।

نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ نَبَأَهُمْ بِالْحَقِّ ۚ إِنَّهُمْ فِتْيَةٌ آمَنُوا بِرَبِّهِمْ وَزِدْنَاهُمْ هُدًى ﴿١٣﴾ وَرَبَطْنَا عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ إِذْ قَامُوا فَقَالُوا رَبُّنَا رَبُّ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ لَنْ نَدْعُوَ مِنْ دُونِهِ إِلَٰهًا ۖ لَقَدْ قُلْنَا إِذًا شَطَطًا ﴿١٤﴾ هَٰؤُلَاءِ قَوْمُنَا اتَّخَذُوا مِنْ دُونِهِ آلِهَةً ۖ لَوْلَا يَأْتُونَ عَلَيْهِمْ بِسُلْطَانٍ بَيِّنٍ ۖ فَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرَىٰ عَلَى اللَّهِ كَذِبًا ﴿١٥﴾ وَإِذِ اعْتَزَلْتُمُوهُمْ وَمَا يَعْبُدُونَ إِلَّا اللَّهَ فَأْوُوا إِلَى الْكَهْفِ يَنْشُرْ لَكُمْ رَبُّكُمْ مِنْ رَحْمَتِهِ وَيُهَيِّئْ لَكُمْ مِنْ أَمْرِكُمْ مِرْفَقًا ﴿١٦﴾

नह्नु नक़ुस्सु अ़लै-क न-ब-अहुम् बिल्हक़्क़ि, इन्नहुम् फ़ित्यतुन् आमनू बिरब्बिहिम् व ज़िद्नाहुम् हुदा (13) व रबत्ना अ़ला क़ुलूबिहिम् इज़् क़ामू फ़क़ालू रब्बुना रब्बुस्समावाति वल्अर्ज़ि लन्-नद्अु-व मिन् दूनिही इलाहल्-लक़द् क़ुल्ना इज़न् श-तता (14) हाउला-इ क़ौमुनत्त-ख़ज़ू मिन् दूनिही आलि-हतन्, लौ ला यअ्तू-न अ़लैहिम् बिसुल्तानिम्-बय्यिनिन्, फ़-मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबा (15) व इज़िअ्-तज़ल्तुमूहुम् व मा यअ़्बुदू-न इल्लल्ला-ह फ़अ्वू इलल्-कह्फ़ि यन्शुर् लकुम् रब्बुकुम् मिर्रह्मतिही व युहय्यिअ् लकुम् मिन् अम्रिकुम् मिर्फ़क़ा (16)

हम सुनायें तुझको उनका तहक़ीक़ी हाल, वे कई जवान हैं कि यक़ीन लाये अपने रब पर और ज़्यादा दी हमने उनको सूझ। (13) और गिरह दी उनके दिल पर जब खड़े हुए फिर बोले हमारा रब है रब आसमान का और ज़मीन का, न पुकारेंगे हम उसके सिवा किसी को माबूद, नहीं तो कही हमने बात अ़क़्ल से दूर। (14) यह हमारी क़ौम है ठहरा लिये इन्होंने अल्लाह के सिवा और माबूद, क्यों नहीं लाते उन पर कोई खुली सनद, फिर उससे बड़ा गुनाहगार कौन जिसने बाँधा अल्लाह पर झूठ। (15) और जब तुमने किनारा कर लिया उनसे और जिनको वे पूजते हैं अल्लाह के सिवाय तो अब जा बैठो उस खोह में, फैला दे तुम पर तुम्हारा रब कुछ अपनी रहमत से और बना दे तुम्हारे वास्ते काम में आराम। (16)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हम उनका वाक़िआ आप से ठीक-ठीक बयान करते हैं (इसमें इशारा कर दिया कि इसके

ख़िलाफ़ जो कुछ दुनिया में मशहूर है वह दुरुस्त नहीं), वे लोग (यानी अस्हाब-ए-कहफ़) कुछ नौजवान थे जो अपने रब पर (उस ज़माने के ईसाई दीन के मुताबिक़) ईमान लाये थे और हमने उनकी हिदायत में और तरक़्क़ी कर दी थी (कि ईमान की सिफ़ात, दीन पर जमाव और मुसीबतों पर सब्र, दुनिया से बेताल्लुक़ी, आख़िरत की फ़िक्र वग़ैरह भी अ़ता कर दीं, इन्हीं ईमानी सिफ़ात व हिदायत में एक बात यह थी कि) हमने उनके दिल मज़बूत कर दिये जबकि वे पक्के होकर (आपस में या मुख़ालिफ़ बादशाह के रू-ब-रू) कहने लगे कि हमारा रब तो वह है जो आसमानों और ज़मीन का रब है, हम तो उसको छोड़कर किसी माबूद की इबादत न करेंगे (क्योंकि अगर ख़ुदा न करे हमने ऐसा किया) तो उस सूरत में हमने यक़ीनन बड़ी ही बेजा बात कही। यह जो हमारी क़ौम है, इन्होंने ख़ुदा को छोड़कर और दूसरे माबूद क़रार दे रखे हैं (क्योंकि उनकी क़ौम और उस वक़्त का बादशाह सब बुत-परस्त थे, सो) ये लोग अपने माबूदों (के माबूद होने) पर कोई खुली दलील क्यों नहीं लाते (जैसा कि एक अल्लाह पर ईमान रखने वाले अल्लाह की तौहीद पर स्पष्ट और यक़ीनी दलील रखते हैं) तो उस शख़्स से ज़्यादा कौन ग़ज़ब ढहाने वाला होगा जो अल्लाह तआ़ला पर झूठी तोहमत लगा दे (कि उसके कुछ साझी और शरीक भी हैं)।

और फिर (आपस में कहा कि) जब तुम इन लोगों से अ़क़ीदे ही में अलग हो गये हो और इनके माबूदों (की इबादत) से भी (अलग हो गये), मगर अल्लाह तआ़ला से (अलग नहीं हुए बल्कि उसी की वजह से सब को छोड़ा है) तो अब (मस्लेहत यह है कि) तुम (फ़ुलाँ) ग़ार में (जो मश्विरे से तय हुआ होगा) चलकर पनाह लो (ताकि अमन और बेफ़िक्री के साथ अल्लाह की इबादत कर सको) तुम पर तुम्हारा रब अपनी रहमत फैला देगा और तुम्हारे लिये तुम्हारे इस काम में कामयाबी का सामान दुरुस्त कर देगा (अल्लाह तआ़ला से इसी उम्मीद पर ग़ार में जाने के वक़्त उन्होंने सब से पहले यह दुआ की कि:

رَبَّنَآ اٰتِنَا مِنْ لَّدُنْكَ رَحْمَةً وَّهَيِّئْ لَنَا مِنْ اَمْرِنَا رَشَدًا ○)

(यानी इसी सूरत की ऊपर बयान हुई आयत नम्बर 10)

मआ़रिफ़ व मसाईल

'इन्नहुम् फ़ित्यतुन'। फ़ित्यतुन 'फ़ता' की जमा (बहुवचन) है जो नौजवान के मायने में आता है। तफ़सीर के उलेमा ने फ़रमाया कि इस लफ़्ज़ में यह इशारा पाया जाता है कि आमाल व अख़्लाक़ को सुधारने और हिदायत व रहनुमाई का ज़माना जवानी ही की उम्र है, बुढ़ापे में पिछले आमाल व अख़्लाक़ ऐसे पुख़्ता हो जाते हैं कि कितना ही उसके ख़िलाफ़ हक़ वाज़ेह हो जाये उनसे निकलना मुश्किल होता है। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दावत पर ईमान लाने वाले ज़्यादातर नौजवान ही लोग थे।

(इब्ने कसीर, अबू हय्यान)

وَرَبَطْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ

इमाम इब्ने कसीर के हवाले से जो वाकिए की सूरत ऊपर बयान की गई है उससे मालूम हुआ कि अल्लाह की तरफ़ से उनके दिलों को मज़बूत कर देने का वाक़िआ उस वक़्त हुआ जब कि बुत-परस्त ज़ालिम बादशाह ने उन नौजवानों को अपने दरबार में हाज़िर करके सवालात किये। उस मौत व ज़िन्दगी की कश्मकश और क़त्ल के ख़ौफ़ के बावजूद अल्लाह तआ़ला ने उनके दिलों पर अपनी मुहब्बत और बड़ाई व डर ऐसा मुसल्लत कर दिया कि उसके मुक़ाबले में क़त्ल व मौत और हर मुसीबत को बरदाश्त करने के लिये तैयार होकर अपने अ़क़ीदे का साफ़ साफ़ इज़हार कर दिया कि वे अल्लाह के सिवा किसी माबूद की इबादत नहीं करते, और आईन्दा भी न करेंगे। जो लोग अल्लाह के लिये किसी काम का पुख़्ता इरादा कर लेते हैं तो हक़ तआ़ला की तरफ़ से उनकी ऐसी ही इमदाद हुआ करती है।

فَأْوٗٓا اِلَى الْكَهْفِ

इब्ने कसीर रह. ने फ़रमाया कि अस्हाबे कहफ़ ने जो सूरत इख़्तियार की कि जिस शहर में रहकर अल्लाह की इबादत न हो सकती थी उसको छोड़कर ग़ार में पनाह ली, यही सुन्नत है तमाम अम्बिया की कि ऐसे मक़ामात से हिजरत करके वह जगह इख़्तियार करते हैं जहाँ इबादत की जा सके।

وَتَرَى الشَّمْسَ اِذَا طَلَعَتْ تَّزٰوَرُ عَنْ كَهْفِهِمْ ذَاتَ الْيَمِيْنِ وَاِذَا غَرَبَتْ تَّقْرِضُهُمْ ذَاتَ الشِّمَالِ وَهُمْ فِيْ فَجْوَةٍ مِّنْهُ ۚ ذٰلِكَ مِنْ اٰيٰتِ اللّٰهِ ۗ مَنْ يَّهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ ۚ وَمَنْ يُّضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ وَلِيًّا مُّرْشِدًا ﴿١٧﴾ وَتَحْسَبُهُمْ اَيْقَاظًا وَّهُمْ رُقُوْدٌ ۖ وَّنُقَلِّبُهُمْ ذَاتَ الْيَمِيْنِ وَذَاتَ الشِّمَالِ ۖ وَكَلْبُهُمْ بَاسِطٌ ذِرَاعَيْهِ بِالْوَصِيْدِ ۚ لَوِ اطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ لَوَلَّيْتَ مِنْهُمْ فِرَارًا وَّلَمُلِئْتَ مِنْهُمْ رُعْبًا ﴿١٨﴾

व-तरश्शम्-स इज़ा त-लअ़त्तज़ावरु अ़न् कह्फ़िहिम् ज़ातल्-यमीनि व इज़ा ग़-रबत् तक़्रिज़ुहुम् ज़ातश्शिमालि व हुम् फ़ी फ़ज्वतिम् मिन्हु, ज़ालि-क मिन् आयातिल्लाहि, मंय्यह्दिल्लाहु फ़हुल्मुह्तदि व मंय्युज़्लिल् फ़-लन् तजि-द लहू वलिय्यम्-मुर्शिदा (17) ✿ व तह्सबुहुम् ऐक़ाज़ंव्-व हुम् रुक़ूदुंव्-व नुक़ल्लिबुहुम् ज़ातल्यमीनि	और तू देखे धूप जब निकलती है बचकर जाती है उनकी खोह से दाहिने को और जब डूबती है कतरा जाती है उनसे बायें को, और वह मैदान में हैं उसके, यह है अल्लाह की क़ुदरतों में से जिसको राह दे अल्लाह वही आये राह पर और जिसको वह बिचलाये फिर तू न पाये उसको कोई साथी राह पर लाने वाला। (17) ✿ और तू समझे कि वे जागते हैं और वे सो रहे हैं और करवटें दिलाते हैं हम

व ज़ातश्शिमालि व कल्बुहुम् बासितुन् ज़िराऔहि बिल्-वसीदि, लवित्त-लअ्-त अ़लैहिम् लवल्लै-त मिन्हुम् फ़िरारंव्-व लमुलिअ्-त मिन्हुम् रुअ्बा (18)	उनको दाहिने और बायें और उनका कुत्ता पसार रहा है अपनी बाँहें चौखट पर, अगर तू झाँक कर देखे उनको तो पीठ देकर भागे उनसे और भर जाये तुझमें उनकी दहशत। (18)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ऐ मुख़ातब! (वह ग़ार ऐसी शक्ल व अन्दाज़ पर स्थित है कि) जब धूप निकलती है तो तू उसको देखेगा कि वह ग़ार से दाहिनी तरफ़ को बची रहती है (यानी ग़ार के दरवाज़े से दाहिनी तरफ़ अलग को रहती है), और जब छुपती है तो (ग़ार के) बाईं तरफ़ हटी रहती है (यानी उस वक़्त भी ग़ार के अन्दर धूप नहीं जाती ताकि उनको धूप की तपिश से तकलीफ़ न पहुँचे)। और वे लोग उस ग़ार की एक खुली जगह में थे (यानी ऐसे ग़ारों में जो आ़दतन कहीं तंग कहीं खुले होते हैं तो वे उस ग़ार के ऐसे स्थान पर थे जो खुला था ताकि हवा भी पहुँचे और जगह की तंगी से जी भी न घबराये)। यह अल्लाह की निशानियों में से है (कि ज़ाहिरी असबाब के विपरीत उनके लिये आ़राम का सामान मुहैया कर दिया। पस मालूम हुआ कि) जिसको अल्लाह हिदायत दे वही हिदायत पाता है, और जिसको वह बेराह कर दे तो आप उसके लिये कोई मददगार, राह बताने वाला न पाएँगे (ग़ार की जो शक्ल व हालत बतलाई गई है कि उसमें न सूरज निकलने के वक़्त सुबह को धूप अन्दर जाती न शाम को छुपने के वक़्त, यह इस सूरत में हो सकता है जबकि ग़ार उत्तरी दिशा या दक्षिणी दिशा में हो क्योंकि दाहिनी बाईं जानिब ग़ार में दाख़िल होने वाले की मुराद हों तो ग़ार उत्तरी रुख़ का होगा और दाहिनी बाईं जानिब ग़ार से निकलने वाले की मुराद हों तो ग़ार दक्षिणी रुख़ वाला होगा)।

और ऐ मुख़ातब! (तू अगर उस वक़्त जबकि वे ग़ार में गये और हमने उन पर नींद मुसल्लत कर दी उनको देखता तो) तू उनको जागता हुआ ख़्याल करता, हालाँकि वे सोते थे (क्योंकि अल्लाह की क़ुदरत ने उनको नींद के आसार व निशानियों से महफ़ूज़ रखा था, जैसे साँस का बदल जाना, बदन का ढीलापन, आँखें अगर बन्द भी हों तो सोनें की यक़ीनी निशानी नहीं) और (उस नींद के लम्बे ज़माने में) हम उनको (कभी) दाहिनी तरफ़ और (कभी) बाईं तरफ़ करवट दे देते थे, और (उस हालत में) उनका कुत्ता (जो किसी वजह से उनके साथ आ गया था ग़ार की) दहलीज़ पर अपने दोनों हाथ फैलाये हुए (बैठा) था (और उनके रौब और अल्लाह के दिये हुए जलाल की यह हालत थी कि) अगर (ऐ मुख़ातब!) तू उनको झाँककर देखता तो उनसे पीठ फेरकर भाग खड़ा होता, और तेरे अन्दर उनकी दहशत समा जाती (इस आयत में ख़िताब

आम मुख़ातबीन को है, इससे आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मरऊब होना लाज़िम नहीं आता, और यह तमाम सामान हक् तआला ने उन लोगों की हिफ़ाज़त के लिये जमा कर दिये थे, क्योंकि जागते हुए आदमी पर हमला करना आसान नहीं होता, और नींद के लम्बे ज़माने में करवटें न बदली जातीं तो मिट्टी एक करवट को खा लेती, और ग़ार के दरवाज़े पर कुत्ते का बैठना भी हिफ़ाज़त का सामान होना ज़ाहिर है)।

मआरिफ़ व मसाईल

इन आयतों में हक् तआला ने अस्हाबे कहफ़ के तीन हाल बतलाये हैं और तीनों अजीब हैं जो उन हज़रात की करामत से आम मामूल के ख़िलाफ़ ज़ाहिर हुए।

अव्वल लम्बे समय तक लगातार नींद का मुसल्लत होना और उसमें बग़ैर किसी ग़िज़ा वग़ैरह के ज़िन्दा रहना सबसे बड़ी करामत आम आदत व मामूल के ख़िलाफ़ है, इसकी तफ़सील तो अगली आयतों में आयेगी यहाँ इस लम्बी नींद की हालत में उनका एक हाल तो यह बतलाया है कि अल्लाह तआला ने उनको ग़ार (खोह) के अन्दर इस तरह महफ़ूज़ रखा था कि सुबह शाम धूप उनके क़रीब से गुज़रती मगर ग़ार के अन्दर उनके जिस्मों पर न पड़ती थी। क़रीब से गुज़रने के फ़ायदे ज़िन्दगी के आसार का क़ायम रहना, हवा और सर्दी, गर्मी का नॉरमल रहना वग़ैरह थे और उनके जिस्मों पर धूप न पड़ने से जिस्मों की और उनके लिबास की हिफ़ाज़त भी थी।

धूप के उनके ऊपर न पड़ने की यह सूरत ग़ार की किसी ख़ास शक्ल, बनावट और अन्दाज़ की बिना पर भी हो सकती है कि उसका दरवाज़ा दक्षिण या उत्तर में ऐसे अन्दाज़ पर हो कि धूप तबई और आदी तौर पर उसके अन्दर न पहुँचे, इब्ने क़ुतैबा रह. ने उसकी कोई ख़ास हालत और बनावट मुतैयन करने के लिये यह तकल्लुफ़ किया कि रियाज़ी (हिसाब) के उसूल व क़ायदों के एतिबार से उस जगह का तूले-बलद (अक्षांस) अर्ज़े-बलद (लम्बांश) और ग़ार का रुख़ मुतैयन किया। (मज़हरी) और इसके मुक़ाबले में ज़ुजाज ने कहा कि धूप का उनसे अलग रहना किसी ख़ास अन्दाज़, शक्ल व हालत और हैबत की बिना पर नहीं बल्कि उनकी करामत से बतौर आम आदत के ख़िलाफ़ था और इस आयत के आख़िर में यह जो इरशाद है 'ज़ालि-क मिन् आयातिल्लाहि' यह भी बज़ाहिर इसी पर दलालत करता है कि धूप से हिफ़ाज़त का यह सामान ग़ार की किसी ख़ास शक्ल व बनावट और हालत का नतीजा नहीं था बल्कि अल्लाह तआला की कामिल क़ुदरत की एक निशानी थी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और साफ़ बात यह है कि अल्लाह तआला ने उनके लिये ऐसा सामान मुहैया फ़रमा दिया था कि धूप उनके जिस्मों पर न पड़े चाहे, यह सामान ग़ार की हालत और बनावट व शक्ल के ज़रिये हो, या कोई बादल वग़ैरह धूप के वक़्त दरमियान में आ जाता हो, या डायरेक्ट सूरज की किरणों को उनसे एक करिश्मे के तौर पर हटा दिया जाता हो, आयत में ये सब संभावनायें और गुंजाईशें हैं, किसी एक को मुतैयन करने पर ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं।

अस्हाबे कहफ़ लम्बी नींद के ज़माने में इस हालत पर थे कि देखने वाला उनको जागा हुआ समझे

दूसरा हाल यह बतलाया है कि अस्हाबे कहफ़ पर इतनी लम्बी मुद्दत तक नींद मुसल्लत कर देने के बावजूद उनके जिस्मों पर नींद के आसार न थे बल्कि ऐसी हालत थी कि उनको देखने वाला यह महसूस करे कि वे जाग रहे हैं। आम मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि उनकी आँखें खुली हुई थीं, बदन में ढीलापन जो नींद से होता है वह नहीं था, साँस में तब्दीली जो सोने वालों के हो जाती है वह नहीं थी, ज़ाहिर यह है कि यह हालत भी असाधारण और एक किस्म की करामत ही थी जिसमें बज़ाहिर हिक्मत यह थी कि उनकी हिफ़ाज़त हो, कोई उनको सोता हुआ समझकर उन पर हमला न करे, या जो सामान उनके साथ था वह न चुरा ले। और निरंतर करवटें बदलने से भी देखने वाले को उनके जागे रहने का ख़्याल हो सकता है और करवटें बदलने में यह मस्लेहत भी थी कि मिट्टी एक करवट को न खा ले।

अस्हाबे कहफ़ का कुत्ता

यहाँ एक सवाल तो यह पैदा होता है कि सही हदीस में आया है कि जिस घर में कुत्ता या तस्वीर हो उसमें फ़रिश्ते दाख़िल नहीं होते, और सही बुख़ारी की एक हदीस में हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स शिकारी कुत्ते या जानवरों के मुहाफ़िज़ कुत्ते के अ़लावा कुत्ता पालता है तो हर दिन उसके अज्र में से दो क़ीरात घट जाते हैं (क़ीरात एक छोटे-से वज़न का नाम है) और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत में एक तीसरी किस्म के कुत्ते को भी इस हुक्म से अलग रखा गया है यानी जो खेती की हिफ़ाज़त के लिये पाला गया हो।

हदीस की इन रिवायतों की बिना पर यह सवाल पैदा होता है कि उन बुज़ुर्ग अल्लाह वालों ने कुत्ता क्यों साथ लिया? इसका एक जवाब तो यह हो सकता है कि यह हुक्म कुत्ता पालने की मनाही का शरीअ़ते मुहम्मदिया का हुक्म है, मुम्किन है कि ईसा अ़लैहिस्सलाम के दीन में वर्जित और मना न हो, दूसरे यह भी हो सकता है कि ये लोग जायदाद व मवेशी वाले थे उनकी हिफ़ाज़त के लिये कुत्ता पाला हो और जैसे कुत्ते की वफ़ा की सिफ़त मशहूर है ये जब शहर से चले तो वह भी साथ लग लिया।

नेक सोहबत की बरकतें कि उसने कुत्ते का भी सम्मान बढ़ा दिया

इब्ने अ़तीया रह. फ़रमाते हैं कि मेरे वालिद माजिद ने बतलाया कि मैंने अबुल-फ़ज़्ल जौहरी

रह. का एक बयान सन् 469 हिजरी में मिस्र की जामा मस्जिद के अन्दर सुना, वह मिम्बर पर यह फ़रमा रहे थे कि जो शख़्स नेक लोगों से मुहब्बत करता है उनकी नेकी का हिस्सा उसको भी मिलता है, देखो अस्हाबे कहफ़ के कुत्ते ने उनसे मुहब्बत की और साथ लग लिया तो अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआने करीम में उसका ज़िक्र फ़रमाया।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने अपनी तफ़सीर में इब्ने अ़तीया रह. की रिवायत नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि जब एक कुत्ता नेक लोगों और अल्लाह वालों की सोहबत से यह मक़ाम पा सकता है तो आप अन्दाज़ा कर लें कि ख़ालिस और सच्चे ईमान वाले हज़रात जो औलिया-अल्लाह और नेक लोगों से मुहब्बत रखें उनका मक़ाम कितना बुलन्द होगा, बल्कि इस वाक़िए में उन मुसलमानों के लिये तसल्ली और ख़ुशख़बरी है जो अपने आमाल में कमज़ोर व सुस्त हैं मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुहब्बत पूरी रखते हैं।

सही बुख़ारी में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया गया है कि मैं और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक दिन मस्जिद से निकल रहे थे, मस्जिद के दरवाज़े पर एक शख़्स मिला और यह सवाल किया कि या रसूलल्लाह! क़ियामत कब आयेगी? आपने फ़रमाया कि तुमने क़ियामत के लिये क्या तैयारी कर रखी है (जो उसके आने की जल्दी कर रहे हो)? यह बात सुनकर वह शख़्स दिल में कुछ शर्मिन्दा हुआ और फिर अ़र्ज़ किया कि मैंने क़ियामत के लिये बहुत नमाज़, रोज़े और सदक़े तो जमा नहीं किये मगर मैं अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुहब्बत रखता हूँ। आपने फ़रमाया कि अगर ऐसा है तो (सुन लो कि) तुम (क़ियामत में) उसी के साथ होगे जिससे मुहब्बत रखते हो। हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हम यह मुबारक जुमला हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुनकर इतने ख़ुश हुए कि इस्लाम लाने के बाद इससे ज़्यादा ख़ुशी कभी न हुई थी और इसके बाद हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि (अल्हम्दु लिल्लाह) मैं अल्लाह से, उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से, अबू बक्र व उमर से मुहब्बत रखता हूँ इसलिये इसका उम्मीदवार हूँ कि उनके साथ हूँगा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

अस्हाबे कहफ़ को अल्लाह तआ़ला ने ऐसा रौब व जलाल अ़ता फ़रमाया था कि जो देखे डरकर भाग जाये

لَوِاطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ

ज़ाहिर यह है कि इसमें ख़िताब आ़म लोगों को है, इसलिये इससे यह लाज़िम नहीं आता कि अस्हाबे कहफ़ का रौब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर भी छा सकता था, आ़म मुख़ातब लोगों को फ़रमाया गया है कि अगर तुम उनको झाँककर देखो तो डरकर भाग जाओ और उनका रौब व हैबत तुम पर तारी हो जाये।

यह रौब व दहशत किस बिना और किन असबाब की वजह से था, इसमें बहस फ़ुज़ूल है

और इसी लिये क़ुरआन व हदीस ने इसको बयान नहीं किया। हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआ़ला ने उनकी हिफ़ाज़त के लिये ऐसे हालात पैदा फ़रमा दिये थे कि उनके बदन पर धूप न पड़े और देखने वाला उनको जागा हुआ समझे और देखने वाले पर उनकी हैबत (ख़ौफ़ व दहशत) तारी हो जाये, कि पूरी तरह देख न सके। ये हालात ख़ास तबई असबाब की बिना पर होना भी मुम्किन है और बतौर करामत व करिश्मे के भी। जब क़ुरआन व हदीस ने इसकी कोई ख़ास वजह मुतैयन नहीं फ़रमाई तो ख़ाली अन्दाज़ों और अटकलों से इसमें बहस करना बेकार है। तफ़सीरे मज़हरी में इसी को तरजीह दी है और ताईद में इब्ने अबी शैबा, इब्ने मुन्ज़िर, इब्ने अबी हातिम की सनद से हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह वाक़िआ नक़ल किया है कि हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हमने रूम के मुक़ाबले में हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु के साथ जिहाद किया जो ग़ज़्वतुल-मुज़ीक़ के नाम से परिचित है उस सफ़र में हमारा गुज़र उस ग़ार पर हुआ जिसमें अस्हाबे कहफ़ हैं, हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरादा किया कि अस्हाबे कहफ़ की तहक़ीक़ और देखने के लिये ग़ार में जायें, हज़रत इब्ने अ़ब्बास ने मना किया और कहा कि अल्लाह तआ़ला ने आप से बड़ी और बेहतर हस्ती (यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को उनके देखने से मना कर दिया है और यही आयत पढ़ीः

لَوِاطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ

(इससे मालूम हुआ कि हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नज़दीक 'लवित्तलअ्-त अ़लैहिम्' का ख़िताब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को था मगर हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इब्ने अ़ब्बास की राय को क़ुबूल नहीं किया (ग़ालिबन वजह यह होगी कि उन्होंने आयत का मुख़ातब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बजाय आ़म मुख़ातब लोगों को क़रार दिया होगा, या यह कि यह हालत क़ुरआन ने उस वक़्त की बयान की है जिस वक़्त अस्हाबे कहफ़ ज़िन्दा थे और सो रहे थे, अब उनकी वफ़ात को अ़रसा हो चुका है ज़रूरी नहीं कि अब भी वही रौब व दहशत की कैफ़ियत मौजूद हो। बहरहाल) हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास की बात क़ुबूल न की और चन्द आदमी तहक़ीक़ व देखने के लिये भेज दिये, जब ये लोग ग़ार में दाख़िल हुए तो अल्लाह तआ़ला ने उन पर एक सख़्त गर्म हवा भेज दी जिसकी वजह से ये कुछ देख न सके। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَكَذٰلِكَ بَعَثْنٰهُمْ لِيَتَسَآءَلُوْا بَيْنَهُمْ ۚ قَالَ قَآئِلٌ مِّنْهُمْ كَمْ لَبِثْتُمْ ۚ قَالُوْا لَبِثْنَا يَوْمًا اَوْ بَعْضَ يَوْمٍ ۚ قَالُوْا رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا لَبِثْتُمْ ۚ فَابْعَثُوْٓا اَحَدَكُمْ بِوَرِقِكُمْ هٰذِهٖٓ اِلَى الْمَدِيْنَةِ فَلْيَنْظُرْ اَيُّهَآ اَزْكٰى طَعَامًا فَلْيَاْتِكُمْ بِرِزْقٍ مِّنْهُ وَلْيَتَلَطَّفْ وَلَا يُشْعِرَنَّ بِكُمْ اَحَدًا ۝ اِنَّهُمْ اِنْ يَّظْهَرُوْا عَلَيْكُمْ يَرْجُمُوْكُمْ اَوْ يُعِيْدُوْكُمْ فِيْ مِلَّتِهِمْ وَلَنْ تُفْلِحُوْٓا اِذًا اَبَدًا ۝

व कज़ालि-क बअ़स्नाहुम् लि-य-तसाअलू बैनहुम्, का़-ल का़इलुम्-मिन्हुम् कम् लबिस्तुम्, का़लू लबिस्ना यौमन् औ बअ़्-ज़ यौमिन्, का़लू रब्बुकुम् अअ़्लमु बिमा लबिस्तुम् फब्अ़सू अ-ह-दकुम् बिवरिक़िकुम् हाज़िही इलल्-मदीनति फ़ल्यन्ज़ुर् अय्युहा अज़्का तआ़मन् फ़ल्यअ्तिकुम् बिरिज़्क़िम्-मिन्हु वल्य-त-लत्तफ़् व ला युश्अ़िरन्-न बिकुम् अ-हदा (19) इन्नहुम् इंय्यज़्हरू अ़लैकुम् यर्जुमूकुम् औ युअ़ीदूकुम् फ़ी मिल्लतिहिम् व लन् तुफ़्लिहू इज़न् अ-बदा (20)	और इसी तरह उनको जगा दिया हमने कि आपस में पूछने लगे, एक बोला उनमें कितनी देर ठहरे तुम? बोले हम ठहरे एक दिन या दिन से कम, बोले तुम्हारा रब ही ख़ूब जाने जितनी देर तुम रहे हो अब भेजो अपने में से एक को अपना यह रुपया देकर इस शहर में फिर देखे कौन-सा खाना सुथरा है सो लाये तुम्हारे पास उसमें से खाना और नर्मी से जाये और जता न दे तुम्हारी ख़बर किसी को। (19) वे लोग अगर ख़बर पा लें तुम्हारी पत्थरों से मार डालें तुमको या लौटा लें तुमको अपने दीन में, और तब तो भला न होगा तुम्हारा कभी। (20)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जिस तरह हमने अपनी कामिल क़ुदरत से उनको इतनी लम्बी मुद्दत तक सुलाया) उसी तरह (उस लम्बी नींद के बाद) हमने उनको जगा दिया, ताकि ये आपस में पूछ-ताछ करें (ताकि आपसी सवाल व जवाब के बाद उन पर हक़ तआ़ला की क़ुदरत और हिक्मत ज़ाहिर हो, चुनाँचे) उनमें से एक कहने वाले ने कहा कि (इस नींद की हालत में) तुम कितनी देर रहे होगे? (जवाब में) बाज़ ने कहा कि (ग़ालिबन) एक दिन या एक दिन से भी कुछ कम रहे होंगे। दूसरे बाज़ ने कहा कि (इसकी तफ़्तीश की क्या ज़रूरत है) यह तो (ठीक-ठीक) तुम्हारे ख़ुदा ही को ख़बर है कि तुम कितनी देर (सोते) रहे, अब (इस फ़ुज़ूल बहस को छोड़कर ज़रूरी काम करना चाहिये वह यह कि) अपने में से किसी को यह रुपया (जो कहने वाले के पास होगा क्योंकि ये लोग ख़र्च के लिये रक़म भी लेकर चले थे, ग़र्ज़ यह कि किसी को यह रुपया) देकर शहर की तरफ़ भेजो, फिर (वह वहाँ पहुँचकर) खोज करे कि कौन-सा खाना हलाल है (इस जगह लफ़्ज़ अज़्का की तफ़सीर इब्ने जरीर की रिवायत के मुताबिक़ हज़रत सईद बिन. जुबैर से यही मन्क़ूल है कि मुराद इससे हलाल खाना है, और इसकी ज़रूरत इसलिये पेश आई कि उनकी बुत-परस्त

क़ौम अक्सर अपने बुतों के नाम पर जानवर ज़िबह किया करती थी और बाज़ार में ज़्यादातर यही हराम गोश्त बिकता था), तो वह उसमें से तुम्हारे पास कुछ खाना ले आये। और काम बड़ी होशियारी से करे (कि ऐसी हालत और अन्दाज़ से जाये कि कोई उसको पहचाने नहीं और खाने की तहक़ीक़ करने में भी यह ज़ाहिर न होने दे कि बुत के नाम पर ज़िबह किये हुए को हराम समझता है), और किसी को तुम्हारी ख़बर न होने दे (क्योंकि) अगर वे लोग (यानी शहर वाले जिनको अपने ख़्याल में अपने ज़माने के मुश्रिक लोग समझे हुए थे) कहीं तुम्हारी ख़बर पा जाएँगे तो तुमको या तो पत्थरों से मार डालेंगे या (ज़बरदस्ती) तुमको अपने मज़हब में फिर दाख़िल कर लेंगे, और ऐसा हुआ तो तुमको कभी फ़लाह न होगी।

मआरिफ़ व मसाईल

कज़ालि-क। यह लफ़्ज़ तशबीह व मिसाल देने के लिये है, मुराद इस जगह दो वाक़िओं का आपस में एक जैसा होना बयान करना है, एक अस्हाबे कहफ़ के वाक़िए की लम्बी नींद और लम्बी मुद्दत तक सोते रहने का है जिसका ज़िक्र किस्से के शुरू में आया हैः

فَضَرَبْنَا عَلٰٓى اٰذَانِهِمْ فِى الْكَهْفِ سِنِيْنَ عَدَدًا ۝

दूसरा वाक़िआ उस लम्बी मुद्दत की नींद के बाद सही सालिम और बावजूद ग़िज़ा न पहुँचने के ताक़तवर और तन्दुरुस्त उठने और जागने का है, ये दोनों अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत की निशानियाँ होने में एक जैसे हैं, इसी लिये इस आयत में जो उनके जगाने का ज़िक्र फ़रमाया तो लफ़्ज़ **कज़ालि-क** से इशारा कर दिया कि जिस तरह उनकी नींद आ़म इनसानों की साधारण नींद की तरह नहीं थी उसी तरह उनका जागना भी आ़म नॉरमल आ़दत से अलग और विशेष था, और इसके बाद जो 'लिय-तसा-अलू' फ़रमाया जिसके मायने हैं "ताकि ये लोग आपस में एक दूसरे से पूछें कि नींद कितने समय तक रही?" यह उनके जगाने की इल्लत और वजह नहीं बल्कि आ़दी तौर पर पेश आने वाले एक वाक़िए का ज़िक्र है इसलिये इसके लाम को मुफ़स्सिरीन हज़रात ने लाम-ए-आ़क़िबत या लाम-ए-सैरूरत का नाम दिया है (यह अ़रबी ग्रामर की बात है)। (अबू हय्यान, क़ुर्तुबी)

ख़ुलासा यह है कि जिस तरह उनकी लम्बी नींद क़ुदरत की एक निशानी थी उसी तरह सैंकड़ों साल के बाद बग़ैर किसी ग़िज़ा के ताक़तवर, तन्दुरुस्त हालत में जागकर बैठ जाना भी अल्लाह की कामिल क़ुदरत की निशानी थी, और चूँकि क़ुदरत को यह भी मन्ज़ूर था कि ख़ुद उन लोगों पर भी यह हक़ीक़त खुल जाये कि सैंकड़ों बरस सोते रहे तो इसकी शुरूआ़त आपस के सवालात से हुई, और अंत उस वाक़िए पर हुआ जिसका ज़िक्र अगली आयत यानी नम्बर 21 में आया है, कि शहर के लोगों पर उनका राज़ खुल गया और मुद्दत के मुतैयन करने में मतभेद के बावजूद लम्बे ज़माने तक ग़ार में सोते रहने का सब को यक़ीन हो गया।

قَالَ قَآئِلٌ مِّنْهُمْ

क़िस्से के शुरू में जो बात संक्षिप्त रूप से कही गई थी कि ग़ार में रहने की मुद्दत के मुताल्लिक़ आपस में मतभेद हुआ, उनमें से एक जमाअ़त का क़ौल सही था यह उसकी तफ़सील है कि अस्हाबे कहफ़ में से एक शख़्स ने सवाल उठाया कि तुम कितना सोये हो? तो कुछ ने जवाब दिया कि एक दिन या दिन का एक हिस्सा, क्योंकि ये लोग सुबह के वक़्त ग़ार में दाख़िल हुए थे और जागने का वक़्त शाम का वक़्त था, इसलिये ख़्याल यह हुआ कि यह वही दिन है जिसमें हम ग़ार में दाख़िल हुए थे और सोने की मुद्दत तक़रीबन एक दिन है, मगर उन्हीं में से दूसरे लोगों को कुछ यह एहसास हुआ कि शायद यह वह दिन नहीं जिसमें दाख़िल हुए थे फिर मालूम नहीं कितने दिन हो गये इसलिये उसके इल्म को ख़ुदा के हवाले कियाः

قَالُوْا رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا لَبِثْتُمْ

और इस बहस को ग़ैर-ज़रूरी समझकर असल काम की तरफ़ तवज्जोह दिलाई कि शहर से कुछ खाना लाने के लिये एक आदमी को भेज दिया जाये।

'इलल्-मदीनति'। इस लफ़्ज़ से इतना तो साबित हुआ कि ग़ार के क़रीब बड़ा शहर था जहाँ ये लोग रहते थे, उस शहर के नाम के बारे में अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे-मुहीत में फ़रमाया कि जिस ज़माने में अस्हाबे कहफ़ यहाँ से निकले थे उस वक़्त उस शहर का नाम **अफ़सोस** था और अब उसका नाम **तरतूस** है। इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में फ़रमाया कि बुत-परस्तों के उस शहर पर ग़लबे और जाहिलीयत के ज़माने में उसका नाम अफ़सोस था, जब उस ज़माने के मुसलमान यानी ईसाई लोग उस पर ग़ालिब आये तो उसका नाम तरतूस रख दिया।

'बि-वरिक़िकुम' से मालूम हुआ कि ये हज़रात ग़ार में आने के वक़्त अपने साथ कुछ रक़म रुपया-पैसा भी साथ लाये थे। इससे मालूम हुआ कि ज़रूरी ख़र्च का एहतिमाम करना परहेज़गारी व तवक्कुल के ख़िलाफ़ नहीं। (तफ़सीर बहरे-मुहीत)

اَيُّهَآ اَزْكٰى طَعَامًا

लफ़्ज़ अज़्का के लफ़्ज़ी मायने पाक-साफ़ के हैं। तफ़सीर इब्ने जुबैर के मुताबिक़ इससे मुराद हलाल खाना है और इसकी ज़रूरत इसलिये महसूस की कि जिस ज़माने में ये लोग शहर से निकले थे वहाँ बुतों के नाम का ज़बीहा (जानवरों को ज़िबह करना) होता और वही बाज़ारों में फ़रोख़्त होता था, इसलिये जाने वाले को यह ताकीद की कि इसकी तहक़ीक़ करके खाना लाये कि यह खाना हलाल भी है या नहीं।

मसलाः इससे मालूम हुआ कि जिस शहर या जिस बाज़ार, होटल में अक्सरियत हराम खाने की हो वहाँ का खाना बग़ैर तहक़ीक़ के खाना जायज़ नहीं।

اَوْ يَرْجُمُوْكُمْ

रजम के मायने संगसार करने के हैं। बादशाह ने ग़ार में जाने से पहले उनको धमकी दी थी कि अगर अपना यह दीन न छोड़ोगे तो क़त्ल कर दिये जाओगे। इस आयत से मालूम हुआ कि उनके यहाँ उनके दीन से फिर जाने वाले की क़त्ल की सज़ा संगसारी (पत्थर मार-मारकर ख़त्म

करने) की सूरत में दी जाती थी ताकि सब लोग उसमें शरीक हों, और सारी क़ौम अपने ग़ुस्से व नाराज़गी का इज़हार करके क़त्ल करे।

इस्लामी शरीअ़त में शादीशुदा मर्द व औरत के ज़िना की सज़ा भी जो संगसार करके क़त्ल करना तजवीज़ किया गया है शायद इसका भी मंशा यह हो कि जिस शख़्स ने हया के सारे पर्दों को तोड़कर इस बुरे काम का अपराध किया है उसका क़त्ल सार्वजनिक तौर पर सब लोगों की शिर्कत के साथ होना चाहिये ताकि उसकी रुस्वाई भी पूरी हो और सब मुसलमान अ़मली तौर पर अपने ग़ुस्से व नाराज़गी का इज़हार करें, ताकि आईन्दा क़ौम में इस हरकत को दोहराया न जा सके।

فَابْعَثُوْٓا اَحَدَكُمْ

इस वाक़िए में अस्हाबे कहफ़ की जमाअ़त ने अपने में से एक आदमी को शहर भेजने के लिये चुना और रक़म उसके हवाले की कि वह खाना ख़रीद कर लाये। इमाम क़ुर्तुबी ने इब्ने ख़ुवैज़ मिन्दाद के हवाले से फ़रमाया कि इससे चन्द फ़िक़्ही मसाईल हासिल हुए।

चन्द मसाईल

पहला यह कि माल में शिर्कत जायज़ है क्योंकि यह रक़म सब की साझा थी। दूसरे यह कि माल में वकालत (वकील बनाना) जायज़ है कि साझा माल में कोई एक शख़्स वकील की हैसियत से दूसरों की इजाज़त से अपने इख़्तियार से ख़र्च करे। तीसरे यह कि चन्द साथी अगर खाने में शिर्कत रखें यह जायज़ है अगरचे खाने की मात्रायें आ़दतन भिन्न और अलग-अलग होती हैं, कोई कम खाता है कोई ज़्यादा।

وَكَذٰلِكَ اَعْثَرْنَا عَلَيْهِمْ لِيَعْلَمُوْٓا اَنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَّاَنَّ السَّاعَةَ لَا رَيْبَ فِيْهَا ۚ اِذْ يَتَنَازَعُوْنَ بَيْنَهُمْ اَمْرَهُمْ فَقَالُوا ابْنُوْا عَلَيْهِمْ بُنْيَانًا ۗ رَبُّهُمْ اَعْلَمُ بِهِمْ ۗ قَالَ الَّذِيْنَ غَلَبُوْا عَلٰٓى اَمْرِهِمْ لَنَتَّخِذَنَّ عَلَيْهِمْ مَّسْجِدًا ۝

व कज़ालि-क अअ़्सरना अ़लैहिम् लि-यअ़्लमू अन्-न वअ़्दल्लाहि हक़्क़ुंव्-व अन्नस्साअ़-त ला रै-ब फ़ीहा, इज़् य-तनाज़अू-न बैनहुम् अम्रहुम् फ़क़ालुब्नू अ़लैहिम् बुन्यानन्, रब्बुहुम् अअ़्लमु बिहिम्, क़ालल्लज़ी-न	और इसी तरह ख़बर ज़ाहिर कर दी हमने उनकी ताकि लोग जान लें कि अल्लाह का वायदा ठीक है, और क़ियामत के आने में धोखा नहीं, जब झगड़ रहे थे आपस में अपनी बात पर फिर कहने लगे बनाओ उन पर एक इमारत, उनका रब ख़ूब जानता है उनका हाल, बोले वे लोग

ग़-लबू अ़ला अम्रिहिम् ल-नत्तख़िज़न्-न अ़लैहिम् मस्जिदा (21)	जिनका काम ग़ालिब था हम बनायेंगे उनकी जगह पर इबादत-ख़ाना। (21)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (हमने जिस तरह अपनी क़ुदरत से उनको सुलाया और जगाया) इसी तरह हमने (अपनी क़ुदरत व हिक्मत से उस ज़माने के) लोगों को उन (के हाल) पर बाख़बर कर दिया, ताकि (और बहुत से फ़ायदों के साथ एक फ़ायदा यह भी हो कि) वे लोग (इस वाक़िए से दलील पकड़ करके) इस बात का यक़ीन (या ज़्यादा यक़ीन) कर लें कि अल्लाह तआ़ला का वायदा सच्चा है, और वह यह कि क़ियामत में कोई शक नहीं (ये लोग अगर पहले से क़ियामत में ज़िन्दा होने पर ईमान रखते थे तो ज़्यादा यक़ीन इस वाक़िए से हो गया और अगर क़ियामत के इनकारी थे तो अब यक़ीन हासिल हो गया। यह वाक़िआ तो अस्हाबे कहफ़ की ज़िन्दगी में पेश आया फिर इन हज़रात ने वहीं ग़ार में वफ़ात पाई तो इनके बारे में उस ज़माने के लोगों में मतभेद हुआ जिसको आगे बयान फ़रमाया है कि) वह वक़्त भी ज़िक्र के क़ाबिल है जबकि उस ज़माने के लोग उनके मामले में आपस में झगड़ रहे थे (और वह मामला उस ग़ार का मुँह बन्द करना था ताकि उनकी लाशें सुरक्षित रहें या उनकी यादगार क़ायम करना उद्देश्य था) तो उन लोगों ने कहा कि उनके (ग़ार के) पास कोई इमारत बनवा दो (फिर मतभेद हुआ कि वह इमारत क्या हो, इसमें रायें भिन्न और अलग-अलग हुईं तो मतभेद के वक़्त) उनका रब उन (के विभिन्न हालात) को ख़ूब जानता था (आख़िरकार) जो लोग अपने काम पर ग़ालिब थे (यानी जिनके हाथ में सत्ता और हुकूमत थी जो उस वक़्त हक़ दीन पर क़ायम थे) उन्होंने कहा कि हम तो उनके पास एक मस्जिद बना देंगे (ताकि मस्जिद इस बात की भी निशानी रहे कि ये लोग ख़ुद आ़बिद थे, माबूद "पूज्य" न थे, और दूसरी इमारतों में यह संदेह व गुमान था कि आगे आने वाले उन्हीं को माबूद न बना लें)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَكَذٰلِكَ اَعْثَرْنَا عَلَيْهِمْ

इस आयत में अस्हाबे कहफ़ के राज़ का शहर वालों पर खुल जाना और इसकी हिक्मत, आख़िरत व क़ियामत का अ़क़ीदा कि सब मुर्दे दोबारा ज़िन्दा होंगे इस पर ईमान व यक़ीन हासिल होना बयान फ़रमाया है। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इसका मुख़्तसर क़िस्सा इस तरह बयान किया गया है कि:

अस्हाबे कहफ़ का हाल शहर वालों पर खुल जाना

अस्हाबे कहफ़ के निकलने के वक़्त जो ज़ालिम और मुश्रिक बादशाह दक़ियानूस उस शहर

पर क़ाबिज़ था वह मर गया और उस पर सदियाँ गुज़र गईं, यहाँ तक कि उस हुकूमत पर क़ब्ज़ा हक़ और ईमान वालों का हो गया जो तौहीद (अल्लाह के एक और तन्हा माबूद होने) पर यक़ीन रखते थे। उनका बादशाह एक नेक सालेह आदमी था (जिसका नाम तफ़सीरे मज़हरी में तारीख़ी रिवायतों से बैदूसीस लिखा है) उसके ज़माने में इत्तिफ़ाक़ से क़ियामत और उसमें सब मुर्दों के दोबारा ज़िन्दा होने के मसले में कुछ मतभेद और झगड़े फैल गये, एक फ़िर्क़ा इसका इनकारी हो गया कि ये बदन गलने सड़ने, फिर टुकड़े-टुकड़े होकर सारी दुनिया में फैल जाने के बाद फिर ज़िन्दा हो जायेंगे। उस वक़्त के बादशाह बैदूसीस को इसकी फ़िक्र हुई कि किस तरह उनके शक और शुब्हे दूर किये जायें। जब कोई तदबीर न बनी तो उसने टाट के कपड़े पहने और राख के ढेर पर बैठकर अल्लाह से दुआ की और रोना-गिड़गिड़ाना शुरू किया कि या अल्लाह! आप ही कोई ऐसी सूरत पैदा फ़रमा दें कि इन लोगों का अक़ीदा सही हो जाये और ये राह पर आ जायें। इस तरफ़ यह बादशाह रोने, फ़रियाद करने और दुआ में मसरूफ़ था दूसरी तरफ़ अल्लाह तआ़ला ने इसकी दुआ की क़ुबूलियत का यह सामान कर दिया कि अस्हाबे कहफ़ जाग गये और उन्होंने अपने एक आदमी को (जिसका नाम तमलीख़ा बतलाया जाता है) उनके बाज़ार में भेज दिया। वह खाना ख़रीदने के लिये दुकान पर पहुँचा और तीन सौ बरस पहले बादशाह दक़ियानूस के ज़माने का सिक्का खाने की क़ीमत में पेश किया तो दुकानदार हैरान रह गया कि यह सिक्का कहाँ से आया? किस ज़माने का है? बाज़ार के दूसरे दुकानदारों को दिखलाया सब ने यह कहा कि इस शख़्स को कहीं से पुराना ख़ज़ाना हाथ आ गया है, उसमें से यह सिक्का निकाल कर लाया है। उसने इनकार किया कि न मुझे कोई ख़ज़ाना मिला न कहीं से लाया, यह मेरा अपना रुपया है।

बाज़ार वालों ने उसको पकड़ करके बादशाह के सामने पेश कर दिया। यह बादशाह जैसा कि ऊपर बयान हुआ है एक नेक सालेह अल्लाह वाला था, और इसने सल्तनत के पुराने ख़ज़ाने के पुराने आसार में कहीं वह तख़्ती भी देखी थी जिसमें अस्हाबे कहफ़ के नाम और उनके फ़रार हो जाने का वाक़िआ भी लिखा हुआ था। कुछ हज़रात के नज़दीक ख़ुद ज़ालिम बादशाह दक़ियानूस ने यह तख़्ती लिखवाई थी कि ये इश्तिहारी मुजरिम हैं, इनके नाम और पते सुरक्षित रहें, जब कहीं मिलें गिरफ़्तार कर लिये जायें, और कुछ रिवायतों में है कि शाही दफ़्तर में कुछ ऐसे मोमिन भी थे जो दिल से बुत-परस्ती को बुरा समझते और अस्हाबे कहफ़ को हक़ पर समझते थे मगर ज़ाहिर करने की हिम्मत नहीं थी, उन्होंने यह तख़्ती बतौर यादगार के लिख ली थी, उसी तख़्ती का नाम रक़ीम है जिसकी वजह से अस्हाबे कहफ़ को अस्हाबे रक़ीम भी कहा गया।

ग़र्ज़ यह कि उस बादशाह को इस वाक़िए का कुछ इल्म था और उस वक़्त वह इस दुआ में मशग़ूल था कि किसी तरह लोगों को इस बात का यक़ीन आ जाये कि मुर्दा जिस्मों को दोबारा ज़िन्दा कर देना अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत के सामने कुछ मुश्किल नहीं।

इसी लिये तमलीख़ा से उसके हालात की तहक़ीक़ की तो उसको इत्मीनान हो गया कि यह

उन्हीं लोगों में से है और उसने कहा कि मैं तो अल्लाह तआ़ला से दुआ़ किया करता था कि मुझे उन लोगों से मिला दे जो दक़ियानूस के ज़माने में अपना ईमान बचाकर भागे थे, बादशाह इस पर खुश हुआ और कहा कि शायद अल्लाह तआ़ला ने मेरी दुआ़ क़ुबूल फ़रमाई, इसमें लोगों के लिये शायद कोई हुज्जत (दलील और निशानी) हो जिससे उनको जिस्मों के साथ दोबारा ज़िन्दा होने का यक़ीन आ जाये, यह कहकर उस शख़्स से कहा कि मुझे उस ग़ार पर ले चलो जहाँ से तुम आये हो।

बादशाह बहुत से शहर वालों के मजमे के साथ ग़ार पर पहुँचा, जब ग़ार क़रीब आया तो तमलीख़ा ने कहा कि आप ज़रा ठहरें मैं जाकर अपने साथियों को असल मामले से बाख़बर कर दूँ कि अब बादशाह मुसलमान तौहीद वाला है और क़ौम भी मुसलमान है, वे मिलने के लिये आये हैं, ऐसा न हो कि इत्तिला से पहले आप पहुँचें तो वे समझें कि हमारा दुश्मन बादशाह चढ़ आया है। इसके मुताबिक़ तमलीख़ा ने पहले जाकर साथियों को तमाम हालात सुनाये तो वे लोग इससे बहुत खुश हुए, बादशाह का स्वागत अदब व सम्मान के साथ किया, फिर वे अपने ग़ार की तरफ़ लौट गये, और अक्सर रिवायतों में यह है कि जिस वक़्त तमलीख़ा ने साथियों को यह सारा क़िस्सा सुनाया उसी वक़्त सब की वफ़ात हो गई, बादशाह से मुलाक़ात नहीं हो सकी। तफ़सीर बहरे मुहीत में अबू हय्यान ने इस जगह यह रिवायत नक़ल की है कि मुलाक़ात के बाद ग़ार वालों ने बादशाह और शहर वालों से कहा कि अब हम आप से रुख़्सत चाहते हैं और ग़ार के अन्दर चले गये, उसी वक़्त अल्लाह तआ़ला ने उन सब को वफ़ात दे दी। और बात यह है कि सही हक़ीक़त का इल्म तो अल्लाह तआ़ला ही को है।

बहरहाल! अब शहर वालों के सामने अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत का यह अ़जीब वाक़िआ़ ज़ाहिर होकर आ गया तो सब को यक़ीन हो गया कि जिस ज़ात की क़ुदरत में यह दाख़िल है कि तीन सौ बरस तक ज़िन्दा इनसानों को बग़ैर किसी ग़िज़ा और ज़िन्दगी के सामान के ज़िन्दा रखे और इस लम्बे समय तक उनको नींद में रखने के बाद फिर सही सालिम, ताक़तवर, तन्दुरुस्त उठा दे, उसके लिये यह क्या मुश्किल है कि मरने के बाद भी फिर इन जिस्मों को ज़िन्दा कर दे। इस वाक़िए से उनके इनकार का सबब दूर हो गया कि जिस्मों के उठाये जाने को मुहाल और क़ुदरत से ख़ारिज समझते थे। अब मालूम हुआ कि मालिकुल-मलकूत की क़ुदरत को इनसानी क़ुदरत पर अन्दाज़ा करना खुद जहालत है।

इसी की तरफ़ इस आयत में इशारा फ़रमायाः

لِيَعْلَمُوْٓا اَنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَّاَنَّ السَّاعَةَ لَا رَيْبَ فِيْهَا.

यानी हमने अस्हाबे कहफ़ को लम्बे ज़माने तक सुलाने के बाद जगाकर बैठा दिया ताकि लोग समझ लें कि अल्लाह का वायदा यानी क़ियामत में सब मुर्दों के जिस्मों को ज़िन्दा करने का वायदा सच्चा है और क़ियामत के आने में कोई शुब्हा नहीं।

अस्हाबे कहफ़ की वफ़ात के बाद लोगों में मतभेद

अस्हाबे कहफ़ की बड़ाई और पाकीज़गी के तो सब ही क़ायल हो चुके थे, उनकी वफ़ात के बाद सब का ख़्याल हुआ कि ग़ार के पास कोई इमारत बतौर यादगार के बनाई जाये। इमारत के बारे में मतभेद हुआ, कुछ रिवायतों से मालूम होता है कि शहर वालों में अब भी कुछ बुत-परस्त लोग मौजूद थे, वे भी अस्हाबे कहफ़ की ज़ियारत को आते थे, उन लोगों ने इमारत बनाने में यह राय दी कि कोई आ़म फ़ायदे की इमारत बना दी जाये मगर हुकूमत के ज़िम्मेदार और बादशाह मुसलमान थे और उन्हीं का ग़लबा था, उनकी राय यह हुई कि यहाँ मस्जिद बना दी जाये जो यादगार भी रहे और आईन्दा बुत-परस्ती से बचाने का सबब भी बने। यहाँ इस मतभेद का ज़िक्र करते हुए दरमियान में क़ुरआन का यह जुमला है:

رَبُّهُمْ اَعْلَمُ بِهِمْ

यानी उनका रब उनके हालात को पूरी तरह जानता है।

तफ़सीर बहरे-मुहीत में इस जुमले के मायने में दो ख़्याल व संभावनायें ज़िक्र किये हैं, एक यह कि यह क़ौल उन्हीं हाज़िर होने वाले शहर वालों का हो, क्योंकि उनकी वफ़ात के बाद जब उनकी यादगार बनाने की राय हुई तो जैसा कि उमूमन यादगारी तामीरात में उन लोगों के नाम और ख़ास हालात का कतबा (लिखित प्लेट वग़ैरह) लगाया जाता है जिनकी यादगार में तामीर की गई है तो उनके नसब (ख़ानदान) और हालात के बारे में विभिन्न गुफ़्तगूएँ होने लगीं, जब किसी हक़ीक़त पर न पहुँचे तो ख़ुद उन्होंने ही आख़िर में आ़जिज़ होकर कह दियाः

رَبُّهُمْ اَعْلَمُ بِهِمْ

और यह कहकर असल काम यानी यादगार बनाने की तरफ़ मुतवज्जह हो गये, जो लोग ग़ालिब थे उनकी राय मस्जिद बनाने की हो गई।

दूसरा गुमान व संभावना यह भी है कि यह कलाम हक़ तआ़ला की तरफ़ से है जिसमें उस ज़माने के आपसी झगड़ा और इख़्तिलाफ़ करने वालों को तंबीह की गई है कि जब तुम्हें हक़ीक़त का इल्म नहीं और उसके इल्म के साधन व माध्यम भी तुम्हारे पास नहीं तो क्यों इस बहस में वक़्त ज़ाया करते हो, और मुम्किन है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में यहूद वग़ैरह जो इस वाक़िए में इसी तरह की बेअसल बातें और बहसें किया करते थे उनको तंबीह करना मक़सूद हो। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम

मसलाः इस वाक़िए से इतना मालूम हुआ कि नेक लोगों और औलिया-अल्लाह की क़ब्रों के पास नमाज़ के लिये मस्जिद बना देना कोई गुनाह नहीं, और जिस हदीस में नबियों की क़ब्रों को मस्जिद बनाने वालों पर लानत के अलफ़ाज़ आये हैं उससे मुराद ख़ुद क़ब्रों को सज्दे का मक़ाम बना देना है, जो सब के नज़दीक शिर्क व हराम है। (तफ़सीरे मज़हरी)

سَيَقُولُونَ ثَلٰثَةٌ رَّابِعُهُمْ كَلْبُهُمْ ۚ وَيَقُولُونَ خَمْسَةٌ سَادِسُهُمْ كَلْبُهُمْ رَجْمًا بِالْغَيْبِ ۚ وَيَقُولُونَ سَبْعَةٌ وَّثَامِنُهُمْ كَلْبُهُمْ ۚ قُلْ رَّبِّيْٓ أَعْلَمُ بِعِدَّتِهِمْ مَّا يَعْلَمُهُمْ إِلَّا قَلِيلٌ ۬ فَلَا تُمَارِ فِيهِمْ إِلَّا مِرَآءً ظَاهِرًا ۖ وَّلَا تَسْتَفْتِ فِيهِمْ مِّنْهُمْ أَحَدًا ۟

स-यक़ूलू-न सला-सतुर्-राबिअुहुम् कल्बुहुम् व यक़ूलू-न ख़म्सतुन् सादिसुहुम् कल्बुहुम् रजमम्-बिल्ग़ैबि व यक़ूलू-न सब्अतुंव्-व सामिनुहुम् कल्बुहुम्, क़ुर्रब्बी अअ्लमु बिअिद्दतिहिम् मा यअ्लमुहुम् इल्ला क़लीलुन्, फ़ला तुमारि फ़ीहिम् इल्ला मिराअन् ज़ाहिरंव्-व ला तस्तफ़्ति फ़ीहिम् मिन्हुम् अ-हदा (22) ✿	अब यही कहेंगे वे तीन हैं चौथा उनका कुत्ता, और यह भी कहेंगे वे पाँच हैं छठा उनका कुत्ता, बिना निशाना देखे पत्थर चलाना, और यह भी कहेंगे वे सात हैं और आठवाँ उनका कुत्ता, तू कह मेरा रब ख़ूब जानता है उनकी गिनती, उनकी ख़बर नहीं रखते मगर थोड़े लोग, सो मत झगड़ उनकी बात में मगर सरसरी झगड़ा, और मत तहक़ीक़ कर उनका हाल उनमें किसी से। (22) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(जिस वक़्त अस्हाबे कहफ़ का क़िस्सा बयान करेंगे तो) कुछ लोग तो कहेंगे कि वे तीन हैं चौथा उनका कुत्ता है, और कुछ कहेंगे कि वे पाँच हैं छठा उनका कुत्ता है, (और) ये लोग बिना छाने-फटके बात को हाँक रहे हैं, और कुछ कहेंगे कि वे सात हैं आठवाँ उनका कुत्ता है, आप (उन मतभेद करने वालों से) कह दीजिये कि मेरा रब उनकी गिनती ख़ूब (सही-सही) जानता है (कि इन विभिन्न अक़्वाल में कोई क़ौल सही भी है या सब ग़लत हैं) उन (की गिनती) को (सही-सही) बहुत कम लोग जानते हैं (और चूँकि तादाद मुतैयन करने में कोई ख़ास फ़ायदा नहीं था इसलिये आयत में कोई स्पष्ट फ़ैसला नहीं फ़रमाया, लेकिन रिवायतों में हज़रत इब्ने अ़ब्बास और हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से यह मन्क़ूल है कि उन्होंने फ़रमायाः

انا من القليل كانوا سبعة

यानी मैं भी उन कम लोगों में दाख़िल हूँ जिनके बारे में क़ुरआन ने फ़रमाया कि कम लोग जानते हैं, वे सात थे। जैसा कि तफ़सीर दुर्रे-मन्सूर अबी हातिम वग़ैरह के हवाले से बयान किया गया है, और आयत में भी इस क़ौल के सही होने का इशारा पाया जाता है, क्योंकि इस क़ौल को नक़ल करके इसको रद्द नहीं फ़रमाया बख़िलाफ़ पहले दोनों क़ौल के कि उनकी तरदीद में 'रजमम् बिल्ग़ैबि' फ़रमाया गया है। वल्लाहु आलम)। सो (इस पर भी अगर वे लोग झगड़ने से

बाज़ न आयें तो) आप उनके बारे में सरसरी बहस के अलावा ज़्यादा बहस न कीजिए (यानी मुख़्तसर तौर पर तो उनके ख़्यालात का रद्द क़ुरआन की आयतों में आ ही चुका है जो 'रजमम् बिल्ग़ैबि क़ुर्रब्बी अअ्लमु' से बयान कर दिया गया है। पस सरसरी बहस यही है कि इसको काफ़ी समझें, उनके एतिराज़ के जवाब में इससे ज़्यादा मशग़ूल होना और अपने दावे को साबित करने में ज़्यादा कोशिश करना मुनासिब नहीं क्योंकि यह बहस ही कोई ख़ास फ़ायदा नहीं रखती) और आप उन (अस्हाबे कहफ़) के बारे में उन लोगों में से किसी से भी कुछ न पूछिये (जिस तरह आपको उनके एतिराज़ व जवाब में ज़्यादा कोशिश से मना किया गया इसी तरह इसकी भी मनाही फ़रमा दी कि अब इस मामले के संबन्ध में किसी से सवाल या तह्क़ीक़ करें, क्योंकि जितनी बात ज़रूरी थी वह वही में आ गई, ग़ैर-ज़रूरी सवालात और तहक़ीक़ात नबियों की शान के ख़िलाफ़ है)।

मआरिफ़ व मसाईल

मतभेदी और विवादित बहसों में बातचीत के आदाब

'स-यक़ूलू-न' यानी वे लोग कहेंगे। वे कहने वाले लोग कौन होंगे, इसमें दो गुमान व संभावनायें हैं एक यह कि इनसे मुराद वही लोग हों जिनका अस्हाबे कहफ़ के ज़माने, नाम व ख़ानदान वग़ैरह के बारे में आपस में झगड़ा हुआ था, जिसका ज़िक्र इससे पहली आयत में आया है। उन्हीं लोगों में से कुछ ने उनकी संख्या के बारे में पहला, कुछ ने दूसरा, कुछ ने तीसरा क़ौल इख़्तियार किया था। (इसको तफ़सीर बहरे-मुहीत में बयान किया गया है)

और दूसरी संभावना यह है कि इन कहने वालों से मुराद नजरान के ईसाई लोग हों, जिन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उनकी संख्या के बारे में मुनाज़रा किया था, उनके तीन फ़िर्क़े थे– एक फ़िर्क़ा **मलकानिया** के नाम से नामित था, उसने संख्या के बारे में पहला क़ौल कहा, यानी तीन का अ़दद बतलाया। दूसरा फ़िर्क़ा **याक़ूबिया** था उसने दूसरा क़ौल यानी पाँच होना इख़्तियार किया। तीसरा फ़िर्क़ा **नस्तूरिया** था इसने तीसरा क़ौल कहा कि सात थे और कुछ ने कहा कि यह तीसरा क़ौल मुसलमानों का था और आख़िरकार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़बर और क़ुरआन के इशारे से तीसरे क़ौल का सही होना मालूम हुआ।

(तफ़सीर बहरे-मुहीत)

'व सामिनुहुम' (और उनमें का आठवाँ) यहाँ यह नुक्ता ध्यान देने के क़ाबिल है कि इस जगह अस्हाबे कहफ़ की गिनती में तीन क़ौल नक़ल किये गये हैं– तीन, पाँच, सात, और हर एक के बाद उनके कुत्ते को शुमार किया गया है, लेकिन पहले दो क़ौल में उनकी तादाद और कुत्ते के गिनने में वाव आ़तिफ़ा नहीं लाया गया 'सलासतुर्राबिअुहुम कल्बुहुम' और 'ख़म्सतुन् सादिसुहुम कल्बुहुम' बिना वाव आ़तिफ़ा के आया और तीसरे क़ौल में 'सब्अ़तुन' के बाद वाव आ़तिफ़ा के साथ 'सब्अ़तुंव्-व सामिनुहुम कल्बुहुम' फ़रमाया।

इसकी वजह मुफ़स्सिरीन हज़रात ने यह लिखी है कि अ़रब के लोगों में अ़दद की पहली गिरह सात ही होती थी, सात के बाद जो अ़दद आये वह अलग-सा शुमार होता था, जैसा कि आजकल नौ का अ़दद इसके क़ायम-मक़ाम है कि नौ तक इकाई है दस से दहाई शुरू होती है एक अलग-सा अ़दद होता है, इसी लिये तीन से लेकर सात तक जो तादाद शुमार करते तो उस में वाव आ़तिफ़ा (मिलाने वाली वाव) नहीं लाते थे, सात के बाद कोई अ़दद बतलाना होता तो वाव आ़तिफ़ा के साथ अलग करके बतलाते थे, और इसी लिये इस **वाव** को 'वाव समान' (आठ वाली वाव) का लक़ब दिया जाता था। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

अस्हाबे कहफ़ के नाम

असल बात तो यह है कि किसी सही हदीस से अस्हाबे कहफ़ के नाम सही-सही साबित नहीं, तफ़सीरी और तारीख़ी रिवायतों में नाम अलग-अलग बयान किये गये हैं, उनमें ज़्यादा क़रीब और सही वह रिवायत है जिसको तबरानी ने 'मोजम-ए-औसत' में सही सनद के साथ हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि उनके नाम ये थे:

مُكَسَلْمِينَا، تَمْلِيْخَا، مَرْطُوْنَسْ، سَنُوْنَسْ، سَارِيْنُوْنَسْ، ذُوْنَوَاسْ، كَعَسْطِطْيُوْنَسْ.

मुक्सलमीना, तमूलीख़ा, मरतूनस, सनूनस, सारीनूनस, ज़ू-नवास, कअस्तितुयूनस।

فَلَا تُمَارِ فِيهِمْ إِلَّا مِرَآءً ظَاهِرًا وَّلَا تَسْتَفْتِ فِيهِمْ مِّنْهُمْ أَحَدًا ۝

यानी आप अस्हाबे कहफ़ की संख्या वग़ैरह के बारे में उनके साथ बहस व मुबाहसे में अपनी ऊर्जा बरबाद न करें, बल्कि सरसरी बहस फ़रमायें, और उन लोगों से आप ख़ुद भी कोई सवाल इसके बारे में न करें।

विवादित और मतभेदी मामलों में लम्बी बहसों से बचना चाहिये

इन दोनों जुमलों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जो तालीम दी गई है वह दर हक़ीक़त उम्मत के उलेमा के लिये अहम रहनुमा उसूल हैं कि जब किसी मसले में इख़्तिलाफ़ (मतभेद व विवाद) पेश आये तो जिस क़द्र ज़रूरी बात है उसको स्पष्ट करके बयान कर दिया जाये उसके बाद भी लोग ग़ैर-ज़रूरी बहस में उलझें तो उनके साथ सरसरी बातचीत करके बहस ख़त्म कर दी जाये, अपने दावे को साबित करने, कोशिश व मेहनत और उनकी बात को रद्द करने में बहुत ज़ोर लगाने से गुरेज़ किया जाये क्योंकि इसका कोई ख़ास फ़ायदा तो है नहीं ज़्यादा बहस व तकरार में वक़्त की बरबादी भी है और आपस में तल्ख़ी (कड़वाहट) पैदा होने का ख़तरा भी।

दूसरी हिदायत दूसरे जुमले में यह दी गई है कि अल्लाह की वही के ज़रिये से अस्हाबे कहफ़ के क़िस्से की जितनी मालूमात आपको दे दी गई हैं उन पर क़नाअ़त फ़रमायें कि वे बिल्कुल काफ़ी हैं, ज़्यादा की तहक़ीक़ात और लोगों से सवाल वग़ैरह में न पड़ें। और दूसरों से सवालात का एक पहलू यह भी हो सकता है कि उनकी जहालत या नावाक़िफ़ियत ज़ाहिर करने

और उनको ज़लील करने के लिये सवाल किया जाये, यह भी नबियों के अख़्लाक़ के ख़िलाफ़ है, इसलिये दूसरे लोगों से दोनों तरह के सवाल करना मना कर दिया गया, यानी अतिरिक्त तहक़ीक़ के लिये हो या मुख़ातब की कम-इल्मी ज़ाहिर करने और रुस्वा करने के लिये हो।

وَلَا تَقُولَنَّ لِشَا۟يْءٍ إِنِّي فَاعِلٌ ذَٰلِكَ غَدًا ﴿٢٣﴾ إِلَّا أَن يَشَاءَ اللَّهُ ۚ وَاذْكُر رَّبَّكَ
إِذَا نَسِيتَ وَقُلْ عَسَىٰ أَن يَهْدِيَنِ رَبِّي لِأَقْرَبَ مِنْ هَٰذَا رَشَدًا ﴿٢٤﴾ وَلَبِثُوا فِي كَهْفِهِمْ ثَلَاثَ مِائَةٍ
سِنِينَ وَازْدَادُوا تِسْعًا ﴿٢٥﴾ قُلِ اللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا لَبِثُوا ۖ لَهُ غَيْبُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ ۖ أَبْصِرْ بِهِ وَ
أَسْمِعْ ۚ مَا لَهُم مِّن دُونِهِ مِن وَلِيٍّ وَلَا يُشْرِكُ فِي حُكْمِهِ أَحَدًا ﴿٢٦﴾

व ला तक़ूलन्-न लिशैइन् इन्नी फ़ाअ़िलुन् ज़ालि-क ग़दा (23) इल्ला अंय्यशा-अल्लाहु, वज़्कुर्-रब्ब-क इज़ा नसी-त व क़ुल् अ़सा अंय्यह्दि-यनि रब्बी लिअक़्र-ब मिन् हाज़ा र-शदा (24) व लबिसू फ़ी कह्फ़िहिम् सला-स मि-अतिन् सिनी-न वज़्दादू तिस्आ़ (25) क़ुलिल्लाहु अअ़्लमु बिमा लबिसू लहू ग़ैबुस्समावाति वल्अर्ज़ि अब्सिर् बिही व अस्मिअ़्, मा लहुम् मिन् दूनिही मिंव्वलिय्यिंव्-व ला युश्रिकु फ़ी हुक्मिही अ-हदा (26)	और न कहना किसी काम को कि मैं करूँगा कल को (23) मगर यह कि अल्लाह चाहे, और याद कर ले अपने रब को जब भूल जाये और कह उम्मीद है कि मेरा रब मुझको दिखलाये इससे ज़्यादा नज़दीक राह नेकी की। (24) और मुद्दत गुज़री उन पर अपनी ख़ोह में तीन सौ बरस और उनके ऊपर नौ। (25) तू कह अल्लाह ख़ूब जानता है जितनी मुद्दत उन पर गुज़री, उसी के पास हैं छुपे भेद आसमान और ज़मीन के, क्या अ़जीब देखता है और सुनता है, कोई नहीं बन्दों पर उसके सिवा मुख़्तार, और नहीं शरीक करता अपने हुक्म में किसी को। (26)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और अगर लोग आप से कोई बात क़ाबिले जवाब पूछें और आप जवाब का वायदा करें तो उसके साथ इन्शा-अल्लाह तआ़ला या इसके जैसे मायनों वाला कोई लफ़्ज़ ज़रूर मिला लिया करें, बल्कि वायदे की भी विशेषता नहीं हर-हर काम में इसका लिहाज़ रखिये कि) आप किसी काम के बारे में यूँ न कहा कीजिए कि मैं इसको (जैसे) कल कर दूँगा, मगर ख़ुदा तआ़ला के चाहने को (उसके साथ) मिला दिया कीजिए (यानी इन्शा-अल्लाह वग़ैरह भी साथ कह दिया

कीजिये और आईन्दा भी ऐसा न हो जैसा कि इस वाक़िए में पेश आया कि आप से लोगों ने रूह और अस्हाबे कहफ़ और ज़ुल्क़रनैन के बारे में सवालात किये, आपने बग़ैर इन्शा-अल्लाह कहे उनसे कल जवाब देने का वायदा कर लिया, फिर पन्द्रह दिन तक वही नाज़िल न हुई और आपको बड़ा ग़म हुआ। इस हिदायत के साथ उन लोगों के सवाल का जवाब भी नाज़िल हुआ। जैसा कि लुबाब में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान किया गया है)।

और जब आप (इत्तिफ़ाक़ से इन्शा-अल्लाह कहना) भूल जाएँ (और फिर कभी याद आये) तो (उसी वक़्त इन्शा-अल्लाह कहकर) अपने रब का ज़िक्र कर लिया कीजिए और (उन लोगों से यह भी) कह दीजिए कि मुझको उम्मीद है कि मेरा रब मुझको (नुबुव्वत की दलील बनने के एतिबार से) इस (क़िस्से) से भी नज़दीकी बात बतला दे (मतलब यह है कि तुमने मेरी नुबुव्वत का इम्तिहान लेने के लिये अस्हाबे कहफ़ वग़ैरह के क़िस्से पूछे जो अल्लाह तआ़ला ने वही के ज़रिये मुझे बतलाकर तुम्हारी संतुष्टि कर दी मगर असल बात यह है कि इन क़िस्सों के सवाल व जवाब नुबुव्वत को साबित करने के लिये कोई बहुत बड़ी दलील नहीं हो सकती, यह काम तो कोई ग़ैर-नबी भी जे दुनिया की तारीख़ से ज़्यादा वाक़िफ़ हो वह भी कर सकता है, मगर मुझे तो अल्लाह तआ़ला ने मेरी नुबुव्वत के साबित करने के लिये इससे भी बड़े न कटने वाले दलाईल और मोजिज़े अ़ता फ़रमाये हैं जिनमें सबसे बड़ी दलील तो ख़ुद क़ुरआन है जिसकी एक आयत की भी सारी दुनिया मिलकर नक़ल नहीं उतार सकी, इसके अ़लावा हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से लेकर क़ियामत तक के वो वाक़िआ़त वही के ज़रिये मुझे बतला दिये गये हैं जो ज़माने के एतिबार से भी अस्हाबे कहफ़ व ज़ुल्क़रनैन के वाक़िआ़त के मुक़ाबले में ज़्यादा दूर के हैं, और उनका इल्म भी किसी के लिये सिवाय वही के मुम्किन नहीं हो सकता। ख़ुलासा यह है कि तुमने तो अस्हाबे कहफ़ और ज़ुल्क़रनैन के वाक़िआ़त को सबसे ज़्यादा अ़जीब समझकर इसी को नुबुव्वत के इम्तिहान के सवाल में पेश किया मगर अल्लाह तआ़ला ने मुझे इससे भी ज़्यादा अ़जीब-अ़जीब चीज़ों के उलूम अ़ता फ़रमाये हैं)।

और (जैसा मतभेद व झगड़ा इन लोगों का अस्हाबे कहफ़ की तायदाद में है ऐसा ही उनके सोते रहने की मुद्दत में भी बहुत मतभेद है, हम इसमें सही बात बतलाते हैं कि) वे लोग अपने ग़ार में (नींद की हालत में) तीन सौ साल तक रहे, और नौ वर्ष ऊपर और रहे (और अगर इस सही बात को सुनकर भी वे इख़्तिलाफ़ करते रहें तो) आप कह दीजिए कि अल्लाह तआ़ला उनके (सोते) रहने की मुद्दत को (तो तुम से) ज़्यादा जानता है (इसलिये जो उसने बतला दिया वही सही है, और इस वाक़िए की क्या ख़ुसूसियत है उसकी शान तो यह है कि) तमाम आसमानों और ज़मीन का ग़ैब का इल्म उसी को है, वह कैसा कुछ देखने वाला और कैसा कुछ सुनने वाला है। उनका अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई भी मददगार नहीं और न अल्लाह किसी को अपने हुक्म में शरीक (किया) करता है (ख़ुलासा यह है कि न उसका कोई टक्कर देने वाला है न शरीक, ऐसी अ़ज़ीम ज़ात की मुख़ालफ़त से बहुत डरना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई चार आयतों में अस्हाबे कहफ़ का क़िस्सा ख़त्म हो रहा है इनमें से पहली दो आयतों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी उम्मत को यह तालीम दी गई है कि आने वाले ज़माने में किसी काम के करने का वायदा या इक़रार करना हो तो उसके साथ इन्शा-अल्लाह तआ़ला का कलिमा मिला लिया करें, क्योंकि आईन्दा का हाल किसको मालूम है कि ज़िन्दा भी रहेगा या नहीं, और ज़िन्दा भी रहा तो वह काम कर सकेगा या नहीं, इसलिये मोमिन को चाहिये कि अल्लाह पर भरोसा दिल में भी करे और ज़बान से इसका इक़रार करे कि अगले दिन में किसी काम के करने को कहे तो यूँ कहे कि अगर अल्लाह तआ़ला ने चाहा तो मैं यह काम कल करूँगा, यही मायने हैं कलिमा इन्शा-अल्लाह तआ़ला के।

तीसरी आयत में उस विवादित और मतभेदी बहस का फ़ैसला किया गया है जिसमें अस्हाबे कहफ़ के ज़माने के लोगों की रायें भी भिन्न थीं और मौजूदा ज़माने के यहूदियों व ईसाईयों के अक़वाल भी भिन्न और अलग-अलग थे, यानी ग़ार में सोते रहने की मुद्दत। इस आयत में बतला दिया गया कि वो तीन सौ नौ साल थे, गोया यह उस संक्षिप्तता की वज़ाहत है जो क़िस्से के शुरू में बयान हुआ थाः

فَضَرَبْنَا عَلٰٓی اٰذَانِهِمْ فِی الْکَهْفِ سِنِیْنَ عَدَدًا٥

इसके बाद चौथी आयत में फिर इससे मतभेद करने वालों को तंबीह की गई है कि असल हक़ीक़त की तुमको ख़बर नहीं, उसका जानने वाला वही अल्लाह तआ़ला है जो आसमानों और ज़मीन की सब छुपी चीज़ों को जानने वाला, सब कुछ सुनने वाला और सब कुछ देखने वाला है, उसने जो मुद्दत तीन सौ नौ साल बतला दी उस पर मुत्मईन हो जाना चाहिये।

आईन्दा काम करने पर इन्शा-अल्लाह कहना

तफ़सीरे लुबाब में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से पहली दो आयतों के शाने नुज़ूल (उतरने के मौक़े और सबब) के बारे में यह नक़ल किया है कि जब मक्का वालों ने यहूदियों के कहने के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अस्हाबे कहफ़ के क़िस्से वग़ैरह के मुताल्लिक़ सवाल किया तो आपने उनसे कल जवाब देने का वायदा बग़ैर इन्शा-अल्लाह कहे हुए कर लिया था, बड़े रुतबे वालों और ख़ास लोगों की मामूली-सी कोताही पर तंबीह हुआ करती है इसलिये पन्द्रह दिन तक वही न आई और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बड़ा ग़म हुआ और मक्का के मुश्रिकों को हंसने और मज़ाक़ उड़ाने का मौक़ा मिला। पन्द्रह दिन के इस अन्तराल के बाद जब इस सूरत में सवालात का जवाब नाज़िल हुआ तो इसके साथ ही ये दो आयतें हिदायत देने के लिये नाज़िल हुईं कि आईन्दा किसी काम के करने को कहना हो तो इन्शा-अल्लाह कहकर इसका इक़रार कर लिया करें कि हर काम अल्लाह तआ़ला के इरादे और मर्ज़ी पर मौक़ूफ़ है, इन दोनों आयतों को अस्हाबे कहफ़ के क़िस्से

के ख़त्म पर लाया गया है।

मसलाः इस आयत से एक तो यह मालूम हुआ कि ऐसी सूरत में इन्शा-अल्लाह कहना मुस्तहब (अच्छा और पसन्दीदा) है। दूसरे यह मालूम हुआ कि अगर भूले से यह कलिमा कहने से रह जाये तो जब याद आये उस वक़्त कह ले। यह हुक्म उस विशेष मामले के लिये है जिसके मुताल्लिक़ ये आयतें नाज़िल हुई हैं, यानी सिर्फ़ तबर्रुक और अपनी बन्दगी के इक़रार के लिये यह कलिमा कहना मक़सूद होता है कोई शर्त लगाना मक़सूद नहीं होता, इसलिये इससे यह लाज़िम नहीं आता कि ख़रीद व बेच के मामलों और मुआहदों में जहाँ शर्तें लगाई जाती हैं और शर्त लगाना दोनों पक्षों के लिये मुआहदे का मदार है वहाँ भी अगर मुआहदे के वक़्त कोई शर्त लगाना भूल जाये तो फिर कभी जब याद आ जाये जो चाहे शर्त लगा ले, इस मसले में कुछ फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस के मसाईल के माहिर उलेमा) का मतभेद भी है जिसकी तफ़सील मसाईल की किताबों में है।

तीसरी आयत में जो ग़ार (खोह) में सोने की मुद्दत तीन सौ नौ साल बतलाये हैं, क़ुरआन की तरतीब व अन्दाज़ से ज़ाहिर यही है कि यह मुद्दत का बयान करना हक़ तआ़ला की तरफ़ से है। इमाम इब्ने कसीर ने इसी को पहले और बाद के मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत का क़ौल क़रार दिया है। अबू हय्यान और क़ुर्तुबी ने भी इसी को इख़्तियार किया है, मगर हज़रत क़तादा रह. वग़ैरह से इसमें एक दूसरा क़ौल यह भी नक़ल किया गया है कि यह तीन सौ नौ का क़ौल भी उन्हीं मतभेद करने वालों में से कुछ का है और अल्लाह तआ़ला का क़ौल सिर्फ़ वह है जो बाद में फ़रमाया यानी 'अल्लाहु अअ़्लमु बिमा लबिसू' (कि अल्लाह जानता है कि उन पर कितनी मुद्दत गुज़री) क्योंकि पहला क़ौल तीन सौ नौ के मुतैयन करने का अगर अल्लाह का कलाम होता तो इसके बाद 'अल्लाहु अअ़्लमु बिमा लबिसू' कहने का मौक़ा न था, मगर मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने फ़रमाया कि ये दोनों जुमले हक़ तआ़ला का कलाम हैं, पहले में असल हक़ीक़त का बयान है और दूसरे में इससे मतभेद करने वालों को तंबीह (चेतावनी) है कि जब अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मुद्दत का बयान आ गया तो अब इसको तस्लीम करना लाज़िम है, वही जानने वाला है सिर्फ़ अन्दाज़ों और रायों से उसकी मुख़ालफ़त व विरोध बेअ़क़्ली है।

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि क़ुरआने करीम ने मुद्दत के बयान करने में पहले तीन सौ साल बयान किये उसके बाद फ़रमाया कि इन तीन सौ पर नौ और ज़्यादा हो गये, पहले ही तीन सौ नौ नहीं फ़रमाया। इसका सबब मुफ़स्सिरीन हज़रात ने यह लिखा है कि यहूदियों व ईसाईयों में चूँकि सूरज के (यानी अंग्रेज़ी) साल का रिवाज था उसके हिसाब से तीन सौ साल ही होते हैं और इस्लाम में रिवाज चाँद के साल का है और चाँद के हिसाब में हर सौ साल पर तीन साल बढ़ जाते हैं, इसलिये तीन सौ साल अंग्रेज़ी पर चाँद के (यानी इस्लामी) हिसाब से नौ साल और ज़्यादा हो गये, इन दोनों सालों का फ़र्क़ व भेद बताने के लिये बयान का यह उनवान इख़्तियार किया गया।

एक सवाल यह पैदा होता है कि अस्हाबे कहफ़ के मामले में ख़ुद उनके ज़माने में फिर नबी

करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर में यहूदियों व ईसाईयों में दो बातें मतभेद का सबब थीं एक अस्हाबे कहफ़ की तादाद दूसरे ग़ार में उनके सोते रहने की मुद्दत। क़ुरआन ने इन दोनों को बयान तो कर दिया मगर इस फ़र्क़ के साथ कि तादाद का बयान स्पष्ट अलफ़ाज़ में नहीं आया, इशारे के तौर पर आया कि जो क़ौल सही था उसकी तरदीद नहीं की और मुद्दत के निर्धारण को साफ़ व खुले अलफ़ाज़ में बतलायाः

وَلَبِثُوْا فِيْ كَهْفِهِمْ ثَلٰثَ مِائَةٍ سِنِيْنَ وَازْدَادُوْا تِسْعًا ○

वजह यह है कि क़ुरआन ने अपने इस अन्दाज़ से इस तरफ़ इशारा फ़रमाया कि तादाद (संख्या) की बहस तो बिल्कुल ही फ़ुज़ूल है उससे किसी दुनियावी या दीनी मसले का ताल्लुक़ नहीं, अलबत्ता लम्बी मुद्दत तक इनसानी आ़दत के ख़िलाफ़ सोते रहना और बग़ैर ग़िज़ा के सही तन्दुरुस्त रहना, फिर इतने अ़रसे के बाद स्वस्थ और ताक़तवर उठकर बैठ जाना क़ियामत में उठने की एक नज़ीर है, इससे क़ियामत व आख़िरत के मसले पर दलील पकड़ी जा सकती है इसलिये इसको स्पष्ट रूप से बयान कर दिया।

जो लोग मोजिज़ों और आ़म आ़दत के ख़िलाफ़ पेश आने वाली चीज़ों के या तो इनकारी हैं या कम से कम आजकल के इस्लामी तारीख़ व उलूम को जानने वाले यहूदियों व ईसाईयों के एतिराज़ों से मरऊब होकर उनमें इधर-उधर का मतलब बयान करने के आ़दी हैं उन्होंने इस आयत में भी हज़रत क़तादा की तफ़सीर का सहारा लेकर तीन सौ नौ साल की मुद्दत उन्हीं लोगों का क़ौल क़रार देकर रद्द करना चाहा है, मगर इस पर ग़ौर नहीं किया कि क़ुरआन के शुरू के जुमले में जो लफ़्ज़ 'सिनी-न अ़-ददा' का आया है उसको तो सिवाय अल्लाह तआ़ला के किसी का क़ौल नहीं कहा जा सकता, मोजिज़े और करामत के सुबूत के लिये इतना भी काफ़ी है कि सालों साल कोई सोता रहे और फिर सही तन्दुरुस्त ज़िन्दा उठकर बैठ जाये। वल्लाहु आलम

وَاتْلُ مَآ اُوْحِيَ اِلَيْكَ مِنْ كِتَابِ رَبِّكَ ۚ لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ ۚ وَلَنْ تَجِدَ مِنْ دُوْنِهٖ مُلْتَحَدًا ۝ وَاصْبِرْ نَفْسَكَ مَعَ الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ يُرِيْدُوْنَ وَجْهَهٗ وَلَا تَعْدُ عَيْنٰكَ عَنْهُمْ ۚ تُرِيْدُ زِيْنَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ وَلَا تُطِعْ مَنْ اَغْفَلْنَا قَلْبَهٗ عَنْ ذِكْرِنَا وَاتَّبَعَ هَوٰىهُ وَكَانَ اَمْرُهٗ فُرُطًا ۝ وَقُلِ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۗ فَمَنْ شَآءَ فَلْيُؤْمِنْ وَّمَنْ شَآءَ فَلْيَكْفُرْ ۚ اِنَّآ اَعْتَدْنَا لِلظّٰلِمِيْنَ نَارًا ۙ اَحَاطَ بِهِمْ سُرَادِقُهَا ۚ وَاِنْ يَّسْتَغِيْثُوْا يُغَاثُوْا بِمَآءٍ كَالْمُهْلِ يَشْوِي الْوُجُوْهَ ۚ بِئْسَ الشَّرَابُ ۚ وَسَآءَتْ مُرْتَفَقًا ۝ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اِنَّا لَا نُضِيْعُ اَجْرَ مَنْ اَحْسَنَ عَمَلًا ۝ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ جَنّٰتُ عَدْنٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهٰرُ يُحَلَّوْنَ فِيْهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَّيَلْبَسُوْنَ ثِيَابًا خُضْرًا مِّنْ سُنْدُسٍ وَّاِسْتَبْرَقٍ مُّتَّكِئِيْنَ فِيْهَا عَلَى الْاَرَآئِكِ ۚ نِعْمَ الثَّوَابُ ۚ وَحَسُنَتْ مُرْتَفَقًا ۝

वत्लु मा ऊहि-य इलै-क मिन् किताबि रब्बि-क ला मुबद्दि-ल लि-कलिमातिही, व लन् तजि-द मिन् दूनिही मुल्त-हदा (27) वस्बिर् नफ़्स-क मअ़ल्लज़ी-न यद्अ़ू-न रब्बहुम् बिल्ग़दाति वल्अ़शिय्यि युरीदू-न वज्हहू व ला तअ़्दु अ़ैना-क अ़न्हुम् तुरीदु ज़ीनतल्-हयातिद्दुन्या व ला तुतिअ़् मन् अग़्फ़ल्ना क़ल्बहू अ़न् ज़िक्रिना वत्त-ब-अ़ हवाहु व का-न अम्रुहू फ़ुरुता (28) ▲ व क़ुलिल्-हक़्क़ु मिर्रब्बिकुम्, फ़-मन् शा-अ फ़ल्युअ्मिंव्-व मन् शा-अ फ़ल्यक्फ़ुर् इन्ना अअ़्तद्ना लिज़्ज़ालिमी-न नारन् अहा-त बिहिम् सुरादिक़ुहा, व इंय्यस्तग़ीसू युग़ासू बिमाइन् कल्मुह्लि यश्विल्-वुजू-ह, बिअ्सश्शराबु, व साअत् मुर्त-फ़क़ा (29) इन्नल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति इन्ना ला नुज़ीअ़ु अज्-र मन् अह्स-न अ़-मला (30) उलाइ-क लहुम् जन्नातु अ़द्निन् तज्री मिन् तह्तिहिमुल्-अन्हारु युहल्लौ-न फ़ीहा मिन् असावि-र मिन् ज़-हबिंव्-व यल्बसू-न सियाबन् ख़ुज़्रम्-मिन्	और पढ़ जो वही हुई तुझको तेरे रब की किताब से, कोई बदलने वाला नहीं उसकी बातें और कहीं न पायेगा तू उसके सिवा छुपने को जगह। (27) और रोके रख अपने आपको उनके साथ जो पुकारते हैं अपने रब को सुबह और शाम, तालिब हैं उसके मुँह के, और न दौड़ें तेरी आँखें उनको छोड़कर दुनिया की ज़िन्दगानी की रौनक़ की तलाश में, और न कहा मान उसका जिसका दिल ग़ाफ़िल किया हमने अपनी याद से, और पीछे पड़ा हुआ है अपनी इच्छा के और उसका काम है हद पर न रहना। (28) ▲ और कह सच्ची बात है तुम्हारे रब की तरफ़ से, फिर जो कोई चाहे माने और जो कोई चाहे न माने हमने तैयार कर रखी है गुनाहगारों के वास्ते आग, कि घेर रही हैं उनको उसकी क़नातें, और अगर फ़रियाद करेंगे तो मिलेगा पानी जैसे पीप भून डाले मुँह को, क्या बुरा पीना है, और क्या बुरा आराम। (29) बेशक जो लोग यक़ीन लाये और कीं नेकियाँ, हम नहीं खोते बदला उसका जिसने भला किया काम। (30) ऐसों के वास्ते बाग़ हैं बसने के, बहती हैं उनके नीचे नहरें, पहनाये जायेंगे उनको वहाँ कंगन सोने के, और पहनेंगे कपड़े सब्ज़ बारीक और गाढ़े रेशम के

सुन्दुसिंव्-व इस्तब्रक़िम्-मुत्तकिई-न फ़ीहा अलल् अराइकि, निअ्मस्सवाबु, व हसुनत् मुर्-तफ़का (31) ✿	तकिया लगाये हुए उनमें तख़्तों पर, क्या ख़ूब बदला है और क्या ख़ूब आराम। (31) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (आपका काम सिर्फ़ इस क़द्र है कि) आपके पास जो आपके रब की किताब वही के ज़रिये से आई है वह (लोगों के सामने) पढ़ दिया कीजिए (इससे ज़्यादा इसकी फ़िक्र में न पड़ें कि दुनिया के बड़े लोग अगर इस्लाम की मुख़ालफ़त करते रहे तो दीन को तरक़्क़ी किस तरह होगी, क्योंकि इसका अल्लाह तआ़ला ने खुद वायदा फ़रमा लिया है और) उसकी बातों को (यानी वायदों को) कोई बदल नहीं सकता (यानी सारी दुनिया के मुख़ालिफ़ भी मिलकर अल्लाह को वायदा पूरा करने से नहीं रोक सकते, और अल्लाह तआ़ला खुद अगरचे बदल डालने पर क़ुदरत रखते हैं मगर वह तब्दील नहीं करेंगे) और (अगर आपने उन बड़े लोगों की दिलजोई इस तरह की जिससे अल्लाह के अहकाम छूट जायें तो फिर) आप अल्लाह तआ़ला के सिवा और कोई पनाह की जगह न पाएँगे (अगरचे अल्लाह के अहकाम का छूटना रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से शरई दलीलों की वज़ाहत के मुताबिक़ मुहाल है, यहाँ ताकीद व मुबालग़े के लिये और एक असंभव चीज़ को फ़र्ज़ कर लेने के तौर पर यह कहा गया है)। और (जैसा कि काफ़िरों के अमीरों और सरदारों से आपको बेपरवाह रहने का हुक्म दिया गया है इसी तरह ग़रीब मुसलमानों के हाल पर और ज़्यादा तवज्जोह का आपको हुक्म है, पस) आप अपने को उन लोगों के साथ (बैठने में) रोके रखा कीजिए जो सुबह व शाम (यानी हमेशा) अपने रब की इबादत सिर्फ़ उसकी खुशी हासिल करने के लिये करते हैं (कोई दुनियावी ग़र्ज़ नहीं) और दुनिया की ज़िन्दगी की रौनक़ के ख़्याल से आपकी आँखें (यानी तवज्जोह) उनसे हटने न पाएँ (दुनिया की रौनक़ के ख़्याल से मुराद यह है कि सरदार लोग मुसलमान हो जायें तो इस्लाम की रौनक़ बढ़ेगी, इस आयत में बतला दिया गया कि इस्लाम की रौनक़ माल व दौलत से नहीं बल्कि इख़्लास व फ़रमाँबरदारी से है, वह ग़रीब फ़क़ीर लोगों में हो तो भी इस्लाम की रौनक़ बढ़ेगी)।

और ऐसे शख़्स का कहना (ग़रीबों को मज्लिस से हटा देने के बारे में) न मानिये जिसके दिल को हमने (उसके बैर और मुख़ालफ़त की सज़ा में) अपनी याद से ग़ाफ़िल कर रखा है, और वह अपनी नफ़्सानी इच्छा पर चलता है, और उसका यह हाल (यानी इच्छा की पैरवी) हद से गुज़र गया है। और आप (उन सरदार काफ़िरों से साफ़) कह दीजिये कि (यह दीने) हक़ तुम्हारे रब की तरफ़ से (आया) है, सो जिसका जी चाहे ईमान ले आये और जिसका जी चाहे काफ़िर रहे (हमारा कोई नफ़ा नुक़सान नहीं, बल्कि नफ़ा नुक़सान खुद उसका है, जिसका बयान यह है कि) बेशक हमने ऐसे ज़ालिमों के लिये (दोज़ख़ की) आग तैयार कर रखी है, कि उस आग की

क़नातें उनको घेरे होंगी (यानी वे क़नातें भी आग ही की हैं जैसा कि हदीस में है कि "ये लोग उस घेरे से न निकल सकेंगे")। और अगर (प्यास से) फ़रियाद करेंगे तो ऐसे पानी से उनकी फ़रियाद पूरी की जाएगी जो (देखने में बुरा होने में तो) तेल की तलछट की तरह होगा (और तेज़ गर्म ऐसा होगा कि पास लाते ही) मुँहों को भून डालेगा (यहाँ तक कि चेहरे की खाल उतरकर गिर पड़ेगी जैसा कि हदीस में है) क्या ही बुरा पानी होगा और वह दोज़ख़ भी क्या ही बुरी जगह होगी (यह तो ईमान न लाने का नुक़सान हुआ और ईमान लाने का नफ़ा यह है कि) बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने अच्छे काम किये तो हम ऐसों का बदला बरबाद न करेंगे जो अच्छी तरह काम को करे। ऐसे लोगों के लिये हमेशा रहने के बाग़ हैं, उनके (ठिकानों के) नीचे नहरें बहती होंगी, उनको वहाँ सोने के कंगन पहनाये जाएँगे और हरे रंग के कपड़े बारीक और मोटे रेशम के पहनेंगे (और) वहाँ मसहरियों पर तकिये लगाये बैठे होंगे। क्या ही अच्छा बदला है और (जन्नत) क्या ही अच्छी जगह है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

दावत व तब्लीग़ के ख़ास आदाब

وَاصْبِرْ نَفْسَكَ

इस आयत (यानी आयत नम्बर 28) के शाने नुज़ूल में चन्द वाक़िआत बयान हुए हैं, हो सकता है कि वो सब ही अल्लाह के इस इरशाद फ़रमाने का सबब बने हों। इमाम बग़वी रह. ने नक़ल किया है कि उयैना बिन हसन फ़ज़ारी मक्के का सरदार नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, आपके पास हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अ़न्हु बैठे हुए थे जो ग़रीब सहाबा में से थे, उनका लिबास ख़स्ता और हालत फ़क़ीरों की थी, और भी इसी तरह के कुछ फ़क़ीर ग़रीब मजमे में थे। उयैना ने कहा कि हमें आपके पास आने और आपकी बात सुनने से यही लोग रुकावट हैं, ऐसे ख़स्ताहाल लोगों के पास हम नहीं बैठ सकते, आप इनको अपनी मज्लिस से हटा दें या कम से कम हमारे लिये अलग मज्लिस बना दें और इनके लिये अलग।

इब्ने मरदूया ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि उमैया बिन ख़लफ़ जमही ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह मश्विरा दिया कि ग़रीब फ़क़ीर शिकस्ताहाल मुसलमानों को आप अपने क़रीब न रखें बल्कि मक्का और क़ुरैश के सरदारों को साथ लगायें, ये लोग आपका दीन क़ुबूल कर लेंगे तो दीन को तरक़्क़ी होगी।

इस तरह के वाक़िआत पर अल्लाह का यह इरशाद नाज़िल हुआ जिसमें उनका मश्विरा क़ुबूल करने से सख़्ती के साथ मना किया गया, और सिर्फ़ यही नहीं कि उनको अपनी मज्लिस से हटायें नहीं, बल्कि हुक्म यह दिया गया कि 'वस्बिर् नफ़्स-क' यानी आप अपने नफ़्स को उन लोगों के साथ बाँधकर रखें। इसका यह मफ़्हूम नहीं कि किसी वक़्त अलग न हों, बल्कि मुराद

यह है कि ताल्लुक़ात और तवज्जोह सब उन लोगों के साथ जुड़ी रहें, मामलात में उन्हीं से मश्विरा लें, उन्हीं की इमदाद व सहयोग से काम करें। और इसकी वजह और हिक्मत इन अलफ़ाज़ से बतला दी गई कि ये लोग सुबह शाम यानी हर हाल में अल्लाह को पुकारते और उसी का ज़िक्र करते हैं, इनका जो अ़मल है वह ख़ालिस अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलब करने के लिये है, और ये सब हालात वो हैं जो अल्लाह तआ़ला की मदद को खींचते हैं अल्लाह की मदद ऐसे ही लोगों के लिये आया करती है। चन्द दिन की परेशानी और किसी का सहारा न मिलने से घबरायें नहीं, अन्जामकार फ़तह व कामयाबी उन्हीं को हासिल होगी।

और क़ुरैश के सरदारों का मश्विरा क़ुबूल करने की मनाही की वजह भी आयतों के आख़िर में यह बतलाई कि उनके दिल अल्लाह की याद से ग़ाफ़िल हैं और उनके सब काम अपनी नफ़्सानी इच्छाओं के ताबे हैं, और ये हालात अल्लाह तआ़ला की रहमत व मदद से उनको दूर करने वाले हैं।

यहाँ यह सवाल हो सकता है कि उनका यह मश्विरा तो क़ाबिले अ़मल था कि उनके लिये एक मज्लिस अलग कर दी जाती ताकि उनको इस्लाम की दावत पहुँचाने में और उन लोगों को क़ुबूल करने में सहूलत होती, मगर इस तरह की तक़सीम में घमंडी व नाफ़रमान मालदारों का एक ख़ास सम्मान था जिससे ग़रीब मुसलमानों का दिल टूटता या हौसला पस्त हो सकता था अल्लाह तआ़ला ने इसको गवारा न फ़रमाया और दावत व तब्लीग़ का उसूल यही क़रार दे दिया कि इसमें किसी का कोई फ़र्क़ और विशेषता न होनी चाहिये। वल्लाहु आलम

जन्नत वालों के लिये ज़ेवर

يُحَلَّوْنَ فِيْهَا

इस आयत (यानी आयत नम्बर 31) में जन्नती मर्दों को भी सोने के कंगन पहनाने का ज़िक्र है। इस पर यह सवाल हो सकता है कि ज़ेवर पहनना तो मर्दों के लिये न मुनासिब है न कोई ख़ूबसूरती और ज़ीनत, जन्नत में अगर उनको कंगन पहनाये गये तो वे उनको बुरी शक्ल व सूरत वाला बना देंगे।

जवाब यह है कि सिंगार व ख़ूबसूरती उर्फ़ व रिवाज के ताबे है, एक मुल्क और ख़ित्ते में जो चीज़ ख़ूबसूरती व सिंगार समझी जाती है दूसरे मुल्कों और ख़ित्तों में कई बार वह क़ाबिले नफ़रत क़रार दी जाती है, और ऐसा ही इसके विपरीत भी है। इसी तरह एक ज़माने में एक ख़ास चीज़ ज़ीनत (सिंगार व सजावट) होती है दूसरे ज़माने में वह ऐब हो जाता है। जन्नत में मर्दों के लिये भी ज़ेवर और रेशमी कपड़े ख़ूबसूरती व सजावट क़रार दिये जायेंगे तो वहाँ इससे किसी को अजनबियत का एहसास न होगा, यह सिर्फ़ दुनिया का क़ानून है कि यहाँ मर्दों को सोने का कोई ज़ेवर यहाँ तक कि अंगूठी और घड़ी की चैन भी सोने की इस्तेमाल करना जायज़ नहीं। इसी तरह रेशमी कपड़े मर्दों के लिये जायज़ नहीं। जन्नत का यह क़ानून न होगा, वह इस सारे जहान से अलग एक जहान है उसको इस बिना पर किसी चीज़ में भी क़ियास और अन्दाज़ा

नहीं किया जा सकता।

وَاضْرِبْ لَهُمْ مَّثَلًا رَّجُلَيْنِ جَعَلْنَا لِأَحَدِهِمَا جَنَّتَيْنِ مِنْ أَعْنَابٍ وَّحَفَفْنٰهُمَا بِنَخْلٍ وَّ جَعَلْنَا بَيْنَهُمَا زَرْعًا ۝ كِلْتَا الْجَنَّتَيْنِ اٰتَتْ أُكُلَهَا وَلَمْ تَظْلِمْ مِّنْهُ شَيْئًا وَّفَجَّرْنَا خِلٰلَهُمَا نَهَرًا ۝ وَّكَانَ لَهٗ ثَمَرٌ فَقَالَ لِصَاحِبِهٖ وَهُوَ يُحَاوِرُهٗٓ أَنَا أَكْثَرُ مِنْكَ مَالًا وَّأَعَزُّ نَفَرًا ۝ وَدَخَلَ جَنَّتَهٗ وَهُوَ ظَالِمٌ لِّنَفْسِهٖ قَالَ مَآ أَظُنُّ أَنْ تَبِيْدَ هٰذِهٖٓ أَبَدًا ۝ وَّمَآ أَظُنُّ السَّاعَةَ قَآئِمَةً وَّلَئِنْ رُّدِدْتُّ إِلٰى رَبِّيْ لَأَجِدَنَّ خَيْرًا مِّنْهَا مُنْقَلَبًا ۝ قَالَ لَهٗ صَاحِبُهٗ وَهُوَ يُحَاوِرُهٗٓ أَكَفَرْتَ بِالَّذِيْ خَلَقَكَ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ مِنْ نُّطْفَةٍ ثُمَّ سَوّٰىكَ رَجُلًا ۝ لٰكِنَّا۠ هُوَ اللّٰهُ رَبِّيْ وَلَآ أُشْرِكُ بِرَبِّيْٓ أَحَدًا ۝ وَلَوْلَآ إِذْ دَخَلْتَ جَنَّتَكَ قُلْتَ مَا شَآءَ اللّٰهُ لَا قُوَّةَ إِلَّا بِاللّٰهِ إِنْ تَرَنِ أَنَا أَقَلَّ مِنْكَ مَالًا وَّوَلَدًا ۝ فَعَسٰى رَبِّيْٓ أَنْ يُّؤْتِيَنِ خَيْرًا مِّنْ جَنَّتِكَ وَيُرْسِلَ عَلَيْهَا حُسْبَانًا مِّنَ السَّمَآءِ فَتُصْبِحَ صَعِيْدًا زَلَقًا ۝ أَوْ يُصْبِحَ مَآؤُهَا غَوْرًا فَلَنْ تَسْتَطِيْعَ لَهٗ طَلَبًا ۝ وَأُحِيْطَ بِثَمَرِهٖ فَأَصْبَحَ يُقَلِّبُ كَفَّيْهِ عَلٰى مَآ أَنْفَقَ فِيْهَا وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوْشِهَا وَيَقُوْلُ يٰلَيْتَنِيْ لَمْ أُشْرِكْ بِرَبِّيْٓ أَحَدًا ۝ وَلَمْ تَكُنْ لَّهٗ فِئَةٌ يَّنْصُرُوْنَهٗ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَمَا كَانَ مُنْتَصِرًا ۝ هُنَالِكَ الْوَلَايَةُ لِلّٰهِ الْحَقِّ هُوَ خَيْرٌ ثَوَابًا وَّخَيْرٌ عُقْبًا ۝

वज़्रिब् लहुम् म-सलर्रजुलैनि जअ़ल्ना लि-अ-हदिहिमा जन्नतैनि मिन् अअ़्नाबिंव्-व हफ़फ़्नाहुमा बिनख़्लिंव् -व जअ़ल्ना बैनहुमा ज़र्‌अ़ा (32) किल्तल्-जन्नतैनि आतत् उकु-लहा व लम् तज़्लिम् मिन्हु शैअंव्-व फ़ज्जर्ना ख़िलालहुमा न-हरा (33) व का-न लहू स-मरुन् फ़क़ा-ल लिसाहिबिही व हु-व युहाविरुहू अ-न अक्सरु मिन्-क मालंव्-व अ-अ़ज़्ज़ु न-फ़रा (34) व द-ख़-ल जन्न-तहू	और बतला उनको मिसाल दो मर्दों की कर दिये हमने उनमें से एक के लिये दो बाग़ अंगूर के और उनके गिर्द खजूरें और रखी दोनों के बीच में खेती। (32) दोनों बाग़ लाते हैं अपना मेवा और नहीं घटाते उसमें से कुछ, और बहा दी हमने उन दोनों के बीच नहर। (33) और मिला उसको फल फिर बोला अपने साथी से जब बातें करने लगा उससे– मेरे पास ज़्यादा है तुझसे माल और आबरू के लोग। (34) और गया अपने बाग़ में और

व हु-व ज़ालिमुल् लिनफ़्सिही क़ा-ल मा अज़ुन्नु अन् तबी-द हाज़िही अ-बदा (35) व मा अज़ुन्नुस्सा-अ-त क़ाइ-मतंव्-व ल-इर्रुदित्तु इला रब्बी ल-अजिदन्-न ख़ैरम्-मिन्हा मुन्क़-लबा (36) क़ा-ल लहू साहिबुहू व हु-व युहाविरुहू अ-कफ़र्-त बिल्लज़ी ख़-ल-क़-क मिन् तुराबिन् सुम्-म मिन् नुत्फ़तिन् सुम्-म सव्वा-क रजुला (37) लाकिन्-न हुवल्लाहु रब्बी व ला उश्रिकु बिरब्बी अ-हदा (38) व लौ ला इज़् दख़ल्-त जन्न-त-क क़ुल्-त मा शाअल्लाहु ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि इन् तरनि अ-न अक़ल्-ल मिन्-क मालंव्-व व-लदा (39) फ़-अ़सा रब्बी अंय्युअ्ति-यनि ख़ैरम्-मिन् जन्नति-क व युरसि-ल अ़लैहा हुस्बानम्-मिनस्समा-इ फ़तुस्बि-ह सअ़ीदन् ज़-लक़ा (40) औ युस्बि-ह माउहा ग़ौरन् फ़-लन् तस्तती-अ़ लहू त-लबा (41) व उहीत बि-स-मरिही फ़-अस्ब-ह युक़ल्लिबु कफ़्फ़ैहि अ़ला मा अन्फ़-क़ फ़ीहा व हि-य

वह बुरा कर रहा था अपनी जान पर, बोला नहीं आता मुझको ख़्याल कि ख़राब हो यह बाग़ कभी। (35) और नहीं ख़्याल करता हूँ कि क़ियामत आने वाली है, और अगर कभी पहुँचा दिया गया मैं अपने रब के पास पाऊँगा बेहतर इससे वहाँ पहुँचकर। (36) कहा उसको दूसरे ने जब बात करने लगा— क्या तू मुन्किर हो गया उससे जिसने पैदा किया तुझको मिट्टी से, फिर क़तरे से, फिर पूरा कर दिया तुझको मर्द। (37) फिर मैं तो यही कहता हूँ वही अल्लाह है मेरा रब, और नहीं मानता शरीक अपने रब का किसी को। (38) और जब तू आया था अपने बाग़ में क्यों न कहा तूने जो चाहे अल्लाह सो हो, ताक़त नहीं मगर जो दे अल्लाह, अगर तू देखता है मुझको कि मैं कम हूँ तुझसे माल और औलाद में (39) तो उम्मीद है कि मेरा रब दे मुझको तेरे बाग़ से बेहतर और भेज दे इस पर लू का एक झोंका आसमान से, फिर सुबह को रह जाये मैदान साफ़। (40) या सुबह को हो रहे इसका पानी ख़ुश्क फिर न ला सके तू उसको ढूँढकर। (41) और समेट लिया गया उसका सारा फल फिर सुबह को रह गया हाथ नचाता उस माल पर

ख़ावि-यतुन् अ़ला अ़ुरूशिहा व यक़ूलु यालैतनी लम् उश्रिक् बिरब्बी अ-हदा (42) व लम् तकुल्लहू फ़ि-अतुंय्यन्सुरूनहू मिन् दूनिल्लाहि व मा का-न मुन्तसिरा (43) हुनालिकल्-वला-यतु लिल्लाहिल्-हक़्क़ि, हु-व ख़ैरुन् सवाबंव्-व ख़ैरुन् अुक़्बा (44) ✿	जो उसमें लगाया था और वह गिरा पड़ा था अपनी छतरियों पर और कहने लगा क्या ख़ूब होता अगर मैं शरीक न बनाता अपने रब का किसी को। (42) और न हुई उसकी जमाअ़त कि मदद करें उसकी अल्लाह के सिवा और न हुआ वह कि ख़ुद बदला ले सके। (43) यहाँ सब इख़्तियार है अल्लाह सच्चे का, उसी का इनाम बेहतर है और अच्छा है उसी का दिया हुआ बदला। (44) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आप (दुनिया के फ़ानी होने और आख़िरत के बाक़ी रहने को ज़ाहिर करने के लिये) दो शख़्सों का हाल (जिनमें आपसी दोस्ती या रिश्तेदारी का ताल्लुक़ था) बयान कीजिए (ताकि काफ़िरों का ख़्याल बातिल हो जाये और मुसलमानों को तसल्ली हो)। उन दो शख़्सों में से एक को (जो कि बद-दीन था) हमने दो बाग़ अँगूर के दे रखे थे, और उन दोनों (बाग़ों) का खजूर के पेड़ों से घेरा बना रखा था, और उन दोनों (बाग़ों) के बीच में खेती भी लगा रखी थी। (और) दोनों बाग़ अपना पूरा फल देते थे, और किसी के फल में ज़रा भी कमी न रहती थी (दूसरे बाग़ों के ख़िलाफ़ कि कभी किसी पेड़ में और किसी साल पूरे बाग़ में फल कम आता है) और उन दोनों (बाग़ों) के बीच में नहर चला रखी थी। और उस शख़्स के पास और भी मालदारी का सामान था, सो (एक दिन) अपने उस (दूसरे) साथी से इधर-उधर की बातें करते-करते कहने लगा कि मैं तुझसे माल में भी ज़्यादा हूँ और मजमा भी मेरा ज़बरदस्त है (मतलब यह था कि तू मेरे तरीक़े को बातिल और अल्लाह के नज़दीक नापसन्द कहता है तो अब तू देख ले कि कौन अच्छा है, अगर तेरा दावा सही होता तो मामला उल्टा होता, क्योंकि दुश्मन को कोई नवाज़ा नहीं करता और दोस्त को कोई नुक़सान नहीं पहुँचाता)। और वह (अपने उस साथी को साथ लेकर) अपने ऊपर (कुफ़्र का) जुर्म क़ायम करता हुआ अपने बाग़ में पहुँचा (और) कहने लगा कि मेरा तो ख़्याल नहीं है कि यह बाग़ (मेरी ज़िन्दगी में) कभी भी बरबाद होगा (इससे मालूम हुआ कि वह ख़ुदा के वजूद और हर चीज़ पर उसकी क़ुदरत का क़ायल न था बस हिफ़ाज़त के ज़ाहिरी सामान को देखकर उसने यह बातचीत की)। और (इसी तरह) मैं क़ियामत को नहीं ख़्याल करता कि आयेगी, और अगर (मान लो जबकि यह असंभव है कि क़ियामत आ भी गई और) मैं अपने रब के पास पहुँचाया गया (जैसा कि तेरा अ़क़ीदा है) तो ज़रूर इस बाग़ से बहुत ज़्यादा अच्छी

जगह मुझको मिलेगी (क्योंकि जन्नत की जगहों का दुनिया से अच्छा और बेहतर होने का तो तुझे भी इक़रार है और यह भी तुझे तस्लीम है कि जन्नत अल्लाह के मक़बूल बन्दों को मिलेगी, मेरी मक़बूलियत के निशानात व आसार तो तू दुनिया ही में देख रहा है अगर मैं अल्लाह के नज़दीक मक़बूल न होता तो बाग़ात क्यों मिलते, इसलिये तुम्हारे इक़रार व मानने के मुताबिक़ भी मुझे वहाँ यहाँ से अच्छे बाग़ मिलेंगे)।

उस (की ये बातें सुनकर उस) से उसके मुलाक़ाती ने (जो कि दीनदार मगर ग़रीब आदमी था) जवाब के तौर पर कहा, क्या तू (तौहीद और क़ियामत से इनकार करके) उस (पाक) ज़ात के साथ कुफ़्र करता है जिसने (पहले) तुझको मिट्टी से (जो कि तेरा दूर का माद्दा है आदम के वास्ते से) पैदा किया, फिर (तुझको) नुत्फ़े से (जो कि तेरा क़रीब का माद्दा है माँ के पेट में बनाया) फिर तुझको सही व सालिम आदमी बनाया (इसके बावजूद तू तौहीद और क़ियामत से इनकार और कुफ़्र करता है तो किया कर), लेकिन मैं तो यह अक़ीदा रखता हूँ कि वह (यानी) अल्लाह तआ़ला मेरा (असली) रब है, और मैं उसके साथ किसी को शरीक नहीं ठहराता। और (जब अल्लाह तआ़ला की तौहीद और कामिल क़ुदरत हर चीज़ पर साबित है और उसके नतीजे में यह कुछ दूर की बात नहीं कि बाग़ की तरक़्क़ी और हिफ़ाज़त के तेरे सारे असबाब व सामान किसी वक़्त भी बेकार और ख़त्म हो जायें और बाग़ बरबाद हो जाये इसलिये तुझे लाज़िम था कि असबाब के पैदा करने वाले पर नज़र करता) तो तू जिस वक़्त अपने बाग़ में पहुँचा था तो तूने यूँ क्यों न कहा कि जो अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर होता है वही होता है, (और) अल्लाह तआ़ला की मदद के बग़ैर (किसी में) कोई ताक़त नहीं (जब तक अल्लाह तआ़ला चाहेगा यह बाग़ क़ायम रहेगा और जब चाहेगा वीरान हो जायेगा) अगर तू मुझको माल और औलाद में कमतर देखता है (इससे तुझको अपने मक़बूल होने का शुब्हा बढ़ गया है) तो मुझको वह वक़्त नज़दीक मालूम होता है कि मेरा रब मुझको तेरे बाग़ से अच्छा बाग़ दे दे (चाहे दुनिया ही में या आख़िरत में), और इस (तेरे बाग़) पर कोई तक़दीरी आफ़त आसमान से (यानी डायरेक्ट बिना तबई असबाब के) भेज दे, जिससे वह बाग़ एकदम से एक साफ़ (चटियल) मैदान होकर रह जाए, या उससे इसका पानी (जो नहर में जारी है) बिल्कुल अन्दर (ज़मीन में) उतर (कर सूख) जाये फिर तू उस (के दोबारा लाने और निकालने) की कोशिश भी न कर सके (यहाँ उस दीनदार साथी ने उस बेदीन के बाग़ का तो जवाब दे दिया मगर औलाद के मुताल्लिक़ कुछ जवाब नहीं दिया, शायद वजह यह है कि औलाद की अधिकता तभी भली मालूम होती है जब उसकी परवरिश के लिये माल मौजूद हो वरना वह उल्टा वबाले जान बन जाती है। हासिल इस कलाम का यह हुआ कि तेरे बुरे अक़ीदे वाला होने का सबब यह था कि तुझे दुनिया में अल्लाह ने दौलत दे दी इसको तूने अपनी मक़बूलियत की निशानी समझ लिया और मेरे पास दौलत न होने से मुझको ग़ैर-मक़बूल समझ लिया, तो दुनिया की दौलत व मालदारी को अल्लाह के नज़दीक मक़बूलियत का मदार समझ लेना ही बड़ा धोखा और ग़लती है, दुनिया की नेमतें तो रब्बुल-आ़लमीन साँपों, बिच्छुओं, भेड़ियों और बदकारों सभी को देते हैं, मक़बूलियत का असल मदार

आख़िरत की नेमतों पर है जो हमेशा बाक़ी रहने वाली हैं, और दुनिया की नेमतें सब फ़ना होने वाली हैं)।

और (इस बातचीत के बाद वाक़िआ यह पेश आया कि) उस शख़्स के माल व दौलत के सामान को तो आफ़त ने आ घेरा पस उसने जो कुछ उस बाग़ पर ख़र्च किया था, उस पर हाथ मलता रह गया, और वह बाग़ अपनी टटियों पर गिरा हुआ पड़ा था। और कहने लगा, क्या ख़ूब होता कि मैं अपने रब के साथ किसी को शरीक न ठहराता (इससे मालूम हुआ कि बाग़ पर आफ़त आने से वह समझ गया कि यह वबाल कुफ़्र व शिर्क के सबब से आया है, अगर कुफ़्र न करता तो पहले तो यह आफ़त ही शायद न आती और आ भी जाती तो इसका बदला आख़िरत में मिलता, अब दुनिया व आख़िरत दोनों में ख़सारा ही ख़सारा है। मगर सिर्फ़ इतनी हसरत व अफ़सोस से उसका ईमान साबित नहीं होता क्योंकि यह अफ़सोस व शर्मिन्दगी तो दुनिया के नुक़सान की वजह से हुई, आगे अल्लाह की तौहीद और क़ियामत का इक़रार जब तक साबित न हो उसको मोमिन नहीं कह सकते)। और उसके पास कोई ऐसा मजमा न हुआ जो अल्लाह तआ़ला के सिवा उसकी मदद करता (उसको अपने मजमे और औलाद पर घमण्ड था, वह भी ख़त्म हुआ) और न वह ख़ुद (हमसे) बदला ले सका। ऐसे मौक़े पर मदद करना तो अल्लाह बरहक़ ही का काम है (और आख़िरत में भी) उसी का सवाब सबसे अच्छा है और (दुनिया में भी) उसी का नतीजा सबसे अच्छा है (यानी अल्लाह के मक़बूल बन्दों का कोई नुक़सान हो जाता है तो दोनों जहान में उसका नेक फल मिलता है बख़िलाफ़ काफ़िर के कि वह बिल्कुल ख़सारे में रह गया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَكَانَ لَهٗ ثَمَرٌ

लफ़्ज़ **समर** दरख़्तों के फल को भी कहा जाता है और आ़म माल व ज़र को भी, इस जगह हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु, मुजाहिद, क़तादा रह. से यही दूसरे मायने मन्क़ूल हैं। (इब्ने कसीर) क़ामूस में है कि लफ़्ज़ **समर** दरख़्त के फल और माल व ज़र की क़िस्मों सब को कहा जाता है, इससे मालूम हुआ कि उसके पास सिर्फ़ बाग़ात और खेत ही नहीं बल्कि सोना चाँदी और ऐश के दूसरे तमाम असबाब भी मौजूद थे, ख़ुद उसके अलफ़ाज़ में जो क़ुरआन ने नक़ल किये हैं 'अ-न अक्सरु मिन्-क मालन्' भी इसी मफ़्हूम को अदा करते हैं। (इब्ने कसीर)

مَاشَآءَ اللّٰهُ لَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ

हदीस की किताब 'शुअ़बुल-ईमान' में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स कोई चीज़ देखे और वह उसको पसन्द आये तो अगर उसने यह कलिमा कह लियाः

مَا شَآءَ اللّٰهُ لَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ

(मा शा-अल्लाहु ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि) तो उसको कोई चीज़ नुक़सान न पहुँचायेगी (यानी वह पसन्दीदा महबूब चीज़ महफ़ूज़ रहेगी) और कुछ रिवायतों में है कि जिसने किसी महबूब व पसन्दीदा चीज़ को देखकर यह कलिमा पढ़ लिया तो उसको बुरी नज़र न लगेगी।

हुस्बानन्। इस लफ़्ज़ की तफ़सीर हज़रत क़तादा रह. ने अ़ज़ाब से की है और इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने आग से, और कुछ हज़रात ने पथराव से। इसके बाद जो क़ुरआन में आया है 'उही-त बि-स-मरिही' इसमें ज़ाहिर यह है कि उसके बाग़ और तमाम माल व ज़र और ऐश के सामान पर कोई बड़ी आफ़त आ पड़ी जिसने सब को बरबाद कर दिया। क़ुरआन ने स्पष्ट तौर पर किसी ख़ास आफ़त का ज़िक्र नहीं किया ज़ाहिर यह है कि कोई आसमानी आग आई जिसने सब को जला दिया जैसा कि लफ़्ज़ हुस्बान की तफ़सीर हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी आग नक़ल की गयी है। वल्लाहु आलम

وَاضْرِبْ لَهُمْ مَّثَلَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا كَمَآءٍ اَنْزَلْنٰهُ مِنَ السَّمَآءِ فَاخْتَلَطَ بِهٖ نَبَاتُ الْاَرْضِ فَاَصْبَحَ هَشِيْمًا تَذْرُوْهُ الرِّيٰحُ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ مُّقْتَدِرًا ۝ اَلْمَالُ وَالْبَنُوْنَ زِيْنَةُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ وَالْبٰقِيٰتُ الصّٰلِحٰتُ خَيْرٌ عِنْدَ رَبِّكَ ثَوَابًا وَّخَيْرٌ اَمَلًا ۝ وَيَوْمَ نُسَيِّرُ الْجِبَالَ وَتَرَى الْاَرْضَ بَارِزَةً ۙ وَّحَشَرْنٰهُمْ فَلَمْ نُغَادِرْ مِنْهُمْ اَحَدًا ۝ وَعُرِضُوْا عَلٰى رَبِّكَ صَفًّا ؕ لَقَدْ جِئْتُمُوْنَا كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ ۢ بَلْ زَعَمْتُمْ اَلَّنْ نَّجْعَلَ لَكُمْ مَّوْعِدًا ۝ وَوُضِعَ الْكِتٰبُ فَتَرَى الْمُجْرِمِيْنَ مُشْفِقِيْنَ مِمَّا فِيْهِ وَيَقُوْلُوْنَ يٰوَيْلَتَنَا مَالِ هٰذَا الْكِتٰبِ لَا يُغَادِرُ صَغِيْرَةً وَّلَا كَبِيْرَةً اِلَّآ اَحْصٰىهَا ۚ وَوَجَدُوْا مَا عَمِلُوْا حَاضِرًا ؕ وَلَا يَظْلِمُ رَبُّكَ اَحَدًا ۝

ع ٦ ٥ ١٨

वज़्रिब् लहुम् म-सलल्-हयातिद्दुन्या कमाइन् अन्ज़ल्नाहु मिनस्समा-इ फ़ख़्त-ल-त बिही नबातुल्अर्ज़ि फ़अस्ब-ह हशीमन् तज़्रूहुर्रियाहु, व कानल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइम्-मुक़्तदिरा (45) अल्मालु वल्बनू-न ज़ीनतुल्-हयातिद्दुन्या वल्बाक़ियातुस्-सालिहातु ख़ैरुन् अ़िन्-द रब्बि-क सवाबंव्-व ख़ैरुन् अ-मला (46)	और बतला दे उनको मिसाल दुनिया की ज़िन्दगी की जैसे पानी उतारा हमने आसमान से फिर रला-मिला निकला उसकी वजह से ज़मीन का सब्ज़ा, फिर कल को हो गया चूरा-चूरा हवा में उड़ता हुआ, और अल्लाह को है हर चीज़ पर क़ुदरत। (45) माल और बेटे रौनक़ हैं दुनिया की ज़िन्दगी में और बाक़ी रहने वाली नेकियों का बेहतर है तेरे रब के यहाँ बदला और बेहतर है उम्मीद। (46)

व यौ-म नुसय्यिरुल्-जिबा-ल व तरल्-अर्-ज़ बारि-ज़तंव्-व हशर्नाहुम् फ़-लम् नुग़ादिर् मिन्हुम् अ-हदा (47) व अुरिज़ू अला रब्बि-क सफ़्फ़न्, ल-क़द् जिअ्तुमूना कमा ख़लक़्नाकुम् अव्व-ल मर्रतिम् बल् ज़अ़म्तुम् अल्-लन्नज्अ़-ल लकुम् मौअ़िदा (48) व वुज़िअ़ल्-किताबु फ़-तरल्-मुज्रिमी-न मुश्फ़िक़ी-न मिम्मा फ़ीहि व यक़ूलू-न यावैल-तना मा लि-हाज़ल्-किताबि ला युग़ादिरु सग़ी-रतंव्-व ला कबी-रतन् इल्ला अह्साहा व व-जदू मा अ़मिलू हाज़िरन्, व ला यज़्लिमु रब्बु-क अ-हदा (49) ❁	और जिस दिन हम चलायें पहाड़ और तू देखे ज़मीन को खुली हुई और घेर बुलायें हम उनको फिर न छोड़ें उनमें से एक को। (47). और सामने आयें तेरे रब के क़तार बाँधकर, आ पहुँचे तुम हमारे पास जैसा कि हमने बनाया था तुमको पहली बार, नहीं! तुम तो कहते थे कि न मुक़र्रर करेंगे हम तुम्हारे लिये कोई वायदा। (48) और रखा जायेगा हिसाब का काग़ज़ फिर तू देखे गुनाहगारों को डरते हैं उससे जो उसमें लिखा है, और कहते हैं हाय ख़राबी कैसा है यह काग़ज़ नहीं छूटी इससे छोटी बात और न बड़ी बात जो इसमें नहीं आ गई, और पायेंगे जो कुछ किया है सामने, और तेरा रब ज़ुल्म न करेगा किसी पर। (49) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इससे पहले दुनियावी ज़िन्दगी और उसके सामान की नापायेदारी "बाक़ी न रहने वाला होना" एक व्यक्तिगत और आंशिक मिसाल से बयान फ़रमाई थी अब यही मज़मून आ़म और कुल्ली मिसाल से स्पष्ट किया जाता है) और आप उन लोगों से दुनिया की ज़िन्दगी की हालत बयान फ़रमाईये कि वह ऐसी है जैसे आसमान से हमने पानी बरसाया हो, फिर उस (पानी) के ज़रिये से ज़मीन की नबातात "यानी घास और पेड़-पौधे" ख़ूब घनी हो गई हों, फिर वह (तरोताज़ा और हरीभरी होने के बाद सूखकर) चूरा-चूरा हो जाये कि उसको हवा उड़ाये लिये फिरती हो (यही हाल दुनिया का है कि आज हरीभरी नज़र आती है कल इसका नाम व निशान भी न रहेगा) और अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखते हैं (जब चाहें बनायें, पैदा करें, तरक़्क़ी दें और जब चाहें फ़ना कर दें। और जब इस दुनिया की ज़िन्दगी का यह हाल है और) माल और औलाद दुनिया की ज़िन्दगी की एक रौनक़ (और इसके ताबे चीज़ों में से) हैं (तो ख़ुद माल व औलाद तो और भी ज़्यादा जल्दी फ़ना होने वाली है) और जो नेक आमाल (हमेशा

हमेशा को) बाक़ी रहने वाले हैं वो आपके रब के नज़दीक (यानी आख़िरत में इस दुनिया से) सवाब के एतिबार से भी (हज़ार दर्जे) बेहतर है, और उम्मीद के एतिबार से भी (हज़ार दर्जे) बेहतर है (यानी नेक आमाल से जो उम्मीदें जुड़ी होती हैं वो आख़िरत में ज़रूर पूरी होंगी, और उसकी उम्मीद से भी ज़्यादा सवाब मिलेगा, बख़िलाफ़ दुनिया की दौलत के कि इससे दुनिया में भी इनसानी उम्मीदें पूरी नहीं होतीं और आख़िरत में तो कोई संभावना व गुमान ही नहीं)।

और उस दिन को याद करना चाहिए जिस दिन हम पहाड़ों को (उनकी जगह से) हटा देंगे (यह शुरूआत में होगा, फिर वो टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे) और आप ज़मीन को देखेंगे कि एक खुला मैदान पड़ा है (क्योंकि पहाड़, दरख़्त, मकान कुछ बाक़ी न रहेगा) और हम उन सब को (क़ब्रों से उठाकर हिसाब के मैदान में) जमा कर देंगे, और उनमें से किसी को भी न छोड़ेंगे (कि वहाँ न लाया जाये)। और सब के सब आपके रब के सामने (यानी हिसाब के लिये) बराबर खड़े करके पेश किये जाएँगे (यह शुब्हा व गुमान न रहेगा कि कोई किसी की आड़ में छुप जाये, और उनमें जो क़ियामत का इनकार करते थे उनसे कहा जायेगा कि) देखो! आख़िर तुम हमारे पास (दोबारा पैदा होकर) आये भी जैसा कि हमने तुमको पहली बार (यानी दुनिया में) पैदा किया था (मगर तुम पहली पैदाईश को देख लेने और अनुभव कर लेने के बावजूद इस दूसरी पैदाईश के क़ायल न हुए) बल्कि तुम यही समझते रहे कि हम तुम्हारे (दोबारा पैदा करने के) लिये कोई वायदा किया गया वक़्त न लाएँगे। और नामा-ए-आमाल (चाहे दाहिने हाथ में या बायें हाथ में देकर उसके सामने खुला हुआ) रख दिया जायेगा (जैसा कि एक दूसरी आयत में है 'व नुख़्रिजु लहू यौमल्-क़ियामति किताबंय्-यल्क़ाहु मन्शूरा) तो आप मुजरिमों को देखेंगे कि उसमें जो कुछ (लिखा) होगा (उसको देखकर) उससे (यानी उसकी सज़ा से) डरते होंगे, और कहते होंगे कि हाय! हमारी कम-बख़्ती इस नामा-ए-आमाल की अजीब हालत है कि बिना लिखे हुए न कोई छोटा गुनाह छोड़ा न बड़ा गुनाह, और जो कुछ उन्होंने (दुनिया में) किया था वह सब (लिखा हुआ) मौजूद पाएँगे। और आपका रब किसी पर ज़ुल्म न करेगा (कि न किया हुआ गुनाह लिख ले या की हुई नेकी जो शर्तों के साथ की जाये उसको न लिखे)।

मआरिफ़ व मसाईल

وَالْبٰقِيٰتُ الصّٰلِحٰتُ

मुस्नद अहमद, इब्ने हिब्बान और हाकिम ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि **बाक़ियात-ए-सालिहात** (बाक़ी रहने वाली नेकियों) को ज़्यादा से ज़्यादा जमा किया करो। अर्ज़ किया गया कि वो क्या हैं? आपने फ़रमायाः

سُبْحَانَ اللّٰهِ لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ، اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ اَللّٰهُ اَكْبَرُ وَلَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ

सुब्हानल्लाहि ला इला-ह इल्लल्लाहु अल्हम्दु लिल्लाहि अल्लाहु अकबर। व ला हौ-ल व

ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि कहना।

हाकिम ने इस हदीस को सही कहा है और उकैली ने हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि **'सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बर'** यही बाक़ियात-ए-सालिहात हैं। यही मज़मून तबरानी ने हज़रत सअ़द बिन उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है। और सही मुस्लिम व तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह कलिमा यानी **'सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बर'** मेरे नज़दीक उन तमाम चीज़ों से ज़्यादा महबूब है जिन पर सूरज की रोशनी पड़ती है यानी सारे जहान से।

और हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि **'ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि'** कसरत से पढ़ा करो क्योंकि यह निन्नानवे दरवाज़े बीमारी और तकलीफ़ के दूर कर देता है जिनमें सब से कम दर्जे की तकलीफ़ फ़िक्र व ग़म है।

इसी लिये इस आयत में लफ़्ज़ बाक़ियात-ए-सालिहात की तफ़सीर हज़रत इब्ने अ़ब्बास, इक्रिमा, मुजाहिद ने यही की है कि मुराद इससे यही कलिमात पढ़ना है, और सईद बिन ज़ुबैर, मसरूक़ और इब्राहीम ने फ़रमाया कि बाक़ियात-ए-सालिहात से पाँच नमाज़ें मुराद हैं।

और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक दूसरी रिवायत में यह है कि आयत में बाक़ियात-ए-सालिहात से मुराद उमूमी तौर पर नेक आमाल हैं जिनमें ये ज़िक्र हुए कलिमात भी दाख़िल हैं, पाँचों नमाज़ें भी और दूसरे तमाम नेक आमाल भी। हज़रत क़तादा से भी यही तफ़सीर मन्क़ूल है। (तफ़सीरे मज़हरी)

क़ुरआन के अलफ़ाज़ के मुताबिक़ भी यही है क्योंकि इन अलफ़ाज़ का लफ़्ज़ी मफ़्हूम वो नेक आमाल हैं जो बाक़ी रहने वाले हैं और यह ज़ाहिर है कि नेक आमाल सब ही अल्लाह के नज़दीक बाक़ी और क़ायम हैं। इब्ने जरीर तबरी और क़ुर्तुबी ने इसी तफ़सीर को तरजीह दी है।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि खेती दो क़िस्म की होती है– दुनिया की खेती तो माल व औलाद है और आख़िरत की खेती बाक़ियात-ए-सालिहात (बाक़ी रहने वाली नेकियाँ) हैं। हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि बाक़ियात-ए-सालिहात इनसान की नीयत और इरादा हैं कि नेक आमाल की क़ुबूलियत इस पर मौक़ूफ़ है।

और उबैद इब्ने उमर ने फ़रमाया कि बाक़ियात-ए-सालिहात नेक लड़कियाँ हैं कि वे अपने माँ-बाप के लिये सवाब का सबसे बड़ा ज़ख़ीरा हैं। इसकी तरफ़ हज़रत सिद्दीक़ा आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की एक रिवायत इशारा करती है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मन्क़ूल है कि आपने फ़रमाया कि मैंने अपनी उम्मत के एक आदमी को देखा कि उसको जहन्नम में ले जाने का हुक्म दे दिया गया तो उसकी नेक लड़कियाँ उसको चिमट गईं और रोने और शोर करने लगीं और अल्लाह तआ़ला से फ़रियाद की कि या अल्लाह! इन्होंने दुनिया में हम पर बड़ा एहसान किया और हमारी तरबियत (पालन-पौषण) में मेहनत उठाई है तो अल्लाह

तआ़ला ने उस पर रहम फ़रमाकर उसको बख़्श दिया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

لَقَدْ جِئْتُمُوْنَا كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ

क़ियामत के दिन सब को ख़िताब होगा कि आज तुम उसी तरह ख़ाली हाथ बिना किसी सामान के हमारे पास आये हो जैसे तुम्हें पहली बार पैदाईश के वक़्त पैदा किया था। बुख़ारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुतबा दिया जिसमें फ़रमाया कि ऐ लोगो! तुम क़ियामत में अपने रब के सामने नंगे पाँव, नंगे बदन पैदल चलते हुए आओगे, और सबसे पहले जिसको लिबास पहनाया जायेगा वह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम होंगे। यह सुनकर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने सवाल किया कि या रसूलल्लाह! क्या सब मर्द व औ़रत नंगे होंगे और एक दूसरे को देखते होंगे? आपने फ़रमाया कि उस दिन हर एक को ऐसी मशग़ूलियत और ऐसी फ़िक्र घेरेगी कि किसी को किसी की तरफ़ देखने का मौक़ा ही न मिलेगा, सब की नज़रें ऊपर उठी हुई होंगी।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि एक हदीस में जो आया है कि मुर्दे बर्ज़ख़ में एक दूसरे से कफ़नों के लिबास में लिपटे हुए मुलाक़ात करेंगे, वह इस हदीस के विरुद्ध नहीं, क्योंकि वह मामला क़ब्र और बर्ज़ख़ का है यह मैदान-ए-हश्र का। और हदीस की कुछ रिवायतों में जो यह मन्क़ूल है कि मरने वाला अपने लिबास में मैदाने हश्र में उठेगा जिसमें उसको दफ़न किया गया था, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अपने मुर्दों के कफ़न अच्छे बनाया करो क्योंकि वे क़ियामत के रोज़ उसी कफ़न में उठेंगे, इसको कुछ हज़रात ने शहीदों पर महमूल किया है और कुछ ने कहा है कि हो सकता है कि मेहशर में कुछ लोग लिबास में उठें और कुछ नंगे, इस तरह दोनों क़िस्म की रिवायतें जमा हो जाती हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

अ़मल ही बदला है

وَوَجَدُوْا مَا عَمِلُوْا حَاضِرًا

यानी सब मेहशर वाले अपने किये हुए आमाल को हाज़िर पायेंगे। इसका मफ़्हूम आ़म तौर पर हज़राते मुफ़स्सिरीन ने यह बयान किया है कि अपने किये हुए आमाल की जज़ा को हाज़िर व मौजूद पायेंगे, हमारे उस्ताद हज़रत मौलाना सय्यिद मुहम्मद अनवर शाह कशमीरी फ़रमाते थे कि यह मतलब लेने की ज़रूरत नहीं, हदीस की बेशुमार रिवायतें इस पर सुबूत हैं कि यही आमाल दुनिया या आख़िरत की जज़ा व सज़ा बन जायेंगे, इनकी शक्लें वहाँ बदल जायेंगी, नेक आमाल जन्नत की नेमतों की शक्ल इख़्तियार कर लेंगे और बुरे आमाल जहन्नम की आग और साँप व बिच्छू बन जायेंगे।

हदीसों में है कि ज़कात न देने वालों का माल क़ब्र में एक बड़े साँप की शक्ल में आकर उसको डसेगा और कहेगा "अ-न मालु-क" (मैं तेरा माल हूँ), नेक अ़मल एक हसीन इनसान की

शक्ल में इनसान को कब्र की तन्हाई में कुछ घबराहट दूर करने के लिये मानूस करने के लिये आयेगा, क़ुरबानी के जानवर पुलसिरात की सवारी बनेंगे, इनसान के गुनाह मेहशर में बोझ की शक्ल में हर एक के सर पर लाद दिये जायेंगे।

क़ुरआन में यतीमों के माल को नाहक़ खाने के बारे में है:

إِنَّمَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ نَارًا

"ये लोग अपने पेटों में आग भर रहे हैं।" इन तमाम आयतों व रिवायतों को उमूमन असल से हटाकर दूसरे मायनों पर महमूल किया जाता है और अगर इस तहक़ीक़ को लिया जाये तो इनमें किसी जगह दूसरे और असल मायनों से हटकर मायने लेने की ज़रूरत नहीं रहती, सब अपनी हक़ीक़त पर रहती हैं।

क़ुरआन ने यतीम के नाजायज़ माल को आग फ़रमाया, तो हक़ीक़त यह है कि वह इस वक़्त भी आग ही है मगर उसके आसार महसूस करने के लिये इस दुनिया से गुज़र जाना शर्त है। जैसे कोई दिया सलाई के बक्स को आग कहे तो सही है मगर उसके आग होने के लिये रगड़ने की शर्त है, इसी तरह कोई पैट्रोल को आग कहे तो सही समझा जायेगा अगरचे उसके लिये ज़रा सी आग से टच होना शर्त है।

इसका हासिल यह हुआ कि इनसान जो कुछ नेक या बुरे अ़मल दुनिया में करता है यह अ़मल ही आख़िरत में जज़ा व सज़ा की शक्ल इख़्तियार करेगा, उस वक़्त के आसार व निशानियाँ इस दुनिया से अलग दूसरी हो जायेंगी। वल्लाहु आलम

وَإِذْ قُلْنَا لِلْمَلَٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِآدَمَ فَسَجَدُوٓا إِلَّآ إِبْلِيسَ كَانَ مِنَ الْجِنِّ فَفَسَقَ عَنْ أَمْرِ رَبِّهِۦٓ ۗ أَفَتَتَّخِذُونَهُۥ وَذُرِّيَّتَهُۥٓ أَوْلِيَآءَ مِن دُونِى وَهُمْ لَكُمْ عَدُوٌّۢ ۚ بِئْسَ لِلظَّٰلِمِينَ بَدَلًا ۝ مَّآ أَشْهَدتُّهُمْ خَلْقَ السَّمَٰوَٰتِ وَالْأَرْضِ وَلَا خَلْقَ أَنفُسِهِمْ وَمَا كُنتُ مُتَّخِذَ الْمُضِلِّينَ عَضُدًا ۝ وَيَوْمَ يَقُولُ نَادُوا شُرَكَآءِىَ الَّذِينَ زَعَمْتُمْ فَدَعَوْهُمْ فَلَمْ يَسْتَجِيبُوا لَهُمْ وَجَعَلْنَا بَيْنَهُم مَّوْبِقًا ۝ وَرَءَا الْمُجْرِمُونَ النَّارَ فَظَنُّوٓا أَنَّهُم مُّوَاقِعُوهَا وَلَمْ يَجِدُوا عَنْهَا مَصْرِفًا ۝ وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِى هَٰذَا الْقُرْءَانِ لِلنَّاسِ مِن كُلِّ مَثَلٍ ۚ وَكَانَ الْإِنسَٰنُ أَكْثَرَ شَىْءٍ جَدَلًا ۝ وَمَا مَنَعَ النَّاسَ أَن يُؤْمِنُوٓا إِذْ جَآءَهُمُ الْهُدَىٰ وَيَسْتَغْفِرُوا رَبَّهُمْ إِلَّآ أَن تَأْتِيَهُمْ سُنَّةُ الْأَوَّلِينَ أَوْ يَأْتِيَهُمُ الْعَذَابُ قُبُلًا ۝ وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِينَ إِلَّا مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ ۚ وَيُجَٰدِلُ الَّذِينَ كَفَرُوا بِالْبَٰطِلِ لِيُدْحِضُوا بِهِ الْحَقَّ ۖ وَاتَّخَذُوٓا ءَايَٰتِى وَمَآ أُنذِرُوا هُزُوًا ۝ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّن ذُكِّرَ بِـَٔايَٰتِ رَبِّهِۦ فَأَعْرَضَ عَنْهَا وَنَسِىَ مَا قَدَّمَتْ يَدَاهُ ۚ إِنَّا جَعَلْنَا عَلَىٰ

ع 19

قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْٓ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ۭ وَاِنْ تَدْعُهُمْ اِلَى الْهُدٰى فَلَنْ يَّهْتَدُوْٓا اِذًا اَبَدًا ۝
وَرَبُّكَ الْغَفُوْرُ ذُو الرَّحْمَةِ ۭ لَوْ يُؤَاخِذُهُمْ بِمَا كَسَبُوْا لَعَجَّلَ لَهُمُ الْعَذَابَ ۭ بَلْ لَّهُمْ مَّوْعِدٌ
لَّنْ يَّجِدُوْا مِنْ دُوْنِهٖ مَوْىِٕلًا ۝ وَتِلْكَ الْقُرٰٓى اَهْلَكْنٰهُمْ لَمَّا ظَلَمُوْا وَجَعَلْنَا لِمَهْلِكِهِمْ
مَّوْعِدًا ۝

व इज़् क़ुल्ना लिल्मलाइ-कतिस्जुदू लिआद-म फ़-स-जदू इल्ला इब्ली-स, का-न मिनल्-जिन्नि फ़-फ़-स-क़ अ़न् अम्रि रब्बिही, अ-फ़-तत्तख़िज़ूनहू व ज़ुर्रिय्य-तहू औलिया-अ मिन् दूनी व हुम् लकुम् अ़दुव्वुन्, बिअ्-स लिज़्ज़ालिमी-न ब-दला (50) मा अश्हत्तुहुम् ख़ल्क़स्-समावाति वल्अर्ज़ि व ला ख़ल्-क़ अन्फ़ुसिहिम् व मा कुन्तु मुत्तख़िज़ल्-मुज़िल्ली-न अ़ज़ुदा (51) व यौ-म यक़ूलु नादू शु-रकाइ-यल्लज़ी-न ज़अ़म्तुम् फ़-दऔहुम् फ़लम् यस्तजीबू लहुम् व जअ़ल्ना बैनहुम् मौबिक़ा (52) व र-अल् मुज्रिमूनन्ना-र फ़-ज़न्नू अन्नहुम् मुवाक़िअ़ूहा व लम् यजिदू अ़न्हा मस्रिफ़ा (53) ✿

व ल-क़द् सर्रफ़्ना फ़ी हाज़ल्-क़ुरआनि लिन्नासि मिन् कुल्लि म-सलिन्, व कानल्-इन्सानु अक्स-र शैइन्

और जब कहा हमने फ़रिश्तों को— सज्दा करो आदम को, तो सज्दे में गिर पड़े मगर इब्लीस, था जिन्न की क़िस्म से सो निकल भागा अपने रब के हुक्म से, सो क्या अब तुम ठहराते हो उसको और उसकी औलाद को साथी मेरे सिवा, और वे तुम्हारे दुश्मन हैं, बुरा हाथ लगा बदला बेइन्साफ़ों के। (50) दिखला नहीं लिया था मैंने उनको बनाना आसमान और ज़मीन का और न बनाना ख़ुद उनका, और मैं वह नहीं कि बनाऊँ बहकाने वालों को अपना मददगार। (51) और जिस दिन फ़रमायेगा पुकारो मेरे शरीकों को जिनको तुम मानते थे, फिर पुकारेंगे सो वे जवाब न देंगे उनको और कर देंगे हम उनके और उनके बीच मरने की जगह। (52) और देखेंगे गुनाहगार आग को फिर समझ लेंगे कि उनको पड़ना है उसमें, और न बदल सकेंगे उससे रस्ता। (53) ✿

और बेशक फेर-फेरकर समझाई हमने इस क़ुरआन में लोगों को हर एक मिसाल, और है इनसान सब चीज़ से ज़्यादा

ज-दला (54) व मा म-नअ़न्ना-स अंय्युअ्मिनू इज़् जाअहुमुल्हुदा व यस्तग़्फ़िरू रब्बहुम् इल्ला अन् तअ्ति-यहुम् सुन्नतुल्-अव्वली-न औ यअ्तियहुमुल्-अ़ज़ाबु क़ुबुला (55) व मा नुर्सिलुल्-मुर्सली-न इल्ला मुबश्शिरी-न व मुन्ज़िरी-न व युजादिलुल्लज़ी-न क-फ़रू बिल्बातिलि लियुद्हिज़ू बिहिल्हक़्-क़ वत्त-ख़ज़ू आयाती व मा उन्ज़िरू हुज़ुवा (56) व मन् अज़्लमु मिम्-मन् ज़ुक्कि-र बिआयाति रब्बिही फ़-अअ़्र-ज़ अ़न्हा व नसि-य मा क़द्दमत् यदाहु, इन्ना जअ़ल्ना अ़ला क़ुलूबिहिम् अकिन्न-तन् अंय्यफ़्क़हूहु व फ़ी आज़ानिहिम् वक़्रन्, व इन् तद्अुहुम् इलल्-हुदा फ़-लंय्यह्तदू इज़न् अ-बदा (57) व रब्बुकल्-ग़फ़ूरु ज़ुर्रह्मति, लौ युआख़िज़ुहुम् बिमा क-सबू ल-अ़ज्ज-ल लहुमुल्-अ़ज़ा-ब, बल्-लहुम् मौअिदुल्-लंय्यजिदू मिन् दूनिही मौअिला (58) व तिल्कल्-क़ुरा अह्लक्नाहुम् लम्मा ज़-लमू व जअ़ल्ना लिमह्लिकिहिम् मौअिदा (59) ❁

झगड़ालू। (54) और लोगों को जो रोका इस बात से कि यक़ीन ले आयें जब पहुँची उनको हिदायत और गुनाह बख़्शवायें अपने रब से सो इसी इन्तिज़ार ने कि पहुँचे उन पर पहलों की रस्म या खड़ा हो उन पर अ़ज़ाब सामने का। (55) और हम जो रसूल भेजते हैं सो ख़ुशख़बरी और डर सुनाने को, और झगड़ा करते हैं काफ़िर झूठा झगड़ा, कि टलावें उससे सच्ची बात को और ठहरा लिया उन्होंने मेरे कलाम को और जो डर सुना दिये गये ठट्ठा। (56) और उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन जिसको समझाया गया उसके रब के कलाम से फिर मुँह फेर लिया उसकी तरफ़ से और भूल गया जो कुछ आगे भेज चुके हैं उसके हाथ, हमने डाल दिये हैं उनके दिलों पर पर्दे कि उसको न समझें और उन के कानों में है बोझ, और अगर तू उनको बुलाये राह पर तो हरगिज़ न आयें राह पर उस वक़्त कभी। (57) और तेरा रब बड़ा बख़्शने वाला है रहमत वाला। अगर उनको पकड़े उनके किये पर तो जल्द डाले उन पर अ़ज़ाब, पर उनके लिये एक वायदा है, कहीं न पायेंगे उससे वरे सरक जाने की जगह। (58) और ये सब बस्तियाँ हैं जिनको हमने ग़ारत किया जब वे ज़ालिम हो गये, और मुक़र्रर किया था हमने उन की हलाकत का एक वायदा। (59) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त भी क़ाबिले ज़िक्र है) जबकि हमने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि आदम (अ़लैहिस्सलाम) के सामने सज्दा करो, तो सब ने सज्दा किया अ़लावा इब्लीस के, वह जिन्नात में से था, सो उसने अपने रब के हुक्म को न माना (क्योंकि जिन्नात का ग़ालिब तत्व जिससे वे पैदा किये गये हैं आग है और आग के तत्व का तक़ाज़ा पाबन्द न रहना है मगर इस तात्विक तक़ाज़े की वजह से इब्लीस माज़ूर न समझा जायेगा क्योंकि इस तात्विक तक़ाज़े को ख़ुदा के ख़ौफ़ से मग़लूब किया जा सकता था)। सो क्या फिर भी तुम उसको और उसके पैरोकारों (औलाद और ताबेदारों) को दोस्त बनाते हो मुझको छोड़कर (यानी मेरी इताअ़त छोड़कर उसके कहने पर चलते हो) हालाँकि वे (इब्लीस और उसकी जमाअ़त) तुम्हारे दुश्मन हैं (कि हर वक़्त तुम्हें नुक़सान पहुँचाने की फ़िक्र में रहते हैं)। ये (इब्लीस और उसकी नस्ल की दोस्ती) ज़ालिमों के लिये बहुत बुरा बदल है (बदल इसलिये कहा कि दोस्त तो बनाना चाहिये था मुझे लेकिन उन्होंने मेरे बदले शैतान को दोस्त बना लिया, बल्कि दोस्त ही नहीं उसको ख़ुदाई का शरीक भी मान लिया हालाँकि) मैंने उनको न तो आसमान और ज़मीन के पैदा करने के वक़्त (अपनी मदद या मश्विरे के लिये बुलाया) और न ख़ुद उनके पैदा करने के वक़्त (बुलाया, यानी एक के पैदा करने के वक़्त दूसरे को नहीं बुलाया) और मैं ऐसा (आ़जिज़) न था कि (किसी को ख़ास तौर पर) गुमराह करने वालों को (यानी शैतानों को) अपना (हाथ व) बाज़ू बनाता (यानी मदद की ज़रूरत तो उसको होती है जो ख़ुद क़ादिर न हो)। और (तुम यहाँ उनको ख़ुदाई में शरीक समझते हो, क़ियामत में हक़ीक़त मालूम होगी) उस दिन को याद करो कि हक़ तआ़ला (मुश्रिक लोगों से) फ़रमायेगा कि जिनको तुम हमारा शरीक समझा करते थे उनको (अपनी इमदाद के लिये) पुकारो, तो वे उनको पुकारेंगे, सो वे उनको जवाब ही न देंगे, और हम उनके बीच में एक आड़ कर देंगे (जिससे बिल्कुल ही मायूसी हो जाये वरना बग़ैर आड़ के भी उनका मदद करना मुम्किन न था)। और मुजरिम लोग दोज़ख़ को देखेंगे, फिर यक़ीन करेंगे कि वे उसमें गिरने वाले हैं, और उससे बचने की कोई राह न पाएँगे।

और हमने इस क़ुरआन में लोगों (की हिदायत) के वास्ते हर क़िस्म के उम्दा मज़मून तरह-तरह से बयान फ़रमाये हैं और (इस पर भी इनकार करने वाला) आदमी झगड़ने में सबसे बढ़कर है (जिन्नात और हैवानात में अगरचे शऊर व एहसास है मगर वे ऐसा झगड़ा नहीं करते) और लोगों को इसके बाद कि उनको हिदायत पहुँच चुकी (जिसका तक़ाज़ा था कि ईमान ले आते) ईमान लाने से और अपने परवर्दिगार से (कुफ़्र व नाफ़रमानी से) मग़फ़िरत माँगने से और कोई चीज़ रोक नहीं रही इसके अ़लावा कि उनको इसका इन्तिज़ार हो कि पहले लोगों के जैसा मामला (हलाकत और अ़ज़ाब का) उनको भी पेश आ जाये, या यह कि अ़ज़ाब उनके सामने आकर खड़ा हो (मतलब यह है कि उनके हालात से यह समझा जाता है कि अ़ज़ाब ही का

इन्तिज़ार रहे वरना और सब हुज्जतें तो तमाम हो चुकीं)। और रसूलों को तो हम सिर्फ़ खुशख़बरी देने वाले और डराने वाले बनाकर भेजा करते हैं (जिसके लिये मोजिज़ों वग़ैरह के ज़रिये काफ़ी दलीलें उनके साथ कर दी जाती हैं इससे ज़्यादा उनसे कोई फ़रमाईश करना जहालत है) और काफ़िर लोग नाहक़ की बातें पकड़-पकड़कर झगड़े निकालते हैं ताकि उसके ज़रिये से हक़ बात को बिचला दें। और उन्होंने मेरी आयतों को और जिस (अ़ज़ाब) से उनको डराया गया था उसको दिल्लगी बना रखा है। और उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन होगा जिसको उसके रब की आयतों से नसीहत की जाये फिर वह उससे मुँह फेर ले और जो कुछ अपने हाथों (गुनाह) समेट रहा है, उस (के नतीजे) को भूल जाये। हमने उस (हक़ बात) के समझने से उनके दिलों पर पर्दे डाल रखे हैं (और उसके सुनने से) उनके कानों में डाट दे रखी है, और (इसी वजह से उनका हाल यह है कि) अगर आप उसको सही रास्ते की तरफ़ बुलाएँ तो हरगिज़ भी रास्ते पर न आएँ (क्योंकि कानों से हक़ की दावत सुनते नहीं, दिलों से समझते नहीं इसलिये आप ग़म न करें)। और (अ़ज़ाब में देर होने की वजह से जो उनको यह ख़्याल हो रहा है कि अ़ज़ाब आयेगा ही नहीं तो इसकी वजह यह है कि) आपका रब बड़ा मग़फ़िरत करने वाला बड़ा रहमत वाला है (इसलिये मोहलत दे रखी है कि अब उनको होश आ जाये और ईमान ले आयें तो उनकी मग़फ़िरत कर दी जाये, वरना उनके आमाल तो ऐसे हैं कि) अगर उनसे उनके आमाल पर पकड़ करने लगता तो उन पर फ़ौरन ही अ़ज़ाब ला देता, (मगर ऐसा नहीं करता) उनके (अ़ज़ाब के) वास्ते एक तय वक़्त (ठहरा रखा) है, (यानी क़ियामत का दिन) कि उससे इस तरफ़ (यानी पहले) कोई पनाह की जगह नहीं पा सकते (यानी उस वक़्त के आने से पहले किसी पनाह की जगह में जा छुपें और उससे महफ़ूज़ रहें)। और (यही क़ायदा पहले काफ़िरों के साथ बरता गया चुनाँचे) ये बस्तियाँ (जिनके क़िस्से मशहूर व मज़कूर हैं) जब उन्होंने (यानी उनके रहने वालों ने) शरारत की तो हमने उनको हलाक कर दिया, और हमने उनके हलाक होने के लिये वक़्त तय किया था (इसी तरह इन मौजूदा लोगों के लिये भी वक़्त निर्धारित है)।

मआरिफ़ व मसाईल

इब्लीस के औलाद और नस्ल भी है

'व ज़ुर्रिय्य-तहू'। इस लफ़्ज़ से समझा जाता है कि शैतान के औलाद व नस्ल है, और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इस जगह नस्ल व औलाद से मुराद मददगार व सहयोगी हैं, यह ज़रूरी नहीं कि शैतान की वास्तविक औलाद भी हो, मगर एक सही हदीस जिसको हुमैदी ने 'किताबुल् जमा बैनस्सहीहैन' में हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है उसमें है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको यह नसीहत फ़रमाई कि तुम उन लोगों में से न बनो जो सबसे पहले बाज़ार में दाख़िल हो जाते हैं या वे लोग जो सबसे आख़िर में बाज़ार से निकलते हैं, क्योंकि बाज़ार ऐसी जगह है जहाँ शैतान ने अण्डे-बच्चे दे रखे हैं। इससे मालूम होता है कि शैतान की नस्ल व औलाद उसके अण्डों से फैलती है। इमाम क़ुर्तुबी ने यह रिवायत नक़ल

करने के बाद फ़रमाया कि शैतान के मददगार और लश्कर होना तो निश्चित दलीलों से साबित है पीठ की औलाद होने के मुताल्लिक भी एक सही हदीस ऊपर गुज़र चुकी है। वल्लाहु आलम

وَكَانَ الْإِنْسَانُ أَكْثَرَ شَيْءٍ جَدَلًا

सारी मख़्लूक़ात में सबसे ज़्यादा झगड़ालू इनसान वाक़े हुआ है, इसके सुबूत में एक हदीस हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन एक शख़्स काफ़िरों में से पेश किया जायेगा उससे सवाल होगा कि हमने जो रसूल भेजा था उसके बारे में तुम्हारा क्या अ़मल रहा? वह कहेगा कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं तो आप पर भी ईमान लाया आपके रसूल पर भी, और अ़मल में उनके हुक्म की तामील की। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि यह तेरा आमाल नामा सामने रखा है इसमें तो यह कुछ भी नहीं। यह शख़्स कहेगा कि मैं तो इस आमाल नामे को नहीं मानता। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि ये हमारे फ़रिश्ते जो तुम्हारी निगरानी करते थे वे तेरे ख़िलाफ़ गवाही देते हैं। यह कहेगा कि मैं इनकी गवाही को भी नहीं मानता और न इनको पहचानता हूँ न मैंने इनको अपने अ़मल के वक़्त देखा है। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे तो यह लौह-ए-महफ़ूज़ सामने है इसमें भी तेरा यही हाल लिखा है। वह कहेगा कि मेरे परवर्दिगार! आपने मुझे ज़ुल्म से पनाह दी है या नहीं? अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे बेशक ज़ुल्म से तू हमारी पनाह में है। तो अब वह कहेगा कि मेरे परवर्दिगार मैं ऐसी ग़ैबी गवाहियों को कैसे मानूँ जो मेरी देखी भाली नहीं, मैं तो ऐसी गवाही को मान सकता हूँ जो मेरे नफ़्स की तरफ़ से हो। उस वक़्त उसके मुँह पर मुहर लगा दी जायेगी और उसके हाथ-पाँव उसके कुफ़्र व शिर्क की गवाही देंगे, उसके बाद उसको आज़ाद कर दिया जायेगा और जहन्नम में डाल दिया जायेगा। (इस रिवायत का मज़मून सही मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है। क़ुर्तुबी)

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِفَتَاهُ لَا أَبْرَحُ حَتَّىٰ أَبْلُغَ مَجْمَعَ الْبَحْرَيْنِ أَوْ أَمْضِيَ حُقُبًا ۝ فَلَمَّا بَلَغَا مَجْمَعَ بَيْنِهِمَا نَسِيَا حُوتَهُمَا فَاتَّخَذَ سَبِيلَهُ فِي الْبَحْرِ سَرَبًا ۝ فَلَمَّا جَاوَزَا قَالَ لِفَتَاهُ آتِنَا غَدَاءَنَا لَقَدْ لَقِينَا مِنْ سَفَرِنَا هَٰذَا نَصَبًا ۝ قَالَ أَرَأَيْتَ إِذْ أَوَيْنَا إِلَى الصَّخْرَةِ فَإِنِّي نَسِيتُ الْحُوتَ وَمَا أَنْسَانِيهُ إِلَّا الشَّيْطَانُ أَنْ أَذْكُرَهُ ۚ وَاتَّخَذَ سَبِيلَهُ فِي الْبَحْرِ عَجَبًا ۝ قَالَ ذَٰلِكَ مَا كُنَّا نَبْغِ ۚ فَارْتَدَّا عَلَىٰ آثَارِهِمَا قَصَصًا ۝ فَوَجَدَا عَبْدًا مِنْ عِبَادِنَا آتَيْنَاهُ رَحْمَةً مِنْ عِنْدِنَا وَعَلَّمْنَاهُ مِنْ لَدُنَّا عِلْمًا ۝ قَالَ لَهُ مُوسَىٰ هَلْ أَتَّبِعُكَ عَلَىٰ أَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا ۝ قَالَ إِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا ۝ وَكَيْفَ تَصْبِرُ عَلَىٰ مَا لَمْ تُحِطْ بِهِ خُبْرًا ۝ قَالَ سَتَجِدُنِي إِنْ شَاءَ اللَّهُ صَابِرًا وَلَا أَعْصِي لَكَ أَمْرًا ۝ قَالَ فَإِنِ اتَّبَعْتَنِي فَلَا تَسْأَلْنِي عَنْ شَيْءٍ حَتَّىٰ أُحْدِثَ لَكَ مِنْهُ ذِكْرًا ۝

व इज़् क़ा-ल मूसा लि-फ़ताहु ला अब्रहु हत्ता अब्लु-ग़ मज्मअ़ल् बह्रैनि औ अम्ज़ि-य हुक़ुबा (60) फ़-लम्मा ब-लग़ा मज्म-अ़ बैनिहिमा नसिया हूतहुमा फ़त्त-ख़-ज़ सबीलहू फ़िल्बह्रि स-रबा (61) फ़-लम्मा जा-वज़ा क़ा-ल लि-फ़ताहु आतिना ग़दा-अना, ल-क़द् लक़ीना मिन् स-फ़रिना हाज़ा न-सबा (62) क़ा-ल अ-रऐ-त इज़् अवैना इलस्सख़्रति फ़-इन्नी नसीतुल्हू-त व मा अन्सानीहु इल्लश्शैतानु अन् अज़्कु-रहू वत्त-ख़-ज़ सबी-लहू फ़िल्बह्रि अ़-जबा (63) क़ा-ल ज़ालि-क मा कुन्ना नब्ग़ि फ़र्तद्दा अ़ला आसारिहिमा क़-ससा (64) फ़-व-जदा अ़ब्दम्-मिन् अ़िबादिना आतैनाहु रह्म-तम् मिन् अ़िन्दिना व अ़ल्लम्नाहु मिल्लदुन्ना अ़िल्मा (65) क़ा-ल लहू मूसा हल् अत्तबिअ़ु-क अ़ला अन् तुअ़ल्लि-मनि मिम्मा अ़ुल्लिम्-त रुश्दा (66) क़ा-ल इन्न-क लन् तस्तती-अ़ मअ़ि-य सब्रा (67) व कै-फ़ तस्बिरु अ़ला मा लम् तुहित् बिही ख़ुब्रा (68) क़ा-ल

और जब कहा मूसा ने अपने जवान को मैं न हटूँगा जब तक पहुँच जाऊँ जहाँ मिलते हैं दो दरिया या चला जाऊँ करनों "लम्बे समय तक"। (60) फिर जब पहुँचे दोनों दरिया के मिलाप तक भूल गये अपनी मछली फिर उसने अपनी राह कर ली दरिया में सुरंग बनाकर। (61) फिर जब आगे चले कहा मूसा ने अपने जवान को ला हमारे पास हमारा खाना हमने पाई अपने इस सफ़र में तकलीफ़। (62) बोला वह देखा तूने जब हमने जगह पकड़ी उस पत्थर के पास सो मैं भूल गया मछली, और यह मुझको भुला दिया शैतान ही ने कि उसका ज़िक्र करूँ, और उसने कर लिया अपना रस्ता दरिया में अ़जीब तरह। (63) कहा यही है जो हम चाहते थे, फिर उल्टे फिरे अपने पैर पहचानते। (64) फिर पाया एक बन्दा हमारे बन्दों में का जिस को दी थी हमने रहमत अपने पास से और सिखलाया था अपने पास से एक इल्म। (65) कहा उसको मूसा ने कहे तू तेरे साथ रहूँ इस बात पर कि मुझको सिखला दे कुछ जो तुझको सिखलाई है भली राह। (66) बोला तू न ठहर सकेगा मेरे साथ। (67) और क्योंकर ठहरेगा देखकर ऐसी चीज़ को कि तेरे क़ाबू में नहीं उसका समझना। (68) कहा

स-तजिदुनी इन्शा-अल्लाहु साबिरंव्-व ला अअ्सी ल-क अम्रा (69) का-ल फ़-इनित्त-बअ्तनी फ़ला तस्अल्नी अ़न् शैइन् हत्ता उह्दि-स ल-क मिन्हु ज़िक्रा (70) ✿	तू पायेगा अगर अल्लाह ने चाहा मुझको ठहरने वाला और न टालूँगा तेरा कोई हुक्म। (69) बोला फिर अगर मेरे साथ रहना है तो मत पूछियो मुझसे कोई चीज़ जब तक मैं शुरू न कर दूँ तेरे आगे उसका ज़िक्र। (70) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वह वक़्त याद करो जबकि मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने ख़ादिम से (जिनका नाम बुख़ारी की रिवायत के मुताबिक़ यूशा था) फ़रमाया कि मैं (इस सफ़र में) बराबर चला जाऊँगा यहाँ तक कि उस मौक़े पर पहुँच जाऊँ जहाँ दो दरिया आपस में मिले हैं, या यूँ ही लम्बे अ़र्से तक चलता रहूँगा (और वजह इस सफ़र की यह हुई थी कि एक बार हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल में बयान फ़रमाया तो किसी ने पूछा कि इस वक़्त आदमियों में सबसे बड़ा आ़लिम कौन शख़्स है? आपने फ़रमाया ''मैं'' मतलब यह था कि उन उलूम में कि जिनको अल्लाह की निकटता हासिल करने में दख़ल है मेरे बराबर कोई नहीं, और यह फ़रमाना सही था इसलिये आप बड़े ऊँचे रुतबे के नबी थे, आपके बराबर दूसरे को यह इल्म नहीं था लेकिन ज़ाहिर में लफ़्ज़ आ़म था इसलिये अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर हुआ कि आपको बात करने में एहतियात की तालीम दी जाये। ग़र्ज़ कि इरशाद हुआ कि एक हमारा बन्दा दो दरियाओं के संगम में तुम से ज़्यादा इल्म रखता है। मतलब यह था कि कुछ उलूम में वह ज़्यादा है अगरचे उन उलूम को अल्लाह तआ़ला की निकटता में दख़ल न हो जैसा कि अभी आगे वाज़ेह होगा लेकिन इस बिना पर जवाब में मुतलक़ तौर पर तो अपने को सबसे बड़ा आ़लिम न कहना चाहिये था, ग़र्ज़ कि मूसा अ़लैहिस्सलाम उनसे मिलने के इच्छुक हुए और पूछा कि उन तक पहुँचने की क्या सूरत है? इरशाद हुआ कि एक बेजान मछली अपने साथ लेकर सफ़र करो जहाँ वह मछली गुम हो जाये वह शख़्स वहीं है, उस वक़्त मूसा अ़लैहिस्सलाम ने यूशा अ़लैहिस्सलाम को साथ लिया और यह बात फ़रमाई)।

पस जब (चलते-चलते) दोनों दरियाओं के जमा होने के स्थान पर पहुँचे (वहाँ किसी पत्थर से लगकर सो गये और वह मछली अल्लाह के हुक्म से ज़िन्दा होकर दरिया में जा पड़ी। यूशा अ़लैहिस्सलाम जागे तो मछली को न पाया, इरादा था कि मूसा अ़लैहिस्सलाम जागेंगे तो इसका ज़िक्र करूँगा मगर उनको बिल्कुल याद न रहा, शायद बीवी-बच्चों और वतन वग़ैरह के ख़्यालात का हुजूम हुआ होगा जो ज़िक्र करना भूल गये वरना ऐसी अ़जीब बात का भूल जाना कम होता है, लेकिन जो शख़्स हर वक़्त मोजिज़े देखता हो उसके ज़ेहन से किसी मामूली दर्जे की बात का निकल जाना किसी ख़्याल के ग़लबे से अ़जीब नहीं, और मूसा अ़लैहिस्सलाम को भी पूछने का

ख़्याल न रहा, इस तरह से) उस अपनी मछली को दोनों भूल गये और मछली ने (उससे पहले ज़िन्दा होकर) दरिया में अपनी राह ली और चल दी। फिर जब दोनों (वहाँ से) आगे बढ़ गये (और दूर निकल गये) तो मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने ख़ादिम से फ़रमाया कि हमारा नाश्ता तो लाओ, हमको तो इस सफ़र (यानी आजकी मन्ज़िल) में बड़ी तकलीफ़ पहुँची (और इससे पहले की मन्ज़िलों में नहीं थके थे जिसकी वजह ज़ाहिरी तौर पर अपनी मन्ज़िल से आगे बढ़ आना था)। ख़ादिम ने कहा कि लीजिए देखिए (अ़जीब बात हुई) जब हम उस पत्थर के क़रीब ठहरे थे (और सो गये थे उस वक़्त उस मछली का एक क़िस्सा हुआ और मेरा इरादा आप से ज़िक्र करने का हुआ लेकिन मैं किसी दूसरे ध्यान में लग गया) सो मैं उस मछली (के ज़िक्र करने) को भूल गया और मुझको शैतान ही ने भुला दिया कि मैं उसका ज़िक्र करता, और (वह क़िस्सा यह हुआ कि) उस मछली ने (ज़िन्दा होने के बाद) दरिया में अ़जीब अन्दाज़ से अपनी राह ली (एक अ़जीब अन्दाज़ तो ख़ुद ज़िन्दा हो जाना है, दूसरे अ़जीब अन्दाज़ यह कि वह मछली दरिया में जहाँ को गुज़री थी वहाँ का पानी एक करिश्मे के तौर पर उसी तरह सुरंग के तौर पर हो गया था ग़ालिबन फिर मिल गया होगा)।

मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (यह हिकायत सुनकर) फ़रमाया— यही वह मौक़ा है जिसकी हमको तलाश थी (वहाँ ही लौटना चाहिये), सो दोनों अपने क़दमों के निशान देखते हुए उल्टे लौटे (ग़ालिबन वह रास्ता सड़क का न होगा इसलिये निशान देखने पड़े)। सो (वहाँ पहुँचकर) उन्होंने हमारे बन्दों में से एक बन्दे (यानी ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम) को पाया, जिनको हमने अपनी ख़ास रहमत (यानी मक़बूलियत) दी थी (मक़बूलियत के मायने में विलायत और नुबुव्वत दोनों की संभावना और गुंजाईश है) और हमने उनको अपने पास से (यानी कोशिश व मेहनत के माध्यमों के बग़ैर) एक ख़ास तरीक़े का इल्म सिखाया था (मुराद इससे कायनात के राज़ों का इल्म है जैसा कि आगे के वाक़िआत से मालूम होगा, और इस इल्म को अल्लाह की निकटता के हासिल होने में कुछ दख़ल नहीं, जिस इल्म को अल्लाह की निकटता में दख़ल है वह अल्लाह के भेदों का इल्म है जिसमें मूसा अ़लैहिस्सलाम बढ़े हुए थे। ग़र्ज़ कि) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (उनको सलाम किया और उनसे) फ़रमाया कि क्या मैं आपके साथ रह सकता हूँ (यानी आप मुझे अपने साथ रहने की इजाज़त दीजिये) इस शर्त से कि जो मुफ़ीद इल्म आपको (अल्लाह की तरफ़ से) सिखाया गया है उसमें से आप मुझको भी सिखला दें। उन बुज़ुर्ग ने जवाब दिया, आप से मेरे साथ रहकर (मेरे कामों पर) सब्र न हो सकेगा (यानी आप मुझ पर रोक-टोक करेंगे और शिक्षक पर शिक्षा के संबन्ध शिक्षा ग्रहण करने वाले की रोक-टोक करने से साथ रह पाना मुश्किल है)। और (भला) ऐसे मामलों पर (रोक-टोक करने से) आप कैसे सब्र करेंगे जो आपकी जानकारी से बाहर हैं (यानी ज़ाहिर में वो मामले मक़सद व कारण मालूम न होने की वजह से ख़िलाफ़े शरीअ़त नज़र आयेंगे और आप ख़िलाफ़े शरीअ़त बातों पर ख़ामोश न रह सकेंगे)।

मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि (नहीं!) इन्शा-अल्लाह आप मुझको सब्र करने वाला (यानी बरदाश्त करने वाला) पाएँगे, और मैं किसी बात में आपके हुक्म के ख़िलाफ़ न करूँगा

(यानी मसलन अगर रोक-टोक से मना कर देंगे तो मैं रोक-टोक न करूँगा, इसी तरह और किसी बात में भी आपके हुक्म के ख़िलाफ़ न करूँगा)। उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि (अच्छा) तो अगर आप मेरे साथ रहना चाहते हैं तो (इतना ख़्याल रहे कि) मुझसे किसी बात के बारे में कुछ पूछना नहीं जब तक कि उसके बारे में मैं ख़ुद ज़िक्र शुरू न कर दूँ।

मआरिफ़ व मसाईल

وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِفَتٰىهُ

इस वाक़िए में मूसा से मुराद मशहूर व परिचित पैग़म्बर मूसा बिन इमरान अ़लैहिस्सलाम हैं, नौफ़ बकाली ने जो दूसरे किसी मूसा की तरफ़ इस वाक़िए को मन्सूब किया है सही बुख़ारी में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तरफ़ से इस पर सख़्त रद्द मन्क़ूल है।

और फ़ता के लफ़्ज़ी मायने नौजवान के हैं। जब यह लफ़्ज़ किसी ख़ास शख़्स की तरफ़ मन्सूब करके इस्तेमाल किया जाता है तो उसका ख़ादिम मुराद होता है, क्योंकि ख़िदमतगार अक्सर ताक़तवर जवान देखकर रखा जाता है जो हर काम अन्जाम दे सके, और नौकर व ख़ादिम को जो उनके नाम से पुकारना इस्लाम का एक बेहतरीन अदब है कि नौकरों को भी गुलाम या नौकर कहकर ख़िताब न करो बल्कि अच्छे लक़ब से पुकारो, इस जगह फ़ता की निस्बत मूसा अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ है, इसलिये मुराद है हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के ख़ादिम और हदीस की रिवायतों में है कि यह ख़ादिम यूशा बिन नून इब्ने अफ़राईम बिन यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम थे। कुछ रिवायतों में है कि यह मूसा अ़लैहिस्सलाम के भानजे थे मगर इसमें कोई निश्चित फ़ैसला नहीं किया जा सकता, सही रिवायतों से उनका नाम यूशा बिन नून होना साबित है, बाक़ी सिफ़ात व हालात का सुबूत नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मजमउल्-बहरैन के लफ़्ज़ी मायने हर वह जगह है जहाँ दो दरिया मिलते हैं, और यह ज़ाहिर है कि ऐसे मौक़े दुनिया में बेशुमार हैं। इस जगह मजमउल्-बहरैन से कौनसी जगह मुराद है, चूँकि क़ुरआन व हदीस में इसको निर्धारित तौर पर नहीं बतलाया इसलिये आसार व अन्दाज़ों के एतिबार से मुफ़स्सिरीन के अक़वाल इसमें भिन्न और अलग-अलग हैं, क़तादा रह. ने फ़रमाया कि फ़ारस व रोम के दरियाओं का संगम मुराद है, इब्ने अ़तीया रह. ने आज़र बाइजान के क़रीब एक जगह को कहा है, कुछ हज़रात ने दरिया-ए-उर्दुन और दरिया-ए-क़ुल्ज़ुम के मिलने की जगह (संगम) बतलाई है, कुछ हज़रात ने कहा यह तनजा के मक़ाम में स्थित है, उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि यह अफ़्रीक़ा में है, सुद्दी ने आरमीनिया में बतलाया है, कुछ ने दरिया-ए-उन्दुलुस जहाँ दरिया-ए-मुहीत से मिलता है वह स्थान बतलाया है। वल्लाहु आलम

बहरहाल! इतनी बात ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को यह मक़ाम मुतैयन करके बतला दिया था जिसकी तरफ़ उनका सफ़र जारी हुआ है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हज़रत मूसा और हज़रत ख़ज़िर अलैहिमस्सलाम का क़िस्सा

इस वाक़िए की तफ़सील सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इस तरह आई है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक मर्तबा हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम अपनी क़ौम बनी इस्राईल में ख़ुतबा देने (बयान करने) के लिये खड़े हुए तो लोगों ने आप से यह सवाल किया कि तमाम इनसानों में सबसे ज़्यादा इल्म वाला कौन है? (हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के इल्म में अपने से ज़्यादा इल्म वाला कोई था नहीं इसलिये) फ़रमाया कि "मैं सबसे ज़्यादा इल्म वाला हूँ।" (अल्लाह तआ़ला अपनी बारगाह के ख़ास बन्दों अम्बिया को ख़ास तरबियत देते हैं इसलिये यह बात पसन्द न आई बल्कि अदब का तक़ाज़ा तो यह था कि इसको अल्लाह के इल्म के हवाले करते, यानी यह कह देते कि अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं कि सारी मख़्लूक़ में सबसे ज़्यादा इल्म रखने वाला कौन है)।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के इस जवाब पर अल्लाह तआ़ला की नाराज़गी और अप्रसन्नता का इज़्हार हुआ, मूसा अ़लैहिस्सलाम पर वही आई कि हमारा एक बन्दा मजमउल्-बहरैन (दो दरियाओं के संगम) पर है वह आप से ज़्यादा इल्म रखने वाला है। (मूसा अ़लैहिस्सलाम को जब यह मालूम हुआ तो अल्लाह तआ़ला से दरख़्वास्त की कि जब वह मुझसे ज़्यादा इल्म रखने वाले हैं तो मुझे उनसे लाभ उठाने के लिये सफ़र करना चाहिये) इसलिये अ़र्ज़ किया या अल्लाह! मुझे उनका पता निशान बतलाया जाये, अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि एक मछली अपनी ज़म्बील में रख लो और मजमउल्-बहरैन (दो दरियाओं के संगम) की तरफ़ सफ़र करो जिस जगह पहुँचकर यह मछली गुम हो जाये बस वही जगह हमारे उस बन्दे के मिलने की है।

मूसा अ़लैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ एक मछली ज़म्बील में रख ली और चल दिये, उनके साथ उनके ख़ादिम यूशा बिन नून भी थे। सफ़र के दौरान एक पत्थर के पास पहुँचकर उस पर सर रखकर लेट गये, यहाँ अचानक यह मछली हरकत में आ गई और ज़म्बील से निकल कर दरिया में चली गई और (मछली के ज़िन्दा होकर दरिया में चले जाने के साथ एक दूसरा मोजिज़ा यह हुआ कि) जिस रास्ते से मछली दरिया में गई अल्लाह तआ़ला ने वहाँ पानी का चलना रोक दिया और उस जगह पानी के अन्दर एक सुरंग जैसी हो गई (यूशा बिन नून इस अ़जीब वाक़िए को देख रहे थे, मूसा अ़लैहिस्सलाम सो गये थे) जब वह जागे तो यूशा बिन नून मछली का यह अ़जीब मामला हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से बतलाना भूल गये और उस जगह से फिर रवाना हो गये। पूरे एक दिन एक रात का मज़ीद सफ़र किया, जब दूसरे दिन की सुबह हो गई तो मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपने साथी से कहा कि हमारा नाश्ता लाओ क्योंकि इस सफ़र से काफ़ी थकान हो चुकी है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि (अल्लाह का हुक्म) मूसा अ़लैहिस्सलाम को इससे पहले थकान भी महसूस नहीं हुई यहाँ तक कि जिस जगह पहुँचना था उससे आगे निकल गये। जब मूसा अ़लैहिस्सलाम ने नाश्ता तलब किया तो यूशा बिन नून को मछली का वाक़िआ़ याद आया और अपने भूल जाने का उज़्र किया कि शैतान ने मुझे

भुला दिया था कि उस वक़्त आपको वाक़िए की इत्तिला न की और फिर बतलाया कि वह मुर्दा मछली तो ज़िन्दा होकर दरिया में एक अ़जीब तरीक़े से चली गई। इस पर मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि वही तो हमारा मक़सद था (यानी मन्ज़िले मक़सूद वही थी जहाँ मछली ज़िन्दा होकर गुम हो जाये)।

चुनाँचे उसी वक़्त वापस रवाना हो गये और ठीक उसी रास्ते से लौटे जिस पर पहले चले थे ताकि वह जगह मिल जाये। अब जो यहाँ उस पत्थर के पास पहुँचे तो देखा कि उस पत्थर के पास एक शख़्स सर से पाँव तक चादर ताने हुए लेटा है। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने (उसी हालत में) सलाम किया तो ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि इस (ग़ैर-आबाद) जंगल में सलाम कहाँ से आ गया? इस पर मूसा अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि मैं मूसा हूँ, तो हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने सवाल किया कि मूसा बनी इस्राईल? आपने जवाब दिया कि हाँ मैं मूसा बनी इस्राईल हूँ। इसलिये आया हूँ कि आप मुझे वह ख़ास इल्म सिखला दें जो अल्लाह ने आपको दिया है।

ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि आप मेरे साथ सब्र नहीं कर सकेंगे, ऐ मूसा! मेरे पास एक इल्म है जो अल्लाह ने मुझे दिया है वह आपके पास नहीं, और एक इल्म आपको दिया है जो मैं नहीं जानता। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि इन्शा-अल्लाह तआ़ला आप मुझे सब्र करने वाला पायेंगे और मैं किसी काम में आपकी मुख़ालफ़त नहीं करूँगा।

हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि अगर आप मेरे साथ चलने ही को तैयार हैं तो किसी मामले के मुताल्लिक़ मुझसे कुछ पूछना नहीं जब तक कि मैं ख़ुद आपको उसकी हक़ीक़त न बतलाऊँ।

यह कहकर दोनों हज़रात दरिया के किनारे-किनारे चलने लगे। इत्तिफ़ाक़ से एक कश्ती आ गई तो कश्ती वालों से कश्ती पर सवार होने की बातचीत की, उन लोगों ने हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम को पहचान लिया और इन सब लोगों को बग़ैर किसी किराये और उजरत के कश्ती में सवार कर लिया। कश्ती में सवार होते ही ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने एक कुल्हाड़ी के ज़रिये कश्ती का एक तख़्ता निकाल डाला। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम (से रहा न गया) कहने लगे कि इन लोगों ने बग़ैर किसी मुआ़वज़े के हमें कश्ती में सवार कर लिया, आपने इसका यह बदला दिया कि इनकी कश्ती तोड़ डाली ताकि ये सब ग़र्क़ हो जायें, यह तो आपने बहुत बुरा काम किया। ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि मैंने आप से पहले ही कहा था कि आप मेरे साथ सब्र न कर सकेंगे। इस पर मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उ़ज़्र किया कि मैं अपना वायदा भूल गया था, इस भूल पर आप पकड़ न करें।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह वाक़िआ़ नक़ल करके फ़रमाया कि मूसा अ़लैहिस्सलाम का पहला एतिराज़ ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम पर भूल से हुआ था और दूसरा बतौर शर्त के और तीसरा इरादे से (इसी दौरान में) एक चिड़िया आई और कश्ती के किनारे पर बैठकर उसने दरिया में से एक चोंच भर पानी लिया। ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने मूसा अ़लैहिस्सलाम

को ख़िताब करके कहा कि मेरा इल्म और आपका इल्म दोनों मिलकर भी अल्लाह के इल्म के मुक़ाबले में इतनी हैसियत भी नहीं रखते जितनी इस चिड़िया की चोंच के पानी को इस समन्दर के साथ है।

फिर कश्ती से उतरकर दरिया के किनारे चलने लगे, अचानक ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने एक लड़के को देखा कि दूसरे लड़कों में खेल रहा है, ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने अपने हाथ से उस लड़के का सर उसके बदन से अलग कर दिया, लड़का मर गया। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि आपने एक मासूम जान को बग़ैर किसी जुर्म के क़त्ल कर दिया यह तो आपने बड़ा ही गुनाह किया। ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि क्या मैंने पहले ही नहीं कहा था कि आप मेरे साथ सब्र न कर सकेंगे, मूसा अ़लैहिस्सलाम ने देखा कि यह मामला पहले मामले से ज़्यादा सख़्त है इसलिये कहा कि अगर इसके बाद मैंने आप से कोई बात पूछी तो आप मुझे अपने साथ से अलग कर दीजिये, आप मेरी तरफ़ से उज़्र की हद पर पहुँच चुके हैं।

इसके बाद फिर चलना शुरू किया यहाँ तक कि एक गाँव पर गुज़र हुआ, इन्होंने गाँव वालों से दरख़्वास्त की कि हमें अपने यहाँ मेहमान रख लीजिये, उन्होंने इनकार कर दिया। उस बस्ती में इन लोगों ने एक दीवार को देखा कि गिरने वाली है, हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने उसको अपने हाथ से सीधा खड़ा कर दिया। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने ताज्जुब से कहा कि हमने इन लोगों से मेहमानी चाही तो इन्होंने इनकार कर दिया, आपने इतना बड़ा काम कर दिया अगर आप चाहते तो इस काम की उजरत इनसे ले सकते थे। ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कहा कि:

هٰذَا فِرَاقُ بَيْنِيْ وَبَيْنِكَ

(यानी अब शर्त पूरी हो चुकी इसलिये हमारी और आपकी जुदाई का वक़्त आ गया है)

इसके बाद ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने तीनों वाक़िआ़त की हक़ीक़त हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को बतलाकर कहा:

ذٰلِكَ تَاْوِيْلُ مَا لَمْ تَسْطِعْ عَّلَيْهِ صَبْرًا ○

"यानी यह है हक़ीक़त उन वाक़िआ़त की जिन पर आप से सब्र न हो सका।"

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह पूरा वाक़िआ़ ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया कि जी चाहता है कि मूसा अ़लैहिस्सलाम और कुछ सब्र कर लेते तो इन दोनों की और कुछ ख़बरें मालूम हो जातीं।

सही बुख़ारी व मुस्लिम में यह लम्बी हदीस इस तरह आई है जिसमें हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का मूसा बनी इस्राईल और नौजवान साथी का नाम यूशा बिन नून होना और जिस बन्दे की तरफ़ मूसा अ़लैहिस्सलाम को मजमउल्-बहरैन की तरफ़ भेजा गया था उनका नाम ख़ज़िर होना स्पष्ट तौर पर बयान हुआ है, आगे क़ुरआन की आयतों के साथ इनके मफ़्हूम और तफ़सीर को देखिये।

सफ़र के कुछ आदाब और पैग़म्बराना हिम्मत व इरादे का एक नमूना

لَآ اَبْرَحُ حَتّٰٓى اَبْلُغَ مَجْمَعَ الْبَحْرَيْنِ اَوْ اَمْضِىَ حُقُبًا○

यह जुमला हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपने सफ़र के साथी यूशा बिन नून से कहा जिसका मतलब अपने सफ़र का रुख़ और मन्ज़िले मक़सूद साथी को बताना था। इसमें भी अच्छी बात यह है कि सफ़र की ज़रूरी बातों से अपने साथी और ख़ादिम को भी अवगत करा देना चाहिये, घमण्डी लोग अपने ख़ादिमों और नौकरों को न क़ाबिले ख़िताब समझते हैं न अपने सफ़र के बारे में उनको कुछ बताते हैं।

हुक़ुबन, हुक़्बतु की जमा (बहुवचन) है, लुग़त वालों ने कहा कि हुक़्बा अस्सी साल की मुद्दत है, कुछ ने इससे ज़्यादा को हुक़्बा क़रार दिया। सही यह है कि लम्बे ज़माने को कहा जाता है इसकी कोई मुतैयन हद नहीं। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपने साथी को यह बतला दिया कि मुझे मजमउल्-बहरैन (दो दरियाओं के संगम) की उस जगह पर पहुँचना है जहाँ के लिये अल्लाह तआ़ला का हुक्म हुआ है और इरादा यह है कि कितना ही लम्बा समय सफ़र में गुज़र जाये जब तक उस मन्ज़िले मक़सूद पर न पहुँचूँ सफ़र जारी रहेगा, अल्लाह तआ़ला के हुक्म की तामील में पैग़म्बराना हिम्मत व इरादे ऐसे ही हुआ करते हैं।

हज़रत मूसा का हज़रत ख़ज़िर से अफ़ज़ल होना

मूसा अ़लैहिस्सलाम की ख़ास तरबियत और उनके मोजिज़े

فَلَمَّا بَلَغَا مَجْمَعَ بَيْنِهِمَا نَسِيَا حُوْتَهُمَا فَاتَّخَذَ سَبِيْلَهٗ فِى الْبَحْرِ سَرَبًا○

क़ुरआन व सुन्नत की वज़ाहतों से स्पष्ट है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की जमाअ़त में भी एक ख़ास विशेषता हासिल है, अल्लाह तआ़ला के साथ कलाम करने का ख़ास सम्मान उनकी विशेष फ़ज़ीलत है, और हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की तो नुबुव्वत में भी मतभेद है, और नुबुव्वत को तस्लीम भी किया जाये तो रसूल होने का मर्तबा हासिल नहीं, न उनकी कोई किताब है न कोई ख़ास उम्मत, इसलिये बहरहाल मूसा अ़लैहिस्सलाम ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से बहुत ज़्यादा अफ़ज़ल हैं, लेकिन हक़ तआ़ला अपने ख़ास बन्दों की मामूली-सी कमी और कोताही की इस्लाह फ़रमाते हैं, उनकी तरबियत के लिये मामूली-सी कोताही पर भी सख़्त नाराज़गी का इज़हार होता है, उसकी तलाफ़ी व भरपाई भी उनसे उसी पैमाने पर कराई जाती है। यह सारा क़िस्सा इसी ख़ास अन्दाज़े तरबियत का प्रतीक है। उनकी ज़बान से यह कलिमा निकल गया था कि मैं सबसे ज़्यादा इल्म वाला हूँ, हक़ तआ़ला को यह

पसन्द न आया तो उनकी तंबीह के लिये अपने एक ऐसे बन्दे का उनको पता दिया गया जिनके पास अल्लाह का दिया हुआ एक ख़ास इल्म था, जो मूसा अ़लैहिस्सलाम के पास नहीं था, अगरचे मूसा अ़लैहिस्सलाम का इल्म उनके इल्म से दर्जे में बहुत बढ़ा हुआ था मगर बहरहाल वह मूसा अ़लैहिस्सलाम को हासिल न था। इधर मूसा अ़लैहिस्सलाम को हक़ तआ़ला ने इल्म हासिल करने का ऐसा जज़्बा अ़ता फ़रमाया था कि जब यह मालूम हुआ कि कहीं और भी इल्म है जो मुझे हासिल नहीं तो उसके हासिल करने के लिये तालिब-इल्म की हैसियत से सफ़र के लिये तैयार हो गये और हक़ तआ़ला ही से उस बन्दे (ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम) का पता पूछा। अब यहाँ यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि अगर अल्लाह तआ़ला चाहते तो ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से मूसा अ़लैहिस्सलाम की मुलाक़ात यहीं आसानी से करा देते, या मूसा अ़लैहिस्सलाम ही को तालिबे-इल्म बनाकर सफ़र कराना था तो पता साफ़ बता दिया जाता जहाँ पहुँचने में परेशानी न होती, मगर हुआ यह कि पता ऐसा अस्पष्ट बतलाया गया कि जिस जगह पहुँचकर मरी हुई मछली ज़िन्दा होकर गुम हो जाये उस जगह वह हमारा बन्दा मिलेगा।

सही बुख़ारी की हदीस से उस मछली के मुताल्लिक़ इतना साबित हुआ कि हक़ तआ़ला ही की तरफ़ से यह हुक्म हुआ था कि एक मछली अपनी ज़म्बील में रख लें, इससे ज़्यादा कुछ मालूम नहीं कि यह मछली खाने के लिये साथ रखने का हुक्म हुआ था या खाने से अलग, दोनों बातें हो सकती हैं, इसी लिये मुफ़स्सिरीन में से कुछ हज़रात ने कहा कि यह भुनी हुई मछली खाने के लिये रखी गई थी और उस सफ़र के दोनों साथी सफ़र के दौरान उसमें से खाते भी रहे, उसका आधा हिस्सा खाया जा चुका था उसके बाद मोजिज़े के तौर पर यह भुनी हुई और आधी खाई हुई मछली ज़िन्दा होकर दरिया में चली गई।

इब्ने अ़तीया और कुछ दूसरे लोगों ने यह भी बयान किया कि यह मछली मोजिज़े के तौर पर फिर दुनिया में बाक़ी भी रही और बहुत देखने वालों ने देखा भी कि उसकी सिर्फ़ एक करवट है दूसरी खाई हुई है। इब्ने अ़तीया ने ख़ुद भी अपना देखना बयान किया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने कहा कि नाश्ते खाने के अ़लावा एक अलग ज़म्बील में मछली रखने का हुक्म हुआ था उसके मुताबिक़ रख ली गई थी, इसमें भी इतनी बात तो मुतैयन है कि मछली मुर्दा थी, ज़िन्दा होकर दरिया में चला जाना एक मोजिज़ा ही था।

बहरहाल! हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम का पता ऐसा अस्पष्ट दिया गया कि आसानी से जगह मुतैयन न हो, ज़ाहिर यह है कि यह भी हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का इम्तिहान ही था, इस पर और ज़्यादा इम्तिहान की सूरत यह पैदा की गई कि जब ऐन मौक़े पर ये लोग पहुँच गये तो मछली को भूल गये। क़ुरआन की आयत में यह भूल हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथी दोनों की तरफ़ मन्सूब की गई है 'नसिया हूतहुमा', लेकिन बुख़ारी की हदीस से जो क़िस्सा साबित हुआ उससे मालूम होता है कि जिस वक़्त मछली के ज़िन्दा होकर दरिया में जाने का वक़्त आया तो मूसा अ़लैहिस्सलाम सोये हुए थे सिर्फ़ यूशा बिन नून ने यह अ़जीब वाक़िआ देखा, और इरादा किया था कि मूसा अ़लैहिस्सलाम जाग जायें तो उनको बतलाऊँगा, मगर जागने

के बाद अल्लाह तआ़ला ने उन पर भूल मुसल्लत कर दी और भूल गये तो यहाँ दोनों की तरफ़ भूलने की निस्बत ऐसी हो गई जैसे क़ुरआन में:

يَخْرُجُ مِنْهُمَا اللُّؤْلُؤُ وَالْمَرْجَانُ

(यानी सूरः रहमान) में मीठे और खारी दोनों दरियाओं से मोती और मरजान निकलने का बयान आया है, हालाँकि मोती सिर्फ़ खारी और नमकीले दरिया से निकलते हैं, मगर मुहावरे में ऐसा कहना और लिखना एक आ़म बात है। और यह भी हो सकता है कि उस जगह से आगे सफ़र करने के वक़्त तो मछली को साथ लेना दोनों ही बुज़ुर्ग भूले हुए थे इसलिये दोनों की तरफ़ भूल को मन्सूब किया गया।

बहरहाल! यह एक दूसरी आज़माईश थी कि मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचकर मछली के ज़िन्दा होकर पानी में गुम हो जाने से हक़ीक़त खुल जाती है और जगह मुतैयन हो जाती है, मगर अभी उस तालिबे हक़ का कुछ और भी इम्तिहान लेना था, इसलिये दोनों पर भूल मुसल्लत हो गई, और पूरे एक दिन और एक रात का और सफ़र तय करने के बाद भूख और थकान का एहसास हुआ, यह तीसरा इम्तिहान था, क्योंकि आ़दतन थकान और भूख का एहसास इससे पहले हो जाना चाहिये था वहीं मछली याद आ जाती तो इतने लम्बे सफ़र की अतिरिक्त तकलीफ़ न होती मगर अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर यही था कि कुछ और मशक़्क़त उठाये, इतना लम्बा सफ़र करने के बाद भूख-प्यास का एहसास हुआ और यहाँ मछली याद आई और यह मालूम हुआ कि हम मन्ज़िले मक़सूद से बहुत आगे आ गये, इसलिये फिर उसी पैरों के निशान पर वापस लौटे।.

मछली के दरिया में चले जाने का ज़िक्र पहली मर्तबा तो **स-र-बा** के लफ़्ज़ से आया है, सरब के मायने सुरंग के हैं जो पहाड़ों में रास्ता बनाने के लिये खोदी जाती है या शहरों में ज़मीन के नीचे रास्ते बनाने के लिये खोदी जाती है। इससे मालूम हुआ कि यह मछली जब दरिया में गई तो जिस तरफ़ को जाती पानी में एक सुरंग-सी बनती चली गई कि उसके जाने का रास्ता पानी से खुला रहा जैसा कि सही बुख़ारी की रिवायत से वाज़ेह हुआ। दूसरी मर्तबा जब यूशा इब्ने नून ने मूसा अ़लैहिस्सलाम से इस वाक़िए का ज़िक्र लम्बे सफ़र के बाद किया वहाँ:

وَاتَّخَذَ سَبِيلَهُ فِي الْبَحْرِ عَجَبًا ٥

(यानी अ़-ज़बा) के अलफ़ाज़ से इस वाक़िए को बयान किया। इन दोनों में कोई टकराव नहीं, क्योंकि पानी के अन्दर सुरंग बनते चले जाना ख़ुद एक अ़जीब वाक़िआ़ आ़म आ़दत के ख़िलाफ़ था।

हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से मुलाक़ात और उनकी नुबुव्वत का मसला

क़ुरआने करीम में अगरचे उस वाक़िए वाले का नाम ज़िक्र नहीं हुआ बल्कि 'अ़ब्दम् मिन्

अ़िबादिना' (हमारे बन्दों में से एक बन्दा) कहा गया मगर सही बुख़ारी की हदीस में उनका नाम ख़ज़िर बतलाया गया है। ख़ज़िर के लफ़्ज़ी मायने हरेभरे के हैं, उनका नाम ख़ज़िर होने की वजह आम मुफ़स्सिरीन ने यह बतलाई है कि यह जिस जगह बैठ जाते तो कैसी ही ज़मीन हो वहाँ घास उग जाती और ज़मीन हरीभरी हो जाती थी। क़ुरआने करीम ने यह भी वाज़ेह नहीं किया कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम कोई पैग़म्बर थे या औलिया-अल्लाह में से कोई फ़र्द थे, लेकिन उलेमा की अक्सरियत के नज़दीक उनका नबी होना ख़ुद क़ुरआने करीम में ज़िक्र किये हुए वाक़िआ़त से साबित है, क्योंकि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से उस सफ़र में जितने वाक़िआ़त साबित हैं उनमें से कुछ तो निश्चित तौर पर ख़िलाफ़े शरीअ़त हैं और शरीअ़त के हुक्म से सिवाय अल्लाह की वही के कोई बाहर और अलग हो ही नहीं सकता, जो नबी और पैग़म्बर ही के साथ मख़्सूस है, वली को भी कश्फ़ या इल्हाम से कुछ चीज़ें मालूम हो सकती हैं मगर वह कोई हुज्जत नहीं होती, उनकी बिना पर शरीअ़त के किसी ज़ाहिरी हुक्म को बदला नहीं जा सकता इसलिये यह मुतैयन हो जाता है कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के नबी और पैग़म्बर थे, उनको अल्लाह की वही के ज़रिये कुछ ख़ास वो अहकाम दिये गये थे जो शरीअ़त के ज़ाहिर के ख़िलाफ़ थे, उन्होंने जो कुछ किया उसको एक विशेष और अलग रखे गये हुक्म के मातहत किया, ख़ुद उनकी तरफ़ से इसका इज़हार भी क़ुरआन के इस जुमले में हो गयाः

وَمَا فَعَلْتُهُ عَنْ اَمْرِیْ

(यानी मैंने जो कुछ किया अपनी तरफ़ से नहीं किया बल्कि अल्लाह के हुक्म से किया है)

ख़ुलासा यह है कि उम्मत की अक्सरियत और बड़ी जमाअ़त के नज़दीक हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम भी एक नबी और पैग़म्बर हैं, मगर निज़ामे कायनात की कुछ ख़िदमतें अल्लाह की ओर से उनके सुपुर्द की गई थीं, उन्हीं का इल्म उनको दिया गया था और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को उसकी इत्तिला न थी इसी लिये उस पर एतिराज़ किया। तफ़सीरे क़ुर्तुबी, बहरे मुहीत, अबू हय्यान और अक्सर तफ़सीरों में यह मज़मून विभिन्न उनवानों से मज़कूर है।

किसी वली को शरीअ़त के ज़ाहिरी हुक्म के ख़िलाफ़ करना हलाल नहीं

यहीं से यह बात भी मालूम हो गई कि बहुत-से जाहिल ग़लत काम करने वाले तसव्वुफ़ को बदनाम करने वाले सूफ़ी जो कहने लगे कि शरीअ़त और चीज़ है और तरीक़त और है, बहुत-सी चीज़ें शरीअ़त में हराम होती हैं मगर तरीक़त में जायज़ हैं, इसलिये किसी वली को खुले गुनाहे कबीरा में मुब्तला देखकर भी उस पर एतिराज़ नहीं किया जा सकता, यह खुली हुई गुमराही और बातिल है। हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम पर किसी दुनिया के वली को क़ियास नहीं किया जा सकता, और न शरीअ़त के ज़ाहिर के ख़िलाफ़ उसके किसी फ़ेल को जायज़ कहा जा सकता है।

शागिर्द पर उस्ताद का हुक्म मानना लाज़िम है

هَلْ اَتَّبِعُكَ عَلٰۤى اَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا○

इसमें हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने बावजूद नबी व रसूल और बड़ी शान वाला पैग़म्बर होने के हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से अदब व ताज़ीम के साथ दरख़्वास्त की कि मैं आप से आपका इल्म सीखने के लिये साथ चलना चाहता हूँ। इससे मालूम हुआ कि इल्म हासिल करने का अदब यही है कि शागिर्द अपने उस्ताद की ताज़ीम व अदब और पैरवी करे, अगरचे शागिर्द अपने उस्ताद से अफ़ज़ल व आला भी हो। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, मज़हरी)

आ़लिमे शरीअ़त के लिये जायज़ नहीं कि ख़िलाफ़े शरीअ़त बात पर सब्र करे

اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيْعَ مَعِىَ صَبْرًا○ وَكَيْفَ تَصْبِرُ عَلٰى مَا لَمْ تُحِطْ بِهٖ خُبْرًا○

हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने मूसा अ़लैहिस्सलाम से कहा कि आप मेरे साथ सब्र नहीं कर सकेंगे, और कैसे सब्र करेंगे जबकि आपको मामले की हक़ीक़त की इत्तिला न हो।

मतलब यह था कि मुझे जो इल्म अ़ता हुआ है वह आपके इल्म से अलग अन्दाज़ व क़िस्म का है इसलिये आपको मेरे मामलात क़ाबिले एतिराज़ नज़र आयेंगे, जब तक कि मैं उनकी हक़ीक़त से आपको बाख़बर न कर दूँ आप अपने फ़र्ज़े मन्सबी की बिना पर उस पर एतिराज़ करेंगे।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को चूँकि ख़ुद अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उनके पास जाने और उनसे इल्म सीखने का हुक्म हुआ था इसलिये यह इत्मीनान था कि उनका कोई काम हक़ीक़त में ख़िलाफ़े शरीअ़त नहीं होगा, चाहे ज़ाहिर में समझ में न आये, इसलिये सब्र करने का वायदा कर लिया, वरना ऐसा वायदा करना भी किसी आ़लिमे दीन के लिये जायज़ नहीं, लेकिन फिर शरीअ़त के बारे में दीनी ग़ैरत के जज़्बे से मग़लूब होकर उस वायदे को भूल गये।

पहला वाक़िआ़ तो ज़्यादा संगीन भी नहीं था, सिर्फ़ कश्ती वालों का माली नुक़सान या डूब जाने का सिर्फ़ ख़तरा ही था जो बाद में दूर हो गया, लेकिन बाद के वाक़िआ़त में मूसा अ़लैहिस्सलाम ने यह वायदा भी नहीं किया कि मैं एतिराज़ नहीं करूँगा, और जब लड़के के क़त्ल का वाक़िआ़ देखा तो सख़्ती के साथ एतिराज़ किया और अपने एतिराज़ पर कोई उज़्र भी पेश न किया, सिर्फ़ इतना कहा कि अगर आईन्दा एतिराज़ करूँ तो आपको हक़ होगा कि आप मुझे साथ न रखें, क्योंकि किसी नबी और पैग़म्बर से यह बरदाश्त नहीं हो सकता कि ख़िलाफ़े शरीअ़त काम होता देखकर सब्र करे, अलबत्ता चूँकि दूसरी तरफ़ भी पैग़म्बर ही थे इसलिये आख़िरकार हक़ीक़त इस तरह ज़ाहिर हुई कि ये आंशिक वाक़िआ़त ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के लिये

शरीअ़त के आ़म क़ायदों से अलग कर दिये गये थे, उन्होंने जो कुछ किया अल्लाह की वही के मुताबिक़ किया। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत मूसा और हज़रत ख़ज़िर के इल्म में एक बुनियादी फ़र्क़ और दोनों में ज़ाहिरी टकराव का हल

यहाँ तबई तौर पर एक सवाल पैदा होता है कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की वज़ाहत व ख़ुलासे के मुताबिक़ उनको जो इल्म अ़ता हुआ था वह हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के इल्म से अलग अन्दाज़ का था मगर जबकि ये दोनों इल्म हक़ तआ़ला ही की तरफ़ से अ़ता हुए थे तो इन दोनों के अहकाम में टकराव व भिन्नता क्यों हुई, इसकी तहक़ीक़ तफ़सीरे मज़हरी में हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने जो लिखी है वह दुरुस्तगी के ज़्यादा क़रीब और दिल को लगने वाली है, उनकी तक़रीर का मतलब जो मैं समझा हूँ उसका ख़ुलासा यह है कि:

हक़ तआ़ला जिन हज़रात को अपनी वही और नुबुव्वत से सम्मानित फ़रमाते हैं वे उमूमन तो वही हज़रात होते हैं जिनके सुपुर्द मख़्लूक़ की इस्लाह की ख़िदमत होती है, उन पर किताब और शरीअ़त नाज़िल की जाती है जिनमें अल्लाह की मख़्लूक़ की हिदायत और इस्लाह (सुधार) के उसूल व क़ायदे होते हैं। जितने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का ज़िक्र क़ुरआने करीम में नुबुव्वत व रिसालत की वज़ाहत के साथ आया है वे सब के सब ऐसे ही थे जिनके सुपुर्द क़ानूने शरीअ़त की और इस्लाही ख़िदमात थीं, उन पर जो वही आती थी वह भी सब उसी के मुताल्लिक़ थी। मगर दूसरी तरफ़ कुछ तकवीनी (क़ुदरती और डायरेक्ट बिना असबाब के कायनाती निज़ाम से संबन्धित) ख़िदमात भी हैं जिनके लिये आ़म तौर से अल्लाह के फ़रिश्ते मुक़र्रर हैं, मगर अम्बिया की जमाअ़त में भी हक़ तआ़ला ने कुछ हज़रात को इसी क़िस्म की तकवीनी ख़िदमात के लिये ख़ास कर लिया है। हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम उसी गिरोह में से हैं, तकवीनी ख़िदमात आंशिक वाक़िआ़त से संबन्धित होती हैं कि फ़ुलाँ शख़्स डूबने वाले को बचा लिया जाये या फ़ुलाँ को हलाक कर दिया जाये, फ़ुलाँ को तरक़्क़ी दी जाये, फ़ुलाँ को नीचे गिरा दिया जाये। उन मामलात का न आ़म लोगों से कोई ताल्लुक़ होता है न उनके अहकाम अ़वाम से मुताल्लिक़ होते हैं, ऐसे आंशिक वाक़िआ़त में कुछ वो सूरतें भी पेश आती हैं कि एक शख़्स को हलाक करना शरई क़ानून के ख़िलाफ़ है अगरचे तकवीनी क़ानून में इस ख़ास वाक़िए को आ़म शरई क़ानून से अलग करके उस शख़्स के लिये जायज़ कर दिया गया है जिसको इस तकवीनी ख़िदमत पर मामूर फ़रमाया गया है। ऐसे हालात में शरई क़वानीन के उलेमा इस विशेष और अलग रखे गये हुक्म से वाक़िफ़ नहीं होते और वे इसको हराम कहने पर मजबूर होते हैं, और जो शख़्स तकवीनी तौर पर इस क़ानून से अलग कर दिया गया है वह अपनी जगह हक़ पर होता है।

खुलासा यह है कि जहाँ यह टकराव नज़र आता है वह दर हक़ीक़त टकराव नहीं होता कुछ आंशिक वाक़िआत का आम क़ानूने शरीअ़त से अलग रखना होता है। अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे मुहीत में फ़रमायाः

الجمهور على ان الخضر نبي وكان علمه معرفة بواطن قد اوحيت اليه وعلم موسى الاحكام والفتيا بالظاهر. (بحر محیط ص۱۴۷ ج۶)

इसलिये यह भी ज़रूरी है कि यह क़ानूने शरीअ़त से अलग और बाहर रखना नुबुव्वत की वही के ज़रिये हो, किसी वली का कश्फ़ व इल्हाम शरीअ़त के आम क़ानून से अलग रखने के लिये हरगिज़ काफ़ी नहीं, इसी लिये हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम का लड़के को बज़ाहिर नाहक़ क़त्ल करना शरीअ़त के ज़ाहिर में हराम था लेकिन हज़रत ख़ज़िर तकवीनी तौर पर इस क़ानून से अलग करके मामूर किये गये थे, उन पर किसी ग़ैर-नबी के कश्फ़ व इल्हाम को क़ियास व तुलना करके किसी हराम को हलाल समझना जैसे बाज़ जाहिल सूफ़ियों में मशहूर है बिल्कुल बेदीनी और इस्लाम से बग़ावत है।

इब्ने अबी शैबा ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह वाक़िआ नक़ल किया है कि नजदा हरूरी (ख़ारजी) ने इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़त लिखा कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने नाबालिग़ लड़के को कैसे क़त्ल कर दिया जबकि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नाबालिग़ को क़त्ल करने से मना फ़रमाया है। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब में लिखा कि अगर किसी बच्चे के मुताल्लिक़ तुम्हें वह इल्म हासिल हो जाये जो मूसा अ़लैहिस्सलाम के आ़लिम (यानी ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम) को हासिल हुआ था तो तुम्हारे लिये भी नाबालिग़ का क़त्ल जायज़ हो जायेगा। मतलब यह था कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम को तो नुबुव्वत के पैग़ाम के ज़रिये इसका इल्म हुआ था वह अब किसी को नहीं हो सकता क्योंकि नुबुव्वत ख़त्म हो चुकी है, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद कोई नबी नहीं होगा जिसको वही के ज़रिये इस क़िस्म के वाक़िआत के मुताल्लिक़ अल्लाह के किसी हुक्म से किसी ख़ास शख़्स को अलग करने और बाहर रहने का इल्म हो सके। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस वाक़िए से भी यह हक़ीक़त स्पष्ट हो गई कि किसी शख़्स को किसी शरई हुक्म से ख़ारिज और बाहर क़रार देने का वही वाले नबी के सिवा किसी को हक़ नहीं।

فَانْطَلَقَا حَتّٰٓى اِذَا رَكِبَا فِى السَّفِيْنَةِ

خَرَقَهَا ۖ قَالَ اَخَرَقْتَهَا لِتُغْرِقَ اَهْلَهَا ۚ لَقَدْ جِئْتَ شَيْئًا اِمْرًا ۞ قَالَ اَلَمْ اَقُلْ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيْعَ مَعِىَ صَبْرًا ۞ قَالَ لَا تُؤَاخِذْنِىْ بِمَا نَسِيْتُ وَلَا تُرْهِقْنِىْ مِنْ اَمْرِىْ عُسْرًا ۞ فَانْطَلَقَا حَتّٰٓى اِذَا لَقِيَا غُلٰمًا فَقَتَلَهٗ ۙ قَالَ اَقَتَلْتَ نَفْسًا زَكِيَّةًۢ بِغَيْرِ نَفْسٍ ۗ لَقَدْ جِئْتَ شَيْئًا نُّكْرًا ۞ قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَّكَ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيْعَ مَعِىَ صَبْرًا ۞ قَالَ اِنْ سَاَلْتُكَ عَنْ شَىْءٍۢ بَعْدَهَا فَلَا

تُصٰحِبْنِیْ ۚ قَدْ بَلَغْتَ مِنْ لَّدُنِّیْ عُذْرًا ۝ فَانْطَلَقَا ٚ حَتّٰۤی اِذَاۤ اَتَیَاۤ اَهْلَ قَرْیَةِ ِۣ اسْتَطْعَمَاۤ اَهْلَهَا فَاَبَوْا اَنْ یُّضَیِّفُوْهُمَا فَوَجَدَا فِیْهَا جِدَارًا یُّرِیْدُ اَنْ یَّنْقَضَّ فَاَقَامَهٗ ؕ قَالَ لَوْ شِئْتَ لَتَّخَذْتَ عَلَیْهِ اَجْرًا ۝ قَالَ هٰذَا فِرَاقُ بَیْنِیْ وَ بَیْنِكَ ۚ سَاُنَبِّئُكَ بِتَاْوِیْلِ مَا لَمْ تَسْتَطِعْ عَّلَیْهِ صَبْرًا ۝

फ़न्त-लक़ा, हत्ता इज़ा रकिबा फ़िस्सफ़ी-नति ख़-र-क़हा, क़ा-ल अ-ख़रक़्तहा लितुग़्रि-क़ अह्लहा ल-क़द् जिअ्-त शैअन् इम्रा (71) क़ा-ल अलम् अक़ुल् इन्न-क लन् तस्तती-अ़ मअ़ि-य सब्रा (72) क़ा-ल ला तुआख़िज़्नी बिमा नसीतु व ला तुर्हिक़्नी मिन् अम्री अ़ुस्रा (73) फ़न्त-लक़ा, हत्ता इज़ा लक़िया ग़ुलामन् फ़-क़-त-लहू क़ा-ल अ-क़तल्-त नफ़्सन् ज़किय्य-तम् बिग़ैरि नफ़्सिन्, ल-क़द् जिअ्-त शैअन् नुक्रा (74)

क़ा-ल अलम् अक़ुल्-ल-क इन्न-क लन् तस्तती-अ़ मअ़ि-य सब्रा (75) क़ा-ल इन् सअल्तु-क अ़न् शैइम् बअ़्दहा फ़ला तुसाहिब्नी क़द् बलग़्-त मिल्लदुन्नी अ़ुज़्रा (76) फ़न्त-लक़ा, हत्ता इज़ा अ-तया अह्-ल क़र्यति-निस्तत्-अ़मा अह्लहा फ़-अबौ अंय्युज़य्यिफ़ूहुम फ़-व-जदा

फिर दोनों चले यहाँ तक कि जब चढ़े कश्ती में उसको फाड़ डाला, मूसा बोला क्या तूने इसको फाड़ डाला कि डूबा दे इसके लोगों को, अलबत्ता तूने की एक चीज़ भारी। (71) बोला मैंने न कहा था तू न ठहर सकेगा मेरे साथ। (72) कहा मुझको न पकड़ मेरी भूल पर और मत डाल मुझ पर मेरा काम मुश्किल। (73) फिर दोनों चले यहाँ तक कि जब मिले एक लड़के से तो उसको मार डाला, मूसा बोला क्या तूने मार डाली एक जान सुथरी बग़ैर बदले किसी जान के, बेशक तूने की एक चीज़ नामाक़ूल। (74)

बोला मैंने तुझको न कहा था कि तू न ठहर सकेगा मेरे साथ। (75) कहा अगर तुझसे पूछूँ कोई चीज़ इसके बाद तो मुझको साथ न रखियो, तू उतार चुका मेरी तरफ़ से इल्ज़ाम। (76) फिर दोनों चले, यहाँ तक कि जब पहुँचे एक गाँव के लोगों तक खाना चाहा वहाँ के लोगों से, उन्होंने न माना कि उनको मेहमान रखें फिर पाई वहाँ एक दीवार जो गिरने

फ़ीहा जिदारंय्युरीदु अंय्यन्क़ज़्-ज़ फ़-अक़ामहू, क़ा-ल लौ शिअ्-त लत्त-ख़ज़्-त अ़लैहि अज्रा (77) क़ा-ल हाज़ा फ़िराक़ु बैनी व बैनि-क स-उनब्बिउ-क बितअ्वीलि मा लम् तस्ततिअ् अ़लैहि सब्रा (78)	ही वाली थी उसको सीधा कर दिया, बोला (मूसा) अगर तू चाहता तो ले लेता इस पर मज़दूरी। (77) कहा अब जुदाई है मेरे और तेरे बीच, अब जतलाये देता हूँ तुझको फेर उन बातों का जिस पर तू सब्र न कर सका। (78)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ग़र्ज़ आपस में क़ौल व क़रार हो गया) फिर दोनों (किसी तरफ़) चले (ग़ालिबन उनके साथ यूशा अ़लैहिस्सलाम भी होंगे मगर वह हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के ताबे थे इसलिये ज़िक्र दो का किया गया) यहाँ तक कि (चलते-चलते किसी ऐसे मक़ाम पर पहुँचे जहाँ कश्ती पर सवार होने की ज़रूरत हुई) जब दोनों नाव में सवार हुए तो उन बुज़ुर्ग ने उस नाव (का एक तख़्ता निकाल कर उस) में छेद कर दिया। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि क्या आपने इस नाव में इसलिए छेद किया है कि इसमें बैठने वालों को डुबो दें। आपने बड़ी भारी (ख़तरे की) बात की। उन बुज़ुर्ग ने कहा, क्या मैंने कहा नहीं था कि आप से मेरे साथ सब्र न हो सकेगा (आख़िर वही हुआ, आप अपने क़ौल पर न रहे)। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (मैं भूल गया था) आप मेरी भूल-चूक पर पकड़ न कीजिये और मेरे इस मामले (साथ रहने) में मुझ पर ज़्यादा तंगी न डालिये (कि भूल-चूक भी माफ़ न हो। बात गई गुज़री हो गई)। फिर दोनों (कश्ती से उतरकर आगे) चले, यहाँ तक कि जब एक (छोटी उम्र के) लड़के से मिले तो उन बुज़ुर्ग ने उसको मार डाला, मूसा (अ़लैहिस्सलाम घबराकर) कहने लगे कि आपने एक बेगुनाह जान को मार डाला (और वह भी) किसी जान के बदले के बग़ैर, बेशक आपने बड़ी बेजा हरकत की (कि अव्वल तो यह नाबालिग़ का क़त्ल है जिसको क़िसास में भी क़त्ल करना जायज़ नहीं, फिर इसने तो किसी को क़त्ल भी नहीं किया यह फ़ेल पहले फ़ेल से भी ज़्यादा सख़्त है क्योंकि इसमें यक़ीनी नुक़सान तो सिर्फ़ माल का था बैठने वालों के डूबने का अगरचे ख़तरा था मगर उसकी रोकथम कर दी गयी, फिर लड़का नाबालिग़ हर गुनाह से बरी)।

उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि क्या मैंने आप से नहीं कहा था कि आप से मेरे साथ सब्र न हो सकेगा? मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया (कि ख़ैर अब की बार और जाने दीजिये, लेकिन) अगर इस बार के बाद मैं आप से किसी मामले के बारे में कुछ पूछूँ तो आप मुझको अपने साथ न रखिये, बेशक आप मेरी तरफ़ से उज़्र (की इन्तिहा) को पहुँच चुके हैं (इस मर्तबा मूसा अ़लैहिस्सलाम ने भूलने का उज़्र पेश नहीं किया, इससे मालूम होता है कि यह सवाल उन्होंने

जान-बूझकर अपनी पैग़म्बराना हैसियत के मुताबिक़ किया था)। फिर दोनों (आगे) चले, यहाँ तक कि जब एक गाँव वालों पर गुज़र हुआ तो गाँव वालों से खाने को माँगा (कि हम मेहमान हैं) सो उन्होंने इनकी मेहमानी करने से इनकार कर दिया, इतने में इनको वहाँ एक दीवार मिली जो गिरने ही वाली थी, तो उन बुज़ुर्ग ने उसको (हाथ के इशारे से एक मोजिज़े के तौर पर) सीधा कर दिया। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि अगर आप चाहते तो इस (काम) पर कुछ मुआ़वज़ा ही ले लेते (कि इस वक़्त काम भी चलता और इनकी बद-अख़्लाक़ी की इस्लाह भी होती)। उन बुज़ुर्ग ने कहा कि यह वक़्त हमारे और आपके अलग होने का है (जैसा कि ख़ुद आपने शर्त रखी थी), अब मैं उन चीज़ों की हक़ीक़त आपको बतलाये देता हूँ जिन पर आप से सब्र न हो सका (जैसा कि आगे आने वाली आयतों में इसका बयान आ रहा है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

أَخَرَقْتَهَا لِتُغْرِقَ أَهْلَهَا

बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने कुल्हाड़ी के ज़रिये कश्ती का एक तख़्ता निकाल दिया था जिसकी वजह से कश्ती में पानी भरकर डूबने का ख़तरा पैदा हो गया था, इसलिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने इस पर एतिराज़ किया मगर तारीख़ी रिवायतों में है कि पानी उस कश्ती में दाख़िल नहीं हुआ चाहे इसलिये कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने ही फिर उसकी कुछ मरम्मत कर दी जैसा कि इमाम बग़वी ने एक रिवायत नक़ल की है कि उस तख़्ते की जगह ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने एक शीशा लगा दिया था या बतौर मोजिज़े के पानी कश्ती में न आया, इतनी बात ख़ुद क़ुरआने करीम के बयान से मालूम हो रही है कि उस कश्ती को पानी में डूबने का कोई हादसा पेश नहीं आया जिससे इन रिवायतों की ताईद होती है।

حَتَّىٰ إِذَا لَقِيَا غُلَامًا

लफ़्ज़ **गुलाम** अ़रबी भाषा के एतिबार से नाबालिग़ लड़के को कहा जाता है, यह लड़का जिसको ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने क़त्ल किया इसके मुताल्लिक़ हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यही कहा है कि वह नाबालिग़ था और आगे जो उसके मुताल्लिक़ आया है 'नफ़्सन् ज़किय्यतन्' इससे भी उसके नाबालिग़ होने की ताईद होती है, क्योंकि ज़किय्यतन् के मायने हैं गुनाहों से पाक, और यह सिफ़त या तो पैग़म्बर की हो सकती है या नाबालिग़ बच्चे की, जिसके कामों और आमाल पर पकड़ नहीं, उसके नामा-ए-आमाल में कोई गुनाह नहीं लिखा जाता।

أَهْلَ قَرْيَةٍ

यह बस्ती जिसमें हज़रत मूसा और ख़ज़िर अ़लैहिमस्सलाम का गुज़र हुआ और उसके लोगों ने उनकी मेहमानी से इनकार कर दिया, हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत में अन्ताकिया और इब्ने सीरीन की रिवायत में ऐका थी, और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु

से मन्क़ूल है कि वह उन्दुलुस की कोई बस्ती थी। (तफ़सीरे मज़हरी) वल्लाहु आलम

أَمَّا السَّفِينَةُ فَكَانَتْ لِمَسٰكِينَ يَعْمَلُونَ فِي الْبَحْرِ فَأَرَدْتُّ أَنْ أَعِيبَهَا وَكَانَ وَرَآءَهُمْ مَّلِكٌ يَأْخُذُ كُلَّ سَفِينَةٍ غَصْبًا ۝ وَأَمَّا الْغُلٰمُ فَكَانَ أَبَوَاهُ مُؤْمِنَيْنِ فَخَشِينَآ أَنْ يُّرْهِقَهُمَا طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۝ فَأَرَدْنَآ أَنْ يُّبْدِلَهُمَا رَبُّهُمَا خَيْرًا مِّنْهُ زَكٰوةً وَّأَقْرَبَ رُحْمًا ۝ وَأَمَّا الْجِدَارُ فَكَانَ لِغُلٰمَيْنِ يَتِيمَيْنِ فِي الْمَدِينَةِ وَكَانَ تَحْتَهُ كَنْزٌ لَّهُمَا وَكَانَ أَبُوهُمَا صَالِحًا ۚ فَأَرَادَ رَبُّكَ أَنْ يَّبْلُغَآ أَشُدَّهُمَا وَيَسْتَخْرِجَا كَنْزَهُمَا ۖ رَحْمَةً مِّنْ رَّبِّكَ ۚ وَمَا فَعَلْتُهُ عَنْ أَمْرِي ۚ ذٰلِكَ تَأْوِيلُ مَا لَمْ تَسْطِعْ عَّلَيْهِ صَبْرًا ۝

अम्मस्सफ़ी-नतु फ़-कानत् लि-मसाकी-न यअ्मलू-न फ़िल्बह्रि फ़-अरत्तु अन् अओ़-बहा व का-न वरा-अहुम् मलिकुंय्-यअ्ख़ुज़ु कुल्-ल सफ़ी-नतिन् ग़स्बा (79) व अम्मल्-ग़ुलामु फ़का-न अ-बवाहु मुअ्मिनैनि फ़-ख़शीना अंय्युर्हि-क़हुमा तुग़्यानंव्-व कुफ़्रा (80) फ़-अरद्ना अंय्युब्दि लहुमा रब्बुहुमा ख़ैरम्-मिन्हु ज़कातंव्-व अक़्र-ब रुह्मा (81) व अम्मल्-जिदारु फ़का-न लिग़ुलामैनि यतीमैनि फ़िल्-मदीनति व का-न तह्तहू कन्ज़ुल्-लहुमा व का-न अबूहुमा सालिहन् फ़-अरा-द रब्बु-क अंय्यब्लुग़ा अशुद्दहुमा व यस्तख़्रिजा कन्ज़हुमा रह्मतम् मिर्रब्बि-क व मा फ़अ़ल्तुहू अन् अम्री, ज़ालि-क

वह जो कश्ती थी सो चन्द मोहताजों की जो मेहनत करते थे दरिया में, सो मैंने चाहा कि उसमें ऐब डाल दूँ और उनके परे था एक बादशाह जो ले लेता था हर कश्ती को छीनकर। (79) और वह जो लड़का था सो उसके माँ-बाप थे ईमान वाले फिर हमको अन्देशा हुआ कि उनको आजिज़ कर दे ज़बरदस्ती और कुफ़्र कर कर। (80) फिर हमने चाहा कि बदला दे उनको उनका रब बेहतर उससे पाकीज़गी में और ज़्यादा नज़दीक शफ़क़त में। (81) और वह जो दीवार थी सो दो यतीम लड़कों की थी इस शहर में और उसके नीचे माल गड़ा था उनका और उनका बाप था नेक, फिर चाहा तेरे रब ने कि वे पहुँच जायें अपनी जवानी को और निकालें अपना माल गड़ा हुआ मेहरबानी से तेरे रब की, और मैंने यह नहीं किया

तअ्वीलु मा लम् तस्तिअ्-अ़लैहि सब्रा (82) ✿	अपने हुक्म से, यह है फेर उन चीज़ों का जिन पर तू सब्र न कर सका। (82) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वह जो कश्ती थी सो कुछ ग़रीब आदमियों की थी (जो उसके ज़रिये) दरिया में मेहनत मज़दूरी करते थे (उसी पर उनके गुज़ारे का मदार था) सो मैंने चाहा कि उसमें ऐब डाल दूँ और (वजह उसकी यह थी कि) उन लोगों से आगे की तरफ़ एक (ज़ालिम) बादशाह था, जो हर (अच्छी) कश्ती को ज़बरदस्ती छीन लेता था (अगर मैं कश्ती में ऐब डालकर बज़ाहिर बेकार न कर देता तो यह कश्ती भी छीन ली जाती और उन ग़रीबों की मज़दूरी का सहारा भी ख़त्म हो जाता, इसलिये तोड़ने में यह मस्लेहत थी)। और रहा वह लड़का, सो उसके माँ-बाप ईमान वाले थे (और अगर वह बड़ा होता तो काफ़िर ज़ालिम होता और माँ को उससे मुहब्बत बहुत थी) सो हमको अन्देशा हुआ कि यह उन दोनों पर सरकशी और कुफ़्र का असर न डाल दे (यानी बेटे की मुहब्बत के सबब वे भी बेदीनी में उसका साथ न देने लगें)। पस हमको यह मन्ज़ूर हुआ कि (उसका तो क़िस्सा तमाम कर दिया जाये फिर) बजाय उसके उनका परवर्दिगार उनको ऐसी औलाद दे (चाहे लड़का हो या लड़की) जो कि पाकीज़गी (यानी दीन) में उससे बेहतर हो, और (माँ-बाप के साथ) मुहब्बत करने में उससे बढ़कर हो।

और रही दीवार, सो वह दो यतीम लड़कों की थी जो उस शहर में (रहते) हैं, और उस दीवार के नीचे उनका कुछ माल दफ़न था (जो उनके बाप से मीरास में पहुँचा है) और उनका बाप (जो मर गया है वह) एक नेक आदमी था (उसके नेक होने की बरकत से अल्लाह तआ़ला ने उसकी औलाद के माल को महफ़ूज़ करना चाहा, अगर दीवार अभी गिर जाती तो लोग यह माल लूट ले जाते और ग़ालिबन जो शख़्स उन यतीम लड़कों का सरपरस्त था उसको उस ख़ज़ाने का इल्म होगा वह यहाँ मौजूद न होगा जो इन्तिज़ाम कर लेता) सो इसलिये आपके रब ने अपनी मेहरबानी से चाहा कि वे दोनों अपनी जवानी (की उम्र) को पहुँच जाएँ और अपना दबा हुआ ख़ज़ाना निकाल लें, और (ये सारे काम मैंने अल्लाह के हुक्म से किये हैं इनमें से) कोई काम मैंने अपनी राय से नहीं किया। यह है हक़ीक़त उन बातों की जिन पर आप से सब्र न हो सका (जिसको मैं वायदे के मुताबिक़ बतला चुका हूँ। चुनाँचे हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से रुख़्सत हो गये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

أَمَّا السَّفِينَةُ فَكَانَتْ لِمَسٰكِينَ

यह कश्ती जिन मिस्कीनों की थी उनके बारे में कअ़्बे अहबार से मन्क़ूल है कि वे दस भाई

थे जिनमें पाँच अपाहिज माज़ूर थे पाँच मेहनत मज़दूरी करके सब के लिये गुज़ारे का इन्तिज़ाम करते थे, और मज़दूरी उनकी यह थी कि दरिया में एक कश्ती चलाते थे और उसका किराया वसूल करते थे।

मिस्कीन की परिभाषा

मिस्कीन की परिभाषा कुछ लोगों ने यह की है कि जिसके पास कुछ न हो, मगर इस आयत से मालूम हुआ कि मिस्कीन की सही परिभाषा यह है कि जिसके पास इतना माल न हो कि उसकी सही व आवश्यक ज़रूरतें से ज़्यादा ज़कात के निसाब के बराबर हो जाये, इससे कम माल हो तो वह भी मिस्कीन के दर्जे में दाख़िल है, क्योंकि जिन लोगों को इस आयत में मिस्कीन कहा गया है उनके पास कम से कम एक कश्ती तो थी जिसकी क़ीमत निसाब के बराबर से कम नहीं होती मगर चूँकि वह असल आवश्यक ज़रूरत में मशग़ूल थी इसलिये उनको मिस्कीन ही कहा गया। (तफ़सीरे मज़हरी)

مَلِكٌ يَّاْخُذُ كُلَّ سَفِيْنَةٍ غَصْبًا٥

इमाम बग़वी रह. ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि यह कश्ती जिस तरफ़ जा रही थी वहाँ एक ज़ालिम बादशाह था जो उधर से गुज़रने वालों की कश्तियाँ ज़बरदस्ती छीन लेता था, हज़रत ख़ज़िर ने इस मस्लेहत से कश्ती का एक तख़्ता उखाड़ दिया कि वह ज़ालिम बादशाह इस कश्ती को टूटी हुई देखकर छोड़ दे और ये मिस्कीन लोग इस मुसीबत से बच जायें। मौलाना रूम ने ख़ूब फ़रमाया है:

गर ख़ज़िर दर बहर कश्ती रा शिकस्त सद दरुस्ती दर शिकस्ते ख़ज़िर हस्त

कि अगर हज़रत ख़ज़िर ने दरिया में कश्ती को तोड़ा और ख़राब किया तो उस तोड़ने और ख़राब करने में उस कश्ती की बेहतरी और अच्छाई थी। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

وَاَمَّا الْغُلٰمُ

यह लड़का जिसको हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने क़त्ल किया इसकी हक़ीक़त यह बयान फ़रमाई कि उस लड़के की तबीयत में कुफ़्र और माँ-बाप के ख़िलाफ़ सरकशी थी, माँ-बाप उसके नेक और सालेह थे, हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि हमें ख़तरा था कि यह लड़का बड़ा होकर नेक माँ-बाप को सतायेगा और तकलीफ़ पहुँचायेगा और कुफ़्र में मुब्तला होकर माँ-बाप के लिये भी एक फ़ितना बनेगा, इसकी मुहब्बत में माँ-बाप का ईमान भी ख़तरे में पड़ जायेगा।

فَاَرَدْنَآ اَنْ يُّبْدِلَهُمَا رَبُّهُمَا خَيْرًا مِّنْهُ زَكٰوةً وَّاَقْرَبَ رُحْمًا٥

यानी इसलिये हमने इरादा किया कि अल्लाह तआ़ला उन नेक माँ-बाप को उस लड़के के बदले में उससे बेहतर औलाद दे दे, जो आमाल व अख़्लाक़ में पाकीज़ा भी हो और माँ-बाप के हुक़ूक़ भी अदा करे।

इस वाक़िए में 'ख़शीना' और 'अरद्ना' में जमा मुतकल्लिम का कलिमा इस्तेमाल फ़रमाया इसकी एक वजह यह हो सकती है कि यह इरादा और डर ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम ने अपनी और अल्लाह तआ़ला दोनों की तरफ़ मन्सूब किया, और यह भी हो सकता है कि ख़ुद अपनी ही तरफ़ मन्सूब किया हो तो फिर 'अरद्ना' के मायने यह होंगे कि हमने अल्लाह से दुआ़ की, क्योंकि किसी लड़के के बदले में उससे बेहतर औलाद देने का मामला ख़ालिस हक़ तआ़ला का काम है इसमें ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम या कोई दूसरा इनसान शरीक नहीं हो सकता।

और यहाँ यह शुब्हा करना दुरुस्त नहीं कि अगर अल्लाह तआ़ला के इल्म में यह बात थी कि यह लड़का काफ़िर होगा और माँ-बाप को भी गुमराह करेगा तो फिर यह वाक़िआ़ अल्लाह के इल्म के मुताबिक़ ऐसा ही वाक़े होना ज़रूरी था, क्योंकि अल्लाह के इल्म के ख़िलाफ़ कोई चीज़ नहीं हो सकती।

जवाब यह है कि अल्लाह के इल्म में इस शर्त के साथ था कि यह बालिग़ होगा तो काफ़िर होगा और दूसरे मुसलमानों के लिये भी ख़तरा बनेगा, फिर चूँकि वह बालिग़ होने की उम्र से पहले ही क़त्ल कर दिया गया तो जो वाक़िआ़ पेश आया वह उस इल्मे इलाही के विरुद्ध नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इब्ने अबी शैबा, इब्ने मुन्ज़िर, इब्ने अबी हातिम ने अ़तीया रह. की रिवायत से नक़ल किया है कि मक़्तूल लड़के के माँ-बाप को अल्लाह तआ़ला ने उसके बदले में एक लड़की अ़ता फ़रमाई जिसके पेट से एक नबी पैदा हुआ, और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की एक रिवायत में है कि उसके पेट से दो नबी पैदा हुए। कुछ रिवायतों में है कि उसके पेट से पैदा होने वाले नबी के ज़रिये अल्लाह तआ़ला ने एक बड़ी उम्मत को हिदायत अ़ता फ़रमाई।

وَكَانَ تَحْتَهُ كَنْزٌ لَّهُمَا

यह ख़ज़ाना जो यतीम बच्चों के लिये दीवार के नीचे दफ़न था उसके बारे में हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह रिवायत किया है कि वह सोने और चाँदी का ज़ख़ीरा था। (तिर्मिज़ी व हाकिम, मज़हरी)

हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि वह सोने की एक तख़्ती थी जिस पर नसीहत के निम्नलिखित कलिमात लिखे हुए थे। यह रिवायत हज़रत उस्मान बिन अ़फ़्फ़ान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने मरफ़ूअ़न रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से भी नक़ल फ़रमाई है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

1. बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम।
2. ताज्जुब है उस शख़्स पर जो तक़दीर पर ईमान रखता है फिर ग़मगीन क्योंकर होता है।
3. ताज्जुब है उस शख़्स पर जो इस पर ईमान रखता है कि रिज़्क़ का ज़िम्मेदार अल्लाह तआ़ला है फिर ज़रूरत से ज़्यादा मशक़्क़त और फ़ुज़ूल क़िस्म की कोशिश में क्यों लगता है।
4. ताज्जुब है उस शख़्स पर जो मौत पर ईमान रखता है फिर ख़ुश व ख़ुर्रम कैसे रहता है।

5. ताज्जुब है उस शख़्स पर जो आख़िरत के हिसाब पर ईमान रखता है फिर ग़फ़लत कैसे बरतता है।

6. ताज्जुब है उस शख़्स पर जो दुनिया को और इसके उलट-फेर को जानता है फिर कैसे इस पर मुत्मईन होकर बैठता है।

7. ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह।

माँ-बाप की नेकी का फ़ायदा औलाद दर औलाद को भी पहुँचता है

وَكَانَ اَبُوْهُمَا صَالِحًا

इसमें इशारा है कि यतीम बच्चों के लिये गड़े ख़ज़ाने की हिफ़ाज़त का सामान ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के ज़रिये इसलिये कराया गया था कि उन यतीम बच्चों का बाप कोई नेक आदमी था जो अल्लाह के नज़दीक मक़बूल था इसलिये अल्लाह तआ़ला ने उसकी मुराद पूरी करने और उसकी औलाद को फ़ायदा पहुँचाने का यह इन्तिज़ाम फ़रमाया। मुहम्मद बिन मुन्कदिर रह. फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआ़ला एक बन्दे की नेकी और सलाहियत की वजह से उसकी औलाद और औलाद की औलाद और उसके ख़ानदान की और उसके आस-पास के मकानात की हिफ़ाज़त फ़रमाते हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि हज़रत शिबली रह. फ़रमाया करते थे कि मैं इस शहर और पूरे इलाक़े के लिये अमान हूँ। जब उनकी वफ़ात हो गई तो उनके दफ़न होते ही दैलम के काफ़िरों ने दजला दरिया को पार करके बग़दाद पर क़ब्ज़ा कर लिया, उस वक़्त लोगों की ज़बान पर यह था कि हम पर दोहरी मुसीबत है, यानी शिबली की वफ़ात और दैलम का क़ब्ज़ा।

(क़ुर्तुबी पेज 29 जिल्द 11)

तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस आयत में इसकी तरफ़ भी इशारा है कि लोगों को भी उलेमा और नेक लोगों की औलाद की रियायत और उन पर शफ़क़त करनी चाहिये जब तक कि वे बिल्कुल ही कुफ़्र व बदकारी और बुरे आमाल में मुब्तला न हो जायें।

اَنْ يَّبْلُغَآ اَشُدَّهُمَا

लफ़्ज़ अशुद्-द शिद्दत की जमा (बहुवचन) है, मुराद क़ुव्वत है और वह उम्र जिसमें इनसान अपनी पूरी ताक़त और भले-बुरे की पहचान पर क़ादिर हो जाता है। इमाम अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक यह पच्चीस साल की उम्र है और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि चालीस साल की उम्र है, क्योंकि क़ुरआने करीम में है कि:

حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ اَشُدَّهٗ وَبَلَغَ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً. (مظهرى)

पैग़म्बराना अन्दाज़ और अदब की रियायत की एक मिसाल

इस मिसाल को समझने के लिये पहले यह बात समझ लेनी ज़रूरी है कि दुनिया में कोई अच्छा या बुरा काम अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी व इरादे के बग़ैर नहीं हो सकता। ख़ैर व शर सब उसकी मख़्लूक़ और उसके इरादे और मशीयत के ताबे हैं। जिन चीज़ों को शर या बुरा समझा और कहा जाता है वो ख़ास अफ़राद और ख़ास हालात के एतिबार से ज़रूर शर और बुरा कहलाने के पात्र होते हैं मगर दुनिया के मजमूए और आ़लमे दुनिया के मिज़ाज के लिये सब ज़रूरी और अल्लाह के बनाने के एतिबार से सब ख़ैर ही होते हैं, और सब हिक्मत पर आधारित होते हैं:

कोई बुरा नहीं क़ुदरत के कारख़ाने में

ख़ुलासा यह है कि जो आफ़त या हादसा दुनिया में पेश आता है ख़ुदा तआ़ला की मर्ज़ी व इरादे के बग़ैर नहीं हो सकता। इस लिहाज़ से हर ख़ैर व शर की निस्बत भी हक़ तआ़ला की तरफ़ हो सकती है, मगर हक़ीक़त यह है कि हक़ तआ़ला की तख़्लीक़ (बनाने और पैदा करने) के एतिबार से कोई शर शर (बुरा) नहीं होता, इसलिये अदब का तक़ाज़ा यह है कि शर की निस्बत हक़ तआ़ला की तरफ़ न की जाये, हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के कलिमात जो क़ुरआने करीम में बयान हुए हैं:

وَالَّذِیْ هُوَیُطْعِمُنِیْ وَیَسْقِیْنِ ٥ وَاِذَا مَرِضْتُ فَهُوَیَشْفِیْنِ٥

(कि अल्लाह वह है जो मुझे खिलाता पिलाता है और जब मैं बीमार हो जाता हूँ तो वह मुझे शिफ़ा देता है) इसी तालीम व अदब का सबक़ देते हैं कि खिलाने पिलाने की निस्बत हक़ तआ़ला की तरफ़ फ़रमाई, फिर बीमारी के वक़्त शिफ़ा देने की निस्बत भी उसी की तरफ़ की बीच में बीमार होने को अपनी तरफ़ मन्सूब करके कहा 'व इज़ा मरिज़्तु फ़हु-व यश्फ़ीन' "यानी जब मैं बीमार हो जाता हूँ तो अल्लाह तआ़ला मुझे शिफ़ा अ़ता फ़रमा देते हैं।" यूँ नहीं कहा कि जब वह मुझे बीमार करते हैं तो शिफ़ा भी देते हैं।

अब हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के कलाम पर ग़ौर कीजिये उन्होंने जब कश्ती तोड़ने का इरादा किया तो वह चूँकि ज़ाहिर में एक ऐब और बुराई है उसके इरादे की निस्बत अपनी तरफ़ करके फ़रमाया 'अरदत्तु' (मैंने इरादा किया) फिर लड़के को क़त्ल करने और उसके बदले में उससे बेहतर औलाद देने का ज़िक्र किया तो उसमें क़त्ल तो बुराई थी और बदले में बेहतर औलाद देना एक भलाई थी, संयुक्त और साझा मामला होने की वजह से यहाँ बहुवचन का कलिमा इस्तेमाल फ़रमाया अरद्ना "यानी हमने इरादा किया" ताकि इसमें जितना ज़ाहिरी शर (बुराई) है वह अपनी तरफ़ और जो ख़ैर (भलाई और अच्छाई) है वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मन्सूब हो। तीसरे वाक़िए में दीवार खड़ी करके यतीमों का माल महफ़ूज़ कर देना सरासर ख़ैर ही ख़ैर है, उसकी निस्बत पूरी की पूरी हक़ तआ़ला की तरफ़ करके फ़रमायाः

فَاَرَادَ رَبُّكَ

"यानी आपके रब ने इरादा किया।"

ख़ज़िर अलैहिस्सलाम ज़िन्दा हैं या उनकी वफ़ात हो चुकी

क़ुरआने करीम में जो वाक़िआ हज़रत ख़ज़िर अलैहिस्सलाम का बयान हुआ है उसका इस मामले से कोई ताल्लुक़ नहीं है कि ख़ज़िर अलैहिस्सलाम इस वाक़िए के बाद वफ़ात पा गये या ज़िन्दा रहे, इसी लिये क़ुरआन व सुन्नत में इसके मुताल्लिक़ कोई स्पष्ट बात मज़कूर नहीं। कुछ रिवायतों और अक़वाल से उनका अब तक ज़िन्दा होना मालूम होता है कुछ रिवायतों से इसके ख़िलाफ़ समझ में आता है, इसी लिये इस मामले में हमेशा से उलेमा की रायें भिन्न रही हैं। जो हज़रात उनकी ज़िन्दगी के क़ायल हैं उनकी दलील एक तो उस रिवायत से है जिसको इमाम हाकिम ने मुस्तद्रक में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हुई तो एक शख़्स काली-सफ़ेद दाढ़ी वाले दाख़िल हुए और लोगों के मजमे को चीरते फाड़ते अन्दर पहुँचे और रोने लगे, फिर सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम की तरफ़ मुतवज्जह होकर ये कलिमात कहे:

اِنَّ فِی اللّٰہِ عَزَآءً مِّنْ کُلِّ مُصِیْبَۃٍ وَّعِوَضًا مِّنْ کُلِّ فَآئِتٍ وَّخَلَفًا مِّنْ کُلِّ ھَالِکٍ فَاِلَی اللّٰہِ فَاَنِیْبُوْا وَاِلَیْہِ فَارْغَبُوْا وَنَظْرُہٗ اِلَیْکُمْ فِی الْبَلَاءِ فَانْظُرُوْا فَاِنَّمَا الْمُصَابُ مَنْ لَّمْ یُجْبَرْ.

"अल्लाह की बारगाह में सब्र है हर मुसीबत से और बदला है हर फ़ौत होने वाली चीज़ का और वही क़ायम-मक़ाम है हर हलाक होने वाले का, इसलिये उसी की तरफ़ रुजू करो उसी की तरफ़ तवज्जोह करो और इस बात को देखो कि वह मुसीबत में मुब्तला करके तुमको आज़माता है, असल मुसीबत का मारा वह है जिसकी मुसीबत की तलाफ़ी न हो।"

यह कलिमात कहकर आने वाले साहिब रुख़्सत हो गये तो हज़रत अबू बक्र और अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुमा ने फ़रमाया कि यह ख़ज़िर अलैहिस्सलाम थे। इस रिवायत को जज़री रह. ने हिसने-हसीन में भी नक़ल किया है जिनकी शर्त यह है कि सिर्फ़ सही सनद वाली रिवायतें उसमें दर्ज करते हैं।

और सही मुस्लिम की हदीस में है कि दज्जाल मदीना तय्यिबा के क़रीब एक जगह तक पहुँचेगा तो मदीना से एक शख़्स उसके मुक़ाबले के लिये निकलेगा, जो उस ज़माने के सब इनसानों में बेहतर होगा या बेहतर लोगों में से होगा। अबू इस्हाक़ ने फ़रमाया कि यह शख़्स हज़रत ख़ज़िर अलैहिस्सलाम होंगे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और इब्ने अबिद्दुनिया ने किताबुल-हवातिफ़ में सनद के साथ नक़ल किया है कि हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत ख़ज़िर अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात की तो ख़ज़िर अलैहिस्सलाम ने उनको एक दुआ बतलाई कि जो इसको हर नमाज़ के बाद पढ़ा करे उसके लिये बड़ा सवाब और मग़फ़िरत व रहमत है। वह दुआ यह है:

يَامَنْ لَا يَشْغَلُهُ سَمْعٌ عَنْ سَمْعٍ وَيَامَنْ لَا تُغَلِّطُهُ الْمَسَائِلُ وَيَامَنْ لَا يَبْرَمُ مِنْ اِلْحَاحِ الْمُلِحِّيْنَ اَذِقْنِيْ بَرْدَ عَفْوِكَ وَحَلَاوَةَ مَغْفِرَتِكَ. (قرطبی)

"ऐ वह ज़ात जिसको एक कलाम का सुनना दूसरे कलाम के सुनने से रुकावट नहीं होता और ऐ वह ज़ात जिसको एक ही वक़्त में होने वाले (लाखों करोड़ों) सवालात में कोई मुग़ालता नहीं लगता, और ऐ वह ज़ात जो दुआ में रोने-गिड़गिड़ाने और बार-बार कहने से रन्जीदा नहीं होता मुझे अपने अ़फ़्व व करम का ज़ायक़ा चखा दीजिये और अपनी मग़फ़िरत की मिठास नसीब फ़रमाईये।"

और फिर इसी किताब में बिल्कुल यही वाक़िआ और यही दुआ और ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से मुलाक़ात का वाक़िआ हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी नक़ल किया है। (क़ुर्तुबी) इसी तरह उम्मत के औलिया में हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के बेशुमार वाक़िआत मन्क़ूल हैं।

और जो हज़रात ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के ज़िन्दा होने को तस्लीम नहीं करते उनकी बड़ी दलील उस हदीस से है जो सही मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है, वह फ़रमाते हैं कि एक रात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें इशा की नमाज़ अपनी ज़िन्दगी के आख़िरी दौर में पढ़ाई, सलाम फेरने के बाद आप खड़े हो गये और ये कलिमात इरशाद फ़रमायेः

اَرَءَيْتَكُمْ لَيْلَتَكُمْ هٰذِهٖ فَاِنَّ عَلٰى رَأْسِ مِائَةِ سَنَةٍ مِّنْهَا لَا يَبْقٰى مِمَّنْ هُوَ عَلٰى ظَهْرِ الْاَرْضِ اَحَدٌ.

"क्या तुम अपनी आजकी रात को देख रहो कि इस रात से सौ साल गुज़रने पर कोई शख़्स उनमें से ज़िन्दा न रहेगा जो आज ज़मीन के ऊपर है।"

हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह रिवायत नक़ल करके फ़रमाया कि इस रिवायत के बारे में लोग मुख़्तलिफ़ बातें करते हैं मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुराद यह थी कि सौ साल पर यह क़र्न (ज़माना और दौर) ख़त्म हो जायेगा।

यह रिवायत मुस्लिम में हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी तक़रीबन इन्हीं अलफ़ाज़ के साथ मन्क़ूल है लेकिन अ़ल्लामा क़ुर्तुबी रह. ने यह रिवायत नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि इसमें उन लोगों के लिये कोई हुज्जत नहीं जो ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की ज़िन्दगी को बातिल कहते हैं, क्योंकि इस रिवायत को अगरचे तमाम इनसानों के लिये उमूम के अलफ़ाज़ हैं और उमूम को भी ताकीद के साथ लाया गया है, मगर फिर भी इसमें यह वज़ाहत नहीं कि यह उमूम तमाम इनसानों को शामिल ही हो, क्योंकि इनसानों में तो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम भी शामिल हैं जिनकी न वफ़ात हुई और न क़त्ल किये गये, इसलिये ज़ाहिर यह है कि हदीस के अलफ़ाज़ 'अ़लल् अर्ज़ि' में अलिफ़ लाम अ़हद का है और मुराद अर्ज़ (ज़मीन) से अ़रब की ज़मीन है पूरी ज़मीन जिसमें याजूज व माजूज की ज़मीन और पूर्वी इलाक़े और जज़ीरे (द्वीप) जिनका नाम भी अ़रब वालों ने नहीं सुना इसमें शामिल नहीं, यह अ़ल्लामा क़ुर्तुबी की

तहक़ीक़ है।

इसी तरह कुछ हज़रात ने ख़त्म-ए-नुबुव्वत के मसले को ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के ज़िन्दा होने के विरुद्ध समझा है, इसका जवाब भी ज़ाहिर है कि जिस तरह हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का ज़िन्दा होना ख़त्म-ए-नुबुव्वत के ख़िलाफ़ नहीं हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की हयात (ज़िन्दा होना) भी ऐसी ही हो सकती है।

कुछ हज़रात ने ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम के ज़िन्दा होने पर यह शुब्हा किया है कि अगर वह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में मौजूद होते तो उन पर लाज़िम था कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होते और आपके ताबे होकर इस्लामी ख़िदमात में मशग़ूल होते, क्योंकि हदीस में इरशाद है:

لَوْ كَانَ مُوْسٰى حَيًّا لَّمَا وَسِعَهٗ اِلَّا اتِّبَاعِيْ.

"यानी अगर मूसा अ़लैहिस्सलाम आज ज़िन्दा होते तो उनको भी मेरा ही इत्तिबा करना पड़ता (क्योंकि मेरे आने से दीने मूसवी निरस्त व ख़त्म हो चुका है)।" लेकिन यह कुछ बईद नहीं कि हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की ज़िन्दगी और उनकी नुबुव्वत शरीअ़त वाले आम अम्बिया से भिन्न और अलग हो, उनको चूँकि तकवीनी (क़ुदरती और कायनाती) ख़िदमात अल्लाह तआ़ला की जानिब से सुपुर्द हैं, वह उनके लिये मख़्लूक़ से अलग-थलग अपने काम के पाबन्द हैं, रही शरीअ़ते मुहम्मदिया की पैरवी तो इसमें कोई दूर की बात नहीं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत के बाद से उन्होंने अपना अ़मल शरीअ़ते मुहम्मदिया पर शुरू कर दिया हो। वल्लाहु आलम

अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे मुहीत में कई बुज़ुर्गों के वाक़िआ़त हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से मुलाक़ात के भी नक़ल किये हैं, मगर साथ ही यह भी फ़रमाया है कि:

وَالْجُمْهُوْرُ عَلٰى اَنَّهٗ مَاتَ (بحر محیط ص ۱۴۷ ج ۶)

"उलेमा की अक्सरियत और बड़ी जमाअ़त इस पर हैं कि ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात हो गई है।"

तफ़सीरे मज़हरी में हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने फ़रमाया कि तमाम शुब्हात का हल उसमें है जो हज़रत सैयद अहमद सरहंदी मुजद्दिद अल्फ़े सानी रह. ने अपने मुकाशफ़े से फ़रमाया वह यह कि मैंने ख़ुद हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम से इस मामले को आ़लमे कश्फ़ में दरियाफ़्त किया, उन्होंने फ़रमाया कि मैं और इलियास अ़लैहिस्सलाम हम दोनों ज़िन्दा नहीं हैं, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने हमें यह क़ुदरत बख़्शी है कि हम ज़िन्दा आदमियों की शक्ल में ज़ाहिर होकर लोगों की इमदाद विभिन्न सूरतों में करते हैं। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम

यह बात मैं पहले ही लिख चुका हूँ कि हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की मौत व ज़िन्दगी से हमारा कोई एतिक़ादी या अ़मली मसला संबन्धित नहीं, इसी लिये क़ुरआन व सुन्नत में इसके मुताल्लिक़ कोई स्पष्टता और वज़ाहत नहीं की गई, इसलिये इसमें ज़्यादा बहस व तहक़ीक़ और

खोजबीन की भी ज़रूरत नहीं, न किसी एक जानिब का यक़ीन रखना हमारे लिये ज़रूरी है, लेकिन चूँकि मसला अ़वाम में चला हुआ है इसलिये उपर्युक्त तफ़सीलात नक़ल कर दी गई हैं।

وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنْ ذِى الْقَرْنَيْنِ ۖ قُلْ سَاَتْلُوا عَلَيْكُمْ مِّنْهُ ذِكْرًا ﴿٨٣﴾ اِنَّا مَكَّنَّا لَهٗ فِى الْاَرْضِ وَاٰتَيْنٰهُ مِنْ كُلِّ شَىْءٍ سَبَبًا ﴿٨٤﴾ فَاَتْبَعَ سَبَبًا ﴿٨٥﴾ حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ مَغْرِبَ الشَّمْسِ وَجَدَهَا تَغْرُبُ فِىْ عَيْنٍ حَمِئَةٍ وَّوَجَدَ عِنْدَهَا قَوْمًا ۬ ؕ قُلْنَا يٰذَا الْقَرْنَيْنِ اِمَّآ اَنْ تُعَذِّبَ وَاِمَّآ اَنْ تَتَّخِذَ فِيْهِمْ حُسْنًا ﴿٨٦﴾ قَالَ اَمَّا مَنْ ظَلَمَ فَسَوْفَ نُعَذِّبُهٗ ثُمَّ يُرَدُّ اِلٰى رَبِّهٖ فَيُعَذِّبُهٗ عَذَابًا نُّكْرًا ﴿٨٧﴾ وَاَمَّا مَنْ اٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهٗ جَزَآءَ ۨالْحُسْنٰى ۚ وَسَنَقُوْلُ لَهٗ مِنْ اَمْرِنَا يُسْرًا ﴿٨٨﴾

व यस्अलून-क अ़न् ज़िल्क़र्नैनि, क़ुल् स-अत्लू अ़लैकुम् मिन्हु ज़िक्रा (83) इन्ना मक्कन्ना लहू फ़िल्अर्ज़ि व आतैनाहु मिन् कुल्लि शैइन् स-बबा (84) फ़-अत्ब-अ़ स-बबा (85) हत्ता इज़ा ब-ल-ग़ मग़्रिबश्शम्सि व-ज-दहा तग़्रुबु फ़ी अ़ैनिन् हमि-अतिंव्-व व-ज-द अ़िन्दहा क़ौमन्, क़ुल्ना या ज़ल्क़र्नैनि इम्मा अन् तुअ़ज़्ज़ि-ब व इम्मा अन् तत्तख़ि-ज़ फ़ीहिम् हुस्ना (86) क़ा-ल अम्मा मन् ज़-ल-म फ़सौ-फ़ नुअ़ज़्ज़िबुहू सुम्-म युरद्दु इला रब्बिही फ़युअ़ज़्ज़िबुहू अ़ज़ाबन्-नुक्रा (87) व अम्मा मन् आम-न व अ़मि-ल सालिहन् फ़-लहू जज़ा-अ निल्हुस्ना व स-नक़ूलु लहू मिन् अम्रिना युस्रा (88)

और तुझसे पूछते हैं ज़ुल्क़रनैन को, कह अब पढ़ता हूँ तुम्हारे आगे उसका कुछ अहवाल। (83) हमने उसको जमाया था मुल्क में और दिया था हमने उसको हर चीज़ का सामान। (84) फिर पीछे पड़ा एक सामान के। (85) यहाँ तक कि जब पहुँचा सूरज डूबने की जगह पाया कि वह डूबता है एक दलदल की नदी में और पाया उसके पास लोगों को, हमने कहा ऐ ज़ुल्क़रनैन या तो तू लोगों को तकलीफ़ दे और या रख उनमें ख़ूबी। (86) बोला जो कोई होगा बेइन्साफ़ सो हम उसको सज़ा देंगे, फिर लौट जायेगा अपने रब के पास वह अ़ज़ाब देगा उसको बुरा अ़ज़ाब। (87) और जो कोई यक़ीन लाया और किया उसने भला काम सो उसका बदला भलाई है, और हम हुक्म देंगे उसको अपने काम में आसानी का। (88)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ज़ुल्क़रनैन का पहला सफ़र

और ये लोग आप से ज़ुल्क़रनैन का हाल पूछते हैं (इस पूछने की वजह यह लिखी है कि उनका इतिहास क़रीब-क़रीब गुम था, और इसी लिये इस क़िस्से की जो बातें और पहलू क़ुरआन में बयान नहीं हुए कि वह असल क़िस्से से ज़्यादा थे, उन बातों के मुताल्लिक़ आज तक इतिहासकारों में सख़्त मतभेद पाये जाते हैं। इसी वजह से मक्का के क़ुरैश ने मदीने के यहूदियों के मश्चिरे से इस क़िस्से को सवाल के लिये चुना था इसलिये इस क़िस्से की तफ़सीलात जो क़ुरआन में बयान हुई हैं वह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत की स्पष्ट दलील है)। आप फ़रमा दीजिये कि मैं उनका ज़िक्र अभी तुम्हारे सामने बयान करता हूँ (आगे हक़ तआ़ला की तरफ़ से इसकी हिकायत शुरू हुई कि ज़ुल्क़रनैन एक ऐसे अ़ज़ीमुश्शान बादशाह गुज़रे हैं कि) हमने उनको धरती पर हुकूमत दी थी, और हमने उनको हर क़िस्म का (काफ़ी) सामान दिया था (जिससे वह अपनी शाही योजनाओं को पूरा कर सकें)। चुनाँचे वह (पश्चिमी मुल्कों को फ़तह करने के इरादे से) एक राह पर हो लिये (और सफ़र करना शुरू किया) यहाँ तक कि जब (सफ़र करते-करते दरमियानी शहरों को फ़तह करते हुए) सूरज डूबने के मौक़े (यानी पश्चिमी दिशा में आबादी की आख़िरी हद) पर पहुँचे तो सूरज उनको एक काले रंग के पानी में डूबता हुआ दिखाई दिया (मुराद इससे ग़ालिबन समन्दर ही है कि उसका पानी अक्सर जगह सियाह नज़र आता है और अगरचे सूरज हक़ीक़त में समन्दर में ग़ुरूब नहीं होता मगर समन्दर से आगे निगाह न जाती हो तो समन्दर ही में डूबता हुआ मालूम होगा), और उसी जगह पर उन्होंने एक क़ौम देखी (जिनके काफ़िर होने पर अगली आयत यानी आयत नम्बर 87 दलालत करती है)। हमने (इल्हाम के द्वारा या उस ज़माने के पैग़म्बर के वास्ते से) यह कहा कि ऐ ज़ुल्क़रनैन! (इस क़ौम के बारे में दो इख़्तियार हैं) चाहे (इनको शुरूआ़त ही से क़त्ल वग़ैरह के ज़रिये) सज़ा दो और चाहे इनके बारे में नर्मी का मामला अपनाओ (यानी इनको ईमान की दावत दो, फिर न मानें तो क़त्ल कर दो। बग़ैर तब्लीग़ व दावत के शुरू ही में क़त्ल करने का इख़्तियार शायद इसलिये दिया गया हो कि उनको इससे पहले किसी माध्यम से ईमान की दावत पहुँच चुकी होगी, लेकिन दूसरी सूरत यानी पहले दावत फिर क़त्ल का बेहतर होना इशारे से बयान कर दिया कि इस सूरत को ख़ूबी और अच्छाई वाली बात से ताबीर फ़रमाया)।

ज़ुल्क़रनैन ने अ़र्ज़ किया कि (मैं दूसरी ही सूरत इख़्तियार करके पहले उनको ईमान ही की दावत दूँगा) लेकिन (ईमान की दावत के बाद) जो ज़ालिम (यानी काफ़िर) रहेगा उसको तो हम लोग (क़त्ल वग़ैरह की) सज़ा देंगे (और यह सज़ा तो दुनिया में होगी) फिर वह (मरने के बाद) अपने असली मालिक के पास पहुँचा दिया जायेगा, फिर वह उसको (दोज़ख़ की) सख़्त सज़ा देगा। और जो शख़्स (ईमान की दावत के बाद) ईमान ले आयेगा और नेक अ़मल करेगा तो

उसके लिये (आख़िरत में भी) बदले में भलाई मिलेगी, और हम भी (दुनिया में) अपने बर्ताव में उसको आसान (और नर्म) बात कहेंगे (यानी उन पर कोई अ़मली सख़्ती तो क्या की जाती ज़बानी और बात से भी कोई सख़्ती नहीं की जायेगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यस्अलून-क (यानी वे लोग आप से सवाल करते हैं) ये लोग सवाल करने वाले कौन हैं रिवायतों से यह ज़ाहिर होता है कि वे मक्का के क़ुरैश थे, जिनको यहूदियों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत और सच्चा रसूल होने का इम्तिहान करने के लिये तीन सवाल बतलाये थे— रूह के मुताल्लिक़ और अस्हाबे कहफ़ और ज़ुल्क़रनैन के बारे में, इनमें से दो का जवाब आ चुका है, अस्हाबे कहफ़ का क़िस्सा अभी गुज़रा है और रूह का सवाल पिछली सूरत के आख़िर में गुज़र चुका है, यह तीसरा सवाल है कि ज़ुल्क़रनैन कौन था और उसको क्या हालात पेश आये। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

ज़ुल्क़रनैन के बारे में तफ़सीलात

ज़ुलक़रनैन का नाम ज़ुल्क़रनैन क्यों हुआ? इसकी वजह में बेशुमार अक़वाल और सख़्त भारी मतभेद हैं। कुछ हज़रात बाज़ ने कहा कि उनकी दो ज़ुल्फ़ें थीं इसलिये ज़ुल्क़रनैन कहलाये। कुछ ने कहा कि पूरब व पश्चिम के मुल्कों पर शासक व हाकिम हुए इसलिये ज़ुल्क़रनैन नाम रखा गया। किसी ने यह भी कहा कि उनके सर पर कुछ ऐसे निशानात थे जैसे सींग के होते हैं। कुछ रिवायतों में है कि उनके सर पर दोनों तरफ़ चोट के निशानात थे इसलिये ज़ुल्क़रनैन कहा गया। वल्लाहु आलम

मगर इतनी बात मुतैयन है कि क़ुरआन ने ख़ुद उनका नाम ज़ुल्क़रनैन नहीं रखा बल्कि यह नाम यहूदियों ने बतलाया, उनके यहाँ इस नाम से उनकी शोहरत होगी। ज़ुल्क़रनैन के वाक़िए का जितना हिस्सा क़ुरआने करीम ने बतलाया है वह सिर्फ़ इतना है कि:

> "वह एक नेक आ़दिल बादशाह थे जो पूरब व पश्चिम में पहुँचे और उनके मुल्कों को फ़तह किया और उनमें अ़दल व इन्साफ़ की हुक्मरानी की, अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उनको हर तरह के सामान अपने मक़सदों को पूरा करने के लिये अ़ता कर दिये गये थे, उन्होंने विजय प्राप्त करते हुए तीन दिशाओं में सफ़र किये, पश्चिम में आख़िरी किनारे तक, और पूरब में आख़िरी किनारे तक, फिर उत्तरी दिशा में पहाड़ी श्रंखलाओं तक, इसी जगह उन्होंने दो पहाड़ों के दरमियानी दर्रे को एक अ़ज़ीमुश्शान लोहे की दीवार के ज़रिये बन्द कर दिया जिससे याजूज माजूज की लूटमार और तबाही मचाने से इस इलाक़े के लोग महफ़ूज़ हो गये।"

यहूदियों ने जो सवाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चा होने और नुबुव्वत का इम्तिहान करने के लिये पेश किया था वे इस जवाब से मुत्मईन हो गये, उन्होंने मज़ीद ये

सवालात नहीं किये कि उनका नाम ज़ुल्क़रनैन क्यों था? यह किस मुल्क और किस ज़माने में थे? इससे मालूम होता है कि इन सवालात को खुद यहूदियों ने भी ग़ैर-ज़रूरी और फ़ुज़ूल समझा और यह ज़ाहिर है कि क़ुरआने करीम इतिहास व किस्सों का सिर्फ़ उतना हिस्सा ज़िक्र करता है जिससे कोई फ़ायदा दीन या दुनिया का संबन्धित हो, या जिस पर किसी ज़रूरी चीज़ का समझना मौक़ूफ़ हो, इसलिये न क़ुरआने करीम ने इन चीज़ों को बतलाया और न किसी सही हदीस में इसकी ये तफ़सीलात बयान की गईं और न क़ुरआन मजीद की किसी आयत का समझना इन चीज़ों के इल्म पर मौक़ूफ़ है, इसलिये पहले बुज़ुर्गों सहाबा व ताबिईन ने भी इस पर कोई ख़ास तवज्जोह नहीं दी।

अब मामला सिर्फ़ ऐतिहासिक रिवायतों का या मौजूदा तौरात व इन्जील का रह गया, और यह भी ज़ाहिर है कि मौजूदा तौरात व इन्जील को भी लगातार रद्दोबदल और कमी-बेशी ने एक आसमानी किताब की हैसियत में नहीं छोड़ा, इनका मक़ाम भी अब ज़्यादा से ज़्यादा एक तारीख़ ही का हो सकता है, और पुराने ज़माने की तारीख़ी रिवायतें ज़्यादातर इस्राईली किस्सों कहानियों से ही भरी हुई हैं, जिनकी न कोई सनद है न वे किसी ज़माने के अक़्लमन्दों व बुद्धिमानों के नज़दीक भरोसे के क़ाबिल पाई गई हैं। हज़राते मुफ़स्सिरीन ने भी इस मामले में जो कुछ लिखा वह सब इन्हीं तारीख़ी रिवायतों का मजमूआ है, इसी लिये उनमें बहुत ज़्यादा मतभेद हैं।

यूरोप के लोगों ने इस ज़माने में तारीख़ को बड़ी अहमियत दी, इस पर तहक़ीक़ व तफ़तीश में बिला शुब्हा बड़ी मेहनत व कोशिश से काम लिया। पुराने निशानात, इमारतों और खण्डरों वग़ैरह की खुदाई और वहाँ की तहरीरों व कतबों वग़ैरह को जमा करके उनके ज़रिये पुराने वाक़िआत की हक़ीक़त तक पहुँचने में वो काम अन्जाम दिये जो इससे पहले ज़माने में नज़र नहीं आते। लेकिन पुराने निशानात (पुरातत्व) और उनके कतबों से किसी वाक़िए की ताईद में मदद तो मिल सकती है मगर खुद उनसे कोई वाक़िआ पूरा नहीं पढ़ा जा सकता, इसके लिये तो तारीख़ी रिवायतें ही बुनियाद बन गई हैं, और इन मामलों में पुराने ज़माने की तारीख़ी रिवायतों का हाल अभी मालूम हो चुका है कि एक कहानी से ज़्यादा हैसियत नहीं रखतीं। पहले और बाद के उलेमा-ए-तफ़सीर ने भी अपनी किताबों में ये रिवायतें एक तारीख़ी हैसियत ही से नक़ल की हैं, जिनके सही होने पर कोई क़ुरआनी मक़सद मौक़ूफ़ नहीं, यहाँ भी इसी हैसियत से ज़रूरत के मुताबिक़ लिखा जाता है। इस वाक़िए की पूरी तफ़तीश व तहक़ीक़ मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान साहिब रह. ने अपनी किताब 'क़ससुल-क़ुरआन' में लिखी है, तारीख़ी ज़ौक़ रखने वाले हज़रात उसको देख सकते हैं।

कुछ रिवायतों में है कि पूरी दुनिया पर सल्तनत व हुकूमत करने वाले चार बादशाह हुए हैं, दो मोमिन और दो काफ़िर। मोमिन बादशाह हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम और ज़ुल्क़रनैन हैं, और काफ़िर नमरूद और बुख़्ते नस्सर हैं।

ज़ुल्क़रनैन के मामले में यह अजीब इत्तिफ़ाक़ है कि इस नाम से दुनिया में कई आदमी मशहूर हुए हैं, और यह भी अजीब बात है कि हर ज़माने के ज़ुल्क़रनैन के साथ लक़ब सिकन्दर

भी शामिल है।

हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम से तक़रीबन तीन सौ साल पहले एक बादशाह सिकन्दर के नाम से परिचित व मशहूर है जिसको सिकन्दरे यूनानी, मक़दूनी, रूमी वग़ैरह के लक़बों (उप नामों) से याद किया जाता है, जिसका वज़ीर अरस्तू था, और जिसकी जंग दारा से हुई, और उसे क़त्ल करके उसका मुल्क फ़तह किया। सिकन्दर के नाम से दुनिया में मशहूर होने वाला आख़िरी शख़्स यही है, इसी के क़िस्से दुनिया में ज़्यादा मशहूर हैं। कुछ लोगों ने इसको भी क़ुरआन में ज़िक्र हुआ ज़ुल्क़रनैन कह दिया, यह सरासर ग़लत है, क्योंकि यह शख़्स आतिश-परस्त (आग को पूजने वाला) मुश्रिक था, क़ुरआने करीम ने जिस ज़ुल्क़रनैन का ज़िक्र किया है उनके नबी होने में तो उलेमा का मतभेद है मगर नेक मोमिन होने पर सब का इत्तिफ़ाक़ है और ख़ुद क़ुरआन की आयतें इस पर सुबूत हैं।

हाफ़िज़ इब्ने कसीर ने अपनी किताब 'अल-बिदाया वन्निहाया' में इब्ने अ़साकिर के हवाले से उसका पूरा नसब नामा लिखा है जो ऊपर जाकर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम से मिलता है, और फ़रमाया कि यही वह सिकन्दर है जो यूनानी मिस्री मक़दूनी के नामों से परिचित है, जिसने अपने नाम पर शहर अस्कन्दरिया आबाद किया, और रूम की तारीख़ इसी के ज़माने से चलती है, और यह सिकन्दर ज़ुल्क़रनैन प्रथम से एक लम्बे ज़माने के बाद हुआ है, जो दो हज़ार साल से ज़्यादा बतलाया जाता है, इसी ने दारा को क़त्ल किया और फ़ारस के बादशाहों को पराजित करके उनका मुल्क फ़तह किया, मगर यह शख़्स मुश्रिक था इसको क़ुरआन में ज़िक्र हुए ज़ुल्क़रनैन क़रार देना सरासर ग़लती है। इब्ने कसीर के अपने अलफ़ाज़ ये हैं:

فاماذوالقرنين الثانی فهواسكندربن فيلبس بن مصريح بن برس بن مبطون بن رومی بن نعطی بن يونان بن يافث بن يونه بن شرخون بن رومه بن شرخط بن توفيل بن رومی بن الاصفر بن يقزبن العيص بن اسحٰق بن ابرٰهيم الخليل عليه الصلوٰة والسلام كذا نسبه الحافظ ابن عساكر فی تاريخه المقدونی، اليونانی المصری بانی الاسكندرية الذی يؤرخ بايامه الروم وكان متاخرًا عن الاول بدهرطويل وكان هذا قبل المسيح بنحو من ثلثمائة سنة وكان ارطاطاليس الفيلسوف وزيره وهوالذی قتل داراواذل ملوك الفرس واوطأ ارضهم وانما نبهنا عليه لان كثيرًا من الناس يعتقد انهما واحد وان المذكور فی القراٰن هوالذی كان ارطاطاليس وزيره فيقع بسبب ذلك خطأكبير وفساد عريض طويل فان الاول كان عبدًا مؤمنا صالحًا وملكا عادلًا وكان وزيره الخضروقد كان نبيًا علی ما قررناه قبل هذا واما الثانی فكان مشركا كان وزيره فيلسوفًا وقدكان بين زمانيهما ازيد من الفی سنة فاين هذا من هذا لا يستويان ولا يشتبهان الاعلی غبی لا يعرف حقائق الامور. (البداية والنهاية ص١٠٦ ج٢)

हदीस व तारीख़ के इमाम इब्ने कसीर की इस तहक़ीक़ से एक तो यह मुग़ालता दूर हुआ कि यह अस्कन्दर जो हजरत मसीह अ़लैहिस्सलाम से तीन सौ साल पहले गुज़रा है और जिसकी जंग दारा और फ़ारस के बादशाहों से हुई और जो अस्कन्द्रिया का संस्थापक है यह वह

ज़ुल्क़रनैन नहीं जिसका क़ुरआने करीम में ज़िक्र आया है, यह मुग़ालता कुछ बड़े मुफ़स्सिरीन को भी लगा है। अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे मुहीत में और अ़ल्लामा आलूसी ने तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में इसी को क़ुरआन में ज़िक्र हुआ ज़ुल्क़रनैन कह दिया है।

दूसरी बात 'व इन्नहू का-न नबिय्यन' के जुमले से यह मालूम होती है कि इब्ने कसीर के नज़दीक उनका नबी होना वरीयता प्राप्त है अगरचे उलेमा की अक्सरियत के नज़दीक ज़्यादा सही वह क़ौल है जो ख़ुद इब्ने कसीर ने अबी तुफ़ैल की रिवायत से हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से नक़ल किया है कि न वह नबी थे न फ़रिश्ता, बल्कि एक नेक सालेह मुसलमान थे, इसी लिये कुछ उलेमा ने इसका यह मतलब बयान किया है कि 'इन्नहू का-न' में जिसकी तरफ़ इशारा है वह ज़ुल्क़रनैन नहीं बल्कि हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम हैं। और यही ज़्यादा सही मालूम होता है।

अब मसला यह रहता है कि फिर वह ज़ुल्क़रनैन जिनका ज़िक्र क़ुरआने करीम में है कौन हैं? और किस ज़माने में हुए हैं? इसके बारे में भी उलेमा के अक़वाल बहुत भिन्न और अलग-अलग हैं, इब्ने कसीर के नज़दीक उनका ज़माना अस्कन्दरे यूनानी मक़दूनी से दो हज़ार साल पहले हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का ज़माना है और उनके वज़ीर हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम थे। इब्ने कसीर रह. ने 'अल-बिदाया वन्निहाया' में पहले बुज़ुर्गों और उलेमा से यह रिवायत भी नक़ल की है कि ज़ुल्क़रनैन पैदल चलकर हज के लिये पहुँचे, जब हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को उनके आने का इल्म हुआ तो मक्का से बाहर निकलकर स्वागत किया और हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने उनके लिये दुआ भी की और कुछ वसीयतें और नसीहतें भी उनको फ़रमाईं। (अल-बिदाया पेज 108 जिल्द 2)

और तफ़सीर इब्ने कसीर में अज़रक़ी के हवाले से नक़ल किया है कि उसने हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के साथ तवाफ़ किया फिर क़ुरबानी दी।

और अबू रेहान बैरूनी ने अपनी किताब 'आसार-ए-बाक़िया अ़न क़ुरूनिल-ख़ालिया' में कहा है कि यह ज़ुल्क़रनैन जिनका ज़िक्र क़ुरआन में है अबू बक्र बिन सम्मी बिन उमर बिन अफ़रीक़ीस हमीरी है, जिसने ज़मीन के पूरब व पश्चिम को फ़तह किया और तुब्बा हमीरी यमनी ने अपने शे'रों में इस पर गर्व किया है कि मेरे दादा ज़ुल्क़रनैन मुसलमान थे, उनके शे'र ये हैं:

قد كان ذوالقرنين جدى مسلمًا   ملكًا علا فى الارض غير مبعّد

بَلَغ الْمَشَارِقَ وَالْمَغَارِبَ يَبْتَغِىْ   اَسْبَابَ مُلْكٍ مِّنْ كَرِيْمٍ سَيِّدٍ

यह रिवायत तफ़सीर बहरे मुहीत में अबू हय्यान ने नक़ल की है। इब्ने कसीर ने भी 'अल-बिदाया वन्निहाया' में इसका ज़िक्र करने के बाद कहा कि यह ज़ुल्क़रनैन यमन के तबाबआ़ में से सबसे पहला तुब्बा है, और यही वह शख़्स है जिसने सबअ़् कुएँ के बारे में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के हक़ में फ़ैसला दिया था। (अल-बिदाया पेज 105 जिल्द 2)

इन तमाम रिवायतों में उनकी शख़्सियत और नाम व नसब (ख़ानदान) के बारे में मतभेद

होने के बावजूद उनका ज़माना हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का ज़माना बतलाया गया है।

और मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान साहिब रह. ने अपनी किताब 'क़ससुल-क़ुरआन' में जो ज़ुल्क़रनैन के बारे में बड़ी तफ़सील के साथ बहस की है उसका ख़ुलासा यह है कि क़ुरआन में ज़िक्र हुआ ज़ुल्क़रनैन फ़ारस का वह बादशाह है जिसको यहूदी ख़ोरस, यूनानी सायरस, फ़ारसी गोरश और अरब के लोग केख़ुसरो कहते हैं, जिसका ज़माना हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम से बहुत बाद में बनी इस्राईल के नबियों में से दानियाल अ़लैहिस्सलाम का ज़माना बतलाया जाता है जो सिकन्दरे मक़दूनी क़ातिले दारा के ज़माने के क़रीब-क़रीब हो जाता है, मगर मौलाना मौसूफ़ ने भी इब्ने कसीर वग़ैरह की तरह इसका सख़्ती से इनकार किया है कि ज़ुल्क़रनैन वह सिकन्दरे मक़दूनी जिसका वज़ीर अरस्तू था वह नहीं हो सकता, वह मुश्रिक आग को पूजने वाला था, यह मोमिन और नेक थे।

मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान की तहक़ीक़ का ख़ुलासा यह है कि क़ुरआने करीम की सूरः बनी इस्राईल में जो दो मर्तबा बनी इस्राईल के शर व फ़साद में मुब्तला होने और दोनों मर्तबा की सज़ा का ज़िक्र तफ़सील से आया है इसमें बनी इस्राईल के पहले फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) के मौक़े पर जो क़ुरआने करीम ने फ़रमाया है:

بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَّنَآ اُولِىْ بَاْسٍ شَدِيْدٍ فَجَاسُوْا خِلٰلَ الدِّيَارِ.

(यानी तुम्हारे फ़साद की सज़ा में हम मुसल्लत कर देंगे तुम पर अपने कुछ ऐसे बन्दे जो बड़ी ताक़त व शौकत वाले होंगे, वे तुम्हारे घरों में घुस पड़ेंगे।) इसमें ये क़ुव्वत व शौकत वाले लोग बुख़्ते नस्सर और उसके साथी व सहयोगी से हैं जिन्होंने बैतुल-मुक़द्दस में चालीस हज़ार और कुछ रिवायतों के अनुसार सत्तर हज़ार बनी इस्राईल को क़त्ल किया, और एक लाख से ज़्यादा बनी इस्राईल को क़ैद करके भेड़ बकरियों की तरह हंकाकर बाबिल ले गया, और इसके बाद जो क़ुरआने करीम ने फ़रमायाः

ثُمَّ رَدَدْنَا لَكُمُ الْكَرَّةَ عَلَيْهِمْ

(यानी हमने फिर लौटा दिया तुम्हारे ग़लबे को उन पर) यह वाक़िआ़ इसी केख़ुसरो ख़ोरस बादशाह के हाथों उत्पन्न हुआ, यह मोमिन और नेक आदमी था, इसने बुख़्ते नस्सर का मुक़ाबला करके उसके क़ैदी बनाये हुए बनी इस्राईल को उसके क़ब्ज़े से निकाला और दोबारा फ़िलिस्तीन में आबाद किया, बैतुल-मुक़द्दस को जो वीरान कर दिया था उसको भी दोबारा आबाद किया, और बैतुल-मुक़द्दस के ख़ज़ाने और अहम सामान जो बुख़्ते नस्सर यहाँ से ले गया था वो सब वापस बनी इस्राईल के क़ब्ज़े में दिये, इसलिये यह शख़्स बनी इस्राईल (यहूदियों) का निजात दिलाने वाला साबित हुआ।

यह बात अन्दाज़े और क़ियास के क़रीब है कि मदीना के यहूदियों ने जो नुबुव्वत के इम्तिहान के लिये मक्का के क़ुरैश के वास्ते सवालात मुतैयन किये उनमें ज़ुल्क़रनैन के सवाल को यह विशेषता भी हासिल थी कि यहूद उसको अपना निजात (मुक्ति) दिलाने वाला मानकर

उसकी ताज़ीम व सम्मान करते थे।

मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान साहिब ने अपनी इस तहक़ीक़ पर मौजूदा तौरात के हवाले से बनी इस्राईल के नबियों की भविष्यवाणियों से फिर तारीख़ी रिवायतों से इस पर काफ़ी सुबूत पेश किये हैं, जो सज्जन अधिक तहक़ीक़ के तालिब हों वे इसका मुताला कर सकते हैं, मेरा मक़सद इन तमाम रिवायतों के नक़ल करने से सिर्फ़ इतना था कि ज़ुल्क़रनैन की शख़्सियत और उनके ज़माने के बारे में उम्मत के उलेमा और तारीख़ व तफ़सीर के माहिरीन के अक़वाल सामने आ जायें, इनमें से ज़्यादा सही किसका क़ौल है यह मेरे मक़सद का हिस्सा नहीं, क्योंकि जिन चीज़ों का न क़ुरआन ने दावा किया न हदीस ने उनको बयान किया उनके मुतैयन और स्पष्ट करने की ज़िम्मेदारी भी हम पर नहीं, और उनमें जो क़ौल भी वरीयता प्राप्त और सही क़रार पाये क़ुरआन का मक़सद हर हाल में हासिल है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम

आगे आयतों की तफ़सीर देखियेः

قُلْ سَاَتْلُوْا عَلَيْكُمْ مِّنْهُ ذِكْرًا ۝

इसमें यह ग़ौर करने की बात है कि क़ुरआन ने इस जगह 'ज़िक्रहू' का मुख़्तसर लफ़्ज़ छोड़कर 'मिन्हु ज़िक्रा' के दो कलिमे क्यों इख़्तियार किये। ग़ौर कीजिये तो इन दो कलिमों में इशारा इस तरफ़ किया गया है कि क़ुरआन ने ज़ुल्क़रनैन का पूरा क़िस्सा और उसकी तारीख़ ज़िक्र करने का वायदा नहीं किया, बल्कि उसके ज़िक्र का एक हिस्सा बयान करने के लिये फ़रमाया जिस पर हर्फ़ 'मिन्' और 'ज़िक्रा' की तनवीन अ़रबी ग्रामर के हिसाब से सुबूत है। ऊपर जो तारीख़ी बहस ज़ुल्क़रनैन के नाम व नसब और ज़माने वग़ैरह की लिखी गई है क़ुरआने करीम ने इसको ग़ैर-ज़रूरी समझकर छोड़ देने का पहले ही इज़हार फ़रमा दिया है।

وَاٰتَيْنٰهُ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ سَبَبًا ۝

लफ़्ज़ सबब अ़रबी लुग़त में हर उस चीज़ के लिये बोला जाता है जिससे अपने मक़सद के हासिल करने में मदद मिलती है, जिसमें उपकरण व यंत्र और माद्दी असबाब भी शामिल हैं और इल्म व समझ और तजुर्बा वग़ैरह भी। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

और 'मिन् कुल्लि शैइन्' से मुराद वो तमाम चीज़ें हैं जिनकी ज़रूरत हुकूमत का निज़ाम चलाने के लिये एक बादशाह और हुक्मराँ को पेश आती है। मुराद यह है कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत ज़ुल्क़रनैन को अपनी इन्साफ़ पसन्दी, दुनिया में अमन क़ायम करने और मुल्कों के फ़तह करने के लिये जिस-जिस सामान की ज़रूरत उस ज़माने में थी वो सब के सब उनको अ़ता कर दिये गये थे।

فَاَتْبَعَ سَبَبًا ۝

मुराद यह है कि सामान तो हर क़िस्म के और दुनिया के हर ख़ित्ते में पहुँचने के उनको दे दिये गये थे, उन्होंने सबसे पहले पश्चिम की तरफ़ सफ़र के सामान से काम लिया।

حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ مَغْرِبَ الشَّمْسِ

मुराद यह है कि पश्चिम की तरफ़ उस आख़िरी हद तक पहुँच गये जिससे आगे कोई आबादी नहीं थी।

فِىۡ عَيۡنٍ حَمِئَةٍ

लफ़्ज़ हमिअतिन् के लुग़वी मायने काली दलदल या कीचड़ के हैं। मुराद इससे वह पानी है जिसके नीचे काला कीचड़ हो, जिससे पानी का रंग भी काला दिखाई देता हो, और सूरज को ऐसे चश्मे में डूबते हुए देखने का मतलब यह है कि देखने वाले को यह महसूस होता था कि सूरज उस चश्मे में डूब रहा है, क्योंकि आगे आबादी या कोई ख़ुश्की सामने नहीं थी, जैसे आप किसी ऐसे मैदान में सूरज ढलने के वक़्त हों जहाँ दूर तक पश्चिम की तरफ़ कोई पहाड़ दरख़्त इमारत न हो तो देखने वाले को यह महसूस होता है कि सूरज ज़मीन के अन्दर घुस रहा है।

وَوَجَدَ عِنۡدَهَا قَوۡمًا ۝

यानी उस काले चश्मे के पास ज़ुल्क़रनैन ने एक क़ौम को पाया। आयत के अगले हिस्से से मालूम होता है कि यह क़ौम काफ़िर थी, इसलिये अगली आयतों में अल्लाह तआ़ला ने ज़ुल्क़रनैन को इख़्तियार दे दिया कि आप चाहें तो उन सब को पहले उनके कुफ़्र की सज़ा दे दें, और चाहें तो उनसे एहसान का मामला करें कि पहले दावत व तब्लीग़ और वअ़ज़ व नसीहत से उनको इस्लाम व ईमान क़ुबूल करने पर आमादा करें, फिर मानने वालों को उसकी जज़ा और न मानने वालों को सज़ा दें, जिसके जवाब में ज़ुल्क़रनैन ने दूसरी ही सूरत को तजवीज़ किया कि पहले उनको वअ़ज़ व नसीहत से सही रास्ते पर लाने की कोशिश करेंगे फिर जो कुफ़्र पर क़ायम रहे उनको सज़ा देंगे और जो ईमान लाये और नेक अ़मल करे तो उसको अच्छा बदला देंगे।

قُلۡنَا يٰذَا الۡقَرۡنَيۡنِ

इससे मालूम होता है कि ज़ुल्क़रनैन को हक़ तआ़ला ने ख़ुद ख़िताब करके यह इरशाद फ़रमाया है। अगर ज़ुल्क़रनैन को नबी क़रार दिया जाये तब तो इसमें कोई इश्काल ही नहीं कि वही के ज़रिये ही उनसे कह दिया गया, और अगर उनकी नुबुव्वत तस्लीम न की जाये तो फिर इस 'क़ुल्ना' और 'या ज़ुल्क़रनैनि' के ख़िताब की सूरत यह हो सकती है कि किसी पैग़म्बर के वास्ते से यह ख़िताब ज़ुल्क़रनैन को किया गया है, जैसा कि रिवायतों में हज़रत ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम का उनके साथ होना बयान हुआ है, और यह भी मुम्किन है कि यह नुबुव्वत व रिसालत वाली वही न हो, ऐसी लुग़वी वही हो जैसे हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा के लिये क़ुरआन में 'व औहैना' के अलफ़ाज़ आये हैं, हालाँकि उनके नबी या रसूल होने का कोई गुमान व शुब्हा नहीं, मगर अबू हय्यान ने बहरे मुहीत में फ़रमाया कि ज़ुल्क़रनैन को जो यहाँ हुक्म दिया गया है वह उस क़ौम के क़त्ल व सज़ा का हुक्म है, इस तरह का कोई हुक्म नुबुव्वत की वही के बग़ैर नहीं दिया जा सकता, यह काम न कश्फ़ व इल्हाम से हो सकता है न बग़ैर नुबुव्वत की वही के किसी और माध्यम से, इसलिये इसके सिवा कोई गुमान व ख़्याल सही नहीं कि या तो ज़ुल्क़रनैन को ख़ुद नबी माना जाये या फिर कोई नबी उनके ज़माने में मौजूद हों

उनके ज़रिये उनको ख़िताब होता हो। वल्लाहु आलम

ثُمَّ اَتْبَعَ سَبَبًا ۝ حَتّٰۤى اِذَا بَلَغَ مَطْلِعَ الشَّمْسِ وَجَدَهَا تَطْلُعُ عَلٰى قَوْمٍ لَّمْ نَجْعَلْ لَّهُمْ مِّنْ دُوْنِهَا سِتْرًا ۝ كَذٰلِكَ ؕ وَقَدْ اَحَطْنَا بِمَا لَدَيْهِ خُبْرًا ۝

सुम्-म अत्ब-अ स-बबा (89) हत्ता इज़ा ब-ल-ग़ मत्लिअश्शम्सि व-ज-दहा तत्लुअु अ़ला क़ौमिल्-लम् नज्अ़ल्-लहुम् मिन् दूनिहा सित्रा (90) कज़ालि-क व क़द् अ-हत्ना बिमा लदैहि ख़ुब्रा (91)	फिर लगा एक सामान के पीछे। (89) यहाँ तक कि जब पहुँचा सूरज निकलने की जगह पाया उसको कि निकलता है एक क़ौम पर कि नहीं बना दिया हमने उनके लिये सूरज से वरे कोई हिजाब। (90) यूँ ही है और हमारे क़ाबू में आ चुकी है उसके पास की ख़बर। (91)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर (पश्चिमी मुल्क फ़तह करके पूरबी मुल्क फ़तह करने के इरादे से पूरब की तरफ़) एक राह पर हो लिये, यहाँ तक कि जब सूरज निकलने के मौक़े "स्थान" पर (यानी पूरब की दिशा में आबादी की आख़िरी हद पर) पहुँचे तो सूरज को एक ऐसी क़ौम पर निकलते देखा जिनके लिए हमने सूरज के ऊपर कोई आड़ नहीं रखी थी (यानी उस जगह ऐसी क़ौम आबाद थी जो धूप से बचने के लिये कोई मकान या ख़ेमा वग़ैरह बनाने के आदी न थे बल्कि शायद लिबास भी न पहनते हों, जानवरों की तरह खुले मैदान में रहते थे)। यह क़िस्सा इसी तरह है और ज़ुल्क़रनैन के पास जो कुछ (सामान वग़ैरह) था हमको उसकी पूरी ख़बर है (इसमें नुबुव्वत के इम्तिहान के लिये ज़ुल्क़रनैन के बारे में सवाल करने वालों को इस पर तंबीह है कि हम जो कुछ बतला रहे हैं वह इल्म व ख़बर की बुनियाद पर है, आम तारीख़ी कहानियों की तरह नहीं ताकि नुबुव्वते मुहम्मदिया का हक़ व सच्चा होना स्पष्ट हो जाये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़ुल्क़रनैन ने पूरब की दिशा में जो क़ौम आबाद पाई उसका यह हाल तो क़ुरआने करीम ने ज़िक्र फ़रमाया कि वे धूप से बचने के लिये कोई सामान, मकान, ख़ेमा, लिबास वग़ैरह के ज़रिये न करते थे, लेकिन उनके मज़हब व आमाल का कोई ज़िक्र नहीं फ़रमाया और न यह कि ज़ुल्क़रनैन ने उन लोगों के साथ क्या मामला किया, और ज़ाहिर यह है कि ये लोग भी काफ़िर ही थे और ज़ुल्क़रनैन ने इनके साथ भी वही मामला किया जो पश्चिमी क़ौम के साथ ऊपर बयान हो चुका है, मगर इसके बयान करने की यहाँ इसलिये ज़रूरत नहीं समझी कि पिछले

वाक़िए पर अन्दाज़ा और क़ियास करके इसका भी इल्म हो सकता है। (जैसा कि इब्ने अ़तीया के हवाले से तफ़सीर बहरे मुहीत में नक़ल किया गया है)

ثُمَّ أَتْبَعَ سَبَبًا ﴿٩٢﴾ حَتَّىٰ إِذَا بَلَغَ بَيْنَ السَّدَّيْنِ وَجَدَ مِن دُونِهِمَا قَوْمًا لَّا يَكَادُونَ يَفْقَهُونَ قَوْلًا ﴿٩٣﴾ قَالُوا يَا ذَا الْقَرْنَيْنِ إِنَّ يَأْجُوجَ وَمَأْجُوجَ مُفْسِدُونَ فِي الْأَرْضِ فَهَلْ نَجْعَلُ لَكَ خَرْجًا عَلَىٰ أَن تَجْعَلَ بَيْنَنَا وَبَيْنَهُمْ سَدًّا ﴿٩٤﴾ قَالَ مَا مَكَّنِّي فِيهِ رَبِّي خَيْرٌ فَأَعِينُونِي بِقُوَّةٍ أَجْعَلْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ رَدْمًا ﴿٩٥﴾ آتُونِي زُبَرَ الْحَدِيدِ ۖ حَتَّىٰ إِذَا سَاوَىٰ بَيْنَ الصَّدَفَيْنِ قَالَ انفُخُوا ۖ حَتَّىٰ إِذَا جَعَلَهُ نَارًا قَالَ آتُونِي أُفْرِغْ عَلَيْهِ قِطْرًا ﴿٩٦﴾ فَمَا اسْطَاعُوا أَن يَظْهَرُوهُ وَمَا اسْتَطَاعُوا لَهُ نَقْبًا ﴿٩٧﴾ قَالَ هَٰذَا رَحْمَةٌ مِّن رَّبِّي ۖ فَإِذَا جَاءَ وَعْدُ رَبِّي جَعَلَهُ دَكَّاءَ ۖ وَكَانَ وَعْدُ رَبِّي حَقًّا ﴿٩٨﴾

सुम्-म अत्ब-अ़ स-बबा (92) हत्ता इज़ा ब-ल-ग़ बैनस्सद्दैनि व-ज-द मिन् दूनिहिमा क़ौमल्-ला यकादू-न यफ़्क़हू-न क़ौला (93) क़ालू या ज़ुल्क़र्नैनि इन्-न यअ्जू-ज व मअ्जू-ज मुफ़्सिदू-न फ़िल्अर्ज़ि फ़-हल् नज्अ़लु ल-क ख़र्जन् अ़ला अन् तज्अ़-ल बैनना व बैनहुम् सद्दा (94) क़ा-ल मा मक्कन्नी फ़ीहि रब्बी ख़ैरुन् फ़-अ़ईनूनी बिक़ुव्वतिन् अज्अ़ल् बैनकुम् व बैनहुम् रद्मा (95) आतूनी ज़ु-बरल्-हदीदि, हत्ता इज़ा सावा बैनस्स-दफ़ैनि क़ालन्फ़ुख़ू हत्ता इज़ा ज-अ़-लहू नारन् क़ा-ल आतूनी उफ़्रिग़् अ़लैहि क़ित्रा (96) फ़-मस्ताऊ अंय्यज़्हरूहु

फिर लगा एक सामान के पीछे। (92) यहाँ तक कि जब पहुँचा दो पहाड़ों के बीच, पाये उनसे वरे ऐसे लोग जो लगते नहीं कि समझें एक बात। (93) बोले ऐ ज़ुल्क़रनैन! ये याजूज व माजूज धूम उठाते हैं मुल्क में सो तू कहे तो हम मुक़र्रर कर दें तेरे वास्ते कुछ महसूल इस शर्त पर कि बना दे तू हम में और उनमें एक आड़। (94) बोला जो गुंजाईश दी मुझको मेरे रब ने वह बेहतर है सो मदद करो मेरी मेहनत में बना दूँ तुम्हारे और उनके बीच एक दीवार मोटी। (95) ला दो मुझको तख़्ते लोहे के, यहाँ तक कि जब बराबर कर दिया दोनों फाँकों तक पहाड़ की कहा धोंको, यहाँ तक कि जब कर दिया उसको आग, कहा लाओ मेरे पास कि डालूँ इस पर पिघला हुआ ताँबा। (96) फिर न चढ़ सकें इस पर

व मस्तताअ़ू लहू नक़्बा (97) क़ा-ल हाज़ा रह्मतुम्-मिर्रब्बी फ़-इज़ा जा-अ वअ़्दु रब्बी ज-अ़-लहू दक्का-अ व का-न वअ़्दु रब्बी हक़्क़ा (98)	और न कर सकें इसमें सुराख़। (97) बोला यह एक मेहरबानी है मेरे रब की फिर जब आये वायदा मेरे रब का गिरा दे इसको ढहाकर और है वायदा मेरे रब का सच्चा। (98)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर (पूरब व पश्चिम फ़तह करके) एक और राह पर हो लिये (क़ुरआन में उस दिशा का नाम नहीं लिया मगर आबादी ज़्यादा उत्तरी दिशा में ही है इसलिये मुफ़स्सिरीन ने इस सफ़र को उत्तरी मुल्कों का सफ़र क़रार दिया, ऐतिहासिक तथ्य और सुबूत भी इसी को प्रबल बनाते हैं)। यहाँ तक कि जब ऐसे मक़ाम पर जो दो पहाड़ों के बीच था पहुँचे तो उन पहाड़ों से उस तरफ़ एक क़ौम को देखा, जो (भाषा और बोलचाल से नावाक़िफ़ जंगल की ज़िन्दगी की वजह से) कोई बात समझने के क़रीब भी नहीं पहुँचते थे (इन अलफ़ाज़ से यह मालूम होता है कि सिर्फ़ भाषा से नावाक़फ़ियत न थी क्योंकि समझ-बूझ हो तो अनजान भाषा वाले की बातें भी कुछ इशारे किनाये से समझी जा सकती हैं, बल्कि जंगल की ज़िन्दगी ने समझ-बूझ से भी दूर रखा था मगर फिर शायद किसी अनुवादक के ज़रिये से) उन्होंने अ़र्ज़ किया, ऐ ज़ुल्क़रनैन! याजूज व माजूज की क़ौम (जो इस घाटी के उस तरफ़ रहते हैं, हमारी) इस धरती में (कभी-कभी आकर) बड़ा फ़साद मचाते हैं (यानी क़त्ल व ग़ारतगरी करते हैं और हम में उनके मुक़ाबले की ताक़त नहीं) सो क्या हम लोग आपके लिये कुछ चन्दा जमा कर दें, इस शर्त पर कि आप हमारे और उनके बीच कोई रोक बना दें (कि वे इस तरफ़ आने न पायें)। ज़ुल्क़रनैन ने जवाब दिया कि जिस माल में मेरे रब ने मुझको (ख़र्च व इस्तेमाल करने का) इख़्तियार दिया है वह बहुत कुछ है (इसलिये चन्दा जमा करने और माल देने की तो ज़रूरत नहीं अलबत्ता) हाथ-पाँव की ताक़त (यानी मेहनत मज़दूरी) से मेरी मदद करो तो मैं तुम्हारे और उनके बीच ख़ूब मज़बूत दीवार बना दूँगा। (अच्छा तो) तुम लोग मेरे पास लोहे की चादरें लाओ (क़ीमत हम देंगे। ज़ाहिर यह है कि उस लोहे की दीवार बनाने के लिये और भी ज़रूरत की चीज़ें मंगवाई गई होंगी मगर यहाँ वहशी मुल्क में सबसे ज़्यादा कम पाई जाने वाली चीज़ लोहे की चादरें थीं इसलिये उनके ज़िक्र करने को काफ़ी समझा गया, सब सामान जमा हो जाने पर दोनों पहाड़ों के बीच लोहे की दीवार की तामीर का काम शुरू किया गया) यहाँ तक कि जब (उस दीवार के रद्दे मिलाते-मिलाते) उन (दोनों पहाड़ों) के दोनों सिरों के बीच (के ख़ाली हिस्से) को (पहाड़ों के) बराबर कर दिया तो हुक्म दिया कि धौंको (धौंकना शुरू हो गया) यहाँ तक कि जब (धौंकते धौंकते) उसको लाल अंगारा कर दिया तो उस वक़्त हुक्म दिया कि अब मेरे पास पिघला हुआ ताँबा लाओ (जो पहले से तैयार करा लिया होगा) कि इस पर डाल दूँ (चुनाँचे यह पिघला हुआ ताँबा लाया गया और

आलात के ज़रिये ऊपर से छोड़ दिया गया कि दीवार की तमाम दरज़ों में घुसकर पूरी दीवार एक जिस्म हो जाये, उसकी लम्बाई-चौड़ाई ख़ुदा को मालूम है) तो (उसकी बुलन्दी और चिकनाहट के सबब) न तो याजूज-माजूज उस पर चढ़ सकते थे और न उसमें (हद से ज़्यादा मज़बूती के सबब कोई) सेंध लगा सकते थे। ज़ुल्क़रनैन ने (जब उस दीवार को तैयार देखा जिसका तैयार होना कोई आसान काम न था तो बतौर शुक्र के) कहा कि यह मेरे रब की एक रहमत है (मुझ पर भी कि मेरे हाथों यह काम हो गया और इस क़ौम के लिये भी जिनको याजूज माजूज सताते थे)। फिर जिस वक़्त मेरे रब का वायदा आयेगा (यानी इसके फ़ना करने का वक़्त आयेगा) तो इसको ढहाकर (ज़मीन के) बराबर कर देगा। और मेरे परवर्दिगार का वायदा सच्चा है (और अपने वक़्त पर ज़रूर ज़ाहिर होता है)।

मआरिफ़ व मसाईल

मुश्किल लुग़ात का हल

'बैनस्सद्दैनि'। लफ़्ज़ सद्दुन अ़रबी भाषा में हर उस चीज़ के लिये बोला जाता है जो किसी चीज़ के लिये रुकावट बन जाये, चाहे दीवार हो या पहाड़, और क़ुदरती हो या बनाई हुई। यहाँ सद्दैनि से दो पहाड़ मुराद हैं जो याजूज माजूज के रास्ते में रुकावट थे लेकिन उन दोनों के बीच के दर्रे से वे हमलावर होते थे जिसको ज़ुल्क़रनैन ने बन्द किया।

'ज़ुबुरल्-हदीदि'। ज़ुबर, ज़ुबरा की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने तख़्ती या चादर के हैं, मुराद लोहे के टुकड़े हैं जिनको उस दर्रे को बन्द करने वाली दीवार में ईंट पत्थर के बजाय इस्तेमाल करना था।

'अस्सदफ़ैनि'। दो पहाड़ों की दो जानिबें जो एक दूसरे के मुक़ाबिल हों।

'क़ित्रन्'। क़ित्र के मायने अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक पिघले हुए ताँबे के हैं, कुछ ने पिघले हुए लोहे या राँग को भी क़ित्र कहा है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

'दक्का-अ'। यानी रेज़ा-रेज़ा होकर ज़मीन के बराबर हो जाने वाली।

याजूज-माजूज कौन हैं और कहाँ हैं? सद्दे ज़ुल्क़रनैन किस जगह है?

इनके बारे में इस्राईली रिवायतों और तारीख़ी कहानियों में बहुत बे-सर पैर की अ़जीब व ग़रीब बातें मशहूर हैं, जिनको बाज़ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने भी तारीख़ी हैसियत से नक़ल कर दिया है, मगर वह ख़ुद उनके नज़दीक भी क़ाबिले एतिमाद नहीं। क़ुरआने करीम ने उनका मुख़्तसर-सा हाल संक्षिप्त रूप से बयान किया और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बक़द्रे ज़रूरत तफ़सील से भी उम्मत को आगाह कर दिया। ईमान लाने और एतिक़ाद रखने की

चीज़ सिर्फ़ उतनी ही है जो क़ुरआन और सही हदीसों में आ गई है, उससे ज़्यादा तारीख़ी और भूगोलिक हालात जो मुफ़स्सिरीन, मुहद्दिसीन और इतिहास लेखकों ने ज़िक्र किये हैं वो सही भी हो सकते हैं और ग़लत भी, उनमें जो तारीख़ लिखने वालों के अक़वाल मुख़्तलिफ़ हैं वो इशारात, अन्दाज़ों और क़ियास पर आधारित हैं, उनके सही या ग़लत होने का कोई असर क़ुरआनी इरशादात पर नहीं पड़ता।

मैं इस जगह पहले वो हदीसें नक़ल करता हूँ जो इस मामले में मुहद्दिसीन के नज़दीक सही या क़ाबिले भरोसा हैं, उसके बाद बक़द्रे ज़रूरत तारीख़ी रिवायतें भी लिखी जायेंगी।

याजूज-माजूज के बारे में हदीस की रिवायतें

क़ुरआन व सुन्नत की वज़ाहत और ख़ुलासों से इतनी बात तो निसंदेह साबित है कि याजूज माजूज इनसानों ही की क़ौमें हैं, आम इनसानों की तरह नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद में से हैं, क्योंकि क़ुरआने करीम का स्पष्ट बयान है:

وَجَعَلْنَا ذُرِّيَّتَهُ هُمُ الْبٰقِيْنَ۝

यानी तूफ़ाने नूह अ़लैहिस्सलाम के बाद जितने इनसान ज़मीन पर बाक़ी हैं और रहेंगे वे सब हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद में होंगे। तारीख़ी रिवायतें इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि वे याफ़िस की औलाद में हैं, एक कमज़ोर हदीस से भी इसकी ताईद होती है। उनके बाक़ी हालात के मुताल्लिक़ सबसे ज़्यादा तफ़सीली और सही हदीस हज़रत नवास बिन समआ़न रज़ियल्लाहु अ़न्हु की है जिसको सही मुस्लिम और हदीस की तमाम मोतबर किताबों में नक़ल किया गया है और मुहद्दिसीन ने इसको सही क़रार दिया है, उसमें दज्जाल के निकलने, ईसा अ़लैहिस्सलाम के आसमान से उतरने फिर याजूज-माजूज वग़ैरह के निकलने की पूरी तफ़सील बयान हुई है, इस पूरी हदीस का तर्जुमा इस प्रकार है:

हज़रत नवास बिन समआ़न रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक दिन सुबह के वक़्त दज्जाल का तज़किरा फ़रमाया और तज़किरा फ़रमाते हुए कुछ बातें उसके मुताल्लिक़ ऐसी बयान फ़रमाईं कि जिनसे उसका हक़ीर व ज़लील होना मालूम होता था (जैसे यह कि वह काना है) और कुछ बातें उसके मुताल्लिक़ ऐसी बयान फ़रमाईं कि जिनसे मालूम होता था कि उसका फ़ितना सख़्त और बड़ा है (जैसे जन्नत व दोज़ख़ का उसके साथ होना और दूसरी ख़िलाफ़े आ़दत और असाधारण बातें)। आपके बयान से (हम पर ऐसा ख़ौफ़ तारी हुआ कि) गोया दज्जाल खजूरों के झुण्ड में है (यानी क़रीब ही मौजूद है) जब हम शाम को हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने हमारे दिली हालात को भाँप लिया और पूछा कि तुमने क्या समझा? हमने अ़र्ज़ किया कि आपने दज्जाल का तज़किरा फ़रमाया और कुछ बातें उसके बारे में ऐसी बयान फ़रमाईं जिनसे उसका मामला हक़ीर और आसान मालूम होता था और कुछ बातें ऐसी बयान फ़रमाईं जिनसे मालूम होता है कि उसकी बड़ी ताक़त होगी उसका

फ़ितना बड़ा भारी है, हमें तो ऐसा मालूम होने लगा कि हमारे क़रीब ही वह खजूरों के झुण्ड में मौजूद है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाने लगे तुम्हारे बारे में जिन फ़ितनों का मुझे ख़ौफ़ है उनमें दज्जाल के मुक़ाबले में दूसरे फ़ितने ज़्यादा क़ाबिले ख़ौफ़ हैं (यानी दज्जाल का फ़ितना इतना बड़ा नहीं जितना तुमने समझ लिया है) अगर मेरी मौजूदगी में वह निकला तो मैं उसका मुक़ाबला ख़ुद करूँगा (तुम्हें उसकी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं), और अगर वह मेरे बाद आया तो हर शख़्स अपनी हिम्मत के मुताबिक़ उसको मग़लूब करने की कोशिश करेगा, हक़ तआ़ला मेरी ग़ैर-मौजूदगी में हर मुसलमान का नासिर और मददगार है, (उसकी निशानी यह है) कि वह नौजवान सख़्त पेचदार बालों वाला है, उसकी एक आँख ऊपर को उभरी हुई है (और दूसरी आँख से काना है जैसा कि दूसरी रिवायतों में है) और अगर मैं (उसकी बदसूरती में) उसको किसी के साथ तश्बीह दे सकता हूँ तो वह अ़ब्दुल-उ़ज़्ज़ा बिन क़ुतन है (यह जाहिलीयत के ज़माने में बनू ख़ुज़ाआ़ क़बीले का एक बद-शक्ल शख़्स था) अगर तुम में से किसी मुसलमान का दज्जाल के साथ सामना हो जाये तो उसको चाहिये कि वह सूरः कहफ़ की शुरूआती आयतें पढ़ ले (इससे दज्जाल के फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगा) दज्जाल शाम और इराक़ के बीच से निकलेगा और हर तरफ़ फ़साद मचायेगा ऐ अल्लाह के बन्दो! उसके मुक़ाबले में साबित-क़दम (जमे और मज़बूत) रहना।

हमने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! वह ज़मीन में किस क़द्र मुद्दत रहेगा? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया वह चालीस दिन रहेगा, लेकिन पहला दिन एक साल के बराबर होगा और दूसरा दिन एक माह के बराबर होगा, और तीसरा दिन एक हफ़्ते के बराबर होगा और बाक़ी दिन आ़म दिनों के बराबर होंगे। हमने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! जो दिन एक साल के बराबर होगा क्या हम उसमें सिर्फ़ एक दिन की (पाँच नमाज़ें) पढ़ेंगे? आपने फ़रमाया नहीं बल्कि वक़्त का अन्दाज़ा करके पूरे साल की नमाज़ें अदा करनी होंगी। फिर हमने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! वह ज़मीन में किस क़द्र तेज़ी के साथ सफ़र करेगा? फ़रमाया उस बादल की तरह तेज़ चलेगा जिसके पीछे मुवाफ़िक़ हवा लगी हुई हो, पस दज्जाल किसी क़ौम के पास से गुज़रेगा उनको अपने बातिल अ़क़ीदों की दावत देगा वे उस पर ईमान लायेंगे तो वह बादलों को हुक्म देगा तो वे बरसने लगेंगे, और ज़मीन को हुक्म देगा तो वह सरसब्ज़ व शादाब (हरीभरी) हो जायेगी (और उनके मवेशी उसमें चरेंगे) और शाम को जब वापस आयेंगे तो उनके कोहान पहले की तुलना में बहुत ऊँचे होंगे, और थन दूध से भरे हुए होंगे और उनकी कोखें पुर होंगी फिर दज्जाल किसी दूसरी क़ौम के पास से गुज़रेगा और उनको भी अपने कुफ़्र व गुमराही की दावत देगा, लेकिन वे उसकी बातों को रद्द कर देंगे, वह उनसे मायूस होकर चला जायेगा तो ये मुसलमान लोग क़हत साली (सूखे के काल) में मुब्तला हो जायेंगे, और उनके पास कुछ माल न बचेगा और वीरान ज़मीन के पास से उसका गुज़र होगा तो वह उसको ख़िताब करेगा कि अपने ख़ज़ानों को बाहर ले आ, चुनाँचे ज़मीन के ख़ज़ाने उसके पीछे-पीछे हो

लेंगे, जैसा कि शहद की मक्खियाँ अपने सरदार के पीछे हो लेती हैं। फिर दज्जाल एक आदमी को बुलायेगा जिसका शबाब (जवानी) पूरे ज़ोरों पर होगा उसको तलवार मारकर दो टुकड़े कर देगा और दोनों टुकड़े इस क़द्र फ़ासले पर कर दिये जायेंगे जिस क़द्र तीर मारने वाले और निशाने के दरमियान फ़ासला होता है, फिर वह उसको बुलायेगा वह (ज़िन्दा होकर) दज्जाल की तरफ़ उसके इस फ़ेल पर हंसता हुआ रोशन चेहरे के साथ आ जायेगा, इतनी देर में अल्लाह तआ़ला हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को नाज़िल फ़रमायेंगे चुनाँचे वह दो रंग की चादरें पहने हुए दमिश्क़ की पूर्वी दिशा के सफ़ेद मीनार पर इस तरह नुज़ूल फ़रमायेंगे कि अपने दोनों हाथों को फ़रिश्तों के परों पर रखे हुए होंगे जब अपने सर मुबारक को नीचे करेंगे तो उससे पानी के क़तरे झड़ेंगे (जैसे कोई अभी ग़ुस्ल करके आया हो) और जब सर को ऊपर करेंगे तो उस वक़्त भी पानी के बिखरते क़तरे जो मोतियों की तरह साफ़ होंगे गिरेंगे। जिस काफ़िर को आपके साँस की हवा पहुँचेगी वह वहीं मर जायेगा, और आपका साँस इस क़द्र दूर पहुँचेगा जिस क़द्र दूर आपकी निगाह जायेगी।

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम दज्जाल को तलाश करेंगे यहाँ तक कि आप उसे बाबुल्लुद पर जा पकड़ेंगे (यह बस्ती अब भी बैतुल-मुक़द्दस के क़रीब इसी नाम से मौजूद है) वहाँ उसको क़त्ल कर देंगे। फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम लोगों के पास तशरीफ़ लायेंगे और (शफ़क़त के तौर पर) उनके चेहरों पर हाथ फेरेंगे और जन्नत में आला दर्जों की उनको खुशख़बरी सुनायेंगे।

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम अभी इसी हाल में होंगे कि हक़ तआ़ला का हुक्म होगा कि मैं अपने बन्दों में ऐसे लोगों को निकालूँगा जिनके मुक़ाबले में किसी को ताक़त नहीं, आप मुसलमानों को जमा करके तूर पहाड़ पर चले जायें (चुनाँचे ईसा अ़लैहिस्सलाम ऐसा ही करेंगे) और हक़ तआ़ला याजूज-माजूज को खोल देंगे तो वे तेज़ी के साथ फैलने के सबब हर बुलन्दी से फिसलते हुए दिखाई देंगे, उनमें से पहले लोग बहीरा-ए-तबरिया (एक दरिया का नाम) से गुज़रेंगे और उसका सब पानी पीकर ऐसा कर देंगे कि जब उनमें से दूसरे लोग उस बहीरा से गुज़रेंगे तो दरिया की जगह खुश्क देखकर कहेंगे कि कभी यहाँ पानी होगा।

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथी तूर पहाड़ पर पनाह लेंगे और दूसरे मुसलमान अपने क़िलों और महफ़ूज़ जगहों में पनाह लेंगे। खाने पीने का सामान साथ होगा मगर वह कम पड़ जायेगा तो एक बैल के सर को सौ दीनार से बेहतर समझा जायेगा हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और दूसरे मुसलमान अपनी तकलीफ़ दूर होने के लिये हक़ तआ़ला से दुआ करेंगे (हक़ तआ़ला दुआ क़ुबूल फ़रमायेंगे) और उन पर महामारी की शक्ल में एक बीमारी भेजेंगे और याजूज-माजूज थोड़ी देर में सब के सब मर जायेंगे, फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथी तूर पहाड़ से नीचे आयेंगे तो देखेंगे कि ज़मीन में एक बालिश्त जगह भी उनकी लाशों से ख़ाली नहीं (और लाशों के सड़ने की वजह से) सख़्त बदबू फैली होगी (इस कैफ़ियत को देखकर दोबारा) हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनके

साथी हक़ तआ़ला से दुआ़ करेंगे (कि यह मुसीबत भी दूर हो, हक़ तआ़ला क़ुबूल फ़रमायेंगे) और बहुत भारी भरकम परिन्दों को भेजेंगे जिनकी गर्दनें ऊँट की गर्दन के जैसी होंगी (वे उनकी लाशों को उठाकर जहाँ अल्लाह की मर्ज़ी होगी वहाँ फेंक देंगे) कुछ रिवायतों में है कि दरिया में डालेंगे, फिर हक़ तआ़ला बारिश बरसायेंगे कोई शहर और जंगल ऐसा न होगा जहाँ बारिश न हुई होगी, सारी ज़मीन धुल जायेगी और शीशे के जैसी साफ़ हो जायेगी। फिर हक़ तआ़ला ज़मीन को हुक्म देंगे कि अपने पेट से फलों और फूलों को उगा दे और (नये सिरे से) अपनी बरकतों को ज़ाहिर कर दे, (चुनाँचे ऐसा ही होगा और इस क़द्र बरकत ज़ाहिर होगी) कि एक अनार एक जमाअ़त के खाने के लिये किफ़ायत करेगा और लोग उसके छिलके की छतरी बनाकर साया हासिल करेंगे और दूध में इस क़द्र बरकत होगी कि एक ऊँटनी का दूध एक बहुत बड़ी जमाअ़त के लिये काफ़ी होगा और एक गाय का दूध एक क़बीले के सब लोगों को काफ़ी हो जायेगा, और एक बकरी का दूध पूरी बिरादरी को काफ़ी हो जायेगा, (ये असाधारण बरकतें और अमन व अमान का ज़माना चालीस साल रहने के बाद जब क़ियामत का वक़्त आ जायेगा तो) उस वक़्त हक़ तआ़ला एक खुशगवार हवा चलायेंगे जिसकी वजह से सब मुसलमानों की बग़लों के नीचे एक ख़ास बीमारी ज़ाहिर हो जायेगी और सब के सब वफ़ात पा जायेंगे और बाक़ी सिर्फ़ शरीर व काफ़िर रह जायेंगे जो ज़मीन पर खुल्लम-खुल्ला हरामकारी जानवरों की तरह करेंगे, ऐसे ही लोगों पर क़ियामत आयेगी।

और हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन यज़ीद की रिवायत में याजूज-माजूज के क़िस्से की ज़्यादा तफ़सील आई है, वह यह कि बहीरा-ए-तबरिया (एक दरिया का नाम है) से गुज़रने के बाद याजूज-माजूज बैतुल-मुक़द्दस के पहाड़ों में से एक पहाड़ जबले-ख़मर पर चढ़ जायेंगे और कहेंगे कि हमने ज़मीन वालों को सब को क़त्ल कर दिया है लो अब हम आसमान वालों का ख़ात्मा करेंगे, चुनाँचे वे अपने तीर आसमान की तरफ़ फैंकेंगे और वो तीर हक़ तआ़ला के हुक्म से ख़ून में भरकर उनकी तरफ़ वापस आयेंगे (ताकि वे अहमक़ यह समझकर खुश हों कि आसमान वालों का भी ख़ात्मा कर दिया)।

और दज्जाल के क़िस्से में हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत में यह इज़ाफ़ा भी है कि दज्जाल मदीना मुनव्वरा से दूर रहेगा और मदीना के रास्तों पर भी उसका आना मुम्किन नहीं होगा तो वह मदीना के क़रीब एक नमकीली ज़मीन की तरफ़ आयेगा उस वक़्त एक आदमी दज्जाल के पास आयेगा और वह आदमी उस वक़्त के बेहतरीन लोगों में से होगा और उसको ख़िताब करके कहेगा कि मैं यक़ीन से कहता हूँ कि तू वही दज्जाल है जिसकी हमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़बर दी थी (यह सुनकर) दज्जाल कहने लगेगा लोगो! मुझे यह बतलाओ कि अगर मैं इस आदमी को क़त्ल कर दूँ और फिर इसे ज़िन्दा कर दूँ तो मेरे ख़ुदा होने में शक करोगे? वे जवाब देंगे– नहीं। चुनाँचे वह उस आदमी को क़त्ल कर देगा और फिर उसको ज़िन्दा कर देगा तो वह दज्जाल को कहेगा कि अब मुझे तेरे दज्जाल होने

का पहले से ज़्यादा यक़ीन हो गया है, दज्जाल उसको दोबारा क़त्ल करने का इरादा करेगा लेकिन वह इस पर क़ादिर न हो सकेगा। (सही मुस्लिम)

सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से फ़रमायेंगे कि आप अपनी औलाद में से जहन्नमी लोगों को उठाईये, वह अ़र्ज़ करेंगे कि ऐ रब! वे कौन हैं? तो हुक्म होगा कि हर एक हज़ार में से नौ सौ निन्नानवे जहन्नमी हैं सिर्फ़ एक जन्नती है। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम सहम गये और पूछा कि या रसूलल्लाह! हम में से वह एक जन्नती कौनसा होगा? तो आपने फ़रमाया ग़म न करो क्योंकि ये नौ सौ निन्नानवे जहन्नमी याजूज-माजूज में से और वह एक तुम में से होगा। और मुस्तद्रक हाकिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने तमाम इनसानों के दस हिस्से किये उनमें से नौ हिस्से याजूज-माजूज के हैं और बाक़ी एक हिस्से में बाक़ी सारी दुनिया के इनसान हैं।

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इमाम इब्ने कसीर ने अपनी किताब 'अल-बिदाया वन्निहाया' में इन रिवायतों को ज़िक्र करके लिखा है कि इससे मालूम हुआ कि याजूज-माजूज की तादाद सारी इनसानी आबादी से बेहद ज़्यादा है।

मुस्नद अहमद और अबू दाऊद में सही सनदों से हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया– ईसा अ़लैहिस्सलाम आसमान से उतरने के बाद चालीस साल ज़मीन पर रहेंगे। मुस्लिम की एक रिवायत में जो सात साल का अ़रसा बतलाया है हाफ़िज़ ने फ़त्हुल-बारी में इसको ग़ैर-वरीयता प्राप्त क़रार देकर चालीस साल ही का अ़रसा सही क़रार दिया है और हदीसों की वज़ाहतों के मुताबिक़ यह पूरा अ़रसा अमन व अमान और बरकतों के ज़हूर का होगा। बुग़ज़ व दुश्मनी आपस में क़तई न रहेगी, कभी दो आदमियों में कोई झगड़ा या दुश्मनी नहीं होगी। (मुस्लिम व अहमद)

इमाम बुख़ारी ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बैतुल्लाह का हज व उमरा याजूज-माजूज के निकलने के बाद भी जारी रहेगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

बुख़ारी व मुस्लिम ने उम्मुल-मोमिनीन हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम (एक दिन) नींद से ऐसी हालत में जागे कि चेहरा-ए-मुबारक सुर्ख़ हो रहा था और आपकी ज़बाने मुबारक पर ये जुमले थेः

لا الٰه الا الله ويل لِلعرب من شرقد اقترب فتح اليوم من ردم ياجوج وماجوج مثل هذه وحلّق تسعين.

"अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, ख़राबी है अ़रब की उस शर (बुराई) से जो क़रीब आ चुका है। आज के दिन याजूज व माजूज की दीवार (रोक) में इतना सुराख़ खुल गया है और आपने अंगूठे और शहादत की उंगली को मिलाकर हल्क़ा (दायरा) बनाकर दिखलाया।"

उम्मुल-मोमिनीन रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि इस इरशाद पर हमने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! क्या हम ऐसे हाल में हलाक हो सकते हैं जबकि हमारे अन्दर नेक लोग मौजूद हों? आपने फ़रमाया हाँ! हलाक हो सकते हैं जबकि ख़ुब्स (यानी बुराई) की अधिकता हो जाये। (बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि. की रिवायत से भी इसको बयान किया गया है और इमाम इब्ने कसीर ने अपनी किताब 'अल-बिदाया वन्निहाया' में भी यही लिखा है)

और याजूज-माजूज की दीवार में हल्क़े (गोल दायरे) के बराबर सुराख़ हो जाना अपने असली मायने में भी हो सकता है और इशारे के तौर पर ज़ुल्क़रनैन की बनाई हुई इस आड़ और दीवार के कमज़ोर हो जाने के मायने में भी हो सकता है। (इब्ने कसीर अबू हय्यान)

मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि याजूज-माजूज हर दिन दीवारे ज़ुल्क़रनैन को खोदते रहते हैं यहाँ तक कि उस लोहे की दीवार के आख़िरी हिस्से तक इतने क़रीब पहुँच जाते हैं कि दूसरी तरफ़ की रोशनी नज़र आने लगे, मगर ये कहकर लौट जाते हैं कि बाक़ी को कल खोदकर पार कर देंगे मगर अल्लाह तआ़ला उसको फिर वैसा ही मज़बूत दुरुस्त कर देते हैं, और अगले दिन फिर नई मेहनत उसके खोदने में करते हैं, यह सिलसिला खोदने में मेहनत का और फिर अल्लाह की तरफ़ से उसके सही कर देने का उस वक़्त तक चलता रहेगा जिस वक़्त तक याजूज-माजूज को बन्द रखने का इरादा है, और जब अल्लाह तआ़ला उनको खोलने का इरादा फ़रमायेंगे तो उस दिन जब मेहनत करके आख़िरी हद में पहुँचा देंगे उस दिन यूँ कहेंगे कि अगर अल्लाह ने चाहा तो हम कल इसको पार कर लेंगे (अल्लाह के नाम और उसकी चाहत पर मौक़ूफ़ रखने से आज तौफ़ीक़ हो जायेगी) तो अगले दिन दीवार का बाक़ी बचा हिस्सा अपनी हालत पर मिलेगा और वे उसको तोड़कर पार कर लेंगे।

तिर्मिज़ी ने इस रिवायत को हज़रत अबू हुरैरह से अबू राफ़ेअ़, क़तादा और अबू अ़वाना के वास्ते से नक़ल करके फ़रमायाः

غريب لا نعرفه الا من هذا الوجه

(यानी इस एक सनद के अ़लावा यह रिवायत मुझे किसी और वास्ते से नहीं मिली इसलिये यह ग़रीब है) इब्ने कसीर ने अपनी तफ़सीर में इस रिवायत को नक़ल करके फ़रमायाः

اسناده جيد قوى ولكن متنه فى رفعه نكارة

"सनद इसकी उम्दा और मज़बूत है। लेकिन हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से इसको मरफ़ूअ़ करने या इसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ मन्सूब करने में एक अजनबियत मालूम होती है।"

और इमाम इब्ने कसीर ने अपनी किताब 'अल-बिदाया वन्निहाया' में इस हदीस के मुताल्लिक़ फ़रमाया कि अगर यह बात सही मान ली जाये कि यह हदीस मरफ़ूअ़ नहीं बल्कि कअ़बे अहबार की रिवायत है तब तो बात साफ़ हो गई कि यह कोई क़ाबिले भरोसा चीज़ नहीं,

और अगर इस रिवायत को रावी के वहम से महफ़ूज़ क़रार देकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही का इरशाद क़रार दिया जाये तो फिर मतलब इसका यह होगा कि याजूज-माजूज का यह अ़मल दीवार और रुकावट को खोदने का उस वक़्त शुरू होगा जबकि उनके निकलने का वक़्त क़रीब आ जायेगा और क़ुरआनी इरशाद कि उस दीवार में सैंध नहीं लगाई जा सकती यह उस वक़्त का हाल है जबकि ज़ुल्क़रनैन ने इसको तामीर किया था, इसलिये कोई टकराव न रहा, और यह भी कहा जा सकता है कि सैंध लगाने से मुराद दीवार का वह खुला हिस्सा और सुराख़ है जो आर-पार हो जाये और इस रिवायत में इसकी वज़ाहत मौजूद है कि यह सुराख़ आर-पार नहीं होता। (हिदाया पेज 112 जिल्द 2)

हाफ़िज़ इब्ने हजर ने फ़त्हुल-बारी में इस हदीस को अ़ब्द बिन हुमैद और इब्ने हिब्बान के हवाले से भी नक़ल करके कहा है कि इन सब की रिवायत हज़रत क़तादा से है, और इनमें से कुछ की सनद के रावी सही बुख़ारी के रावी हैं, और हदीस के मरफ़ूअ़ क़रार देने पर भी कोई शुब्हा नहीं किया, और इब्ने अ़रबी के हवाले से बयान किया कि इस हदीस में अल्लाह की तीन आयतें यानी मोजिज़े हैं— अव्वल यह कि अल्लाह तआ़ला ने उनके ज़ेहनों को इस तरफ़ मुतवज्जह नहीं होने दिया कि दीवार व रोक को खोदने का काम रात दिन लगातार जारी रखें वरना इतनी बड़ी क़ौम के लिये क्या मुश्किल था कि दिन और रात की ड्यूटियाँ अलग-अलग मुक़र्रर कर लेते, दूसरे उनके ज़ेहनों को इस तरफ़ से फेर दिया कि उस दीवार के ऊपर चढ़ने की कोशिश करें, इसके लिये उपकरणों और आलात से मदद लें हालाँकि वहब बिन मुनब्बेह की रिवायत से यह भी मालूम होता है कि ये लोग खेती-बाड़ी और उद्योगिक कामों के करने वाले हैं, हर तरह के उपकरण और सामान रखते हैं, उनकी ज़मीन में दरख़्त भी अनेक क़िस्म के हैं, कोई मुश्किल काम न था कि ऊपर चढ़ने के साधन और माध्यम पैदा कर लेते, तीसरे यह कि सारी मुद्दत में उनके दिलों में यह बात न आये कि इन्शा-अल्लाह कह लें, सिर्फ़ उस वक़्त यह कलिमा उनकी ज़बान पर जारी होगा जब उनके निकलने का निर्धारित वक़्त आ जायेगा।

इब्ने अ़रबी ने फ़रमाया कि इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि याजूज-माजूज में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अल्लाह के वजूद और उसकी मर्ज़ी व इरादे को मानते हैं और यह भी मुम्किन है कि बग़ैर किसी अ़क़ीदे के ही उनकी ज़बान पर अल्लाह तआ़ला यह कलिमा जारी कर दे, और इसकी बरकत से उनका काम बन जाये (अशरातुस्साअ़त, मुहम्मद पेज 154) मगर ज़ाहिर यही है कि उनके पास भी अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की दावत पहुँच चुकी है वरना क़ुरआनी बयान के मुताबिक़ उनको जहन्नम का अ़ज़ाब न होना चाहिये।

وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا○

मालूम हुआ कि ईमान की दावत इनको भी पहुँची है मगर ये लोग कुफ़्र पर जमे रहे, इनमें से कुछ लोग ऐसे भी होंगे जो अल्लाह के वजूद और उसके इरादे व मर्ज़ी के क़ायल होंगे अगरचे सिर्फ़ अ़क़ीदा ईमान के लिये काफ़ी नहीं जब तक रिसालत और आख़िरत पर ईमान न हो।

बहरहाल! इन्शा-अल्लाह का कलिमा कहना बावजूद कुफ़्र के भी कुछ नामुम्किन बात नहीं।

हदीस की रिवायतों से प्राप्त नतीजे

ऊपर बयान हुई हदीसों में याजूज-माजूज के मुताल्लिक़ जो बातें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बयान से साबित हुईं वो इस प्रकार हैं:

1. याजूज-माजूज आ़म इनसानों की तरह इनसान और हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद में से हैं। मुहद्दिसीन व इतिहासकारों की एक बड़ी जमाअ़त उनको याफ़िस इब्ने हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद क़रार देते हैं और यह भी ज़ाहिर है कि याफ़िस इब्ने नूह की औलाद नूह अ़लैहिस्सलाम के ज़माने से ज़ुल्क़रनैन के ज़माने तक दूर-दूर तक विभिन्न क़बीलों और मुख़्तलिफ़ क़ौमों और विभिन्न आबादियों में फैल चुकी थी, याजूज-माजूज जिन क़ौमों का नाम है यह भी ज़रूरी नहीं कि वे सब के सब ज़ुल्क़रनैन की दीवार के पीछे ही घिरे हुए हों, हाँ उनके कुछ क़बीले और क़ौमें ज़ुल्क़रनैन की बनाई हुइ उस दीवार के इस तरफ़ भी होंगे अलबत्ता उनमें से जो क़त्ल व ग़ारतगरी करने वाले वहशी लोग थे वे ज़ुल्क़रनैन के द्वारा बनाई गयी दीवार के ज़रिये रोक दिये गये। इतिहास लिखने वाले आ़म तौर से उनको तुर्क और मग़ोल या मंगोलीन लिखते हैं मगर उनमें से याजूज-माजूज नाम सिर्फ़ उन वहशी (जंगली) असभ्य ख़ूँख़ार ज़ालिम लोगों का है जो तहज़ीब व सभ्यता से वाक़िफ़ नहीं हुए, उन्हीं की बिरादरी के मग़ोल और तुर्क या मंगोलीन जो सभ्य हो गये वे इस नाम से ख़ारिज हैं।

2. याजूज-माजूज की संख्या पूरी दुनिया के इनसानों की संख्या से कई गुणा कम से कम एक और दस की तुलना से है। (हदीस नम्बर 2)

3. याजूज-माजूज की जो क़ौमें और क़बीले दीवारे ज़ुल्क़रनैन के ज़रिये इस तरफ़ आने से रोक दिये गये हैं वे क़ियामत के बिल्कुल क़रीब तक उसी तरह घिरे रहेंगे उनके निकलने का निर्धारित वक़्त हज़रत मेहदी अ़लैहिस्सलाम के ज़ाहिर होने, फिर दज्जाल के निकलने के बाद वह होगा जबकि ईसा अ़लैहिस्सलाम नाज़िल होकर दज्जाल को क़त्ल कर चुकेंगे। (हदीस नम्बर 1)

4. याजूज-माजूज के खुलने के वक़्त दीवारे ज़ुल्क़रनैन गिरकर ज़मीन के बराबर हो जायेगी। (क़ुरआन की आयतें) उस वक़्त ये याजूज-माजूज की बेपनाह क़ौमें एक साथ पहाड़ों की बुलन्दियों से उतरती हुई तेज़ रफ़्तारी के सबब ऐसी मालूम होंगी कि गोया ये फिसल-फिसलकर गिर रहे हैं, और ये बेशुमार वहशी इनसान आ़म इनसानी आबादी और पूरी ज़मीन पर टूट पड़ेंगे और इनके क़त्ल व ग़ारतगरी का कोई मुक़ाबला न कर सकेगा। अल्लाह के रसूल हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम भी अल्लाह के हुक्म से अपने साथी मुसलमानों को लेकर तूर पहाड़ पर पनाह लेंगे और आ़म दुनिया की आबादियों में जहाँ कुछ क़िलें या सुरक्षित मक़ामात हैं वे उनमें बन्द होकर अपनी जानें बचायेंगे। खाने पीने का सामान ख़त्म हो जाने के बाद ज़िन्दगी की ज़रूरतें इन्तिहाई महंगी हो जायेंगी, बाक़ी इनसानी आबादी को ये वहशी क़ौमें ख़त्म कर डालेंगी, उनके दरियाओं को चाट जायेंगी। (हदीस नम्बर 1)

5. हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों की दुआ़ से फिर यह टिड्डी दल किस्म की बेशुमार क़ौमें एक साथ हलाक कर दी जायेंगी, उनकी लाशों से सारी ज़मीन पट जायेगी, उनकी बदबू की वजह से ज़मीन पर बसना मुश्किल हो जायेगा। (हदीस नम्बर 1)

6. फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों ही की दुआ़ से उनकी लाशें दरिया में डाल दी या ग़ायब कर दी जायेंगी और पूरी दुनिया में बारिश के ज़रिये पूरी ज़मीन को धोकर पाक साफ़ कर दिया जायेगा। (हदीस नम्बर 1)

7. इसके बाद तक़रीबन चालीस साल अमन व अमान का दौर-दौरा रहेगा, ज़मीन अपनी बरकतें उगल देगी, कोई ग़रीब मोहताज न रहेगा, कोई किसी को न सतायेगा, सुकून व इत्मीनान आराम व राहत आ़म होगी। (हदीस नम्बर 3)

8. इस अमन व अमान के ज़माने में बैतुल्लाह का हज व उमरा जारी रहेगा। (हदीस नम्बर 4)

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात और रौज़ा-ए-अक़्दस में दफ़न होना हदीस की रिवायतों से साबित है, इसकी भी यही सूरत होगी कि वह हज या उमरे के लिये हिजाज़ का सफ़र करेंगे (जैसा कि हज़रत अबू हुरैरह की रिवायत से इमाम मुस्लिम ने बयान किया है) उसके बाद मदीना तय्यिबा में वफ़ात होगी, रौज़ा-ए-अक़्दस में दफ़न किया जायेगा।

9. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के आख़िर ज़माने में वही के ज़रिये आपको ख़्वाब दिखलाया गया कि ज़ुल्क़रनैन की बनाई दीवार में एक सुराख़ हो गया है जिसको आपने अ़रब के लिये शर व फ़ितने की निशानी क़रार दिया, उस दीवार में सुराख़ हो जाने को कुछ मुहद्दिसीन ने अपनी हक़ीक़त पर महमूल किया है और कुछ ने इसका मतलब बतौर इशारे के यह क़रार दिया है कि अब यह दीवारे ज़ुल्क़रनैन कमज़ोर हो चुकी है, याजूज-माजूज के निकलने का वक़्त क़रीब आ गया है और उसके आसार अ़रब क़ौम के पतन और गिरावट के रंग में ज़ाहिर होंगे। वल्लाहु आलम

10. हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के उतरने के बाद उनका क़ियाम ज़मीन पर चालीस साल होगा। (हदीस नम्बर 2)

उनसे पहले हज़रत मेहदी अ़लैहिस्सलाम का ज़माना भी चालीस साल रहेगा जिसमें कुछ हिस्सा दोनों के इकट्ठा रहने और साथ काम करने का होगा। सैयद शरीफ़ बर्ज़न्जी ने अपनी किताब 'अशरातुस्साअ़त' पेज 145 में लिखा है कि ईसा अ़लैहिस्सलाम का क़ियाम दज्जाल के क़त्ल और अमन व अमान के बाद चालीस साल होगा और दुनिया में क़ियाम की कुल मुद्दत पैंतालीस साल होगी, और पेज 112 में है कि मेहदी अ़लैहिस्सलाम हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से तीस से ऊपर कुछ साल पहले ज़ाहिर होंगे और उनका कुल ज़माना चालीस साल होगा, इस तरह पाँच या सात साल तक दोनों हज़रात साथ रहेंगे और इन दोनों ज़मानों की यह ख़ुसूसियत होगी कि पूरी ज़मीन पर अ़दल व इन्साफ़ की हुकूमत होगी, ज़मीन अपनी बरकतें और ख़ज़ाने उगल देगी, कोई फ़क़ीर व मोहताज न रहेगा, लोगों में आपस में बुग़ज़ व दुश्मनी क़तई न रहेगी, हाँ! हज़रत मेहदी अ़लैहिस्सलाम के आख़िरी ज़माने में बड़े दज्जाल का ज़बरदस्त फ़ितना सिवाय

मक्का और मदीना और बैतुल-मुक़द्दस और तूर पहाड़ के सारे आलम पर छा जायेगा और यह फ़ितना दुनिया के तमाम फ़ितनों से बढ़कर होगा। दज्जाल का क़ियाम (ठहरना) और फ़साद सिर्फ़ चालीस दिन रहेगा मगर उन चालीस दिनों में से पहला दिन एक साल का, दूसरा दिन एक महीने का, तीसरा दिन एक हफ़्ते का होगा, बाक़ी दिन आम दिनों की तरह होंगे जिसकी सूरत यह भी हो सकती है कि हक़ीक़त में ये दिन इतने लम्बे कर दिये जायें, क्योंकि उस आख़िरी ज़माने में तक़रीबन सारे वाक़िआत ही अ़जीब और आम आदत से ऊपर और करिश्माती होंगे, और यह भी मुम्किन है कि दिन रात तो अपने मामूल के मुताबिक़ होते रहें मगर दज्जाल का बड़ा जादूगर होना हदीस से साबित है, हो सकता है कि उसके जादू के असर से आम मख़्लूक़ की नज़रों पर यह दिन रात का बदलाव व इन्क़िलाब ज़ाहिर न हो, वे इसको एक ही दिन देखते और समझते रहें। हदीस में जो उस दिन के अन्दर आम दिनों के मुताबिक़ अन्दाज़ा लगाकर नमाज़ें पढ़ने का हुक्म आया है इससे भी ताईद इसकी होती है कि हक़ीक़त के एतिबार से तो दिन रात बदल रहे होंगे, मगर लोगों के एहसास में यह बदलना नहीं होगा, इसलिये उस एक साल के दिन में तीन सौ साठ दिनों की नमाज़ें अदा करने का हुक्म दिया गया, वरना अगर दिन हक़ीक़त में एह की दिन होता तो शरीअ़त के क़ायदों के एतिबार से उसमें सिर्फ़ एक ही दिन की पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ होतीं। ख़ुलासा यह है कि दज्जाल का कुल ज़माना इस तरह के चालीस दिन का होगा।

इसके बाद हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम नाज़िल होकर दज्जाल को क़त्ल करके इस फ़ितने को ख़त्म कर देंगे मगर इसके साथ ही याजूज-माजूज का ख़ुरूज होगा (यानी वे निकल पड़ेंगे) जो पूरी दुनिया में फ़साद और क़त्ल व ग़ारतगरी करेंगे, मगर उनका ज़माना भी चन्द दिन ही होंगे, फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से ये सब एक साथ हलाक हो जायेंगे। ग़र्ज़ कि हज़रत मेहदी अ़लैहिस्सलाम के ज़माने के आख़िर में और ईसा अ़लैहिस्सलाम के ज़माने के शुरू में दो फ़ितने दज्जाल और याजूज-माजूज के होंगे जो तमाम ज़मीन के लोगों को उलट-पुलट कर देंगे, गिनती के उन चन्द दिनों से पहले और बाद में पूरी दुनिया के अन्दर अ़दल व इन्साफ़ और अमन व सुकून और बरकात व समरात का दौर-दौरा रहेगा, हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के ज़माने में इस्लाम के सिवा कोई कलिमा व मज़हब ज़मीन पर न रहेगा, ज़मीन अपने दफ़न ख़ज़ाने उगल देगी, कोई फ़क़ीर व मोहताज न रहेगा, दरिन्दे और ज़हरीले जानवर भी किसी को तकलीफ़ न पहुँचायेंगे।

याजूज-माजूज और दीवारे ज़ुल्क़रनैन के बारे में ये मालूमात तो वो हैं जो क़ुरआन और हदीसों ने उम्मत को बतला दी हैं, इसी पर अ़क़ीदा रखना ज़रूरी और मुख़ालफ़त नाजायज़ है, बाक़ी रही इसकी भूगोलिक बहस कि दीवारे ज़ुल्क़रनैन किस जगह स्थित है और क़ौमे याजूज माजूज कौनसी क़ौम है? और इस वक़्त कहाँ-कहाँ बसती है? अगरचे इस पर न कोई इस्लामी अ़क़ीदा मौक़ूफ़ है और न क़ुरआन की किसी आयत का मतलब समझना इस पर मौक़ूफ़ है, लेकिन मुख़ालिफ़ों की बकवास के जवाब और अतिरिक्त मालूमात व तसल्ली के लिये उम्मत के

उलेमा ने इससे बहस फ़रमाई है, उसका कुछ हिस्सा नक़ल किया जाता है।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने अपनी तफ़सीर में सुद्दी के हवाले से नक़ल किया है कि याजूज माजूज के बाईस क़बीलों में से इक्कीस क़बीलों को ज़ुल्क़रनैन की दीवार से बन्द कर दिया गया उनका एक क़बीला दीवारे ज़ुल्क़रनैन के अन्दर इस तरफ़ रह गया वो तुर्क हैं। इसके बाद क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तुर्क के बारे में जो बातें बतलाई हैं वो याजूज-माजूज से मिलती हुई हैं, और आख़िर ज़माने में मुसलमानों की उनसे जंग होना सही मुस्लिम की हदीस में है। फिर फ़रमाया कि इस ज़माने में तुर्क क़ौम की बड़ी भारी संख्या मुसलमानों के मुक़ाबले के लिये निकली हुई है जिनकी सही तादाद अल्लाह तआ़ला ही को मालूम है, वही मुसलमानों को उनके शर से बचा सकता है। ऐसा मालूम होता है कि यही याजूज माजूज हैं, या कम से कम उनकी शुरूआ़त और नमूना हैं। (क़ुर्तुबी पेज 58 जिल्द 11)

(इमाम क़ुर्तुबी का ज़माना छठी सदी हिजरी है जिसमें तातारियों का फ़ितना ज़ाहिर हुआ और इस्लामी ख़िलाफ़त को तबाह व बरबाद किया, उनका ज़बरदस्त फ़ितना इस्लामी तारीख़ में परिचित और तातारियों का मग़ोल तुर्क में से होना मशहूर है।'' मगर क़ुर्तुबी ने उनको याजूज माजूज के जैसा और उनकी पहली कड़ी क़रार दिया है, उनके फ़ितने को याजूज-माजूज का वह निकलना नहीं बतलाया जो क़ियामत की निशानियों में से है, क्योंकि सही मुस्लिम की उक्त हदीस में इसकी वज़ाहत है कि वह निकलना हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के आसमान से उतरने के बाद उनके ज़माने में होगा।

इसी लिये अ़ल्लामा आलूसी ने अपनी तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में उन लोगों पर सख़्त रद्द किया है जिन्होंने तातार (क़ौम) ही को याजूज-माजूज क़रार दिया, और फ़रमाया कि ऐसा ख़्याल करना खुली हुई गुमराही है और हदीस के बयानात व मज़मून की मुख़ालफ़त हैं, अलबत्ता यह उन्होंने भी फ़रमाया कि बिला शुब्हा यह फ़ितना याजूज-माजूज के फ़ितने के जैसा ज़रूर है।

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी पेज 44 जिल्द 16)

इससे साबित हुआ कि इस ज़माने में जो कुछ इतिहासकार मौजूदा रूस या चीन या दोनों को याजूज-माजूज क़रार देते हैं, अगर इससे उनकी मुराद वही होती जो इमाम क़ुर्तुबी और अ़ल्लामा आलूसी ने फ़रमाया कि उनका फ़ितना याजूज-माजूज के फ़ितने जैसा है तो यह कहना कुछ ग़लत न होता, मगर इसी को याजूज-माजूज का वह निकलना क़रार देना जिसकी ख़बर क़ुरआन व हदीस में क़ियामत की निशानियों के तौर पर दी गई और उसका वक़्त हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के उतरने के बाद बतलाया गया, यह क़तई ग़लत और गुमराही और हदीस की वज़ाहतों का इनकार है।

मशहूर इतिहास लेखक इब्ने ख़ुलदून ने अपनी तारीख़ के मुक़द्दमे (प्रारंभिका) में अक़लीम-ए-सादिस की बहस में याजूज-माजूज और दीवारे ज़ुल्क़रनैन और उनके मौक़े व स्थान के मुताल्लिक़ भूगोलिक तहक़ीक़ इस तरह फ़रमाई है:

''सातवीं अक़लीम के नवें हिस्से में पश्चिम की जानिब तुर्कों के वो क़बीले आबाद हैं

जो क़नजाक़ और चकरस कहलाते हैं और पूरब की जानिब याजूज-माजूज की आबादियाँ हैं, और इन दोनों के दरमियान क़ाफ़ पहाड़ एक रोक है जिसका ज़िक्र गुज़िश्ता सतरों में हो चुका है कि वह बहर-ए-मुहीत (मुहीत दरिया) से शुरू होता है जो चौथी अक़लीम के पूरब में स्थित है, और उसके साथ उत्तरी दिशा में अक़लीम के आख़िर तक चला गया है और फिर बहर-ए-मुहीत से अलग होकर उत्तर पश्चिम में होता हुआ यानी पश्चिम की जानिब झुकता हुआ पाँचवीं अक़लीम के नवें हिस्से में दाख़िल हो जाता है, यहाँ से वह फिर अपनी पहली दिशा को मुड़ जाता है यहाँ तक कि सातवीं अक़लीम के नवें हिस्से में दाख़िल हो जाता है और यहाँ पहुँचकर दक्षिण से उत्तर पश्चिम को होता हुआ गया है और इसी पहाड़ी श्रंखला के बीच सद्दे सिकन्दरी (ज़ुल्क़रनैन की बनाई हुई दीवार) स्थित है और सातवीं अक़लीम के नवें हिस्से के बीच ही में वह दीवारे सिकन्दरी है जिसका हम अभी ज़िक्र कर आये हैं और जिसकी इत्तिला क़ुरआन ने भी दी है।

और अ़ब्दुल्लाह बिन ख़रदाज़बा ने अपनी भूगोल की किताब में वासिक़ बिल्लाह अ़ब्बासी ख़लीफ़ा का वह ख़्वाब नक़ल किया है जिसमें उसने यह देखा था कि यह दीवार और रोक खुल गई है, चुनाँचे वह घबराकर उठा और हालात मालूम करने के लिये सल्लाम तर्जुमान को रवाना किया, उसने वापस आकर इस दीवार और रोक के हालात व औसाफ़ बयान किये। (मुक़द्दिमा इब्ने ख़ुलदून पेज 79)''

वासिक़ बिल्लाह अ़ब्बासी ख़लीफ़ा का दीवारे ज़ुल्क़रनैन की तहक़ीक़ करने के लिये एक जमाअ़त को भेजना और उनका तहक़ीक़ करके आना इब्ने कसीर ने भी 'अल-बिदाया वन्निहाया' में ज़िक्र किया है, और यह कि यह दीवार लोहे से तामीर की गई है, इसमें बड़े-बड़े दरवाज़े भी हैं जिन पर ताला पड़ा हुआ है, और यह उत्तर पश्चिम में स्थित है। और तफ़सीरे कबीर व तबरी ने इस वाक़िए को बयान करके यह भी लिखा है कि जो आदमी उस दीवार का मुआ़यना करके वापस आना चाहता है तो रहनुमा (गाइड) उसको ऐसे चटियल मैदानों में पहुँचाते हैं जो समरक़न्द के मुक़ाबिल और बराबर में हैं। (तफ़सीरे कबीर जिल्द 5, पेज 513)

उस्तादे मोहतरम हुज्जतुल-इस्लाम सैयदी हज़रत मौलाना अनवर शाह कश्मीरी क़ुद्दि-स सिर्रुहू ने अपनी किताब 'अ़क़ीदतुल-इस्लाम फ़ी हयाति ईसा अ़लैहिस्सलाम' में याजूज-माजूज और दीवारे ज़ुल्क़रनैन का हाल अगरचे अन्तिरम तौर पर बयान फ़रमाया है मगर जो कुछ बयान किया है वह तहक़ीक़ व रिवायत के आला मेयार पर है। आपने फ़रमाया कि फ़साद फैलाने वाले और वहशी (जंगली व क़बाइली) इनसानों की लूटमार और तबाही व ग़ारतगरी से हिफ़ाज़त के लिये ज़मीन पर एक नहीं बहुत सी जगहों में सद्दें (रोक और दीवारें) बनाई गई हैं जो विभिन्न बादशाहों ने विभिन्न मक़ामात पर विभिन्न ज़मानों में बनाई हैं, उनमें से ज़्यादा बड़ी और मशहूर दीवारे चीन है जिसकी लम्बाई अबू हय्यान उन्दुलुसी (ईरानी दरबार के शाही इतिहासकार) ने बारह सौ मील बतलायी है और यह कि उसका बनाने वाला फ़ग़फ़ूर चीन का बादशाह है और उसके निर्माण की तारीख़ आदम अ़लैहिस्सलाम के दुनिया में उतारे जाने से तीन हज़ार चार सौ साठ साल बाद

बतलाई, और यह कि उस दीवारे चीन को मुग़ल लोग 'अतक़ूवा' और तुर्क लोग 'बूरक़ूरक़ा' कहते हैं, और फ़रमाया कि इसी तरह की और भी अनेक दीवारें और रुकावटें मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर पाई जाती हैं।

हमारे साथी और दोस्त मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान स्योहारवी रह. ने अपनी किताब 'क़ससुल-क़ुरआन' में हज़रत अ़ल्लामा कश्मीरी रह. के इस बयान की ऐतिहासिक वज़ाहत बड़ी तफ़सील व तहक़ीक़ से लिखी है जिसका ख़ुलासा यह है कि:

> याजूज-माजूज के तबाही व ग़ारतगरी मचाने और शर व फ़साद का दायरा इतना फैला हुआ था कि एक तरफ़ काकेशिया के नीचे बसने वाले उनके ज़ुल्म व सितम का शिकार थे तो दूसरी तरफ़ तिब्बत और चीन के बाशिन्दे भी हर वक़्त उनकी ज़द (चपेट) में थे, उन्हीं याजूज-माजूज के शर व फ़साद से बचने के लिये मुख़्तलिफ़ ज़मानों में मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर कई दीवारें तामीर की गईं, उनमें सबसे ज़्यादा बड़ी और मशहूर दीवार चीन की है जिसका ज़िक्र ऊपर आ चुका है।

दूसरी रोक और दीवार मध्य एशिया में बुख़ारा और तिर्मिज़ के क़रीब स्थित है और उसके स्थान का नाम दरबन्द है। यह दीवार मशहूर मुग़ल बादशाह तैमूर लंग के ज़माने में मौजूद थी और रूम के बादशाह के ख़ास साथी 'सेला बरजर जर्मनी' ने भी इसका ज़िक्र अपनी किताब में किया और उन्दुलुस के बादशाह कस्टील के क़ासिद कलाफ़चू ने भी अपने सफ़र नामे में इसका ज़िक्र किया है। यह सन् 1403 ई. में अपने बादशाह का दूत बनकर जब तैमूर की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो उस जगह से गुज़रा है। वह लिखता है कि बाबुल-हदीद की दीवार और रोक मूसल के उस रास्ते पर है जो समरक़न्द और हिन्दुस्तान के बीच है। (अज़ तफ़सीर जवाहिरुल् क़ुरआन, तन्तावी पेज 198 जिल्द 9)

तीसरी दीवार रूसी इलाक़े दाग़िस्तान में स्थित है यह भी दरबन्द और बाबुल-अबवाब के नाम से मशहूर है, याक़ूत हमवी ने 'मोजमुल-बलदान' में, इदरीसी ने 'जुग़राफ़िया' में और बुस्तानी ने 'दायरतुल-मआ़रिफ़' में इसके हालात बड़ी तफ़सील से लिखे हैं, जिसका ख़ुलासा यह है कि:

> "दाग़िस्तान में दरबन्द एक रूसी शहर है। यह शहर बहर-ए-ख़ज़र (कास्पीन) के पश्चिमी किनारे पर स्थित है, इसका अ़र्ज़ुल-बलद (अक्षांस) 43-3 उत्तर में और तूलुल-बलद (लम्बांश) 48-15 पूरब में है और इसको दरबन्द अनुशेरवाँ भी कहते हैं, और बाबुल-अबवाब के नाम से बहुत मशहूर है।"

चौथी दीवार इसी बाबुल-अबवाब से पश्चिम की ओर काकेशिया के बहुत बुलन्द हिस्सों में है जहाँ दो पहाड़ों के बीच एक दर्रा दर्रा-ए-दारियाल के नाम से मशहूर है, इस जगह यह चौथी दीवार (रोक) जो क़फ़क़ाज़ या जबल-ए-क़ूक़ा या कोह-ए-क़ाफ़ की दीवार कहलाती है, बुस्तानी ने इसके बारे में लिखा है:

> "और इसी के (यानी सद्दे बाबुल-अबवाब के) क़रीब एक और दीवार है जो पश्चिमी

दिशा में बढ़ती चली गई है, ग़ालिबन इसको फ़ारस वालों ने उत्तरी बरबरों से हिफ़ाज़त की ख़ातिर बनाया होगा, क्योंकि इसके बनाने वाले का सही हाल मालूम नहीं हो सका, बाज़ ने इसकी निस्बत सिकन्दर की ओर कर दी है और बाज़ ने किसरा व नोशेरवाँ की तरफ़, और याक़ूत कहता है कि यह ताँबा पिघलाकर उससे तामीर की गई है।. (दायरतुल-मआरिफ़ जिल्द 7 पेज 651, मोजमुल-बलदान जिल्द 8 पेज 9)"

चूँकि ये सब दीवारें उत्तर ही में हैं और तक़रीबन एक ही ज़रूरत के लिये बनाई गई हैं इसलिये इनमें से दीवारे ज़ुल्क़रनैन कौनसी है इसके मुतैयन करने में शुब्हात व इश्कालात पेश आये हैं और बड़ा असमंजस इन आख़िरी दो दीवारों के मामले में पेश आया, क्योंकि दोनों मक़ामात का नाम भी दरबन्द है और दोनों जगह दीवार भी मौजूद है, ऊपर ज़िक्र हुई चार दीवारों में से दीवारे चीन जो सबसे ज़्यादा बड़ी और सबसे ज़्यादा पुरानी है इसके बारे में तो ज़ुल्क़रनैन की दीवार होने का कोई क़ायल नहीं, और वह बजाय उत्तर के पूर्वी किनारे में है और क़ुरआने करीम के इशारे से उसका उत्तर में होना ज़ाहिर है।

अब मामला बाक़ी तीन दीवारों का रह गया जो उत्तर ही में हैं, उनमें से जो आ़म तौर पर इतिहासकारों मसऊदी, अस्तख़री, हमवी वग़ैरह उस दीवार को ज़ुल्क़रनैन की दीवार बताते हैं जो दाग़िस्तान या काकेशिया के इलाक़े में बाबुल-अबवाब के दरबन्द में ख़ज़र के दरिया पर स्थित है, बुख़ारा व तिर्मिज़ के दरबन्द और उसकी दीवार को जिन इतिहासकारों ने ज़ुल्क़रनैन की दीवार कहा है वह ग़ालिबन लफ़्ज़ दरबन्द के साझा होने की वजह से उनको धोखा लगा है, अब तक़रीबन इसका स्थान मुतैयन हो गया कि इलाक़ा दाग़िस्तान काकेशिया के दरबन्द बाबुल-अबवाब में या उससे भी ऊपर कफ़क़ाज़ पहाड़ या कोह-ए-क़ाफ़ की बुलन्दी पर है और इन दोनों जगहों पर सद्द (दीवार और रोक) का होना इतिहासकारों के नज़दीक साबित है।

इन दोनों में से हज़रत उस्ताद मौलाना सैयद अनवर शाह कशमीरी ने अ़क़ीदतुल-इस्लाम में कोह-ए-क़ाफ़ कफ़क़ाज़ की दीवार और रोक को तरजीह दी है कि यह दीवार ज़ुल्क़रनैन की बनाई हुई है। (अ़क़ीदतुल-इस्लाम पेज 297)

ज़ुल्क़रनैन की दीवार इस वक़्त तक मौजूद है और क़ियामत तक रहेगी या वह टूट चुकी है?

आजकल इतिहास व भूगोल के विशेषज्ञ यूरोप वाले इस वक़्त उन उत्तरी दीवारों में से किसी का मौजूद होना तस्लीम नहीं करते, और न यह तस्लीम करते हैं कि अब भी याजूज माजूज का रास्ता बन्द है, इस बिना पर कुछ मुस्लिम इतिहासकारों ने भी यह कहना और लिखना शुरू कर दिया है कि याजूज-माजूज जिनके निकलने का क़ुरआन व हदीस में ज़िक्र है वह हो चुका है, कुछ ने छठी सदी हिजरी में तूफ़ान बनकर उठने वाली तातारी क़ौम ही को इसका मिस्दाक़ क़रार दे दिया है, कुछ ने इस ज़माने में दुनिया पर ग़ालिब आ जाने वाली क़ौमों रूस

और चीन और यूरोप वालों को याजूज-माजूज कहकर इस मामले को ख़त्म कर दिया है, मगर जैसा कि ऊपर तफ़सीर रूहुल-मआनी के हवाले से बयान हो चुका है कि यह सरासर ग़लत है, सही हदीसों के इनकार के बग़ैर कोई यह नहीं कह सकता कि जिस याजूज-माजूज के निकलने को क़ुरआने करीम ने क़ियामत की निशानी के तौर पर बयान किया है और जिसके बारे में सही मुस्लिम की हज़रत नवास बिन समआन वग़ैरह की हदीस में इसकी वज़ाहत है कि यह वाक़िआ दज्जाल के आने और ईसा अ़लैहिस्सलाम के नाज़िल होने और दज्जाल के क़त्ल होने के बाद पेश आयेगा वह वाक़िआ हो चुका, क्योंकि दज्जाल का निकलना और ईसा अ़लैहिस्सलाम का नाज़िल होना बिला शुब्हा अब तक नहीं हुआ।

अलबत्ता यह बात भी क़ुरआन व सुन्नत की किसी स्पष्ट दलील और वज़ाहत के ख़िलाफ़ नहीं है कि ज़ुल्क़रनैन के ज़रिये बनाई गई दीवार इस वक़्त टूट चुकी हो और याजूज-माजूज की कुछ क़ौमें इस तरफ़ आ चुकी हों, बशर्तेकि इसको तस्लीम किया जाये कि उनका आख़िरी और बड़ा हल्ला जो पूरी इनसानी आबादी को तबाह करने वाला साबित होगा वह अभी नहीं हुआ, बल्कि क़ियामत की उन बड़ी निशानियों के बाद होगा जिनका ज़िक्र ऊपर आ चुका है, यानी दज्जाल का निकलना और ईसा अ़लैहिस्सलाम का नाज़िल होना वग़ैरह।

हज़रत उस्ताद हुज्जतुल-इस्लाम अ़ल्लामा कशमीरी रह. की तहक़ीक़ इस मामले में यह है कि यूरोप वालों का यह कहना तो कोई वज़न नहीं रखता कि हमने सारी दुनिया छान मारी है हमें उस दीवार का पता नहीं लगा, क्योंकि अव्वल तो ख़ुद उन्हीं लोगों के ये बयानात मौजूद हैं कि घूमने व सैर करने और तहक़ीक़ के इन्तिहाई शिखर पर पहुँचने के बावजूद आज भी बहुत से जंगल और दरिया और द्वीप ऐसे बाक़ी हैं जिनका हमें इल्म नहीं हो सका, दूसरे यह भी कोई दूर की और असंभव बात नहीं कि अब वह दीवार मौजूद होने के बावजूद पहाड़ों के गिरने और आपस में मिल जाने के सबब एक पहाड़ ही की सूरत इख़्तियार कर चुकी हो, लेकिन कोई निश्चित दलील और वज़ाहत इसके भी विरुद्ध नहीं कि क़ियामत से पहले यह दीवार टूट जाये या किसी दूर-दराज़ के लम्बे रास्ते से याजूज-माजूज की कुछ क़ौमें इस तरफ़ आ सकें।

ज़ुल्क़रनैन की इस दीवार और रोक के क़ियामत तक बाक़ी रहने पर बड़ी दलील तो क़ुरआने करीम के इस लफ़्ज़ से ली जाती है कि:

فَإِذَا جَآءَ وَعْدُ رَبِّىْ جَعَلَهٗ دَكَّآءَ

यानी ज़ुल्क़रनैन का यह क़ौल कि जब मेरे रब का वायदा आ पहुँचेगा (यानी याजूज-माजूज के निकलने का वक़्त आ जायेगा) तो अल्लाह तआ़ला इस लोहे की दीवार को रेज़ा-रेज़ा करके ज़मीन के बराबर कर देंगे। इस आयत में 'वअ़्दु रब्बी' का मफ़्हूम इन हज़रात ने क़ियामत को क़रार दिया है, हालाँकि क़ुरआन के अलफ़ाज़ इस बारे में निश्चित नहीं, क्योंकि 'वअ़्दु रब्बी' का स्पष्ट मफ़्हूम तो यह है कि याजूज-माजूज का रास्ता रोकने का जो इन्तिज़ाम ज़ुल्क़रनैन ने किया है यह कोई ज़रूरी नहीं कि हमेशा इसी तरह रहे, जब अल्लाह तआ़ल चाहेंगे कि उनका रास्ता खुल जाये तो यह दीवार गिरकर ज़मीन के बराबर हो जायेगी, इसके लिये ज़रूरी नहीं कि वह

बिल्कुल क़ियामत के क़रीब हो। चुनाँचे तमाम हज़राते मुफ़स्सिरीन ने 'वअ़्दु रब्बी' के मफ़्हूम में दोनों शुब्हे और संभावनायें ज़िक्र किये हैं। तफ़सीर बहरे मुहीत में हैः

وَالوعد يحتمل ان يراد به يوم القيٰمة وان يراد به وقت خروج ياجوج وماجوج.

इसकी तहक़ीक़ यूँ भी हो सकती है कि दीवार गिरकर रास्ता अभी खुल गया हो और याजूज व माजूज के हमलों की शुरूआत हो चुकी हो, चाहे इसकी शुरूआत छठी सदी हिजरी के तातारी फ़ितने से क़रार दी जाये या यूरोप और रूस व चीन वालों के ग़लबे से, मगर यह ज़ाहिर है कि इन सभ्य और विकसित क़ौमों के निकलने और फ़साद को जो संवैधानिक और क़ानूनी रंग में हो रहा है वह फ़साद नहीं क़रार दिया जा सकता जिसका पता क़ुरआन व हदीस दे रहे हैं कि ख़ालिस क़त्ल व ग़ारतगरी और ऐसी ख़ूँरेज़ी के साथ होगा कि तमाम इनसानी आबादी को तबाह व बरबाद कर देगा, बल्कि इसका हासिल फिर यह होगा कि उन्हीं फ़साद मचाने वालों याजूज माजूज की कुछ क़ौमें इस तरफ़ आकर तहज़ीब व सभ्यता वाली बन गईं, इस्लामी मुल्कों के लिये बिला शुब्हा वो बड़ा फ़साद और ज़बरदस्त फ़ितना साबित हुईं मगर अभी उनकी वहशी क़ौमें जो क़त्ल व ख़ूँरेज़ी के सिवा कुछ नहीं जानतीं वे तक़दीरी तौर पर इस तरफ़ नहीं आईं और बड़ी संख्या उनकी ऐसी ही है उनका निकलना क़ियामत के बिल्कुल क़रीब में होगा।

दूसरी दलील तिर्मिज़ी और मुस्नद अहमद की उस हदीस से ली जाती है जिसमें बयान हुआ है कि याजूज-माजूज उस दीवार को रोज़ाना खोदते हैं मगर अव्वल तो इस हदीस को इब्ने कसीर ने इल्लत वाली क़रार दिया है दूसरे उसमें भी इसकी कोई वज़ाहत नहीं कि ज़िस दिन याजूज माजूज इन्शा-अल्लाह कहने की बरकत से उसको पार कर लेंगे वह क़ियामत के क़रीब ही होगा, और इसकी भी उस हदीस में कोई दलील नहीं कि सारे याजूज-माजूज उसी दीवार के पीछे रुके हुए रहेंगे, अगर उनकी कुछ जमाअ़तें या क़ौमें किसी दूर-दराज़ के रास्ते से इस तरफ़ आ जायें जैसा कि आजकल के ताक़तवर समुद्री जहाज़ों के ज़रिये ऐसा हो जाना कोई अ़जीब नहीं, और कुछ इतिहासकारों ने लिखा भी है कि याजूज-माजूज को लम्बे समुद्री सफ़र करके इस तरफ़ आने का रास्ता मिल गया है तो उस हदीस से इसकी भी नफ़ी नहीं होती।

ख़ुलासा यह है कि क़ुरआन व सुन्नत में कोई ऐसी स्पष्ट और निश्चित दलील नहीं है जिससे यह साबित हो कि ज़ुल्क़रनैन के ज़रिये बनाई गई दीवार क़ियामत तक बाक़ी रहेगी, या उनके शुरूआती और मामूली हमले क़ियामत से पहले इस तरफ़ के इनसानों पर नहीं हो सकेंगे, अलबत्ता वह इन्तिहाई ख़ौफ़नाक और तबाहकुन हमला जो पूरी इनसानी आबादी को बरबाद कर देगा उसका वक़्त बिल्कुल क़ियामत के क़रीब ही होगा जिसका ज़िक्र बार-बार आ चुका है। हासिल यह है कि क़ुरआन व सुन्नत की वज़ाहतों और दलीलों की बिना पर न यह क़तई फ़ैसला किया जा सकता है कि याजूज-माजूज की दीवार टूट चुकी है और रास्ता खुल गया है, और न यह कहा जा सकता है कि क़ुरआन व सुन्नत के एतिबार से उसका क़ियामत तक क़ायम रहना ज़रूरी है, गुमान और संभावना दोनों ही हैं। बस असल सूरतेहाल और हक़ीक़त का इल्म अल्लाह

तआ़ला ही को है।

وَتَرَكْنَا بَعْضَهُمْ يَوْمَئِذٍ يَّمُوْجُ فِيْ بَعْضٍ وَّنُفِخَ فِي الصُّوْرِ فَجَمَعْنٰهُمْ جَمْعًا ۝ وَّعَرَضْنَا جَهَنَّمَ يَوْمَئِذٍ لِّلْكٰفِرِيْنَ عَرْضًا ۝ الَّذِيْنَ كَانَتْ اَعْيُنُهُمْ فِيْ غِطَآءٍ عَنْ ذِكْرِيْ وَكَانُوْا لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ سَمْعًا ۝

व तरक्ना बअ़्-ज़हुम् यौमइज़िंय्यमूजु फ़ी बअ़्ज़िंव्-व नुफ़ि-ख़ फ़िस्सूरि फ़-जमअ़्नाहुम् जम्अ़ा (99) व अ़रज़्ना जहन्न-म यौमइज़िल् -लिल्काफ़िरी-न अ़र्ज़ा (100) अल्लज़ी-न कानत् अअ़्युनुहुम् फ़ी ग़िताइन् अ़न् ज़िक्री व कानू ला यस्ततीअ़ू-न सम्अ़ा (101) ✿	और छोड़ देंगे हम मख़्लूक़ को उस दिन एक दूसरे में घुसते और फूँक मारेंगे सूर में, फिर जमा कर लायेंगे हम उन सब को। (99) और दिखलायें हम दोज़ख़ उस दिन काफ़िरों को सामने (100) जिनकी आँखों पर पर्दा पड़ा था मेरी याद से और न सुन सकते थे। (101) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हम उस दिन (यानी जब उस दीवार के गिरने का निर्धारित दिन आयेगा और याजूज माजूज का निकलना होगा तो उस दिन हम) उनकी यह हालत करेंगे कि एक में एक गड्मड् हो जाएँगे (क्योंकि ये बहुत ज़्यादा होंगे और एक वक़्त में निकल पड़ेंगे और सब एक दूसरे से आगे बढ़ने की फ़िक्र में होंगे), और (यह क़ियामत के क़रीब ज़माने में होगा, फिर कुछ समय के बाद क़ियामत का सामान शुरू होगा। एक बार पहले सूर फूँका जायेगा जिससे तमाम आ़लम फ़ना हो जायेगा फिर) सूर (दोबारा) फुँका जायेगा (जिससे सब ज़िन्दा हो जायेंगे), फिर हम सब को एक-एक करके (मैदाने हश्र में) जमा कर लेंगे। और दोज़ख़ को उस दिन काफ़िरों के सामने पेश कर देंगे जिनकी आँखों पर (दुनिया में) हमारी याद से (यानी दीने हक़ के देखने से) पर्दा पड़ा हुआ था, और (जिस तरह ये हक़ को देखते न थे उसी तरह उसको) वे सुन भी न सकते थे (यानी हक़ को मालूम करने के माध्यम देखने और सुनने के सब रास्ते बन्द कर रखे थे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

بَعْضَهُمْ يَوْمَئِذٍ يَّمُوْجُ فِيْ بَعْضٍ

'बअ़्ज़ुहुम' (उनमें के बाज़) के उन से ज़ाहिर यही है कि याजूज-माजूज हैं और उनका जो

हाल इसमें बयान हुआ है कि एक दूसरे में गड्मड् हो जायेंगे ज़ाहिर यही है कि उस वक़्त का हाल है जबकि उनका रास्ता खुलेगा और वे ज़मीन पर पहाड़ों की बुलन्दियों से जल्दबाज़ी के साथ उतरेंगे। मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) ने दूसरी संभावनायें भी लिखी हैं।

وَجَمَعْنٰهُمْ

'व जमअ़्नाहुम्' (और हम उनको जमा कर लेंगे) में उन से आ़म मख़्लूक़ इनसान व जिन्नात मुराद हैं, मतलब यह है कि मैदाने हश्र में तमाम मुकल्लफ़ (शरई अहकाम की पाबन्द) मख़्लूक़ जिन्नात व इनसान को जमा कर दिया जायेगा।

أَفَحَسِبَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا أَن يَتَّخِذُوا عِبَادِي مِن دُونِيٓ أَوْلِيَآءَ ۚ إِنَّآ أَعْتَدْنَا جَهَنَّمَ لِلْكٰفِرِينَ نُزُلًا ﴿١٠٢﴾ قُلْ هَلْ نُنَبِّئُكُم بِالْأَخْسَرِينَ أَعْمَالًا ﴿١٠٣﴾ الَّذِينَ ضَلَّ سَعْيُهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ يَحْسَبُونَ أَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ﴿١٠٤﴾ أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيٰتِ رَبِّهِمْ وَلِقَآئِهِ فَحَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فَلَا نُقِيمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَزْنًا ﴿١٠٥﴾ ذٰلِكَ جَزَآؤُهُمْ جَهَنَّمُ بِمَا كَفَرُوا وَاتَّخَذُوٓا اٰيٰتِي وَرُسُلِي هُزُوًا ﴿١٠٦﴾ إِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ كَانَتْ لَهُمْ جَنّٰتُ الْفِرْدَوْسِ نُزُلًا ﴿١٠٧﴾ خٰلِدِينَ فِيهَا لَا يَبْغُونَ عَنْهَا حِوَلًا ﴿١٠٨﴾

अ-फ़-हसिबल्लज़ी-न क-फ़रू अंय्यत्तख़िज़ू अ़िबादी मिन् दूनी औलिया-अ, इन्ना अअ़्तद्ना जहन्न-म लिल्काफ़िरी-न नुज़ुला (102) क़ुल् हल् नुनब्बिउकुम् बिल्-अख़्सरी-न अअ़्माला (103) अल्लज़ी-न ज़ल्-ल सअ़्युहुम् फ़िल्-हयातिद्दुन्या व हुम् यह्सबू-न अन्नहुम् युह्सिनू-न सुन्आ़ (104) उलाइ-कल्लज़ी-न क-फ़रू बिआयाति रब्बिहिम् व लिक़ाइही फ़-हबितत् अअ़्मालुहुम् फ़ला नुक़ीमु लहुम् यौमल्-क़ियामति वज़्ना (105)

अब क्या समझते हैं मुन्किर कि ठहरायें मेरे बन्दों को मेरे सिवा हिमायती, हमने तैयार किया है दोज़ख़ को काफ़िरों की मेहमानी। (102) तू कह हम बतायें तुम को किनका किया हुआ गया बहुत अकारत। (103) वे लोग जिनकी कोशिश भटकती रही दुनिया की ज़िन्दगी में और वे समझते रहे कि ख़ूब बनाते हैं काम। (104) वही हैं जो मुन्किर हुए अपने रब की निशानियों से और उसके मिलने से, सो बरबाद गया उनका किया हुआ, फिर न खड़ी करेंगे हम उनके वास्ते क़ियामत के दिन तौल। (105) यह बदला उनका है

ज़ालि-क जज़ाउहुम् जहन्नमु बिमा क-फ़रू वत्त-ख़ज़ू आयाती व रुसुली हुज़ुवा (106) इन्नल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्-सालिहाति कानत् लहुम् जन्नातुल्-फ़िर्दौसि नुज़ुला (107) ख़ालिदी-न फ़ीहा ला यब्ग़ू-न अ़न्हा हि-वला (108)	दोज़ख़ इस पर कि मुन्किर हुए और ठहराया मेरी बातों और मेरे रसूलों को ठट्ठा। (106) जो लोग ईमान लाये हैं और किये हैं भले काम उनके वास्ते है ठण्डी छाँव के बाग़ मेहमानी। (107) रहा करें उन में न चाहें वहाँ से जगह बदलनी। (108)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या फिर भी इन काफ़िरों का ख़्याल है कि मुझको छोड़कर मेरे बन्दों को (यानी जो मेरे ममलूक व महकूम हैं इख़्तियार से या मजबूर होकर उनको) अपना करता-धरता (यानी माबूद और हाजत पूरी करने वाला) क़रार दें (जो खुला हुआ शिर्क और कुफ़्र है)। हमने काफ़िरों की दावत के लिये दोज़ख़ को तैयार कर रखा है (दावत उनका मज़ाक़ उड़ाने और अपमान करने के तौर पर फ़रमाया)। और अगर (उनको अपने आमाल पर नाज़ हो जिनको वे अच्छे और नेकी समझते हों और इसके सबब वे अपने आपको निजात पाने वाला और अ़ज़ाब से महफ़ूज़ समझते हों तो) आप (उनसे) कहिये कि क्या हम तुमको ऐसे लोग बताएँ जो आमाल के एतिबार से बिल्कुल घाटे में हैं। ये वे लोग हैं जिनकी दुनिया में की-कराई मेहनत (जो अच्छे आमाल में की थी) सब गई गुज़री हुई और वे (जहालत की वजह से) इस ख़्याल में हैं कि वे अच्छा काम कर रहे हैं (आगे उन लोगों का मिस्दाक़ ऐसे उनवान से बतलाते हैं जिससे उनकी मेहनत ज़ाया होने की वजह भी मालूम होती है और फिर इस आमाल के बरबाद होने की वज़ाहत भी फ़रमाते हैं यानी) ये वे लोग हैं जो अपने रब की आयतों का और उससे मिलने का (यानी क़ियामत का) इनकार कर रहे हैं। सो (इसलिये) उनके सारे (नेक) काम ग़ारत हो गये, तो क़ियामत के दिन हम उन (के नेक आमाल) का ज़रा भी वज़न क़ायम न करेंगे (बल्कि) उनकी सज़ा वही होगी (जो ऊपर बयान हुई) यानी दोज़ख़, इस वजह से कि उन्होंने कुफ़्र किया था, और (उस कुफ़्र का एक हिस्सा यह भी था कि) मेरी आयतों और पैग़म्बरों का मज़ाक़ बनाया था। (आगे उनके मुक़ाबले में ईमान वालों का हाल बयान फ़रमाते हैं कि) बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये, उनकी मेहमानी के लिये फ़िरदौस (यानी जन्नत) के बाग़ होंगे, जिनमें वे हमेशा रहेंगे (न उनको कोई निकालेगा और) न वे वहाँ से कहीं और जाना चाहेंगे।

मआरिफ़ व मसाईल

اَفَحَسِبَ الَّذِیْنَ کَفَرُوْٓا اَنْ یَّتَّخِذُوْا عِبَادِیْ مِنْ دُوْنِیْٓ اَوْلِیَآءَ.

तफ़सीर बहरे-मुहीत में है कि इस जगह कुछ इबारत पोशीदा है, यानीः

فيجديهم نفعًا و ينتفعون بذٰلك الا تخاذ

और मतलब यह है कि क्या ये कुफ़्र करने वाले जिन्होंने मेरे बजाय मेरे बन्दों को अपना माबूद और कारसाज़ बना लिया है यह समझते हैं कि उनको माबूद व कारसाज़ बना लेना इनको कुछ नफ़ा बख़्शेगा और वे इससे कुछ फ़ायदा उठायेंगे, और यह इनकार के अन्दाज़ में सवाल है, जिसका हासिल यह है कि ऐसा समझना ग़लत और जहालत है।

अ़िबादी से मुराद इस जगह फ़रिश्ते और वे नबी हज़रात हैं जिनकी दुनिया में लोगों ने पूजा की और उनको अल्लाह का शरीक ठहराया, जैसे हज़रत उज़ैर और मसीह अ़लैहिमस्सलाम। फ़रिश्तों की इबादत करने वाले अ़रब के कुछ लोग थे और उज़ैर अ़लैहिस्सलाम को यहूद ने, ईसा अ़लैहिस्सलाम को ईसाईयों ने ख़ुदा का शरीक क़रार दिया। इसलिये अल्लज़ी-न क-फ़रू से इस आयत में काफ़िरों के यही फ़िर्क़े मुराद हैं, और जिन बाज़े मुफ़स्सिरीन ने इस जगह अ़िबादी (मेरे बन्दों) से मुराद शैतान लिये तो 'अल्लज़ी-न क-फ़रू' (जिन्होंने कुफ़्र किया) से वे काफ़िर लोग मुराद होंगे जो जिन्नात व शैतानों की इबादत करते हैं, कुछ हज़रात ने इस जगह लफ़्ज़ अ़िबादी को मख़्लूक़ व ममलूक (यानी अल्लाह की बनाई हुई और उसकी मिल्क में मौजूद चीज़ों) के मायने में लेकर आ़म क़रार दिया जिसमें सब बातिल माबूद– बुत, आग और सितारे भी दाख़िल हो गये। ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में लफ़्ज़ महकूम व ममलूक से इसी की तरफ़ इशारा है। बहरे मुहीत वग़ैरह में पहली ही तफ़सीर को ज़्यादा सही क़रार दिया है। वल्लाहु आलम

'औलिया-अ' वली की जमा (बहुवचन) है। यह लफ़्ज़ अ़रबी भाषा में बहुत-से मायने के लिये इस्तेमाल होता है, इस जगह इससे मुराद कारसाज़, हाजत पूरी करने वाला है, जो माबूदे बरहक़ की ख़ास सिफ़त है। इससे मक़सूद उनको माबूद क़रार देना है।

بِالْاَخْسَرِیْنَ اَعْمَالًا ۝

इस जगह पहली दो आयतें अपने आ़म मफ़्हूम व मतलब के एतिबार से हर उस फ़र्द या जमाअ़त को शामिल हैं जो कुछ आमाल को नेक समझकर उसमें जिद्दोजहद और मेहनत करते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के नज़दीक उनकी मेहनत बरबाद और अ़मल ज़ाया है। इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि यह सूरत दो चीज़ों से पैदा होती है– एक एतिक़ाद की ख़राबी से, दूसरे दिखावे से, यानी जिस शख़्स का अ़क़ीदा और ईमान दुरुस्त न हो वह अ़मल कितने ही अच्छे करे और कितनी ही मेहनत उठाये वह आख़िरत में बेकार और ज़ाया है। इसी तरह जिसका अ़मल मख़्लूक़ को ख़ुश करने के लिये रियाकारी (दिखावे) से हो वह भी अ़मल के सवाब से मेहरूम है। इसी आ़म मफ़्हूम के एतिबार से सहाबा हज़रात में से कुछ ने इसका मिस्दाक़ ख़ारजियों (एक फ़िर्क़ा

है) को और कुछ मुफ़स्सिरीन ने मोतज़िला (एक फ़िर्क़ा है) और रवाफ़िज़ (शियाओं) वग़ैरह गुमराह फ़िर्क़ों को क़रार दिया, मगर अगली आयत में यह मुतैयन कर दिया गया है कि इस जगह मुराद वे काफ़िर लोग हैं जो अल्लाह तआ़ला की आयतों और क़ियामत व आख़िरत के इनकारी हों। फ़रमायाः

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِآيَاتِ رَبِّهِمْ وَلِقَائِهِ

इसलिये तफ़सीरे क़ुर्तुबी, अबू हय्यान, मज़हरी वग़ैरह में तरजीह इसको दी गई है कि असल मुराद इस जगह वही काफ़िर लोग हैं जो अल्लाह तआ़ला, क़ियामत और हिसाब व किताब के इनकारी हों, मगर बज़ाहिर वे लोग भी इसके आ़म मतलब से बेताल्लुक़ नहीं हो सकते जिनके आमाल उनके अ़क़ीदों की ख़राबी ने बरबाद कर दिये और उनकी मेहनत बेकार हो गई। कुछ सहाबा किराम जैसे हज़रत अ़ली और सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से जो ऐसे अक़वाल नक़ल किये गये हैं उनका यही मतलब है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

فَلَا نُقِيمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَزْنًا○

यानी उनके आमाल जो ज़ाहिर में बड़े-बड़े नज़र आयेंगे मगर हिसाब की तराज़ू में उनका कोई वज़न न होगा क्योंकि ये आमाल कुफ़्र व शिर्क की वजह से बेकार और बेवज़न होंगे।

सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन एक आदमी क़द्दावर और मोटा-ताज़ा नज़र आयेगा जो अल्लाह के नज़दीक एक मच्छर के पर के बराबर भी वज़नदार न होगा, और फिर फ़रमाया कि अगर इसकी तस्दीक़ करना चाहो तो क़ुरआन की यह आयत पढ़ोः

فَلَا نُقِيمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَزْنًا○

और हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि (क़ियामत के दिन) ऐसे ऐसे आमाल लाये जायेंगे जो जिस्म और ज़ाहिरी शक्ल के एतिबार से तिहामा के पहाड़ों के बराबर होंगे मगर अ़दल की तराज़ू में उनका कोई वज़न न होगा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

جَنّٰتُ الْفِرْدَوْسِ

फ़िरदौस के मायने सरसब्ज़ (हरेभरे) बाग़ के हैं। इसमें मतभेद है कि यह अ़रबी लफ़्ज़ है या ग़ैर-अ़रबी, जिन लोगों ने ग़ैर-अ़रबी कहा है इसमें भी फ़ारसी है या रूमी या सुरयानी विभिन्न अक़वाल हैं।

सही बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम अल्लाह से माँगो तो जन्नतुल-फ़िरदौस माँगो, क्योंकि वह जन्नत का सब से आला व अफ़ज़ल दर्जा है, उसके ऊपर रहमान का अ़र्श है, और उसी से जन्नत की सब नहरें निकलती हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

لَا يَبْغُونَ عَنْهَا حِوَلًا○

मक़सद यह बतलाना है कि जन्नत का यह मक़ाम उनके लिये हमेशा के लिये और कभी न फ़ना होने वाली नेमत है, क्योंकि हक़ तआ़ला ने यह हुक्म फ़रमा दिया है कि जो शख़्स जन्नत में दाख़िल हो गया वह वहाँ से कभी निकाला न जायेगा। मगर यहाँ एक ख़तरा किसी के दिल में यह गुज़र सकता था कि इनसान की फ़ितरी आ़दत यह है कि एक जगह रहते-रहते उकता जाता है वहाँ से बाहर दूसरे मक़ामात पर जाने की इच्छा होती है, अगर जन्नत से बाहर कहीं जाने की इजाज़त न हुई तो एक क़ैद महसूस होने लगेगी। इसका जवाब इस आयत में दिया गया कि जन्नत को दूसरे मक़ामात पर अन्दाज़ा व गुमान करना जहालत है, जो शख़्स जन्नत में चला गया फिर जो कुछ दुनिया में नहीं देखा और बरता था जन्नत की नेमतों और दिलकश फ़िज़ाओं के सामने उसको वे सब चीज़ें बेकार मालूम होंगी और यहाँ से कहीं बाहर जाने का कभी किसी के दिल में ख़्याल भी न आयेगा।

قُلْ لَّوْ كَانَ الْبَحْرُ مِدَادًا لِّكَلِمٰتِ رَبِّيْ لَنَفِدَ الْبَحْرُ قَبْلَ اَنْ تَنْفَدَ كَلِمٰتُ رَبِّيْ وَلَوْ جِئْنَا بِمِثْلِهٖ مَدَدًا ۝ قُلْ اِنَّمَاۤ اَنَا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ يُوْحٰۤى اِلَيَّ اَنَّمَاۤ اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ فَمَنْ كَانَ يَرْجُوْا لِقَآءَ رَبِّهٖ فَلْيَعْمَلْ عَمَلًا صَالِحًا وَّلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّهٖۤ اَحَدًا ۝

क़ुल् लौ कानल्-बहरु मिदादल् लि-कलिमाति रब्बी ल-नफ़िदल्-बहरु क़ब्-ल अन् तन्फ़-द कलिमातु रब्बी व लौ जिअ्ना बिमिस्लिही म-ददा (109) क़ुल् इन्नमा अ-न ब-शरुम्-मिस्लुकुम् यूहा इलय्-य अन्नमा इलाहुकुम् इलाहुंव्-वाहिदुन् फ़-मन् का-न यर्जू लिक़ा-अ रब्बिही फ़ल्यअ़्मल् अ़-मलन् सालिहंव्-व ला युश्रिक् बिअ़िबादति रब्बिही अ-हदा (110) ✿	तू कह अगर दरिया सियाही हो कि लिखे मेरे रब की बातें बेशक दरिया ख़र्च हो चुके अभी न पूरी हों मेरे रब की बातें और अगरचे दूसरा भी लायें हम वैसा ही उसकी मदद को। (109) तू कह मैं भी एक आदमी हूँ जैसे तुम, हुक्म आता है मुझको कि माबूद तुम्हारा एक माबूद है, सो फिर जिसको उम्मीद हो मिलने की अपने रब से सो वह करे कुछ काम नेक और शरीक न करे अपने रब की बन्दगी में किसी को। (110) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप लोगों से फ़रमा दीजिये कि अगर मेरे रब की बातें (यानी वे कलिमात और इबारतें जो

अल्लाह तआ़ला की सिफ़तों, ख़ूबियों और कमालात पर दलालत करते हों और उनसे अल्लाह तआ़ला के कमालात व ख़ूबियों को कोई बयान करने लगे तो ऐसे कलिमात को) लिखने के लिये समन्दर (का पानी) रोशनाई (की जगह) हो (और उससे लिखना शुरू करे) तो मेरे रब की बातें ख़त्म होने से पहले समन्दर ख़त्म हो जायेगा (और सब बातें घेरे में न आयेंगी) अगरचे उस समन्दर के जैसा एक दूसरा समन्दर (उसकी) मदद के लिये हम ले आएँ (तब भी वो बातें ख़त्म न हों और दूसरा समन्दर भी ख़त्म हो जाये। मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला के कलिमात असीमित और बेइन्तिहा हैं उसके सिवा जिन चीज़ों को काफ़िरों ने अल्लाह तआ़ला का शरीक माना है उनमें से कोई भी ऐसा नहीं इसलिये उलूहियत व रबूबियत "ख़ुदा होना और रब होना" उसी की ज़ात के साथ मख़्सूस है, इसलिये इन लोगों से) आप (यह भी) कह दीजिए कि मैं तो तुम ही जैसा बशर हूँ (न ख़ुदाई का दावेदार हूँ न फ़रिश्ता होने का, हाँ!) मेरे पास (अल्लाह की तरफ़ से) बस वही आती है (और) तुम्हारा माबूद बरहक़ एक ही माबूद है, सो जो शख़्स अपने रब से मिलने की आरज़ू रखे (और उसका महबूब बनना चाहे) तो (मुझको रसूल मानकर मेरी शरीअ़त के मुताबिक़) नेक काम करता रहे और अपने रब की इबादत में किसी को शामिल व शरीक न करे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः कहफ़ की आख़िरी आयत मेंः

وَلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّهٖٓ اَحَدًا٥

(यानी आख़िरी आयत के इस आख़िरी टुकड़े) का उतरने का मौक़ा और सबब जो हदीस की रिवायतों में बयान हुआ है उससे मालूम होता है कि इसमें शिर्क से मुराद शिर्के ख़फ़ी (छुपा शिर्क) यानी दिखावा है।

इमाम हाकिम ने मुस्तद्रक में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह रिवायत नक़ल की है और इसको बुख़ारी व मुस्लिम की शर्तों के मुताबिक़ सही क़रार दिया है, रिवायत यह है कि मुसलमानों में से एक शख़्स अल्लाह की राह में जिहाद करता था, इसके साथ उसकी यह इच्छा भी थी कि लोगों में उसकी बहादुरी और जिहाद का अ़मल पहचाना जाये, उसके बारे में यह आयत नाज़िल हुई (जिससे मालूम हुआ कि जिहाद में ऐसी नीयत करने से जिहाद का सवाब नहीं मिलता)।

और इब्ने अबी हातिम और इब्ने अबिद्दुन्या ने किताबुल-इख़्लास में ताऊस रह. से नक़ल किया है कि एक सहाबी ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़िक्र किया कि मैं कई बार किसी नेक काम के लिये या इबादत के लिये खड़ा होता हूँ और मेरा इरादा उससे अल्लाह तआ़ला ही की रज़ा होती है मगर उसके साथ दिल में यह इच्छा भी होती है कि लोग मेरे अ़मल को देखें। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह सुनकर ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई यहाँ तक

कि यह उपर्युक्त आयत नाज़िल हुई।

और अबू नुऐम और तारीख़ इब्ने असाकिर में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से लिखा है कि जुन्दुब बिन ज़ुहैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु सहाबी जब नमाज़ पढ़ते या रोज़ा रखते या सदक़ा करते फिर देखते कि लोग इन आमाल से उनकी तारीफ़ व प्रशंसा कर रहे हैं तो उनको ख़ुशी होती और अपने उस अ़मल को और ज़्यादा कर देते थे, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

ख़ुलासा इन तमाम रिवायतों का यही है कि इस आयत में जिस शिर्क से मना किया गया है वह रियाकारी का छुपा शिर्क है और यह कि अ़मल अगरचे अल्लाह ही के लिये हो मगर उसके साथ कोई नफ़्सानी ग़र्ज़ शोहरत व रुतबा-पसन्दी भी शामिल हो तो यह भी एक क़िस्म का छुपा शिर्क है जो इनसान के अ़मल को ज़ाया बल्कि नुकसान पहुँचने वाला बना देता है।

लेकिन कुछ दूसरी सही हदीसों से बज़ाहिर इसके ख़िलाफ़ मालूम होता है, जैसे तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मैं कभी-कभी अपने घर के अन्दर अपनी जायनमाज़ पर (नमाज़ में मश्ग़ूल) होता हूँ अचानक कोई आदमी आ जाये तो मुझे यह अच्छा मालूम होता है कि उसने मुझे इस हाल में देखा (तो क्या यह रियाकारी हो गई)। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया अबू हुरैरह! ख़ुदा तआ़ला तुम पर रहमत फ़रमाये, तुम्हें उस वक़्त दो अज्र मिलते हैं एक छुपकर अ़मल का जो पहले से कर रहे थे, दूसरा ऐलानिया अ़मल का जो उस आदमी के आ जाने के बाद हो गया (यह रियाकारी नहीं)।

और सही मुस्लिम में हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा गया कि ऐसे शख़्स के बारे में फ़रमाईये कि जो कोई नेक अ़मल करता है फिर लोगों को सुने कि वे उस अ़मल की तारीफ़ व प्रशंसा कर रहे हैं? आपने फ़रमायाः

تِلْكَ عَاجِلُ بُشْرَى الْمُؤْمِنِ.

यानी यह तो मोमिन के लिये नक़द ख़ुशख़बरी है (कि उसका अ़मल अल्लाह के नज़दीक क़ुबूल हुआ, उसने अपने बन्दों की ज़बानों से उसकी तारीफ़ करवा दी)।

तफ़सीरे मज़हरी में इन दोनों क़िस्म की रिवायतों में जो बज़ाहिर इख़्तिलाफ़ (टकराव और विरोधाभास) नज़र आता है इसमें जोड़ इस तरह बैठाया है कि पहली रिवायतें जिनके बारे में आयत नाज़िल हुई उस सूरत में हैं जबकि इनसान अपने अ़मल से अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलब करने के साथ मख़्लूक़ की रज़ा का तालिब या अपनी शोहरत व सम्मान की नीयत को भी शरीक करे, यहाँ तक कि लोगों की तारीफ़ करने पर अपने उस अ़मल को और बढ़ा दे, यह बिला शुब्हा रियाकारी और शिर्के-ख़फ़ी (छुपा शिर्क) है।

और बाद की रिवायतें तिर्मिज़ी और मुस्लिम की उस सूरत के बारे में हैं जबकि उसने अ़मल

ख़ालिस अल्लाह के लिये किया हो, लोगों में उसकी शोहरत या उनकी तारीफ़ व प्रशंसा की तरफ़ कोई तवज्जोह न हो, फिर अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से उसको मशहूर कर दें और लोगों की ज़बानों पर उसकी तारीफ़ जारी फ़रमा दें तो इसका रियाकारी से कोई ताल्लुक़ नहीं, यह मोमिन के लिये (अ़मल के क़ुबूल होने की) नक़द ख़ुशख़बरी है।

रियाकारी के बुरे परिणाम और उस पर हदीस की सख़्त वईद

हज़रत महमूद बिन लबीद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं तुम्हारे बारे में जिस चीज़ पर सबसे ज़्यादा ख़ौफ़ रखता हूँ वह शिर्के असग़र है। सहाबा ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! शिर्के असग़र क्या चीज़ है? आपने फ़रमाया कि रियाकारी (यानी दिखावा)। (मुस्नद अहमद)

और इमाम बैहक़ी ने शुअ़बुल-ईमान में इस हदीस को नक़ल करके इसमें यह ज़्यादती भी नक़ल की है कि क़ियामत के दिन जब अल्लाह तआ़ला बन्दों के आमाल की जज़ा अ़ता फ़रमायेंगे तो रियाकार लोगों से फ़रमा देंगे कि तुम अपने अ़मल की जज़ा लेने के लिये उन लोगों के पास जाओ जिनको दिखाने के लिये तुमने यह अ़मल किया था, फिर देखो कि उनके पास तुम्हारे लिये कोई जज़ा है या नहीं?

और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हक़ तआ़ला फ़रमाते हैं कि मैं शरीकों में शरीक होने से बेपरवाह और बालातर हूँ, जो शख़्स कोई नेक अ़मल करता है फिर उसमें मेरे साथ किसी और को भी शरीक कर देता है तो मैं वह सारा अ़मल उसी शरीक के लिये छोड़ देता हूँ। और एक रिवायत में है कि मैं उस अ़मल से बरी हूँ उसको तो ख़ालिस उसी शख़्स का कर देता हूँ जिसको मेरे साथ शरीक किया था। (मुस्लिम शरीफ़)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि उन्होंने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह फ़रमाते हुए सुना कि जो शख़्स अपने नेक अ़मल को लोगों में शोहरत के लिये करता है तो अल्लाह तआ़ला भी उसके साथ ऐसा ही मामला फ़रमाते हैं कि लोगों में वह हक़ीर व ज़लील हो जाता है। (तफ़सीरे मज़हरी अहमद व बैहक़ी के हवाले से)

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि हज़रत हसन बसरी रह. से इख़्लास और रिया (दिखावे) के बारे में सवाल किया गया तो आपने फ़रमाया कि इख़्लास का तक़ाज़ा यह है कि तुम्हें अपने नेक और अच्छे आमाल का पोशीदा रहना पसन्दीदा हो और बुरे आमाल का पोशीदा रहना पसन्दीदा न हो, फिर अगर अल्लाह तआ़ला तुम्हारे आमाल लोगों पर ज़ाहिर फ़रमा दें तो तुम यह कहो कि या अल्लाह! यह सब आपका फ़ज़्ल है, एहसान है, मेरे अ़मल और कोशिश का असर नहीं।

और हकीम तिर्मिज़ी ने हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक मर्तबा शिर्क का ज़िक्र फ़रमाया किः

هُوَ فِيكُمْ اَخْفٰى مِنْ دَبِيْبِ النَّمْلِ

यानी शिर्क तुम्हारे अन्दर ऐसे छुपे तौर पर आ जाता है जैसे चींवटी की रफ़्तार बेआवाज़। और फ़रमाया कि मैं तुम्हें एक ऐसा काम बतलाता हूँ कि जब तुम वह काम कर लो तो शिर्के अकबर (बड़े शिर्क) और शिर्के असग़र (यानी रियाकारी) सबसे महफ़ूज़ हो जाओ, तुम तीन मर्तबा रोज़ाना यह दुआ किया करोः

اَللّٰهُمَّ اِنِّىْٓ اَعُوْذُبِكَ مِنْ اَنْ اُشْرِكَ بِكَ وَاَنَا اَعْلَمُ وَاَسْتَغْفِرُكَ لِمَا لَا اَعْلَمُ.

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिन् अन् उश्रि-क बि-क व अ-न अअ़्लमु व अस्तग़्फ़िरु-क लिमा ला अअ़्लमु।

सूरः कहफ़ की कुछ ख़ास फ़ज़ीलतें और विशेषतायें

हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स ने सूरः कहफ़ की पहली दस आयतें याद रखीं वह दज्जाल के फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगा। (मुस्लिम, अहमद, अबू दाऊद व नसाई)

और इमाम अहमद, मुस्लिम और नसाई ने हज़रत अबूदर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से ही इस रिवायत में ये अलफ़ाज़ नकल किये हैं कि जिस शख़्स ने सूरः कहफ़ की आख़िरी दस आयतें याद रखीं वह दज्जाल के फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगा।

और हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स ने सूरः कहफ़ की शुरू और आख़िर की आयतें पढ़ लीं तो उसके लिये एक नूर हो जायेगा उसके क़दम से लेकर सर तक, और जिसने यह सूरत पूरी पढ़ ली उसके लिये नूर होगा ज़मीन से आसमान तक। (इब्ने सनी व मुस्नद अहमद)

और हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स ने जुमे के दिन सूरः कहफ़ पूरी पढ़ ली तो दूसरे जुमे तक उसके लिये नूर हो जायेगा। (तफ़सीरे मज़हरी, हाकिम व बैहक़ी के हवाले से)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक शख़्स ने कहा कि मैं दिल में इरादा करता हूँ कि आख़िर रात में जागकर नमाज़ पढ़ूँ मगर नींद ग़ालिब आ जाती है। आपने फ़रमाया कि जब तुम सोने के लिये बिस्तर पर जाओ तो सूरः कहफ़ की आख़िरी आयतें (यानी आयत नम्बर 109 और 110) पढ़ लिया करो तो जिस वक़्त नींद से जागने की नीयत करोगे अल्लाह तआ़ला तुम्हें उसी वक़्त जगा देंगे। (सालंबी)

और मुस्नद दारमी में है कि ज़िर्र बिन हुबैश रह. ने हज़रत अ़ब्दा को बतलाया कि जो आदमी सूरः कहफ़ की ये आख़िरी आयतें पढ़कर सोयेगा जिस वक़्त जागने की नीयत करेगा

उसी वक़्त जाग जायेगा। अ़ब्दा कहते हैं कि हमने बहुत बार इसका तजुर्बा किया बिल्कुल ऐसा ही होता है।

एक अहम नसीहत

अ़ल्लामा इब्ने अ़रबी रह. फ़रमाते हैं कि हमारे शैख़ तुरतूशी रह. फ़रमाया करते थे कि तुम्हारी प्यारी उम्र के औक़ात (समय) अपने ज़माने के लोगों और साथ वालों से मुक़ाबले और दोस्तों से मेलजोल ही में न गुज़र जायें, देखो अल्लाह तआ़ला ने अपने बयान को इस आयत पर ख़त्म फ़रमाया है:

فَمَنْ كَانَ يَرْجُوْا لِقَآءَ رَبِّهٖ فَلْيَعْمَلْ عَمَلًا صَالِحًا وَّلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّهٖٓ اَحَدًا۝

यानी जो शख़्स अपने रब से मिलने की आरज़ू रखता है उसको चाहिये कि नेक अ़मल करे और अल्लाह की इबादत में किसी को हिस्सेदार न बनाये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

अल्हम्दु लिल्लाह अल्लाह का बेहद शुक्र व एहसान है कि आज 8 ज़ीक़दा सन् 1390 हिजरी दिन जुमेरात चाश्त के वक़्त सूरः कहफ़ की यह तफ़सीर मुकम्मल हुई। और अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व इनाम ही है कि इस वक़्त क़ुरआने करीम के पहले आधे से कुछ ज़्यादा हिस्सा पूरा हो गया, जबकि उम्र का 76वाँ साल चल रहा है और तबीयत में कमज़ोरी के साथ दो साल से विभिन्न बीमारियों ने भी घेरा हुआ है, और चिंताओं का हुजूम भी बहुत ज़्यादा है। कुछ अ़जब नहीं कि हक़ तआ़ला अपने फ़ज़्ल से बाक़ी क़ुरआन की भी तकमील करा दें। व मा ज़ालि-क अ़लल्लाहि ब-अ़ज़ीज़।

अल्लाह तआ़ला का शुक्र है कि सूरः कहफ़ और साथ ही तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन की पाँचवीं जिल्द पूरी हुई।

कुछ अलफ़ाज़ और उनके मायने

इस्लामी महीनों के नामः- मुहर्रम, सफ़र, रबीउल-अव्वल, रबीउस्सानी, जमादियुल-अव्वल, जमादियुस्सानी, रजब, शाबान, रमज़ान, शव्वाल, ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा।

चार मश्हूर आसमानी किताबें

तौरातः- वह आसामानी किताब जो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

ज़बूरः- वह आसमानी किताब जो हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

इन्जीलः- वह आसमानी किताब जो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

क़ुरआन मजीदः- वह आसामानी किताब जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल हुई। यह आख़िरी आसमानी किताब है।

चार बड़े फ़रिश्ते

हज़रत जिब्राईलः- अल्लाह तआ़ला का एक ख़ास फ़रिश्ता जो अल्लाह का पैग़ाम (वही) उसके रसूलों के पास लाता था।

हज़रत इस्राफ़ीलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो इस दुनिया को तबाह करने के लिये सूर फूँकेगा।

हज़रत मीकाईलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो बारिश का इन्तिज़ाम करने और मख़्लूक़ को रोज़ी पहुँचाने पर मुक़र्रर है।

हज़रत इज़्राईलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो जानदारों की जान निकालने पर लगाया गया है।

रिश्ते और निस्बतें

अबूः- बाप (जैसे अबू हुज़ैफ़ा)।

इब्नः- बेटा, पुत्र (जैसे इब्ने उमर)।

उम्मः- माँ (जैसे उम्मे कुलसूम)।

बिन्तः- बेटी, पुत्री (जैसे बिन्ते उमर)।

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

कफ़्फ़ाराः- गुनाह को धो देने वाला, गुनाह या ख़ता का बदला, क़ुसूर का दंड जो ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से मुक़र्रर है। प्रायशचित।

क़िसासः- बदला, इन्तिक़ाम, ख़ून का बदला ख़ून।

ख़ुतबाः- तक़रीर, नसीहत, संबोधन।

ग़ज़वाः- वह जिहाद जिसमें ख़ुद रसूले ख़ुदा सल्ल. शरीक हुए हों। दीनी जंग।

ज़माना-ए-जाहिलीयतः- अ़रब में इस्लाम से पहले का ज़माना और दौर।

ज़िरहः- लोहे का जाली दार कुर्ता जो लड़ाई में पहनते हैं। आजकल बुलेट-प्रूफ़ जाकेट।

जिहादः- कोशिश, जिद्दोजहद, दीन की हिमायत के लिये हथियार उठाना, जान व माल की क़ुरबानी देना।

ज़िनाः- बदकारी, हराम कारी।

जिज़याः- वह टैक्स जो इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों से लिया जाता है। बच्चे, बूढ़े, औरतें और धर्मगुरु इससे बाहर रहते हैं। इस टैक्स के बदले हुकूमत उनके जान माल आबरू की सुरक्षा करती है।

ज़िहारः- एक किस्म की तलाक़, फ़िक़्हा की इस्तिलाह में मर्द का अपनी बीवी को माँ बहन या उन औरतों से तशबीह देना जो शरीअ़त के हिसाब से उस पर हराम हैं।

टट्टीः- बाँस का छप्पर, पर्दा खड़ा करना, क़नात।

तक़दीरः- वह अन्दाज़ा जो अल्लाह तआ़ला ने पहले दिन से हर चीज़ के लिये मुक़र्रर कर दिया है। नसीब, क़िस्मत, भाग्य।

तर्काः- मीरास, मरने वाले की जायदाद व माल।

तौहीदः- एक मानना, ख़ुदा तआ़ला के एक होने पर यक़ीन करना।

दारुल-हरबः- वह मुल्क जहाँ ग़ैर-मुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को मज़हबी फ़राईज़ के अदा करने से रोका जाये।

दारुल-इस्लामः- वह मुल्क जिसमें इस्लामी हुकूमत हो।

अ़ज़ाबः- गुनाह की सज़ा, तकलीफ़, दुख, मुसीबत।

अज्रः- नेक काम का बदला, सवाब, फल।

अ़क़ीदाः- दिल में जमाया हुआ यक़ीन, ईमान, एतिबार, आस्था आदि। इसका बहुवचन अ़क़ीदे और अ़क़ायद आता है।

अ़दमः- नापैदी, न होना।

अबदः हमेशगी। वह ज़माना जिसकी कोई इन्तिहा न हो।

ख़ल्क़ः- मख़्लूक़, सृष्टि।

ख़ालिक़ः- पैदा करने वाला। अल्लाह तआ़ला का एक सिफ़ाती नाम।

ख़ियानतः- दग़ा, धोखा, बेईमानी, बद्-दियानती, अमानत में चोरी।

ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ः- आ़जिज़ी करना, गिड़गिड़ाना, सर झुकाना, विनम्रता इख़्तियार करना।

ख़ुतबाः- तक़रीर, नसीहत, संबोधन।

ख़ुलाः- बीवी का कुछ माल वग़ैरह देकर अपने पति से तलाक़ लेना।

गज़वाः- वह जिहाद जिसमें ख़ुद रसूले ख़ुदा सल्ल. शरीक हुए हों। दीनी जंग।

ग़ैबः- ग़ैर-मौजूदगी, पोशीदगी की हालत, जो आँखों से ओझल हो। जो अभी भविष्य में हो।

(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी एम. ए. अ़लीग.)